२६ जनवरी १९५०

भारतीय कारवां की राह में महत्त्वपूर्ण मोड़ था

और उससे भी आगे उतना ही बड़ा मोड़
३१ मार्च १९५६ को आया
जब प्रथम पंचवर्षीय आयोजन की पूर्णाहुति

एवं

द्वितीय आयोजन का शुभ आरम्भ हुआ।
उक्त तिथि के समाप्त होने वाली पांच वर्षों की अवधि में
उत्तर प्रदेश ने

१५३ करोड़ ३६ लाख ४० हजार रुपये

विकास कार्यों पर खर्च किये

जिस के फलस्वरूप

खाद्योत्पादन में १६ लाख ६० हजार टन की वृद्धि हुई

३० लाख एकड़ अतिरिक्त भूमि में सिंचाई की

सुविधाएं सुलभ हुई और
विद्युत उत्पादन की प्रस्थापित क्षमता

१ लाख ३६ हजार किलोवाट बढ़ गई

चुर्क स्थित सीमेंट उद्योग एवं लखनऊ का
सूक्ष्म यन्त्र कारखाना भी
उसी अवधि में परिलक्षित राज्य की

[illegible]त्मक क्रियाशीलता के शुभ परिणाम हैं।

ये देहाती विस्तार अब
नव-जीवन से गूंज रहे हैं
द्वितीय पंचवर्षीय योजना में
5
सामुदायिक विकास और
राष्ट्रीय विस्तरण सेवा योजनाओं का कार्य
इनका लक्ष्य सिर्फ भौतिक विकास ही नहीं बल्कि लोगों के मानसिक दृष्टिकोण में परिवर्तन करना, उनमें अपने जीवन-मान को ऊंचा उठाने की महत्वाकांक्षा तथा लक्ष्य प्राप्ति के लिये प्रयत्नशील होने की भावना और निश्चय जागृत करना भी है। १ मई १९५६ तक राज्य में ११० सामुदायिक विकास तथा राष्ट्रीय विस्तरण सेवा खण्ड शुरु किये गये। इनके दायरे में ८,८६४ गांव, २७,०८४ वर्ग मील विस्तार तथा ७२,१२,७८० जनसंख्या आयी।
यह सहकारी प्रयत्नों की भारी सफलता है

विषय-सूची

सम्पादक—कृष्णचन्द्र विद्यालंकार

सम्पादकीय परामर्श मण्डल

१. श्री जी० एस० पथिक
२. श्री महेन्द्रस्वरूप भटनागर

बम्बई में हमारे प्रतिनिधि

श्री टी० एन० वर्मा, नेशनल हाउस,
२री मंजिल, टुलक रोड, बम्बई- १

वर्ष : ७] फरवरी, १९५८ [अङ्क : २

पंचवर्षीय योजना : गंभीर प्रश्न

पिछले कुछ समय से देश के अधिकारियों, अर्थ-शास्त्रियों तथा उद्योगपतियों में दूसरी पंचवर्षीय योजना को लेकर गम्भीर विचार विनिमय हो रहा है । सरकारी अधिकारी और उनके समर्थक योजना में कोई दोष नहीं देख रहे । आलोचक विद्वान् योजना में दो प्रकार के दोष देखते हैं । पहला दोष यह है कि योजना देश की सामर्थ्य से बहुत ऊंची है । प्रथम योजना २३ अरब रु० की थी। किन्तु दूसरी योजना ४८ अरब रु० की बनाई गई । पीछे से ५५, ६० अरब तक बढ़ाने की बातचीत की गई । किन्तु योजनाके निर्माता वस्तुतः यह भूल गए कि इतने साधन देश जुटा भी सकेगा या नहीं । हमारे देश के नेता पं० जवाहरलाल नेहरू तथा उनके साथी अत्यन्त आशा और उत्साह के साथ देश को यह समझाने का प्रयत्न कर रहे हैं कि हम अपनी योजना अवश्य पूर्ण कर लेंगे । निराशा की बातें करना देशद्रोह है । उन्होंने अत्यन्त उद्‌बोधक शब्दों में देश को यह बताना चाहा है कि विदेशों से सहायता मिले या न मिले, देश अपने लक्ष्यों को पूर्ण करने में पीछे न रहेगा ।

योजना के आलोचक अर्थशास्त्री और उद्योगपति भी वस्तुतः हृदय से यह मंगल कामना करते हैं कि दूसरी विकास योजना अवश्य पूर्ण हो और निर्विघ्न पूर्ण हो । किन्तु उनका कहना है कि केवल शुभ आशाओं से कठोर तथ्योंका मुकाबला नहीं किया जा सकता । उसके लिए तो मुद्रा प्राप्ति की कठोर समस्या हल करनी पड़ेगी । उन्हें आज की परिस्थितियों में यह विश्वास नहीं हो पा रहा कि हम अपनी योजनाओं की पूर्ति के लिए आवश्यक साधन प्राप्त कर सकेंगे । इस आलोचना का कोई सन्तोषजनक उत्तर कुछ विदेशी मुद्रा प्राप्ति के सिवाय अभी तक अधिकारी नहीं दे सके हैं । केवल विदेशी मुद्रा का ही प्रश्न नहीं है, देश के आंतरिक साधन भी जवाब दे रहे हैं । जनता से जिस छोटी बचत की आशा की जा रही थी, उसका बहुत थोड़ा अंश अभी तक प्राप्त हो सका है । देश में रुपये की प्राप्ति दुर्लभ होती जा रही है, बैंकों में कारोबार कम होता जा रहा है, मुद्रा प्रसार के साथ-साथ पदार्थों की महंगाई जन-सामान्य की परिस्थिति को कठिन से कठिनतर बना रही है । आशा और उत्साह के शब्द दुःखी जनता के हृदय को सान्त्वना देने में समर्थ नहीं हो रहे ।

\+ \+ \+ \+

योजना के आलोचकों का दूसरा आक्षेप देश की आर्थिक नीति के सम्बन्ध में है । उनका विचार है कि

उत्पादन वृद्धि की पर्याप्त चिंता किये बिना समाजवादी आदर्श का नारा लगाया जा रहा है, टैक्स एक के बाद एक बढ़ाए जा रहे हैं और देश में ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न की जा रही हैं कि उद्योग-व्यापार कुछ अर्जन ही न कर सके और न नये उद्योगों के लिए पूंजी का निर्माण हो सके। इन्हीं परिस्थितियों के कारण आज हम चाहते हुए भी विदेशी पूंजी को देश में निमंत्रित नहीं कर सक रहे। मजदूर-संबन्धी नये-नये कानून भी उद्योग-व्यापार को अनुत्साहित कर रहे हैं। गत दो वर्षों में जिस तरह बिना विवेक के हम विदेशी मुद्रा खर्च करते रहे, उसकी भी कठोर आलोचना इन क्षेत्रों में की गई है। सरकारी नेता इन आक्षेपों को मानने को तैयार नहीं हैं, यद्यपि इनकी सच्चाई से साफ इन्कार करने का साहस भी उनमें नहीं है। वे शनैः शनैः अपनी नीति बदल अवश्य रहे हैं, यद्यपि उनकी नीति से आलोचकों को संतोष नहीं हो रहा है।

\+ \+ \+ \+

इस सम्बन्ध में अधिक खेद की बात यह है कि अधिकांश कांग्रेसी संसद सदस्यों की भांति हमारे अर्थशास्त्री भी किसी प्रश्न पर निष्पक्ष और स्वतंत्र रूप से विचार अभिव्यक्त करने का साहस नहीं रखते। वे अपनी प्रतिभा का प्रयोग योजना आयोग के समर्थन में अधिक करते हैं; मार्ग-प्रदर्शन में कम। हाल ही में इनकी जो रिपोर्ट प्रकाशित हुई, वह पाठकों पर बहुत अच्छा प्रभाव नहीं डालती। उसमें कहा गया है कि ४८ अरब रु० की योजना पूरी हो सकती है, बशर्तेकि विदेशों से रुपया मिल जाय और देश के आंतरिक साधनों को संगठित करने का पूर्ण प्रयत्न किया जाय। मूल प्रश्न तो यही है कि क्या यह दोनों संभावनाएं पूर्ण हो भी सकती हैं या नहीं। उनकी समिति ने, जिसमें बड़े-बड़े दिग्गज अर्थशास्त्री विद्यमान हैं, अपनी रिपोर्ट में कहा है कि 'उन्हें यह विश्वास हो गया है कि योजना अति महत्वाकांक्षापूर्ण नहीं है।" जब यह समिति कहती है कि उसे योजना-संबंधी सब सामग्री का निरीक्षण करने का काफी अवसर ही नहीं मिला और न उसे प्राप्य साधनों की स्थिति और भविष्य की संभावनाओं पर पूर्ण विचार करने का अवसर मिला है, तब इस समिति की स्थापनाओं का महत्व बहुत कम हो जाता है। इस कारण समिति जिन परिणामों पर पहुँची है उनकी सच्चाई भी स्वयं सन्दिग्ध हो जाती है। वह एक वाक्य में योजना के खर्चों को पहुँच के अन्दर बताती है, दूसरे वाक्य में ४८ अरब रु० की प्राप्ति को बहुत कठिन मानती है। देश के मुद्रा प्रसार के सम्बन्ध में भी वह एक निश्चित मत पर नहीं पहुँची। अन्न नियंत्रण आदि के सम्बन्ध में भी उसने अनेक 'यदियों' का आश्रय लिया है। सरकार के बड़े-बड़े फिजूल खर्चों की ओर समिति ने देश का ध्यान नहीं खींचा है। इस तरह अर्थशास्त्रियों की यह समिति देश का मार्ग प्रदर्शन करने में सफल नहीं हुई।

\+ \+ \+ \+

हमने इस अंक में अनेक अर्थ-शास्त्रियों के कुछ लेख दिये हैं। इन में वर्तमान अर्थनीति आदि की आलोचना की गई है। इन लेखों को एक साथ देने से हमारा यह अभिप्राय नहीं है कि दूसरा पक्ष नितांत भ्रांत है। आज के समय में, जब कि देश के अधिकांश विचारक सरकार की आलोचना करने में संकोच करते हैं, हमने यह आवश्यक समझा कि 'सम्पदा' के पाठकों के सामने वह पक्ष पूरी स्पष्टता के साथ रख दिया जाय। आज हमें आवश्यकता इस बात की है कि हम भावुकता और आदर्शवाद की बातें छोड़कर प्रत्येक प्रश्न पर यथार्थ और वास्तविकता की दृष्टि से विचार करें। इन सब लेखों के देने से हमारा यह भी अभिप्राय नहीं कि हम देश में निराशा का वातावरण पैदा करना चाहते हैं। हम तो स्थिति की वास्तविकता सामने रखकर देश के विचारकों से अनुरोध करना चाहते हैं कि अपनी समस्याओं को सुलझाने में कहीं अधिक कठोर परिश्रम करना होगा, आवश्यक होने पर योजना के लक्ष्य कुछ कम करने होंगे, अथवा उनकी अवधि बढ़ानी पड़ेगी तथा अपनी अर्थ-नीति में कुछ परिवर्तन करना होगा। हमें आशा है, सम्पदा के पाठक हमारी इस अभिलाषा को समझने की चेष्टा करेंगे।

समुद्र जल से विराट शक्ति

आजकल कोयला, तेल और पन बिजली से जो कार्यशक्ति उपलब्ध होती है, वह यदि उसी परिमाण में दुनिया भर में खर्च की जाय, जिस परिमाण में आज अमेरिका में

खर्च हो रही है तो वह केवल ३५ वर्ष में समाप्त हो जायगी। आज दुनिया में यूरेनियम, थोरियम आदि जितना पारमाणविक पदार्थ उपलब्ध होने का अन्दाजा लगाया जाता है, उससे यदि कार्यशक्ति प्रस्तुत की जाय तो अमेरिका में उपयुक्त होने वाले परिमाण में ही वह सारी दुनिया के लिए ८०० साल तक काम देगी। पर अथाह महासागर के पानी के उदजन के परमाणु मिलने से जब नियन्त्रित कार्यशक्ति सुगमता से प्राप्त होगी तब तो दुनिया कुबेर नगरी हो जायगी।

इसलिए ब्रिटिश और अमेरिकन वैज्ञानिकों की इस घोषणा के महत्व की कल्पना की जा सकेगी कि उद्जन परमाणुओं के सम्मेलन से प्राप्त अपार शक्ति को वे नियन्त्रित रूप में प्राप्त करने में प्रारम्भिक रूप से सफल हो गये हैं। यह मानव की अन्तरिक्ष यात्रा युगारम्भ या स्फुतनिक युग के आरम्भ की घोषणा से भी अधिक महत्व की है। मनुष्य यदि ग्रह मण्डल और नक्षत्र मण्डल की सैर भी करने लग जाय, पर इस पृथ्वी मण्डल पर वह दैन्य एवं दारिद्र्य में पड़ा कराहता रहे तो क्या लाभ? प्रजा जिस गति से बढ़ती जा रही है और उसकी आवश्यकताएं भी जिस गति से बढ़ती जा रही हैं, उसी वेग से यदि उसके पोषण के साधनों के उत्पादन और समान वितरण की व्यवस्था की गति न बढ़े तो अन्तरिक्ष युग में मनुष्य का प्रवेश भी व्यर्थ है। उद्जन शक्ति की प्राप्ति की घोषणा इसीलिए युगान्तरकारी है। यह हमारे लिए अभिमान की बात है कि इस पृथ्वी पर मनुष्य के लिए उद्जन शक्ति की प्राप्ति की सुलभ सम्भावना की बात सबसे पहले भारतीय वैज्ञानिकों ने दुनिया के अन्य वैज्ञानिकों के सामने रखी थी। २६ नवम्बर सन् १९५४ को दिल्ली में भारतीय परमाणु वैज्ञानिकों का जो सम्मेलन हुआ था, उसमें सबसे पहले श्री एच० भाभा ने इसे सम्भाव्य कोटि में बताया था।

परन्तु नियन्त्रित उद्जन की महा शक्ति इस समस्त विश्व को वाष्प बना देने का साधन भी बन सकती है, यह न भूलना चाहिए।

नये बजट अधिवेशन

सम्पदा का यह अंक जब पाठकों की सेवा में पहुँचेगा संसद का बजट अधिवेशन शुरू हो चुका होगा। दूसरे राज्यों में भी विधान सभाएं अपने बजट अधिवेशन प्रारम्भ कर चुकी होंगी अथवा कर रही होंगी। आज बजट अधिवेशन के नाम के साथ ही नए करों का भय सामने आ जाता है। गत अधिवेशन में जितने भारी टैक्स संघ के वित्तमंत्री ने लगाए थे, उनकी कठोर आलोचना को देखते हुए यह संभव है कि कोई नया भारी टैक्स केन्द्रीय सरकार न लगाए। किन्तु ये संभावनाएं की जा रही हैं कि विविध राज्यों की सरकारें केन्द्रीय सरकार के परामर्श से दो अरब रुपये तक के टैक्स लगाने का प्रयत्न करें। परन्तु हमें संदेह है कि राज्य सरकारें इतनी भारी मात्रा में टैक्स लगा सकेंगी। आज स्थिति यह है कि जनता को जब तक यह पूर्ण संतोष न हो जाय कि उसके एक-एक पैसे का सदुपयोग हो रहा है, वह कोई छोटे-से छोटे नए कर को भी सहन करने को तैयार नहीं है। हम संसद तथा विधान सभाओं के सदस्यों से यह अनुरोध करना चाहते हैं कि वह नए बजट प्रस्तावों पर जनता का प्रतिनिधित्व करने में संकोच न करें।

संकट कुछ समय के लिए टल गया

हाल ही में अनेक विदेशों से आर्थिक सहायता मिलने के समाचार मिले हैं। इसमें संदेह नहीं कि इन समाचारों पर भारत सरकार प्रसन्नता प्रगट कर सकती है। इन सहायताओं से देश का तात्कालिक संकट कुछ कम अवश्य हो जायगा। किन्तु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि कुछ समय के बाद इन सब ऋणों के भुगतान की समस्या विकट रूप से उपस्थित हो जायगी। इन ऋणों का इतना ही लाभ हुआ है कि विदेशी मुद्रा का संकट आज के लिए टल गया है। आवश्यकता इस बात की है कि हम अधिक से अधिक निर्यात बढ़ाएं और आयात कम करें। अन्यथा १९५८ के बजाय १९६० या ६१ में हमें गम्भीर संकट का सामना पड़ेगा।

बड़ी सिंचाई योजनाएं

पहली पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ के साथ ही यह प्रश्न खड़ा हो गया था कि बड़ी सिंचाई योजनाएं अधिक लाभकारी होंगी या छोटी सिंचाई, योजनाएं, जो तुरन्त फल देती हैं और भारी साधनों की भी अपेक्षा कम रखती हैं।

बड़ी-बड़ी सिंचाई योजनाओं की आलोचना भी काफी की गई है, किन्तु जल विद्युत आयोग के सदस्य डा० के० एल० राव ने एक लेख में बड़ी सिंचाई योजनाओं का समर्थन किया है। उनके युक्तिक्रम का मुख्य आधार यह है—

"सिंचाई के लिए हमें हर ऐसे साधन को अपनाना चाहिए, जिससे पानी मिल सके। लेकिन यह भी देखना होगा कि आगे चलकर किससे अधिक लाभ रहता है। सिंचाई की बड़ी योजनाएं बड़ी बड़ी नदियों को वश में करने और उनका बहाव मोड़ने के लिए होती हैं और उनके विशाल क्षेत्र के पानी का उपयोग होता है। दरमियानी योजनाओं से स्थानीय या थोड़े से ही क्षेत्र के पानी का उपयोग होता है।

"अधिक और समय पर वर्षा देश के केवल एक चौथाई क्षेत्र में होती है। इसलिए इन क्षेत्रों में पानी जमा करके उन क्षेत्रोंको देना जरूरी है, जहां ५० इंच से कम वर्षा होती है। देश के एक तिहाई भाग में औसतन ३० इंच से भी कम पानी बरसता है और वास्तव में इस औसत से भी कम। और कभी अधिक वर्षा होती है। जब वर्षा औसत से कम रहती है, तो अकाल पड़ जाता है। आंध्र प्रदेशके रायलसीमा क्षेत्र में इसी कारण प्रायः अकाल पड़ता है। इस तरह की अनिश्चितताओं का इलाज सिंचाई की बड़ी योजनाएं ही हैं।"

श्री राव के कथनानुसार अच्छी तरह हिसाब लगा कर देखा गया है कि बड़ी योजनाओं से सिंचाई का पानी छोटी योजनाओंके पानी से कम से कम एक तिहाई सस्ता पड़ता है। छोटी योजनाओं का एक लाभ केवल यही है कि इन पर शुरू में अधिक खर्च नहीं बैठता।

मिल-प्रबन्ध में सहयोग

"पिछले कुछ वर्षों में औद्योगिक क्षेत्र में मालिक और मजदूर के सम्बन्धों में जो सुधार हुए हैं, उन्हीं के फलस्वरूप अब अनेक कारखानों के प्रबन्ध में मजदूर भी भाग लेने लगे हैं।" इन शब्दों में श्रम और नियोजन मन्त्री, श्री गुलजारीलाल नन्दा ने मालिक मजदूर सहयोग गोष्ठी का उद्घाटन किया है। उन्होंने कहा कि हमने यहां मिलजुल कर क्रय-विक्रय करने, झगड़े निपटाने आदि की परम्पराएं डाल दी हैं। अब यहां औद्योगिक कारखानों की संयुक्त परिषदें बनायी जा सकती हैं। इन परिषदों के काम से पता चल जाएगा कि प्रबन्ध के काम में मजदूर कितने उपयोगी हो सकते हैं।" पिछले कुछ समय से औद्योगिक शान्ति की स्थापना के लिए परस्पर सद्भाव और सहयोग की भावना पर अधिक बल दिया जा रहा है और उसी का एक मूर्त रूप है कारखानों के प्रबन्ध में मालिक व मजदूर दोनों का सहयोग। इस गोष्ठी में सरकारी तथा निजी क्षेत्रों के ३० कारखानों के प्रतिनिधि आए थे। यह श्रीगणेश बहुत अच्छा हुआ है। आशा है कि आगे और भी कारखाने इसमें शामिल होंगे।

प्रबन्ध में मजदूर-मालिक सहयोग का आदर्श जितना सुन्दर है, उतना व्यावहारिक और सरल नहीं। जहां तक मंगल कार्य, शिक्षा आदि का सम्बन्ध है, सहयोग आसानी से हो सकता है, किन्तु उसके बाद वेतन, बोनस, डिविडेंड और मिल में अनुशासन आदि के प्रश्नों पर दोनों प्रतिनिधियों में मतभेद बहुत बढ़ सकते हैं। व्यापारिक रहस्यों को भी सबके सामने प्रकट करना संभव नहीं है। इसलिए मिल मालिकों को न कानून बनाकर विवश किया जाना चाहिए और न सहयोग को व्यापक क्षेत्र में ही प्रारम्भ करने पर जल्दी बल देना चाहिए। इस दिशा में एक नई समस्या और भी उग्र रूप धारण कर सकती है कि प्रबन्ध समिति के मजदूर सदस्यों के चुनाव के लिए कम्युनिस्ट-इन्टक-समाजवादी दल अनुचित संघर्ष करने लगें। इस संघर्ष को बचाने की चिन्ता भी करनी होगी।

सरकार सूती मिल चला रही है

बम्बई सरकार ने शोलापुर की कपड़ा मिलको स्वयं अपने हाथ में लेकर एक नया कदम उठाया है। यह मिल गत आठ अगस्त को अधिकारियों ने इसलिए बंद कर दी थी कि वे मिल चलाने में समर्थ नहीं थे। इस कारण साढ़े चार हजार मजदूर बेकार हो रहे थे। सरकार ने मजदूरों को रोजगार देने के लिए मिल ले ली है। नाम मात्र का किराया एक रुपया दिया जायगा। सरकार सभी प्रकार के कर वगैरह देगी, लेकिन मजदूरों को नियत वेतन फिलहाल नहीं देगी। अभी उन्हें दो तिहाई वेतन मिलेगा। यदि कुछ लाभ हुआ तो मजदूरों में बांट दिया जायगा। बम्बई

सरकार का यह परीक्षण मनोरंजन के साथ देखा जायगा। हम इसलिए इस का स्वागत करते है कि इस से सरकार को यह प्रतीत हो जायगा कि आज सूती मिलें किन कठिनाइयों में चल रही हैं, और यदि उन्हें बिना नुकसान के चलाना है तो व्यावहारिक कठिनाइयों को किस तरह दूर किया जाय। इससे प्रतिदिन वेतन वृद्धि, बोनस आदि की मांग करने वाले मजदूर नेताओं को भी स्थिति की वास्तविकता का ज्ञान हो जायगा।

आयकर : एक मनोरंजक अध्ययन

भारत सरकार के कुल राजस्व में से व्यक्तियों और संस्थाओं पर लगे कर आय कर का बड़ा भाग होता है और यह निरन्तर बढ़ता जाता है। रिजर्व बैंक की प्रकाशित रिपोर्ट से प्रतीत होता है कि १९५५-५६ की अपेक्षा १९५६-५७ में इस कर से ३४.६ करोड़ रु० की आमदनी अधिक हुई। १९५५-५६ में १८२.० करोड़ रु० की आमदनी हुई थी, जबकि इस वर्ष २१६.८ करोड़ रु० के कर लगाये गये। प्रथम वर्ष में ७९४.० करोड़ रु० की आय पर कर लगे थे, किन्तु दूसरे वर्ष ९२५.७ करोड़ रु० आय कर-योग्य समझी गई। गत वर्ष ५,२७,७३७ लोगों पर कर लगाया गया, जबकि इस वर्ष यह संख्या ५,७९,९०२ तक जा पहुँची। नीचे की तालिका से लगाये गये आय कर का विभाजन स्पष्ट हो जायगा—

	कर योग्य आय (करोड़ रु०)		कुल आय कर (करोड़ रु०)	
	१९५६-५७	१९५५-५६	१९५६-५७	१९५५-५६
व्यक्ति	५५१.८	५००.०	८७.०	७९.४
अविभक्त हिन्दू परिवार	६३.४	६२.२	११.०	११.०
अनरजिस्टर्ड फर्म	३२.७	३४.०	१.६	९.०
रजिस्टर्ड फार्म	५१.९	—	१.६	—
कम्पनियां	२२५.९	१८८.१	१०८.५	८२.५

इस तालिका से स्पष्ट है कि व्यक्तियों पर आय कर में जब १० प्रतिशत ही वृद्धि हुई, कम्पनियों पर आय कर में ३२ प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस सरकारी रिपोर्ट से और भी अनेक मनोरंजक बातें मालूम होती हैं। व्यापार और विविध पेशों से होने वाली आमदनी पर ३६ करोड़ रु० आय कर अधिक अधिक लगे हैं। (१३८ करोड़ रु० से बढ़कर १७४ करोड़ रु०) गत वर्ष इस मद में ४५२ करोड़ रु० करयोग्य आय कूती गई थी जबकि इस वर्ष ५७५ करोड़ रु० लगाई गई है। विविध व्यापारों में कर-योग्य आमदनी व आयकर (करोड़ रु० में) इस प्रकार कूते गये हैं–

यातायात	२४५	४७
बैंक बीमा आदि	८०	२८
कपड़ा, चमड़ा निर्माण	५५	२७

वेतनों पर आयकर में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। सरकारी नौकरों से ४.२ करोड़ रु० आयकर वसूल हुआ है, जब कि वेतनों से कुल आयकर २२.७ करोड़ रु० हुआ है। डिविडेंएड, सैक्योरिटियों पर ब्याज तथा सम्पत्ति पर आयकर में वृद्धि हुई है, जैसा कि निम्न तालिका से स्पष्ट है—

	आनुमानिक आय (करोड़ रु० में)		आयकर लगाया गया	
	१९५६-५७	५५-५६	१९५६-५७	५५-५६
डिविडैंएड	५५.००	४५.९७	२४.५०	१९.२६
सम्पत्ति	३४.००	२९.६९	७.००	६.११
ब्याज (सैक्यो०)	१४.००	१०.२१	६.४०	४.५४

आय के क्रम से आयकर कितनों से और कितना लिया गया, यह नीचे की तालिका से मालूम होगा—

कुल आय	जिन पर कर लगा	कुल कर करोड़ रु०	कुल का प्र.श.
२०००० से नीचे	५१०,५७३	२०.९	९.७
२००००– ५००००	अप्राप्य	२०.९	१३.७
५००००–१०००००	—	२४.९	११.५
१ लाख से ऊपर	६२७१※	१४१.०	६५.१

※ इसमें २४३९ कम्पनियां, २७१ अनिभक्त हिन्दू परिवार, तथा १३८० फर्में भी शामिल हैं।

—

सहकारी चीनी मिलें

उत्तर प्रदेश सरकार ने सहकारिता के आधार पर तीन नई चीनी मिलों की स्थापना के लिए प्रोत्साहन देने का निश्चय किया है। इसमें से प्रत्येक की पूंजी १ लाख २० हजार रुपये होगी। जिसमें से सरकार स्वयं दो तिहाई

रुपया देगी। शेष ४० हजार रुपया गन्ना उत्पादक देंगे। सरकार अपने हिस्से में से ४० हजार रुपये के शेयर लेगी और शेष ४० हजार रुपया सहकारिता विभाग ऋण के रूप में देगा। ये तीनों मिलें क्रमशः बीसलपुर (पीलीभीत), बुढाना (मुजफ्फर नगर) और देवकाली (गाजीपुर) में खोली जा रही हैं। इनके मकान बन रहे हैं और यह आशा की जाती है कि निकट भविष्य में चीनी बनने लग जायगी। प्रत्येक मिल में प्रतिदिन १ हजार मन गन्ना पेरा जायगा। ख्याल यह है कि किसानों को गन्ने का मूल्य १) रु० प्रति मन तो मिल जाय। यों चीनी मिलें १ रु० ७ आने के भाव पर गन्ना खरीदती हैं। लेकिन गुड़ या खांड बनाने में उन्हें १०-११ आने से ज्यादा नहीं मिलता। सहकारी मिलों को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से यह भी निश्चय किया गया है कि इन मिलों से न गन्ने का उप-कर लिया जाय और न उत्पादन-कर लिया जाय। उत्पादन कर चीनी मिलों को देना पड़ता है और गुड़ या खाण्ड सारी बनाने पर नहीं देना पड़ता। लेकिन इससे (खुली कड़ाही से गुड़ बनाने की पद्धति) चीनी ७॥-८ प्रतिशत से ज्यादा नहीं निकलती जब कि मिलों में १० प्रतिशत तक चीनी निकलती है। एक अनुमान के अनुसार इनमें से प्रत्येक मिल में १२० दिनों के कुल मौसम में करीब २॥ हजार मन चीनी का नुकसान होगा। देखना यह है कि इतना नुकसान उठा करके भी यदि किसानों को लाभ पहुँचाया जा सके तो सहकारी मिलों का यह परीक्षण महंगा नहीं होगा।

ग्रामदान और सामुदायिक विकास आंदोलन

पिछले करीब एक वर्ष से ग्रामदान और सामुदायिक विकास आंदोलनों के बीच सहयोग स्थापित करने का प्रशंसनीय विचार सामने आया है। पिछले सितम्बर में यलूवल में ग्रामदान सम्मेलन हुआ था। इस सम्मेलन में यह बात मानी गई थी कि सामुदायिक विकास आंदोलन और ग्रामदान आंदोलन आपसी सहयोग से चलने चाहिएं। तब से सामुदायिक विकास मंत्री, श्री दे तथा श्री जयप्रकाश नारायण इस विषय पर काफी विचार-विमर्श कर चुके हैं। बादमें अनेक समयों पर विचार-विनिमय किया गया, जिसमें योजना आयोग के नेताओं ने भी भाग लिया यह तय किया गया है कि ग्रामदान में मिले गांवों का सर्वांगीण विकास सामुदायिक विकास के कार्यक्रम द्वारा ही किया जाए और वही इसके लिए पूरी तरह से जिम्मेदार रहे। यह कार्यक्रम इस प्रकार चलाया जाय कि गांव वालों में भाई-चारा बढ़े, वे आत्मनिर्भर हों और उन्हें काम करने की प्रेरणा मिले। इन गांवोंमें कार्यक्रम चलानेका काम सरकारी विस्तार संगठनों को सौंप दिया जाएगा। इस काममें सर्व सेवा संघ विस्तार संगठनों की सहायता करेगा और कुछ क्षेत्रों में वह खुद विस्तार-कार्य करेगा। लोगों से दान में गांव लेने का काम सरकारी संगठन नहीं करेगा। खण्ड के अधिकारी भूदान तथा ग्रामदान में मिली जमीनों को लोगों में बांटने में सहायता पहुँचायेंगे। ग्रामदान के कारण कुछ समस्याएं उठ खड़ी हुई हैं, जैसे—सहकारी संस्थाओं को ऋण, पंचायत आदि। इन समस्याओं के हल के लिए सम्बन्धित कानूनों में संशोधन करने के लिए एक कार्यकारी दल बनाने का निर्णय किया गया है। यदि ग्रामदानी कार्यकर्त्ताओं की सेवा-भावना और सामुदायिक विकास खण्ड के साधनों का एकत्र समन्वय हो सके, तो इसमें कोई सन्देह नहीं कि कार्य की गति आगे बढ़ सकती है। इस बात से बचने का प्रयत्न करना चाहिए कि आडम्बर व लाल फीताशाही ग्रामदान के सात्त्विक कार्यकर्ताओं के कार्य में बाधा न डालने लगे।

—

शक्ति का विकेन्द्रीकरण

वास्तव में किसी देश की शान्ति का रक्षण किन्हीं चंद लोगों के ही हाथों में नहीं होना चाहिए, चाहे वे व्यक्ति कितने ही अच्छे और भले हों। पुराने जमाने में किसी राजा की सत्ता चलती थी, पर अब 'डेमोक्रेसी'—जन-तंत्र आया है, फिर भी 'क्रेसी' एकाध आदमीकी ही चलती है! नाम-मात्र के लिए प्रजा का प्रभुत्व है, शक्ति चंद लोगों के हाथ में ही रही है! यह आज के जन-तंत्र में बहुत बड़ा दोष रह गया है। उसे सुधारना होगा और वास्तव में देश का भला-बुरा करने की शक्ति लोगों के ही हाथ में लानी होगी। ग्रामदान होने पर ग्राम-ग्राम में स्वराज्य होता है, सारे देश की सत्ता विकेन्द्रित हो जातीहै।

—विनोबा

—

हमारी मुख्य समस्या : भूमिसुधार, सहकारी समितियां, ग्राम-उत्थान, ग्रामदान

(श्री उ० न० ढेबर ; अध्यक्ष, अखिल भारतीय कांग्रेस)

५ महत्त्वपूर्ण कार्य

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने अपने गत सितम्बर अधिवेशन में भूमि-समस्या पर विचार किया था। उसमें नीचे लिखी पांच बातों पर ध्यान केन्द्रित किया गया था :

(१) दूसरी पंचवर्षीय आयोजना में इंगित भूमि सुधारों को विभिन्न राज्यों में शीघ्र कार्यान्वित किया जाए। काश्तकारों को आवश्यक ऋण और अन्य सुविधाएं देकर प्रगतिशील भूमि-सुधार, उत्पादन को घटाने के बजाय बढ़ाने में निश्चित रूप से सहायता देंगे।

(२) काश्तकारों को भूधारण अथवा भूस्वामियों के अधिकार व मौरूसी हकों की दिशा में सुरक्षा दिलाने के लिए तुरन्त कारगर कदम उठाए जाने चाहिएं। जमीन को दुबारा वापस पाने का अधिकार इस प्रकार नियमित होना चाहिए कि काश्तकार के पास अपने लिए बहुत कुछ जमीन बाकी बच सके।

(३) सभी राज्यों में भूधारण की अधिकतम सीमा तुरन्त निर्धारित की जानी चाहिए। स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार इन आराजियों के आकार और स्वरूप में अन्तर होना स्वाभाविक ही है।

(४) काश्तकारों की बेदखली और तथाकथित सजग "आत्म-समर्पण" तुरन्त बन्द करना चाहिये।

(५) योजना आयोग की सिफारिशों के अनुसार देश के विभिन्न भागों में लगान की उचित दर तय की जानी चाहिए।

क्या हम भारत के किसानों को यह आश्वासन दिला सकते हैं कि निर्धारित समय के अन्दर यह काम कर सकेंगे और अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल होंगे ? आवश्यकता इस बात की है कि काश्तकारों के साथ निकट सम्पर्क हो। दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि से पूर्व भूमि-सुधारों को सफल बनाने से लोगों के दिमागों में एक क्रांति पैदा हो जाएगी।

भूमि-सुधार तो स्वीकारात्मक, व्यापक एवं क्रियात्मक चित्र का एक पहलू है। भूमि-सुधार वह पहला कदम है जिससे हमारी ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था के नवीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है। यदि ग्राम-पंचायत, बुनियादी तालीमी केन्द्र और सहकारी समिति एक 'शोषण रहित' तथा 'आदेश से मुक्त' गांव में अपनी जड़ पकड़ लें तो १० वर्ष के अन्दर ही एक नवीन सामाजिक-आर्थिक आधार की बुनियाद तैयार हो सकेगी। ग्राम्य जीवन का एक नया चित्र क्रमशः हमारी आंखों के सामने आता जा रहा है। नए गांव की जड़ें देश की धरती में होंगी। वह कोई उलटी तस्वीर नहीं होगी, जिसका आधार किसी कल-कारखाने में हो। कल-कारखाने जरूरी है, इससे इन्कार नहीं है, परन्तु उसका महत्त्व दर्शाने मात्र के लिए तस्वीर को उलट देना जरूरी नहीं।

सहकारी समितियां

एक प्रश्न सहकारी समितियों का है। योजना आयोग और सब लोगों का स्पष्ट मत है कि भारत की ग्राम्य व्यवस्था आखिरकार एक सहकारी ग्राम पर आधारित होगी।

(१) सभी मानते हैं कि खेती की अधिकाधिक विभिन्न प्रक्रियाओं में सहकारिता अपनाई जानी चाहिए और साथ ही ऋण, सिचाई, खाद, फसल, पैदावार की बिक्री आदि के लिए भी सहकारी तरीके काम में लाए जाने चाहिएं। अतः सेवार्थ सहकारी समितियों का क्षेत्र बहुत व्यापक है।

(२) बिखरी भूमि को इकट्ठा कर सहकारी खेती का प्रयोग, खास तौर पर, नई कृषि बस्तियों और ग्रामदान में प्राप्त गांवों में किया जा सकता है। कहना न होगा कि सहकारी खेती स्वेच्छा के आधार पर होनी चाहिए। और खेती के आकार बहुत बड़े न हों, जिससे कि संयुक्त किसानों में निजी निकट सम्पर्क प्रभावपूर्ण रूप में कायम रह सके।

(३) किसानों के दृष्टिकोण को कम व्यक्तिवादी और उसे सामुदायिक भावना के प्रति अधिक सजग बनाने के के लिए भी सहकारी खेती का तरीका आवश्यक है। शक की कोई गुंजाइश नहीं कि भारत के काश्तकारों की सच्ची

इस गरीबी को दूर करना है !!!

हम एक गांव में पहुँचे। बारह घरों की ही बस्ती है। सभी झोपड़ियां घास-फूस की थीं। एक घर गये। चार-पांच नन्हे-मुन्ने नंग-धड़ंग घूम रहे थे। धर के पुरुष तो मजदूरी के लिए गये थे। घर में प्रायः एक मास के लिए पर्याप्त हो, इतनी ही मकई थी। आश्रमके आचार्य श्री इन्द्रवदनभाई ने कहा कि यही घर तो यहां सबसे सुखी माना गया है।

हम दूसरे घर में गये। कितना छोटा था ! न ऊंचाई, न चौड़ाई ! उस छोटी-सी झोपड़ी में किसी तरह पलथी मार कर बैठ सके। बाजू में पड़े हुए मटकों की ओर श्री बबलभाई की नजर गयी। एक बंद था, दूसरे में एक ही समय बन सके. इतनी ही मकई थी। हमारे साथ की बहनों ने वहां की बहनों से बातें कीं। पता चला कि जिसमें पानी भर कर भी रख सकें, ऐसे बर्तन ही नहीं हैं, तो गिलास भी कैसे मिल पायेंगे।

इस घर में सात लोग थे। एक स्त्री एक ही वस्त्र लपेटे खड़ी थी। पूछने पर मालूम हुआ कि यही एक वस्त्र उसके पास है। एक महीने तक की ही मकई घर में थी। एक वृद्ध को छोड़ सभी पुरुष पहाड़ों पर गए थे। बूढ़ा लंगोटी पहने बैठा था। जन्मोपरान्त कभी वस्त्र का स्पर्श हुआ ही नहीं, ऐसे दीन-हीन बालक खड़े-खड़े नाश्ता कर रहे थे। नाश्ता याने भुनी हुई इमली ! बाजू के मटके में मकई की कांजी थी। यही था उनका रूखा-सूखा सुबह-शाम का भोजन !

कोरापुट के आदिवासियों के बीच 'रानी और मांडियां' खाकर जीवन बिताने वालों को देखा, तो इस साबरकांठा में 'महुड़ा' खाकर जीने वालों से मिला हूं, किन्तु आज के दृश्य ने तो व्यथित बना दिया। बेचारे जीवन का भार लिए किसी तरह जी रहे हैं।

—रमणिक झवेरी (भूदान यज्ञ से)

मुक्ति सहकारिता में ही है।

भारत में भूमिहीन श्रमिकों की एक बड़ी आबादी है, जो कि मुश्किल से गुजर कर पाती है। यह बात किसानों के उस समूह के लिए भी लागू होती है, जिसके पास पूरी जमीन नहीं है। मौजूदा आंकड़ों से पता चलता है कि यह कुल आबादी का ५६ प्रतिशत भाग है इस तरह के लोगों को हम खेती और छोटे पैमाने के घरेलू धंधों के लिए केवल सहकारिता द्वारा ही सहायता पहुँचा सकते हैं। सहकारिता एक ऐसा विश्वस्त तथा एक ऐसा अचूक उपाय है, जिसमें बहुत-सी कमियों को दूर कर सकने की सामर्थ्य है। जिस हद तक सार्वजनिक और सहकारी क्षेत्रों का विस्तार होगा, उस ही हद तक इस बात का भरोसा मिल सकेगा कि संगठित प्रयास और प्राविधिक प्रगति के लाभ समाज को सीधे प्राप्त हो रहे हैं। हमारे संगठन के कार्यक्रम का यही तो अंग है—एक सुसंगठित ग्राम समाज का विकास, जिसके लिए पहला कदम भूमि-सुधार है। अतः खादी और कुटीर उद्योगों का प्रचार कोई अलग कार्रवाई अथवा केवल सहायतार्थ कार्रवाई नही है। उसे विकेन्द्रित क्षेत्र की मुख्य भुजा के रूप में, जबकि दूसरी भुजा कृषि है, देश की समग्र अर्थ-व्यवस्था में एक बड़ा भाग अदा करना है।

गांवों की उपेक्षा

एक जमाना था जबकि कांग्रेस भारत के गांवों की उपेक्षा के लिए उस समय की सरकार की शिकायत करने में सबसे आगे रहती थी। आज बात उल्टी है। अब हम गांवों की उपेक्षा कर रहे हैं।

ग्रामदान आन्दोलन एक नया दृष्टिकोण है। यह हमारी सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था में व्याप्त असमानताओं के विरुद्ध संघर्ष मात्र नहीं है, बल्कि निजी सीमित लाभ प्राप्ति की प्रवृत्तियों की जड़ों तक पहुँचना है, जो आज मानव जीवन में अन्तर्निहित श्रेष्ठतम का विनाश करके इसके विकास को अवरुद्ध करती है। यह एक मूलभूत आन्दोलन है। यह लोगों पर, विशेषतः निम्नतम भाग के लोगो पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाल रहा है। मुख्य बात यह कि ग्रामजीवन को बिल्कुल एक नए सिरे से, व्यवस्थित करने का मौका देता है।

पूंजीवाद की विशिष्टतायें–२

प्रो० विश्वम्भरनाथ पाण्डेय एम० ए०

निजी उद्योग की प्रेरणा शक्ति

पूंजीवाद में ऐसी कोई केन्द्रीय सत्ता नहीं होती, जो किसी निश्चित योजना के अनुसार विभिन्न उद्योगों में होने वाले उत्पादन कार्यों को नियन्त्रित कर सके तथा सामाजिक दृष्टिकोण से उनमें परस्पर सामंजस्य स्थापित कर सके।

पूंजीवादी उद्योग लाभ की दृष्टि से परस्पर असम्बद्ध अनेक उद्योगपतियों के स्वतन्त्र साहस (enterprise) के आधार पर चलते हैं, उनके पीछे कोई ऐसी नियंत्रक संस्था नहीं होती, जो विभिन्न उद्योगों में लगने वाले उत्पादन के साधनों की मात्रा, उत्पादित वस्तुओं का परिमाण, गुण का मूल्य आदि निश्चित करे। विभिन्न क्षेत्रों के अनेकानेक उद्योग स्वतन्त्र रूप से ही चलते हैं तथा पूंजीवादी अर्थ तन्त्र का चक्र आदम-स्मिथ की 'अदृष्ट सत्ता' के सूक्ष्म इशारे पर स्वतः चलता रहता है। समाज की समस्त आर्थिक क्रियायें अपनी-अपनी स्वतन्त्र योजना के अनुसार होती हैं और उत्पादन व उपभोग तथा मांग और पूर्ति में मेल एक ऐसी शक्ति के द्वारा स्थापित होता है जो संवेदन शक्ति होती है। श्री जे० ए० साल्टर के शब्दों में 'पूंजीवादी अर्थ तन्त्र के प्रत्येक उद्योग स्वतन्त्र रूप से अधिकतम विवेक तथा सतर्कता से चलते हैं, पर आर्थिक क्षेत्र की विभिन्न क्रियाओं को मिलाने का कार्य तथा एक दूसरे से पृथक रहने वाले अनेक उद्योगपतियों के असम्बद्ध औद्योगिक कार्यों का सामञ्जस्य वस्तुतः स्थिति ज्ञान, संवाद, अभ्यास और बाजार की मांग और पूर्ति के कठोर नियम आदि जैसी एक अगोचर शक्ति के द्वारा होता है।

यह सम्भव है कि किन्हीं-किन्हीं उद्योगों में लम्बमान तथा क्षैतिज सहयोगिताओं के रूप में यत्र तत्र कुछ एक प्रतिष्ठानों का कार्य एक केन्द्रीय समिति (Board) के द्वारा किसी निश्चित कार्यक्रम के अनुसार होता हुआ पाया जाय, पर इनकी संख्या 'समुद्र में प्रायद्वीप की तरह (अत्यन्त कम) होती है, और पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के समस्त क्षेत्र की ठीक दृष्टि से तो इसे केन्द्रीय सत्ता कहा भी नहीं जा सकता।

आर्थिक प्रजातन्त्र के दोष

पूंजीवाद की इस 'केन्द्रीय सत्ता विहीन व्यवस्था' का सबसे बड़ा लाभ यह है कि इसके अन्तर्गत विविध आर्थिक क्रियाओं का प्रजातन्त्रीकरण हो जाता है। व्यक्ति को अपने इच्छानुकूल कार्यों को करने तथा व्यापारिक साहस और चुनाव की पूर्ण स्वतन्त्रता होती है। औद्योगिक प्रतिष्ठानों का कार्य स्वतंत्रतापूर्वक उनके मालिकों द्वारा उन्हीं के स्वतन्त्र निर्णय और बाजार की स्थिति के आधार पर होता है। किन्तु पूंजीवाद के इस तथाकथित 'आर्थिक प्रजातन्त्र' का दुष्परिणाम यह होता है कि—

(१) पूंजीवाद का उत्पादन-कार्य बाजार से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर होने के कारण गरीब और अकिंचन वर्ग की उन आवश्यकताओं की पूर्ति की वस्तुओं का उत्पादन नहीं होता जो क्रयशक्ति के अभाव में कभी बाजार में अपने को प्रकट नहीं कर पातीं। इसके विपरीत अतुल क्रयशक्ति से सम्पन्न होने के कारण धनी वर्ग अपनी विलासिता और भोग की वस्तुओं की मांग बाजार में अधिक से अधिक परिमाण में व्यक्त करता है। इसलिये देश के सीमित उत्पादक साधनों का अधिक अंश धनी वर्ग के उपभोग (विशेषतः उनके आराम और विलास) की वस्तुओं के निर्माण में ही नियुक्त हो जाता है। इस तरह जहां धनियों के कुत्तों तक के लिये विटामिन गोलियां तैयार हो जाती हैं, गरीबों के बच्चों के लिये दूध की सस्ती गोलियां नहीं बनतीं।

(२) एक ही उद्योग में अनेक स्वतन्त्र औद्योगिक प्रतिष्ठानों के कारण उनमें गला-कट प्रतिस्पर्द्धा होती है और तज्जनित विज्ञापनों व प्रचारों आदि पर बहुत से साधन व्यर्थ ही खर्च होते हैं, जिनका प्रयोग जनता के उपयोग के क्षेत्र में अपेक्षाकृत अधिक उपयोगिता के साथ हो सकता था।

(३) पूंजीवाद की प्रतिस्पर्द्धा के कारण छोटे-छोटे उत्पादक शनैः-शनैः बाजार से मिट जाते हैं। इस प्रकार

अर्थ तन्त्र में कुछ का एकाधिकार (Monopoly) स्थापित हो जाता है तथा थोड़े से पूंजीपतियों के हाथ में देश की सम्पूर्ण आर्थिक शक्ति केन्द्रित हो जाती है और 'प्लूटोक्रेसी' नामक उस व्यवस्था का जन्म होता है, जहां शासन वस्तुतः थोड़े से पूंजीपतियों के हाथ में होता है।

(४) पूंजीवादी अर्थतन्त्र में पूंजीपतियों के अल्प तथा मजदूरों के बृहत समाज के हित में परस्पर विरोध होता है। इससे उनमें संघर्ष पैदा होता है और कभी हड़तालें होती हैं तो कभी नियोक्ताओं की तरफ से तालेबन्दियां। दोनों ही स्थिति में उत्पादन का कार्य रुकता चलता है और राष्ट्रीय आय की हानि होती है।

(५) व्यापारिक चक्र पूंजीवादी अर्थव्यवस्था की विशेषतायें हैं। कुछ निश्चित वर्षों के बाद (प्रायः प्रत्येक १० वर्ष बाद) निश्चित रूप से मन्दी और तेजी की अवस्थायें आती रहती हैं।

प्रबन्ध और नियन्त्रण

पूंजीवाद की दूसरी प्रमुख विशेषता पूंजीवादी उद्योगों के प्रबन्ध और नियन्त्रण से सम्बन्धित है। हम जानते हैं कि पूंजीवाद में उत्पादक साधनों तथा उद्योगों पर व्यक्तिगत अधिकार स्वामित्व और नियन्त्रण होता है। किन्तु किसी औद्योगिक प्रतिष्ठान के प्रबन्ध और नियन्त्रण का अधिकार केवल उसका होता है, जो उस प्रतिष्ठान से सम्बन्धित व्यावसायिक खतरों को उठाता है। पर साहस और व्यावसायिक आपद (Risk) के साथ नियन्त्रण का साहचर्य, श्री राबर्टसन के शब्दों में पूंजीवाद के औद्योगिक कार्य पद्धति का 'स्वर्ण सूत्र' है। इस स्वर्ण सूत्र की आधार रूप से दो मुख्य मान्यतायें हैं—

(१) खतरे (आपद) के कारण ही विवेक पूर्ण व्यावसायिक निर्णय सम्भव होते हैं; और

(२) गलत व्यावसायिक निर्णयों की आपदा को साहसपूर्वक झेलने के लिये मनुष्य तभी तैयार हो सकता है जब उसे स्वयं निर्णय का अधिकार भी मिले।

लाभ का प्रलोभन व हानि की आशंका

पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में उत्पादक साधनों के नियोजन तथा उद्योगों के प्रबन्ध के पीछे जो कुछ भी विवेक और सतर्कता होती है, उसके दो कारण हैं लाभ का प्रलोभन और हानि की आशंका। व्यावसायिक आपद का अर्थ यह है कि लाभ और हानि व्यवसायों में अनिश्चित होती है। लाभ के प्रलोभन से उद्योग प्रारम्भ होते हैं किन्तु हानि की आशंका से उन उद्योगों का प्रबन्ध अधिकतम प्रतिभा और कुशलता के साथ संभाला जाता है। यही कारण है कि समस्त पूंजीवादी अर्थतन्त्र की दृष्टि से भले ही उत्पादन के साधनों का गलत वा बेकार नियोजन होता हो, विशेष-विशेष औद्योगिक प्रतिष्ठानों में तो उनका नियोजन और प्रबन्ध इतनी सतर्कता और बुद्धि से होता है, जितना समाजवाद में सम्भव नहीं। इसका प्रमुख कारण यह है कि हानि की आशंका सदा प्रबन्धकर्त्ताओं की अयोग्यता एवं अविचारिक कार्य पद्धति तथा सुस्ती पर स्वतः नियंत्रण का काम करती चलती है। हर उद्योग का मालिक बाजार की अनिश्चयता तथा उसके फलस्वरूप दिवालिया होने के भय से डरता रहता है। इसीलिये पूंजीवाद में उद्योगों का नियन्त्रण उन व्यक्तियों के हाथ में केन्द्रित होता है, जो उस उद्योग के आपद (खतरे) को उठाते हैं। दूसरे शब्दों में उद्योगों का स्वामित्व और नियन्त्रण आपद के साथ सम्बद्ध होता है। किन्तु इस 'स्वर्ण-सूत्र' के कुछ स्पष्टीकरण विचारणीय हैं। यथा—

(१) ज्वाइंट स्टाक कम्पनियों में ऐसा लगता है कि साहस, आपद और निमंत्रण में पार्थक्य है। साहस और तदुत्पन्न व्यावसायिक आपद सभी अंशदारों का होता है किन्तु कम्पनी का नियंत्रण एक निर्देशक समिति के हाथ में ही होता है। हिस्सेदारों व अधिकारियों का नियंत्रण में कोई हाथ नहीं होता। किन्तु यह बात केवल ऊपर ऊपर की हुई। निर्देशक हिस्सेदारों के ही प्रतिनिधि होते हैं, इस तरह निर्देशकों के अतिरिक्त अंशदारों का भी हाथ नियंत्रण में, यद्यपि अप्रत्यक्ष रूप से, होता ही है। इसके अतिरिक्त ये निर्देशक जिनके हाथ में कम्पनी का नियंत्रण होता है अन्य अंशदारों की तरह ही साहसिक तथा व्यावसायिक आपद को उठाने वाले होते हैं। इसलिये कि उनका हिताहित अन्य अंशीदारों के हिताहित से भिन्न नहीं होता, उनके हाथ में अन्य अंशीदार निश्चिन्त भाव से अपने नियंत्रण का अधिकार सौंप देते हैं, जो कार्य संचा

लन को सुविधा प्रदान करता है। इस तरह ज्वाइंट स्टाक कम्पनी का प्रबन्ध ऊपर से पूंजीवाद के स्वर्ण सूत्र का जितना अपवाद मालूम पड़ता है, उतना नहीं है।

(२) द्वितीयतः इन्स्योरेन्स कम्पनियां, सट्टेबाज तथा रुपया उधार देने वाले बैंक आदि कतिपय उद्योगों के व्यावसायिक-आपद का कुछ अंश ग्रहण करते हैं, किन्तु उनका उन उद्योगों के नियंत्रण में कोई अधिकार नहीं होता। स्वर्ण सूत्र के इस अपवाद को तीन दृष्टियों से देखना चाहिये।

(क) प्रथमतः ये बाहर से खतरा उठाने वाले व्यक्ति व संस्थायें अपने खतरे को कुछ इस प्रकार प्रतिबन्धित कर देती हैं कि उनका खतरा नहीं के बराबर हो जाता है। (ख) दूसरे, इनके खतरे उन उद्योगों के मुख्य व्यवसाय सम्बन्धी खतरे नहीं होते और जितने अंश में इनके खतरे का सम्बन्ध कम्पनी के प्रबन्ध के साथ होता है, उतने अंश में इन्हें नियंत्रण का भी अधिकार मिलता है। (ग) तृतीयतः यह बहुत महत्वपूर्ण बात है कि ये इन्स्योरेन्स कम्पनियां तथा बैंक आदि अपने प्रासंगिक खतरे का पुरस्कार पाते हैं जो सम्बन्धित उद्योग की लाभ हानि से स्वतन्त्र होता है। अतः माना जा सकता है कि इनका खतरा स्वयं एक व्यवसाय है, जिसके नियंत्रण का भी अधिकार पूरा इन्हीं के हाथों में होता है।

अतः पूंजीवाद के स्वर्ण-सूत्र का कोई व्यतिक्रम हम यहां भी नहीं पाते।

मजदूर व उद्योग का नियंत्रण

(३) तीसरा उदाहरण मजदूर वर्ग का है जो विभिन्न उद्योगों में नियुक्त होकर प्रचुर आपद तो उठाता है किन्तु उनके प्रबन्ध और नियंत्रण में उसका कुछ भी हाथ नहीं होता। सम्बन्धित उद्योगों से उत्पन्न होने वाले मजदूरवर्ग के आपद तीन प्रकार से पैदा हो सकते हैं। (क) यदि उन उद्योगों का प्रबन्ध अयोग्यता और अकुशलतापूर्वक हो; (ख) यदि मांग में परिवर्तन अथवा विज्ञान की प्रगति के कारण उत्पादित वस्तुएं समय के प्रतिकूल व अरुचिकर अथवा घटित प्रकार का हो। (ग) यदि व्यापार चक्र का मन्दी काल आ जाय। इन तीनों अवस्थाओं में मजदूरों को बेकार हो जाना पड़ेगा। मजदूरों के आपद का पहला कारण उन्हें उद्योगों के प्रबन्ध में हाथ दिलाने के लिये पर्याप्त नहीं है। मजदूर किसी भी डूबते उद्योग को छोड़कर अपेक्षाकृत अधिक आसानी के साथ अन्य उद्योगों में जा सकते हैं, किन्तु पूंजीपति ऐसा नहीं कर सकता। वह उतनी आसानी के साथ अपनी सभी पूंजी को एक उद्योग से हटाकर दूसरे में नहीं नियुक्त कर सकता। अस्तु, उसे तो डूबते जहाज के साथ स्वयं डूबना होता है। पर मजदूर डूबते जहाज को छोड़ सकता है। अतः जहाज के साथ स्वयं डूबने वाले कैप्टन की अपेक्षा आपदकाल में भागने में समर्थ मजदूरवर्ग के हाथ में जहाज का इंजिन सौंपना युक्तिसंगत नहीं है। मजदूरों के आपद के दूसरे कारण के लिये उत्तरदायी उद्योगों के प्रबन्धकर्त्ता नहीं अपितु समाज और विज्ञान है। और यह नितांत संदिग्ध है कि मजदूरों के प्रबन्ध में हाथ दे देने मात्र से मांग अथवा वैज्ञानिक प्रगति की दृष्टि से उत्पादित वस्तुयें कभी नहीं पिछड़ेंगी। इसी प्रकार मजदूरों के खतरे का तीसरा कारण व्यापार चक्र से सम्बन्धित है। किन्तु व्यापार चक्र के कारण कुछ इतने रहस्यपूर्ण व अज्ञात हैं कि उनका निराकरण प्रबन्ध में मजदूरों के हाथ हो जाने मात्र से कदापि नहीं हो सकता। इस प्रकार मजदूरों के व्यावसायिक आपद के तीनों कारणों में से कोई भी ऐसा नहीं है, जो तर्क के बल पर उन्हें प्रबन्ध का अंशदार बना सके। अतः पूंजीवाद का स्वर्ण-सूत्र यहां भी विरूप नहीं होता।

किन्तु इस सम्बन्ध में एक और विचारणीय बात है। आजकल उद्योगों के प्रबन्ध में मजदूरों को भी अंशदार बनाने का प्रश्न इतना महत्वपूर्ण हो गया है कि इसे इतनी आसानी से केवल ऊपरी तर्क के आधार पर एक ओर नहीं हटा दिया जा सकता। व्यावहारिक दृष्टि से भी समस्या पर विचार करना होगा। उद्योगों के डूबने से मजदूरों के जीवन-यापन का सहारा टूट जाता है और फिर उतना आसान नहीं होता कि उनकी नियुक्ति अन्य उद्योगों में तत्काल हो जाय, क्योंकि श्रम की गतिशीलता में अनेक बाधायें होती हैं। इस तरह मजदूरों का आपद पूंजीपतियों के केवल कुछ लाख रुपयों के डूब जाने के आपद से अधिक भयंकर होता है। और यह न्याय्य है कि उन्हें उद्योगों का समान शुभ-चिन्तक मानकर नियंत्रण व प्रबन्ध में हिस्सा दिया जाय।

देश में उद्योग-धन्धों का तेजी से विकास

सन् १९५७ में उद्योग धंधों के विकास की गति और भी तेज हुई है। औद्योगिक उत्पादन का साधारण सूचक अंक जो १९५६ में १३३ था, इस वर्ष के पहले नौ महीनों में ही बढ़कर १४८.८ हो गया। यद्यपि इस वर्ष विदेशी-मुद्रा की बड़ी किल्लत रही, फिर भी यह उल्लेखयोग्य है कि इस साल उन उद्योगों में भी उत्पादन कम नहीं हुआ, जो अपना बहुत सा कच्चा माल व अन्य सामग्री विदेशों से मंगाते हैं। इस साल भारी उद्योगों में तो अधिक उत्पादन हुआ ही, इंजीनियरी और मशीनरी जैसे नये उद्योगों में भी पिछले साल से अधिक उत्पादन हुआ। जनता के व्यवहार की वस्तुएं भी पहले से अधिक मात्रा में तैयार हुईं।

इस साल अनेक नये किस्म की वस्तुएं तैयार की गयीं। इनमें मशीनी औजार जैसे—चक्की, खराद मशीन, पानी की शक्ति से चालित सतह कूटने की मशीन, सिलाई-मशीन की सुइयां, इंजेक्शन लगाने की सुइयां, डिजेल सड़क-इंजन मोटर गाड़ियों के क्लच ब्रेक, प्लास्टिक का कच्चा माल रासायनिक प्रचालक आदि शामिल हैं।

भारी मशीनें विदेशों से आती हैं, परन्तु इस साल विदेशी-मुद्रा की विशेष कठिनाई थी। इसलिए विदेशी फर्मों से यह बंदोबस्त किया गया कि उनके दिये माल की कीमत बाद में चुकायी जाएगी। सन् १९५७ के ११ महीनों में, ८९ ऐसी औद्योगिक योजनाएं स्वीकार की गयीं, जिनमें बाहर से मंगाये यंत्रादि का दाम बाद में चुकाने का समझौता हुआ।

इस प्रकार इस वर्ष में लगभग ४२ करोड़ ५८ लाख रु० की ऐसी यंत्र सामग्री विदेशों से खरीदी गयी, जिसका दाम बाद में चुकाया जाएगा। इस व्यवस्था से सीमेंट, चीनी, सूती वस्त्र, रसायन, तापसह भट्टियां और इंजीनियरी उद्योगों ने लाभ उठाया। विलम्बित भुगतान के अलावा इस वर्ष लगभग ८ करोड़ रु० की विदेशी पूंजी भी भारतीय उद्योगों में लगायी गयी।

सार्वजनिक क्षेत्र में उर्वरक कारखाने, कोयला खानों और भारी मशीनों के कारखाने के लिए भी बिलम्बित भुगतान के अंतर्गत सामान मंगाया गया। इसके अलावा इस साल सोवियत रूस के साथ एक समझौता हुआ, जिससे भारी मशीनों तथा अन्य चीजों को पांच बड़ी योजनाओं के लिए रूस से ५० करोड़ रूबल उधार लिया गया। इसी साल बाद में कीमत चुकाने के वादे पर 'नंगल उर्वरक और भारी पानी योजना' के लिये भी विदेशी फर्मों को तीन बड़े ठेके दिये गये।

इस्पात के नये कारखाने

राउरकेला और भिलाई के इस्पात कारखानों के निर्माण की प्रगति इस वर्ष अच्छी रही। निजी क्षेत्र में भी दो बड़े कारखानों के विस्तार का काम संतोषजनक रहा। आशा है कि सन् १९५८ में इस्पात उद्योग के विस्तार का कम से कम पहला चरण तो पूरा हो ही जाएगा। सिंदरी के उर्वरक कारखाने के विस्तार का काम भी आगे बढ़ा।

१९५७ में भारी मशीनों के कारखाने की स्थापना का प्रारम्भिक अध्याय पूरा किया गया। इससे अब देश में इस्पात और भारी रसायन कारखाने के मुख्य यंत्र बनने लगेंगे।

अधिक लोगों को रोजगार

उद्योगों का उत्पादन बढ़ने के साथ-साथ इनमें अधिक कर्मचारियों को काम मिला। उदाहरणार्थ, १९५७ में सूती

एक दूसरे दृष्टिकोण से यह बात स्वयं पूंजीपतियों के हित में भी है। यद्यपि यह नहीं कहा जा सकता कि मजदूरों को प्रबन्ध में भाग दे देने मात्र से व्यापार चक्र की मन्दी की आशंका सदा के लिये जाती रहेगी, पर इतना अवश्य कहा जा सकता है कि असन्तुष्ट मजदूर वर्ग उद्योगों के समक्ष एक संक्रान्ति (Crisis) उत्पन्न कर सकते हैं, हड़तालों को अधिक भयंकर और दीर्घ बना सकते हैं तथा 'कम काम करो' की मनोवृत्ति का प्रयोग कर सकते हैं, और उत्पादन को लगातार आघात पहुँचा सकते हैं। ये सब संभावनायें प्रचुर अंश में दूर हो जायेंगी, यदि उन्हें भी उद्योगों का समकक्ष शुभचिन्तक और अंशीदार बना दिया जाय।

कपड़ों के कारखानों में पिछले वर्ष की अपेक्षा १४,००० मजदूर, साइकिल उद्योग में २,०००, मोटर उद्योग में १,३५०; बिजली, इंजीनियरी उद्योगों में १,०००, सीमेंट में ५००, रेयन में २,०००, मशीनी तथा साधारण इंजीनियरी उद्योगों में ४,४०० अधिक व्यक्ति काम कर रहे थे।

१९५७ में इन उद्योगों में पिछले वर्ष के मुकाबले उत्पादन भी अधिक हुआ। इस साल ५५ लाख टन सीमेंट बनी। यह पिछले साल के उत्पादन से ५ लाख ७ हजार टन अधिक है। इस साल ४ करोड़ २३ लाख ४० हजार टन कोयला खानों से निकाला गया, जबकि पिछले साल ३ करोड़ ९४ लाख २० हजार टन निकाला गया था। पिछले साल १३,१६,००० टन इस्पात तैयार किया गया। इस साल यह बढ़कर १३,४२,००० टन हो गया।

अनुमान है कि देश की कपड़ा मिलों में लगभग ५ अरब, ३२ करोड़ ७० लाख गज कपड़ा बनाया गया, जबकि पिछले वर्ष ५ अरब ३० करोड़ ७० लाख गज कपड़ा बनाया गया था। यह वृद्धि बहुत नहीं है, परन्तु इस साल कपड़ा बाजार की मद्दों को देखते हुए यह महत्त्व-पूर्ण है। इस साल सूत का उत्पादन १० करोड़ ३० लाख पौंड अधिक हुआ, यानी कुल उत्पादन १ अरब ७७ करोड़ ४० लाख पौंड हुआ।

उपभोग्य वस्तुएं बनाने वाले उद्योगों की प्रगति और भी अधिक रही। मसलन इस साल ८ लाख साइकिलें बनीं। ये पूरी यहीं बनायी गयीं। पिछले साल से यह संख्या १ लाख ३६ हजार अधिक है। सिलाई की मशीनें भी पिछले साल से ५०,००० अधिक बनीं। अनुमान है कि इस साल सिलाई की कुल १ लाख ८ हजार मशीनें बनीं। दाढ़ी बनाने का ब्लेड हर रोज के इस्तेमाल की वस्तु है। इस साल इसका उत्पादन २६ करोड़ ५० लाख से बढ़कर ३६ करोड़ ४० लाख हो गया। मोटरगाड़ियों के उत्पादन में भी वृद्धि हुई। इस साल लगभग ३३,४०० मोटर गाड़ियां बनायी गयीं। पिछले साल ३२,१३८ बनी थीं।

१९५७ में १ लाख ८५ हजार रेडियो सेट, पिछले साल से ३४ हजार अधिक तैयार किये गये। बिजली के पंखों के उत्पादन में भी ५० प्रतिशत की वृद्धि हुई, और कुल ५ लाख १३ हजार पंखे बनाये गये। इस साल बिजली की बत्तियों का उत्पादन २ करोड़ ९८ लाख ५० हजार से बढ़कर ३ करोड़ ३० लाख हो गया। बिजली की प्रकाश-नलियों का उत्पादन भी ८ लाख ८१ हजार से १० लाख हो गया।

साबुन (१ लाख १५ हजार टन), सिगरेट (२७ अरब), कागज (२ लाख १० हजार टन) और पेंसिलों (७ लाख ६० हजार ग्रुस) का उत्पादन भी बढ़ा।

अधिक मशीनें

मशीनी औजार तथा यन्त्रों का उत्पादन सबसे अधिक बढ़ा। मशीनी औजारों का उत्पादन दुगुने से भी अधिक हुआ और इनका मूल्य २ करोड़ २० लाख रु० था। १९५६ में करीब ३० लाख रु० की पटसन मशीनें बनीं थीं। इस साल लगभग १ करोड़ ४ लाख रु० की बनीं।

१९५७ में १५,४०० डिजेल इंजन बनाये गये, जब कि पिछले साल केवल १२,०१५ इंजन बनाये गये थे। इस साल बिजली के पम्प भी अधिक बने। पिछले साल कुल ४७,००० पम्प बने थे। इस साल ६०,००० बने। इस साल ४ लाख ५० हजार अश्व शक्ति की मोटरें बनीं। यह पिछले साल के उत्पादन से २५ प्रतिशत अधिक है। बिजली के ट्रान्सफार्मरों का उत्पादन १२ लाख किलोवाट रहा, जो पिछले वर्ष के उत्पादन से ३० प्रतिशत से भी अधिक है।

१९५७ में ७,२२८ टन अलमुनियम तैयार हुआ। १९५६ से यह १२०० टन अधिक था। तांबे और सीसे के उत्पादन में भी वृद्धि हुई। बाहर से आने वाले कच्चे माल की कमी के कारण अंजन का उत्पादन कुछ घटा।

रसायनों में सोडा एश, कास्टिक सोडा, गंधक का तेजाब, सुपर फास्फेट और क्लोरीन का उत्पादन काफी

(शेष पृष्ठ १०३ पर)

पंचवर्षीय विकास
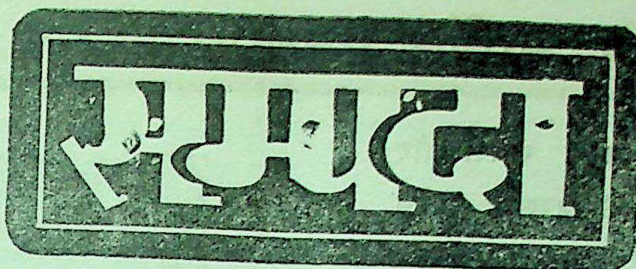
योजना परिशिष्ट

फरवरी, १९५८

राष्ट्र को उद्बोधन

★ श्री जवाहरलाल नेहरू
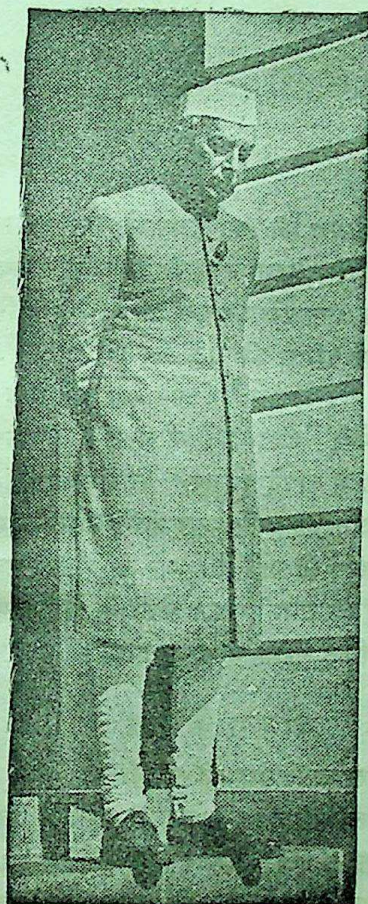
विदेशी पत्रों के कुछ आलोचकों ने लिखा है कि भारत का प्रधानमंत्री इस पशोपेश में है कि भारत की तटस्थता की नीति पर कायम रहा जाए और विदेशी सहायता त्याग दी जाए या तटस्थता नीति (त्याग) दी जाए और सहायता स्वीकार की जाए।

मैं समस्त संसार को कहना चाहता हूँ कि भारत धमकी, दबाव या सहायता के प्रलोभन से अपनी नीति में परिवर्तन न करेगा। यदि हमें कोई ऋण देना नहीं चाहता है तो वह अपना रुपया अपने पास रखे। हमारी रचना ऐसी नहीं हुई है कि हम धमकी से अपनी नीति बदल दें। कुछ समय से हमारा ध्यान कुछ बंट गया है और हम सहायता के लिए दूसरे देशों की ओर देखने लगे हैं। यह ख्याल पैदा हो गया मालूम होता है कि हम बाहरी सहायता के बिना सफल नहीं हो सकते। यह कोई अच्छा ख्याल नहीं है।

हम अपनी खाद्य-समस्या को हल करने के लिए प्रभावकारी कदम उठा कर भारत की शक्ल ही बदल सकते हैं। हमें इसके लिए विदेशी सहायता पर निर्भर नहीं रहना है। हमने अब तक भय या धमकी से कभी अपनी नीति नहीं बदली। हम विदेशी सहायता बिना काम चला लेंगे, पर झुकेंगे नहीं। हम युद्ध के भय या कर्ज न मिलने की धमकी से अपनी नीति कदापि नहीं बदल सकते। हमें कठोर परिश्रम करके ही समाजवाद की ओर निश्चित कदम उठाने हैं।

यह ठीक है कि विदेशी मुद्रा की कठिनता से कई समस्याएं पैदा हो गई हैं। हमें अनाज और रक्षा सम्बन्धी चीजों के आयात पर खर्च करना पड़ता है जिसकी पहले व्यवस्था नहीं की गई थी। यह ठीक है कि हमसे कुछ गलतियां भी हुई परन्तु इसका कारण यह था कि हम आगे बढ़ने की तेजी में थे।

देश की वर्तमान आर्थिक समस्याएं

श्री ए० डी० श्राफ

हमारी गौरवशाली पंचवर्षीय योजना और कार्यनीति में कुछ दोष ऐसे अवश्य हैं, जिनके कारण हम अभिलाषित फल नहीं पा रहे। उन्हीं का निर्देश करते हुए देश के महान् अर्थशास्त्री और प्रमुख उद्योगपति श्री ए. डी. श्रांफ ने कुछ विचारणीय सुझाव उपस्थित किये हैं।

— लेखक —

सुन्दर, परन्तु अड़ियल घोड़ा

द्वितीय पंचवर्षीय योजना एक विशेष दर्शन पर आधारित है जिसका नाम है समाजवादी ढंग की समाज-रचना। मुझे विश्वास है, अब तक, योजकों तथा उनके समर्थकों को अनुभव हो गया होगा कि यह दर्शन उस घोड़े के समान है, जो घुड़साल में अति सुन्दर लगता है, किन्तु यात्रा में अड़ियल टट्टू सिद्ध होता है। हमारे जैसे देश में आवश्यक साधनों और सुविधाओं का विचार किए बिना कोई योजना बनाना एक ऐसा अधूरा और अयथार्थवादी प्रयास है। योजना अनेक अवस्थाओं में छिन्न-विछिन्न हो गई है। इन कारणों में से अनेक को पहले ही देखा जा सकता था तथा अनेक को सरलतापूर्वक टाला जा सकता था। उदाहरणार्थ, बाह्य प्रसाधनों तथा आन्तरिक प्रसाधनों का अनुमान इतना अधिक काल्पनिक था कि उसे किसी परिस्थिति में क्रियात्मक रूप प्रदान नहीं किया जा सकता।

एक दूसरे से सम्बद्ध निर्धारित लक्ष्यों के बीच एकसूत्रता कम थी और इसलिए योजना और विकास का रूप असन्तुलित होना स्वाभाविक था। विभिन्न अंगों के आपसी सम्बन्धों का विचार किए बिना प्राथमिकताएं प्रदान की गईं। यह बात नहीं समझी गई कि कारखानों और बस्तियों, बांधों और जहाज के कारखानों के निर्माण केवल तिथि निश्चित कर देने से नहीं हो सकते, उसके लिए सीमेंट और इस्पात जैसी वस्तुओं का भण्डार भी चाहिए। यातायात के साधनों का विकास किये बिना उद्योग के ऊंचे लक्ष्य निर्धारित कर लिये गये। संक्षेप में, द्वितीय पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ हुए १८ महीने भी न बीते थे कि यह अनुभव किया गया कि वह योजना तो व्यावहारिक नहीं है।

प्रारम्भ में योजना की आलोचनाओं का यह कह कर उत्तर दिया गया कि योजना लचीली है और प्रतिवर्ष उस पर विचार किया जाता रहेगा। कुछ भी हो, यह सिद्ध हो गया कि प्रति वर्ष परीक्षा की बात अव्यावहारिक है। आप ऐसी योजनाएं हाथ में लेते हैं जिनके पूर्ण होने में दो, तीन या पांच वर्ष लगेंगे, आप इन योजनाओं के आधार पर देश और विदेश में वायदे पूरे करने का आश्वासन देते हैं तब प्रतिवर्ष योजना को आगे चालू रखने न रखने पर विचार करने का कोई अर्थ ही नहीं है। जो वायदे किए गए हैं, वे इस प्रकार के हैं कि उनको पूरा न करने से नैतिक पतन तो होगा ही, अत्यधिक महंगा भी सिद्ध होगा।

योजना के तत्व

आवश्यकता आविष्कार की जननी है, और इसलिए योजक ने एक नवीन कल्पना खोज निकाली है जिसे कहा जाता है 'योजना के तत्व' (Core of the plan)। द्वितीय पंचवर्षीय योजना के मूल रूप में इसका कहीं नाम नहीं है। अभी तक 'योजना के तत्व' की व्याख्या नहीं की गई है और इससे पूर्व उसकी व्याख्या हो, उसे और भी आकर्षक नाम दे दिया गया है, 'योजना के मूल तत्व' (Hard core of the plan)। जिन अधिकारियों पर योजना को कार्यान्वित करने का दायित्व है, वे जनता का मनोविज्ञान समझने

में बुरी तरह असफल रहे हैं। अनिश्चित और लचर परिभाषाओं के द्वारा संदिग्ध वातावरण का निर्माण हो रहा है, जिसके कारण देश में निरुत्साह की भावना आज घर किए जा रही है। किसी भी राष्ट्र की किसी योजना के लिए सबसे अधिक घातक वस्तु यदि कोई है तो यह कि उस राष्ट्र के जनमानस में यह प्रश्न बना रहे कि आगे क्या होगा। लोगों ने तो इस बात पर भी संदेह व्यक्त करना शुरू कर दिया है कि सरकार के कर्णधारों को अपनी स्थिति का भी ज्ञान है अथवा नहीं। अभी हाल में वित्तमंत्री ने संसद् में कहा था कि वह यह स्पष्ट करने की स्थिति में नहीं कि आगामी बजट के काल तक योजना कैसा रूप धारण कर लेगी। लोगों का पूछना स्वाभाविक है कि इस बीच क्या होगा?

× × ×

हमारी साख

विदेशी मुद्रा के प्रश्न को ही ले लीजिए। ३० नवम्बर १९५६ को हमारी शेष विदेशी मुद्रा का परिमाण ५३६ करोड़ रुपया था। इस वर्ष २९ नवम्बर को यदि हम अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक कोष से प्राप्त हुए ६५ करोड़ रुपए के कर्जे को छोड़ दें तो, हमारी विदेशी-मुद्रा का परिणाम घट कर जनवरी ५८ के दूसरे सप्ताह में केवल १९८ करोड़ रुपया रह गया। १९५६ में जिस लापरवाही के साथ लाइसेंस दिए गए, उसके कारण देश में भीषण संकट उपस्थित हो गया है। आगामी १८ महीनों में हमारी न्यूनतम आवश्यकताएं ही इतनी भारी हैं कि यह गंभीर समस्या उत्पन्न हो गई है कि उन्हें कैसे पूरा किया जा सकेगा। इसके साथ, आज तक यह कभी नहीं बताया गया कि ये लाइसेंस किस नियम के अनुसार और किस आधार पर दिए गए और ऐसा भी कोई यंत्र है अथवा नहीं, जो सरकार को समय समय पर अथवा किसी एक निश्चित समय पर बताता रहे कि देशमें कितने लाइसेंस प्रदान किए जा चुके हैं। किसी न किसी ने इस मामले में गोलमाल अवश्य किया है। आज भी यह नहीं बताया जा रहा कि १९५६ तथा चालू वर्ष में कितने लाइसेंस दिए जा चुके हैं। अधिकृत आंकड़े न होने के कारण किए गए वायदों के सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न प्रकार के अनुमान किये जा रहे हैं। कहीं-कहीं उन्हें ८०० से १००० करोड़ रुपए तक कूता जा रहा है। ये हैं हमारे वास्तविक वायदे। ईश्वर ही जानता है कि हम वास्तविक प्रसाधनों और अपने कुल वायदों के बीच विद्यमान अन्तर की पूर्ति किस प्रकार करेंगे।

× × ×

देर ही क्यों न हुई हो, एक बात अवश्य हुई है कि वास्तविक स्थिति का सामना करने के लिए अधिकारी वर्ग अब सजग हुआ है और उसने अपने प्रसाधनों को बढ़ाने और बर्बादी को रोकने के प्रयास प्रारम्भ कर दिए हैं। आयात-नीतिमें अब विद्यमान स्थिति का सामना करने के लिए कठोर प्रयास किए जाने लगे हैं। मुझे पता नहीं कि जनता को कहां तक ज्ञात है कि हमारे सामने विदेशों में स्वदेश की साख व प्रतिष्ठा को बनाये रखने की भीषण समस्या उपस्थित हो गई है। अब तक भारत ने सब दायित्वों को पूरा करके अपनी एक श्रेष्ठ साख जमाई है। उसने सब देनदारियां अन्तर्राष्ट्रीय या विदेशी बाजारों में ठीक समय फुर्ती के साथ अदा की हैं। यद्यपि भीषण स्थिति उपस्थित हो गई है, तथापि देश के प्रत्येक देशभक्त नागरिक का कर्तव्य है कि वह किसी भी कीमत पर सरकार की सहायता करे, जिससे यह प्रमाणित हो सके कि भारत आगे भी अपने वायदे पूरा करता रहेगा।

उन लाइसेंसों को बिल्कुल समाप्त कर देना चाहिए, जिनका प्रयोग गत छः महीनों में नहीं किया जा सका है। आज भी लाइसेंसों का लेन-देन चल रहा है। अभी कुछ ही दिन हुए हैं, मुझे एक आयातक व्यापारी का पत्र मिला है कि जर्मन सिलवर प्लेटिड वेयर और रौसेन्थल क्राकरी का बढ़िया सामान आया है। यह संभवतः १९५६ के लाइसेंस के आधीन आया होगा। यदि यह सामान नहीं आता तो देश के आर्थिक विकास में रत्ती भर भी बाधा न आती।

यह संभव है कि आयात लाइसेंसों में अत्यधिक कमी करने के कारण न केवल भावी विस्तार-योजनाओं में ही बाधा उपस्थित होगी, अपितु विद्यमान उद्योगों के निर्धारित उत्पादन में भी कमी हो। परन्तु यह एक भीषण संकट-काल है और ऐसे समय में हमें औद्योगिक गतिविधियों में कुछ शिथिल गति को भी स्वीकार करने के लिए तैयार रहना चाहिए, लेकिन दूसरी ओर, उस स्थिति का सामना करना असंभव होगा, जबकि भारत विदेशों में अपने दायित्व को

पूर्ण नहीं कर सकेगा और अपनी प्रतिष्ठा को पूर्णरूप से सुरक्षित नहीं रख सकेगा।

× × ×

निर्यात को प्रोत्साहन

यह एक भीषण आत्मप्रवंचना होगी कि विदेशी-मुद्रा की कमी थोड़े समय के लिए है। यदि देश को भविष्य में विकास करना है और भावी पीढ़ियों को इस विकास-क्रम को जारी रखना है तो हमारे सामने आगामी अनेक वर्षों तक विदेशी मुद्रा की कमी मुंह बाए खड़ी रहेगी और उसका एकमात्र हल यही है कि देश में एक ऐसे वातावरण का निर्माण किया जाय, जिसके कारण विदेशी पूंजी आकर्षित हो सके। केवल निर्यात के सहारे विदेशी-मुद्रा की आवश्यकता की पूर्ति की सम्भावना नहीं दीखती। निर्यात योग्य वस्तुएं बहुत थोड़ी हैं और जो हैं भी, उनका अन्तर्राष्ट्रीय बाजार बहुत प्रतिस्पर्धात्मक है। कुछ भी हो, हमारे निर्यात की स्थिति के सुधारने में पर्याप्त समय लगेगा।

निर्यात साधनों को बढ़ाने का एक सर्व प्रमुख साधन हो सकता है बड़े पैमाने पर भारत की यात्रा के लिए विदेशियों को आकर्षित करना। मेरा विश्वास है कि १५ से २० करोड़ रुपए के व्यय से, यह देश इस योग्य हो जायगा कि विदेशी लोग यहां की यात्रा के लिए आएं, जिससे प्रतिवर्ष ५० करोड़ रुपए से अधिक की विदेशी-मुद्रा और प्राप्त हो सकेगी।

विदेशी पूंजी का आकर्षण

विदेशी-मुद्रा के संकट को दूर करने के लिए, आवश्यक है, हम विदेशी पूंजी को आकर्षित करने लायक वातावरण का निर्माण करें। जो व्यवसायी अभी हाल में अमरीका की यात्रा करके आये हैं, उन्होंने विश्वास व्यक्त किया है कि यदि हम उपयुक्त वातावरण का निर्माण कर सकें तो विदेशी पूंजी भारत आ सकेगी। जब तक हम विदेशी पूंजी लगाने वालों को प्रलोभन नही दिखाते तब तक हमें विदेशी पूंजी प्राप्त करने में सफलता नहीं मिल सकती। कर प्रणाली, अनिवार्य जमा, कम्पनियों पर भी सम्पत्ति कर आदि को बदलना होगा। अनिवार्य जमा की पद्धति शायद व्यवहार में इतनी कठोर न हो, पर इसका मनोवैज्ञानिक, प्रभाव बहुत बुरा होता है। सरकार को भी इसमें कई परिवर्तन करने पड़े हैं और २ करोड़ रु० से अधिक प्राप्त नहीं हो सका। नये बजट में १०० करोड़ रु० के नये कर लगाये गए हैं, किन्तु यह समस्त राशि तो बढ़े हुए सैनिक व्यय तथा सरकारी कर्मचारियों की नई मांग की पूर्ति में ही खर्च हो जायगी।

+ + +

आन्तरिक स्रोत

विदेशी-मुद्रा के संकट के अलावा, हमारे समक्ष निरन्तर बढ़ती हुई आंतरिक प्रसाधनों की समस्या भी उपस्थित है। आन्तरिक प्रसाधनों की समस्या निजी और सार्वजनिक दोनों क्षेत्र को प्रभावित करती है। सरकार को अपने अनुमान से कहीं बहुत कम सफलता सार्वजनिक ऋण तथा अल्पबचत योजना के क्षेत्र में प्राप्त हो सकी है। इतने टैक्स बढ़ा दिये गये हैं, और महंगाई इतनी बढ़ गई है कि अधिक बचत की आशा भी नहीं की जा सकती। रुपये का बाजार बहुत तंग है। बहुत सी सूती मिलें रुपया बाजार में न मिलने से बन्द हो रही हैं। रुपया लगाने में जनता का विश्वास ही जाता रहा है। श्री नन्दा ने बचत-आन्दोलन में असफलता की चर्चा करते हुए कहा है कि इस कारण योजना पर होने वाले व्यय को ४,८०० करोड़ रुपये तक ही सीमित करना होगा। मेरी नम्र सम्मति से आगामी तीन वर्षों तक हमारी गतिविधियों पर रहने वाले नियंत्रण के कारण उत्पन्न परिस्थिति और वर्तमान स्थिति को रखते हुए इतना व्यय करना देश की आर्थिक स्थिति के लिए संकट को निमंत्रण देना होगा। यदि हमें निम्न स्तर का भी निजी आर्थिक जीवन स्वस्थ रखना है, तो इतना भारी व्यय किसी भी प्रकार व्यावहारिक नहीं। किसी देश का विकास एक सतत चलने वाली क्रिया है और किसी भी बाह्य शक्ति के प्रयोग का परिणाम होगा ऐसी प्रतिशक्ति उत्पन्न करना जो हमें विकास के मार्ग पर अग्रसर करने की बजाय पीछे ढकेल देगी।

+ + +

जनता का कर्त्तव्य

ऐसे समय जब कि आयात में कटौती किया जाना

(शेष पृष्ठ ९७ पर)

"नये तीर्थस्थान"
जवाहर सुरंग
भाखड़ा बांध
हरसी बांध
रिहन्द बांध
सिंदरी
चितरंजन
रेलवे इंजन
कांडला बन्दरगाह
हीराकुड बांध
भिलाई इस्पात योजना
नेपा मिल
सीमेन्ट कारखाना
बंगाल की खाड़ी
मोटर-कार उद्योग बम्बई
विशाखापटनम जहाज निर्माण
तुंगभद्रा बांध
हिन्दुस्तान विमान
पेराम्बूर रेल-डिब्बा कारखाना
बंगलौर
भारतीय टेलीफोन कारखाना
कपड़े की मिलें
भारत-नार्वे मत्स्योद्योग योजना
१० करोड़ रुपये से अधिक खर्च वाली
नदी घाटी परियोजनाएं
प्रथम योजना की परियोजनाएं
२ तुंगभद्रा
३ कोसी
४ दामोदर घाटी निगम
६ हीराकुड
१० मयूराक्षी
१६ रिहन्द
दूसरी योजना की परियोजनाएं
२० उकाई
२२ तावा
२८ कुंडा
२९ शरावती

नए दृष्टि कोणसे अन्न समस्या

लेo—श्री हरिश्चन्द्र हेडा, एमo पीo

हमारी बड़ी बड़ी बाँध योजनाएं भी अन्न संकट को दूर नहीं कर पा रहीं ? क्यों ? योजना की कुछ बड़ी कमियों की ओर विद्वान् लेखक ने देश का ध्यान खींचा है।

अन्न का उत्पादन फिर एक राष्ट्रीय समस्या बन गई है। एक वर्ष से कुछ अधिक पूर्व हम ने सोचा था कि अब मुसीबत टल गई है। हम ऐसे आशावादी बन गए थे तथा सब जगह यही बात चल रही थी कि अब विदेशों को खाद्य अन्नों का निर्यात किया करेंगे, विशेषकर चीनी का। लेकिन यह गलत सिद्ध हुआ। गत वर्ष वर्षा न होने के कारण वास्तविक स्थिति स्पष्ट होगई। जब तक परमात्मा प्रति वर्ष दया न करे, इतने बड़े विशाल देश के अन्दर कहीं न कहीं फसलें सूख ही जाती हैं।

हमने तीन दिशाओं से अन्न समस्या को हल करने की कोशिश की। (१) सिंचाई योजना द्वारा (२) 'अधिक अन्न उपजाओ' आन्दोलन द्वारा (३) कृषि उत्पादन के नये तरीकों द्वारा। नए मार्गों का अनुसरण तथा भूमि सुधार अन्य विशेष प्रयत्न थे। यही ठीक समय है कि हम इन तीनों क्षेत्रों के परिणामों का मूल्यांकन करें।

जहां तक मेरा विचार है, बड़ी २ योजनाओं को हमारी स्वाभाविक त्रुटि के कारण ही नुकसान उठाना पड़ा। हमारी योजनाएं नियमित रूप से तैयार नहीं हुई थीं। हमारी नदी बांध योजनाएं पूर्ण तो होगई थीं, लेकिन मैदान साफ न करने, नहरें पूरी तरह से न खुदने तथा जमीन का बंटवारा ठीक न होने के कारण पानी का उपयोग नहीं किया गया। तुंगभद्रा ही इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। किसान पैसा प्राप्त कराने वाली फसलों को छोड़कर खाद्य अन्नों के उत्पादन के लिए तैयार नहीं थे। वे सिंचाई के इस परिवर्तन के लिए ज्यादा खर्च करना नहीं चाहते थे, क्योंकि इसके लिए एक एकड़ पर २५० रु० अधिक व्यय करना पड़ता था। पानी का खर्च भी अधिक था। इस कारण पानी का वैसा उपयोग नहीं हो सका, जैसा कि होना चाहिए था। यह योजना की त्रुटि है। इस प्रकार बड़ी २ रकमें दूरदर्शिता के बिना खर्च की गईं। यह ठीक है कि इस से नुकसान तो नहीं, थोड़ा बहुत परिणाम अच्छा ही रहा है। लेकिन विचार करने की बात यह है कि क्या हम अपने लक्ष्य तक पहुँचे हैं ? कुछ सिंचाई योजनाओं पर औरों से

लीजिए वाइकाउण्ट आ गया !
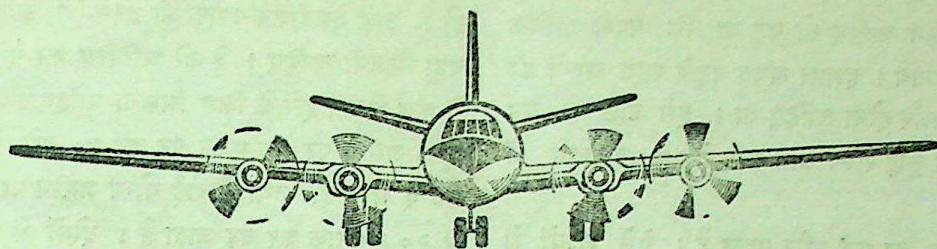
विकर्स वाइकाउण्ट विमान, जिनका इस्तेमाल दुनिया की १८ प्रमुख एयर-लाइनें कर रही हैं, रफ्तार व आराम के लिहाज से अपना जवाब नहीं रखते।

विकर्स वाइकाउण्ट टर्बो-प्रोप

विमान अब आई. ए. सी. के दल में शामिल हो गये हैं !

आपकी सेवा के लिए मँगाये गये दस विमानों में से पहले पांच

टर्बो प्राप विमानों द्वारा ज्यादा आरामदेह और तेज हवाई यात्रा का अपूर्व आनन्द आप भी उठाएँ इसलिए आई. ए. सी. ने जो दस विकर्स वाइकाउण्ट विमान मँगाये हैं, उनमें से पांच आपकी सेवा के लिए पहुँच चुके हैं।

थरथराहट नहीं होती : वाइकाउण्ट में टर्बो-प्राप इंजन होने से इसमें कोई थरथराहट नहीं होती और यात्रा बड़ी ही सुगम रहती है।

कोई शोर नहीं : वाइकाउण्ट में शोर तो जैसे होता ही नहीं है। यह विमान पूरी तौर से प्रेशराइज्ड होता है जिससे आप यात्रा के समय घर-जैसा आराम पाते हैं।

बादलों से भी ऊपर उड़ान : वाइकाउण्ट २०,००० फुट की ऊंचाई पर वास्तव में बादलों से ऊपर उड़ता है जिससे बुरे मौसम का प्रभाव नहीं पड़ता।

अधिक तेज : ४ शक्तिशाली रोल्स राइस इंजनों के फलस्वरूप ३२० मील प्रति घंटे की रफ्तार से भी ज्यादा तेज उड़ने वाले वाइकाउण्ट से आप अपने मुकाम पर कहीं जल्द पहुँच जाते हैं।

पूरा-पूरा आराम : आगे-पीछे सरकने वाली आराम-कुर्सियों और बाहरी दृश्य देखने के लिए बड़ी-बड़ी खिड़कियों के फलस्वरूप आपको यात्रा का सच्चा आनन्द मिलता है। आप अपने मुकाम पर चुस्त और तरोताजा पहुँच जाते हैं।

इण्डियन एयरलाइन्स

कॉर्पोरेशन

विकर्स—आर्मस्ट्रांग्स (एयरक्राफ्ट) लिमिटेड

भारत में प्रतिनिधि : विकर्स इण्डिया प्राइवेट लि०, किलिक हाउस, होम स्ट्रीट, बम्बई—१

नये वाइकाउण्ट विमान आई. ए. सी. के दिल्ली/कलकत्ता/रंगून, दिल्ली/बम्बई/बम्बई/कराची तथा बम्बई/मद्रास/कोलम्बो मार्गों पर उड़ रहे हैं।

जल्द ही आई. ए. सी. के सभी प्रमुख मार्गों पर वाइकाउण्ट विमान चलेंगे।

कुछ अधिक खर्च करना पड़ा। यह इसलिए कि सिंचाई की योजनाओं को देश के विभिन्न भागों में हम फैलाना चाहते थे। कुछ राज्यों ने इस विषय में बहुत अधिक जोर भी दिया। लेकिन चाहिए तो यह था कि पहले अधिक उत्पादन बढ़ाया जाय। हमारा लक्ष्य पहले खाद्य अन्नों की दृष्टि से आत्म निर्भर होना चाहिए था। इस दृष्टि से यह ठीक भी था कि कुछ राज्य धान तथा गेहूँ के उत्पादन में पुष्कल बनें।

इस समस्या का एक और पहलू है। ऐसे राज्यों में जहां सिंचाई की सुविधाएं पहले से विद्यमान हैं, वहां सिंचाई का वातावरण है। वहां के किसान पानी की उपयोगिता को तथा अधिक से अधिक उस से लाभ उठाना जानते हैं। इन को नए तौर पर सीखने की जरूरत नहीं है। व्यापारिक फसलों व खाद्यान्नों की फसलों की खेती में भी कम अन्तर नहीं हैं।

छोटी सिंचाई योजनाएं

बड़ी बड़ी सिंचाई योजनाओं के प्रति हम बड़े उत्साही तो हैं लेकिन साधारण सिंचाई तथा पानी ऊपर उठाने की प्रणाली के प्रति आवश्यक ध्यान नहीं दे रहे हैं। पहले से ही देश में छोटे २ बांध तालाब वगैरह बने हुए हैं। हमें चाहिए कि उन की मरम्मत करें तथा पानी अधिक जमा करने की क्षमता बढ़ाएं। दोनों के प्रत्यक्ष परिणाम जल्दी ही नजर आएंगे।

साधारण सिंचाई योजनाओं की मरम्मत एक स्थायी समस्या बन गई है। छोटे बांधों की देख रेख के लिए काफी मशीन-सामग्री नहीं है जिस से जब कभी भी कोई छेद या दरार पड़ जाता है, तो काफी नुकसान उठाना पड़ता है। समाज कल्याण के कार्यों पर अधिक खर्च बढ़ाया ही जाता है लेकिन राज्य सरकारें ऐसे मामलों पर व्यय करने के लिए कठिनता महसूस करती हैं। वे सोचती हैं कि ऐसे कामों के लिए अवसर मिलने पर केन्द्र से धन मांग लेंगे। परन्तु केन्द्रीय सरकार सब की आशाएं कहां पूर्ण कर सकती है।

स्थानिक संस्थाएं

मेरा सुझाव यह है कि तालाबों की रक्षा के लिए एक ऐसी व्यवस्था बनाई जाए ताकि किसान उन की देख रेख तथा दरार पड़ने पर जहां तक हो सके मरम्मत कर सकें। यह तभी पूर्ण हो सकता है जब पानी का उपयोग करने वाले किसानों के जिलाबोर्ड तथा तालुक बोर्डों का निर्माण हो। उन्हें टेकनीकल-स्टाफ की तरफ से आवश्यक सहायता मिलनी चाहिए। वे जो अतिरिक्त कर देते हैं उस में से कुछ हिस्सा इस के लिए मिलना चाहिए। मेरे प्रदेश में सूखी जमीन पर एक एकड़ पर कर ५० नये पैसे तथा २ रु० के मध्य है, तथा सिंचाई योग्य जमीन पर कर १२ रु० से २० रु० तक कर बढ़ जाता है। दोनों में काफी अंतर है। मेरा सुझाव है कि इस अंतर में से आधा भाग उपर्युक्त काम पर लगाया जा सकता है। राज्य की कृषि पूंजी से २५ प्रतिशत राज्य सरकार की ओर से खर्च किया जा सकता है और ७५ प्रतिशत जिला तथा तालूक बोर्डों के द्वारा होना चाहिए।

ये तालुक तथा जिलाबोर्ड पानी का उपयोग करने वाले किसानों द्वारा नियमित रूप से चुने हुए होने चाहिए। वे वर्ष में दो बार मिल सकते हैं। वर्षा ऋतु के बाद तालाबों में दरार पड़ सकती हैं। इन बोर्डों से मैं तीन प्रकार की आशा रखता हूँ। पहली वे कार्यदक्ष तथा सही कदम उठाने वाले हों। दूसरी, जहां तक हो सके वे अतिरिक्त धन के लिए मांग न करें तथा बाहरी सहयोग के बिना काम निभाएं। तीसरी, खर्च कम से कम किया जाय। खर्च में से बचाव करने से कार्य सिद्धि ही नहीं, बल्कि ठेकेदारों के मुनाफे को भी घटा सकते हैं।

हम ने कुओं तथा झलारों की सिंचाई के प्रति विशेष ध्यान नहीं दिया है। इस तरह से काम नहीं चल सकता। इसमें लागत की मात्रा अधिक आती है। हमारा कर्तव्य है कि राष्ट्रीय रूप से किसानों को इसके लिए नियमित सहायता देने की कोशिश करें।

सही कीमतें

"अधिक अन्न उपजाओ" आन्दोलन तथा कृषि सम्बन्धी नए तरीके अच्छे परिणाम ला सकते थे, अगर हमने किसानों को दृष्टि में रखकर योजना की रूपरेखा बनाई होती। हमारी दृष्टि में सिर्फ विज्ञापन बाजी हो रही है और गरीब किसानों को हम ने अपनी आंखों के सामने

(शेष पृष्ठ ६६ पर)

निजी और सरकारी उद्योगों का योग

श्री मुरारजी जे० वैद्य

अपने आर्थिक प्रयोगों में हमने सार्वजनिक प्रयास और निजी प्रयास—जिनको मैं सरकारी साहस और स्वतंत्र साहस कहना अधिक पसंद करता हूं—दोनों को पूरा पूरा स्थान देने का निश्चय किया है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से स्वतंत्र साहस ने जो चहुँमुखी उन्नति की है, उसकी सभी तरफ से प्रशंसा की गई है। आर्थिक उन्नति के क्षेत्र में उसकी प्राभाविकता और कार्यकुशलता ही सिद्ध होती है। यद्यपि आर्थिक उन्नति की गतिशीलता इन दोनों प्रकार के प्रयासों पर निर्भर करती है, लेकिन हमें इस मूल तथ्य की ओर से आंख नहीं मूंद लेना चाहिए कि सभी प्रकार की योजनाओं और आर्थिक प्रगति के कार्यक्रम का ढांचा प्रजातंत्रात्मक होना चाहिए। प्रजातंत्रात्मक जीवन-मानों के बिना आयोजना का उद्देश्य ही विनष्ट हो जाता है, क्योंकि सभी प्रकार के आयोजनों का लक्ष्य रहन सहन के स्तर को ऊँचा करना और वैयक्तिक स्वतंत्रता के क्षेत्र को विस्तृत करना होता है। स्वतंत्रता और इसके द्वारा मिलने वाले आनन्द की प्राप्ति केवल प्रजातंत्र में ही संभव हैं।

प्रजातन्त्र का स्वरूप

प्रजातंत्र की निम्नलिखित १२ मान्यताएं मानी जा सकती हैं—अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, सभा-संगठन बनाने की स्वतंत्रता और अखबारों की स्वतंत्रता, विधिवत शासन (रूल आव लाज) और स्वतंत्र न्यायपालिका, निजी सम्पत्ति रखने का अधिकार, पारिवारिक स्वतंत्रता, मुद्रा की स्थिरता, उपभोग की स्वतंत्रता अथवा इच्छानुसार व्यय करने की स्वतंत्रता, तथा सामाजिक गतिशीलता। इनके बिना प्रजातंत्र निरर्थक है।

यह गौरव की बात है कि भारत ने अपने को धर्म-निरपेक्ष (सेक्युलर) घोषित किया है। सभा-संगठन की स्वतंत्रता, अभिव्यक्ति और पत्रों की स्वतंत्रता भी हमारे देश में वर्तमान है। इस प्रकार हमारे यहां की स्थिति हाल के स्वतंत्र हुए उन देशों से पूर्णतः भिन्न है, जिन के राजनैतिक क्षेत्र में "संरक्षित प्रजातंत्र" नामके एक शिशु का जन्म हुआ है। लेकिन इस प्रसन्नता में हमें इस खतरे की ओर से बेखबर नहीं हो जाना चाहिए कि सरकारी उद्योग-क्षेत्र का विस्तार करके और निजी उद्योग पर पाबंदियां लग जाने के कारण, पत्रों के लिए विज्ञापन की व्यवस्था का अधिकार सरकार को मिल जाने से पत्र सरकारी नीति से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकते। साथ ही, अखबारी कागज का वितरण, जैसा कि ज्ञात हुआ है कि राज्य-व्यापार निगम द्वारा ही किया जायेगा। पत्रों की स्वतंत्रता छिन जाने पर प्रजातंत्र एक क्षण जीवित नहीं रह सकता।

विस्तृत सरकारी उद्योग-क्षेत्र के कारण राज्य कर्मचारियों की अभिव्यक्ति और सभा-संगठन की स्वतंत्रता बहुत कम हो गई है। उदाहरण के लिए रेल-कर्मचारियों के नौकरी सम्बन्धी नियमों के अनुसार उनको राजनीति में भाग लेने का अधिकार नहीं है। इसके विपरीत यदि सरकारी कर्मचारियों को राजनीति में भाग लेने की अनुमति दी जाती है, तो देश के प्रशासन को हानि पहुँचेगी और पार्टीबाजी के कारण नागरिकों को अपार कष्ट होता रहेगा। इसके लिए बुद्धिमानी का मार्ग यही होगा कि सरकारी उद्योगों के क्षेत्र के विस्तार को रोका जाये।

उद्योगों की स्वतन्त्रता ही आर्थिक प्रगति

उद्योगों की स्वतन्त्रता का अवश्यंभावी परिणाम, उद्योग, व्यापार और कृषि के उत्पादनों की वृद्धि और दूसरे शब्दों में आर्थिक प्रगति है। मानव स्वभाव ही ऐसा है कि काम करने के लिए उसे किन्हीं प्रलोभनों की आवश्यकता है। लाभ, जो उसके प्रयास का सही प्रतिफल है, न्यायोचित है इसमें तिरस्कार की कोई बात नहीं। यदि सामाजिक शोषण जैसी कोई वस्तु है तो सरकार वित्तीय और द्राव्यिक साधनों से स्वतन्त्र उद्योगों को नियमित करके तथा सामाजिक कानून बनाकर इसे दूर कर सकती है।

दुर्भाग्यवश आज उद्योगों की वैयक्तिक स्वतन्त्रता को तेजी से रोका जा रहा है। मई १९५६ में घोषित द्वितीय औद्योगिक नीति से यह बात स्पष्ट होती है कि किस प्रकार सरकार ने निजी उद्योगों के उपलब्ध साधनों को अपने नियंत्रण से कम कर लिया है। मैं कम्पनियों पर पूंजी-कर और १९५६ के कम्पनी कानून जैसे विशिष्ट प्रावधानों की चर्चा नहीं कर रहा हूँ।

यह स्वाभाविक है कि मानवीय मस्तिष्क उन संस्थाओं को पूर्ण गंभीरता से लेता जो सामाजिक सुदृढ़ता और उन्नति के लिये विशेषतः आवश्यक हैं। ऐसी दो संस्थाएं निजी सम्पत्ति और परिवार हैं। यदि ये दोनों संस्थाएं विनष्ट हो जायें तो स्वयं प्रजातन्त्र भी अस्तित्व में नहीं रह पायेगा। सच तो यह है कि निजी सम्पत्ति के अधिकार और परिवार के अभाव में मानव सभ्यता के विकास में बाधा उत्पन्न होगी। इसी कारण व्यक्ति पर सम्पत्ति-कर और संविधान की धारा ३१ का संशोधन, जिससे सरकार को यह अधिकार मिल गया कि वह न्यायोचित ढंग के विना सम्पत्ति पर कब्जा कर सके; अनुचित कहे जायेंगे, क्योंकि ये निजी सम्पत्ति रखने के अधिकार पर गंभीर आक्रमण हैं। आशा है कि प्रत्येक देशवासी यह सोचने-समझने लगेगा कि मेरे पास जो कुछ है या न्यायोचित ढंग से जितना भी मैंने अर्जित किया है, उस पर एक मात्र मेरा अधिकार है, इसमें सरकार को कब्जा करने का कोई भी कानून सहन नहीं किया जायेगा। यह विवाद का विषय है कि बिना किसी जनमत संग्रह के जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों को यह अधिकार मिल जाय कि वे सामाजिक सुदृढ़ता की मूल इन दो संस्थाओं-निजी सम्पत्ति और परिवार पर हस्तक्षेप कर सकें।

मुद्रा की स्थिरता आवश्यक

विकासशील अर्थव्यवस्था का प्रमुख लक्षण "मुद्रा की स्थिरता" है। जब तक लोगों को मुद्रा के मूल्य की स्थिरता पर विश्वास नहीं होगा, तब तक उनकी न तो काम करने की इच्छा होगी और न ही बचत और विनियोग की। निरन्तर विस्तृत होते हुए सरकारी उद्योग-क्षेत्र के साथ ही जिस प्रकार इस क्षेत्र में कार्यकुशलता का ह्रास हो रहा है तथा सरकार द्वारा उत्पादन पर जिस प्रकार रोक लगाई जा रही है इससे तो और कुछ नहीं केवल मुद्रा-स्फीति ही बढ़ेगी और मुद्रा की स्थिरता छिन्न-भिन्न हो जायेगी। इसी प्रकार मूल्य-निर्धारण की सामान्य प्रक्रिया पर सरकार का हस्तक्षेप करना आग से ही खेलना कहा जायेगा। यदि आर्थिक नियमों की उपेक्षा करते हुए, नियंत्रणों की भरमार होती जाये तो इसका अनिवार्य परिणाम होगा मुद्रा प्रसार, हड़तालें और असंतोष।

मुद्रा की स्थिर व्यवस्था आवश्यक है। प्रत्येक व्यक्ति को उपभोग की स्वतन्त्रता और अपनी आय को न्यायोचित ढंग से इच्छानुसार बढ़ाने के अधिकार को नहीं रोका जाना चाहिए। यदि ऐसा किया जाता है तो हम इस मूलभूत तथ्य की उपेक्षा कर रहे हैं कि योजना और आर्थिक प्रगति का उद्देश्य व्यक्ति को खुशहाल बनाना है इसके लिये उनकी क्रय-शक्ति बढ़ाने का प्रयत्न किया जाता है जिससे वे इच्छित वस्तुओं का उपभोग कर सकें। व्यय-कर से एक ऐसे खतरनाक सिद्धान्त का प्रतिपादन हुआ है जिससे व्यक्ति का इच्छित वस्तुओं के उपभोग का अधिकार बुरी तरह से संकुचित हो गया है। इस कर के पक्ष में यह तर्क दिया जाता है कि इसका प्रभाव जनता के छोटे प्रतिशत भाग पर ही पड़ेगा, लेकिन समग्र जनता पर इस कर के लागू होने का भय तो ज्यों का त्यों बना ही है।

सामाजिक गतिशीलता

प्रजातंत्र की एक प्रमुख अवस्था जिसकी बहुत कम चर्चा हुई है, सामाजिक गतिशीलता है। यह केवल उसी समाज में सम्भव है, जहां स्वतन्त्र उद्योग क्षेत्र की प्रमुखता मान ली गई हो। स्वतंत्र उद्योग क्षेत्र में श्रमिकों, पूंजी और साहसिक-कुशलता की गतिशीलता की स्वतंत्रता वर्तमान रहती है। इसी गतिशीलता पर श्रम की स्वीकृति और श्रमिक संघों का निर्माण करना जैसे मूलभूत अधिकार भी निर्भर करते हैं। विस्तृत होते हुए सरकारी उद्योग क्षेत्र में श्रमिकों की गतिशीलता का प्रश्न ही नहीं उठता। साम्यवादी तानाशाही में सरकारी उद्योगों में नौकरशाही और राजनीतिज्ञों का एक नया वर्ग बन गया है, जिनका वर्णन भली प्रकार "मिलोवान डिजलास" ने

[शेष पृष्ठ ९८ पर]

समाजवादी समाज कसौटी पर

श्री एम० आर० पाई

इस विषय पर कोई मतभेद नहीं है कि भारत की आर्थिक नीति का आधार समाजवादी समाज का निर्माण करना है। इसकी घोषणा आवड़ी के अ० भा० कांग्रेस अधिवेशन में हुई थी। लेकिन दुर्भाग्य से अभी तक इस नीति की संतोषजनक निश्चित परिभाषा स्पष्ट नहीं हो सकी है। इस कारण लोग असमंजस में पड़ गए हैं कि वास्तव में इसका क्या मतलब है? कांग्रेस के अध्यक्ष श्री यू० एन० ढेबर ने भी १५ अगस्त १९५७ के "आर्थिक समीक्षा" पत्र में इस बात को मान लिया है कि "कांग्रेस ने अपना उद्देश्य यद्यपि दो वर्ष पहले से भारत को समाजवादी ढांचे की ओर लाना स्वीकृत कर लिया है। अभी तक इस विषय पर कोई निश्चित सोच विचार नहीं हुआ है।"

आवड़ी के प्रस्ताव के अनुसार 'योजना का आधार समाजवादी ढांचे पर भारत को लाना है। जहां उत्पादन के प्रधान साधन समाज के अधिकार या नियंत्रण में हों,, क्रमशः उत्पादन बढ़े तथा राष्ट्रीय सम्पत्ति का समान रूप से वितरण हो।"

१४ दिसम्बर ५७ को कलकत्ता में हुए असोसियेटिड चैम्बर आफ कामर्स के अधिवेशन में भाषण देते हुए पं० नेहरू ने कहा था कि 'मुझे इस बात की चिन्ता नहीं है कि "समाजवादी समाज" की क्या परिभाषा है परन्तु मेरे समाजवादी समाज का अर्थ "सबको समान अवकाश" प्राप्त होना है।

श्री ढेबर ने अपने एक लेख में इस धारणा को और विस्तृत करने का प्रयत्न किया है कि समाजवादी समाज का मतलब 'एक व्यक्ति अथवा किसी वर्ग के हित सारे देश के हित की अपेक्षा गौण होंगे। प्रतिस्पर्धात्मक अर्थ-व्यवस्था में प्रेरणा की चर्चा करनेके बाद वे लिखते हैं— "अमेरिका में संघर्ष गरीब तथा अमीरों के बीच नहीं है बल्कि अधिक धनी तथा मध्य वर्ग के धनियों के बीच है कुछ सीमा तक इंगलैंड में भी यही दशा है। लेकिन भारत में इसके विपरीत है। यहां संघर्ष दरिद्र तथा अति दरिद्र के बीच है। कई लोगों ने समाजवाद के लक्ष्यों को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है। मोटे शब्दों में हमारा लक्ष्य एक ऐसी समाज-व्यवस्था की स्थापना करना है जहां प्रत्येक व्यक्ति को अपने विकास के समान अवसर मिलें, तथा उसका किसी प्रकार का शोषण न हो। दूसरे शब्दों में इसका लक्ष्य है। (१) व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास (२) शोषण की सर्वथा समाप्ति (३) कर्तव्य तथा भार सब पर बंटे रहना (४) तथा पर्याप्त सामाजिक सुरक्षा के आधार पर एक व्यक्ति अथवा उस पर आधारित लोगों के लिए समान अवसर प्राप्त होना। कोई संस्था चाहे वह आर्थिक, सामाजिक अथवा राजनीतिक हो, इन कसौटियों से असहमत नहीं हो सकती।"

अ० भा० कांग्रेस के महा मंत्री श्री श्रीमन्नारायण ने समाजवादी समाज के स्वरूप के सात बिन्दु बताये हैं, लेकिन उन्हें निश्चित परिभाषा नहीं कहा जा सकता। इन सब प्रयत्नों के बावजूद समाजवादी समाज की कोई ऐसी सन्तोषजनक परिभाषा नहीं बन पाई, जिसे एक सामान्य जन समझ सके।

वर्ग संघर्ष

इस विचारधारा में सर्वप्रथम वर्ग संघर्ष के सिद्धान्तों के प्रचार की भावना निहित है। 'कार्लमार्क्स' द्वारा प्रतिपादित इस सिद्धान्त के अनुसार पूंजीवादी समाज में आर्थिक शक्ति कुछ विशेष हाथों में केन्द्रित हो जाती है। अमीर और गरीब में काफी अन्तर हो जाता है। दोनों श्रेणियों में वर्ग संघर्ष शुरू हो जाता है। इतिहास ने मार्क्स की विचारधारा को गलत सिद्ध किया है। लेकिन साम्यवादी तथा समाजवादी इस भ्रांति को अभी तक दूर नहीं कर पाए हैं। आश्चर्य की बात है कि भारत में गान्धी के जिन्होंने समाज में प्रेम, परस्पर सद्भाव तथा सहिष्णुता पर बल दिया था, अनुयायी वर्ग उस सिद्धान्त को स्वीकार कर रहे हैं, जो ऐतिहासिक दृष्टि से गलत और नैतिक दृष्टि से घृणित है।

राज्य का अधिकार

दूसरी बात यह है कि समाजवादी समाज का अर्थ सम्पत्ति तथा उत्पादन के साधनों पर समाज का अधिकार माना जाने लगा है, जिससे उत्पादन बढ़े, समान वितरण हो, तथा व्यक्ति स्वातंत्र्य का विस्तार हो। लेकिन अनुभव यह बताता है कि उत्पादन के साधनों पर समाज का अधिकार होने से कुछ लोगों के हाथों में राजनीतिक तथा आर्थिक शक्ति केन्द्रित हो जाती हैं और राज्य-पूंजीवाद की स्थापना हो जाती है।

भारत के पड़ौसी देश बर्मा का यह कटु अनुभव है कि राष्ट्रीयकरण अथवा उत्पादन के साधनों पर राष्ट्रीय अधिकार सिद्धान्तवादियों की कल्पना के आदर्शों को नहीं ला सकते। वास्तव में बर्मा के प्रधानमंत्री यू० नू० के शब्दों में, "व्यावहारिक अनुभव के कारण मैं यह नही चाहता कि हर प्रकार के आर्थिक मामलों में सरकार बीच में आ जाय। अगर सरकारी हस्तक्षेप बिना रोकटोक के निरन्तर बढ़ता रहा तो ठीक देख-रेख तथा पूर्ण प्रबन्ध न होने के कारण जल्दी या कुछ समय बाद राज्य के कारोबार चोर तथा ठगों के हाथों में चले जायेंगे।

राष्ट्रीय अधिकार उत्पादन के हित में है, यह दावा अन्य देशों के अनुभव से झूठा सिद्ध हुआ है। गत वर्ष पोलैण्ड को विवश होकर अपनी आर्थिक नीति को उदार बनाना पड़ा तथा कुछ आर्थिक गतिविधियों के कार्य निजी उद्योग के हाथ में सौंपने पड़े। भारत में राष्ट्रीय कारोबार के बारे में कोई सम्मति बनाना अभी समय से बहुत पहले होगा। १६ दिसम्बर को जीवन बीमा निगम सम्बन्धी जो बहस पार्लियामैंट में हुई थी, उससे स्पष्ट हो गया है कि सरकारी कारपोरेशन भी सन्देह और शंका से ऊपर नहीं होते।

उत्पादन समस्या का एक दूसरा पहलू कार्य-व्यवहार की क्षमता है। अनुभवी वर्गों ने भी इसकी आलोचना की है। उदाहरण के लिए सिन्द्री का कारखाना ही इसका प्रमाण है। अति उत्पादन के कारण मशीनरी पर बहुत बोझ पड़ा है और उसकी मरम्मत तथा रक्षण पर काफी धन व्यय करना पड़ा है। जब तक सरकारी उद्योगों में उत्पादन-व्यय की जांच न होगी, सिर्फ उत्पादन के आंकड़ों से कारोबार की सफलता का निर्णय नहीं हो सकता।

समान वितरण अथवा लाभ प्राप्त समाज ?

आम जनता के प्रति समाजवाद का एक दावा है कि धन का समान वितरण होगा। एक अविकसित देश में विद्यमान सम्पत्ति के वितरण द्वारा धन के समान वितरण की बात करना जीवन की वास्तविकता से अज्ञान प्रकट करना तथा धोखा देना है। वर्तमान स्थिति में धन के समान वितरण के लिए सम्पत्ति के राष्ट्रीयकरण का कोई भी कदम सिर्फ गरीबी के वितरण में परिणत होगा। आवश्यकता इस बात की है, समान वितरण के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए, जो कि अति प्रशंसनीय कार्य है—पहले उत्पादन के लिए पूंजी लगाने तथा उत्पादन को बढ़ाने के लिए प्रोत्साहन दिया जाय। इस प्रकार उत्पादित धन का समाज के सभी वर्गों में वितरण होगा तथा उनका जीवन-स्तर भी ऊंचा होगा।

इस समाजवादी समाज के एक भयंकर खतरे पर ध्यान नहीं दिया गया है। वह है—लाभ प्राप्त करने वाले समाज के नाम पर अधिक लाभप्राप्त समाज का अस्तित्व में आना। राजनीतिज्ञ, अधिकारी वर्ग तथा अन्य नौकरशाही अफसर जनता पर यह प्रभाव डालते हुए कि वे बहुत थोड़ा प्रतिफल (वेतन) पा रहे हैं,—वास्तव में हो सकता है कि वे अपनी आमदनी, मुफ्त रेलयात्रा, मुफ्त बिजली, पानी, मकान, टेलिफोन तथा विशेष छूट आदि सुविधाओं के रूप में बहुत बढ़ा रहे हों। इन अधिक लाभ-प्राप्त लोगों को वेतन तो देना पड़ता है, लेकिन वेतन का बोझ उठाने वाली सामान्य जनता को इन नौकरशाही अफसरों तथा राजनीतिज्ञों का समर्थन करने के लिए काफी परिश्रम करना पड़ता है। अधिक धन का संचय इन लोगों के पास कैसे हो रहा है, यह जानना आसान नहीं होगा, क्योंकि इसमें एक तो समय लगेगा और वे कानूनी सुविधाओं के नाम से एक के बाद एक लाभ प्राप्त कर रहे हैं।

व्यक्तिगत स्वतन्त्रता खतरे में

समाजवादी प्रवृत्ति के सब समर्थकों का आदर्श है व्यक्तिगत स्वतन्त्रता। लेकिन समाजवादी पद्धति ने व्यक्ति-

गत स्वतन्त्रता को अधिक सीमित व संकुचित कर दिया है, जब कि राज्य-अधिकार से उसके विस्तार की अपेक्षा की गई थी। जनता की बढ़ती हुई संख्या को अपनी जीविका के लिए सरकार पर निर्भर रहना पड़ता है। सेवा नियमों से सरकारी कर्मचारी राजनीतिक अधिकारों से वंचित कर दिए गए हैं। अन्य लोगों को, जो जीविका के लिए सरकार पर निर्भर हैं—वाक् स्वातन्त्र्य प्राप्त नहीं है। समाचार पत्रों में सरकार की घोषणा तथा विज्ञापन भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। राष्ट्रीयकरण का कारोबार बढ़ जाने से विज्ञापनबाजी का काम सरकार के हाथ में आ जाता है, जिससे कुछ अवधि के अन्दर समाचार पत्रों का संरक्षण सरकार के हाथ में चला जाता है और स्वतन्त्र विचार के अखबारों को सरकारी दृष्टि का समर्थन करने को विवश होना पड़ता है।

व्यक्तिगत स्वातन्त्र्य भी नौकरशाही अधिकारों के कारण सीमित हो जाता है। लार्ड हेवार्ट ने इसे "नवीन निरंकुशता कहा है। ब्रिटेन के मजदूर दल के प्रमुख नेता श्री आर. एच. एस. क्रोस्समैन ने इस बात की आलोचना करते हुए कि "स्वतन्त्रता की वृद्धि तथा पूर्ण जनतन्त्र की प्राप्ति के लिए जनता के हाथ में सम्पत्ति पर अधिकार होना चाहिए", कहा है कि ऐसी अवस्था में भी सरकारी नौकरशाही के हाथों में ही सम्पत्ति का अधिकार केन्द्रीकृत हो जाता है और इससे व्यक्तिगत स्वतन्त्रता खतरे में पड़ जाती है। यदि हम सरकारी ताकतों को और अधिक बढ़ाएंगे, तो क्या हम व्यक्तिगत स्वतन्त्रता को सुरक्षित करने के बजाय उसे खतरे में तो नहीं डाल रहे हैं?

देश के सब विचारकों को इन प्रश्नों पर निष्पक्ष और शान्त हृदय से विचार करना चाहिए, ताकि निरंकुश सत्ता के द्वारा आर्थिक विकास के नाम पर हमारा व्यक्तिगत स्वातन्त्र्य ही समाप्त न हो जाय। ★

——

छोटी बचतें निराशाजनक

द्वितीय पंचवर्षीय योजना में १०० करोड़ रु० छोटी बचतों से एकत्र होने की आशा की गई थी, किन्तु १९५६-५७ में केवल ६५ करोड़ रु० जमा हो सका।

★लेखक के एक भाषण के आधार पर

मध्यवर्ग की आर्थिक दशा

श्री सी० एल० घीवाला

सामाजिक व्यवस्था में मध्यवर्ग का महत्वपूर्ण स्थान है। सभी कार्योंमें चाहे वह सामाजिक सुधार हो, आर्थिक उन्नति हो अथवा राजनीतिक चहल-पहल हो, मध्यवर्ग विशेष रूप से हिस्सा लेता है। बौद्धिक गतिविधियों तथा सांस्कृतिक व्यवहारों में भी यह पीछे नहीं रहता। वस्तुतः मध्यवर्ग समाज की रीढ की हड्डी है। गत पचास वर्ष का हमारा इतिहास इस बात का प्रमाण है कि कुछ महान् विचारशील समाज सुधारक, महान् राजनीतिज्ञ, प्रमुख अर्थ शास्त्री, प्रखर न्यायवादी तथा बड़े २ साहित्यवेत्ता इसी मध्यवर्ग में हुए हैं। संख्या में यह वर्ग अति विशाल है। साक्षरों की संख्या भी अधिक है। इस वर्ग के लोग परिश्रमी, मेहनती तथा अपने में संतृप्त हैं। एक तरफ आज धनीवर्ग हैं जो शक्तिशाली प्रभावशाली तथा अपनी सुविधाओं की सुरक्षा के लिए पूर्ण साधनों से युक्त है। दूसरी तरफ बड़ी संख्या में किसान तथा मजदूर हैं, जो समाज के आधारभूत हैं। सदियों तक यह साधारण वर्ग पददलित, पिछड़ा हुआ तथा शोषण का शिकार रहा है। स्वतंत्रता के बाद इसमें नई स्फूर्ति आ गई है तथा अपने भविष्यको अधिक सुखी बनाने के लिए यह वर्ग उतावला हो रहा है। ट्रेड यूनियन तथा किसान सभाओं द्वारा अब यह वर्ग मिलकर आवाज उठाने वाला तथा सुसंगठित बनता जा रहा है। बालिग मत-अधिकार पर आधारित पूर्ण प्रजातंत्र में, यह अत्यन्त स्वाभाविक है कि इस वर्ग की आवश्यकताओं की पूर्ति तथा वर्तमान अवस्था को सुधारने के लिए नए कानून बनाने के प्रति राजनैतिक पार्टियां अवश्य ध्यान दें। अगर कोई उपेक्षित तथा तिरस्कृत वर्ग रह जाता है तो वह मध्यवर्ग है। यही एक वर्ग है—जो किसी भी राजनैतिक पार्टी से ईर्ष्या नहीं करता। इस वर्ग की दुर्दशा तथा जीवन परिस्थिति पर कभी किसी पार्टी ने सहानुभूति पूर्वक विचार नहीं किया है।

मध्यवर्ग शब्द की परिभाषा करना भी कठिन है। फिर भी धनी, मजदूर, तथा किसानों के मुकाबले कुछ विशिष्ट गुण होने के कारण इस वर्ग की अपनी विशेषताएं है। मध्यवर्ग के परिवार की आमदनी सीमित होती है तथा इस पर निर्भर रहने वालों की संख्या बहुत अधिक है। इसलिए आमदनी तथा अपने साधनों से उसे अधिक व्यय करना पड़ता है। इस मध्यवर्ग के अन्दर ही सरकारी तथा गैर सरकारी नौकरियों से वेतन पाने वाले क्लर्क, दूकानदार, अध्यापक, डाक्टर, वकील, तथा लेखक आ जाते हैं। इन सबकी जीविका या तो नौकरी से या व्यापार अथवा साधारण दूकानदारी से चलती है।

मध्यवर्ग की आर्थिक स्थिति को समझने के लिए इन बातों का जिक्र करना होगा (१) आमदनी के साधनः नौकरी अथवा पेशा (२) प्रतिव्यक्ति के साथ कुल व्यय का विवरण (३) पढाई का स्तर तथा उसके लिए प्राप्य सुविधाएं, (४) घरबार की स्थितियां (५) ऋण, जमा तथा आमदनी आदि विवरण के साथ परिवार का आय-व्यय। इन विभिन्न पहलुओंको दृष्टि में रखकर ही हम मध्य वर्ग की आर्थिक स्थितियों को जान सकते हैं। इंग्लैण्ड तथा अमेरिका आदि समुन्नत देशोंमें समय-समय पर ऐसे मामलों में जांच पड़ताल की जाती है। इसी प्रकार की जांच पड़ताल हमारे देश में भी शुरू की गई है। पूना शहर में १९३६ तथा १९५३ में दो बार जांच हुई थी। बम्बई में भी इन्डियन स्टाटिस्टिकल इन्स्टिट्यूट की तरफ से मध्यवर्ग परिवारके स्वास्थ्य, भोजन तथा अन्य आर्थिक मामलों पर जांच हुई थी। अहमदाबाद में भी गुजरात व्यापार मण्डल की तरफ से १९५३ में इसी प्रकार मध्यवर्ग का आर्थिक निरीक्षण हुआ था। योजना आयोग ने भी इस प्रकार की जांचों के महत्व को माना है। इन रिपोर्टों से पता लगता है कि नियमित आमदनी, सीमित साधन, तथा महंगाई के कारण मध्यवर्ग को कितनी मुसीबतें तथा कठिनाइयां उठानी पड़ती हैं।

अपनी सुविधा के लिए हम बम्बई के मध्यवर्ग परिवारों की जांच के परिणामों की चर्चा करते हैं। १९५२ में १,०२४ परिवारों की जांच की गई थी। इन परिवारों का आमदनी, पेशे तथा समुदायों के अनुसार वर्गीकरण हुआ।

है। मध्यवर्ग के स्थायी परिवारों के सदस्यों की औसत ५.६ है। घर के मालिक पर निर्भर लोगों की औसत (बच्चों के साथ) ३.६ है। जांच के अनुसार बालिग पुरुषों में ६.७ प्रतिशत लोगों के पास जीविका के कोई साधन नहीं है जबकि ७.७ प्रतिशत बालिग स्त्रियां किसी न किसी काम में लगी हुई हैं। यह सभी जानते हैं कि बम्बई जैसे औद्योगिक शहर में मकान तथा निवास सुविधाओं की कितनी कमी है। ८० प्रतिशत मध्यवर्ग परिवारों में औसत एक परिवार का निवास स्थान ५० वर्ग फुट से कम है। इसके अलावा ८० प्रतिशत लोगों को पानी, बिजली, सफाई तथा मनोरंजन सम्बन्धी सुविधाएं प्राप्त नहीं हैं। दूध, सब्जी, घी आदि के साथ भोजन पर औसत एक परिवार का मासिक व्यय १५४ रु० है। प्रतिशत के हिसाब से ४८.१ भोजन पर, ४.५ ईंधन पर, ८.४ किराये व बिजली पर ५.८ कपड़ों व जूते पर तथा ३२.२ विविध जरूरतों पर व्यय होता है। मध्यवर्ग का परिवार अपनी संतान की पढाई पर सिर्फ ६.५७ रु० तथा परिवार के सदस्यों पर चिकित्सा के लिए औसत १० रु० से कुछ अधिक व्यय करता है।

आमदनी तथा बचत का ९२% प्रतिशत मध्यवर्ग के लोग नौकरी से या पेशों से धन प्राप्त करते हैं। २.८% प्रतिशत सिर्फ अतिरिक्त कार्यों से और १ प्रतिशत विभिन्न सुविधाओं से। एक विशेष बात यह है कि ८२% प्रतिशत से भी अधिक मध्यवर्ग के लोगों की आमदनी १०० रु० से ४०० रु० तक है। जांच से एक और बात स्पष्ट हो गई है कि औसत एक परिवार के पीछे प्रतिमास २२.६ रु० का घाटा होता है। जिनकी आमदनी अधिक है वे ही थोड़ा बहुत बचा सकते हैं। औसत आमदनी ३०३.२ रु० है, जबकि व्यय ३५४.६ रु० है। अर्थात् १७% अधिक व्यय करना पड़ता है। औसतन ३६७ रु० प्रति परिवार पर ऋण है।

रिपोर्ट में कहा गया है कि "आय-व्यय तथा बचत सम्बन्धी मामलों पर विचार करते हुए यह बात स्पष्ट हो जाती है कि यह वर्ग अपनी आमदनी से अधिक व्यय करता है। काफी संख्या में लोग सिर्फ जीवन गुजारते हैं तथा अधिक कर्जदार बनते जा रहे हैं।"

यही दशा पूना, कलकत्ता तथा अहमदाबाद शहरों की है। इन्डियन स्टाटिस्टिकल इन्स्टिट्यूट की तरफ से जो प्रश्नावलि बांटी गई थी, उसके दिए गए जवाब भी मध्यवर्ग की आर्थिक कठिनाइयों पर काफी प्रकाश डालते हैं। ७०% प्रतिशत लोग इस विचार के थे कि अनाज की कीमतें बढ़ जाने से आर्थिक कठिनाई और बिगडती जा रही है। यह स्थिति १९५२ की है। १९५७ में क्या बुरी हालत हुई होगी जबकि खाद्य पदार्थों की कीमतें बहुत बढ़ गईं। ६०% प्रतिशत लोगों ने जिनसे मौखिक जांच हुई थी, जवाब दिया कि उनकी दशा बहुत दर्दनाक है। ८०% प्रतिशत लोगों ने बतलाया है कि निवास सुविधाओं की कठिनता है और दिन दिन बढ़ती जा रही है। जब यह प्रश्न किया गया कि क्या उनके पास पैसा जमा है? है तो किस पर लगाते हैं? कुछ ने जवाब दिया कि जमा ही नहीं है तो लगाएं किस पर?

सभी जानते हैं कि द्वितीय महायुद्ध के समय मध्यवर्ग ही था जो कि चीजों की कमी तथा अनाज की कीमतें बढ जाने के कारण अधिक तंग था। रुपये की क्रयशक्ति निरन्तर कम होते जाने से इस वर्ग की स्थिति बहुत खराब हो ग थी। आश्चर्य की बात है योजनाओं तथा आर्थिक उन्नति के साधनों के बावजूद भी मध्यवर्ग की कठिनाइयां और अधिक बढती जा रही हैं। यह वर्ग निराशा में से गुजर रहा है और अगर सहन शीलता तथा धैर्य का बांध तोड़कर विद्रोह करने पर अमादा हो जाय तो कोई आश्चर्य न होगा। यह ठीक है कि दस वर्षों में मध्यवर्ग की आमदनी में थोड़ी बहुत वृद्धि हुई है, लेकिन यह मानना पड़ेगा कि महंगाई बढ़ने के कारण यह वृद्धि शून्य के बराबर है। इस सम्बन्ध में द्वितीय पंचवर्षीय योजना के गंभीर परिणामों की—जिस पर ७,७०० करोड़ रु० खर्च होंगे—उपेक्षा नहीं कर सकते। इसके कारण आर्थिक व्यय आय साधनों की अपेक्षा बहुत बढा दिया गया है और योजना-आयोग का यह विचार है कि आने वाले दो वर्षों में—आर्थिक दृष्टि से भीषण कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। आय व्यय के साधनों का घाटा पहले सिर्फ ४०० करोड़ रु० का लगाया गया था, जबकि इस समय १.५०० करोड़ रु० घाटे के लक्षण दिखाई दे रहे हैं। यह तभी

पूरा हो सकता है जब विदेशी सहायता काफी मात्रा में मिलने लगे। यदि यह सहायता न मिली और सरकार ने मुद्रा प्रसार की नीति का आश्रय लिया, तो मंहगाई और भी बढ़ेगी और मध्यवर्ग को पीस डालेगी। कर बढते जा रहे है। दूसरी, जहां तक आंतरिक साधन जुटाने का प्रश्न है, जनता पर अंतिम सीमा तक कर का बोझ पड़ा है। पिछले बजट के अनुसार चालू वर्ष के लिए १०० करोड़ रु० कर लगाकर देश पर अधिक बोझ लादा गया है। द्वितीय योजना के प्रारंभ से लेकर इन १८ महीनों में नये कर १८८ करोड रु० तक पहुँच गये हैं। इससे स्पष्ट है कि वर्तमान जीवन स्तर ऊंचे हुए बिना और अधिक कर का बोझ सहना देश की शक्ति से बाहर है।

बिक्री पर अधिक कर बढने के कारण महंगाई और भी बढ़ गई। विशेषकर मजदूर तथा मध्य वर्ग के लिए यह भारी बोझ है। कीमतों को घटाने के लिए सरकार ने जो कदम उठाये, कोई खास सफल नहीं हुए। ऐसी दशा में नियमित आय तथा सीमित साधनों के कारण मध्यवर्ग को भारी संकट का सामना करना पड़ रहा है।

इससे सभी सहमत हैं कि १९३९ की तुलना में इस समय कीमतें चार गुना बढ़ गई हैं तथा रुपये का मूल्य बहुत घट गया है। इसका ज्यादा नुकसान उठाना पड़ा है सीमित आय वाले मध्य वर्ग को। मध्यवर्ग की आमदनी मजदूरों की आमदनी से भी कम है। मजदूरों का संगठन सुदृढ़ है। वे अपनी मांगों को प्रभावशाली ढंग से पेश कर सकते हैं। श्रमिकों के वेतन का सम्बन्ध महंगाई से है। महंगाई बढने के कारण उनके वेतन भी बढ जाते हैं। इसके साथ श्रमिक वर्ग के परिवारों में एक पर निर्भर रहने वाले सदस्यों की संख्या मध्यवर्ग की तुलना में बहुत कम है। इस कारण श्रमिक वर्ग की दशा कुछ अच्छी ही कह सकते हैं। १९४९-१९५४ तक की कलकत्ता शहर की परिस्थितियों को देखने से विदित होता है कि श्रमिक वर्ग की पहले से हालत अच्छी हो गई। महंगाई बढ जाने पर भी वह मध्य वर्ग की अपेक्षा अधिक सुखी है।

निम्न मध्य वर्ग का जीवन स्तर घट जाने से स्पष्ट है कि असमानता बढती जाती है तथा उन्हें निम्न श्रेणी के श्रमिक वर्ग में शामिल होना पड़ रहा है।

लगातार कीमत बढते जाने तथा सीमित आमदनी से देश की आर्थिक दशा सुधर नहीं सकती। धीरे २ मध्यवर्ग ह्रास का शिकार हो रहा है, जिससे कुछ समय के अन्दर यह वर्ग समाप्त ही हो सकता है। मध्यवर्ग का देश में प्रमुख स्थान है। उसकी आर्थिक दशा पर गहराई के साथ विचार विमर्श करने की आवश्यकता है। हमने आर्थिक तथा सामाजिक जीवन को आमूल-परिवर्तन करने तथा जीवन स्तर ऊंचा करने के लिए जो योजना बनाई है, वह मध्यवर्ग को तिरस्कृत करके सफल नहीं हो सकती। आज मध्य वर्ग का कोई संगठन नहीं है तथा नेतृत्व से शून्य है। इसे मालूम नहीं कि उसे किधर जाना है—उसका असंतोष और मानसिक क्षोभ किधर ले जायेगा, यह भी मालूम नहीं। स्वतंत्र समाज तथा सुदृढ़ प्रजातंत्र के निर्माण के लिए राजनैतिक दृष्टिकोण से भी मध्यवर्ग का काफी महत्व है। प्रसन्नता की बात है कि हमारे नेताओं तथा सरकार ने इस प्रश्न पर अब विचार करने का प्रयत्न किया है। हम कल्याणकारी समाज के निर्माण का दावा करते हैं। जो सरकार कल्याणकारी राज्य का निर्माण करना चाहती है, उसे चाहिए कि जनता की न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भी प्रयत्न करे। इसके लिए सस्ते मकान, चिकित्सा-सम्बन्धी सुविधाएं और मितव्ययपूर्ण शिक्षा व्यवस्था का प्रबंध करना होगा।

सरकार भी मध्यवर्ग से यह उम्मीद कर सकती है कि वह अपने बोझ को खुशी से सहन करेगा। समाज के सभी वर्गों को चाहिए कि वे त्याग तथा उदारता दिखाने को तय्यार रहें, ताकि देश अधिक सुखी तथा समृद्ध बने। सरकार का यह कर्तव्य है कि वह और ज्यादा सख्ती न करे, जबकि देश की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं है। और मध्य वर्ग को चाहिए कि असहायता व निराशा की भावनाओं को दूर करके अपनी स्थिति सुधारने के लिए एक निश्चित कार्यक्रम बनाये तथा अपनी उचित मांगें और अधिकार स्वीकृत होने तक डटा रहे। मध्यवर्ग की समृद्धि और खुशहाली ही नहीं, लोकतंत्र और स्वतंत्र समाज का भविष्य भी आज खतरे में है। इस खतरे को दूर करना चाहिए।

—

पूंजी प्राप्ति की समस्या—

विदेशों का सहयोग

दूसरी पंचवर्षीय योजना की पूर्ति में सबसे बड़ी बाधा विदेशी मुद्राके रूप में अनुभव की जा रही है। कभी-कभी तो ऐसा प्रतीत होता है कि इस असाधारण संकट के कारण हमारी योजना खटाई में पड़ जायगी, किन्तु भारत सरकार के प्रयत्नोंसे अब कुछ सहायता विदेशों से मिलने की संभावनाएं बढ़ गई हैं। अन्तर्राष्ट्रीय बैंक, अमरीका, जापान, रूस और फ्रांस से जो सहायता इन दिनों मिली है या मिलने वाली है, इसका संक्षिप्त परिचय इन पंक्तियों में हम दे रहे हैं :

विश्व बैंक से १० करोड़ डालर

अधिकारी सूत्रों के कथनानुसार विश्व बैंक अगले ४ महीनों के अन्दर,अन्दर भारत को सम्भवतः १० करोड़ डालर का ऋण देगा।

इस रकम का उपयोग बन्दरगाहों के सुधार और विद्युत् के साधनों के विकास में किया जाएगा।

बैंक से एक के बाद एक जो ऋण मिलने की आशा है वे दूसरी पंचवर्षीय योजना के दौरान में विदेशी मुद्रा की कठिनाइयां हल करने के भारत के प्रयत्नों में पर्याप्त सहायक होंगे।

अधिकृत सूत्रों के अनुसार इस वर्ष विश्व बैंक का पहला ऋण कलकत्ता और मद्रास के बन्दरगाहों के सुधारके लिए होगा। विश्व बैंक महसूस करता है कि भारत में परिवहन का सुधार सबसे जरूरी है। रेलवे के लिए उसने पहले ही ऋण दिए हुए हैं और अब वह बन्दरगाहों पर ध्यान देना चाहता है।

अधिकृत सूत्रों का कथन है कि अप्रैल या मई तक बैंक बम्बई और दामोदर घाटी में विद्युत विकास के लिए भी ऋण मंजूर कर देगा।

ऋण की कुल रकम १० करोड़ डालर अमरीकी डालर, पौंड और अन्य कई विदेशी मुद्राओंमें उपलब्ध हो सकेगी।

अमेरिका से २९ करोड़ डालर

इसके अलावा भारत को अमरीकी सरकार से २९ करोड़ डालर की सहायता मिलना अब निश्चित सा हो गया है।

इसमें से २२॥ करोड़ डालर की सहायता तो आयात-निर्यात बैंक और विकास ऋण कोष से दी जाएगी और ६॥ करोड़ डालर का १० लाख टन गेहूँ दिया जाएगा।

अमरीकी सरकार और विश्व बैंक से भारतको दी जा रही यह ४० करोड़ डालर की ऋण सहायता अमरीका में सभी क्षेत्रों से ५०-६० करोड़ डालर के ऋण प्राप्त करने के भारत के लक्ष्योंको काफी हद तक पूरा कर देगी।

फ्रांस से २८ करोड़ रु०

भारत और फ्रांस के बीच आर्थिक और शिल्पिक सहयोग बढ़ानेके लिए दोनों देशों में एक करार पर हस्ताक्षर हो गये हैं।

करार के अन्तर्गत फ्रांस की सरकार इस बात की सुविधा देगी कि फ्रांसीसी उद्योगपति दूसरी पंचवर्षीय आयोजना में शुरू की गयी योजनाओं के लिए भारी मशीनें आदि देने और तैयार करने में २५ अरब फ्रांक (लगभग २८ करोड़ रु०) तक लगाएं। यह राशि अगले १२ महीनों में लगानी होगी। मशीनों आदि की अस्थायी रूप से एक सूची बनायी गयी है, जो करार के साथ संलग्न है। सूची में मशीनें प्राथमिकता के अनुसार रखी गयी हैं। करार के अनुसार दोनों सरकारों के बीच कोई सीधा ऋण नहीं लिया दिया जाएगा और २५ अरब फ्रांक की यह रकम एक निश्चित ऋण की रकम नहीं है।

जापान से १८ करोड़ रुपये

जापान सरकार ने ऋण के तौर पर भारत को १८ करोड़ रु० देना स्वीकार किया है।

दोनो सरकारों के मध्यवर्तियों के बीच यह समझौता हो गया है कि जापान से मिलने वाला ऋण आयात-निर्यात

हमारी विकास योजना : खाद्य संकट, विदेशी सहायता, आन्तरिक साधन, १ करोड़ को रोजगार, अल्प बचत

(श्री उ० न० ढेबर)

पहली पंचवर्षीय योजना में कृषि पर जोर दिया जाना उचित ही था। हमारी कृषि अर्थ-व्यवस्था और योजना के अन्य भागों के बीच निकट सम्बन्ध है। और उन्हें, कृषि की अपेक्षा अधिक निश्चिन्तता के साथ योजना के अनुसार पूरा किया जा सकता है, क्योंकि कृषि का ७५ प्रतिशत अंश बरसात की अस्थिरता पर निर्भर करता है। जब कभी भी कृषि के क्षेत्र में हमारी योजना के शेष अंगों पर इसकी गहरी प्रतिक्रिया होती है। हमारा यह आशावाद, कि हमने अन्न की कठिनाइयों पर कामयाबी हासिल कर ली थी, अन्न व्यवस्था पर लगे नियंत्रणों की समाप्ति तक तो उचित था, परन्तु हमारी कुल आवश्यकताओं और हमारे साधनों पर इसके प्रभावों को देखते हुए वह पूरी तरह उचित न था। अनाज और अन्य कृषि पैदावार की हमारी न्यूनतम जरूरतें पूरी हों, इससे पहले हमें सख्त मेहनत करनी होगी, और अगर हमें साधन-सम्बन्धी सभी अनिश्चितताओं को दूर करना है और उनकी वास्तविक स्थिति के सम्बन्ध में स्पष्ट होना है तो हमें खाद्य-उत्पादन को एक ऐसे लक्ष्य तक पहुँचाने के लिए अधिक मेहनत करनी होगी, ताकि हम न केवल जरूरतों को पूरा कर सकें, बल्कि वह इतनी अतिरिक्त मात्रा में हो, जिससे हम अपने अन्य अनुबन्धों को भी पूरा कर सकें।

बैंक द्वारा प्राप्त होगा।

हाल में हुए समझौते के अनुसार जापान व्यक्तिगत व्यापार संस्थाओं के लिए ५ करोड़ रु० साधारण ६ प्रतिशत से भी कम सूद पर पेशगी देगा।

तीन चार मास पूर्व रूस ने भी भिलाई प्लाण्ट के अलावा ५० करोड़ रूबल ऋण देने का निश्चय प्रकट किया था। स्विट्जर लैण्ड तथा कोलम्बो योजना के देशों से भी कुछ सहायता मिल रही है, जिसका विवरण समय-समय पर सम्पदा के पाठक पढ़ते रहे हैं।

खाद्य-स्थिति के अनुसार, राज्य सरकारें, योजना के निश्चित लक्ष्य के ६६ प्रतिशत से अधिक उत्पादन करने की स्थिति में न होंगी। हमने आरम्भ में जो लक्ष्य निर्धारित किया था, वह भी बहुत महत्वाकांक्षी नहीं है। भारत का खाद्य उत्पादन २०० से ३०० प्रतिशत तक बढ़ाया जा सकना सम्भव है। बाहर से अनाज मंगाने की सहज संभावना न केवल खाद्य उत्पादन के आन्दोलन को शिथिल करती है, बल्कि सुरक्षा की एक बनावटी भावना भी पैदा करती हैं। विदेशी विनिमय पर खर्च किए गए कई करोड़ रुपयों के अतिरिक्त गत तीन वर्षों में बाहर से माल मंगाने के लिए ही केवल ७० करोड़ रुपये खर्च हुए हैं। भारत के कुछ भागों में अभाव की अवस्था के कारण स्थिति और भी खराब हो गई है। इस वर्ष २१ लाख टन की और कमी हो जायेगी। इसका प्रभाव योजना की सफलतापूर्वक पूर्ति पर भी पड़ सकता है।

हमारे सामने यह एक तात्कालिक समस्या है। इस काम के लिए किसानों से व्यक्तिगत सम्पर्क कायम करना होगा। हमें बीजों, खाद और सिंचाई के साधनों की उपलब्धता, ऋण आदि के बारे में विचार करना होगा। इन सबसे ऊपर हमें वैकल्पिक फसलों, विकसित खाद्यान्नों और उन्हें सुरक्षित रखने के बारे में ध्यान देना होगा। हमें खाद्यान्न की बरबादी को रोकना और भोजन की आदतों में परिवर्तन के विचार को लोकप्रिय बनाना होगा।

विदेशी विनिमय

यदि देश एक ओर खाद्य-मोर्चे पर कठिनाइयों का सामना कर रहा है, तो दूसरी ओर विदेशी विनिमय से सम्बन्धित उसकी स्थिति भी ठीक नहीं है। जिस संकट से हम गुजर रहे हैं, वह विस्तार की ओर अग्रसर किसी भी अर्थ-व्यवस्था में स्वाभाविक है। हम ऐश्वर्य की चीजों पर नहीं, बल्कि अपनी उत्पादन क्षमता को बढ़ाने के लिए खर्च

जो लोग बढ़ना चाहते हैं, उन्हें ऐसे संकटों के लिए तैयार होना पड़ता है।

आन्तरिक साधन

हमारा जोर सदा ही अपने आंतरिक साधनों की गतिशीलता और उनके अधिकतम उपयोग पर रहना चाहिए। देश में अथाह मानवीय शक्ति है, जिसका पूरी तरह उपयोग नहीं किया जा रहा है। भारत के नर-नारी प्रति माह दो दिन के लिए अपना श्रम देश की सेवा में देकर एक रुपया प्रति दिन के हिसाब से देश को २४० करोड़ रुपये सालाना दे सकते हैं। मैं इस प्रयत्न में १० करोड़ लोगों के योगदान की बात सोच रहा हूं। यदि हम बिखरे हुए अपने अन्य साधनों को भी सम्मिलित कर लें तो ये आंकड़े और भी आश्चर्यजनक होंगे। ये साधन देश भर में बेकार, बिखरे हुए, असम्बद्ध बिना प्रयोग में लाए हुए पड़े हैं। स्वावलम्बन के माध्यम से अधिकतम आत्म-निर्भरता के विचार की पुनरावृत्ति लोगों में उत्कर्ष एवं जागृत आत्म-हित की भावना को अनुप्रेरित करने के लिए अति आवश्यक है।

जिला प्रशासन और जिला संगठन पर साधनों को जुटाने का दायित्व है, परन्तु अब तक जिस ढंग से काम करते आए हैं, उससे एक पृथक् ढंग से अब उन्हें काम करना होगा। इस समय वे एक प्रकार से प्रत्येक चीज के लिए राज्यों और केन्द्रीय सरकार की ओर देखते हैं। एक बार दायित्व दिये जाने पर उन्हें अपना काम करने के लिए आवश्यक साधन सहयोग और सहायता पाने के लिए जनता के पास जाना ही होगा। इससे स्थानीय योजनाओं में दिलचस्पी भी बढ़ेगी।

जो कुछ मैं कह रहा हूँ उसका आशय "योजना के मूल तत्व" के महत्व को कम करना नहीं है। भले ही हम आवश्यक विदेशी विनिमय प्राप्त कर लें, मेरी राय में इस मूल तत्व से संबंधित हमारी योजना की पूर्ति का प्रश्न, खाद्य और कृषि के उत्पादन तथा घरेलू साधनों को जुटाने व गतिशील बनाने और आत्म-निर्भरता प्राप्त करने के दूसरे प्रश्न से संबंधित हैं। वास्तव में, इसी को योजना का वास्तविक मूल तत्व मानना चाहिए। लोहा, कोयला, परिवहन, संचार और विद्युत आयोजनाओं से संबंधित योजना के अन्य पहलुओं पर भी हमने बहुत जोर दिया है। देश में इस बात पर बहुत एकमत रहा है, चाहे कितना ही त्याग और बलिदान क्यों न करना पड़े, परन्तु इस काम को हर हालत में पूरा किया ही जाना चाहिये। यद्यपि योजना की अपूर्ति से देश की अर्थ-व्यवस्था संभवतः विश्रृंखलित न हो, तथापि इस काम को उचित अवधि में पूरा न कर सकने का परिणाम, अल्पकालीन, दृष्टिकोण से भी, काफी गम्भीर होगा। पूंजी का किसी भी प्रकार गतिरोध, चाहे वह अल्पकाल के लिए ही क्यों न हो, अन्य दिशाओं में योजना की प्रगति पर विपरीत प्रभाव डालेगा।

सरकार को बचत आन्दोलन में अपनी सामर्थ्य भर सहायता देने के लिए कांग्रेस वचनबद्ध है। जापान और जर्मनी ने बचत के काम को हम से कहीं अधिक ऊंची दर पर पूरा किया है। अन्तिम रूप से केवल जनता की बचत से ही योजना को पूरा किया जा सकता है। प्रत्येक क्रियाशील सदस्य को योजना की पूर्ति के लिए एक न्यूनतम राशि इकट्ठी करने का दायित्व लेना होगा। बचत के साथ-साथ सरकारी स्तर पर भी मितव्ययता की जानी चाहिए।

मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक पहलुओं के अतिरिक्त, आर्थिक नीति की प्रभावोत्पादकता तथा सामाजिक मूल्यों में आस्था उत्प्रेरित करने में परस्पर संबन्ध को आगे बढ़ाने के हेतु ये दो बातें आवश्यक हैं कि देश के सामाजिक एवं आर्थिक जीवन में व्याप्त असमानताओं में पर्याप्त कमी की जाए, तथा इससे भी अधिक महत्वपूर्ण शिक्षित तथा प्रशिक्षित में बेरोजगारी एवं अर्द्ध-बेरोजगारी दूर कर सकने की आयोजना की क्षमता को सिद्ध किया जाए। जब कभी देश के सामने राष्ट्रीयकरण का सवाल आया है, जनताने सरकार को अपना पूरा पूरा समर्थन दिया है। सरकार में जनता का यह विश्वास एक बहुत भारी पूंजी है और मुझे विश्वास है कि सरकार तमाम कमियों को दूर करके तथा जो व्यक्ति इन उद्योगों के प्रशासन में आवश्यक सावधानी नहीं बरतते हैं, उन सभी लोगों के साथ कड़ा रवैया अपनाकर जनता के इस विश्वास को बढ़ाने के लिए हर मुमकिन कदम उठाएगी।

★

निजी उद्योग की सफलताएं

प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में वर्तमान उद्योगों के विकास तथा दो दर्जन से भी अधिक नए उद्योग प्रथम बार प्रारंभ हो जाने से औद्योगिक उत्पादन में १९५२ में १०३.७ की तुलना में १९५६ में १३२.८ तक वृद्धि हुई है। (आधार वर्ष १९५१=१००) कुल राष्ट्रीय आय में सरकारी उद्योगों की देन ३ प्रतिशत से भी कम है।

"औद्योगिक विकास का कार्यक्रम : १९५६-६१ में" नामक योजना आयोग के प्रकाशन में कहा गया है कि प्रथम पंचवर्षीय योजना के समय सार्वजनिक पूंजी में से उद्योगों पर नई लागत लगभग ९४ करोड़ रु० का अनुमान लगाया गया था। लेकिन ताजे आंकन के अनुसार सही लागत लगभग ५७ करोड़ रु० है। नई विकास योजनाओं पर निजी पूंजी की लागत का अनुमान २३३ करोड़ रु० का लगाया गया था। लेकिन ताजे आंकन से पता चलता है कि वास्तविक व्यय भी इतना ही हुआ है।

उक्त कथनानुसार यह स्पष्ट हो जाता है कि—निजी पूंजी २३३ करोड़ रु० के मौलिक लक्ष्य तक १०० प्रतिशत पहुँच गई है, जबकि सरकारी उद्योग केवल ४० प्रतिशत लक्ष्य ही पूर्णकर सकें हैं। ९७ करोड़ रु० की बजाय उनका विनियोजन ५७ करोड़ ही हुआ। अर्थात ४० प्रतिशत कम।

निजी पूंजी में से कुछ उद्योग अपने लक्ष्य से आगे पहुँच गए हैं, जिन का विवरण निम्न प्रकार है।

उद्योग	इकाई	१९५१ में उत्पादन	१९५६ के लिए लक्ष्य	सही उत्पादन १९५५-५६ में	लक्ष्य का %प्रतिशत उत्पादन
कार्डिङ्ग इंजिन	(संख्या)	नहीं	६००	६१८	१०३
स्पिनिंग रिंग फ्रेम	,,	२७४	७००	६०८	१०३
डिब्बे	,,	३७०७	३००००	३२०००	१०६
			सारी योजना की अवधि के लिए	सब के बारे में	
सिलाई की मशीनें	,०००	३३	९१.५	१११	१२१
बिजली के ट्रान्समीटर	,००० कि० वा०	१७६	४५०	६२५	१३९
सोडा राख Ash	,००० टन	४५	७८	८१	१०४
कास्टिक सोडा	,,	११	३३	३५	१०६
बेन्जेन हेक्सा-क्लोरिड	टन		५००	१६०३	३२१
सूती उद्योग					
(१) सूत	मिल पौण्ड	११७६	१६४०	१६३३	१००
(२) मिल का कपड़ा	,, गज	३७१८	१७००	५१०२	१०६
स्टेपल फाइबर	मिल पौण्ड		११.२	१३.७	१२२
चीनी	,००० टन	११००	१५००	१८६०	१२४
सीमेंट	,००० टन	२६८६	४८००	४५६२	९६
कागज	,००० टन	११४	२००	१८७	९४

नये दृष्टिकोण से अन्न समस्या

पृष्ठ ८२ का शेष]

ही नहीं रखा।

मैं जिस राज्य से आरहा हूँ, वह खाद्य की दृष्टि से बचत वाला है तथा मेरा निर्वाचन क्षेत्र तो धान की दृष्टि से काफी समृद्ध है। क्षेत्रफल की दृष्टि से छोटा होने पर भी निजामाबाद जिले में काफी मात्रा में गन्ना पैदा होता है। चावल की दृष्टि से भी वह इतना समृद्ध है कि तेलंगाना में जितनी भी कमी हो तो सप्लाई करता है।

वहां गन्ना तथा चावल का प्रति एकड़ का उत्पादन लगातार बढ़ रहा है। इस का कारण किसानों का सजग प्रयत्न ही है। वे कृषि का खास ज्ञान रखते हैं। मेरा मतलब ज्ञान के ग्रन्थों से नहीं है। वे हमेशा कृषि में नए २ शोध करते रहते हैं। कई बार वे मुझ से प्रश्न करते हैं कि किसानों के लिए सरकार की तरफ से क्या ध्यान दिया जा रहा है? पहली बात कीमतें सही नहीं हैं। कई बार बाद में उत्पादन कम कीमतों पर बेचना पड़ता है और उसका वास्तविक लाभ शून्य रह जाता है। दूसरी बात इन किसानों को कृषि साधन—खाद तथा अच्छे बीज तक की सुविधा नहीं है। सरकारी दफ्तरशाही से भी वे परेशान हैं। भ्रष्टाचार बढ़ रहा है तथा पक्षपात का नंगा नाच हो रहा है। इस अपवित्र वातावरण से किसानों का दम घुटता जारहा है। इसलिए किसानों का प्रत्युत्तर यह है कि हम क्यों अधिक उत्पादन की चिन्ता करें? क्य न हम आराम का जीवन बिताएं?

गलती इन किसानों की नहीं है। गंभीर विवेचन के बाद मुझे लगा कि ये किसान निर्दोष हैं। जब कीमतें गिर जाती हैं, तो सरकार इस पर ध्यान तक नहीं देती और जब कीमतें बढ़ जाती हैं तो डंडा उठाकर धमकाती है। ऐसी दशा पैदा करने वाले किसानों के लिए कष्टजनक है।

इसलिए किसानों के प्रति ध्यान दिए बिना तथा उन की कठिनाइयों को दूर किए बिना 'अधिक अन्न उपजाओ' 'नए तरीके अपनाओ' की बातें किसी काम की नहीं हैं

मेरा सुझाव यह है कि हम किसानों के अलग अलग वर्ग बनाएं। एक विभाग में उन्हीं किसानों को शामिल करें, जिन्होंने गत पांच वर्षों में प्रति एकड़ औसत उत्पादन से दुगुना उपजाया हो। इस श्रेणी में ये किसान तब तक रह सकते हैं, जब तक प्रति एकड़ दुगुना उत्पादन से भी अधिक उपजाने में समर्थ हो सकें। हर साल स्तर बढ़ते जाने चाहिएं। इस श्रेणी के किसानों को उपजाऊ साधन, खाद तथा अच्छे बीज उपलब्ध करने की अधिक सुविधाएं मिलनी चाहिएं।

अधिक अन्न उपजाने वाले तथा कम अन्न उपजाने वाले किसानों से एक समान व्यवहार नहीं करना चाहिए। हमारे पास अमेरिका तथा रूस की तरह विशाल खाली मैदान नहीं है। हमारे पास खाली जमीन भी काफी कम है। इसलिए हमारे लिए एक किसान ही है, जो अधिक से अधिक पैदा करता है।

हमारी आवाज है "जमीन जोतने वाले की है"। ठीक है, जमीन जोतने वाले की होनी चाहिए। लेकिन असली बात तो यह है कि जोतने वाला किसान भी पूरा लाभ प्राप्त करे। यहां जमीन कम है। इसलिए जमीन उसी की होनी चाहिए, जो अधिक उत्पादन करता हो। हमारा भूमि सुधार प्रति एकड़ उत्पादन की मात्रा के साथ हो।

सही कीमतों के लिए मेरा सुझाव है कि पहले सरकार विक्रेता बने। वह बीज बोने के समय से पहले ही कीमतों की घोषणा कर दे। इस से किसानों को कुछ तसल्ली हो सकती है कि वे कम से कम क्या कीमतें प्राप्त करेंगे। इस से वे अधिक परिश्रम करके अधिक उत्पादन करने का प्रयत्न करेंगें। आज किसान निश्चय नहीं कर पाता कि मार्केट में भावों की स्थिरता क्या रहेगी।

भावों में परिवर्तन करते रहने की प्रवृत्ति ठीक नहीं है। एक संगठित अर्थ-व्यवस्था में यह असंभव चीज है। आज यह उतार चढ़ाव की प्रवृत्ति उत्पादक तथा उपभोक्ता दोनों के लिए सिरदर्द बन बैठी है। इसलिए सरकार को चाहिए कि वह उत्पादक तथा उपभोक्ता दोनों को कीमतों का आश्वासन दे। एक संगठित अर्थ-व्यवस्था की यही सब से पहली मांग है।

———

देश की वर्तमान आर्थिक समस्याएं

[पृष्ठ ७८ का शेष]

अनिवार्य है, जिसके कारण उपभोग्य सामग्री की कमी होगी, और अन्न को राशन के तौर पर वितरित करना होगा। जनता एक तरीके से सरकार को अत्यधिक सहायता पहुँचा सकती है। यह तरीका है कि वह सामान को संग्रह न करे और उस पर अत्यधिक लाभ उठाने का विचार छोड़ दें। परन्तु प्रशासकों को भी उपयुक्त आदर्श उपस्थित करना होगा। हम पहले ही एक आरोप लगा चुके हैं, और इन पंक्तियों में उसे पूरे दायित्व के साथ पुनः दोहरा रहे हैं, कि राज्य व्यवसाय निगम (स्टेट ट्रेडिंग कार्पोरेशन), जो केन्द्रीय सरकार का अंग है, सीमेंट के व्यापार से पैसा पैदा करने में लगा हुआ है। निगम के कार्य की प्रथम वर्ष की रिपोर्ट इस कथन का समर्थन करेगी। आयात की गई सीमेन्ट के लिए हानिस्वरूप ४७ लाख रुपया देकर तथा राज्य व्यवसाय निगम को पर्याप्त कमीशन देने के पश्चात् भी ५॥ करोड़ की बचत की गई—केवल इस कारण कि देश में सीमेन्ट के वितरण पर निगम का एकाधिपत्य है। इसका सीधा २ अर्थ यह है कि सरकार ने सीमेंट जैसी आवश्यक वस्तु को निगम के अधीन कर के जनता को अनावश्यक शोषण का शिकार बनाया है। इस देश की जनता को यह मांग करने का पूर्ण अधिकार है कि वह फुटकर में सीमेन्ट के भाव १० प्रतिशत कम कर देश के सामान्य व्यवसायी वर्ग के समक्ष आदर्श प्रस्तुत करें कि अनाप शनाप फायदा उठाना समाज-विरोधी है। स्वयं अधिक लाभ कमा करके व्यापारियों को कैसे कम लाभ लेने को कह सकते हैं।

आज आवश्यकता है साहसिक यथार्थवाद की, एक ऐसे साहसपूर्ण चरित्र की, जो बीते समय की गलतियां स्वीकार करें और उनसे लाभ उठाने का निश्चय व्यक्त करें। मानव स्वभाव के सदियों तक होने वाले परीक्षण के परिणाम-स्वरूप आर्थिक नियमों का निर्धारण हुआ है। उनको किसी सार्वभौम सत्ता सम्पन्न संसद ने स्वीकार नहीं किया है और न किसी सार्वभौम सत्ता सम्पन्न संसद द्वारा उन्हें व्यर्थ किया जा सकता है। इन नियमों की उपेक्षा से हम पतन के गर्त में ही जावेंगे। सरकार का कर्तव्य है कि वह अपने अभिमान को न आंक कर, अपनी जेब को देखे

नियोजित अर्थ-व्यवस्था में

[पृष्ठ ८४ का शेष]

अपनी हाल में ही प्रकाशित पुस्तक "नया वर्ग" में किया है।

आगे की पंक्तियों में मैंने यह प्रदर्शित करने का प्रयत्न किया है कि किस प्रकार हमारे आयोजना के आधारों के अनुसार निजी उद्योग क्षेत्र और सरकारी उद्योग-क्षेत्र को परस्पर मिला दिया गया है और इस सम्मिलित अर्थ-व्यवस्था का हमारे प्रजातन्त्र पर क्या प्रभाव पड़ा है या पड़ सकता है। मैंने प्रजातन्त्र पर ही विशेष जोर दिया है क्यों कि मेरा विश्वास है कि केन्द्रीय आयोजना-पद्धति के द्वारा आर्थिक प्रगति का यह प्रयोग जो संसदीय प्रजातन्त्र में चल रहा है, वह संसार में सर्वप्रथम केवल भारत द्वारा ही हो रहा है। हमारी सफलता और असफलता पर केवल इस देश के ही नहीं वरन् सामान्यतः समस्त विश्व के और मुख्यतः अफ्रेशिया के अल्प विकसित देशों की प्रजातांत्रिक जीवन पद्धति की सफलता-असफलता का दामोदार है। अतः अपने देश में जो कुछ भी हम करते हैं या जिस ढंग से हम चलते हैं या चलने का निश्चय करते हैं उस पर दुनियां के करोड़ों लोगों के जीवन और स्वतन्त्रता का भविष्य निर्भर करता है। हमारे एक ही गलत क़दम से आयोजना के सर्वाधिकारवादी रूप और नियंत्रित अर्थ-व्यवस्था और इसके अनिवार्य परिणामों—वैयक्तिक स्वतन्त्रता और खुशहाली का अंत—के साथ अन्य बहुत से देशों में भी विस्तार हो जायेगा।

हमारी मुख्य आर्थिक समस्या

हमारी आर्थिक समस्या मुख्य रूप से अविकसित अर्थव्यवस्था को उच्च स्तर तक पहुँचाना है, जिससे हमारे करोड़ों देशवासियों की उच्च जीवन-स्तर प्राप्त करने की आकांक्षा पूर्ण हो सके। हमारे आयोजकों ने सीमित वित्तीय और प्राविधिक साधनों के कारण, सरकारी क्षेत्र और निजी क्षेत्र दोनों का पूर्ण उपयोग करना आवश्यक माना है। देश की वर्तमान परिस्थितियों के अनुसार दोनों क्षेत्रों को अर्थव्यवस्था में प्रमुख भाग अदा करना है। सार्वजनिक या सरकारी क्षेत्र अपनी विशेष योग्यता के कारण, याने विदेशी सरकारी या संस्थागत, ऋण और सहायता, सामूहिक बचत तथा अतिरेक (सरप्लस) बजट के रूप में व्यक्त होने वाले सार्वजनिक साधनों, सार्वजनिक ऋणों और बचत के रूप में ऐसी प्रयोजनाओं में विनियोग कर सकती है जो अनिवार्य और आधारभूत के साथ-साथ अतिव्यय साध्य हैं। जैसे अस्त्र-शस्त्र निर्माण, बहुद्देशीय नदी प्रयोजनाएं, बन्दरगाहों का विकास आदि। इसी प्रकार निजी उद्योग, अपनी देश के उद्योग-व्यापार के तीव्र विकास कार्य के लिए वैयक्तिक साधनों को प्राप्त करने की योग्यता और अनुभव के आधार पर, जिसकी आधार भूमि न्यायोचित लाभ है, केवल देश के विकास कार्य में ही समर्थ नहीं है वरन् इसको कम से कम लागत में अधिक उत्पादन और अधिक रोजगार देने के कार्य में प्रोत्साहन भी दिया जाना चाहिए।

स्वतन्त्र साहस १६ वीं शताब्दी की पूंजीवादी भावना पर निर्भर करता है, यह बात उसी प्रकार असत्य है जिस प्रकार यह कहना कि प्रजातन्त्रात्मक समाजवाद का आधार १६ वीं शताब्दी का मार्क्सवादी-प्रदर्शन है जिसका जन्म सामन्ती पूंजीवाद के विरोध में हुआ। स्वतन्त्र साहस जनता का साहस है। यह इसी २० वीं शताब्दी की विचार-धारा है। एक अविकसित देश में स्वतन्त्र साहस केन्द्रीय आयोजना पद्धति—सरकार द्वारा आर्थिक क्रियाओं का प्रजा तन्त्रात्मक नियमन को स्वीकार करता है। लेकिन साथ ही यह इस बात पर भी जोर देता है कि सरकार का नियंत्रण यथाशक्य न्यूनतम होना चाहिए जिससे उद्योग, व्यापार और व्यक्ति के जीवन की स्वतन्त्रता कायम रह सके। इसी रीति से ही हम खतरों को टाल सकते हैं।

अपने देश में जिस प्रकार की आयोजना के लिए हम प्रयत्न कर रहे हैं उसमें सरकारी और निजी क्षेत्र दोनों को साथ-साथ मिलकर स्वतन्त्र और समृद्ध भारत के लक्ष्य की प्राप्ति के लिये कार्य करना है, जिसमें पारस्परिक आदर और सहिष्णुता की भावना हो, तथा इससे भी बढ़कर प्रजातन्त्र और प्रजातांत्रिक जीवन-पद्धति में अटल विश्वास हो। जहां दलबन्दी, विचारों और वर्ग भावना की संकुचितता के लिए कोई स्थान न हो।

—

नया सामयिक साहित्य

आर्थिक और वाणिज्य भूगोल—ले० श्री चतुर्भुज मामोरिया। प्रकाशक—श्री गयाप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा। पृष्ठ संख्या डिमाई अठपेजी १२००। मूल्य १५) रु०।

लेखक का यह बृहत् ग्रन्थ उन सब आलोचकों को अच्छा उत्तर है, जो यह कहते हैं कि हिन्दी में जब तक उत्कृष्ट साहित्य उपलब्ध न हो, तक तक ऊंची कक्षाओं में हिन्दी के माध्यम से शिक्षा देना संभव नहीं है। इसके विपरीत उत्कृष्ट साहित्य भी ऐसा पदार्थ है, जिसकी बाजार में मांग होने पर उत्पादक तैयार करने में विलम्ब नहीं करेंगे। मांग के बिना माल तैयार करने के लिए कोई पूंजी का विनियोजन नहीं करना चाहता।

प्रस्तुत पुस्तक आर्थिक और व्यापारिक दृष्टि से किये गये विश्व के भौगोलिक अध्ययन का एक सुन्दर ग्रन्थ है। अभी तक भूगोल की हिन्दी में उपेक्षा होती रही है। मिडिल और मैट्रिक के लिए भूगोल की छोटी-छोटी पुस्तकों के अतिरिक्त ऊंचे स्तर पर भूगोल-ग्रन्थ लिखने की दिशा में यह एक स्तुत्य प्रयास है। इसमें ३९ अध्याय हैं। प्रारम्भिक कुछ अध्यायों में मनुष्य और उसकी भौगोलिक परिस्थितियां, भू-मण्डल और जल-मण्डल, वायु-मण्डल, प्राकृतिक प्रदेश, उष्ण प्राकृतिक वनस्पतिका परिचय आदि दिया गया है। यह प्राकृतिक भूगोल शुष्क है, किन्तु आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, क्योंकि यही तो विभिन्न देशों की उपज तथा मानव प्रवृत्तियों का आधार होता है।

कुछ अध्यायों में जल व कृषि-संबन्धी व्यवसायों का विस्तृत विवरण है, जिनमें मछली, वृक्ष, पशुपालन, और भोज्य व पेय पदार्थों की दृष्टि से भौगोलिक विवेचन है। भोज्य और व्यापारिक फसलें, फल, तिलहन मसाले आदि पर पृथक्-पृथक् अध्याय हैं। इन सबमें स्थान-स्थान पर दिये गये चित्र, चार्ट, नक्शे व तालिका पर्याप्त संख्या में देकर विषय को स्पष्ट करने और पाठक की जानकारी बढ़ाने का प्रयत्न किया गया है। यह स्वाभाविक है कि लेखक भारत की चर्चा अधिक करता। भारतीय कृषि की अवनत स्थिति और उसके कारणोंका विशद विवेचन करते हुए विदेशों से तुलनात्मक आंकड़े भी लेखक ने दे दिये हैं और कृषि की उन्नति के लिए देश में क्या प्रयत्न किये जा रहे हैं, भारतीय अर्थ-शास्त्र के इस महत्वपूर्ण अंग की काफी जानकारी लेखक ने दे दी है। सिंचाई पर ही एक खासा अच्छा प्रकरण लिख दिया गया है, जिससे नई योजनाओं का भी परिचय मिल जाता है। इसी तरह मछली के तेल, दूध, लकड़ी, रबर उद्योग विषयक अपने-अपने स्थान पर विस्तृत सामग्री पाठक को पढ़ने को मिलेगी। गेहूं की कृषि पर ही ३० पृष्ठ हैं, जिनमें उसके विश्व-व्यापी उत्पादन, जलवायु, मिट्टी, आर्थिक दशा, कृषि के रूप, फसलों के विविध समय, गेहूँ के गोदाम, तुलनात्मक उत्पादन और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार सभी कुछ दे दिया गया है। चावल तथा अन्य अनाजों का भी इसी तरह परिचय दिया गया है। पेय पदार्थों में चाय, काफी, कोको और तमाखू का वर्णन है। कृषिके साथ-साथ इनके औद्योगिक स्वरूप, खपत तथा व्यापारिक महत्व का परिचय पाठक पढ़ते हुए भूल जायंगे कि वे भूगोल का शुष्क ग्रन्थ पढ़ रहे हैं। तमाखू का प्रकरण ही १४ पृष्ठों का है, जिसमें ७-८ तालिकाएं व अनेक चित्र हैं। फलों के प्रकरण में शराब का उत्पादन भी मिलेगा। व्यापारिक फसलों में शक्कर (११ पृष्ठ), कपास (१८ पृष्ठ), जूट, ऊन और रेशम आदि का हाल लिखा गया है। व्यापारिक दृष्टि से इनके विवेचन के लिए नक्शों, तालिकाओं व चित्रों की परिपाटी यथापूर्व है।

कुछ अध्याय खनिज पदार्थों, उनके स्रोतों, विविध देशों में तुलनात्मक अध्ययन, औद्योगिक विकास तथा व्यापार आदि के सम्बन्ध में है। प्रत्येक प्रकरण अपने आप में व्यापक तथा पूर्ण प्रतीत होता है। कोयले पर ४० पृष्ठ का एक पृथक् अध्याय है। खनिज तेलका प्रकरण ३० पृष्ठों का है। मिट्टी के तेल का इतिहास, उत्पादन, स्रवण और शोधन की विधि, उत्पादन के क्षेत्र, खपत, पैट्रोल से बनने वाले पदार्थ, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार, खनिज तेल व उसके स्थानापन्न आदि सभी सम्बद्ध विषयों का इस प्रकरण में समावेश है। व्यापकता और पूर्णता की यही शैली समस्त प्रकरणों में अपनाई गई है। यातायात के प्रकरण में स्वेज और पानामा नहरों का इतिहास, विकास, व्यापार और

अन्तर्राष्ट्रीय संघर्ष आदि की जानकारी मिलेगी । शक्ति के प्रमुख साधन विद्युत् पर भी एक विस्तृत प्रकरण हैं, जिसमें भारत की नई विद्युत् योजनाओं व बांधों का पूर्ण परिचय भी दिया गया है।

कुछ अध्याय औद्योगिक उत्पादन के सम्बन्ध में हैं। लोहा, वस्त्र, रासायनिक उद्योग, सीमेंट, खाद, चीनी, कागज, चमड़ा, तथा इ'जिनीयरिंग आदि उद्योगों के प्रकरण पढ़ते समय हम भूल जाते हैं कि हम भूगोल का ग्रन्थ पढ़ रहे हैं। इन प्रकरणों में विदेशों के औद्योगिक विकास की चर्चा के साथ-साथ भारतीय उद्योग का अच्छा परिचय मिलता है। नई औद्योगिक योजनाओं व संभावनाओं का वर्णन इस पुस्तक को अपने आप में पूर्ण एक पृथक् पुस्तक का रूप दे देता है। जन-संख्या सम्बन्धी तीन अध्याय भी अत्यन्त उपयोगी साहित्य की सामग्री से पूर्ण हैं। संक्षेप में यह ग्रन्थ विविध विषयों और गम्भीर समस्याओं पर लिखी गई पुस्तकों का एक साथ सुन्दर संग्रह है । लेखक व प्रकाशक ऐसे उत्कृष्ट ग्रन्थ को हिन्दी जगत् के सामने रखने के लिए बधाई के पात्र हैं।

जयशंकर प्रसाद : चिन्तन व कला—श्री इन्द्रनाथ मदान । प्रकाशक—हिन्दी भवन, जालंधर । पृष्ठ संख्या ४००। मूल्य ६।) सजिल्द ।

वर्तमान हिन्दी साहित्य में श्री जयशंकर प्रसाद का स्थान अपनी चतुर्मुखी प्रतिभा के कारण असाधारण हो गया है। काव्य, नाटक, उपन्यास और कहानी सभी दिशाओं में उनका अबाध प्रवेश था। आज के हिन्दी साहित्य को समझने के लिए उनके साहित्य का अध्ययन आवश्यक है। प्रस्तुत पुस्तक में उनकी बहुमुखी कला पर विविध अधिकारी विद्वानों के आलोचनात्मक लेख संग्रह किये गये हैं । तीन लेख तो कामायनी के विभिन्न तत्वों—मनस्तल, दार्शनिक तथ्यों और चरित्र-चित्रण के संबन्ध में हैं । सात लेख नाटककार प्रसाद और विभिन्न नाटकों पर हैं । तितली व कंकाल आदि पर भी सुन्दर लेख हैं। संक्षेप में प्रसाद का अध्ययन करने के लिए यह पुस्तक उपयोगी रहेगी । डा० रामरतन भटनागर के विचारधारा और साहित्यिक दृष्टिकोण बहुत अच्छे हैं । छपाई सफाई, कागज और गेट-अप सुन्दर हैं ।

आलोचना प्रवेश—ले० श्री प्यारेलाल शर्मा । प्रकाशक—वही । मूल्य ३॥) ।

प्रस्तुत पुस्तक में साहित्य और उसके विविध अंगों की आलोचना की गई है । साहित्य क्या है, उसके विविध अंग क्या हैं और नाटक, एकांकी नाटक, उपन्यास, कथा कहानी के विविध तत्व क्या हैं, इनकी विशेषताएं क्या होनी चाहिए, नाटकों व उपन्यासों का वर्गीकरण आदि सब का शास्त्रीय विवेचन प्रस्तुत पुस्तक में किया गया है । पूर्वीय व पाश्चात्य आचार्यों के विविध मत लेखकने स्थान-स्थान पर दिये हैं। निबंध और आलोचनाओं पर भी एक पृथक् प्रकरण लिखा गया है। अपनी बात की पुष्टि के लिए साहित्य कृतियां के उदाहरण देने से विषय सुबोध हो गया है। प्रस्तुत पुस्तक विद्यार्थियों के लिए लिखी गई है और इसलिए उनकी आवश्यकताओं व कठिनाइयों का ध्यान रखा गया है ।

गुलाब के दो फूल—(उपन्यास)—मूल लेखक श्री राबर्ट स्टीवन्सन । अनुवादक—श्री महावीर अधिकारी । प्रकाशक—राजपाल एण्ड सन्स, काश्मीरी गेट, दिल्ली । मूल्य ४) सजिल्द ।

प्रस्तुत उपन्यास अंग्रेजी के प्रसिद्ध लेखक श्री राबर्ट स्टीवेन्सन के 'ब्लैक ऐरो'' का अनुवाद है । इसका कथानक इंगलैण्ड के सामन्ती युग के आधार पर लिखा गया है, जिससे वहां के तत्कालीन युग की झलक मिलती है, ठीक उसी तरह की, जैसे किसी समय भारत में अमीर उमराव और जागीरदार परस्पर लड़ाई झगड़े में व्यस्त रहते थे। किन्तु हमें संदेह है कि हिन्दी पाठक उस समय के वातावरण, संस्कृति के आधार पर जो आज और भी अधिक अस्वाभाविक व अपरिचित सा लगता है, लिखे गये उपन्यास में अधिक रुचि ले सकेंगे । घटना क्रम कहीं तो दुर्गम मार्ग के वर्णनों के कारण शिथिल पड़ जाता है, कहीं जटिल घटना जाल के कारण एक दम तेजी से भागता है । कहीं-कहीं अनुवाद शब्दानुवाद के प्रयत्न में शिथिल भी पड़ गया है। उपन्यास में दुर्गम मार्ग तथा शौर्य साहस आदि के वर्णन

साहित्यकार की प्रतिभा को परिचित करते हैं । नायक व नायिका ही अनेक रूपों में हमारे सामने आते हैं और जिन भीषण बाधाओं को उन्होंने अपनी सूझ-बूझ, धैर्य व साहस के साथ पार किया, यह सब पाठक का कुतूहल बढ़ाते रहते हैं । फिर भी हमारी नम्र सम्मति में समस्त घटना क्रम के आधार पर स्वतंत्र रूप से लेखक की भाषा और शब्द का मोह छोड़कर यह उपन्यास लिखा जाता, तो हिन्दी पाठकों के लिए अधिक रोचक हो जाता ।

★

मैकबेथ नाटक—अनुवादक–श्री हरिवंशराय बच्चन । प्रकाशक—राजपाल एण्ड संस, काश्मीरी गेट, दिल्ली । मूल्य ३) सजिल्द ।

शेक्सपीयर के अंग्रेजी नाटकों के अनुवाद हिन्दी में प्रकाशित हो चुके हैं और स्वयं इसके प्रकाशक ने भी अनेक नाटकों के अनुवाद प्रकाशित किये हैं । किन्तु इस अनुवाद की विशेषता यह है कि यह पद्यबद्ध अनुवाद है और यह हुआ है हिन्दी के प्रसिद्ध कवि बच्चन द्वारा। अनुवाद की भाषा रोला छन्द का रूप धारण करके भी कठिन नहीं हुई, सरल, प्रवाहमयी और चलतू, है जो कि नाटकीय रंगमंच के लिए उपयुक्त हैं । लेखक का विचार है कि कवि शैक्सपीयर के नाटकों का गद्य में अनुवाद करने से उसमें शैक्सपीयर के कवित्व की रक्षा नहीं हो सकती । यह ठीक हो सकता है, किन्तु नाटक इस रूप में खेला जाकर जनता का मनोरंजन करेगा, इसके लिए बहुत अधिक तैयारी व प्रतीक्षा करनी होगी । तथापि यह अनुवाद पाठकों को अधिक रस दे सकेगा, इसमें संदेह नहीं । यदि सुनाने वाला कुशल हो तो श्रोता इससें ही नाटक का सा आनन्द लाभ कर सकते हैं ।

★

आर्थिक समीक्षा—(गोहाटी कांग्रेस विशेषांक)—सम्पादक—श्री सुनील गुह । प्रकाशक—अ० भा० कांग्रेस समिति, जन्तर मन्तर रोड, नई दिल्ली । मूल्य १॥) ।

प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष भी कांग्रेस अधिवेशन के अवसर पर आर्थिक समीक्षा का यह वृहत् अंक प्रकाशित किया गया है । इसके अधिकांश लेखों में भारत की विभिन्न आर्थिक प्रवृत्तियों, सफलताओं और संभावनाओं का संक्षिप्त परिचय दिया गया है । अनेक लेख केन्द्रीय मंत्रियों और कांग्रेस अधिकारियों के हैं । कुछ लेख विविध राज्यों के मुख्य मंत्रियों के हैं । इन लेखों में समस्या विवेचन की बजाय प्रगति का परिचय अधिक मिलेगा। अर्थ-शास्त्रियों के भी कुछ लेख हैं । भारत की लोकशील अर्थ-व्यवस्था, खाद्य समस्या और उत्पादन में रुकावट, दूसरी पंचवर्षीय योजना आदि कुछ लेख विवेचना पूर्ण और पठनीय हैं । गत विशेषांकों की तरह इसमें साहित्यिक लेखों व कविताओं के दर्शन कम होते हैं । हमारी नम्र सम्मति में गैर सरकारी अर्थ-शास्त्रियों के सुझावपूर्ण लेखों की ओर भी कुछ अधिक ध्यान दिया जावे, तो वे मार्ग दर्शन की दृष्टि से अधिक उपयोगी होंगे ।

पत्रिका में अनेक पृष्ठ सुन्दर चित्रों से परिपूर्ण हैं । यह अंक जानकारी पूर्ण है, इसमें संदेह नहीं ।

प्राप्ति स्वीकार

१. इण्टर मीडिएट बैंकिंग : लेखक श्री लालता प्रसाद अग्रवाल एम. काम., प्रकाशक—इण्डस्ट्रीयल एण्ड कमर्शियल सर्विस, ९९ हीवेट रोड, इलाहाबाद—३, मूल्य ५) रु० ।
२. मुद्रा तथा भारतीय अधिकोषण : लेखक और प्रकाशक—वही । मूल्य २.२५ रुपये ।
३. आर्थिक भूगोल का प्रारम्भिक ज्ञान : लेखक और प्रकाशक वही । मूल्य २.२५ रुपये ।
४. अर्थ-शास्त्र का प्रारम्भिक ज्ञान : लेखक और प्रकाशक वही । मूल्य २.५० रुपये ।
५. वाणिज्य प्रणाली (प्रथम भाग) : लेखक और प्रकाशक वही । मूल्य २.५० रुपये ।
६. वाणिज्य प्रणाली (द्वितीय भाग) : लेखक और प्रकाशक वही । मूल्य २.२५ रुपये ।
७. वाणिज्य भूगोल का प्रारम्भिक ज्ञान : लेखक—नवीन चन्द्र जैन, प्रकाशक—जाब प्रिन्टर्स, इलाहाबाद ३ । मूल्य २.० रुपये ।

—

(पृष्ठ ७३ का शेष)

बढ़ा। चीनी मिट्टी, कांच, कांच के बर्तन और तापसह भट्टियों के उत्पादन में भी बराबर वृद्धि हुई। रेयन (नकली रेशम) के धागे के उत्पादन में वृद्धि भी उल्लेखनीय है।

लघु-उद्योग निगम

राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम ने रूस को २,५०,००० जोड़े जूते भेजे हैं। रूस ने निगम को जूते भेजने का आर्डर दिया था, जिसे निगम ने देश के अनेक छोटे कारखानों में बांट दिया था ; यह निगम भारत सरकार ने छोटे उद्योगों को बिक्री आदि में सहायता करने के लिए स्थापित किया है।

निगम ने किश्तों पर मशीन देने की जो योजना चलाई है, वह अपने किस्म की अकेली है। काफी लोग इस योजना का लाभ उठाने के इच्छुक हैं। मार्च, १९५७ के अन्त तक २ करोड़ ६२ लाख रु० से भी अधिक की ४,०६० मशीनों के लिए ९८४ अर्जियां आईं। इनमें से १ करोड़ ६५ लाख रु० से भी अधिक की २,४५९ मशीनें देने के लिए ६६१ अर्जियां स्वीकार की गईं। निगम ने मार्च १९५७ के अन्त तक १० लाख ९० हजार रु० की १९१ मशीनें दीं।

जिन स्थानों में एक विशेष प्रकार का उद्योग चल रहा है, वहां उस माल की किस्म सुधारने और उसे बेचने में सहायता देने के लिए निगम ने थोक बिक्री की दुकानें खोली हैं। पहली दुकान १९५६ में, जूता-उद्योग को सहायता देने के लिए आगरा में खोली गई थी। १९५६-५७ में निगम ने ताले के लिए अलीगढ़ में, चीनी मिट्टी के बर्तनों के लिए खुर्जा में, सूती बनियान आदि के लिए कलकत्ता में, रंग-रोगन के लिए बम्बई में और कांच के दानों के लिए रेणीगुण्टा में थोक बिक्री की दुकानें खोलीं।

लघु उद्योग के माल के प्रचार के लिए निगम ने दिसम्बर, १९५५ में उत्तरी क्षेत्र में चलती-फिरती गाड़ियां भी चलानी शुरू कीं। इस साल ऐसी गाड़ियां अन्य तीन क्षेत्रों में भी शुरू कर दी गई हैं।

केन्द्रीय सरकार छोटे उद्योगों से भी माल खरीदे, इसके लिए निगम ने जो योजना बनाई थी, उसमें काफी प्रगति हुई।

ओखला औद्योगिक आस्थान

ओखला औद्योगिक आस्थान में ३५ कारखाने खोले जाएंगे, जो लघु उद्योग के अंतर्गत रहेंगे। इनमें २८ कारखाने निर्माणाधीन हैं, जिनमें से १७ कारखानों में माल तैयार होने लगा है।

सरकार के कहने पर निगम ने इलाहाबाद में भी औद्योगिक आस्थान बनाने का काम शुरू कर लिया है। वहां २३ एकड़ जमीन में ३४ कारखाने खोलने की योजना है। वहां नवम्बर, १९५६ में काम शुरू किया गया था और मार्च, १९५७ के अन्त तक ५० प्रतिशत काम पूरा हो चुका था। तब से पूरा आस्थान बन चुका है और छोटे निर्माताओं को २१ कारखाने दिये जा चुके हैं।

क्षेत्रीय निगम

निगम के काम को देश भर में फैलाने के लिए और छोटे उद्योगों के विकास के हेतु सरकार ने जो अन्य संस्थाएं खोली हैं, उनके साथ मिल कर काम करने के लिए निगम ने चार क्षेत्रीय निगम स्थापित किए हैं। वे बम्बई, कलकत्ता दिल्ली और मद्रास में हैं और वहां अप्रैल, १९५७ से काम शुरू हो चुका है।

इस साल निगम की हिस्सा पूंजी ५० लाख रु० और प्राप्त पूंजी २० लाख रु० बढ़ी है। भारत सरकार ने १००-१०० रु० के १०,००० हिस्से खरीदे। इसके अलावा भारत सरकार ने निगम को ६७ लाख रु० का ऋण और ११,५३,३०७ रु० का अनुदान देना स्वीकार किया।

नये इस्पात कारखानों की स्थापना

बिहार में, बोकारो में एक और इस्पात कारखाना खड़ा करने की तैयारी की जा रही है। यह देश का चौथा इस्पात कारखाना होगा और तीसरी पंचवर्षीय आयोजनामें कायम किया जाएगा।

बम्बई राज्य में लोहे का कारखाना खोलने की कई वार जांचकी गई, परन्तु लोहा बनाने के लिए न केवल खनिज लोहे की, बल्कि बढ़िया किस्म के कोयले की भी आवश्यकता होती है। इसलिए सरकार की सम्पत्ति में लोहे

और इस्पात के कारखाने बिहार, उड़ीसा, मध्यप्रदेश और प० बंगाल में ही खोले जा सकते हैं, जहां धातुशोध के काम आने वाला कोयला काफी मिलता है।

घटिया कोयले से लोहा शोधने के विदेशों में जो तरीके निकाले जा रहे हैं, उनके बारे में जानकारी प्राप्त की जा रही है और जमशेदपुर की राष्ट्रीय धातु प्रयोगशाला में भी इस तरह के परीक्षण किये जा रहे हैं। इन परीक्षणों के परिणाम देखने के बाद ऐसे क्षेत्रों में इस्पात के कारखाने खोलने के बारे में विचार किया जाएगा, जहां लोहा मिलता है, पर अच्छा कोयला नहीं मिलता।

सीमेंट का उत्पादन

पता चला है कि भारत सरकार ने राज्य सरकारों को, सीमेंट के वितरण पर बन्धन ढीले कर देने तथा परमिटों पर सीमेंट देने की वर्तमान प्रणाली को खत्म कर देने की सलाह दी है। अब सीमेंट की सप्लाई नियमित रूप से होने के कारण सरकार ने उक्त कदम उठाया है। आशा है कि सीमेंट की सप्लाई इसी तरह होती रहेगी।

सीमेंट का उत्पादन लगातार बढ़ रहा है। पिछले कुछ महीनों में राज्य सरकारों को मिलने वाला सीमेंट का कोटा बहुत बढ़ा दिया गया है। अक्टूबर से दिसम्बर, १९५७ तक की तिमाही में राज्यों को हर महीने २१,५७० टन अधिक सीमेंट दिया गया। जनवरी से मार्च १९५८ तक की तिमाही में राज्यों को मिलने वाला सीमेंट का कोटा हर महीने २५,००० टन और बढ़ा दिया गया है। इसके अलावा जब-जब अधिक सीमेंट मिला, तब-तब राज्यों को और भी अधिक दिया गया।

१९५७ में सीमेंट का उत्पादन बढ़ने से स्थिति में सुधार हुआ। इस वर्ष ५६ लाख टन सीमेंट तैयार किया गया, जबकि पिछले वर्ष कुल ४९ लाख टन ही तैयार किया गया था। केन्द्रीय और राज्य सरकारों की योजनाओं के लिए सीमेंट की मांग घटने के कारण भी सप्लाई में सुधार सम्भव हुआ।

विकासोन्मुख मध्यप्रदेश

श्री मिश्रीलाल गंगवाल
वित्तमन्त्री मध्यप्रदेश

राज्यपुनर्गठन आयोग की सिफारिशोंके आधार पर गठित वर्तमान मध्यप्रदेश आर्थिक दृष्टिसे एक आत्मनिर्भर व समृद्धशाली क्षेत्र है। यद्यपि इस समग्र क्षेत्र का मुख्योद्योग कृषि ही है, फिर भी इस क्षेत्रमें उपलब्ध औद्योगिक संसाधनों व कच्चे माल का समुचित उपयोग करने के लिए शासन द्वारा योजनायें बनायी जाने लगी हैं, जिनके फलस्वरूप भारत के हृदय भाग में स्थित यह क्षेत्र अब आर्थिक व सामाजिक उत्थान की दृष्टि से नया कलेवर ग्रहण कर रहा है।

कृषि उत्पादन

प्रथम पंचवर्षीय योजनान्तर्गत क्रियान्वित विविध विकास योजनाओं के कारण इस समग्र क्षेत्रके कृषि उत्पादन में वृद्धि हो सकी है। निम्न तालिका द्वारा राज्य में उत्पादित विविध खाद्यान्नों के उत्पादन समंक दिये गये हैं, जिससे ज्ञात हो सकेगा कि पिछले वर्षों इस दिशा में किस गति से प्रगति हुई है।

इस सारणी से स्पष्ट है कि राज्य में उत्पादित विविध खाद्यान्नों के उत्पादन में १९५०-५१ वर्ष तथा

खाद्यान्न उत्पादन

: वर्ष १९५०-५१ से १९५६-५७ : लाख टनों में :

वर्ष	चावल	गेहूँ	ज्वार	मक्का	जौ	बाजरा
१	२	३	४	५	६	७
१९५०-५१	१३.५	१०.४	५.१	१.१	१.०	०.५
१९५१-५२	२३.०	७.०	५.२	१.३	०.९	०.५
१९५२.५३	२५.०	९.५	८.९	१.६	०.९	०.८
१९५३-५४	२५.८	१०.८	११.४	२.०	०.८	०.९
१९५४-५५	२४.६	१३.९	१०.३	१.९	१.१	०.९
१९५५-५६	२८.६	१५.४	७.६	१.६	१.२	०.८
१९५६-५७	३१.४	१६.०	११.२	१.८	१.४	०.८

१९५६-५७ के मध्य प्रगति हुई है। प्रथम पंचवर्षीय योजना के प्रथम चरण वर्ष १९५०-५१ में वर्तमान मध्य प्रदेश के अन्तर्गत आने वाले विविध घटक क्षेत्रों में चावल, गेहूँ, ज्वार, मक्का, जौ व बाजरा का उत्पादन क्रमशः १३.५ लाख टन, १०.४ लाख टन, ५.१ लाख टन, १.१. लाख टन, १ लाख टन व ५० हजार टन हुआ था। यही उत्पादन प्रथम पंचवर्षीय योजना काल में क्रमशः बढ़ता गया तथा वर्ष १९५६-१९५७ के अन्तिम अनुमानों के अनुसार क्रमशः ३१.४ लाख टन, १६ लाख टन, ११.२ लाख टन, १.८ लाख टन, १.४ लाख टन व ०.८ लाख टन हो गया। प्रतिशतता की दृष्टि से इस अवधि में चावल, गेहूँ, ज्वार, मक्का, जौ तथा बाजरा के उत्पादन में क्रमशः १३२.८, ५३.८, ११९.६, ६७.२, ३३.१ तथा ६७.१ प्रतिशत वृद्धि हुई है। केवल खाद्यान्न उत्पादन ही नहीं, वाणिज्य उपजों के उत्पादन में भी समुचित वृद्धि हुई है।

वर्ष १९५०-५१ में मूंगफली व तिल का उत्पादन क्रमशः १.१ लाख टन व ८० हजार टन था। यही उत्पादन वर्ष १९५६-५७ के अन्तिम अनुमानों के अनुसार क्रमशः १.६ लाख टन व ९० हजार टन हो गया। प्रतिशतता की दृष्टि से इन उपजों में क्रमशः ५१.१ प्रतिशत व १३.९ प्रतिशत वृद्धि हुई है। इसी अवधि में कपास के उत्पादन में लगभग ११९ प्रतिशत वृद्धि हुई है। वर्ष १९५०-५१ में राज्य में लगभग २ लाख गांठ, कपास उत्पादित किया गया था। यही उत्पादन क्रमशः बढ़ते हुए वर्ष १९५६-५७ के अन्तिम अनुमानों के अनुसार ४.५ लाख गांठ हो गया।

खनिज उत्पादन

मध्य प्रदेश खनिज सम्पत्ति की दृष्टि से भी समृद्ध है। यहां के खनिज संसाधनों के समुचित दोहन की दृष्टि से ही सरकार द्वारा भिलाई में विशाल लौह इस्पात में कारखाने की स्थापना की जा रही है ताकि इस क्षेत्र के खनिज धनों का समुचित उपयोग देश की औद्योगिक प्रगति को प्रशस्त करने में किया जा सके। प्रथम पंचवर्षीय योजना-काल में राज्य में उपलब्ध कोयला, लोहा तथा चूना पत्थर आदि खनिजों की खदानों को दोहित करने का प्रयत्न किया गया है, जिससे राज्य के खनिज उत्पादन में समुचित वृद्धि हो सकी है। निम्न सारणी द्वारा राज्य के बढ़ते हुए खनिज उत्पादन का ज्ञान हो सकेगा—

खनिज उत्पादन : लाख टनों में :

वर्ष	कोयला	चूना	मेंगनीज
१९५१	३५.९	७.१	३.८
१९५२	३९.३	७.५	४.६
१९५३	४१.५	८.८	५.८
१९५४	४३.२	११.०	४.३
१९५५	३३.७	९.४	३.४
१९५६	४८.४	१०.३	४.४

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट है कि राज्य में गत पांच वर्षों में खनिज उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि हुई है। वर्ष १९५१ में कोयला, चूना व मैंगनीज उत्पादन क्रमशः ३५.९ लाख टन, ७.१ लाख टन तथा ३.८ लाख टन हुआ था। यही उत्पादन वर्ष १९५६ में क्रमशः ४८.४ लाख टन, १०.३ लाख टन व ४.४ लाख टन हो गया। खनिज उत्पादन में यह वृद्धि कुछ मात्रा में पुरानी खदानों से अधिक खनिज खोदने के कारण हुई है। द्वितीय पंचवर्षीय योजनाकाल में कोरवा कोयला खदानों, नर्मदाघाटी की कोयला खदानों व राज्य की लोहा व मैंगनीज खदानों का दोहन करने का प्रयत्न किया जावेगा।

औद्योगिक प्रगति

स्वतन्त्रता के पूर्व तक राज्यान्तर्गत आने वाला समग्र क्षेत्र औद्योगिक दृष्टि से एक पिछड़ा हुआ क्षेत्र माना जाता था किन्तु स्वतन्त्रता के पश्चात देशी राज्यों के विघटन व सब स्थानों पर लोक प्रिय शासन प्रणाली के व्यवहृत होने पर इस क्षेत्र को औद्योगिक प्रगति की ओर विशिष्ट ध्यान दिया जा सका। आज राज्य में शक्कर उद्योग, सीमेंट उद्योग सूती वस्त्रोद्योग, रेयन उद्योग, जूट उद्योग, कांच उद्योग, पाटरी उद्योग, बिस्कुट उद्योग, अखबारी कागज उद्योग व अन्य यांत्रिकी उद्योग प्रगति कर रहे हैं, जिसके फलस्वरूप राज्य में उपभोक्ता वस्तुओं की पूर्ति के साथ ही देश के आर्थिक पुनर्निर्माण में आवश्यक कतिपय औद्योगिक उत्पादनों की भी पूर्ति हो सकी। राज्य का नेपानगर-स्थित अखबारी कागज का कारखाना, कैमोर : कटनी : व बामोर : मुरैना जिला : स्थित सीमेंट कारखाने, ग्वालियर स्थित रेयन उद्योग व इन्दौर, बुरहानपुर व उज्जैन स्थित सूती वस्त्रोद्योग देश की महत्वपूर्ण आवश्यकताओं को पूर्ण करते हैं।

राज्य के शक्कर उद्योग में वर्ष १९५१ के उत्पादन की तुलना में लगभग २७७ प्रतिशत वृद्धि हुई है। राज्य में वर्ष १०५० में ३.९८ खाद टन सीमेंट उत्पादित किया गया था। यही उत्पादन वर्ष १९५२ तथा १९५३ में क्रमशः ४.११ लाख टन तक बढ़ गया। १९५६ में यही उत्पादन ३.९९ लाख टन था।

चतुर्मुखी प्रगति की भावी संभावनायें

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के रूप में मध्य प्रदेश आर्थिक व सामाजिक विकास की प्रगतिशील योजना की सफलता पर न केवल कृषि क्षेत्र में ही, बल्कि औद्योगिक क्षेत्र में भी देश का प्रमुख क्षेत्र बन सकेगा। द्वितीय पंचवर्षीय योजनाकाल में राज्य में कृषि, सामुदायिक विकास सिंचाई व विद्युत खनिज व उद्योग तथा यातायात पर क्रमशः ३५.८९ करोड़, १४.६१ करोड़, ६४.९२ करोड़, १०.४२ करोड़ तथा १२.९९ करोड़ रुपयों के व्यय का प्रावधान रखा गया है। इनमें से इन मदों पर वर्ष १९५६-५७ की अवधि में क्रमशः २.९६ करोड़, २.६० करोड़, ६.८२ करोड़, ३० लाख तथा १.६८ करोड़ रुपये व्यय किये गये हैं।

द्वितीय पंचवर्षीय योजनान्तर्गत आयोजित छोटी व बड़ी सिंचाई योजनाओं की सफलता से राज्य के लिए कृषि क्षेत्र में विस्तार हो सकेगा। साथ ही चम्बल योजना की सम्पूर्ति पर उद्योग धन्धों व ग्राम्य विद्युतीकरण हेतु पर्याप्त मात्रा में विद्युत् शक्ति उपलब्ध हो सकेगी। औद्योगिक क्षेत्र में भिलाई स्थित लौह इस्पात कारखाने की सम्पूर्ति होने तथा भोपाल स्थित भारी विद्युतीकरण सामग्री के कारखाने का निर्माण होने पर लौह इस्पात व भारी विद्युतीय सामग्री सम्बन्धी राष्ट्र की एक विशिष्ट आवश्यकता पूर्ण हो सकेगी नए कारखाने के उत्पादन का प्रभाव न केवल राज्य के औद्योगिक कलेवर में नवीन जागृति लावेगा, बल्कि इसमें समग्र देश का औद्योगिक ढांचा प्रभावित होगा। नेपानगर स्थित अखबारी कागज के कारखाने, कैमौर स्थित सीमेन्ट के कारखाने, राज्य के सूती वस्त्रों के कारखानों, शक्कर के कारखानों व अभियान्त्रिकी उद्योगों को भी द्वितीय पंचवर्षीय योजनान्तर्गत विकसित किया जावेगा, ताकि राज्य की चतुर्मुखी आर्थिक प्रगति का पथ प्रशस्त हो सके।

द्वितीय पंचवर्षीय योजनान्तर्गत राज्य के लघु उद्योगों व कुटीर उद्योगों के विकास का भी पूर्ण प्रावधान किया गया है। राज्य की द्वितीय पंचवर्षीय योजना राज्य के लोकजीवन में विकासशील नये मूल्यों का सृजन कर सकेगी व भारत के हृदय भाग में स्थित लगभग १७१ हजार वर्गमील के विशाल क्षेत्रफल में विस्तृत इस विशाल राज्य को देश के आर्थिक अभ्युत्थान में सहायक सिद्ध कर सकेगी।

—

उत्तरप्रदेश समृद्धि के पथ पर

२६ जनवरी १९५८ के दिन उत्तरप्रदेश के ही नहीं समस्त देश के इतिहास में एक नया अध्याय लिखा गया, जबकि ७० वर्ष से ऊपर के २००० वृद्ध लोगों को उत्तरप्रदेश सरकार ने वृद्धावस्था की पेंशन के रूप में पहली किश्त बांटी। समाजवाद की दिशा में यह एक ठोस कदम है, जिसका अनुसरण अन्य राज्यों में किया जायगा।

आलोच्य वर्ष में राज्य के आय व्यय में ही नई प्रवृत्तियों की सूचना मिल गई थी। राजस्व प्राप्तियां ९९ करोड़ ६६ लाख रुपये और राजस्व व्यय एक अरब ८ करोड़ ३३ लाख रुपये रहा। चालू वर्ष में ११ करोड़ ६७ लाख रुपये के घाटे को पूरा करने के लिये सरकार प्रयत्नशील है। इस वर्ष के बजट की कतिपय विशेषतायें थीं: बुढ़ापे की पेंशन की योजना को चालू करना, छठी कक्षा तक की शिक्षा को निःशुल्क करना, राष्ट्रनिर्माण सम्बन्धी विभागों के लिये अधिक धन की व्यवस्था करना, निम्न वेतन भोगी सरकारी कर्मचारियों के महंगाई भत्ते में वृद्धि, और बाढ़ सुरक्षा कार्यों के लिय ३ करोड़ २५ लाख रुपये की व्यवस्था आदि।

राज्य में अल्प बचत आन्दोलन के अन्तर्गत पहली अप्रैल से लेकर दिसम्बर के अन्त तक केवल ३,३२,३१,-००० रुपये एकत्र किये गये, जबकि चालू वित्तीय वर्ष के लिए २०,१२,३८,००० रुपये का लक्ष्य निर्धारित किया गया था। यह बचत कोष की कमी केवल इसी राज्य की नहीं, सभी राज्यों की सामान्य घटना है। इसके कारणों पर विचार करना चाहिए।

भूमि सुधार

आलोच्य वर्ष में कृषि आय कर के बदले में वृहद् जोतकर का लगाया जाना और कृषि जोतों की चकबन्दी की योजना के संचालन में समुचित सुधार आदि उल्लेखनीय हैं। कुमाऊं जमींदारी विनाश तथा भूमि व्यवस्था बिल को राज्य विधान मंडल में पेश किया गया और उत्तर प्रदेश नगर क्षेत्र जमींदारी विनाश एवं भूमिव्यवस्था बिल, १९५६ राष्ट्रपति की स्वीकृति मिलने पर कानून बना।

जो लोग भविष्य के सम्बन्ध में निराशा और संदेह में पड़े हैं, वे यदि विकास योजनाओं की प्रगति पर एक सरसरी दृष्टि डालें तो उन्हें मालूम होगा कि सुदूर भविष्य में नहीं वरन् दूसरी आयोजना के शेष तीन वर्ष समाप्त होते-होते ही एक नये स्वर्ग की रचना संभव हो सकेगी।

सन् १९५६ के अन्त तक चार पर्वतीय जिलों को छोड़कर राज्य के सभी देहाती क्षेत्रों में जमींदारी समाप्त की गयी और भूमि-सुधार-सम्बन्धी व्यवस्था लागू कर दी गयी थी। उत्तरप्रदेश जोत चकबंदी अधिनियम, १९५३ पर राष्ट्रपति की स्वीकृति मार्च १९५४ में प्राप्त हुई। अब राज्य के १२,३६० गांव इस योजना के अन्तर्गत आ गये हैं।

यह उल्लेखनीय है कि चकबंदी से पूर्व इन गांवों में चकों की संख्या जहां ३९,३५,७१० थी, वहां चकबंदी के बाद घटकर केवल ६,४८,८१४ रह गयी।

उत्तर प्रदेश वृदद् जोतकर अधिनियम, १९५७ के अधीन जोतों के वार्षिक मूल्य पर प्रति रुपये ५ नये पैसे से लेकर ६० नये पैसे तक कर लगाया गया। लेकिन १,८०० रुपये वार्षिक मूल्य तक की जोतों पर कोई कर नहीं लगाया गया है।

कृषि उत्पादन

पहली पंचवर्षीय आयोजना में खाद्योत्पादन का जो लक्ष्य नियत किया गया था, आयोजन के चौथे वर्ष अर्थात् सन् १९५४-५५ में ही उत्पादन उससे ७-८ लाख टन अधिक अर्थात् १२४.५ लाख टन होगया किन्तु सन् १९५५-५६ में, मौसम अनुकूल न रहने के कारण उत्पादन ११६ लाख टन हुआ।

उत्तर प्रदेश का सिंचित क्षेत्र ५० वर्ष पूर्व ७८ लाख एकड़ था, जो सन् १९५५-५६ में बढ़कर १०६ लाख एकड़ हो गया था।

उत्तर प्रदेश का द्वितीय आयोजन २५३ करोड़ रुपये का है। इस आयोजनावधि में राज्य को निम्न साधनों

द्वारा २४ लाख टन अतिरिक्त अनाज उत्पन्न करना है।

बृहद् सिंचाई योजना	२.०४ लाख टन
छोटी सिंचाई योजना	३.८२ लाख टन
उन्नत बीज बांट कर	५.२६ लाख टन
रासायनिक तथा अन्य खादें बांट कर	७.५६ लाख टन
उन्नत कृषि पद्धति अपना कर	४.५५ लाख टन
नयी भूमि तोड़कर और उसे सुधार कर	०.७७ लाख टन
	२४.०० लाख टन

उत्तर प्रदेश के आयोजन के अन्तर्गत सन् १९६१ तक अनाज के अलावा १ लाख १० हजार जूट की गांठें, इतनी ही कपास की गांठें और ११ लाख ८० हजार टन तिलहन पैदा करने का निश्चय किया गया है।

खाद्योत्पादन में खाद का विशेष महत्व है, इसीलिए निश्चित किया गया है कि १९५५-५६ की अपेक्षा सन् १९६०-६१ में १० गुनी खाद का उपयोग होने लगे। आयोजन के प्रथम वर्ष में ४१,९४२ मन खली और १८ लाख मन रासायनिक खादें बांटी गयीं और चालू वर्ष में विभिन्न प्रकार की ४२,२१,००० मन खादें बांटी जा रही हैं। किसानों में हरी खाद का विशेष प्रचार किया रहा है। इसके लिए पिछले वर्ष हरे खाद के २२,८४७ मन बीज बांटे गये।

जूट, तिलहन और ईख की पैदावार के सन् १९५६-५७ के लक्ष्य भी प्राप्त कर लिये गये थे और चालू वर्ष में भी लक्ष्य से अधिक पैदावार का अनुमान है।

आलोच्य वर्ष में बाढ़ तथा सूखा के कारण राज्य को भारी क्षति पहुँची। जुलाई के दूसरे पखवारे में अति वर्षा होने से तथा सितम्बर की अप्रत्याशित वर्षा से पश्चिमी जिलों में दूर दूर तक पानी जमा हो गया। लगभग १० करोड़ ९८ लाख रुपये मूल्य की फसलों को क्षति पहुँची।

उत्तर प्रदेश में १९५६-५७ में २,०६३,००० टन चावल उत्पादन हुआ था, जबकि १९५३-५४ में २,०५३,००० टन और १९५४-५५ में १,९९३,००० टन चावल हुआ था।

सामुदायिक विकास : गांवों में नवजागरण

आलोच्य वर्ष में ८० राष्ट्रीय प्रसार सेवा खंडों और १९ सघन विकास खंडों के खुल जाने से राज्य में इनकी संख्या बढ़कर ३५७ हो गई जिनमें २१८ राष्ट्रीय प्रसार सेवा खंड, ३३ प्रगाढ़ोत्तरखंड और ८० सघन विकास खंड थे। इनके अतिरिक्त ग्राम स्तर के कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करनेके लिए २४ प्रशिक्षण केन्द्र थे।

इस वर्ष भी इन खंडों में कृषि पर विशेष बल दिया गया और उत्पादन में वृद्धि करने के लिये किसानों को उर्वरक हरी खाद, आधुनिक कृषि उपकरण काफी मात्रा में दिये गये। लगभग ३० हजार एकड़ भूमि तोड़ी गई और एक लाख ३० हजार एकड़ में जापानी ढंग से धान की खेती की गई।

विद्युत उत्पादन में वृद्धि

निश्चय ही राज्य में बेरोजगारी की समस्या का मुकाबला करने और कृषि उत्पादन में वृद्धि करने के लिए अधिक मात्रा में बिजली पैदा करना जरूरी है।

द्वितीय आयोजना अवधि में ४,२७,०६० किलोवाट बिजली और पैदा करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है, जिसमें से २,५०,००० किलोवाट बिजली अकेले रिहन्द बांध योजना से मिलेगी, जिसे अब द्वितीय आयोजना के "कौर" में सम्मिलित किया गया है। प्रथम पंचवर्षीय आयोजना की विभिन्न योजनाओं पर होने वाले व्यय के अतिरिक्त द्वितीय आयोजना में ११ नयी योजनाओं पर ७० करोड़ रुपया खर्च होगा, जिसमें से नियोजन आयोग ने केवल ५४ करोड़ ६२ लाख रुपये का व्यय स्वीकार किया है।

चार वाष्प-विद्युत स्टेशनों के पूर्ण हो जाने के फलस्वरूप ५५ हजार किलोवाट बिजली पैदा की जाने लगी है। इसके अतिरिक्त बहराइच के डीजल पावर स्टेशन के विस्तार के फलस्वरूप २ हजार किलोवाट बिजली और पैदा होने लगी है। गोरखपुर, मऊ तथा सुहावल के वाष्प-विद्युत स्टेशनों से घरेलू उपयोग तथा उद्योगों के लिये बिजली मिलने के साथ साथ लगभग २ हजार नलकूपों और ११ पूर्वी जिलों की सभी पम्प नहरों को पूरी बिजली मिलेगी। मैनपुरी के वाष्प-विद्युत स्टेशन से मैनपुरी, एटा और फरूखाबाद जिले के ३०० से अधिक नलकूपों को बिजली मिलेगी और फलस्वरूप राज्य के पश्चिमी भाग के पिछड़े इलाके प्रगति के पथ पर अग्रसर होंगे।

सन् १९५७-५८ के वर्ष की अन्य सफलताओं में राम-गंगा नदी क्रासिंग का निर्माण विशेषरूप से उल्लेखनीय है। वस्तुतः उत्तरी भारत में यह एक सबसे लम्बा क्रासिंग होगा, जिसकी लम्बाई २,७०० फुट है। नदी के दोनों किनारों पर २५० फुट ऊंची मीनारें बनी हुई हैं।

द्वितीय आयोजना में सिंचाई योजनाओं पर विशेष बल दिया जा रहा है। प्रथम आयोजना की १८ अपूर्ण योजनाओं को चालू करने के अतिरिक्त १५ नयी योजनाओं पर काम शुरू किया गया है। लगभग ३५ करोड़ रुपये लागत की इन योजनाओं से १९ लाख २० हजार एकड़ अतिरिक्त क्षेत्र को सिंचाई की सुविधायें उपलब्ध होंगी। इस अवधि में ३,७२६ मील लम्बी नई नहरों का निर्माण हो जाने से आयोजना अवधि तक इनकी कुल लम्बाई ७,७२६ हो जायगी। द्वितीय आयोजना में १,७८८ और नलकूपों का निर्माण किया जायगा। आयोजना के प्रथम दो वर्षों में इन पर कुल १६ करोड़ ६० लाख रुपये खर्च हो चुका है।

छोटे और बड़े उद्योगों का जाल

यह उल्लेखनीय है कि उद्योगों पर व्यय की जाने वाली कुल १६.५ करोड़ रु० की धनराशि में से १० करोड़ ४४ लाख ४२ हजार रुपये अकेले कुटीर तथा ग्रामोद्योग पर खर्च होगा, ३ करोड़ १६ लाख रुपया संगठित उद्योगों पर व्यय किया जायगा और निजी क्षेत्र के उद्योगों की सहायता के लिए राज्य की ओर से २ करोड़ ४२ लाख ९५ हजार रुपये दिये जायंगे। इनके अतिरिक्त भारत सरकार भी बुनियादी तथा भारी उद्योगों की स्थापना करेगी।

सीमेंट कारखाने की वार्षिक क्षमता बढ़कर २ लाख ३१ हजार टन हो गई है, जिसमें से १ लाख ६० हजार टन सीमेंट का उत्पादन दिसम्बर १९५७ तक हुआ। लगभग पौने तीन करोड़ रुपये की लागत से सीमेंट कारखाने की उत्पादन क्षमता दूनी करने की योजना है।

सूक्ष्म यन्त्र निर्माण कारखाने को नये भवन में स्थानान्तरित कर दिया गया है। नई योजनाओं के फलस्वरूप द्वितीय आयोजना के अन्त तक कारखाने का उत्पादन बढ़ कर ३६ हजार जलमापक यन्त्र और ३० अणुवीक्षण यन्त्र हो जायेगा। केन्द्रीय सरकार द्वारा रिहन्द क्षेत्र में एक अल्युमीनियम प्लान्ट लगाये जाने की आशा है, जहां प्रतिवर्ष १० हजार टन अल्युमीनियम का उत्पादन हो सकेगा। रेलवे मन्त्रालय ने वाराणसी के समीप इन्जन के पुर्जों को बनाने के कारखाने की स्थापना करने का प्रस्ताव किया है। इसके अतिरिक्त भारत सरकार बरेली के समीप नकली रबड़ के एक कारखाने का निर्माण करने पर विचार कर रही है। इस योजना पर १० करोड़ रुपया खर्च होने का अनुमान है।

निजी क्षेत्र में वाराणसी में एक सोडा फैक्ट्री का निर्माण हो रहा है। रेयन सूत उद्योग, कपड़ा उद्योग की मशीनों के निर्माण के कारखाने और रेलवे वैगनों के निर्माण के कारखानों की स्थापना के लिए लाइसेन्स दिये जा चुके हैं। इसके अतिरिक्त दो चीनी मिलों, कागज तथा सीमेंट के एक-एक कारखाने खोलने की इजाजत भी दी गई है। कुछ और उद्योगों की स्थापना की योजना भी है।

निजी क्षेत्र में उद्योगों के विकास के लिए बिड़ला तथ्य-निरूपण समिति द्वारा प्रस्तुत एक अरब रुपये लागत के एक व्यापक कार्यक्रम पर राज्य सरकार विचार कर रही है। सरकारी क्षेत्र में एक करोड़ रुपये लागत से चार चीनी मिलें खोली जा रही हैं।

छोटे पैमानेके उद्योग

राज्य सरकार से प्रोत्साहन मिलने के फलस्वरूप छोटे उद्योगों के क्षेत्र में पर्याप्त प्रगति हुई है। राज्य सरकार द्वारा एक करोड़ रुपये की लागत से दो बड़े औद्योगिक आस्थानों की स्थापना और नैनी (इलाहाबाद) में भारत सरकार द्वारा एक और आस्थान की स्थापना करने के फलस्वरूप छोटे पैमाने के उद्योगों को पर्याप्त प्रोत्साहन मिला है। इन आस्थानों में स्थापित किये गये अनेक उद्योगों में उत्पादन कार्य भी चालू हो गया है। आयोजना अवधि में १५ लाख ५८ हजार रुपये की लागत से देवबन्द (सहारनपुर) लोनी खंड (मेरठ) और काशी विद्यापीठ रोड (वाराणसी) में तीन और आस्थानों की स्थापना जायेगी।

द्वितीय आयोजना के आरम्भ में सरकार के उद्योग संचालन कार्यालय ने कुटीर एवं ग्रामोद्योगों के चतुर्मुखी विकास के लिए ४७ योजनायें तैयार कीं और अब इन योजनाओं की संख्या लगभग ७५ हो गई है। आयोजना के अन्त तक औद्योगिक सहकारी समितियों की संख्या बढ़कर दो हजार होने की आशा है।

सहकारिता की ओर

ऋण तथा क्रय-विक्रय कार्यकलाप को समन्वित करने की दिशा में इस वर्ष ४० प्रारम्भिक क्रय-विक्रय समितियों की स्थापना सहकारिता के क्षेत्र में उल्लेखनीय घटना है। द्वितीय आयोजना की अवधि के अन्त तक राज्य की मुख्य-मुख्य मंडियों में १५० क्रय- विक्रय समितियां संगठित की जायंगी।

इस समय राज्य में २२७ सहकारी कृषि समितियां हैं, जिनकी सदस्य संख्या ५,७०० है। अधिकांश समितियां संयुक्त कृषि पद्धति पर काम कर रही हैं। इनके अधीन लगभग २१,००० एकड़ भूमि है। द्वितीय आयोजना के अधीन १०० नई सहकारी कृषि समितियों को संगठित करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

सहकारी बीज गोदामों की तुलना में १,२५० सहकारी गोदाम हैं। योजनावधि के अन्त तक इनकी संख्या १,७५२ हो जायगी।

सड़क और पुल

जन संख्या की दृष्टि से तथा नागपुर सम्मेलन के स्टार एवं मिड फार्मूला के आधार पर उत्तर प्रदेश में १६,४८४ मील पक्की और ४२,३०७ मील लम्बी कच्ची सड़कों की आवश्यकता है।

अनेक योजनाओं के परिणामस्वरूप द्वितीय आयोजना के अन्त तक राज्य में पक्की सड़कों की लम्बाई बढ़कर १४,८२८ मील हो जाने की आशा है।

द्वितीय आयोजन में राज्य में ६१ बड़े पुलों और ३४ झूला पुलों का निर्माण करने की योजना है। इनमें से प्रमुख पुल है—गढ़मुक्तेश्वर में गंगा का पुल, दोहरी घाट में घाघरा का पुल, अयोध्या में सरजू का पुल, आगरा में यमुना का पुल, मुरादाबाद तथा बरेली में रामगंगा का पुल गोरखपुर में राप्ती का पुल और देहरादून में सौंग का पुल। इस समय राज्य में ४३ बड़े पुलों का निर्माण कार्य जारी है जिनमें से १७ पुल आगामी वर्षा ऋतु से पहले ही बनकर तैयार हो जायेंगे।

गमनागमन की सुविधाओं, गृह-निर्माण, वाटर वर्क्स तथा जल निकासी की योजनाएं भी वेग से चल रही हैं। शिक्षा, पंचायतें और स्थानीय शासन संस्थाएं सभी की ओर प्रदेश सरकार पूरा ध्यान दे रही है।

पंजाब नेशनल बैंक : २० प्रतिशत डिविडेण्ड

३१ दिसम्बर १९५७ को समाप्त वर्ष के लिए पंजाब नेशनल बैंक ने काफी उत्साहवर्धक नतीजे प्रकाशित किए हैं। आलोच्य वर्ष में न केवल बैंक के डिपाजिटों में उल्लेखनीय वृद्धि हुई, लेकिन उसका लाभ भी एक नए ऊंचे स्तर पर पहुँच गया। वर्ष के अन्त में बैंक के डिपाजिट रु० १२४ करोड़ के स्तर पर थे, जो १९५६ के अन्त के डिपाजिटों से रु० १८ करोड़ के लगभग अधिक थे। डिपाजिटों के साथ-साथ आलोच्य वर्ष में बैंक का असल लाभ भी ऊंचा रहा जो ग्रेच्यूटी फण्ड ट्रस्ट में रु० ९.२७ लाख जमा कर देने और विभिन्न व्यवस्थाओं का पूरा कर देने के बाद रु० ११७.३१ लाख था।

इस लाभ में से रु० ८.७५ लाख बैंक के अंतरिम लाभांश में खर्च हो जाते हैं जो रु० २.५० प्रति शेयर कर मुक्त था। बाकी बचे रु० १०८.५६ लाख में रु० ५० लाख करों की व्यवस्था के लिए रखे गए हैं और रु० २२.५० लाख सुरक्षित कोष में जमा करवाए गए हैं। कर्मचारियों के बोनस के लिए रु० १८ लाख और धर्मार्थ खाते में १ लाख रु० डाल देने के बाद असल लाभ में से बैंक के पास रु० १७.०६ लाख बच रहते हैं।

बैंक ने अपनी बढ़ी हुई शेयर पूंजी पर रु० २.५० प्रति शेयर कर-मुक्त का अंतिम लाभांश घोषित किया है जिसमें रु० १२.५० लाख खर्च होते हैं। अन्तिम लाभांश घोषणा से बैंक का वर्ष का कुल लाभांश २० प्रतिशत हो जाता है, जो पूर्व वर्ष में १६ प्रतिशत था। आगामी वर्ष के लिए रु० ४.५६ लाख बच रहते हैं।

★

टाटा केमिकल्स

टाटा केमिकल्स कारखाने में सोडा एश का उत्पादन आजकल प्रतिदिन २०० टन होता है। यह उत्पादन प्रतिदिन ४०० टन बढ़ाने की दृष्टि से एक योजना बनायी गयी है। उत्पादन में वृद्धि कारखाने का आवश्यक सुधार तथा पुनर्रचना कर, की जाने वाली है। सोडा एश के समान ही कास्टिक सोडा का उत्पादन भी बढ़ाने की योजना है। इसके लिये आगामी चार वर्षों में लगभग ३॥। करोड़ रु० कीमत की पूंजी लगायी जायगी। सरकार द्वारा १ करोड़ १२ लाख रु० कीमत की पूंजी प्राप्त करने की अनुमति दी गई है। अमेरिका के अन्तर्राष्ट्रीय फिनान्स कार्पोरेशन के साथ ६० लाख रु० कीमत के ऋण के लिये बातचीत हो रही है। इस ऋण में से विदेशों से आने वाली यंत्र सामग्री तथा अन्य सामग्री की कीमत चुकती की जाएगी। इसके बाद भी २ करोड़ रु० की पूंजी की आवश्यकता होगी जो अन्तर्गत साधनों द्वारा एकत्रित की जायगी। दूसरा कारखाना खोलने की अपेक्षा चालू कारखाने का सुधार तथा विस्तार करना ही अधिक लाभदायक सिद्ध होने वाला है। इस योजना से भागीदारों को पूंजी पर ७ से ८ प्रतिशत ब्याज प्राप्त हो सकेगा, ऐसा श्री टाटा का अनुमान है। टाटा—फिसन (प्राईवेट) लि. कारखाना जून से ही प्रारम्भ किया गया तथा उसमें उत्पादन भी होने लगा है। प्रतीत होता है कि ब्रिटन के फिसन लि. के सहयोग से प्रारम्भ किया गया यह उपक्रम लाभदायक सिद्ध होगा, क्योंकि खेती की फसलों की कीटाणुओं से सुरक्षा करने के लिये आवश्यक जन्तु विनाशक औषधियां तैयार करने का कार्य इस कारखाने में होता है।

मध्यप्रदेश के औद्योगिक श्रमिक

फेक्ट्रियों की संख्या	काम करने वाले श्रमिकों की संख्या
१,८११	१,५६,२५६

उद्योग	संख्या	श्रमिकों की औसत संख्या
वस्त्र उद्योग	१६	५१,१६५
आर्डिनेन्स फेक्ट्रियां	५	११,६०८
शक्कर	५	४,४६० : मौसम में :
सीमेंट	३	३,३७५
चीनी मिट्टी का काम	४	२,५०८
इंजीनियरिंग	५	२,४६७
कागज तथा पुट्ठा	३	१,५६०
रेयन सिल्क	२	१,४५०
सन : जूट	१	८१८
बिस्कुट तथा मिठाई	१	७५०
	४८	८०,२२०

न्यूनतम वेतन विधान के अन्तर्गत

अनुसूचित रोजगारों के श्रमिकोंकी संख्या

कुल उन रोजगारों की संख्या जो इसके अन्तर्गत आते हैं	काम कर रहे श्रमिक की लगभग संख्या
१४	५,२५,०००

श्रमिकों के अनुपात से महत्त्वपूर्ण श्रेणियां

उद्योग	काम कर रहे श्रमिक अनुमानित संख्या
१. बीड़ी उद्योग	२,३२,०००
२. सड़क तथा भवन निर्माण	१,१७,५००
३. स्थानीय संस्थाएं	६१,०५१
४. कपास जिनिंग तथा प्रेसिंग	२६,५००
५. गिट्टी तोड़ने और पत्थर पीसने वाले	१४,०००
६. चावल, दाल, आटा, तेल	१२,६३०
७. सार्वजनिक मोटर यातायात	८,६७६
८. सीमेन्ट	५,०००
९. चीनी मिट्टी	२,६७०
१०. [illegible] तथा चमड़ा पकाना	२,५००
११. लाख का काम	१,५००
१२. शीशा	१,०८०
	५,१८,७५०

खदानों में श्रमिक

खदानों में काम करने वाले श्रमिकों की कुल संख्या ७६,१६६

इनमें से २६,२३८ कोयले की तथा ३७,०१६ मेंगनीज की खदानों में काम करते हैं।

रूसी छात्र और साम्यवाद

सं० रा० अमेरिका से प्रकाशित होने वाले "बाल्टिमोर सन" ने यह रिपोर्ट प्रकाशित की है कि रूस के विश्व विद्यालयों में साम्यवादी प्रोफेसरों की संख्या साम्यवादी छात्रों की संख्या से १० गुनी अधिक है और रूस के साम्यवादी दल को नई पीढ़ी की इस दशा पर गम्भीर चिन्ता है।

साम्यवादी दल के मामलों की अधिकृत पत्रिका 'पार्टी लाइफ' (मास्को) ने प्रकट किया है कि मास्को विश्वविद्यालय में शिक्षा प्राप्त करने वाले ३० हजार छात्रों में "केवल २६६ छात्र ही साम्यवादी दल के सदस्य हैं।" उक्त पत्रिका ने यह भी लिखा है कि विश्वविद्यालय में प्रोफेसरों तथा शिक्षकों के समुदाय में से २,८१८ साम्यवादी दल के सदस्य हैं।

५० : ५० और ६१ : ३६

प्रथम पंचवर्षीय योजना में निजी और सार्वजनिक उद्योगों में विनियोजनका अनुपात ५० : ५० था। किन्तु दुःख की बात है कि नई योजना में इसे ३६ : ६१ कर दिया गया। यदि निजी उद्योग का भाग बढ़ा दिया जाता तो सार्वजनिक उद्योगों के लिए अर्थ व्यवस्था के उद्देश्य से और जनता पर करों का बोझ कम लगाना पड़ता और घाटे की अर्थ व्यवस्था का स्तर भी नीचा होता और दूसरी ओर औद्योगिक विकास की गति भी कुछ तीव्र हो जाती। अधिक आवश्यक वस्तुओं को प्राथमिकता देनी चाहिए। हमें देश का औद्योगिक विकास करना है, यदि निजी उद्योग उस उद्देश्य को भलीभांति पूर्ण कर सकता है, तो उसे करने देना चाहिए।

—पी० सी० जैन

प्रगति का आह्वान

हमारे देश को समाजवादी ढांचे के समाज की ओर अग्रसर करने वाली दूसरी पंचवर्षीय आयोजना राष्ट्र की आशाओं और आकांक्षाओं का मूर्त रूप है। इसका उद्देश्य मूलभूत और भारी उद्योगों का शीघ्रतर विकास, खाद्य और कृषि में अधिक उत्पादन, राष्ट्रीय आय में और वृद्धि, रोजगार के अवसरों का विस्तार और आर्थिक शक्ति एवं श्रम व उद्यम के लाभों का अधिक समान वितरण करना है। इस समय जो हमारे सामने समस्यायें हैं वे इस प्रकार की पीड़ायें हैं जो देश की उन्नति और विकास के लिये झेलनी ही पड़ती हैं। चुनौती समझ कर संगठन और साहस के साथ हम इनका सामना करें और पंचवर्षीय आयोजना की पूर्ति के लिये सेवा, त्याग और बलिदान की पवित्र भावना से जुट जाएं।

आयोजना सफल बनाइए
प्रगति और समृद्धि के लिए

"अपने देश की नव रचना के विशाल और उस विराट कार्य में हम लोग जुटे हैं जिसमें केवल संगठित श्रम ही नहीं, अपितु उत्साह और पवित्र भावना से ओतप्रोत संगठित श्रम की आवश्यकता है।"

—जवाहरलाल नेहरू

DA-57/268

योजना का तृतीय वर्ष—

९५० करोड़ रुपये का व्यय

ज्ञात हुआ है कि अगले वित्तीय वर्ष दूसरी योजना के तीसरे साल—के लिए कुल योजना पर खर्च लगभग ६५० करोड़ रुपया होगा। इसमें से ५८० करोड़ रु० केन्द्रीय योजनाओं के लिए और शेष राशि राज्यों की योजनाओं के लिए होगी।

यह राशि चालू वित्तीय वर्ष—योजना के दूसरे वर्ष—के अनुमानित वास्तविक खर्च से १०० करोड़ रुपया और योजना के पहिले वर्ष के खर्च से २०० करोड़ रुपए अधिक है। इस प्रकार दूसरी योजना में हर साल पिछले साल से अधिक खर्च हो रहा है।

योजना आयोग अब अगले वित्तीय वर्ष के लिए राज्यों की योजनाओं को अंतिम रूप दे रहा है। ऐसा मालूम पड़ता है कि भारत योजना के पहिले तीन वर्षों में लगभग २५०० करोड़ रुपए खर्च करेगा। इस प्रकार योजना के अंतिम २ वर्षों में २३०० करोड़ रुपए की शेष रकम खर्च करनी होगी। मूल योजना में सरकारी क्षेत्र में ४,८०० करोड़ रुपए खर्च की व्यवस्था की गई है।

अभी यह कहना जल्दबाजी होगी कि देश योजना के अंतिम दो वर्षों में बहुत ज्यादा मुद्रा-स्फीति पैदा किए बिना २३०० करोड़ रुपए खर्च करने की स्थिति में होगा। फिर भी अधिकारियों को विश्वास है कि इतना खर्च हो जाएगा बशर्ते कि विभिन्न योजनाओं के लिए आवश्यक विदेशी मुद्रा मिल जाए, देश में खाद्यान्न का उत्पादन और बचत काफी बढ़े और मूल्य-स्तर नीचे रखा जाए। उनका कहना है कि योजना की सफलता खाद्यान्न और बचत के मोर्चों पर निर्भर है।

अर्थशास्त्र का एकमात्र हिन्दी मासिक
उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, पंजाब, दिल्ली, राजस्थान व बिहार आदि राज्यों द्वारा स्वीकृत

विषयसूची (जनवरी-दिसम्बर १९५७)

आर्थिक

वित्तीय

पंचवर्षीय योजना

उद्योग तथा व्यापार

हमारे उद्योग

बैंक और बीमा

कृषि और खाद्य

सरल अर्थ चर्चा

श्रम-श्रमिक

श्रम समस्या

यातायात (रेल-जहाज)

समाजवाद

समाजवाद अङ्क

सर्वोदय

विदेशी अर्थ चर्चा

भारत रूस सहयोग परिशिष्ट

बल्गेरिया परिशिष्ट

नया सामयिक साहित्य

अर्थवृत्त चयन

विविध राज्य

विविध

राजनीति

नक्शा चार्ट ग्राफ आदि

समाजवाद अंक पर कुछ सम्मतियां

समाजवाद का गंभीर विश्लेषण

प्रस्तुत अंक में सुयोग्य विद्वानों द्वारा समाजवाद के सभी पक्षों का यथेष्ट विवेचन प्रस्तुत किया गया है। कम्युनिज्म को भी समाजवाद का एक रूप स्वीकार किया गया है। देखने से किसी भी पाठक को अनुभव हो सकता है कि यशस्वी सम्पादक समाजवाद को बलात् पाठकों के मस्तिष्क पर लादने के लिए उतावला होने के स्थान पर उसका गम्भीर विश्लेषण प्रस्तुत करने का इच्छुक है। इस सन्तुलित दृष्टिकोण के लिए सम्पादक महोदय विशेष सराहना के पात्र है।

—पाँचजन्य

निष्पक्ष विचार

मुख्य पृष्ठ जितना सुन्दर बन पड़ा है, उतनी ही सुन्दर सामग्री से परिपूर्ण है। 'समाजवाद' के सम्बन्ध में सुविख्यात विचारकों की सहायता से इस विशेषांक की सामग्री स्थायी उपयोगिता की दृष्टि से विशेष महत्त्व की बन पड़ी है। 'समाजवाद' के साथ ही 'साम्यवाद' सम्बन्धी सामग्री देकर सम्पादक ने अपने पाठकों को "निष्पक्ष विचार का अवसर" दिया है।

—"मधुकर" दिल्ली

करीब-करीब 'समाजवाद' के सभी पहलुओं पर संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित रूप से प्रकाश डाला गया है। समाजवाज की विवेचना, मार्क्सवाद क्या है, समाजवाद, साम्यवाद और गांधीवाद, यूरोप में समाजवाद का जन्म आदि लेख पठनीय एवं ज्ञानवर्धक हैं।

—मजदूर संदेश

मंगल कामना

'सम्पादा' ने पिछले छः वर्षों में व्यापार-जगत और जन-साधारण की उपयोगी सेवा की है। औद्योगिक विकास हमारे देश की उन्नति का मूल स्रोत सा है। हमें उधर निरन्तर ध्यान देना है। व्यापारिक जगत में आदान-प्रदान स्वच्छता से हो, इसका भी उद्योग के विकास से घना सम्बन्ध है। "सम्पदा" निश्चय ही अपने विचार और रचनात्मक सुझावों से लोगों को एक नयी प्रेरणा देने और व्यापार का स्तर ऊँचा बनाने में सहायक होगी।

—श्री लालबहादुर शास्त्री,

मैंने जब भी आपका पत्रिका को देखा है, उसे अच्छा ही पाया है। आप इस साधना में निरन्तर संलग्न हैं, यह प्रसन्नता की बात है।

—श्री अमरनाथ विद्यालंकार
(शिक्षा मंत्री, पंजाब)

हिन्दी संसार को 'सम्पदा' के आठ सुन्दर उपहार

सम्पदा के सभी विशेषांक पुस्तकालय में रेफरेंस-बुक की दृष्टि से रखने योग्य हैं।

योजना-अंक (भारत की पंचवर्षीय योजना पर प्रामाणिक व ज्ञानवर्धक सामग्री)

The best guide for digesting and understanding the economic situation of the country.

—Commerce & Industry

भूमि-सुधार-अंक (भारत की भूमि-सम्बन्धी समस्याओं पर अद्भुत अङ्क)

...All this makes this number almost a reference number and deserves a place in all libraries and on every social worker's and patriot's table.

—मरहट्टा (पूना)

वस्त्र उद्योग-अंक (भारत के प्रमुख उद्योग पर प्रामाणिक जानकारी)

इस अंक के पीछे काफी श्रम किया गया है। सम्पादक को बधाई !

—घनश्यामदास बिड़ला

मजदूर-अंक (मजदूर समस्या का विशद एवं तथ्यपूर्ण विवेचन)

लेख बहुत रोचक व उपयोगी हैं। लेखों में केवल भौतिक व आर्थिक दृष्टिकोण ही नहीं है, मानव की नैतिकता पर भी जोर दिया गया है, जो देश की संस्कृति व परम्पराओं के अनुकूल है। —मान. खण्डूभाई देसाई, केन्द्रीय श्रममंत्री

उद्योग-अंक (भारत के प्रमुख उद्योगों के विकास पर तथ्यपूर्ण जानकारी)

सम्पदा ने विशेषांकों की स्वस्थ परम्परा स्थापित की है। इस अंक में भी अत्युपयोगी सामग्री का संकलन हुआ है।

—विश्वज्योति

राष्ट्रीय विकास-अंक (द्वितीय पंचवर्षीय योजना का पूर्ण परिचय)

उत्कृष्ट और ज्ञानवर्धक उपयोगी अंक के लिए बधाई।

—प्रो. रामनरेशलाल

बैंक-अंक (भारतीय बैंकों व उनकी समस्याओंका परिचय)

Here is one more Sampada special worth treasuring as a source of ready reference.

—Organiser

समाजवाद-अंक (समाजवाद संबंधी अपूर्व सामग्री)

किस रूप में देश में समाजवाद हो, इसका मार्ग दर्शन समाजवाद अंक देता है।

—जी० एस० पथिक

सब अङ्कों का पृथक पृथक मूल्य १।) रु० है। आठों अङ्क रजिस्ट्री से केवल ८।।) रु० में।

मैनेजर—'सम्पदा' अशोक प्रकाशन मन्दिर, रोशनारा रोड, दिल्ली।

डालमिया उत्पादन
प्रयोग-सिद्ध एवं उच्च-कोटि के
मृत्सा-आरोग्यपात्र (Porcelain sanitary ware) भारतीय और योरोपीय शौच कुंड (closets) धावन पात्री (Wash basins) मूत्रकुंड (Urinals), इत्यादि विसवाहक (Insulations) एवं क्षाररोधक खर्परी (Tiles) भी मिल सकती है।
कश्मनाल (Stone ware Pipes) पूर्ण रूपेण लवण काचित (Salt Glazed) क्षार रोधक (Acid Resistant) एवं प्रमाप विशिष्ट (Tested of standard specification) जलोत्सारण (Drainage) के लिये
वज्रचूर्ण-आयस्संघा नाल (R. C. C. Spun pipes) सिंचाई, पुलियाओं (Culverst) जलप्रदाय और जलोत्सारण (Cupply and drainage) के लिये सभी श्रेणियों और मापों में प्राप्य।
डालमियापुरम् मिल की सिमेंट भट्टी का एक दृश्य
PORTLAND DALMIA CEMENT
20 BAGS TO 1 TON
MADE IN INDIA
पोटलैण्ड सिमेंट सामान्य निर्माण के लिये
उष्मसह (Refractories) अनीष्ट कार्ये (Fire Bricks) संमृद (Mortors) तथा समस्त ताप-सीमाओं और, आकृतियों में प्राप्य विसंवाहक ईस्ट कार्ये (Insulating Blocks) सभी औद्योगिक आवश्यकताओं के लिये
A.I.A.B. D/C H2
डालमिया सिमेंट [भारत] लिमिटेड
डाकघर – डालमियापुरम्
जिला – तिरूचिरापल्ली, दक्षिण भारत
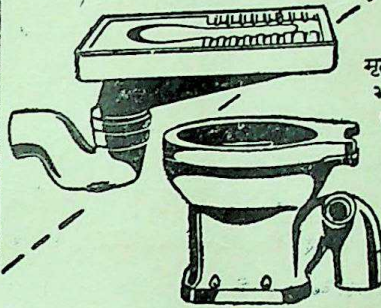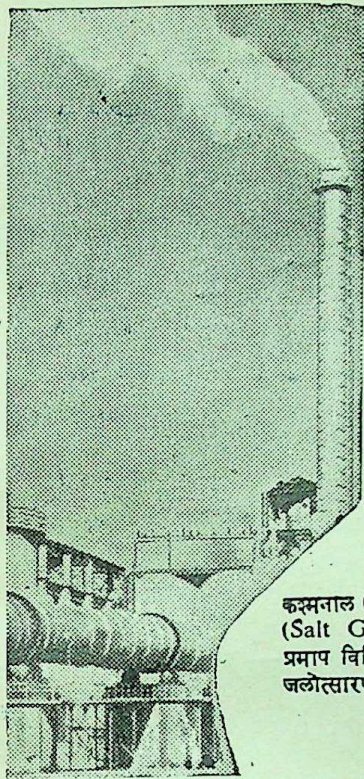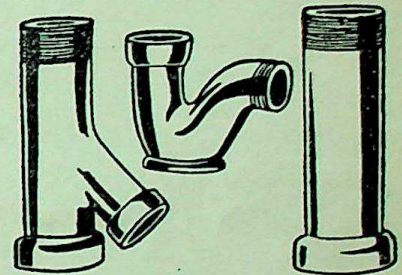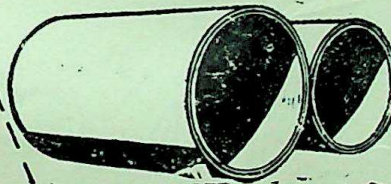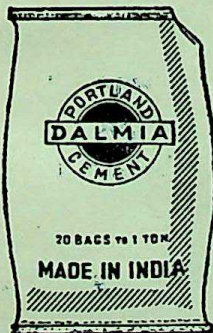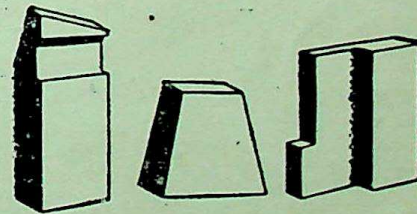
समाजवाद-अंक पर लोकमत

पत्र क्या कहते हैं ?

'सम्पदा' ने देश के सामने, जो आर्थिक क्रांति से गुजर रहा है, समाज के विभिन्न आर्थिक पहलुओं पर प्रकाश डालने वाली ऐसी सामग्री प्रस्तुत की है कि जो तथ्यों और आंकड़ों से युक्त होने के कारण उत्तम संदर्भ साहित्य का स्थान ले सकती है। वैदिक समाजवाद से लेकर कांग्रेस-समाजवाद तक की अवस्थाओं का इसमें सुन्दर ढंग से विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

—'नवभारत टाइम्स' बम्बई

इस अंक में समाजवाद, साम्यवाद, सर्वोदयवाद आदि के सम्बन्ध में प्रचुर सामग्री प्रस्तुत की गई है। उसमें जहां रूस, चीन और युगोस्लाविया की अर्थव्यवस्था का परि[illegible] दिया गया है, वहां अमरीका की नवीन पूंजीवादी व्यव[illegible] पर भी प्रकाश डाला गया है।

—हिन्दुस्तान (दैनि[illegible]

प्रस्तुत अंक में सुयोग्य विद्वानों द्वारा लिखित लेखों द्वारा 'समाजवाद' के सभी पक्षों का यथेष्ट विवेचन प्रस्[illegible] किया गया है।

—पाञ्चजन्य (साप्ताहिक

इसमें सन्देह नहीं कि 'सम्पदा' अपने विशेषांकों द्वारा 'मील स्टोन' कायम करती जा रही है।

—'आपका स्वास्थ्य' (मासि[illegible]

अर्थशास्त्र के अध्यापक क्या कहते हैं ?

समाजवाद अंक मिला, देखकर जी खिल उठा। मिलने के बाद एक सांस सम्पदा ही पढ़ता रह गया। अंक बहुत सशक्त है। खूब बधाई ! सचमुच मन भर गया।

—श्री रामनरेशलाल, रांची

"समाजवाद का विशेषांक हिन्दी क्षेत्र में आपकी लगन का परिचायक है, इस तथ्य को स्वीकार करना पड़ेगा।"

—श्री ओमप्रकाश तोषनीवा[illegible]

आप में लगन बहुत है। ईश्वर आपके विचार[illegible] और मौलिक सूझपूर्ण सम्पादकत्व को नित नया स्नेह [illegible] आलोक दें दीर्घकाल तक, यही कामना होती है।

—प्रो० बी० एन० पा[illegible]

अर्थशास्त्र के विद्यार्थियों, सार्वजनिक कार्यकर्ताओं और शिक्षित वर्ग सबके लिए एक समान उपयोगी समाज[illegible] अंक १॥।) (डाक खर्च समेत) मनी आर्डर भेज कर मंगा लीजिये।

योजना अंक, राष्ट्रीय विकास अंक, उद्योग अंक, भूमि सुधार अंक, वस्त्रोद्योग अंक, मजदूर अं[illegible] बैंक अंक और समाजवाद अंक एक साथ मंगाने के लिए ६) रु० म० आ० से भेजिये। सब अंक रजिस्ट्री भेजे जायेंगे। अन्य सम्मतियां पृष्ठ ४६ पर देखें।

—मैनेजर सम्पदा

अशोक प्रकाशन मन्दिर, रोशनारा रोड, दिल्ली।

सम्पादक—कृष्णचन्द्र विद्यालंकार द्वारा अशोक प्रकाशन मन्दिर के लिए अर्जुन प्रेस, दिल्ली से मुद्रित व प्रकाशित

सम्पदा

मार्च, १९५८

विषय-सूची

सम्पादक—कृष्णचन्द्र विद्यालंकार

सम्पादकीय परामर्श मण्डल

१. श्री जी० एस० पथिक

२. श्री महेन्द्रस्वरूप भटनागर

बम्बई में हमारे प्रतिनिधि

श्री टी० एन० वर्मा, नेशनल हाउस,
१री मंजिल, टुलक रोड, बम्बई- १

वर्ष : ७] मार्च, १६५८ [अङ्क : ३

नये वर्ष का बजट

१९५८-५९ का बजट वित्त मंत्री श्री कृष्णमाचारी के पद त्याग के कारण श्री जवाहरलाल नेहरू को उपस्थित करना पड़ा। उन्हें नये बजट पर बहुत अधिक विचार करने का अवसर नहीं मिला। इसलिए उन्होंने थोड़े से परिवर्तनों के साथ पुराने बजट की पुनरावृत्ति कर दी है। स्वयं सम्भवतः उन्हें उससे पूर्ण सन्तोष नहीं है, उन्होंने उसे चलतू बजट कह कर आलोचकों से एक प्रकार से क्षमायाचना सी की है। बजट भाषण के शब्द उनकी भावना को प्रकट करते हैं, किन्तु बजट उस भावना के साथ संगति नहीं खाता। इसीलिए एक आलोचक ने इस बजट को "नेहरू की बोतल में टी० टी० की शराब" कहा है। इस दृष्टि से नए बजट की आलोचना में हम उससे अधिक क्या विचार कर सकते हैं, जो गत वर्ष हमने इन पंक्तियों में प्रकट किये थे। गतवर्ष के बजट में सरकार ने जिस तरह परिणाम का विवेक किए बिना नये से नये कर लगाए थे, और जिस तरह समाजवादी समाज की स्थापना के आदर्श के प्रतिकूल प्रत्यक्ष करों से अप्रत्यक्ष कर भारी अनुपात अधिक रखते थे, इसकी आलोचना की पुनरावृत्ति करने की यहां आवश्यकता नहीं है।

\+ + + +

गत वर्ष देश जिस आर्थिक संकट में से गुजरा, उस पर बजट के परिणामों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा, यह नहीं कहा जा सकता। नये बजट-भाषण में गत वर्ष की पृष्ठ भूमि दी गई है, जिसके कुछ अंश निम्न लिखित हैं—

"आंतरिक साधनों और शोधन सन्तुलन पर पड़ने वाला दबाव इस वर्ष भी जारी रहा है"। "वर्तमान वर्ष की अपेक्षा अगले वर्ष में देश के उत्पादन में कुछ कम वृद्धि होने की संभावना है, क्योंकि चावल की फसल कम हुई है और औद्योगिक उत्पादन की वृद्धि की गति धीमी पड़ती जा रही है।" "१९५७ के पिछले महीनों में मूल्य निर्देशक अंक कुछ कम जरूर हुए, पर वर्ष भर का औसत १०६ आता है जबकि उसके पिछले वर्ष के औसत से करीब ६ प्रतिशत अधिक है। मार्च १९५६ में दाल से भिन्न अनाजों का सूचक मूल्य ८७ था, अगस्त ५७ में यह बढ़कर १०६ हो गया। यद्यपि दिसम्बर में यह अंक ९८ रह गया तथापि मार्च ५६ से से अब भी ११ अधिक है। इसी अवधि में चावल का मूल्यांक ९६ से बढ़कर १११ तक पहुँच गया।" "मुद्रा प्रसार का दवाब भी गत वर्ष बढ़ता रहा, यद्यपि पिछले कुछ महीनों में कुछ कमी हुई है।"

नीचे की इन दो संख्याओं से मालूम होगा कि हमारी विदेशी मुद्रा पर दबाव किस तरह बढ़ता रहा। १९५६-५७ में सरकारी हिसाब में २८०.६ करोड़ रु० का आयात हुआ था, किन्तु १९५७-५८ के सिर्फ छः महीनों में २३८.८ करोड़ रु० का आयात है अर्थात् इस अनुपात से वर्ष में ५७७.६ करोड़ रु०। आयात बढ़ने के साथ-साथ निर्यात भी बढ़ते तो कुछ दुःख न होता, किन्तु निर्यात में कमी हुई है। गत दो वर्षों की पहली दो तिमाहियों में क्रमशः २८८ करोड़ और २६७ करोड़ रु० का निर्यात हुआ। चाय, वनस्पति तेल, जूट आदि के निर्यात में कमी रही। इन कारणों से विदेशी परिसम्पद की स्थिति विपरीत होती गई, जैसा कि निम्न तालिका से स्पष्ट है—

	करोड़ रु०
१९५५	७३५.१८
१९५६	५२६.६१
१९५७	२९७.६५

यह पृष्ठ भूमि है, जिसके आधार पर सरकार का नया बजट बनना चाहिए था। प्रश्न यह है कि क्या नया बजट हमारी आवश्यकताएं पूर्ण करता है? क्या पं० नेहरू के कथनानुसार देश को गतिहीन होने से रोकता है? क्या देश को और देश की जनता को आर्थिक वृद्धि के लिए पूरी शक्ति के साथ जुट जाने की प्रेरणा देता है? क्या देश के घोषित समाजवादी लक्ष्य की ओर ले जाने में सहायक सिद्ध होता है?

\+ \+ \+ \+

यह ठीक है कि पिछले कई वर्षों से पहली बार इस वर्ष ऐसा बजट पेश हुआ है, जिसमें सामान्य जन पर कोई नया कर नहीं लगाया गया। इसलिए कुछ क्षेत्रों ने इसका भी स्वागत किया है। किन्तु सामान्य जन पर अब नये कर लगने की गुंजायश ही नहीं थी। भूतपूर्व वित्तमंत्री श्री कृष्णामाचारी ने पिछला बजट पेश करते हुए यह स्पष्ट कर दिया था कि मेरी कर-पद्धति की रूपरेखा द्वितीय योजना की संपूर्ण अवधि के लिए है, अब नये कर लगाये जाने की संभावना नहीं करनी चाहिए। इसलिए नये बजट में उपहार व सम्पत्ति कर में कुछ परिवर्तनों के अतिरिक्त यदि कोई नये कर नहीं लगे तो यह अत्यंत स्वाभाविक था।

बजट का उद्देश्य केवल आय व्यय के अंकों का संग्रह या घाटे की कमी पूर्ण करने के उपाय बता देना भर नहीं है। पं० नेहरू ने कहा है कि आवश्यकता और अनुभव के आधार पर हमें अपनी कार्य-प्रणाली में परिवर्तन करने चाहिए, किंतु ऐसा किया नहीं गया। गत वर्ष की कर-पद्धति को बिना विशेष परिवर्तन किये स्वीकार कर लिया गया है।

गत वर्ष के नये कठोर और भारी करों का देश के आर्थिक जीवन पर जो प्रभाव पड़ा है, उस पर गम्भीर विचार करना चाहिए था। देश में लगातार बढ़ती हुई महंगाई में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सरकारी करों का जो बोझ है और उसके कारण लोगों में बचत की सामर्थ्य बहुत कम हो गई है, इसकी चिन्ता नहीं की गई। योजना आयोग ने अनुमान लगाया था कि द्वितीय योजना के प्रथम दो वर्षों में २०० करोड़ रु० छोटी बचतों द्वारा मिल जायगा, किन्तु यह आशा पूर्ण नहीं हुई। केवल १२० करोड़ रु० बचतों में मिला है अर्थात् ६० प्रतिशत।

\+ \+ \+

सामान्यतः सम्पन्न क्षेत्रों में उपहार कर का विरोध हुआ है, जबकि साम्यवादी या जन-क्षेत्रों में इसका स्वागत हुआ है, क्यों कि इसका प्रभाव बहुत थोड़े से व्यक्तियों पर पड़ा है। उपहार-कर की संभावना पहले भी की जा रही थी और सरकारी क्षेत्रों के अनुसार उत्तराधिकार कर से बचने की प्रवृत्ति को रोकने के लिए ऐसा करना आवश्यक था। किन्तु इस उपहार-कर का स्वागत होने पर भी सम्पत्ति कर के लिए छूट में कमी करने का समर्थन किसी तरह नहीं किया जा सकता। नये प्रस्तावों के अनुसार अब एक लाख रु० की बजाय ५०००० रु० तक की सम्पत्ति पर ही छूट मिलेगी। इसके परिणामस्वरूप नगरों में भवन-निर्माण को बहुत अधिक धक्का लगेगा। दिल्ली में २०० गज की भूमि पर बने एक दुमंजले मकान के मालिक से भी सम्पत्ति कर लिया जायगा। केवल सम्पत्ति करों का प्रश्न नहीं है। इसके साथ तवालत व परेशानी का शिकार भी उन्हें होना पड़ेगा।

भारी करों ने जिस तरह पूंजी निर्माण पर, जो देश के आर्थिक विकास के लिए अत्यंत आवश्यक है, बुरा प्रभाव

डाला है, उसे देखते हुए यह संभावना की जा रही थी कि इस वर्ष कर कुछ कम कर दिये जायंगे। अन्य बहुत से देशों की अपेक्षा भारत में करों का बोझ बहुत अधिक है। आवश्यकता इस बात की है कि करों का बोझ कम किया जाय। विभिन्न स्थितियों में और विभिन्न संस्थाओं द्वारा लगने वाले अप्रत्यक्ष करों के कारण उपभोग्य वस्तुएं निरन्तर महंगी होती जा रही हैं, जीवन व्यय बढ़ता जा रहा है और इसके परिणामस्वरूप अधिक वेतनों की मांग होती हैं और फिर वस्तुएं और भी अधिक महंगी होती जाती हैं। इस दुश्चक्र को रोकने के लिए करों का भार कम करना चाहिए था। तभी बचत भी लोग ज्यादा कर सकेंगे और पूंजी का निर्माण भी कुछ आसान हो जायगा। फिर भी बजट में कुछ परिवर्तन किये गये हैं, जिन का स्वागत किया जायगा।

समाजवादी समाज जल्दी से जल्दी लाने के प्रलोभन में कुछ ऐसे कदम उठाये गये थे कि विदेशी पूंजी को भारत आने की प्रेरणा मिलनी बन्द हो गई थी। पिछले वर्ष विदेशी पूंजी की कठिनता बहुत तीव्रता से अनुभव की गई, अतः विदेशी नागरिक को उसकी सम्पत्ति पर कर से छूट दे दी गई है। विदेशी पूंजी से पक्षपात और राष्ट्रीय भावना में कुछ असंगति दीखती है, पर आर्थिक नीति कोरे आदर्शों पर नहीं टिक सकती। जहाजी उद्योग बहुत समय से मांग कर रहा था कि नये उद्योग के निर्णय के लिए पूंजी पर छूट दी जानी चाहिए। विकास छूट की दर २५ से ४० प्रतिशत बढ़ा दी गई है। इन दोनों का क्या प्रभाव पड़ेगा, यह आज नहीं कहा जा सकता।

+ + +

पंचवर्षीय योजना के लक्ष्यों पर पिछले वर्ष बहुत विवाद हुआ है। ४८ अरब रु० की योजना बढ़ाकर ५५ और ६० अरब रु० की कर दी गई थी। यद्यपि प्रधानमंत्री अपने आत्मविश्वास के आधार पर योजना को अत्यंत महत्वाकांक्षी भी मानने से इन्कार करते रहे, तथापि अब उन्होंने स्वीकार किया है कि ४८ अरब रु० से अधिक व्यय सम्भव न होगा। प्रथम दो वर्षों में क्रमशः ६७० और ८४५ करोड़ रु० व्यय हुआ है। शेष तीन वर्षों में ३२६८ करोड़ रु० व्यय किया जायगा, जिसमें से इस वर्ष १०१७ करोड़ रु० व्यय [illegible] सार कुछ कटौती के सिद्धान्त को स्वीकार कर लिया गया है। पर प्रश्न यह है कि क्या १० अरब रु० भी प्रतिवर्ष व्यय करने की क्षमता देश में है? इस वर्ष बहुत प्रयत्नों के परिणामस्वरूप हम विदेशों से जो कुछ ले पाये हैं, क्या देश के आंतरिक साधनों की क्षमता बढ़ाये बिना आगे भी वह प्रतिवर्ष सुलभ रहेगी।

देश का शासन व्यय बढ़ता जा रहा है। इसका एक बड़ा कारण यह है कि कर्मचारियों—कारीगरों, मजदूरों या बाबू श्रेणी का जीवन व्यय बढ़ने के कारण वेतनों पर व्यय बहुत बढ़ गया है। रेलवे मंत्री ने अपने बजट में इस कारण ५ करोड़ रु० की व्यय वृद्धि स्वीकार की है। असैनिक प्रशासन के मद में ५७२ लाख रु० की वृद्धि बताई गई है। अपने बढ़ते हुए व्यय को कम करने की अनिवार्य आवश्यकता है और इसके लिए वेतन वृद्धि की अपेक्षा बढ़ती हुई महंगाई को कम करके जीवन व्यय को न्यून करने की ओर अधिक ध्यान देना चाहिए। समस्त बजट में मितव्यय की ओर कोई विशेष ध्यान दिया गया हो, ऐसा प्रतीत नहीं होता। ५०० रु० से ऊपर के कर्मचारियों में क्रमशः कुछ कटौती की जाती तो जनता को प्रेरणा मिलती।

यह दुर्भाग्य की बात है कि विश्व की असाधारण राजनैतिक परिस्थितियों के कारण हमारा सैनिक व्यय भी बढ़ता जा रहा है। गत वर्ष ही ५० करोड़ रु० व्यय बढ़ाकर सैनिक व्यय २५२ करोड़ रु० कर दिया गया था, अब उसे बढ़ाकर करीब २७८ करोड़ रु० कर दिया गया है। यह कितना ही अवांछनीय हो, आज स्थिति से विवश होकर इसे स्वीकार करना पड़ा है। आर्थिक विकास के नाम पर लिये गये कर सरकार ने १५७ करोड़ रु० के अतिरिक्त कर गत दो वर्षों में लगाये, परन्तु विकास भिन्न कार्यों पर १६३ करोड़ रु० के व्यय बढ़ा दिये। शासन तथा रक्षा विभाग में व्यय बढ़ रहे हैं, जिनका उत्पादन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ रहा।

बहुत कम विविध राज्यों ने इस वर्ष नये कर लगाये हैं। अब कर लगाने की गुंजायश ही नहीं रही, परन्तु प्रायः सभी राज्य घाटे में हैं। उनकी कमी पूर्ण करने की जिम्मेवारी इस वर्ष केन्द्र पर और भी अधिक पड़ गई है।

१९५७-५८ के संशोधित अनुमान के अनुसार २५२२ लाख रु० की राशि विविध समायोजन और अंशदान के लिए नियत की गई थी, जब कि इस वर्ष ४७०३ लाख रु० अर्थात् करीब ९० प्रतिशत अधिक राशि नियत की गई है। राज्यों की केन्द्र पर आश्रितता जिस वेग से बढ़ रही है, वह विचारणीय है। इस प्रवृत्ति को रोकने का प्रयत्न करना चाहिए।

+ + +

नई जिम्मेदारियों और शासन व्यय में कमी न करने आदि के परिणामस्वरूप देश को ३२॥ करोड़ रु० अर्थात् ७॥ लाख रु० दैनिक से अधिक का घाटा हो रहा है। विकास कार्यों के नाम पर इस घाटे की उपेक्षा नहीं की जा सकती। कांग्रेस अध्यक्ष श्री ढेबर के शब्दों में सरकार को स्वयं भी मितव्यय व त्याग का आदर्श उपस्थित करना चाहिए था। विदेशी शराब आज भी आ रही है, अनावश्यक विदेशी साहित्य की भी कमी नहीं हो रही, शासन के वेतनों तथा आडम्बरों पर आज भी व्यय कम नहीं हो रहा।

निजी उद्योग को विदेशी पूंजी के सहयोग और विलंबित भुगतान के आधार पर छोड़ दिया गया है। हम पं० नेहरू के प्रभावशाली व्यक्तित्व से किसी ऐसी अर्थनीति की आशा रखते थे, जो देश के आर्थिक विकास में नया मोड़ दे। परन्तु इस आलोचना के साथ हम उनके शब्दों में यह भी कहना चाहते हैं कि "हमें यह बात समझ लेनी है कि हमारी सफलता दूसरों पर नहीं, अपनी शक्ति व बुद्धि पर, अपनी एकता और सहयोग पर तथा अपने उन देशवासियों की भावना पर निर्भर है, जिनकी सेवा का गौरव हमें प्राप्त है।

★

विकास योजना पर पुनर्विचार

भारत के अत्यन्त प्रसिद्ध उद्योगपति श्री जे० आर० डी० टाटा ने अभी एक भाषण में पंचवर्षीय योजना के सम्बन्ध में कुछ महत्वपूर्ण विचार प्रकट किये हैं। उनके विचार संक्षेप से यह हैं :—

पंचवर्षीय योजना को संक्षिप्त करने तथा उस का रूप बदलने के सिवाय आज हमारी कोई गति नहीं है, क्योंकि योजना आयोग के सदस्यों ने विदेशी साधनों की आवश्यकता का जो अनुमान लगाया है, वह बहुत कम है। और दूसरी तरफ आन्तरिक साधनों के सम्बन्ध में बहुत अत्युक्ति से काम लिया है।......पंचवर्षीय योजना के आकार का हमारे सामने इतना महत्व नहीं है, जितना थोड़े लक्ष्य रखकर उसकी जल्दी से जल्दी पूर्ति का महत्व है। श्री टाटा ने एक और महत्वपूर्ण क्रांतिकारी विचार यह प्रकट किया है कि भारत तथा अन्य देशों में योजनाओं के निर्माता इस्पात के कारखानों के पीछे भागते हैं, किन्तु विदेशी मुद्रा की भारी आवश्यकता का ध्यान नहीं रखते। हमें यह नहीं भूलनी चाहिये कि लोहे का सामान अधिक मात्रा में भेज कर विदेशों से अधिक रुपया नहीं ले सकते। इसलिए आज भी नये प्रस्तावित लोहे के कारखाने को स्थगित कर देना चाहिये तथा वह रुपया खाद के कारखाने तथा अन्य उद्योगों में लगाना चाहिये, जिससे देश को अधिक विदेशी मुद्रा प्राप्त हो सके। श्री टाटा ने अपनी पहली स्थापना को पुष्ट करते हुए कहा है कि योजना आयोग ने ४८ अरब रु० की योजना के लिए ११ अरब रु० विदेशी साधनों का अनुमान किया था, किन्तु अब १६ अरब रुपये की आवश्यकता बतायी जा रही है। योजना के व्यय का अनुमान भी पहले बहुत कम किया गया था, परन्तु अब ७ अरब रुपये ज्यादा व्यय की कल्पना की जा रही है। यदि हम विदेशी मुद्रा पर अधिक निर्भर रहे तो पीछे से उसे चुकाना अत्यन्त कठिन हो जायगा। आशा है, इन विचारों पर देश के अर्थशास्त्री और योजना-निर्माता गम्भीरता से विचार करेंगे।

सर डारलिंग की सूचनाएं

सहकारिता की पिछले कुछ वर्षों से धूम है। योजना आयोग, सरकारी अधिकारी, संसद या विधान सभाओं के सदस्य तथा सार्वजनिक नेता सहकारी समितियों का जाल फैला देने की चर्चा प्रायः करते रहते हैं। सरकारें इस आंदोलन पर करोड़ों रुपया व्यय कर रही हैं, किन्तु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि बिना विवेक और विचार के बहुत तेजी से कदम बढ़ाना नुक्सानदेह भी होता है। इसलिए हमें सर मालकम डारलिंग की सूचनाओं पर गंभीरता पूर्वक विचार करना चाहिए। वे बरसों भारत की ग्राम स...

स्थाओं का अध्ययन करते रहे हैं। सरकार ने उन्हें सहकार-आन्दोलन की जांच का काम सौंपा था।

कृषि बचत और उधार सोसाइटी के नाम की समीक्षा करते हुए, उन्होंने कहा है कि दूसरी आयोजना में इसका काम अत्यधिक तेजी से बढ़ाने की कोशिश की जा रही है, जो ठोस विकास के लिए अनुचित है। बम्बई, आंध्र, मद्रास और पंजाब में, जहां यह व्यवस्था काफी प्रभावशाली है, यही बात देखने में आयी। इसलिए उनका सुझाव है कि पांच साल के लक्ष्यों को दस साल का कर देना चाहिए। यह भी उनके देखने में आया है कि कार्यशील पूंजी में हिस्सेदारों का हिस्सा कम होता जा रहा है और सोसाइटियों के उधार की वसूली भी कम होती जा रही है; इससे बकाया काफी बढ़ गयी है। उनका सुझाव है कि आगे उधार देने में और विशेष रूप से उन राज्यों में, जहां सहकार आंदोलन मजबूत नहीं है, विशेष सावधानी रखनी चाहिए। राज्य सरकारें इस वक्त लक्ष्य प्राप्त करने पर अधिक जोर दे रही हैं, लेकिन उन्हें उधार की वसूली पर अधिक जोर देना चाहिए।

सर मैलकम का कहना है कि ऊपर की समितियों में सरकार का नियंत्रण इतना हानिकारक नहीं है, जितना प्राथमिक सोसाइटियों के प्रबन्ध में। प्राथमिक सोसाइटियों को अपने काम में अधिक से अधिक स्वतन्त्रता रहनी चाहिए, यही इस आन्दोलन का बल है।

उनके प्रतिवेदन में कुछ ऐसी सोसाइटियों की ओर भी संकेत किया गया है, जो लोगों ने धन की सहायता से लालच में अपने स्वार्थ के लिए बना रखी हैं। ये सोसाइटियां गैर-सदस्यों से ही अधिक लेन-देन करती हैं। ऐसी सोसाइटियों को सहकार समिति अधिनियम के अन्तर्गत रजिस्टर नहीं करना चाहिए। इसी प्रकार जो सोसाइटियां अपने को 'बहूद्देश्य समितियां' या 'मल्टी-परपज सोसाइटीज' कहती हैं, और काम एक ही करती हैं, उन्हें यह नाम नहीं रखने देना चाहिए।

ईंधन की समस्या हल

संसार में प्रतिदिन बढ़ते हुए ईंधन के प्रयोग के कारण वैज्ञानिक यह खतरा बहुत समय से अनुभव कर रहे हैं कि जब भूमि गर्भ में निहित कोयला व मिट्टी के तेल के विशाल भण्डार समाप्त हो जायंगे, तब क्या होगा? बिजली की शक्ति ईंधन की समस्त आवश्यकता पूर्ण नहीं कर सकेगी। नये ईंधन के आविष्कार के प्रयत्न में ही इंगलैंड के वैज्ञानिकों ने पानी की बूंद में विद्यमान उद्जन शक्ति के नियंत्रण का आविष्कार किया है, जिसका परिचय सम्पदा के पाठक गतांक में पढ़ चुके हैं। अब रूस ने भी दावा किया है कि उसने उद्जन शक्ति पर नियंत्रण स्थापित करने में सफलता प्राप्त कर ली है। इसके अनुसार रूस ने उद्जन-शक्ति के औद्योगिक उपयोग के लिए आवश्यक ईंधन 'ड्यूट्रेयम' का पानी से उत्पादन करने की ऐसी विधि ढूंढ निकाली है, जिससे उसका उत्पादन व्यय कोयले के उत्पादन व्यय के १ प्रतिशत से भी कम पड़ता है। रूसी वैज्ञानिकों और इंजीनियरों के कई दल इस समय उद्जनशक्ति की भट्ठी बनाने में लगे हुए हैं। इस प्रकार की भट्ठियों का निर्माण पूरा हो जाने पर ईंधन की समस्या हमेशा के लिए हल हो जायगी। इस विधि से सामान्य जल से पेट्रोल की अपेक्षा ४०० गुनी शक्ति पैदा की जा सकेगी। 'ड्यूट्रियम' की (ऐसा उद्जन जिसका पारमाणविक भार सामान्य उद्जन के भार से दूना होता है) १० लाख डिग्री सेण्टीग्रेड तक गरम करने से सफलता प्राप्त की गयी है इससे पहले ब्रिटिश उद्जन शक्ति की भट्ठी 'जेठा' में ८० लाख डिग्री तक तापमान पैदा किया जा चुका है।

प० जर्मनी से समझौता

विदेशी मुद्रा की समस्या को जिन उपायों से हल किया जा रहा है, उनमें से एक विलम्बित भुगतान भी है। प० जर्मनी ने स्वयं राउरकेला लोह-संयत्र में रुपया लगाने से असमर्थता प्रकट की थी, जबकि रूस और इंगलैंड इस के लिए सहमत थे। इसे हल करने के लिए भारत के वित्त मंत्री ने अक्टूबर, १९५७ में जर्मनी की सरकार, उद्योगपतियों आदि से भारत के विकास में सहायता की चर्चा की थी, तो वहां की सरकार ने राउरकेला के इस्पात कारखाने की मशीनों का दाम बाद में लेने का प्रस्ताव किया था। इसके अलावा भारत की दूसरी पंचवर्षीय आयोजना की पूर्ति में यथासंभव सहायता करने की भी उसने इच्छा प्रकट की थी। इसके बाद जो बातचीत हुई,

उसके फलस्वरूप दोनों देशों की सरकारों में [illegible] फरवरी १९५८ को बोन में एक करार हुआ है। इस समझौते से यह लाभ होगा कि जर्मन फर्मों और बैंकों की मदद से, भारत राउरकेला कारखाने की मशीनों के मूल्य का करीब ७५ करोड़ तक रुपया तीन साल बाद भुगता सकेगा। आशा की जानी चाहिए कि इस सहायता से भारत अपनी दूसरी आयोजना के बहुत से कामों को आगे बढ़ा सकेगा।

काश्मीर भी अन्य राज्यों के समान

नये बजट को एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि काश्मीर को अन्य राज्यों की तरह ही केन्द्र से अनुदान और सहायता की राशि मिला करेगी और उस पर भी केन्द्रीय आय-व्यय निरीक्षण विभाग का नियंत्रण रहेगा। इस तरह क्रमशः काश्मीर भारतीय संघका वैसा ही अंग बनता जा रहा है, जिस तरह अन्य राज्य हैं। वस्तुतः काश्मीर तथा अन्य राज्यों में किसी तरह का भेद भाव नहीं रहना चाहिये। जो भेद है, उसे जल्दी से जल्दी समाप्त कर देना चाहिए।

ट्रेज़री बिलों पर निर्भरता

भारत सरकार ने इस वर्ष भी घाटे का बजट स्वीकार किया है। वस्तुतः पिछले बहुत से वर्षों से सरकार अपना [illegible] प्रेस से कागजी मुद्रा प्रकाशित कर पूरा कर रही है। यह कागजी मुद्रा किस तेजी से बढ़ रही है, यह नीचे की पंक्तियों से स्पष्ट होगा—

वर्ष	सरकारी ट्रेजरी बिल (करोड़ रुपयों में)	सूचक अङ्क
१९५०-५१	३५८	१००,
१९५१-५२	३१४	८७.
१९५२-५३	३१५	८८.
१९५३-५४	३३५	९९.
१९५४-५५	४७२	१३१.
१९५५-५६	५९५	१६६.
१९५६-५७	८३५	२१०.
१९५७-५८	१२१५	३३९.
१२५८-५९	१४२०+	३९६.

\+ अनुमानित

यहीं बढ़ते हुए मुद्रा प्रसार का कारण है। १० वर्षों में मुद्रा-प्रसार का सूचक अंक करीब ४०० प्रतिशत बढ़ गया है। साधारणतया मुद्रा प्रसार का प्रयोजन अल्प अवधि के लिए ऋण लेना होता है; किन्तु भारत में मुद्रा-प्रसार एक स्थायी विधान बनता जा रहा है। इस कारण महंगाई को रोकना कठिन हो गया है।

सम्पदा के सम्बन्ध में जानकारी

रजिस्ट्रार न्यूज पेपर्स एक्ट के नियम ८ के अन्तर्गत विज्ञप्ति

१. प्रकाशन का स्थान	: १९ जैना बिल्डिंग्स, रोशनारा रोड, दिल्ली—६.
२. प्रकाशन की तिथि	: प्रतिमास ६-७ तारीख
३-४-५. मुद्रक, प्रकाशक और सम्पादक	: कृष्णचन्द्र विद्यालंकार
राष्ट्रीयता	: भारतीय
पता	: १९, जैना बिल्डिंग्स् रोशनारा रोड, दिल्ली- ६
६. स्वामित्व	: कृष्णचन्द्र विद्यालंकार

मैं कृष्णचन्द्र विद्यालंकार घोषित करता हूँ कि ऊपर दी गई जानकारी मेरे ज्ञान के अनुसार बिलकुल ठीक है।

प्रकाशक :—कृष्णचन्द्र विद्यालंकार

लोह उद्योग के महान् नेता सर टाटा

आज से ५० वर्ष पूर्व जमशेदजी नसरवानजी टाटा ने भारत को उद्योग प्रधान राष्ट्र बनाने का एक स्वप्न लिया था। वह समय था, जब कि ब्रिटेन भारत के औद्योगिक विकास के मार्ग में सब तरह की बाधाएं डाल रहा था। एक ब्रिटिश उद्योगपति ने टाटा के इस प्रयत्न का उपहास करते हुए कहा था कि वह जितना लोहा तैयार करेंगे, मैं अकेला ही उसे खरीद सकता हूँ। किन्तु जमशेद जी की देशभक्ति, अध्यवसाय, सम्पूर्ण निष्ठा और दृढ़ संकलपके सब बाधाओं पर विजय पाई। उनकी कल्पना ने कुछ समय बाद मूर्त रूप धारण किया और बिहार का उपेक्षित जंगल आज देश का ही नहीं, एशिया का सबसे बड़ा लोह-उद्योग केन्द्र बना हुआ है।

महान् स्वप्नद्रष्टा सर टाटा

इस उद्योग की सफलता ने इस में सन्देह नहीं, कि देशको अटल विश्वास का गौरव दिया। भारत औद्योगिक क्षेत्र में उन्नति कर सकता है, यह सिक्का संसार में बैठ गया। अनेक संकटों व क्रान्तियों को पार कर आज टाटा कारखाना देश के उद्योग का प्रतीक और आदर्श बना हुआ है। स्वतन्त्र भारत में इस उद्योग ने राष्ट्र की आवश्यकताओं को ईमानदारी व कुशलता से पूर्ण करने का प्रयत्न किया है। ५० वर्ष की सफलता के अवसर पर राष्ट्र ने स्वर्गीय जमशेदजी टाटा का सार्वजनिक अभिनन्दन किया है। इस अवधि में इस कम्पनी ने २ करोड़ २० लाख टन इस्पात तैयार किया है, १७४ करोड़ रु० की विपुल धन राशि कर्मचारियों को वेतन के रूप में दी है, ४५ करोड़ रु० मुनाफे के रूप में बांटा है, ७० करोड़ रु० सरकार को करों के रूप में दिया है और ४० करोड़ रु० मूल्य सन्तुलन राशि में। लगभग ५० करोड़ रु० वार्षिक का विदेशी विनिमय यह कम्पनी आज कल बचा रही है और नई योजनाओं की, जिनकी पूर्ति के लिए विश्व बैंक ने इसे पर्याप्त ऋण दिया है, पूर्ति होने पर करीब ६० करोड़ रु० प्रतिवर्ष बचाने लगेगी।

इस उद्योग की सफलता ही ने आज देश को लोह-उद्योग के बड़े बड़े तीन नये कारखाने खोलने के लिए प्रेरणा व उत्साह प्रदान किये हैं।

राष्ट्र की ओर से पं० जवाहरलाल नेहरू ने स्व० टाटा के सम्बन्ध में श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए ठीक ही कहा है कि—"वे राष्ट्र के निर्माताओं में से एक थे। आज देश में एक योजना-आयोग है, जो पहली, दूसरी, तीसरी और अन्य विकास योजनाएं बनायेगा, किन्तु आज से बहुत वर्ष पूर्व जमशेद जी ने स्वयं अपने को एक योजना-आयोग बना लिया था और पंचवर्षीय योजना नहीं दीर्घ कालीन योजना का प्रारम्भ कर दिया था। वह आज सफल हो रही है।"

—
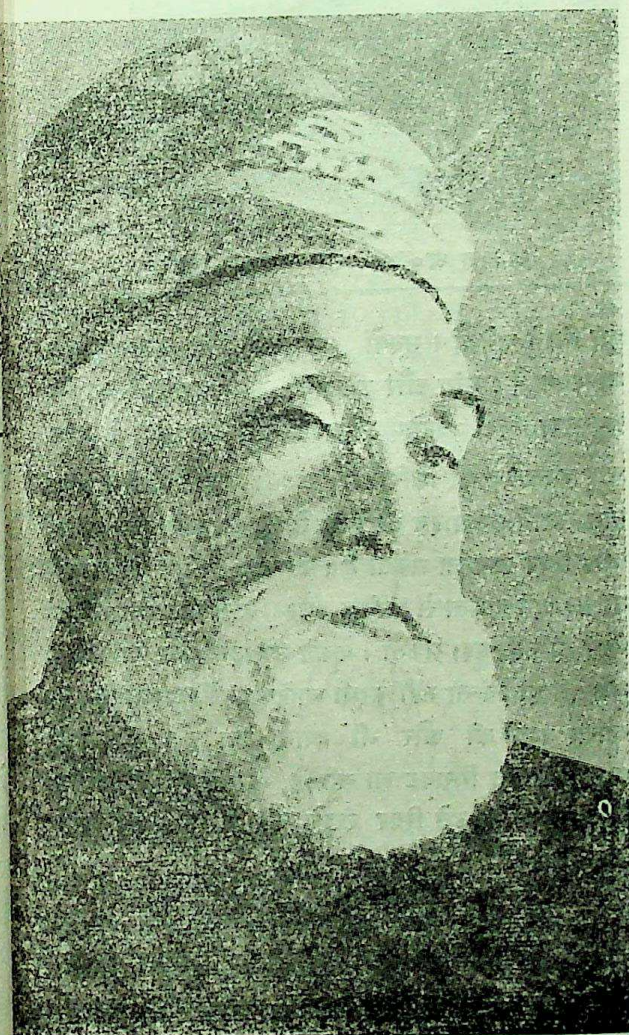
आज की आर्थिक समस्याएं

श्री बाबूभाई एम० चिनाय

चार समस्याएं

पिछले वर्ष में चार महत्वपूर्ण समस्याएं, जो एक दूसरे से परस्पर सम्बद्ध भी हैं, हमारे सामने आई। अन्न की कमी बहुत परेशान करने वाली थी। दूसरे, पदार्थों के मूल्य बहुत ऊंचे होते गये। तीसरे, विदेशी मुद्रा की दुर्लभता तीव्र रूप से अनुभव की गई और अन्तिम बात यह कि भारी करों तथा आर्थिक साधनों के अभाव के कारण शेयर बाजार, जो देश के आर्थिक जीवन का सूक्ष्म मापदण्ड है, बहुत संकट में रहा।

मेरा यह गंभीर विश्वास है कि कृषि विकास का गहन और समन्वय व सहयोग युक्त कार्यक्रम तैयार करके विभिन्न स्तरों पर देश के शासकों द्वारा क्रिया में परिणत किया जायगा। इसमें केन्द्रीय, राज्यीय तथा स्थानीय सभी अधिकारी पूरा भाग लेंगे।

अध्यक्ष अ० भा० उ० व्यापार मण्डल

बढ़ते हुए मूल्य

मूल्यों के सम्बन्ध में सब जानते हैं कि जनवरी १९५७ में मूल्यों का जो सामान्य अंक ४२२.३ था, वह मई में बढ़ना शुरू हुआ और जुलाई में ४४३.५ तक पहुँच गया। मूल्य वृद्धि की यह प्रवृत्ति खाद्य पदार्थों तथा कारखानों के कच्चे माल में विशेष रूपेण में देखी गई। कारखानों में निर्मित माल के मूल्यों का रुख उल्लेखनीय है। उनके मूल्यों में न्यूनतम वृद्धि हुई। जनवरी में उनका मूल्य ३८७.४ था, जो जुलाई और सितम्बर में क्रमशः ३९२.३ और ३९१.७ हो गया। यही वर्ष का उच्चतम मूल्य था। इस सम्बन्ध में उद्योग के आत्म-नियंत्रण की प्रशंसा करनी होगी। उसने व्यापार व उद्योगमंत्री की उस अपील का पूर्णतः आदर किया, जो उन्होंने विदेशों से आयात कम करने की स्थिति में ग्राहकों को कम से कम कष्ट देने और मूल्य न बढ़ाने के लिए उद्योग से की थी। कच्चे माल का मूल्य बढ़ने, मजदूरी बढ़ जाने, सरकार द्वारा नये नये बन्धन लगाने आदि के बावजूद उद्योग ने मूल्य नहीं बढ़ाये।

गत अगस्त मास से खाद्य तथा अन्य पदार्थों के मूल्य कुछ गिरने लगे हैं। मूल्यों पर सतर्क दृष्टि रखना बहुत आवश्यक है। मांग और उपलब्धि की प्रवृत्तियों का भी अनुसरण करना चाहिए। एक विकासशील देश में मांग और उपलब्धि की शिथिलता अच्छी नहीं होती। मांग द्वारा समर्थित उत्पादन की वृद्धि से ही उन्नति का वातावरण स्थिर रखा जा सकता है। उत्पादन वृद्धि और उच्चतर उत्पादन क्षमता से अधिक और कोई बात वास्तविक आय को नहीं बढ़ा सकती। केवल उत्पादन और खपत की वृद्धि की ही चिन्ता नहीं करनी चाहिए, हमें अपना निर्यात व्यापार बढ़ाने की ओर भी ध्यान देना है। दुनिया के बाजारों में कुछ गिरावट आ रही है, इसलिए हमें निर्यात व्यापार बढ़ाने व उसे स्थिर रखने की ओर विशेष ध्यान देना होगा।

विदेशी मुद्रा

देश के सामने और विशेषकर उद्योग व्यापार के सामने एक गंभीर समस्या विदेशी विनिमय की है, जो विदेशी व्यापार के प्रतिकूल होने के कारण कठिन होती जा रही है।

गत वर्ष में हमारी स्टर्लिंग निधि २३० करोड़ रु० कम हो गई। हमने अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा प्राप्त ६५ करोड़ रु० की राशि का भी उपयोग कर लिया। यह भारी व्यापारिक प्रतिकूलता विकास सामग्री के भारी परिमाण में आयात के कारण हुई। हमारे ९० प्रतिशत आयात मशीनरी, यातायात वाहन तथा लोहे के होते हैं। पिछले कुछ महीनों से विदेशी विनिमय की स्थिति में सुधार के लक्षण इस रूप में दीखने लगे हैं कि पहले प्रति मास २५ करोड़ रु० की स्टर्लिंग निधि कम हो रही थी, अब १० करोड़ रु० कम होने लगी है। उद्योग व व्यापार के सहयोग से सरकार ने जो कदम इस दिशा में उठाये हैं, उन्हें इसका श्रेय है। भू० पू० वित्तमंत्री श्री कृष्णमाचारी के प्रयत्नों का उल्लेख भी मुझे अवश्य करना है। उनके प्रयत्नों से जो हमारे मण्डल के साथ किये गये थे, विदेशी मुद्रा मिलने में सफलता मिली है।

निजी उद्योग के पूंजीगत सामग्री मंगाने पर कठोर शर्त लगी हुई है। विलम्बित भुगतान के लिए भी शर्तें कड़ी कर दी गई हैं। मैं मानता हूँ कि हम इस योजना का बिना विवेक के खुले हाथों प्रयोग नहीं कर सकते, क्योंकि तब हमें भुगतान की कठोर समस्या का शीघ्र ही सामना करना पड़ जायगा, लेकिन मैं सरकार से यह जरूर कहना चाहूँगा कि हमें प्राप्त होने वाली विदेशी सहायता को सामने रखते हुए विदेशी विनिमय के समस्त प्रश्न पर विचार करना चाहिए। इसमें सन्देह नहीं कि आयात पर नियंत्रणों को शिथिल कर देने से खतरनाक परिणाम उत्पन्न हो सकते हैं। किन्तु आवश्यक से अधिक समय तक आयात पर नियंत्रणों को जारी रखने से भी दुःखद परिणाम उत्पन्न हो सकते हैं, क्योंकि इससे संभावित विकास रुक सकता है।

सरकार की कर नीति

इसके साथ ही आन्तरिक स्रोतों के विकास और सरकार की कर नीति का प्रश्न भी उपस्थित हो जाता है। यह आम ख्याल है कि आन्तरिक साधनों से धन प्राप्त करने की कोई सीमा नहीं है। वह जितना चाहे, प्राप्त किया जा सकता है। यह ख्याल हमें प्रश्न पर ठीक तरह से सोचने में रुकावट डालता है। इस प्रश्न पर हमें इस बात को ध्यान में रखकर विचार करना चाहिए—खपत पहले ही बहुत कम है, उस पर बिना प्रभाव डाले आज की आर्थिक स्थिति में हम बचत को नहीं बढ़ा पा रहे। रुपया प्राप्त करने और पूंजी बनाने के लिए एक शर्त यह है कि द्रव्य के स्रोत कम होने या सूखने नहीं पावें। देश की सम्पत्ति बढ़ने के साथ ही सरकारी राजस्व बढ़ सकता है। दूसरे शब्दों में उद्योग और व्यापार नफा कमाने की स्थिति में होने चाहिए और इनकी उन्नति होनी चाहिए। अपनी बात को मनुस्मृति के इन शब्दों की अपेक्षा में अधिक अच्छी तरह व्यक्त नहीं कर सकता कि कर दाता के 'योग क्षेम' की ओर उचित ध्यान देना चाहिए। योग क्षेम एक व्यापक शब्द है और इसमें करदाता की स्थिरता (योग) और हित (क्षेम) के लिए आवश्यक सभी बातों का समावेश हो जाता है।

नया बजट

इन सब बातों की रोशनी में मैं सरकार से और उन अधिकारियों से, जिनके हाथ में कर नीति का निर्धारण है, कर नीति पर विचार करने का अनुरोध करना चाहता हूँ। हमें यह आशा थी कि नये वर्ष का बजट पेश करते समय सरकार कर नीति के उस असन्तुलन को दूर कर देगी, जो पिछले वर्ष के बजट के कम्पनियों पर सम्पत्ति-कर, व्यय कर, कम्पनियों के लाभ की अनिवार्य रूप से जमा आदि की व्यवस्था के कारण उत्पन्न हो गया है। इनमें से कई कर बिलकुल नये थे, जिनकी कोई संभावना भी न थी। इस नये बजट में कर नीति की पूर्णता के नाम पर एक और उपहार कर लगा दिया गया है। सैद्धान्तिक रूप से पूर्णता स्वयं अपने में कोई उद्देश्य नहीं है। सरकार जो नये नये कर लगा रही है, उससे रुपया लगाने वाले को भारी नुक्सान होगा। यह इसी से मालूम हो सकता है कि अगस्त १९५६ में औद्योगिक क्षेत्र में डिविडैण्ड का सूचक अंक १२७.४ था, वह जनवरी ५८ में गिरकर ९९.९ तक आ गया है। प्रिफरैंस शेयरों का भी सूचक अंक इसी तरह गिरा है। यह अगस्त ५६ में ८५.२ था, किन्तु अब ७१.४ तक गिर गया है। हम ऐसी स्थिति पर पहुँच गये हैं, जब नये नये बढ़े हुए कर देश के आर्थिक विकास के लिए आवश्यक प्रेरणा और उत्तरदायित्व को ही समाप्त

करने लगे हैं। यह ठीक है कि समस्त देश की जनता को विकास के लिए प्रयत्न करना चाहिए और धन जुटाना चाहिए, किन्तु इस प्रश्न पर वास्तविक मतभेद हो सकता है कि क्या ये नये कर, जो जारी रखे जा रहे हैं, इस रूप में लगाये भी जाने चाहिए थे और क्या देश की अर्थ-व्यवस्था को उन्नत करने में ये कर कुछ भी सहायक हो सकते हैं?

आर्थिक नीति

इस संबंध में मैं कुछ बातों की ओर सरकार का ध्यान खींचना चाहता हूं। पहली बात यह है कि रुपये के निवेशन (इनवैस्टमैण्ट) को बढ़ाने के लिए हमारी आर्थिक नीति में कुछ आवश्यक परिवर्तन करने चाहिए। इसमें संदेह नहीं कि आर्थिक उन्नति के लिए सरकार बहुत कुछ कर सकती है और सरकार की यह सहायता उतनी ही आवश्यक है जितनी विदेशों से सहायता। दूसरी तरफ जनता की ओर से स्वयं मुख्य रूप से प्रयत्न होना चाहिए। यह एक महत्त्व-पूर्ण बात है। यदि सहयोग से काम किया जाय, तो आधुनिक आर्थिक विकास अच्छे परिणाम ला सकता है, परन्तु आधुनिक शासन का भी कर्तव्य है कि वह बिना सत्ता का प्रदर्शन किये और बिना तरह-तरह के कानून जारी किये देश के विकास के निमित्त जनता की अभिलाषाओं और शक्ति के लिए आवश्यक सुविधाएं पैदा कर दे। कार्यक्रम की सफलता के लिए दूसरी आवश्यक शर्त यह है कि हमें यह ज्ञान रहना चाहिए कि आर्थिक उन्नति दीर्घकालीन प्रक्रिया है। इस ज्ञान से हमें शक्ति प्राप्त होगी, परन्तु यह जरूरी है कि किसी भी क्षेत्र से प्राप्त सहायता या उसके औचित्य को प्रति वर्ष विचार-विवाद का विषय न बना कर हम दीर्घकालीन सहायता के रूप में देखें।

आज सरकार के नये-नये करों के द्वारा अधिकाधिक नागरिक करों के जाल में फंस रहे हैं। इसलिए यह स्वा-भाविक है कि करदाता नागरिक यह भी आश्वासन चाहे कि शासक उनके व्यय में अधिकतम सतर्कता रखेंगे। हमारे जैसे विकासशील देश में जहां हम आर्थिक योजनाओं की पूर्ति के लक्ष्य से बंधे हुए हैं, यह स्वाभाविक है कि सर-कारी खर्च बढ़ते जावें। परन्तु विकास व्ययों में भी फजूल-खर्ची को रोकने का प्रयत्न करना चाहिए। सरकार को इधर बहुत अधिक ध्यान देना चाहिए। सरकार के सभी विभागों का यह कर्तव्य है कि वे पूर्ण उत्तरदायित्व तथा अनुशासन की भावना से काम करें।

राष्ट्रीयकरण की नीति

आज देश में जनता का जीवन-स्तर ऊंचा करना है। उसे आजीविका देनी है, राष्ट्रीय आय बढ़ानी है, और आयका अधिक अच्छा वितरण करना है। देश का व्यापारी समाज भी इन उद्देश्यों के साथ है; परन्तु मुझे भय है कि इन उद्देश्यों को मंगलकारी राज्य या 'समाजवादी पद्धति के समाज' के जिस रूप में प्रकट किया जा रहा है, उससे एक भावुकता की प्रेरणा मिलती है तो दूसरी ओर उससे कठोरता या अनुदारता की भावना भी आ जाती है, जो जीवन को सरल गति से नहीं चलने देती। आज यह प्रवृत्ति पाई जाती है कि इन उद्देश्यों को व्यापार व उद्योग के अधिका-धिक राष्ट्रीयकरण द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। यह सब जानते हैं कि ब्रिटेन में सामाजिक उद्देश्यों की प्राप्ति के साधनों व उपायों पर पुनर्विचार किया गया है। देश में जातपात और वर्ग चेतना या घृणा को फैलाने वाली भावना को जब तक भड़काया जायगा, जैसा कि देश के कुछ भागों में हो रहा है, तब तक समाजवादी समाज की बात करने का कोई अर्थ नहीं हैं। फिर अब इङ्गलैंड में राष्ट्रीयकरण को व्यापक करने का घोर विरोध किया जा रहा है। इसका एक कारण यह है कि राष्ट्रीयकृत उद्योगों की व्यवस्था संतोष-जनक नहीं हुई। जिन उद्योगों पर सरकार ने एकाधिकार कर लिया, वहां प्रबन्धकर्त्ताओं को अपनी प्रतिभा व कुशलता दिखाने का वह आकर्षण ही नहीं रहा, जो निजी उद्योग में था। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री श्री क्रासलैण्ड ने इस बात पर विशेष जोर दिया है कि सरकारी उद्योग पूंजी निर्माण के लिए रुपया जुटाने में असफल सिद्ध हुए और निजी उद्योग से इस प्रयत्न में बहुत पीछे रहे।

जीवन बीमा निगम : नये सुझाव

मैं यह विचार प्रकट करने का साहस करना चाहता हूं कि भारत में भी समाजवादी समाज पर हमें खूब विचार करना चाहिए। इस सम्बन्ध में जीवन बीमा निगम का उल्लेख अप्रासांगिक न होगा। आज मैं बीमा उद्योग के पुन-अराष्ट्रीयकरण तक का प्रस्ताव नहीं करना चाहता, क्योंकि
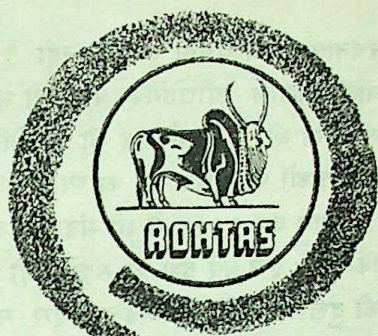
ROHTAS
क्राफ्ट
एम० जी०
पेपर
३९ ग्राम और ज्यादा वजन के
प्रामाणिक साइज़ों और रीलों में प्राप्य
वर्तमान उत्पादन :
बोर्ड : डूप्लेक्स, सफेद और रंगीन; एयरफ़िनिशड् आर्ट; एनामैल; ब्रिस्टल; प्रेस पान; मिल;
कागज़ : सफेद पोस्टर; डीलुक्स पोस्टर; सल्फाइट, रिब्ड, सफेद और रंगीन; टी यल्लो; एम० जी० टी यल्लो; एम० जी० ब्लू कैन्डल; एम० जी० मनिल्ला; व्हाइट प्रिंटिंग, हार्ड साईज्ड, उत्तम क्वालिटी; क्रीम लेड, उत्तम क्वालिटी; सफेद बैंक और बौंड; आफसेट प्रिंटिंग; एकाउंट बुक।
साहू जैन इंडस्ट्रीज़
रोहतास इंडस्ट्रीज़ लिमिटेड
डालमियानगर, बिहार

अ० भा० उद्योग व्यापार मण्डल (१९५७ पर एक आलोचनात्मक दृष्टि)

— कृष्णचन्द्र विद्यालंकार —

अखिल भारतीय उद्योग व्यापार मण्डल का ३१ वां अधिवेशन इन दिनों में हो रहा है। यह संस्था देश की आर्थिक, व्यापारिक और औद्योगिक विकास में विशेष सहयोग देती रही है। व्यापारिक और औद्योगिक समस्याओं पर राष्ट्र का ध्यान खींचना और उस के लिए मार्ग-दर्शन इस की नीति रही है। विदेशी शासन के समय इसका मुख्य कार्य भारत की आर्थिक हितों की रक्षा के लिए संघर्ष करना था। औद्योगिक, व्यापारिक और आर्थिक क्षेत्र का कोई ऐसा प्रश्न नहीं था, जिस की ओर फेडरेशन का ध्यान न गया हो।

भारत के स्वतन्त्र होने के बाद भी इस का कार्य और महत्व कम नहीं हुआ। शासन की विकास योजनाओं के साथ सहयोग देते हुए भी आर्थिक समस्याओं पर राष्ट्र का मार्ग दर्शन इस का महत्वपूर्ण कार्य रहा है। यह ठीक है कि मण्डल अपने सदस्यों और निजी उद्योग के हितों की रक्षा के लिए निरन्तर प्रयत्न कर रहा है, और इस के लिए उसे समय-समय पर सरकार की आलोचना भी करनी पड़ती है, फिर भी मण्डल की प्रवृत्ति हमेशा सहयोग और रचनात्मक आलोचना की ओर रही है। १९५५ में होने वाली विशाल औद्योगिक प्रदर्शिनी मण्डल की शानदार सफलता थी। उसने राष्ट्र की औद्योगिक प्रवृत्तियों और समस्याओं पर संसार भर का ध्यान खींचा है।

गत वर्ष १९५७ में भी मंडल ने अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये हैं। इस वर्ष देश की सबसे बड़ी समस्या विदेशी मुद्रा की दुर्लभता रही है। मंडल ने इस सम्बन्ध में न केवल सरकार को बहुमूल्य उपयोगी सुझाव दिए, किन्तु श्री घनश्याम दास बिड़ला के नेतृत्व में एक प्रभावशाली शिष्ट मंडल विदेशों में भेजा। इसने संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, कनाडा, इंग्लैंड, फ्रांस और जर्मनी जाकर वहां के नेताओं, बैंकरों, पत्र प्रतिनिधियों, व्यापारियों, उद्योगपतियों और सरकारी अफसरों से संपर्क स्थापित किया, तथा भारत की आर्थिक नीति या स्थिति के सम्बन्ध में उन के सन्देहों को दूर किया। इस ने वह सौहार्द्रपूर्ण वातावरण उत्पन्न कर दिया, जिस से भारत के वित्तमंत्री को विदेशों से सहायता लेने में बहुत आसानी हो गई। इसने अपनी महत्वपूर्ण यात्रा के बाद भारत की आर्थिक नीति के सम्बन्ध में जो सूचनात्मक सुझाव दिये, वे अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

मंडल ने जर्मन सरकार के निमंत्रण पर श्री रामगोपाल अग्रवाल व लाला भरतराम का एक प्रतिनिधि मंडल वहां भेजा। इस ने जर्मनी और भारत में परस्पर व्यापारिक संबन्ध बढ़ाने के लिए अनेक उपयोगी सुझाव दिए।

इस वर्ष मंडल ने एक दूसरा महत्वपूर्ण कार्य व्यवस्थित रूप से किया। विभिन्न उद्योगों के सामने आनेवाली महत्वपूर्ण समस्याओं पर विविध सम्मेलन किये गये, जिनमें सरकार और विभिन्न उद्योगों के प्रतिनिधि निमंत्रित करके विविध समस्याओं पर विचार किया गया। इन में पहला सम्मेलन १ जुलाई को श्री चिनाय की अध्यक्षता में हुआ, जिसमें देश के प्रधान वस्त्रोद्योग के बर्तमान संकट पर विचार किया गया। वस्त्र उत्पादन, उत्पादन कर, बिक्रीकर, निर्यात, मशीनों के आधुनिकीरण तथा औद्योगिक शांति आदि विविध प्रश्नों पर विचार भी किया गया। इस

राजनैतिक दृष्टि से यह संभव न होगा। परन्तु मैं कम से कम जीवन बीमा के केन्द्रीय एकाधिकार का विरोध अवश्य करना चाहता हूँ। मेरी सम्मति में देश के विभिन्न क्षेत्रों में जीवन बीमा उद्योग के लिए छः निगम बना देने चाहिए, जिनमें से कुछ का प्रबन्ध निजी क्षेत्र के हाथ में सौंप दिया जाना चाहिए। मैं यह सुझाव अत्यन्त संकोच के साथ रख रहा हूं। अभी तक छागला जांच कमीशन से उड़ी धूल शान्त नहीं हुई है, परन्तु मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि निजी उद्योग इस दुःखजनक घटना पर प्रसन्न नहीं है। इस सम्बन्ध में वातावरण जिस तरह खराब हुआ, उसमें अ० भा० उद्योग व्यापार मण्डल या उसके सदस्यों का कोई हाथ नहीं है।❀

❀ अ० भा० उद्योग व्यापार मण्डल के ३१ वें अधिवेशन के अध्यक्षीय भाषण से।

सम्मेलन में सारे देश से २०० प्रतिनिधि सम्मिलित हुए थे।

इस दिशा में दूसरा सम्मेलन बम्बई में बिक्री कर के सम्बन्ध में किया गया। चार सौ से अधिक व्यापारिक संस्थाओं के १,००० प्रतिनिधियों ने भाग लिया। बिक्री कर की दर, वसूली, तथा प्रबन्ध-सम्बन्धी सुझाव सम्मेलन ने दिया।

तीसरा सम्मेलन दिल्ली में यातायात और परिवहन सम्बन्धी समस्याओं पर विचार करने के लिए किया गया। इस के अनेक सुझावों पर सरकार ने सहानुभूतिपूर्वक विचार किया है और कुछ को स्वीकार भी कर लिया है। दो सम्मेलन तो इस वर्ष (१९५८) जनवरी और फरवरी में हुए। इनमें क्रमशः इंजनीरिंग उद्योगों तथा बचत निवेश (Investment) की समस्याओं पर विचार किया गया। दोनों में अपने २ प्रश्न के विविध पहलुओं पर विचार किया गया और अनेक सुझाव दिये गये। आज देश में रु० का बाजार बहुत तंग हो रहा है। पूंजी का निर्माण रुक गया है। लोगों के पास बचत करने के लिए पैसा ही नहीं है। इसलिए इन सुझावों का विशेष महत्त्व था।

इन सम्मेलनों के अतिरिक्त भी बीसियों ऐसे प्रश्न हैं—जिन की ओर मण्डल देश और सरकार का ध्यान खींचता रहा। भारत सरकार का बजट प्रस्ताव, बीमा कम्पनियों को मुआवजा, बीमा संशोधन बिल, पंचवर्षीय योजनाओं में लघु उद्योग, विदेश पूंजी, खाद्य संकट, आदि विविध प्रश्नों पर मण्डल ने शासन को परामर्श दिये हैं।

विविध देशों में होने वाले आर्थिक और औद्योगिक सम्मेलनों में मण्डल के प्रतिनिधि समय २ पर जाते रहे हैं। विदेशों से आने वाले व्यापारिक प्रतिनिधि मण्डलों से सम्पर्क स्थापित करने और उन्हें भारतीय दृष्टिकोण समझाने का प्रयत्न भी मण्डल करता रहा है।

मण्डल के अपने जीवन में एक और महत्त्वपूर्ण घटना इस वर्ष यह हो रही है कि उस का अपना शानदार भवन बनकर तय्यार हो गया है, जिसका उद्घाटन भारत के प्रधानमंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू ने १० मार्च १९५८ को किया है।

—

भारत में करों का भारी बोझ

आजकल संसद में नये बजट और कर नीति पर विचार हो रहा है, यह लेख यद्यपि एक पक्ष को प्रकट करता है, तथापि यह तुलनात्मक परिचय संसद सदस्यों को विचार-णीय सामग्री देगा।

एसोसियेशन आफ ट्रेड एण्ड इण्डस्ट्री ने एक पुस्तिका प्रकाशित कर देश के शासकों का ध्यान भारत में बढ़े हुए कर दरों की ओर खींचा है। इसकी मुख्य युक्तियां निम्न-लिखित हैं—(१) देशभक्ति और त्याग की भावुकता जनता में प्रेरणा उत्पन्न करने में चिरकाल तक सहायक नहीं होती है, वास्तविक प्रेरणा लाभ की होती है। इसलिए करों के दर इतने नहीं होने चाहिए, जिससे उद्योग में विनियोग की प्रेरणा न हो। (२) योजना आयोग ने नये करों द्वारा ४५ करोड़ रु० का लक्ष्य नियत किया था, किन्तु गत वर्ष नये करों से ९० करोड़ रु० खींचने का प्रयत्न किया गया है। इससे पहले श्री देशमुख ने भी ३० करोड़ रुपये के नये कर लगा दिये थे। (३) विकास-भिन्न कार्यों पर सरकार खर्च निरन्तर बढ़ाती जा रही है। दूसरी योजना के पहले दो वर्षों में ही १६५ करोड़ रु० का खर्च बढ़ गया है, जबकि सरकार ने १२७ करोड़ रु० के अतिरिक्त कर लगाये हैं। इस तरह सरकार जनता के खून की कमाई विकास-भिन्न कार्यों पर खर्च करती जा रही है। (४) निजी क्षेत्र भारी कठिनता में से गुजर रहा है। उसे अपने विकास के लिए २४०० करोड़ रु० चाहिए, ११५० करोड़ रु० अतिरिक्त करों के लिए और १२०० करोड़ रु० सर-कार को कर्ज देने के लिए। (५) भारत में विदेशों की अपेक्षा आय व निगम कर का दर बहुत अधिक है। इंग-लैण्ड व राष्ट्र मंडल के अन्य देश पूंजीगत लाभ औ[र] सम्पत्ति पर कर नहीं लगाते। सं० रा० अमेरिका में सम्प[त्ति] कर नहीं है। पश्चिमी जर्मनी आदि में सम्पत्ति कर[...] किन्तु उस सम्पत्ति में उपार्जित आय पर सर चार्ज न[...] है। पश्चिमी जर्मनी में ८० प्रतिशत अधिकतम दर [...] किन्तु भारत में सम्पत्ति व आयकर मिलाकर १०० प्रतिश[त] से भी बढ़ सकता है। नीचे की दो तालिकाओं से [...] स्पष्ट हो जायगा कि भारत में अन्य देशों की अपेक्षा [...] बहुत अधिक है:—

प्रतिशत निगम कर (आय, डिबिडेण्ट व सम्पत्ति[...]

आय रु०	२५०००	५००००	१ लाख	५ लाख	१०
भारत×	५१.१	५६.	५६.०	५६.०	५६.
इंगलैंड	५७.७	५७.७	५७.७	५७.७	५७.
पश्चिमी जर्मनी×	४०.८	४१.४	४१.४	४१.६	४१
लंका	३६.०	३६.०	४८.२	४६.०	४[...]
जापान	३७.४	३८.७	३९.३	३९.९	३[...]
सं० रा० अमेरिका	३०.०	३०.९	३०.९	४७.७	५०
कनाडा	१८.०	१८.०	१८.१	३६.६	४[...]

× इन दो देशों में सम्पत्ति कर लगता है।

दो सन्तान वाले विवाहित व्यक्ति पर आय कर का प्रतिशत

आय	भारत	इंगलैण्ड	लंका	अमेरिका	प० जर्मनी,	जापान	कनाडा
५०००	०.८४	......	......	......	......	......	.....
१०,०००	४.२८	२.७४	२.००	—	९.६६	१०.२६	"
५०,०००	३४.१६	३३.१६	२५.००	१८.८४	३०.६९	२९.११	१५.[...]
१,००,०००	५६.७६	४८.९७	४३.५०	२७.५८	४०.४२	३७.५३	२६.[...]
५,००,०००	९२.४८	८२.९६	७६.४०	५९.४८	६२.९१	५४.४५	५०.[...]
१०,००,०००	१०३.५८	८९.७०	८०.७०	७४.११	७०.७५	६१.४०	६०.[...]

समाजवाद या पूंजीवाद ?

प्रो० विश्वम्भरनाथ पाण्डेय

समाजवादियों और पूंजीवादियों (सिद्धान्ततः व्यक्तिवादियों) के अन्तिम उद्देश्य में कोई अन्तर नहीं। दोनों ही व्यक्ति को विकास के लिए अधिक से अधिक अवसर देना चाहते हैं। किन्तु व्यक्तिवादी का विकास बहिर्गत हस्तक्षेपों के अभाव में ही हो सकता है। समाजवादियों का विश्वास है कि यह तभी संभव है जब सामाजिक व राजनीतिक संघों के रूप में व्यक्ति संबद्ध होकर परस्पर सहयोगी के रूप में एक दूसरे को जीवन की पूर्णता तथा स्वतन्त्रता प्रदान करने के लिये प्रयत्न करें। व्यक्तिवादियों के सिद्धान्त की आधारभूत त्रुटियों की चर्चा हम सम्पदा के गतांक में कर चुके हैं। उन्होंने व्यक्ति के वैयक्तिक विकास को महत्व दिया, किन्तु हेत्वाभासिक रूप से एक ऐसी समाज-व्यवस्था की वकालत की, जिसमें भौतिक अभावों की चोट से मनुष्य का व्यक्तित्व उठ नहीं सकता था। फिजिओक्रेट, आदमस्मिथ, मिल, स्पेन्सर, बेन्थम, जर्मनी के कान्ट, फिश्ते आदि आशावादी थे और मानवीय हस्तक्षेप के अभाव में भी वस्तुओं के सुन्दर स्वरूप ग्रहण कर लेने की क्षमता में विश्वास करते थे। सामाजिक विकास के पक्ष में वे डारविन महाशय के विकासवाद के सिद्धान्त में विश्वास करते थे। उनका तर्क था कि चूंकि मनुष्य का जीवन प्रारम्भ से ही संघर्षशील है, स्वस्थ समाज का मूलभूत आधार केवल व्यक्तिगत-स्पर्द्धा ही तैयार कर सकती है, जिसकी क्रियाशीलता से अयोग्य पुरुषों का अस्तित्व स्वयं मिट जायेगा तथा केवल योग्य और स्वस्थ पुरुष ही समाज में बचेंगे।

इसके विपरीत समाजवादियों का विश्वास है कि संघर्ष अनिवार्य नहीं। मानव जीवन के अनुचित संघर्षों को हटाना आवश्यक है, क्योंकि सभ्यता और विकास के साधन तथा द्योतक संघर्ष और व्यक्तिगत प्रतिस्पर्द्धा नहीं अपितु सामाजिक मेल और सौहार्द है। वास्तव में व्यक्ति-संघर्ष से पृथक मानवीय जीवन के कुछ अधिक भद्र उद्देश्य हैं जिनकी पूर्ति मानवता बर्बरता से छुटकारा पाकर ही कर सकती है। समाज का आर्थिक व राजनीतिक शरीर एक जीवन्त शरीर (living organism) की तरह है। इसके सभी अंगों का समानुपातिक विकास ही अपेक्षित है। यदि इसके किसी एक अंग (मनुष्य अथवा मनुष्यों के एक वर्ग को) अनियंत्रित वृद्धि का अवसर देते हैं, तो इसका कुप्रभाव दूसरे अंगों की वृद्धि पर पड़ेगा तथा शरीर के सम्पूर्ण ढांचे को कुरूप कर देगा।

इस तरह पूंजीवाद और समाजवाद दोनों के अपने अलग-अलग दर्शन हैं। पूंजीवादी व्यवस्था में पूंजी कुछ लोगों के हाथ में होती है। मजदूर वर्ग थोड़े से उत्पादक साधनों पर स्वामित्व रखने वाले धनी वर्ग की दया पर जीता है और निरन्तर शोषित होता है। उसे अपनी उत्पादकता का उचित अंश नहीं प्राप्त होता तथा अतिरिक्त अर्थ (Surplus value) के रूप में उसका अधिकांश पूंजीपतियों के द्वारा ले लिया जाता है। काम की प्रकृति, अवस्था, स्थिति मजदूरी सब कुछ पूंजीपति अपने हित की दृष्टि से निश्चित करता है और संघर्ष-शक्ति की दुर्बलता के कारण मजदूर को सब स्वीकार करने पड़ते हैं। यद्यपि यह ठीक है कि आजकल कम्पनी-कानूनों, फैक्ट्री कानूनों, व्यापारिक विधियों तथा मजदूर कानूनों के द्वारा सरकार नाना प्रकार से पूंजीवाद की उत्पीडक-क्रिया पद्धति को नियंत्रित करने की चेष्टा करती है, फिर भी सत्य यह है कि पूंजीवादी अर्थ व्यवस्था कुछ सम्पन्न धनियों के हित में ही संगठित होती है।

पूंजीवाद का दूसरा दोष यह है कि यह विषमता (unequality) और अन्याय (injustice) पर आधारित है।

तृतीयतः पूंजीवाद के व्यक्तिगत स्वातंत्र्य तथा प्रतिस्पर्द्धा का परिणाम यह होता है कि कमजोर तथा छोटे-छोटे प्रतिस्पर्द्धी निरन्तर मिटते जाते हैं और आर्थिक सम्पदा व शक्ति कम से कम लोगों के हाथ में केन्द्रित होती जाती है। इसका परिणाम यह होता है कि धनी और भी धनी तथा गरीब और भी गरीब बनते हैं। इसके अतिरिक्त एक ही प्रकार का कार्य व उद्योग कई मनुष्यों तथा संस्थाओं के द्वारा होने के कारण श्रम की अनार्थिक द्विरावृत्ति (Duplication) होती है और प्रतिस्पर्द्धी विज्ञापनों आदि पर

राष्ट्रीय सम्पदा का अनुत्पादक व्यय होता है ।

चतुर्थतः पूंजीवादी अर्थव्यवस्था लाभ की दृष्टि से संचालित होती है । अतः केवल उन वस्तुओं का उत्पादन होता है, जो बाजार में बिक सकती हैं और उत्पादन को लाभ प्रदान कर सकती हैं । अतः स्वभावतः पूंजीवाद में उन वस्तुओं का उत्पादन नहीं होता, जिन्हें क्रय शक्ति के अभाव में दीन वर्ग नहीं खरीदता, किन्तु जीवनोपयोगी अनुभव करता है । वास्तव में उत्पादन का आधार सामाजिक उपयोगिता होनी चाहिये, व्यक्तिगत लाभ कदापि नहीं ।

इन सबका निराकरण कैसे हो ? कहा जाता है कि उत्पादन और वितरण की क्रिया के समाजीकरण (Socialization) के द्वारा वर्तमान समाज की आर्थिक विषमताओं तथा अन्याय का उन्मूलन किया जा सकता है । उत्पादन के सभी साधनों (मानवीय श्रम को छोड़कर) पर राज्य का अधिकार हो और समस्त समाज की उपयोगिता और आर्थिक कल्याण की दृष्टि से राज्य उद्योगों का संचालन करे । इससे मजदूर-वर्ग का शोषण रुक जायेगा, आर्थिक शक्तियों का केन्द्रीकरण समाप्त हो जायेगा तथा अपने व्यक्तित्व के विकास के लिए सब को समान अवसर प्राप्त होगा और समाज के सभी अंगों का आनुपातिक विकास संभव हो सकेगा ।

समाजवाद के दोष

किन्तु समाजवाद का सबसे बड़ा दोष यह है कि वह राज्य की क्रियाओं के निरन्तर विस्तार पर विश्वास करता है । इसका परिणाम यह होगा कि व्यक्तियों के हाथ से निकल कर उद्योगों तथा उत्पादन के साधनों का स्वामित्व राज्य में केन्द्रित होजायेगा और व्यक्तिगत पूंजीवाद (Jndividual Capitalism) के स्थान पर राज्य पूंजीवाद (State Capitalism) की प्रतिष्ठा होगी, जिसमें रूस की तरह व्यक्ति को अपने कुछ उन आधारभूत प्राकृतिक अधिकारों से बंचित होना पड़ेगा, जो पेट की रोटी प्राप्त करने की आवश्यकता से अधिक महत्वपूर्ण हैं ।

द्वितीयतः कहा यह भी जाता है कि सामाजिक प्रतिष्ठा, यश और मान आदि की सामाजिक भावना से भले ही कुछ लोग परिश्रम-साध्य कार्यों से न हटें, पर लाभ का प्रोत्साहन नष्ट हो जाने के बाद समाजवादी समाज में व्यक्ति की कार्य कुशलता और प्रतिभा प्रयोग का एक बहुत बड़ा प्रभावोत्पादक प्रोत्साहन मिट जायेगा और तब राज्य के स्वामित्व में संचालित होने वाले कार्य पूंजीवादी अर्थतंत्र जैसी कुशलता, ईमानदारी और मेहनत से चल सकें इसमें सन्देह है । समाजवाद का यह कटु अनुभव है कि उपर्युक्त सन्देह निराधार नहीं हैं ।

समाजवाद का तीसरा दोष नौकरशाही (Bureaucracy) तथा फाइलबाजी (Red Tapism) है । उद्योगों का स्वामित्व राज्य में होता है और उसकी इच्छाओं का प्रकाश सरकार के द्वारा होता है । यह सरकार (मंत्रि-मंडलों तथा सरकारी नौकरों का समुदाय) अपनी औद्योगिक नीतियों तथा कार्यों के लिये पालियामेंट तथा विधायिका सभाओं जैसी जनता की प्रतिनिधि सभाओं के प्रति उत्तरदायी होती है । अतः किसी भी आर्थिक व औद्योगिक नीति का तब तक निर्धारण नहीं होता, जब तक जनता की प्रतिनिधि सभा उसे स्वीकृत न करे । किन्तु इस प्रकार आर्थिक नीतियों को बिल के रूप में प्रतिनिधि सभाओं में उपस्थित करने, उस पर बहसा-बहसी करने और पारित करने में काफी विलम्ब होता है । व्यवसाय तुरन्त निर्णय चाहता है । परन्तु सरकारी नीति का द्रुत निर्धारण नहीं होता । इसके अतिरिक्त सरकार का ढांचा स्थायी-अस्थायी अफसरों के कुतुब मिनार की तरह होता है। नीचे के अफसरों को कोई भी महत्वपूर्ण कदम उठाने के पूर्व अपने ऊपर के पदाधिकारी (अफ्सर) की स्वीकृति लेनी होती है । इस प्रकार आवश्यक पत्रादि नीचे से ऊपर की अन्तिम मंजिल वाले अफ्सर के यहां पहुँचने और स्वीकृति लेकर अपनी दीर्घसूत्री गति से वापस लौटने में काफी समय खा जाते हैं । नीति निर्धारण की यह दीर्घसूत्रता समाजवाद की बहुत बड़ी दुर्बलता है और उन कारणों में से एक है जिन कारणों से समाजवादी उद्योगों का प्रबन्ध अपेक्षित कार्यकुशलता और तत्परता से नहीं हो पाता ।

इस तरह स्पष्ट है कि समाजवाद और पूंजीवाद दोनों ही में दोष गुण हैं । और उनका चुनाव विवेकपूर्ण निर्णय के आधार पर ही हो सकता है । पूंजीवाद और समाजवाद वस्तुतः स्वयं सिद्धि न होकर साधन मात्र हैं । उनमें से किसी के भी प्रति हमारा पूर्व निश्चित निराधार अनुराग

होना अवैज्ञानिक है। हमारी सिद्धि है अपनी विभिन्न समस्याओं का सही सही और अधिकतम योग्यतापूर्ण समाधान। इनमें से जिस कार्य पद्धति के द्वारा हमारी सामाजिक तथा आर्थिक समस्याओं का श्रेष्ठतर और पूर्णतर समाधान हो सकेगा, वही हमारा स्वीकार्य 'वाद' होगा। मुख्यतः समाज के सामने तीन विकट समस्यायें हैं:—

(१) उत्पादन की समस्या:—उत्पादन की समस्या यह है कि किस प्रकार सीमित उत्पादन साधनों को विभिन्न उद्योगों में नियोजित किया जाय ताकि न्यूनतम लागत पर उत्पादन की अधिकतम वृद्धि हो और उसके द्वारा प्रतिदिन एक लाख बीस हज़ार की गति से बढ़ती हुई विश्व की जनसंख्या को अधिक उन्नत जीवन स्तर प्रदान किया जा सके।

(२) वितरण की समस्या: - हमारी दूसरी समस्या वितरण की है। उत्पादन के विभिन्न साधनों (भूमि, श्रम, पूंजी, संगठन और साहस) को पुरस्कार के रूप में राष्ट्रीय आय का किस प्रकार अंश प्रदान किया जाय, जिससे मानव समाज का हित बढ़े। राष्ट्रीय आय का वर्तमान वितरण विषम और अन्याय्य है राष्ट्रीय आय के उस वितरण प्रणाली का जो सामाजिक न्याय, औचित्य तथा समता के सिद्धान्त से संगत जंचे।

(३) प्रबन्ध वा संगठन की समस्या:—प्रबन्ध की समस्या औद्योगिक शासन पद्धति की समस्या है। किस प्रकार उद्योगों को अधिकृत तथा नियंत्रित किया जाय, ताकि विभिन्न उद्योगों में काम करने वाले वे सभी स्त्री व पुरुष मजदूर केवल मजदूरी के ही अधिकारी न रह जांय, अपितु आज के दासत्व व परवशता की स्थिति से ऊपर उठकर समाज में अपना एक गौरव-पूर्ण-स्वतन्त्र स्थान बना सकें। दूसरे शब्दोंमें यह समस्या 'औद्योगिक प्रजातंत्र' की स्थापना की समस्या है।

पूंजीवाद या समाजवाद जिस किसी पद्धति से भी हमारी इन आधारभूत समस्याओं का संतोषपूर्ण समाधान सम्भव होगा, वही हमें ग्राह्य होगा।

हमें विभिन्न विषयों की चर्चा इसी दृष्टि से करनी चाहिए कि उनसे उपर्युक्त समस्याओं पर प्रकाश पड़ सके। किन्तु इससे पहले यह देख लेना चाहिए कि क्या समाजवाद का अर्थ है राष्ट्रीयकरण। इस प्रश्न की चर्चा आगामी अंक में।

१९५८-५९ का बजट : नये कर ; २७ करोड़ का घाटा
नासिक प्रैस का आश्रय

नये करों का प्रस्ताव

वित्तमंत्री के रूप में नेहरूजी ने लोकसभा में बजट उपस्थित करते हुए जो नए प्रस्ताव रखे हैं, वे इस प्रकार हैं—

दान कर—दस हजार रुपए तक दानों पर कोई कर नहीं लगेगा। केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकारों, स्थानीय निकायों और धर्मार्थ संस्थाओं को दान देने पर कर नहीं लगेगा। विवाह के अवसर पर आश्रित स्त्री को दस हजार तक दान पर कर नहीं लगेगा। अपनी पत्नी को एक लाख रुपये के दान पर कर नहीं लगेगा। दान कर की दरें ४ प्रतिशत से ४० प्रतिशत तक है। इससे ३ करोड़ रुपये की आय का अनुमान है।

\+ + + +

मृत सम्पत्ति शुल्क—सीमा की छूट १ लाख से घटाकर ५० हजार कर दी गई है। इससे आय में ५० लाख रुपए की वृद्धि की संभावना है।

\+ + + +

जहाजों के लिए अधिक विकास पर छूट दी गई है।

\+ + + +

सीमेंट पर शुल्क—सीमेंट पर उत्पादन-कर के शुल्क की दर को २० रु० प्रति टन से बढ़ाकर २४ प्रति टन कर दिया गया, लेकिन स्टेट ट्रेडिंग कार्पोरेशन द्वारा जो अधिभार लिया जाता है, वह वापस ले लिया जाएगा। इससे आय में २ करोड़ २४ लाख रुपए की वृद्धि का अनुमान है।

सूती कपड़ा तैयार करने वाले बिजली-चालित करघों को अभी जो रियायतें हैं वे १०० से अधिक करघों वाले संस्थानों को अब नहीं मिलेंगी। जिन संस्थानों में २५ से १०० तक करघे हैं उनके लिए सम्मिलित दरें दो चरणों में बढ़ाई जा रही हैं। इससे आय में ८३ लाख रुपये की वृद्धि होगी।

वनस्पति—वनस्पति पर शुल्क की दर प्रत्येक कारखाने पर पहले ३००० टन की निकासी के लिए घटाई गयी है। इससे २४ लाख रुपए की कमी होगी।
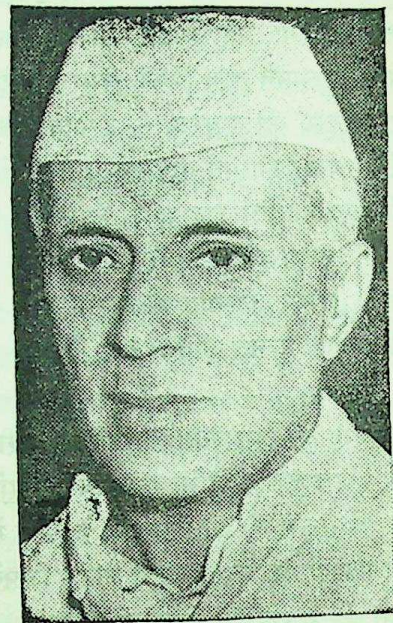
वित्तमंत्री पं० नेहरु

प्रस्तावित नए करों से केन्द्रीय सरकार की आय में करोड़ ४७ लाख रुपए की वृद्धि होने का अनुमान है, लेकि इसमें से ५० लाख रुपए राज्य सरकारों को चले जाएं और वनस्पति के उत्पादन शुल्क में कमी करने से २४ ला रुपये का घाटा होगा। इस तरह से अतिरिक्त शुद्ध आ ५ करोड़ ८३ लाख रुपया रह जाने का अनुमान है।

आज की कर व्यवस्था के अनुसार सन १९५८-५९ बजट में ३२ करोड़ ८५ लाख रुपये का घाटा होने अनुमान है, लेकिन नए कर प्रस्तावों के पश्चात् वह करोड़ २ लाख रुपए रह जाएगा।

सबसे अधिक आय २६० करोड़ ४५ लाख रुप उत्पादन-शुल्कों से होने का अनुमान है और आय कर २१७ करोड़, सीमा शुल्क से १७० करोड़, रेलों से करोड़ ५८ लाख आय होने का अनुमान है। नए कर- सम्पत्ति कर से १२ करोड़ ५० लाख रु० और व्यय-क से ३ करोड़ रुपये की आय होने का अनुमान है।

७९६ करोड़ रुपए के अनुमानित व्यय में से २

बजट एक दृष्टि में

(लाख रुपयों में)

राजस्व	बजट १९५७-५८	संशोधित १९५८-५८	बजट १९५८-५९
सीमा शुल्क	१६७,६०	१८३,००	१७०,००
केन्द्रीय उत्पादन-शुल्क	२५९,५७	२६४,५५	३०१,९३ २,८३
निगम कर	५०,००	५०,५०	५५,५०
निगम कर के अतिरिक्त-आय पर कर	८९,९२	८२,४७	८४,५३
मृत सम्पत्ति-शुल्क	९	१२	१२
सम्पत्ति-शुल्क	१२,५०	९,००	१२,५०
रेल किराये पर कर	·	३	७
व्यय पर कर			३,००
दान कर			३,००
अफीम	२,५०	३,२८	२,८७
व्याज	४,९०	६,१५	६,६०
नगर प्रशासन	४३,२१	५६,७९	४४,२४
चलमुद्रा और टकसाल	३६,०२	३६,८४	३६,६२
नागर निर्माण कार्य	२,९५	२,७८	२,८७
राजस्व के अन्य स्रोत	२७,६५	२१,५६	३२,९३
डाक और तार-सामान्य-राजस्व में शुद्ध अंशदान	३,९५	१,२३	२,३४
रेलें-सामान्य राजस्व में शुद्ध अंशदान	६,६७	६,३३	७,०४
जोड़-राजस्व	७०८,०३	७२४,६३	७६३,१६) ५,८३)

व्यय	बजट १९५७-५८	संशोधित १९५८-५८	बजट १९५८-५९
राजस्व से प्रत्यक्ष व्यय	४६,००	६२,९७	९४,४५
सिंचाई	१०	१०	१३
ऋण-व्यवस्था	३५,००	३७,४४	४०,००
नागर-शासन	१९१,०२	१९४,७१	२००,४४
चलमुद्रा और टकसाल	६,७२	७,३५	८,५०
नागर निर्माण-कार्य और विविध सार्वजनिक-सुधार-कार्य	१५,९३	१६,२३	१८,७१
पेंशनें	९,१७	९,३६	९,४०
विविध विस्थापितों पर व्यय	२२,५०	२२,३३	२०,४८
अन्य व्यय	४४,०६	४२,६३	५०,३३
राज्यों को अनुदान आदि	२५,२३	४७,२६	४७,०३
असाधारण मुद्रा	२५,२३	४७,२६	४७,०३
असाधारण मदें	२३,८६	१३,१५	२८,४०
रक्षा सेवाएं (शुद्ध)	२५२,७०	२६६,०५	२७८,१४
जोड़–व्यय	६७२,२९	७१९,५८	७९६,०१
अधिशेष (·|·)	·|· ३५,७४	·|· ५,०५	–२७,०२
कमी (–)			

करोड़ १४ लाख रुपया रक्षा में व्यय होने का अनुमान है। चालू वित्तीय वर्ष की अपेक्षा आगामी वित्तीय वर्ष में रक्षा में १२ करोड़ ९ लाख रु० व्यय अधिक होने का अनुमान है। १९५८-५९ में निर्माण कार्यों, शिक्षा, चिकित्सा सामुदायिक विकास योजना के लिए चालू वर्ष की अपेक्षा बहुत अधिक रकम रखी गई है। नागाओं के नव-निर्मित प्रदेश के लिए ३ करोड़ ६४ लाख रुपया रखा गया है।

चालू वित्तीय वर्ष में ७०८ करोड़ ३ लाख रुपये की आय, ६७२ करोड़ २८ लाख रुपये का व्यय और ३५ करोड़ ७४ लाख रुपए की बचत होने का अनुमान किया गया था; लेकिन संशोधित अनुमान के अनुसार केवल ५ करोड़ ५ लाख रुपये की बचक होने का अनुमान है। इस का कारण यह कि वित्त आयोग की सिफारिशों के अनुसार केन्द्रीय सरकार को ३४ करोड़ २० लाख रुपया राज्य सरकारों को देना पड़ा।

आगामी वित्तीय वर्ष में विदेशों से ३२५ करोड़ रुपये की आर्थिक सहायता मिलने का अनुमान है। इससे दूसरी योजना को कार्यान्वित करने काफी सहायता मिलेगी।

———

विविध राज्यों के बजट

पिछले साल विविध राज्यों के बजटों में नये करों की जो बाढ़ सी आ गई थी, वह इस वर्ष के बजटों में नहीं है। बहुत कम राज्यों ने नये कर लगाये हैं, किन्तु घाटा तो प्रायः सभी राज्यों को हुआ है। अपवादस्वरूप कुछ राज्य ऐसे भी हैं, जिन्होंने नये कर लगाकर बचत दिखाई है।

एक विशेष बात यह है कि सभी राज्य पहले की अपेक्षा केन्द्र पर अधिक आश्रित हुए हैं। चीनी, तमाखू और कपड़े के बिक्री-कर केन्द्र के हाथ में जाने पर कुछ तो यह स्वाभाविक भी था। बढ़े हुए रेल-कर का भी हिस्सा राज्यों को मिलेगा। वित्तीय आयोग ने भी उदारता दिखाई है और राज्यों को अनुदान देने की सिफारिशें की हैं।

विविध राज्यों ने जनता या उसके किसी वर्ग को सुविधा देने का भी प्रयत्न किया है, किन्तु उनसे कहां तक सन्तोष होगा, यह नहीं कहा जा सकता। शासन व्यय को कम करने की उल्लेखनीय चेष्टा किसी ने नहीं की।

नीचे संक्षेप से विविध राज्यों के बजट दिये जाते हैं—

उत्तर प्रदेश

उत्तर प्रदेश के बजट में ४ करोड़ ५४ लाख का घाटा दिखाया गया है। १ अरब ८ करोड़ २३ लाख रु० की आय तथा १ अरब १२ करोड़ ७७ लाख व्यय होगा।

कोई नया कर नहीं लगाया गया है। जिन सरकारी कर्मचारियों का वेतन ४००) प्रति मास है, उनके आधे महंगाई भत्ते को वेतन में मिला दिया गया है। राज्य सरकार ने ७ करोड़ रु० ऋण दिया है और इसमें लघु उद्योग निगम की स्थापना की भी व्यवस्था है।

इस बजट में लगभग १० लाख की अतिरिक्त व्यवस्था की गई है जो मंत्रियों, राज्य मंत्रियों, उपमंत्रियों, संसदीय सचिवों और विधानमंडल व सदस्यों के लिए सुरक्षित रखा गया है। १ करोड़ से अधिक राशि इसलिए सुरक्षित रखी गई है, कि जिससे ३५० नई डीजल बसें खरीदी जा सकें। १२५० जूनियर बेसिक स्कूल खोलने की भी व्यवस्था की गई है।

एक करोड़ रुपये की लागत से मजदूरों के लिए मकान बनाये जायेंगे, चुर्क सीमेंट फैक्ट्री का विस्तार किया जायगा। हरदुआ गंज में ३० हजार किलोवाट का बिजलीघर खोला जायगा।

आयकर में राज्य का हिस्सा इस वर्ष २४६ लाख रु० बढ़ जायगा, केन्द्रीय उत्पादन करों का हिस्सा भी ११४ लाख बढ़ जायगा। ६१ लाख रु० की १२०.०० करोड़ की और व्यय रकम रेल किरायों पर लागू कर के हिस्से में से मिल सकेगी।

काश्मीर

काश्मीर के मुख्यमंत्री बख्शी गुलाम मुहम्मद ने १९५८-५९ का मुनाफे का बजट पेश किया है। इस वर्ष आनुमानिक आय १०४६.९० लाख रु० की होगी, तो व्यय ७६०.३६ लाख रु० का होगा। इसका अभिप्राय यह है कि २८६.५४ लाख का मुनाफा होगा।

आय की रकम में ४८८.४३ लाख रु० की रकम भारत सरकार से अनुदान आदि के रूप में मिलेगी और ५५६.४७ लाख रु० की रकम राज्य में लगाये गये कर आदि से मिलेगी।

भारत सरकार के साथ हुए अन्तरिम समझौते के फलस्वरूप आगामी वर्ष तदुद्देश्यी अनुदान की मद में २५० लाख रु० से २३८.४३ लाख रु० ज्यादा मिलेंगे। वित्त आयोग की सिफारिशों के अनुसार दी जाने वाली रकम बढ़ा दी गई है। इससे भी अधिक खुशी का विषय यह है कि केन्द्रीय सरकार हमारे साथ भी आर्थिक मामलों में वैसा सम्बन्ध रखती है, जैसा कि दूसरे राज्यों के साथ। पहले हमें जहां तदुद्देशीय अनुदान मिलता था, वहां अब हमें भारतीय संविधान के अनुसार केन्द्रीय सरकार के करों से भी वैसे ही रकम मिलेगी और वैसे ही अनुदान मिलेंगे, जैसे कि भारत के दूसरे राज्यों को मिलते हैं।

मध्य प्रदेश

मध्य प्रदेश के बजट में ११०,०३ लाख रुपयों की बचत दिखाई गई है।

बजट में सन् १९५८-५९ में ५६१६.७१ लाख रुपयों की राजस्व आय का अनुमान दिखाया गया है, जबकि आनुमानिक व्यय ५५०६.७६ लाख रुपयों का है।

वित्तमंत्री ने कोई नया कर प्रस्ताव प्रस्तुत नहीं किया है। वैसे उन्होंने वर्तमान कानून के अंतर्गत कल्याण कर और बिक्री कर के वैज्ञानिकन की घोषणा की है। इसके फलस्वरूप राज्य के कोष को १३० लाख रुपयों की अतिरिक्त आय होगी।

बजट का एक विशेष उल्लेखनीय पहलू प्राइमरी स्कूलों के अध्यापकों के लिए सरकार द्वारा नये वेतन स्तर का निर्णय किया जाना है।

यह नया वेतन स्तर समूचे राज्य में १ अप्रैल १९५६ से लागू होगा। यह भी निर्णय किया गया है कि प्राइमरी स्कूलों में, जो स्वायत्त संस्थाओं द्वारा चलाए जाते हैं, नए वेतन स्तर के फलस्वरूप जो अतिरिक्त व्यय होगा, उसे राज्य सरकार देगी।

पंजाब

पंजाब की विधान सभा में वित्तमंत्री श्री मोहनलाल ने निम्न नये कर प्रस्ताव पेश किये हैं—

बिक्री-कर की दर २ पैसा रुपया के स्थान पर ४ नया पैसा रुपया कर दी गई है।

व्यावसायिक व घरेलू रूप में बिजली को खपाने वाले प्रथम वर्ग के लोगों पर १० प्रतिशत और शेष पर २५ प्रतिशत बिजली कर लगेगा।

दाल आदि खाद्य-पदार्थों पर ७५ नए पैसे फी १०० रु० के हिसाब से बिक्री-कर लगेगा।

उत्पादकों द्वारा कच्चे माल की खरीद पर २ नया पैसा फी रुपया बिक्री-कर लगेगा।

हथियार-लाइसेन्स शुल्क दुगना होगा।

कपास, बिनौले, खली, खाल, चमड़ा और ऊन पर बिक्रीकर लगेगा। पहिले ये चीजें बिक्री-कर से मुक्त थीं।

नये वर्ष के बजट में २०८ लाख रु० का घाटा दिखाया गया है। कुल आय ४७ करोड़ ८१ लाख रु० की होगी तो व्यय ४९ करोड़ ८९ लाख का।

नए कर-प्रस्तावों से न केवल घाटा पूरा हो जाएगा, बल्कि १० लाख रु० की बचत हो जाएगी।

भूमि आय पर विशेष सरचार्ज लेने का विधेयक यदि पास हो गया तो १५ लाख रु० की अतिरिक्त आय होगी। फिर भी राज्य को २१९ लाख रु० का घाटा रह जायगा और राज्य उससे पूरा करना होगा।

बम्बई

बम्बई के बजट में १२०.०० करोड़ रु० का घाटा दिखाया गया है। आय करीब, १२२.०१ करोड़ रु० का होगा।

देश के विभिन्न राज्यों में से बम्बई का बजट सबसे बड़ा है। नए कर प्रस्तावों की भी घोषणा की गई है। इससे १९५८-५९ में करीब ३ करोड़ रु० की आय होगी, और नए करों से २.०१ करोड़ रुपये का घाटा २४ लाख रु० के मुनाफे में परिवर्तित हो जाएगा। नये कर-प्रस्ताव निम्न है :

(१) मुसाफिर किरायों पर कर से १८० लाख रु० की आय।

(२) मोटर गाड़ियों पर कर से १५ लाख रु० की आय।

(३) मोटर स्पिरिट तथा ईंधन के काम में आने वाले डीजल तेल पर कर से ३० लाख रु०।

(४) गैर-अदालती दस्तावेजों पर स्टाम्प-कर से २५ लाख रु०।

(५) विद्युत कर से २५ लाख रु०।

(६) मनोरंजन कर से २५ लाख रु०।

नए करों से न केवल आमदनी बढ़ेगी, बल्कि राज्य के घटक क्षेत्रों में कर एक समान लगेंगे।

अधिकांश कर वे हैं जो पुराने बम्बई राज्य में लगे हुए थे।

पुराने बम्बई राज्य की तरह विदर्भ व मराठावाडा में

भी कपास पर बिक्री-कर २ प्रतिशत के स्थान पर १ प्रतिशत कर दिया गया है।

इस वर्ष जो महत्वपूर्ण पूंजीगत खर्च किये जायेंगे, वे निम्न है :—

सिंचाई योजनाओं पर १७.३६ करोड़ रु०; कोयना योजना पर ८.५० करोड़ रु०; सड़कों व भवन निर्माण पर १४.५० करोड़ रु०।

सरकारी गतिविधि पर कुल २०४.३ करोड़ रु० खर्च किया जाएगा। १४६.७ करोड़ रु० विकास कार्यों पर खर्च किया जायगा। गैर-विकास कार्यों पर ५४.६ करोड़ रु० व्यय होगा।

मद्रास

मद्रास के वित्तमंत्री ने तीन नये कर प्रस्ताव प्रस्तुत किए हैं—

(१) कृषि आय कर, जो भूमि से होने वाली ३००० रुपये से अधिक आय पर लगेगा। (२) डीजल आयल पर २५ नये पैसे प्रति गैलन बिक्री-कर और (३) मनोरंजन कर में वृद्धि।

आय ६२७० लाख और व्यय ६३७५ लाख दिया गया है। मंत्री महोदय ने यह भी घोषणा की है कि सिनेमा तथा घुड़ दौड़ को छोड़कर शेष सभी प्रकार के मनोरंजनों पर से कर हटा दिया जाएगा।

आन्ध्र

आंध्र प्रदेश के वित्तमंत्री श्री. बी. गोपाल रेड्डी ने राज्य का सन् १९५८-५९ का ७९ लाख रुपये की बचत का बजट पेश किया है। इसमें ६३.६६ करोड़ रुपये की आय और ६२.८७ करोड़ रुपए का व्यय आंका गया है।

किसी नए कर का प्रस्ताव नहीं किया गया है।

अक्तूबर १९५३ में आंध्र प्रदेश के निर्माण के बाद पहली बार राज्य का यह बजट है।

बजट में राज्य की द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत उप-योजनाओं के क्रियान्वय के लिए ३०२ करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई है। इसके अलावा केन्द्रीय सरकार ने केन्द्र द्वारा संचालित योजनाओं के लिए २.६१ करोड़ रुपया दिया है। केन्द्रीय सरकार की १८ करोड़ रुपए की सहायता का अनुमान लगाया गया है, शेष उसे ही पूरा करना पड़ेगा।

बजट नागार्जुन सागर योजना, मचकुण्ड जल-विद्युत और तुंगभद्रा जल-विद्युत योजना के लिए क्रमशः [illegible] करोड़, १.७४ करोड़ और ८२ लाख रुपये के पूंजीगत व्यय की व्यवस्था की गई है। इसके अलावा तुंगभद्रा नहरों, राजौली बांद्रा योजना, तेलंगाना जल-विद्युत योजनाओं और कृष्णा नदी पर सड़क एवं तख्ता पुल के लिए भी धन की व्यवस्था की गई है।

छोटी बचत योजना के अंतर्गत तथा सार्वजनिक ऋण से ६ करोड़ रुपया उपलब्ध होने का अनुमान है।

केरल

केरल के साम्यवादी शासन के पहले बजट में ६६.७ लाख रु० के नये कर लगे हैं, जिनसे ३२.७७ लाख रु० घाटा ३४.०१ लाख रु० की बचत में बदल जायगा। कुल आय ३३.८४ करोड़ रु० तथा व्यय ३४.१७ करोड़ रु० का अनुमान किया गया है। शहरी अचल सम्पत्ति कर की दर में वृद्धि की गई है, काली मिर्च व गोले के में वायदे सौदों पर शुल्क, राज्य परिवहन सेवाओं के यात्रि के भाड़ों पर १० प्रतिशत अधिभार, बिजली कर में वृद्धि डीजल तेल पर बिक्री कर २ से बढ़ाकर २० नये पैसे सरकार खुले बाजार से ३ करोड़ रु० ऋण लेगी।

पश्चिम बंगाल

पश्चिम बंगाल के बजट के अनुसार जो कि रा विधान सभा में प्रस्तुत किया गया है, १९५८-५९ लिए आमदनी ६१.९८ करोड़ रु० का अनुमान है, जब वर्तमान वर्ष के लिए संशोधित अनुमान ६९.६४ करोड़ लगाया गया था। कुल व्यय ७२.६९ करोड़ अनुमान है, जबकि ७२.६४ करोड़ का संशोधित अनु लगाया गया था। इससे स्पष्ट है कि आमदनी में ३ करोड़ रु० का घाटा रहेगा। पूंजीगत व्यय २१.८० क का अनुमान है, जबकि ३३.३५ करोड़ का संशोधित मान लगाया गया था। फिर भी २.७ करोड़ रु० की रहेगी। इस प्रकार पूरा घाटा १.७६ करोड़ रु० का है। के प्रस्तावों के अनुसार कोई नये कर नहीं लगेंगे।

—

महत्वपूर्ण अम्बर चरखा

श्री आर० के० बजाज

पिछले कुछ समय से भारत के औद्योगिक एवं राष्ट्रीय क्षेत्र में अम्बर चरखे ने क्रांति मचा दी है। क्या सरकार क्या नेता गण और क्या अर्थशास्त्री सभी को अम्बर चरखे ने अपनी विशेष उत्पादन क्षमता के कारण आकर्षित कर लिया है।

चरखे का इतिहास

चरखा कातना और कपड़े बुनना अज्ञात काल से भारत का उद्योग रहा है। ब्रिटिश शासन में तो चरखे का नाम ही लुप्त प्राय हो गया। १९१९ में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने इस मृतप्राय उद्योग को ओजस्विनी वाणी दी तथा उन्होंने भारत की जनता को चरखे और खद्दर का पुनीत संदेश देकर नवीन प्राण का संचार किया। फलतः खद्दर राष्ट्रीयता का चिन्ह बन गया। विदेशी वस्त्रों का वाहिष्कार किया जाने लगा, उनकी होली जलाई गई। देश में जगह जगह खादी भंडार व चरखा संघ खुल गये।

किन्तु गांधी जी ने अनुभव किया कि इस चरखे पर निर्भर रहकर एक आदमी अपना जीवन यापन नहीं चला सकता। अतः उनका ध्यान सुधारों की ओर गया। इसी उद्देश्य से इसके सुधार पर भी वे महत्व देने लगे और उन्होंने सुधार करने वाले व्यक्ति को ५००) रुपये का पारितोषिक देने की घोषणा भी करदी। गांधी जी की घोषणा से प्रभावित होकर अनेक व्यक्तियों का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ। सर्वप्रथम राजर्षि पुरुषोत्तम दास जी टंडन ने पुराने चरखे में सुधार कर एक चर्खा प्रस्तुत किया जो "जीवन चरखा" नाम से विख्यात है। श्री काले ने भी एक चरखे का नमूना रक्खा। किन्तु आर्थिक एवं यांत्रिक कारणों के फलस्वरूप कोई भी चरखा गांधी जी की दृष्टि में ठीक नहीं जंचा। सन् १९२९ में अ० भा० कांग्रेस ने १ लाख रुपये के पारितोषिक की घोषणा कर दी। महाराष्ट्र के किलोस्कर बन्धु ने भी एक नया चरखा बनाया। जापान के कुछ व्यक्तियों ने भी गांधी जी के पास कुछ नमूने भेजे। किन्तु कोई भी गांधी जी को दृष्टि में उपयुक्त नहीं बैठा। अन्त में १९४९ में तामिलनाड़ के एकाम्बरनाथ नामक व्यक्ति इस कार्यमें सफल हुए। उन्होंने प्राचीन चरखे में सुधार कर दो तकुवे वाला चरखा खोज निकाला जो उत्पादन की क्षमता अधिक रखता था तथा आर्थिक दृष्टि से भी उपयुक्त था। श्री एकाम्बरनाथ को उनकी सफलता पर पारितोषिक प्रदान किया गया। किन्तु प्रयोग एवं सुधार का यह क्रम रुका नहीं और १९५४ में बंगाल के श्री नंदलाल ने इसी चरखे में सुधार कर दो तकवे की जगह चार तकवे लगाने की व्यवस्था कर दी।

आविष्कारक श्री एकम्बर नाथ के नाम से इस चरखे

विभिन्न राज्योंमें अम्बर चर्खे पर कार्य करने वाले प्रति व्यक्ति की मासिक आय।

राज्य	प्रति माह आय रुपयों में	राज्य	प्रति माह आय रुपयों में
१. आंध्र	२५	२. आसाम	२३
३. उड़ीसा	२५	४. उत्तरप्रदेश	३२
५. केरल	२२	६. दिल्ली	३५
७. पंजाब	३३	८. बंगाल पश्चिमी	३०
९. बम्बई	३३	१०. बिहार	२३
११. मद्रास	४२	१२. मध्य प्रदेश	२९
१३. मैसूर	३२	१४. राजस्थान	३२

दैनिक औसत समय ७ घन्टा और रविवार को विश्राम।

का नामकरण किया गया है । श्री एकाम्बरनाथ का तामिलनाड़ प्रान्त के तिरूचिरापली जिले में अम्बासमुद्रम तहसील के पायान-कुलम गांव में जन्म हुआ था । एक दिन चरखा कातते समय इन्हें ख्याल आया कि क्या इस चर्खे से ज्यादा सूत नहीं काता जा सकता ? उन्होंने समीप के सूती मिल से रिंग ट्रैवलरस आदि पुर्जे मंगाकर चर्खे पर बैठाकर प्रयोग किया । इससे उन्हें चरखे की कार्यक्षमता में महान परिवर्तन प्रतीत हुवा । प्रयोग करते करते उन्होंने पूनी बनाने की बेलनी भी खोज निकाली । और अन्त में जिस अम्बर चरखे को आज देख रहे हैं वह सब उनकी खोज का ही परिणाम है । अम्बर चर्खा मुख्य रूप से तीन भागों में विभाजित हैः—(१) धुनिया मोदिया (२) बेलनी (३) चरखा ।

एक अम्बर चर्खे को बनाने में लगभग १००) रु० खर्च आते हैं । इस चरखे के द्वारा १२ से ४० अंक तक का सूत तैयार किया जा सकता है, यदि एक साधारण व्यक्ति आठ घंटे प्रतिदिन इस चर्खे पर काम करे तो वह कम से कम १२ आने तो अवश्य कमा सकता है । एक अम्बर चर्खा १८ इंच चौड़ा लम्बा १६ इंच और १२ इंच ऊंचा होता है, इसका वजन २६ पौण्ड के आस पास है । इस प्रकार यह एक रेडियो या टाइपराटर की तरह है । मुख्य रूप से इसके निर्माण में लकड़ी का प्रयोग होता है, किन्तु कुछ भाग रबर और लोहे के भी बनाने पड़ते हैं ।

अम्बर चर्खा जांच पड़ताल कमेटी

मार्च १९५६ में सरकार ने अम्बर चरखा की कार्य प्रणाली, उत्पादन व कार्यक्षमता आदि की जांच पड़ताल करने के हेतु एक कमेटी की नियुक्ति की । कमेटी ने देश के विभिन्न भागों का दौरा किया और सम्पूर्ण जानकारी के आधार पर २५ मई १९५६ को सरकार को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर दी ।

सरकारी सहायता

राष्ट्रीय सरकार ने समिति की करीब करीब सभी सिफारिशों को स्वीकार कर अम्बर चरखे को अपनी विकास सम्बन्धी योजनाओं में सर्वोच्च स्थान प्रदान किया है । १९५६-५७ में ७४,००० अम्बर चरखे चालू करने की स्वीकृति दे दी । इस कार्य को करने हेतु १७० लाख रुपये का अनुदान व २११ लाख रुपया ऋण देने का निश्चय किया । सरकार ने मिलों से बने वस्त्र पर एक पैसा प्रति गज कर लगा कर, एक कोष की स्थापना की है, जिसका उपयोग अम्बर चरखे की उन्नति में किया जा रहा है। सरकार उत्पादकों को बिकने वाली खादी पर ३ आने प्रति रुपया सहायता भी देने लगी है, ताकि ग्राहकों को कपड़ा सस्ता मिले । इसके अलावा सरकारी अधिकारियों को प्रेरित किया जा रहा है कि वे यथा संभव सरकारी कामों के लिये अम्बर चरखे द्वारा बना वस्त्र ही काम में लायें। पर्दों, तौलियों, गद्दियों व चद्दरों आदि के वास्ते खादी खरीदने के लिये तो स्वयं राष्ट्रपति ने भी सिफारिश की है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना तक २७ करोड़ रुपये की सहायता देने का अनुमान है । प्रशिक्षण प्राप्त व्यक्तियों को अम्बर चरखे खरीदने के लिये आधा मूल्य भी सरकार द्वारा दिया जाता है ।

खेतिहर मजदूरों की बेकारी मिटाने के लिये अम्बर चरखा राम बाण यंत्र होगा, इसमें किंचित मात्र भी सन्देह नहीं है । भारत के अधिकांश व्यक्तियों का मुख्य धंधा कृषि ही है, किन्तु हमारे यहां वर्षा का मौसमी होना, अनिश्चित होना, अनियमित होना व असमान होने से खेती केवल ३-४ महीने ही होती है । शेष समय में अधिकांश कृषक या तो फालतू बैठे रहते या नौकरी के लिये मारे मारे फिरते हैं । अम्बर चरखे के प्रादुर्भाव से यह समस्या हल हो सकती है ।

करवे कमेटी ने भी बेकारी की समस्या की भीषणता को देखते हुए सूत कातने की मिलों को खोलने के बजाय अम्बर चरखे को अपनाने के पक्ष में अपनी राय दी थी। कानूनगो कमेटी ने सूती मिलों में ३६ करोड़ रुपया लगाकर ५८००० आदमियों को रोजगार देने की सिफारिश की थी, किन्तु करवे कमेटी का कहना है कि मिलों में ५०० करोड़ गज से अधिक कपड़ा पैदा करने पर पाबन्दी लगादी जावे और १६ करोड़ रुपया लगाकर ही इतने अम्बर चरखे तैयार कर सकते हैं, जिससे सूत की यह आवश्यकता पूर्ण हो जायगी और इससे ५८००० की बजाय ३५ लाख अधिक व्यक्तियों को रोजगार मिलेगा ।

आर्थिक एवं सामाजिक महत्व

(१) अम्बर चर्खा अन्य ग्रामोद्योगों के लिये भी वरदान स्वरूप है। अम्बर चरखे से बढ़ई व लोहार को धन्धा मिलेगा तथा बुनकरों को रोजगार मिलेगा, छपाई व रंगाई का कार्य भी बढ़ेगा।

(२) अम्बर चरखे से विकेन्द्रीकरण की समस्या काफी हद तक सुलझ जावेगी। आज भारत में कुछ ऐसे भाग हैं जहां कि कारखानों व उद्योगधंधों का जाल सा छाया हुवा है, तो कुछ भाग ऐसे हैं जहां कि कारखानों का नाम निशान ही नहीं है। स्थान स्थान पर अम्बर परिश्रमालय खोलकर विकेन्द्रीकरण किया जा सकेगा।

अम्बर चरखा समाजवादी समाज की स्थापना में भी महत्पूर्ण योग प्रदान करेगा, क्योंकि इस से ग्रामीण जनता का पैसा उनके पास ही रहेगा तथा मिलों के वस्त्र का प्रयोग भी घट जायगा, जिससे पूंजीपतियों को कम मुनाफा होगा। यह लाभ का पैसा ग्रामीणों के पास ही रहेगा।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना व अम्बर चरखा

अखिल भारतीय खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड नामक संस्था ने अम्बर चरखे के विकास हेतु एक योजना प्रस्तुत की थी, जिसे योजना आयोग ने स्वीकार कर लिया है और द्वितीय पंचवर्षीय योजना में उसे पूर्ण करने का निश्चय किया है। इस योजना के अंतर्गत १९६०-६१ तक २५ लाख अम्बर चरखों को चालू करने का विचार है। जिस से ४१२५ लाख पौंड सूत तैयार किया जावेगा। इसके अंतर्गत कई हजारों की संख्या में परिश्रमालय व विद्यालय खोलने का आयोजन किया गया है। निम्नलिखित सारणी से अम्बर चर्खे का वार्षिक उत्पादन, आवश्यकता एवं अन्य आवश्यक जानकारी हो जावेगी:—

	१९५६-५७	५७-५८	६०-६१
	(लाख में)		
वार्षिक उत्पादन	२०.६	६१.९	४१२.५
प्रतिवर्ष चरखों की आवश्यकता	१.२५	२.५०	८.७५
कुल काम में आने वाले चरखे	१.२५	३.७५	२५.००
प्रतिवर्ष वस्त्र उत्पादन	७५	२२५	१५००
प्रतिवर्ष खादी का उत्पादन	७५	२२५	२२५
प्रतिवर्ष खादी के लिये सूत की आवश्यकता	१८.७५	५६.२५	५६.२५
हाथकर्घों के वितरण हेतु उपलब्ध सूत	१.८५	५.६५	३५६.१५

कुछ कठिनाइया

अम्बर चरखे के प्रयोग से कुछ व्यावहारिक कठिनाइयां भी प्रकाश में आई हैं, किन्तु उन्हें हल करने का प्रयत्न किया जा रहा है।

——

अल्प बचत का महत्व

अल्प बचत योजना एक अत्यन्त प्रशंसनीय योजना है जिसे अधिकतम जन सहयोग मिलना चाहिए, इससे दो उद्देश्यों की पूर्ति होती है। एक तो इसके द्वारा व्यक्तिगत मितव्ययता, सुरक्षा एवं समृद्धि को प्रोत्साहन मिलता है तथा दूसरी ओर यह राष्ट्रीय समृद्धि के लक्ष्य को पूरा करने में प्रत्येक नागरिक को अपना अंश दान देने के योग्य बनाती है।

"राष्ट्र की सहायता कर आप अपनी स्वयं की भी सहायता कीजिये" यही अल्प बचत योजना का सार है। प्रथम पंचवर्षीय योजनावधि में ये योजनायें अत्यधिक लोकप्रिय हुई हैं और इनकी लोकप्रियता से प्रोत्साहित होकर, द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इसके लक्ष्य की राशि बढ़ा दी गई है। हमें यह स्मरण रखना चाहिये कि अल्प बचत योजना के अन्तर्गत जमा किये गये हमारे प्रत्येक १०० रु० का $\frac{२}{३}$ भाग अर्थात् ३६ प्रतिशत प्रत्यक्ष रूप में हमें लाभान्वित करता है और द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत हमारे हिस्से के कार्य को कार्यान्वित करने में हमें सहायता पहुँचाता है।

जब हमें प्रगति करनी है और जीवन स्तर उन्नत करना है, तब राष्ट्रीय साधनों को अल्प बचत योजना द्वारा स्वैच्छिक सहयोग ही आसान तरीका है, जिसके द्वारा हममें से हर एक राष्ट्रीय कल्याण में वृद्धि करने के लिये अपने हिस्से का कार्य कर सकता है।

—कैलाशनाथ काटजू, मुख्यमंत्री मध्यप्रदेश

उत्तरप्रदेश का हाथकरघा उद्योग

श्री ए० पी० दीक्षित

घरेलू उद्योगों की उत्पादन-क्षमता ने विगत महायुद्ध में अत्यधिक सहायता पहुँचाई है। जब बड़े संगठित कारखाने अपनी पूरी क्षमता से काम करके भी देश की मांग की पूर्ति करने में असमर्थ हो गये थे, तब घरेलू उद्योगों के दस्तकारों को युद्ध के प्रयासों में योग देने और साथ ही साथ जन-साधारण की आवश्यकताओं को पूरी करने के लिए आमंत्रित किया गया था। युद्धकाल की नियंत्रित और राशन की अर्थव्यवस्था से थोड़े समय के लिए ग्रामोद्योग पनपे, किन्तु युद्ध की समाप्ति के बाद जब मिलों का वस्त्र जन-साधारण के उपभोग के लिये बाजार में पहुँचा तो बुनकरों पर आफत आ गई। इस संकट ने इतना गम्भीर रूप धारण किया कि सरकार को होड़ बचाने के लिये दोनों के उत्पादन का बटवारा करना पड़ा। कुछ अर्से तक इस कदम से बुनकरों को काफी राहत मिली, किन्तु सभी जगह यह अनुभव किया गया कि इस संकट पर काबू पाने और उद्योग को उन्नत बनाने के लिये शीघ्र दूसरे आवश्यक कदम उठाने जरूरी हैं। इस चीज को ध्यान में रखकर भारत सरकार ने मिल उत्पादन पर और कर लगाकर एक कोष की स्थापना की और इस कोष के बुनकरों के हित में उपयोग को सुनिश्चित बनाने के लिये सन् १९५३ में अखिल भारतीय खादी बोर्ड की स्थापना हुई। उत्तर प्रदेश में अखिल भारतीय खादी बोर्ड की नीति और आदेशों का पालन उद्योग विभाग के संचालक द्वारा होता है।

कार्य प्रारम्भ करते हुए स्थिति का एक आम पर्यवेक्षण किया गया, जिससे यह स्पष्ट हुआ कि निर्धन खादी उत्पादकों की प्रमुख कठिनाइयां—पुराने किस्म के औजार, शीघ्र परिवर्तनशील-उत्पादन प्रणाली और उपभोक्ता की पसन्द उपयुक्त ढंग के सूत, रंग एवं दूसरे आवश्यक रासायनिक पदार्थों का उचित मूल्य पर अप्राप्य होना और कपड़े में अन्तिम चमक लाने की सुविधा और आवश्यक धन का अभाव आदि हैं।

२,५०,००० रजिस्टर्ड करघों को आवश्यक सुविधायें प्रदान करना, जिससे कि वर्ष भर में २० करोड़ गज कपड़ा और दस लाख लोगों को राज्यमें काम मिलता है, बहुत बड़ा काम है। इसके लिये साधारण पैमाने पर भी सहायता के लिए बहुत बड़े धन और साधनों की आवश्यकता है। बुनकर की कर्ज लेने की क्षमता में वृद्धि के उद्देश्य से और साथ ही साथ उनमें सहकारिता की भावना उत्पन्न करने के लिये और इस प्रकार उनमें आत्मनिर्भरता बढ़ाने के लिये पूंजी निधि के अंश को बिना सूद कर्ज देकर बढ़ावा दिया गया।

प्रति सूती करघे पर ३०० रु० तक और प्रति रेशमी करघे पर ५०० रु० तक सहकारी समितियों से कर्ज भी प्राप्त हो सकता है।

सुधरे हुए औजार

सुधरे औजारों के लिये भी उदारतापूर्वक अनुदान दिया गया है—जैसे "पिट लूम्स" को अधिक कारगर "फ्रेम लूम्स" में बदलना, हाथ द्वारा संचालित करघों को यंत्र संचालित करघों में बदलना आदि। इन औजारों की एकमुश्त खरीद का प्रबन्ध हो गया है।

औद्योगिक सहकारी बैंक

औद्योगिक सहकारी बैंक की स्थापना में उत्तर प्रदेश सर्वप्रथम है, जिससे कि साधारणतया औद्योगिक कारीगर संगठनों और विशेषतया बुनकरों को कर्ज की सुविधायें प्राप्त होती हैं। इस बैंक ने काम करने के प्रारम्भिक दो वर्षों में २८ लाख रु० कर्ज दिया है।

नई डिजाइन और नमूना

उत्पादन का स्तर ऊंचा करने के लिये अमरोहा, रामपुर गाजीपुर, मऊ और टांडा में, जहां पर बुनकर अधिक हैं, नमूना बनाने के केन्द्र स्थापित किये गये हैं। इन केन्द्रों का प्रमुख कर्तव्य व्यावसायिक उन्नति के लिये नये नमूने तैयार करना और बुनकरों को नई और पेचीदा डिजाइन बनाने में शिक्षित करना है। रामपुर में एक डिजाइन अन्वेषण केन्द्र भी खोला गया है। ३१ दिसम्बर १९५७ तक इन केन्द्रों ने १०८ नये नमूने व्यावसायिक उन्नति के लिये निकाले हैं

और लगभग १.५ लाख रुपये की कीमत का ४०,००० गज कपड़ा बनाया है।

हथकरघे के माल के विरुद्ध यह सच्ची आम शिकायत रही है कि इसका रंग कच्चा होता है। इस शिकायत को धीरे-धीरे दूर करने की कोशिश की जा रही है।

केन्द्रीय स्थानों में सूतों को रंगने की आम-सुविधा भी दी जा रही है। केन्द्रीय स्थानों में ६३ रंगाई घर स्थापित किये गये हैं। सन् १९५७ के ३१ दिसम्बर तक इन रंगाई घरों में १.५ लाख पौंड सूत रंगा गया है।

सहकारी सूत कातने की मिल

सूती मिलों से किफायत दर में समय पर सूत की सुविधा प्राप्त न होने के कारण इस व्यवसाय की उन्नति में बाधा बहुत समय से आ रही है। इसलिये राज्य हथकरघा बोर्ड ने सन् १९५६ में कम से कम सिर्फ इसी व्यवसाय के लिए एक सूत कातने के मिल को स्थापित करने का सुझाव रखा है, इसके लिये एक योजना बनाई गई है, कुछ कोष भी एकत्र कर लिया गया है और आशा है कि शीघ्र ही इस प्रकार की एक मिल स्थापित की जायेगी।

बिक्री केन्द्र

हथकरघे के माल की खरीद बिक्री के लिये उपयुक्त बाजार की आवश्यकता एक दूसरी कठिन समस्या थी। बाजार सुविधा को प्रोत्साहित करने के लिये सहकारिता के आधार पर बुनकरों की समिति के द्वारा संचालित बिक्री केन्द्रों को स्थापित किया गया है। बिक्री के खर्च का एक अंश तीन वर्षों तक हथकरघा बोर्ड सहायता के रूप में देगा। इस समय में ऐसे १५० बिक्री केन्द्र विभिन्न समितियों के अन्दर देश भर में कार्य कर रहे हैं। इस वर्ष के तीन तिमाही में इन बिक्री केन्द्रों से २३.७६ लाख रुपये का माल बिका है।

बाजार की सुविधा प्रदान करने तथा मिल एवं हथकरघे के माल की क़ीमत में अन्तर घटाने के लिये प्रमाणिक थोक बिक्री तथा इन समितियों द्वारा संचालित भण्डारों में खुदरा बिक्री पर भी सहायता के रूप में छूट दी जाती है।

बारीक उत्तम प्रकार के कपड़े के उत्पादन और नई डिजाइनों तथा उन्नत प्रकार के यंत्रों के आविष्कार के लिये बुनकरों तथा दूसरे शिल्पियों को प्रोत्साहित करने तथा उनमें प्रतियोगिता की भावना को लाने के लिए विभिन्न प्रकार की प्रतियोगिताओं को आयोजित करने और पुरस्कारों को देने की व्यवस्था की गई है। इस प्रकार के यन्त्रों और नई वस्तुओं के प्रचार और प्रदर्शन के लिये कानपुर में एक संग्रहालय स्थापित किया गया है। समय-समय पर विभिन्न स्थानों में प्रदर्शनियों को भी आयोजित किया जाता है जहां पर हथकरघे के कपड़ों को प्रदर्शित किया जाता है और बेचा जाता है।

दस वर्ष पहले निराश होकर जो बुनकर रोजी के लिये बाहर जाता था, आज वह इन सुविधाओं की वजह से फिर लौट कर अपने पेशे में आ रहा है। अधिकांश कारीगर किसी न किसी सहकारी समिति के सदस्य बन रहे हैं। युद्ध के समय की सूत बांटने वाली समितियां—जो युद्ध के बाद के वर्षों में शिथिल पड़ गयी थीं—पुनः कार्यशील हो रही हैं। सन् १९५७ के अन्त में राज्य भर में बुनकरों की सहकारी-समितियों की संख्या १,०८३ थी, जिनमें १,०५,७१० सदस्य थे। उत्पादन और बिक्री की सहकारी समितियों की संख्या ३८७ थी। इन सबों ने सन् १९५७ के नौ महीनों में ४ करोड़ रु० की कीमत का ४.८२ करोड़ गज कपड़ा तैयार किया।

सूती और दूसरी औद्योगिक समितियों के कार्यों को संगठित करने के लिए उत्तर प्रदेश औद्योगिक सहकारी संस्था को संगठित किया गया है। इसका मुख्य कार्यालय कानपुर में है। यह संस्था ४६६ सदस्य समितियों को आर्थिक सहायता देती है। यह उनके लिए आवश्यक कच्चे माल के खरीदने में भी सहायता देती है तथा उनके तैयार माल की बिक्री करने में मदद देती है। इसके लिए इसकी ओर से राज्य भर में ११ बिक्री केन्द्र हैं। सन् १९५७ के पिछले नौ महीनों में इस संस्था ने १४,७४,५६५ रु० का माल बेचा है।

हथकरघे के पुनरुज्जीवन की दिशाओं में बहुत कुछ किया गया है, फिर भी बहुत कुछ करना अभी बाकी है। आशाप्रद फल की प्राप्ति उज्ज्वल भविष्य की द्योतक है।

—

मध्यप्रदेश का हाथ-करघा उद्योग

श्री तख्तमल जैन

देश की मिश्रित अर्थ-व्यवस्था में कृषि के बाद हाथ करघा उद्योग का ही स्थान है तथा इससे एक करोड़ बुनकरों को रोजगार प्राप्त होता है, जो भारत के कुल कपड़ा उत्पादन का २५ प्रतिशत कपड़ा उत्पादित करते हैं। राष्ट्र के आर्थिक विकास में इस उद्योग का योगदान अत्यधिक महत्वपूर्ण है। हाथ करघा उद्योग से हमें ऐसे सुन्दर वस्त्र मिलते हैं जो विश्व में अपनी सानी नहीं रखते और ये हमारे लिये बहुत विदेशी विनिमय भी प्राप्त करते हैं। विदेशी मुद्रा-सम्बन्धी हमारी वर्तमान कठिनाइयों के संदर्भ में मुझे आशा है कि हाथ करघा मंडल निर्यात में उल्लेखनीय वद्धि कर सकेगा।

मध्य प्रदेश में लगभग ५००,००० बुनकर हैं २१५ बुनकर सहकारी समितियों का, जिनकी सदस्य संख्या ४१००० है, निर्माण करके हमने उल्लेखनीय प्रगति की हैं। ये समितियां कुछ सर्वोत्तम प्रकार के वस्त्रों का निर्माण कर रही है। इन समितियों की आवश्यकता की पूर्ति के लिये २८ रंगाई घर तथा ६२ बिक्री केन्द्र है। इस मास बुनकर समाज को मध्य प्रदेश सरकार द्वारा उज्जैन में स्थापित होने वाले रंगाई, रंग उड़ाने तथा क्लफ करने के कारखाने के रूप में एक बहुत बड़ी सुविधा दी जा रही है। बुनकर लोग इस सुविधा का पूर्ण उपयोग करेंगे। इस सुविधा से उन्हें उन्नत तांत्रिक प्रक्रिया का सहयोग प्राप्त होगा, जिससे उनके उत्पादनों की बिक्री और अधिक बढ़ेगी। निकट भविष्य में बुनकरों के लिये राज्य द्वारा बस्तियां बसाने, डिजाइन केन्द्र खोलने तथा एक कताई घर खोलने जैसी महत्वपूर्ण योजनाएं हाथ में ली जावेगी।

मध्यप्रदेश इस उद्योग में पीछे नहीं है। चन्देरी, महेश्वर और बुरहानपुर इसके प्रमाण हैं। लगभग ५ लाख बुनकर १ लाख १० हजार करघे चलाते हैं और अनुमानतः ११ करोड़ गज वस्त्र प्रत्येक वर्ष उत्पादित करते हैं। चंदेरी महेश्वर, बुरहानपुर के अलावा हाथ करघा वस्त्र का व्यवसाय बिलासपुर, रायपुर, जबलपुर, दुर्ग, उज्जैन शाजापुर, सारंगपुर, टीकमगढ़, पन्ना, भोपाल, सीहोर और आष्टा आदि स्थानों पर भी पर्याप्त मात्रा में होता है। राज्य के आदिवासी क्षेत्रों में भी, जैसे धार, झाबुआ, नीमाड़ और बस्तर आदि स्थानों पर, आदिवासी लोग करघों पर कपड़ा बुनकर अपनी आवश्यकताएं पूरी कर लेते हैं। सारंगपुर, शाजापुर, जबलपुर, बिलासपुर आदि को छोड़कर अधिकांश स्थानों पर मोटा कपड़ा, जैसे दरी, कालीन, चादर, कोसा सिल्क, गमछा, दो सूती पाल, निवार आदि बुने जाते हैं, जिनकी खपत स्थानीय बाजारों में ही हो जाती है। इस व्यवसाय के इतना व्यापक होने पर भी आज बुनकर अधिकांशतः गरीब ही हैं और अभी तक वे पुराने और मन्द गति से चलने वाले करघों एवं सज्जा का ही उपयोग कर रहे हैं। इसीलिए नई सहकारी समितियों, शिक्षा केन्द्रों व सहायता केन्द्रों का जाल मध्यप्रदेश में बिछाया जा रहा है।

खादी का ५०० गज लम्बा थान

राजस्थान के बुनकरों ने ३ गज चौड़ी खादी का ५०० गज लम्बा थान बुनकर तैयार किया है। यह थान बम्बई के खादी ग्रामोद्योग भवन में रखा जायगा। आज तक देश में हथकरघे पर इतना लम्बा थान कभी नहीं बुना गया। इसकी लम्बाई का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि इस कपड़े को संसद भवन के चारों ओर लपेटा जा सकता है।

पिछले साल अमरीका ने खादी ग्रामोद्योग आयोग को कई लाख गज खादी का आर्डर दिया था। साथ ही उन्होंने यह शर्त रखी थी कि कोई थान १०० गज से छोटा न हो। बुनकरों ने इतना लम्बा थान कभी नहीं बुना था इसलिए उन्हें कपड़ा नहीं भेजा जा सका।

यह थान सफी मोहम्मद ने १२ से १४ घण्टे काम करके एक महीने के अन्दर ही बुनकर तैयार किया।

२ रु० प्रति गज के हिसाब से इस खादी के थान का मूल्य १,००० रु० है। इसका भार १ मन १३ सेर है।

दिसम्बर १९५७ म साम्यवादी विश्व

वर्ष जिसमें साम्यवादी व्यवस्था आई	देश जिसमें साम्यवादी व्यवस्था आई	देश की आबादी लगभग	विवरण
१९१७	रूस	१९ करोड़ ३० लाख	प्रथम विश्व युद्ध काल में
१९२४	आउटर मंगोलिया	१० लाख	रूस की तरह का जनवादी गणतन्त्र
१९५४	पोलैंड	२ करोड़ ५० लाख	द्वितीय विश्व युद्ध के बाद
,,	रूमानिया	१ करोड़ ७० लाख	,,
,,	चेकोस्लोवाकिया	१ करोड़ ५० लाख	,,
,,	हंगरी	१ करोड़	,,
,,	बलगेरिया	७५ लाख	,,
,,	अलबेनिया	१२ लाख	,,
,,	यूगोस्लाविया	१ करोड़ ७० लाख	,,
,,	पूर्वी जर्मनी	१ करोड़ ७५ लाख	,,
१९४८	उत्तरी कोरिया	९० लाख	,,
१९४९	चीन (मंचूरिया, इनर मंगोलियासिंकियांग और तिब्बत सहित)	५० करोड़	चीन में राष्ट्रवादी दलों के बीच गृह युद्ध के फलस्वरूप
१९५४	वियतमिन	१ करोड़ ५० लाख	फ्रांसीसी उपनिवेशवाद के विरुद्ध युद्ध के फलस्वरूप
१९५६	केरल (भारत)	१ करोड़ ३६ लाख	स्वतन्त्र निर्वाचन द्वारा

पश्चिमी साम्राज्यवाद से मुक्त देश

दिसम्बर (१९५७)

किस देश का साम्राज्य (१)	कौन से देश मुक्त हुए (२)	किस सन में (३)	विशेष (४)
ब्रिटेन	ईराक	१९३२	
	जोर्डन	१९४६	
	भारत	१९४७	
	पाकिस्तान	१९४७	भारत को विभाजित करके नया राष्ट्र बनाया गया।
	इजराइल	१९४८	फिलस्तीन विभाजित होकर नया राष्ट्र बना
	बर्मा	१९४८	
	लंका	१९४८	
	मिस्र	१९५२, १९२२ एवं १९३६	में आंशिक स्वतंत्रता मिल चुकी थी
	सूडान	१९५५	
	घना	१९५७	पूर्व नाम गोल्ड कोस्ट
	मलाया	१९५७	
अमेरिका	फिलस्तीन	१९४६	
फ्रांस	हिन्दचीन	१९५४	
	चंद्रनगर (भारत)	१९५२	
	पांडिचेरी		
	कारिकल		
	माही (भारत)	१९५४	
	फ्रैंच मोरक्को	१९५६	
	ट्यूनीसिया	१९५५	
हालैण्ड (डच)	हिन्देशिया	१९४९	
इटली	अबीसीनिया	१९४१	नया नाम ऐथिओपिया
	इरीट्रिया	१९५२	एथिओपिया में संबद्ध
	लीबिया		

भारत का जहाजी व्यापार

सिं० स्टी० नेविगेशन कं० का विवरण

सिंधिया स्टीम नेविगेशन कं० लि० के वार्षिक अधिवेशन में श्री धरमसी एम. खताऊ ने निम्न आशय का भाषण दिया :—

चालू वर्ष के प्रथम ६ महीनों में (दिसम्बर १९५७ के अन्त तक) सिंधिया स्टीम नेवीगेशन कम्पनी का जो कार्य रहा है, उससे यही लगता है कि १९५७-५८ वर्ष में कम्पनी के कार्यपरिणाम संतोषजनक रहेंगे। बन्दरगाहों के कार्य में सुधार हो जाने से कम्पनी को यह भरोसा है कि उसके जहाज अधिक यात्रा कर सकेंगे, क्योंकि वह नए और तेज चलने वाले जहाजों को काम में ले रही है। कम्पनी का यह भी भरोसा है कि तहोम जहाजरानी से भी उसकी आय बढ़ेगी। किन्तु बर्मा से चावल लाने का जो भाड़ा कम्पनी को मिल रहा है, वह बहुत कम है और इसका कुछ असर कम्पनी के १९५८-५९ के कार्य-परिणामों पर पड़ेगा।

भारत और रूस के बीच कम्पनी ने जो जहाज सर्विस गत वर्ष शुरू की थी, उसमें खर्च की कुछ दिक्कतें उठ रही हैं, इस कारण कम्पनी ने सरकार से भाड़े में वृद्धि कर देने की मांग की है। यातायात मंत्री जो प्रयत्न कर रहे हैं उनकी वजह से जहाज कम्पनियों को शायद निकट भविष्य में जहाज खरीदने के लिए विदेशी मुद्रा मिल जाय। ऐसे समय में जबकि जहाज कुछ सस्ते उपलब्ध हो रहे हैं और भाड़ा-ऊंचा है, तब नए जहाजों की खरीद बहुत लाभदायक होगी। कम्पनी के पास इस समय ४४ जहाज हैं और दो जहाज एक आगामी माह और दूसरा जून में उसे विशाखापटनम् से मिलने वाले हैं। दो तेज जहाज एक १९५९ और दूसरा १९६० में कम्पनी को ल्यूबक यार्ड से मिलेंगे।

समुद्रपारीय व्यापार

व्यवसाय में नये और गतिमान जहाजों के योग द्वारा यह आशा की जाती थी कि हमारी उठान में भी क्रमशः बढ़ती होगी। किन्तु दुर्भाग्य से स्वेज नहर के बन्द हो जाने के कारण हमारे यात्रा मार्ग लम्बे हो गए और उसके परिणामस्वरूप हमारा उठान करीब ५ प्रतिशत ही बढ़ा।

नेशनल यूनियन ऑफ सी मैन के द्वारा वेतन वृद्धि व कुछेक अन्य सुविधाओं के लिए की गई मांग को देखते हुए

श्री धरमसी खताऊ

१० प्रतिशत वेतन वृद्धि व कुछेक सुविधाएं स्वीकार की गई थीं और उसका खर्च करीब ५ लाख रुपए देना पड़ेगा।

जहाज मालिकों को कुछेक भारतीय बन्दरगाहों पर पर्याप्त विलम्ब हुआ करता था, जिसका कारण केवल मानसून की स्थिति न होकर फर्टिलाइजर, खाद्यान्नों, लोहा तथा स्टील और दूसरे प्लान कारगोज का लगातार आयात था। यह आशा की जाती है कि विभिन्न बन्दरगाहों पर काम का रिकार्ड जो हाल ही में स्थापित हुआ है, लगातार रखा जा सकेगा।

वर्तमान वर्ष के लिये आशायें

बन्दरगाहों पर काम के सुधार द्वारा हमारा काम काज उन्नत हुआ है तथा नये और गतिमान जहाजों को सर्विस

(शेष पृष्ठ १७८ पर)

सन् १९५८-५९ का रेल्वे-बजट

गत १७ फरवरी को लोकसभा में रेल मंत्री, श्री जगजीवनराम ने १९५८-५९ वर्ष का रेलवे-बजट पेश किया। इसके अनुसार बजट-वर्ष में यातायात से कुल आय का अनुमान ४०७ करोड़ ४८ लाख रु० है, चालू वर्ष का संशोधित अनुमान ३८४ करोड़ ४० लाख रु० है। आगामी वर्ष में २७ करोड़ ३४ लाख रु० शुद्ध बचत होने का अनुमान है, जबकि चालू साल का संशोधित अनुमान कुल २१ करोड़ ६६ लाख रु० है।

रेलवे मंत्री के भाषण के कुछ उल्लेखनीय अंश निम्नलिखित हैं—

१९५७-५८ का संशोधित अनुमान

रेलों पर यातायात बढ़ जाने के कारण अनुमान है कि चालू वर्ष में माल यातायात से आमदनी बढ़कर २३१ करोड़ रु० हो जायगी, जो बजट के अनुमान से ४ करोड़ ५० लाख रु० अधिक है। यात्रियों के यातायात से आय भी बढ़कर १२० करोड़ ९० लाख रु० हो जाएगी, जबकि अनुमान ११९ करोड़ रु० का था। यातायात के और मदों से भी ३५ लाख अधिक आय होने का अनुमान है। इस प्रकार चालू वर्ष में यातायात से कुल आय ३८४ करोड़ ४० लाख रु० होने का अनुमान है।
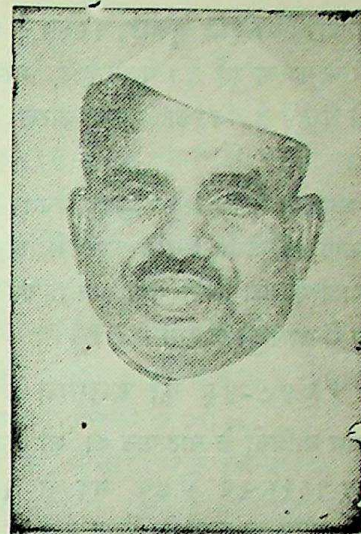
श्री जगजीवन राम

परन्तु, आमदनी में यदि ६ करोड़ ५० लाख रु० की वृद्धि होती है तो इसके मुकाबले साधारण संचालन व्यय में भी १५ करोड़ ३१ लाख की वृद्धि का अनुमान

रेलवे बजट एक दृष्टि में

करोड़ रुपयों में

	वास्तविक १९५६-५७	संशोधित अनुमान १९५७-५८	बजट अनुमान १९५८-५९
यातायात से कुल प्राप्ति	३४७.५७	३८४.४०	४०७.४८
कार्य चालन व्यय	२३३.९४	२५९.१६	२६८.३५
शुद्ध विविध व्यय	९.९२	१४.०१६	१६.९९
मूल्य ह्रास आरक्षित निधि के लिये विनिमय	४५.००	४५.००	४५.००
चालित (वर्कड) लाइनों को भुगतान	.३३	.३३	.२२
जोड़	२८९ १९	३१८.५०	३३०.५६
शुद्ध रेलवे राजस्व	५८.३८	६५.९०	७६.९२
सामान्य राजस्व को लाभांश	३८.१६	४४.२४	४९.५८
शुद्ध बचत	२०.२२	२१.६६	२७.३४

है। इसमें से ४ करोड़ ५० लाख अर्थात् वृद्धि का २१ प्रतिशत केवल मंहगाई भत्ते में ५ रु० महीने की अन्तरिम वृद्धि के कारण हुआ है, जो १ जुलाई, १९५७ से दी जा रही है। इसकी सिफारिश वेतन कमीशन ने की थी। खर्च में करीब १॥ करोड़ की वृद्धि जुलाई, १९५७ से कोयले का दाम बढ़ जाने के कारण हुई है। बाकी वृद्धि मरम्मत और देखभाल खाते में हुई है, जिसका मुख्य कारण मूल्यों का बढ़ जाना है।

अस्तु, अनुमान है कि अब शुद्ध बचत केवल २१ करोड़ ६६ लाख रु० होगी, जबकि बजट में अनुमान ३० करोड़ ८३ लाख रु० का किया गया था। यह सब रकम विकास निधि में डाल दी जाएगी।

१९५८-५९ का अनुमान

इस समय यात्रियों के यातायात का जो रुख है, उसे देखते हुए सन् १९५८-५९ में इस मद से १२४ करोड़ ७३ लाख रु० आय का अनुमान किया गया है, जो चालू वर्ष के संशोधित अनुमान से ३ करोड़ ८३ लाख रु० अधिक है। पारसल आदि अन्य यातायात से होने वाली आय का अनुमान २४ करोड़ ६५ लाख रु० है। माल की ढुलाई से २५० करोड़ ५० लाख रु० आय का अनुमान है। अनुमान है कि आने वाले वर्ष में रेलों को १ करोड़ २० लाख टन अधिक भार वहन करना पड़ेगा। इस्पात कारखानों के विस्तार और कोयले की ढुलाई में वृद्धि के कारण रेलों की ढुलाई में यह वृद्धि होगी। इस प्रकार अगले साल यातायात से कुल आय ४०७ करोड़ ४८ लाख रु० होने का अनुमान है।

बजट-वर्ष में २६८ करोड़ ३५ लाख रु० साधारण संचालन व्यय होने का अनुमान है, जो चालू वर्ष के संशोधित अनुमान से ६ करोड़ १९ लाख रु० अधिक है। इसमें से करीब ४ करोड़ ४० लाख रु० पूरे साल तक महंगाई का अधिक भत्ता देने के कारण तथा वार्षिक तरक्की और कर्मचारियों की संख्या बढ़ने के कारण होगी। मरम्मत खर्च भी २ करोड़ ५० लाख रु० अधिक होगा। शेष वृद्धि कोयला तथा अन्य ईंधन की मद में होगी।

अगले साल रेलों को आय से चालू लाइन के निर्माण पर ३। करोड़ रु० अधिक खर्च किया जायगा और साथ ही पूंजी से भी निर्माण कार्य पर अधिक खर्च होगा। इससे साधारण राजस्व में रेलों को ५ करोड़ रु० और लाभांश देना पड़ेगा। इन सबको बाद करके बजट-वर्ष में २७ करोड़ ३४ लाख रु० बचत होने का अनुमान है, जो सबका सब विकास निधि में जमा कर दिया जायगा।

चालू वर्ष में जितने निर्माण-कार्य शुरू किये गये थे, सब पर जोरों पर काम चल रहा है और इन सब पर करीब १॥ लाख मजदूर काम कर रहे हैं। इन कामों में विशेष उल्लेखनीय ५२ मील लम्बी भिलाई-डल्ली-रजहरा लाइन है, जो भिलाई के इस्पात कारखाने में कच्ची धातु पहुँचाने के लिए एक सीजन में ही बना दी गयी। इसके अलावा १४० मील नयी लाइनें चालू की गयीं और १३ मील दोहरी लाइन बिछाई गयी। करीब ५०० मील नयी लाइन बिछाई जा रही है। ८०० मील दोहरी लाइन बिछाई जा रही है। इसमें से ३८५ मील दक्षिण-पूर्व, ११५ मील दक्षिण, १३५ मील पश्चिम, १०० मील उत्तर और ४५ मील मध्य रेल की है। मोकामा में गंगा-पुल बनाने का काम चालू है। कुछ मशीनें और गाड़ी आदि जिनका आर्डर दिया गया था, समय के पहले ही उपलब्ध हो जाएंगी, इसलिए मशीन, गाड़ी आदि चल-स्टाक की मद पर अब २३५ करोड़ रु० खर्च होने का अनुमान है, जो बजट से करीब १७ करोड़ अधिक है।

अगले साल निर्माण का कार्यक्रम

अगले साल, मशीन, चल-स्टाक और निर्माण आदि के लिए २६० करोड़ रु० रखे गये हैं। दो नयी लाइनें बनाने का कार्यक्रम है। एक उत्तर रेलवे में, १०० मील लम्बी राबर्टगंज-गढ़वा लाइन होगी, जिस पर १७ करोड़ रु० खर्च होगा और दूसरी, पूर्व रेलवे में ४० मील लम्बी मूरी-रांची लाइन है, जिस पर ५ करोड़ ९० लाख रु० खर्च होगा: राउरकेला कारखाने के लिए बड़ाबिल-पाम्पोश दर्रे पर साइडिंग बनायी जाएगी, जिस पर १ करोड़ १७ लाख रु० खर्च होगा। अन्य उल्लेखनीय कार्य ये हैं: दक्षिण-पूर्व रेलवे में दुर्ग से कामटी तक ६८ मील दोहरी लाइन-खर्च ७ करोड़ ८० लाख रु०, विजयानगरम-गोपालपट्टनम सेक्शन पर दोहरी लाइन—खर्च ३ करोड़ ८० लाख रु० और

(शेष पृष्ठ १७४ पर)

१९५६-५७ में रेलवे

द्वितीय पंचवर्षीय आयोजनाके प्रथम वर्ष १९५६-५७ की रेल मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट १४ फरवरी को प्रकाशित हुई है। इससे पता चलता है कि इस वर्ष माल और यात्रियों के यातायात में भारतीय रेलों ने नये रिकार्ड कायम किये।

आलोच्य वर्ष, दूसरी पंचवर्षीय आयोजना का पहला साल है। १९५५-५६ के मुकाबले, जो आयोजना का आखिरी वर्ष था, १९५६-५७ में सरकारी रेलों में माल का यातायात १० प्रतिशत, अर्थात् ११ करोड़ ४० लाख टन से बढ़कर १२ करोड़ ५० लाख टन हुआ।

प्रस्तुत वर्षमें वास्तविक खर्च १७९ करोड़ ९ लाख रु० हुआ। स्मरण रहे कि आयोजना में रेलों के लिए कुल १,१२५ करोड़ रु० निर्धारित है। इसमें से एक तिहाई रेलों को अपने पास से खर्च करना है, २२५ करोड़ रु० रेलों के घिसाई-कोष से और १५० करोड़ रु० रेलों की आय से। बाकी ७५० करोड़ रु० साधारण राजस्व से आवेगा।

माल के यातायात में पिछले साल का रिकार्ड तोड़ दिया गया। इस वर्ष १२ करोड़ ५० लाख टन माल ढोया गया और टन मीलों की संख्या ४० अरब २२ करोड़ ५० लाख रही, जबकि पिछले वर्ष का रिकार्ड ११ करोड़ ५० लाख टन और ३६ अरब ४७ करोड़ २० लाख टन मील (संशोधित) था।

यात्रा आरम्भ करने वालों की संख्या सन् १९५५-५६ में १ अरब २९ करोड़ ७० लाख यात्रियों से बढ़कर, १९५६-५७ में १ अरब ३८ करोड़ ३० लाख हो गई। यात्री—मीलों की संख्या ३९ अरब ८ करोड़ ३० लाख से बढ़कर ४२ अरब १९ करोड़ ४० लाख हो गई।

बड़ी लाइन पर प्रतिदिन औसत १२,१६८ माल के डिब्बे और छोटी लाइन पर ७,८१९ डिब्बे माल की लदाई के लिए उठे। पिछले साल का औसत ११,३७४ और ७,२६३ था। यदि इसके साथ रेल की अपनी ढुलाई की संख्या भी शामिल कर दी जाए, तो माल डिब्बों की प्रतिदिन ढुलाई का औसत बड़ी लाइन पर १४,२७५ और छोटी लाइन पर ८,६७० हो जाता है। पिछले साल का औसत १३,४०७ और ८,०२६ था।

रेलों में लगी कुल पूंजी

३१ मार्च १९५७ को सब रेलों में कुल १२ अरब ४६ करोड़ ४० लाख रु० की पूंजी लगी हुई थी। इसमें से १२ अरब ३९ करोड़ ८८ लाख रु० सरकारी रेलों की पूंजी लगी हुई थी। इसमें पूंजी (ऋण खान)—१० अरब ७१ करोड़ ७१ लाख, घिसाई कोष में—४९ करोड़ ४२ लाख, विकास निधि—७५ करोड़ ५४ लाख और रेल-राजस्व—४३ करोड़ २१ लाख रु० थी। ६ करोड़ ५२ लाख रु० की बाकी रकम विभिन्न कम्पनियों और स्थानीय बोर्डों को लाइनों में लगी हुई थी।

वर्ष के अन्त में सारे देश में रेल-लाइनों की लम्बाई ३४,७४४ मील थी। इनमें से ३४,२९१ मील सरकारी रेलों की थी और बाकी ४५३ मील लाइन गैर-सरकारी रेलों की।

कार्यकुशलता

सन् १९५६-५७ में रेलों की कार्यकुशलता बढ़ने का प्रमाण टन मीलों की सूचक संख्या में वृद्धि से मिलता है, जो बड़ी लाइन पर पिछले साल ५४१ टन मील प्रति वैगन दिन से बढ़कर इस वर्ष ५७० और छोटी लाइन पर पिछले साल के २०३ से बढ़कर २१० हो गई। वैगनों को अधिक से अधिक लादने और चलाने का जो प्रयत्न किया गया, उसी का यह फल है।

इस वर्ष यात्री ट्रेन मील की संख्या भी बढ़कर ११ करोड़ ८७ लाख ५० हजार मील हो गई। माल ट्रेन मीलों की संख्या भी बढ़कर ८ करोड़ ६६ लाख ४० हजार हो गई। बड़ी लाइन पर प्रत्येक वैगन प्रतिदिन औसत ४७.७ मील और छोटी लाइन पर २८.७ मील चला, जबकि १९५५-५६- में ४६.३ और २८.५ मील चला था।

आय और व्यय

आलोच्य वर्ष में सरकारी रेलों की यातायात से कुल

आय ३४७ करोड़ ४७ लाख रु० हुई। इसमें ११६ करोड़ ३३ लाख यात्रियों के यातायात से और २०३ करोड़ ६१ लाख रु० माल की ढुलाई से हुई। बाकी २७ करोड़ २८ लाख पार्सल सामान और फुटकर मदों से हुई।

१९५६-५७ में साधारण संचालन व्यय २३३ करोड़ ६४ लाख रु० हुआ, जो पिछले साल से २० करोड़ ६६ लाख रु० अधिक है। घिसाई-कोष में ४५ करोड़ ६३ लाख रु० डाले गये। इसमें ६३ लाख रु० चित्तरंजन इंजन कारखाने और इंटिगरल कोच कारखाने की मशीनों की घिसाई के खाते के हैं। सब खर्च और भुगतान बाद कर देने के बाद, शुद्ध आय ५८ करोड़ ३८ लाख रु० रही। इसमें से ३८ करोड़ १६ लाख रु० सामान्य राजस्व में लाभांश के रूप में दिया गया। इस प्रकार, आलोच्य वर्ष में शुद्ध लाभ २० करोड़ २२ लाख रु० हुआ, जो विकास-निधि में डाल दिया गया।

रेलों की आय और काम में वृद्धि का सम्बन्ध देश की आर्थिक उन्नति से है। इस वर्ष खेती की उपज में थोड़ी वृद्धि हुई। कुल ६ करोड़ ८६ लाख टन अन्न पैदा हुआ। यह पिछले वर्ष की उपज से ३४ लाख टन अधिक है। तिलहन, कपास, गन्ना और पटसन आदि व्यापारिक फसलों की उपज बढ़ी।

पिछले कई वर्ष औद्योगिक उत्पादन बढ़ रहा है। इस वर्ष भी बढ़ती जारी रही। अधिकांश उद्योगों में, विशेषकर चीनी, सीमेंट, इंजीनियरी, मोटर गाड़ी और साइकिल कारखानों का उत्पादन बढ़ा। कोयले के उत्पादन में काफी वृद्धि हुई और वह ३ करोड़ ८५ लाख टन से बढ़कर ४ करोड़ ३ लाख टन हो गया।

यात्रियों को सुविधाएं

स्टेशनों और गाडियों और माल लदाने वालों की सुविधा पर विशेष ध्यान दिया जाता रहा।

इस बर्ष १३०१ नये सवारी डिब्बे चलाये गये, जिनमें से ५६५ डिब्बे बड़ी लाइन के, ७०४ मीटर लाइन के और ३२ छोटी लाइन के थे। इनमें से ६१० नये सुधरे किस्म के डिब्बे निचले दर्जे के यात्रियों के लिए हैं।

इस वर्ष तीसरे दर्जे के १३०६ डिब्बों में बिजली के पंखे लगाये गये। यात्रियों को अन्य भी सुविधाएं दी गईं।

बर्मा द्वारा कोयले में आत्मनिर्भरता का प्रयत्न

बर्मा एक कृषि-प्रधान देश है। यहां के चावल और सागौन का विश्व के व्यापार में प्रमुख स्थान है और बर्मा की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ता प्रदान करते हैं। इनके अतिरिक्त बर्मा में अनेक खनिज पदार्थ तेल, चांदी, सीसा टीन और टंगस्टन भी अच्छी मात्रा में उपलब्ध होते हैं। सीसे की विश्व भर में सबसे अधिक खानें बर्मा में ही हैं, बर्मा में कोयला और लोहा भी मिलता है, लेकिन इस क्षेत्र में विशेष प्रगति नहीं हुई है।

कोयला और कोक की उपलब्धि के लिये बर्मा को पूर्णतः भारत पर निर्भर रहना पड़ता है। १९५६ में बर्मा को भारत से २,५०,९९१ टन कोयला भेजा गया है, और १९५५ में इसकी मात्रा १,९९,४३२ टन थी। बर्मा सरकार ने विदेशी विनिमय की बचत के लिए खानों के सुधार का कार्यक्रम आरम्भ कर दिया है। प्रारम्भिक रूप में खनिज पदार्थों की उन्नति के लिये एक कार्पोरेशन बनाया गया था। १९५३ और १९५४ के बीच प्राविधिक सहयोग सहायता (टी० सी० ए०) के अंतर्गत एक अमेरिकी फर्म के सहयोग से चिन्दविन नदी के किनारे की कालेवा की खानों में कोयले की खुदाई के कार्य सम्बन्धी सर्वेक्षण किया गया था। साथ ही बर्मियों को अमेरिकी फर्मों में प्रशिक्षण दिया गया। इसका फल यह हुआ कि जनवरी १९५६ से कालेवा की खानों से ५० टन प्रति दिन के हिसाब से कोयला निकलने लगा। इन खानों से बर्मा की २० वर्ष की आवश्यकता तक के लिये पर्याप्त कोयला निकल सकता है।

अब एक ब्रिटिश फर्म ४ वर्षीय कार्यक्रम (१९६० में समाप्ति) के अनुसार कालेवा कोयला खानों के विकास में संलग्न है। कार्यक्रम के अनुसार कोयले के क्षेत्र में पूरा नगर बसाना भी है। बर्मा सरकार ने इस फर्म को दूसरे वित्तीय वर्ष तक अपने कार्यक्रम का पूरा विवरण दे देने का अनुरोध किया है।

बर्मा में "मेसोजोहक" से "टरटिअरी" तक के कई प्रकार का कोयला प्राप्त हो सकता है। 'टरटीअरी' किस्म का कोयला विशेष महत्वपूर्ण है और यह लिगनाइट के प्रकार का होता है। कालेवा में मिलने वाला कोयला बारीक (कोल डस्ट) किस्म का है। रंगून के विद्युत कारखानों के लिए उपयुक्त सिद्ध हो चुका है तथा रेलें भी उसे भारतीय कोयले के साथ मिला कर प्रयोग में लाती हैं। अभी-अभी संयुक्त राष्ट्रीय प्राविधिक सहायता कार्यक्रम (यू० ए० टी० ए० ए०) के अनुसार एक रूसी प्राविधिक दल बर्मा सरकार को कलेवा खानों के मितव्ययतापूर्ण उपयोग के सम्बन्ध में सलाह देने के लिए बर्मा आया है। इन्जिनों में इस कोयले का उपयोग किस प्रकार हो, इसके सम्बन्ध में भी मंत्रणा ली जा रही है।

कालेवा के कोयले का महत्व इस बात पर निर्भर करता है कि उसकी उत्पादन लागत कितनी रहती है। निकट भविष्य में भारत से कोयले का आयात बन्द कर देने के प्रयत्न किये जा रहे हैं। वैसे बर्मा में आर्थिक विकास और बिजली के कारखानों के लिये कोयले की मांग निरन्तर बढ़ती जायेगी।

आर्थिक समृद्धि में अमेरिकन सहयोग

प्रेसिडेण्ट आइजन हौवर ने १३ जनवरी को कांग्रेस के नाम अपने बजट सन्देश में सब मिला कर कुल ७२ अरब ५० करोड़ डालर की रकम की स्वीकृति देने का अनुरोध किया है।

स्वतन्त्र विश्व के व्यापार तथा आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए प्रैसिडैंण्ट आइजन हौवर ने प्रार्थना की है कि अमेरिका के निर्यात-आयात बैंक की ऋण देने की क्षमता में २ अरब डालर का विस्तार कर दिया जाए। १९५९ में विकास ऋण कोष के लिए ६२ करोड़ ५० लाख डालर तथा १९५९ के अमेरिकी टैक्निकल सहायता कार्यक्रम को क्रियान्वित करने और संयुक्त राष्ट्रसंघ के टैक्निकल सहायता कार्यक्रम को अमेरिकी सहयोग देने के लिए १६ करोड़ ४० लाख डालर की एक राशि की स्वीकृति प्रदान करने की मांग की है। दूसरे देशों की खास संकटकालीन मांगों को पूरा करने के निमित्त २० करोड़ डालर के संकटकालिक कोष की स्थापना की भी सिफारिश की है।

अनुसन्धान और विकास सम्बन्धी खर्च २ अरब २५ करोड़ ६० लाख डालर का होगा। १९५५ की तुलना में इसमें ५० प्रतिशत की वृद्धि हो गई है। अणुशक्ति सम्बन्धी कार्यक्रम के विस्तार के लिए प्रैसिडेण्ट ने कांग्रेस से २ अरब ५५ करोड़ डालर की रकम मांगी है। चालू वर्ष से यह मांग २५ करोड़ डालर अधिक है।

विज्ञान, अनुसन्धान, पुस्तकालय और संग्रहालय की अभिवृद्धि के कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रैसिडेण्ट ने वैज्ञानिक अनुसन्धान को प्रोत्साहित करने के लिए ११ करोड़ ६० लाख डालर की रकम मांगी है तथा शिक्षा के विस्तार के लिए ४६ करोड़ ३० लाख डालर की रकम मांगी गई है।

भारत को सहायता

गत मास १६ जनवरी, भारत को दिए जाने वाले नए अमेरिकी ऋण की घोषणा की गई है। यह नया ऋण लगभग २२॥ करोड़ डालर अर्थात् ११२ करोड़ रु० का होगा। इस ऋण को मिला कर स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारत को दी गई कुल अमेरिकी सहायता-राशि लगभग १ अरब २७ करोड़ ५० लाख डालर अथवा ६०६ करोड़ रु० तक पहुँच गई है।

इस कुल राशि में से १ अरब १८ करोड़ ८० लाख डालर अथवा ५६५ करोड़ रु० की रकम तो अमेरिकी सरकारी कोष से भारत को प्राप्त हुई है तथा शेष राशि गैर-सरकारी साधनों, जैसे प्रतिष्ठान तथा धार्मिक, दानी अथवा शिक्षा सम्बन्धी संस्थाओं से प्राप्त हुई हैं।

१९५६ में हुए कृषि-सामग्री सम्बन्धी समझौते को छोड़कर घोषित किया गया नया ऋण भारत को दी गई अमेरिकी सहायता की सबसे बड़ी रकम है। कृषि-सामग्री सम्बन्धी समझौते के अन्तर्गत भारत को बिना डालर खर्च किए ही ३६ करोड़ डालर मूल्य का गेहूँ, चावल तथा अन्य कृषि-सामग्री मिल रही है। भारत में इन वस्तुओं की बिक्री से रुपये के रूप में जो रकम प्राप्त होगी, उसमें से २८ करोड़ ८० लाख डालर की रुपयों के रूप में प्राप्त हुई रकम भारत सरकार को अमेरिका की ओर से ऋण और अनुदानों के रूप में प्रदान कर दी जाएगी।

अब तक भारत को मिली अमेरिकी सहायता का कुल ब्योरा निम्न है :

	करोड़ डालर में
अमेरिकी आयात-निर्यात बैंक तथा विकास ऋण-कोष	२२.५०
भारत-अमेरिकी टैक्निकल कार्यक्रम के अन्तर्गत टैक्निकल और आर्थिक सहायता	४०.११
१९५१ का गेहूँ-ऋण	१९.००
१९५६ का कृषि-सामग्री सम्बन्धी समझौता	२८.८०
१९५१ का मोटे अनाज सम्बन्धी समझौता	१.२०
अन्य विविध	७.१४
कुल योग	११८.८५ करोड़ डालर

गैर सरकारी साधनों से प्राप्त सहायता का योग ८७२ लाख डालर है।

भारत सरकार ने अमेरिका से मिलने वाली आर्थिक सहायता के बारे में विस्तृत रूप से चर्चा करने के लिए एक प्रतिनिधि मंडल वाशिंगटन भेजने की घोषणा की है।

(शेष पृष्ठ १७२ पर)

नया सामयिक साहित्य

आधुनिक परिवहन—ले० श्री डा० शिवध्यानसिंह चौहान, प्रकाशक—लक्ष्मीनारायण अग्रवाल। १८+२२/४ पृष्ठ संख्या ४६० । मूल्य ६.७५ नये पैसे सजिल्द।

सम्पदा के पाठक प्रस्तुत पुस्तक के लेखक से परिचित हैं। उन्होंने दो वर्ष पूर्व यह पुस्तक लिखी थी। जल्दी ही इसका दूसरा संस्करण प्रकाशित होना इस बात का सूचक है कि अब हिन्दी में भी उत्कृष्ट अर्थशास्त्रीय साहित्य पढ़ा जाने लगा है।

किसी भी देश के आर्थिक विकास में परिवहन के साधनों व स्थल, जल और वायु द्वारा यातायात के विकास का असाधारण महत्व रखता है। भारत को विदेशी शासन के जो दुष्परिणाम भोगने पड़े, उनमें से एक यह था कि उस के जल व वायु यातायात का विकास नहीं हुआ। केवल रेलवे जाल बिछाया गया और यह भी विदेशी व्यापार के या सैनिक आवश्यकता को सामने रख कर। नहरी मार्ग के सरल और सस्ते यातायात की विशेष रूप से उपेक्षा की गई। समुद्री व्यापार पर भी विदेशी कम्पनियों का एकाधिकार था। आज औद्योगिक विकास करते हुए यातायात की कठिनाइयां अत्यन्त विकट रूप में सामने आ रही हैं। प्रस्तुत पुस्तक में लेखक ने स्थल, जल और वायु यातायात का इतिहास देते हुए उसकी वर्तमान योजनाओं व समस्याओं पर प्रकाश डाला है। रेलवे स्थल परिवहन का सर्व प्रधान अंग है। इसलिए उस पर १४ अध्याय दिये गये हैं, जिनमें इतिहास के अतिरिक्त पुनर्वर्गीकरण, प्रबन्ध, रेलभाड़ा नीति और रेलवे व्यय आदि पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है। पुनर्वर्गीकरण की कठोर आलोचना की गई है। इस का विशेष रूप से उल्लेख हम इसलिए आवश्यक समझते हैं कि आजकल अर्थशास्त्र के विद्वान् सरकार की आलोचना करने में संकोच करते हैं। किन्तु इस प्रकरण में से पुनर्वर्गीकरण में इन संशोधनों का उल्लेख करना लेखक संभवतः भूल गये हैं, जो १ अगस्त १९५५ को किये गये हैं। स[ड़]क यातायात के राष्ट्रीयकरण की आलोचना भी लेखक के स्वतंत्र चिन्तन का परिचय देती है।

आजकल देश की नई आवश्यकताओं के कारण ट्रकों, बसों के बढ़ते हुए युगमें हम ग्रामोद्योगों के महत्व को भूल रहे हैं। आजकल बैलगाड़ियों का स्थान ट्रक ले रहे हैं और बैलों पर किसानों का खर्च यथापूर्व होते हुए भी उनका उपयोग कम हो रहा है। इसी तरह शहरों में तांगों का प्रचलन निरन्तर कम हो रहा है और पैट्रोल व डीजल प्रधान गाड़ियों के कारण हम विदेशों पर निर्भर होते जा रहे हैं, इस समस्या पर अभी अर्थशास्त्रियों ने—गांधीवादी नेताओं ने भी कम विचार किया है। इस पुस्तक में यदि इस प्रश्न पर कुछ निश्चित दृष्टि दी जाती तो अच्छा होता।

आंतरिक जल परिवहन की नई योजना का परिचय देना लेखक नहीं भूला है। जहाजी उद्योग का इतिहास बहुत जानकारी पूर्ण है और आज की समस्याओं पर अच्छा प्रकाश डालता है। विमान परिवहन का प्रकरण भी आधुनिक जानकारी से पूर्ण है।

लेखक व प्रकाशक इस पुस्तक के लिए हिन्दी जगत् की ओर से बधाई के पात्र हैं।

★

इन्टरमीडियेट बैंकिंग—ले० श्री लालताप्रसाद अग्रवाल एम० काम०। प्रकाशक—इण्डस्ट्रियल एण्ड कमर्शल सर्विस, ६६ हीवेट रोड, अलाहाबाद—३ पृष्ठ संख्या ५००, आकार २२+१८/८। मूल्य ५)।

प्रस्तुत पुस्तक अर्थशास्त्र के इण्टरमीडियेट विद्यार्थियों के लिए लिखी गई है। अर्थशास्त्र में बैंकिंग का विषय अत्यन्त शुष्क तथा अरोचक माना जाता है। लेखक ने प्रयत्न किया है कि बैंक-शास्त्र के शुष्क विषय को सरल व सुविधाशैली में समझावे।

प्रस्तुत पुस्तक के वस्तुतः दो भाग हैं। पहले दस अध्यायों में बैंक शास्त्र के नियमों का सैद्धान्तिक परिचय दिया गया है। मुद्रा की उत्पत्ति, मुद्रा, कागजी मुद्रा, मुद्रा के मान, ग्रीशम का नियम, मुद्रा का मूल्य- साख व बैंक और खास पत्र आदि इस भाग के अन्तर्गत आते हैं। आवश्यक पारिभाषिक शब्दों में अंग्रेजी पर्याय साथ साथ

दे दिये गये हैं, इससे उन पाठकों को भी सुविधा हो जायेगी, जो इस पुस्तक के हिन्दी पारिभाषिक शब्दों से बहुत परिचित नहीं हैं।

पुस्तक का दूसरा भाग भारतीय बैंकिंग से सम्बन्ध रखता है। भारतीय बैंकिंग का इतिहास, देशी साहूकार सहकारी तथ्य विभिन्न प्रकार के बैंक, औद्योगिक अर्थ व्यवस्था, डाकघर सेविंग बैंक, विनिमय बैंक, केन्द्रीय बैंक, स्टेट बैंक और रिजर्व बैंक, भारत में बैंकिंग विधान, मुद्रा बाजार, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष तथा बैंक आदि सभी ज्ञातव्य विषयों का समावेश इस भाग में है। ये अध्याय केवल विद्यार्थियों के लिए ही उपयोगी नहीं हैं, सामान्य शिक्षित वर्ग भी इस से लाभ उठा सकता है। इन प्रकरणों में मुद्रास्फीति या मुद्रा प्रसार की विशेष प्रकार की चर्चा की गई है, जिसका सामान्य जनजीवन पर विशेष प्रभाव पड़ता है। पौण्ड पावना, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा प्रसार, ब्रिटिश साम्राज्य डालर निधि, रुपये का अवमूल्यन, मैनेजिंग एजंसी (गुण व दोष), औद्योगिक वित्त निगम, औद्योगिक विकास और विदेशी पूंजी आदि ऐसे विषय हैं, जिनमें आज का शिक्षित वर्ग रुचि लेता है। इन विषयों का ज्ञान आज के पत्रकारों को भी होना चाहिए, तभी वे देश के इन महत्वपूर्ण प्रश्नों पर पाठकों को जानकारी दे सकेंगे। लेखक ने प्रयत्न किया है कि प्रत्येक विवादास्पद प्रश्न पर दोनों पक्ष दे, ताकि पाठक स्वयं ही मत निर्धारण कर सके।

पुस्तक सामान्यतः विद्यार्थियों के लिए लिखी गई है। उनकी सुविधा के लिए संक्षिप्त निर्देश तथा प्रश्नावलि भी प्रत्येक प्रकरण के साथ दी गई है। छपाई सफाई अच्छी है।

★

वाणिज्य प्रणाली—(१—२ भाग) लेखक और प्रकाशक वही। मूल्य प्रत्येक भाग २।।) रु०।

अर्थ शास्त्र के अनुभवी अध्यापक ने ये दोनों भाग हायर सैकण्डरी व इन्टर कक्षाओं के लिए लिखे हैं। वे विद्यार्थियों की योग्यता व आवश्यकता से भली भांति परिचित हैं। इसलिए उन्होंने प्रयत्न किया है कि प्रतिपादन शैली सुबोध हो और अरोचक न होने पावे। विक्रय के साधन, क्रय विक्रय, सौदे की गतिविधिके अतिरिक्त व्यापार के लिए उपयोगी अन्य सामग्री—बैंक, चैक, हुण्डी, डाक विभाग की सेवाएं, दफ्तरी कार्य की आवश्यक जानकारी आदि सभी देने का प्रयत्न किया गया है, तो दूसरे भागमें व्यापारिक संगठन की विस्तृत रूपेण चर्चा है। कम्पनी कैसे खड़ी की जाती है, नया कम्पनी कानून क्या है, इसमें मैनेजिंग एजेंसी की नई व्यवस्था क्या है, विदेशी व्यापार कैसे होता है लेनदेन का भुगतान कैसे होता है? यह सब सरल शैली में दिया गया है। दूसरे खण्ड में बाजार समाचार को भी १५० पृष्ठ दिए गए हैं। जिन में पारिभाषिक शब्द स्टाक व शेयर बाजार और मुद्रा बाजार आदि की जानकारी दी गई है। साधारण पाठकों को मुंदड़ा शेयर प्रकरण जानकर बहुत आश्चर्य हुआ था, क्योंकि शेयर बाजार स्टाक एक्सचेंज आदि का अजीब गोरखधन्धा होता है इस प्रकार की पुस्तकों से उसका सामान्य ज्ञान सामान्य शिक्षित वर्ग को भी हो सकता है।

व्यापारिक जगत में प्रचलित शब्दों के अंग्रेजी व हिंदी शब्द देकर उन्हें समझाया गया है। यह खेद की बात है कि इन पारिभाषिक शब्दों का अभी तक अखिल देशीय स्तर पर निर्धारण नहीं हो सका है, किन्तु प्रस्तुत पुस्तक के शब्द कठिन नहीं हैं।

विद्यार्थियों की दृष्टि से इस पुस्तक में आवश्यक परीक्षा सम्बन्धी प्रश्न देकर अधिक उपयोगी बना दिया है।

★

"निबन्ध भारती"—भद्रव्रत, एम० ए०, साहित्य रत्न। प्रकाशकः—भारती पब्लिकेशन्ज, ३ लाज बिल्डिंग रोहतक रोड, नई दिल्ली—५, मूल्य ३)।

प्रस्तुत पुस्तक में अनेक सामाजिक, राजनैतिक आर्थिक, वैज्ञानिक, साहित्यिक एवं जीवन चरित्र सम्बन्धी ४२ निबन्ध लिखे गए हैं। विश्वशांति, भारत सेवक समाज, दशमलव मुद्रा, शिक्षा प्रणाली, गांधीवाद, पंचवर्षीय योजना, स्वतन्त्रता के दस वर्ष, आदि अधिकांश निबन्ध आधुनिक विषयों पर ही लिखे गए हैं। रूस के कृत्रिम उपग्रह तक विषय पर निबन्ध देकर इसे आधुनिकतम रूप दे दिया गया है।

निबन्ध संक्षिप्त होते हुए भी लेखक के अध्ययन और विविध समस्याओं पर विचार क्षमता का परिचय भी

[सम्प

हैं। लेखक के दक्षिण भारतीय होने पर भी हिन्दी पर पूर्ण अधिकार है। शैली मनोरंजक, स्पष्ट एवं प्रभावशाली है। दक्षिण के दो महान सन्त कवि आण्डाल तथा संगीत ब्रह्म श्री त्यागराज का भी हिन्दी पाठकों को परिचय इस संग्रह की अपनी विशेषता है। यह संग्रह कालेजों एवं हायर सेकेन्डरी स्कूलों के विद्यार्थियों की तात्कालिक आवश्यकता को दृष्टि में रखकर प्रस्तुत किया गया हैं। आशा है इससे वे लाभ उठावेंगे। छपाई शुद्ध तथा आकार सुन्दर है।

★

योजना (गणतन्त्र अंक)—सम्पादक श्री मन्मथनाथ गुप्त। प्रकाशक—पब्लिकेशन्स डिविजन, भारत सरकार, ओल्ड सैक्रेटरियट, दिल्ली। मूल्य दस पैसे।

'योजना' भारत सरकार द्वारा योजना के प्रचार के लिए निकाली जाती है। किन्तु इसके सुयोग्य सम्पादक ने केवल सरकारी प्रचार या प्रगति के सरकारी विवरण मात्र से इसका क्षेत्र अधिक व्यापक कर दिया है। देश की विविध आर्थिक और विशेषकर सामाजिक समस्याओं पर चिन्तन तथा मार्ग दर्शन इसकी विशेषता है।

प्रस्तुत अंक में ६ कहानियां, ७ कविताएं तथा १६ लेख हैं। कुछ लेख स्वभावतः योजना सम्बन्धी हैं और सरकारी दृष्टिकोण को प्रकट करते हैं। परन्तु कुछ विचारपूर्ण लेख सामाजिक समस्याओं पर लिखे गये हैं, जिनमें समाजका क्षयरोग जातपांत, आधी जनता आज भी गुलाम, पठनीय है, किन्तु हमें सम्पादक का राशिफल सम्बन्धी लेख बहुत उपयोगी जान पड़ा। आज के प्रतिष्ठित दैनिक व साप्ताहिक पत्र भी शिक्षित जनता को झूठे वहमों में डालने का अपराध कर रहे हैं। इस दुष्प्रवृत्ति के विरुद्ध सम्पादक ने कलम उठाकर प्रशंसनीय कार्य किया है। सामुदायिक विकास सम्बन्धी लेख भी विचारणीय है। यह ठीक है कि कहानियां भी योजना की भावना को लेकर लिखी गई हैं, परन्तु कुछ कम कहानियों से भी काम चल सकता था। योजना सम्बन्धी मानचित्र बहुत अच्छा है। ३२ पृष्ठों के इस विशेषांक का मूल्य केवल प्रचार के लिए दस पैसे-करीब डेढ आना रखा गया है।

★

जागृति (मासिक पत्र) लोक सम्पर्क विभाग पंजाब द्वारा माडल टाउन अम्बाला शहर से प्रकाशित। मूल्य ।)

प्रस्तुत अंक गणतन्त्र दिवस के अवसर पर प्रकाशित किया गया है। इसमें अनेक सुन्दर विचारणीय लेख दिये गये हैं। कविताएं पठनीय तथा कहानियां मनोरंजक हैं, पंजाब की यशोगाथा, संविधान का सामाजिक पहलू और प्रसाद के साहित्य में राष्ट्रीय भावना आदि लेख हैं। पंजाब की प्रगति पर भी परिचयात्मक लेख है। कहानियां जन-सामान्य के निकट सम्पर्क और जन भावना के परिचय को सूचित करती हैं। सम्पादन में प्रयत्न किया गया है। आवरण आकर्षक है और छपाई सफाई अच्छी।

★

'मधुकर' (मासिक)—सम्पादक व प्रकाशक—श्री राजेन्द्र शर्मा २७/२, शक्तिनगर, दिल्ली। वा० मूल्य ६) रु०।

कुछ महीनों से 'मधुकर' नामक पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ है। इसके सम्पादक विजय, सुप्रभात और धर्मयुग आदि पत्रों में काम करके पत्रकारिता का पर्याप्त अनुभव ले चुके हैं। वे पाठकों की रुचि को जानते हैं और पत्र का स्तर ऊंचा रखने में कुशल हैं। सामग्री की विविधता और बहिरंग की दृष्टि से 'मधुकर' हिन्दी में अपना स्थान जल्दी लेगा। बीच में चित्र तथा सुन्दर प्रसंग इसकी एक विशेषता है, जो नवनीत आदि में पाई जाती है।

'अनहद नाद' तथा 'साहित्य चर्चा' नामक स्तम्भ विशेष रोचक तथा उपयोगी हैं। २००) रु० की वर्ग पहेली पाठकों के लिए आकर्षण की वस्तु है।

प्राप्ति स्वीकार

नागरिक शास्त्र के सिद्धान्त : लेखक—श्री राजनारायण गुप्त, प्रकाशक—किताब महल, इलाहाबाद मूल्य ४.०० रु०।

—

इण्डियन मर्चेण्टस चैम्बर

पिछले दिनों इण्डियन मर्चेन्ट्स चेम्बर की बम्बई में स्वर्ण जयन्ती मनाई गई। पं० जवाहरलाल नेहरू ने इसका उद्घाटन किया था। इस संस्था ने देश के आर्थिक विकास में विशेष भाग लिया है। इसकी स्थापना ७ सितम्बर सन् १९०७ को हुई थी, जब देश में राष्ट्रीय जागरण का प्रभात था। बंगभंग के विरोध में स्वदेशी आन्दोलन की धूम थी। १९०६ में पितामह दादाभाई नौरोजी के नेतृत्व में कांग्रेस ने स्वराज्य की मांग रखी थी। और लोकमान्य तिलक ने 'स्वराज्य हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है' का नारा लगाया था। प्रारम्भ में चैम्बर के १०० सदस्य थे, जबकि आज २०७० सदस्य हैं और १२१ संस्थाएं इससे सम्बद्ध हैं। श्री मनमोहनदास रामजी इसके प्रथम अध्यक्ष थे। बम्बई के प्रमुख नेताओं, उद्योगपतियों और व्यापारियों का इसको सहयोग प्राप्त रहा है। इसके अध्यक्षों में सर्वश्री पुरुषोत्तमदास, ठाकुरदास, फजलुल भाई करीमभाई, दिनशा वाचा, लल्लूभाई सांवलदास, फिरोज सी० सेठना, बालचन्द हीराचन्द, जे० सी० सीतलवाद, प्राणलाल देवकरन नानजी, श्री एम० ए० मास्टर, आर० जी० सरैया, मुरार जी जे० वैद्य, नवल एच० टाटा आदि प्रमुख प्रभावशाली व्यक्ति रहे हैं। आज कल श्री गोपालदास कापड़िया इसके अध्यक्ष हैं।

इस चेम्बर को प्रारम्भ में विदेशी उद्योगपतियों के स्वार्थोंसे संघर्ष में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। विदेशी शासन में विदेशी उद्योगपति देशके आर्थिक विकास को सहन नहीं करते थे। सरकार भी स्वदेशी उद्योग और व्यापार के रास्ते में अधिकतम बाधाएं डाल रही थी। उन दिनों स्वदेशी उद्योग की उन्नति के लिए व्यापारिक समाज के प्रमुख नेताओं के नेतृत्व में इस चेम्बर ने व्यापक आन्दोलन किया। इसके प्रयत्नों के परिणाम स्वरूप सार्वजनिक संस्थाओंमें (इम्पीरियल लेजिसलेटिव कौंसिल- प्रान्तीय कौंसिलें और पोर्ट ट्रस्ट आदि) इस चेम्बर को मान्यता मिल गई। विदेशी व्यापारियों को जो जो अनुचित सुविधाएं मिली हुई थीं, उनका विरोध करना बहुत कठिन था। फिर भी इस चेम्बर को निरन्तर प्रयत्न से सफलता प्राप्त होती रही और इसे भारतीय हितों को समुचित प्रतिनिधित्व मिल गया। इस चेम्बर का दूसरा महत्वपूर्ण कार्य बम्बई नगर के आर्थिक और औद्योगिक विकास में सहायता देना रहा है।

विदेशों से भारतीय व्यापार के विस्तार और विकास में इस चेम्बर ने विशेष भाग लिया है। विभिन्न देशों में ट्रेड कमिश्नरों की नियुक्ति में इस चेम्बर का महत्वपूर्ण भाग रहा है। आज ३० विदेशों में भारत सरकार की ओर से व्यापारिक एजेंण्ट नियत हैं।

देश के सामने समय समय पर जो निम्नलिखित विविध आर्थिक समस्याएं आईं, उनके सम्बन्ध में चेम्बर विशेष प्रचार व आन्दोलन करता रहा है—रेलवे का सरकारी या गैर सरकारी प्रबन्ध, रुपए की विनिमय-दर, दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों से दुर्व्यवहार, स्वदेशी उद्योगों को संरक्षण और विदेशी शासन में आर्थिक स्वाधीनता आदि। देश की आर्थिक उन्नति के लिए चैम्बर के निरन्तर प्रयत्नों के कारण ही सरदार पटेल ने कहा था कि "जैसे कांग्रेस ने देश भक्ति का वातावरण तैयार करने के लिए महत्वपूर्ण काम लिया है, उसी तरह चेम्बर ने देश के व्यापार उद्योग के लिए अकथनीय सेवा की है।"

दूसरे महायुद्ध के बाद देश में जो आर्थिक समस्याएं उत्पन्न हो गईं, उन पर चेम्बर ने विशेष ध्यान दिया और अनेक दिशाओं में उसे सफलता प्राप्त हुई। चेम्बर का मुख्य काम राष्ट्र के सामने आने वाली आर्थिक समस्याओं पर प्रकाश डालना रहा है। इसका सूचना विभाग आर्थिक प्रगति व समस्याओं की विशेष जानकारी देता है, व्यापारियों के परस्पर व्यापारिक सम्बन्धों को बढ़ाने और कानूनी कठिनाइयों में सहयोग देता है। यह विभिन्न व्यापारियों में पारस्परिक विवादों के समाधान का भी प्रयत्न करता है। युवकों में व्यापारिक शिक्षण के प्रसार में भी इसका विशेष सहयोग रहा है। एक न योजना के अनुसार व्यापार के संगठन और प्रबन्ध की शिक्षा चेम्बर की ओर से भारतीय युवकों को दी जायेगी। आज देश के सामने जो आर्थिक समस्याएं हैं, उन सब पर न केवल चेम्बर मार्ग प्रदर्शन का प्रयत्न करता है, किन्तु देश की आर्थिक विकास की योजनाओं में सरकार को अनेक उपयोगी सुझाव भी देता है। यह आशा करनी चाहिए कि चेम्बर भविष्य में भी आर्थिक क्षेत्र में देश की निरन्तर सेवा करता रहेगा।

—

फोन : २३१११
तार : 'ग्लोबशिप'
न्यू ग्लोब शिपिंग
सर्विस लिमिटेड
खताऊ बिल्डिंग्स
४४ ओल्ड कस्टम हाउस रोड, फोर्ट बम्बई
सब प्रकार का क्लियरिंग, फारवर्डिंग, शिपिंग
का काम शीघ्र व सुविधापूर्वक
किया जाता है ।
सेक्रेटरी—
श्री बी० आर० अग्रवाल
बी० काम:० एल० एल० बी०
मैनेजिंग डायरेक्टर—
श्री सी. डीडवानिया

नेहरू का समाजवाद दीन इलाही

योजना आयोग ने भूमि-सुधार के सम्बन्ध में जो प्रस्ताव रखा है, वह देश में अधिक अन्न उत्पादन के लिए उपयोगी नहीं है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में २.५०० करोड़ रु० खर्च किए गए थे और द्वितीय योजना में अब तक बांध, नहर आदि पर १.५०० करोड़ तक खर्च हुआ है, लेकिन फिर भी खाद्य अन्नों के उत्पादन में कोई प्रगति नहीं हुई है।

बिदेशों से विवश होकर अधिक मात्रा में खाद्य अन्नों का आयात करना क्या यह सिद्ध नहीं करता कि हमारे अन्न उत्पादन सम्बन्धी आदर्श, सिद्धान्त तथा कार्यक्रम पूर्णरूपेण असफल हुए हैं। जोत के आकार पर प्रतिबन्ध लगाना, जमीन को छिन्न भिन्न करने के समान हैं, जिससे अधिक उत्पादन के बजाय अन्न की और कमी हो जायगी।

इंगलैंड में भी जबकि मजदूर दल सत्तारूढ़ था, उनकी कोई ऐसी नीति न थी कि जिसमें जमीन को छोटे छोटे हिस्सों में बांट दिया गया हो अथवा जमीन के आकार पर कोई प्रतिबन्ध लगा दिया गया हो।

नेहरूजी का समाजवाद अकबर की दीन इलाही के समान है। इस समाजवाद की भी वही दशा होगी, जो 'दीन इलाही' को हुई थी। नेहरू जी की हां में हां मिलाने वाले उनके वे सहयोगी जिन पर वे आज इतना विश्वास करते हैं, सर्व प्रथम कहने वाले होंगे कि 'जब नेहरू जी नहीं हैं तो जाने दो इस नए समाजवाद को भी उनके साथ।'

समाज में सही परिवर्तन लाना कोई आसान काम नहीं है। जब कभी कोई परिवर्तन आया उसके लिए पहले भी सैंकड़ों साल लगे हैं। समाजवाद की आवाज भी बहुत समय से उठ रही है, परन्तु रूस के सिवा और कोई देश इसे कुछ हद तक अमल में नहीं लाया है। हमें चाहिए कि हम प्राचीन परम्परा को सामने रखकर समाजवाद की समस्या पर अच्छी तरह विचार करें यह नारे तो सदा रहने वाले नहीं हैं।

श्री के० हनुमन्तय्या भूतपूर्व मुख्यमंत्री "मैसूर"

सरकारी संस्थाओं पर नियंत्रण

अब तक देश के विभिन्न उद्योगों में सरकार की जो पूंजी लगी है, वह १,००० करोड़ रु० से भी अधिक है। द्वितीय योजना के अन्त तक यह पूंजी २००० या ३,००० करोड़ तक पहुँच जायगी। यह देश में लगी निजी पूंजी की लागत से भी अधिक है। लेकिन सरकारी संस्थाओं पर इतनी पूंजी लगी है, उसकी जांच पड़ताल के लिए शेयर-होल्डरों के वार्षिक अधिवेशनों की तरह कोई प्रबन्ध नहीं है, जिससे अधिकारी वर्ग के लोगों के लिए जितना चाहे, लूटने का लिए मौका मिल जाता है। पूंजी निर्माण या तत् सम्बन्धी प्रश्नों पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया जाता है। अगर जनता का विश्वास प्राप्त करना है, तो शीघ्रातिशीघ्र इन प्रश्नों को हल करना होगा।

एक यह बात विचारणीय है कि एक भी सरकारी कारखाना (सिन्दरी के सिवाय और वह भी कई वर्षों तक चलने के बाद) मूल्यों की दृष्टि से नफा नहीं कमा रहा है। उनमें तैयार किये गये पदार्थ बहुत महंगे पड़ते हैं, जिनका बोझ नागरिकों पर पड़ता है क्योंकि इनके मुकाबले में और कारखाने नहीं है। इस स्थिति का अंत होना आवश्यक है।

सरकार का औद्योगिक क्षेत्र में स्थान बढ़ता जा रहा है। बहुत से कारखाने सरकार चला रही है, जिनमें से कुछ में निजी संस्थाओं और व्यक्तियों के भी शेयर होते हैं, लेकिन अधिकांश शेयर राष्ट्रपति अथवा विभिन्न मंत्रालयों के अवर सचिवों के नाम से होते हैं और इन्हीं में से कुछ लोग डायरेक्टर बना दिए जाते हैं। सरकारी कर्मचारियों की यह टोली अपने कारोबार की और उसकी अव्यवस्था की कोई जांच नहीं होने देती और यहां तक पार्लियामेंट भी सरकारी उद्योगों की जांच नहीं कर सकती, जबकि साधारण उद्योगों में हिस्सेदारों की सभा में काफी देखभाल और आलोचना हो जाती है। यह ठीक है कि सरकारी कारखाने के दैनिक क्रिया-कलाप में पार्लियामेंट को दखल देने का अधिकार नहीं होना चाहिए, किन्तु नई दिल्ली में एक अधिकारी और कारखाने में उसके दूसरे भाई को लाखों करोड़ों रुपए के कारोबार का निरंकुश अधिकारी नहीं बनने दिया जा सकता।

—श्री लंका सुन्दरम्

१६५७-५८ में भारत : राष्ट्रपति द्वारा सिंहावलोकन

राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद ने संसद बजट-अधिवेशन का उद्घाटन करते हुए जो भाषण दिया, उसके कुछ अंश निम्नलिखित हैं—

उत्पादनमें वृद्धि और घरेलू बचत हमारे लिये अत्यन्त आवश्यक हैं। अधिक उत्पादन से विदेशी विनिमय की हमारी आवश्यकतायें कम रहेंगी और विनिमय के उपार्जन में सहायता मिलेगी।

विदेशी मुद्रा-संबंधी और वित्तीय मामलोंके बारेमें सरकारने अभी तक जो कुछ किया है, उससे हमारी अर्थ-व्यवस्था के स्थायी रहने में मदद मिली है। १९५६ में और १९५७ के आरम्भ में चीजों के दाम ऊंचे चढ़ते जा रहे थे, किन्तु इस कार्यवाही के फलस्वरूप कीमतों का बढ़ना रुक ही नहीं गया, बल्कि गत वर्ष के अंतिम महीनों में उनमें कुछ कमी भी हुई, जो अभी जारी है। हमारे देनदारी के खाते के घाटे में भी काफी कमी हुई है। पिछले साल की अपेक्षा साख-सम्बन्धी स्थिति में भी बहुत सुधार हुआ है, हमारे बैंक-संबंधी साधनों में वृद्धि हुई है और बैंकों द्वारा मंजूर किये गये ऋण भी अन्दाज के अन्दर रहे हैं। सट्टे की प्रवृत्ति को दबाने के उद्देश्य से रिजर्व बैंक स्थिति पर कड़ी दृष्टि रखेगा।

सरकार के पास अनाज का भंडार है और आयात द्वारा इस संचय को उचित स्तर पर स्थिर रखा जायेगा। इसके साथ ही अन्न के परिवहन पर सीमित किन्तु अनिवार्य नियंत्रण भी किया गया है। अनाज के व्यापार के लिये बैंकों द्वारा उधार दिये जाने का भी सरकार ने नियमन किया है ताकि अनुचित संग्रह न किया जा सके। सरकार ने सस्ते अनाज की दूकानों द्वारा बड़े पैमाने पर जनता में अन्न के वितरण की व्यवस्था भी की है। इन उपायों से महंगाई की प्रवृत्ति की काफी रोकथाम हुई है।

खाद्यान्नों की पैदावार बढ़ी

फसलों के खराब हो जाने के बावजूद १९५६-५७ में उत्पादन अधिकतम हुआ है जो १९५३-५४ में हुआ था।
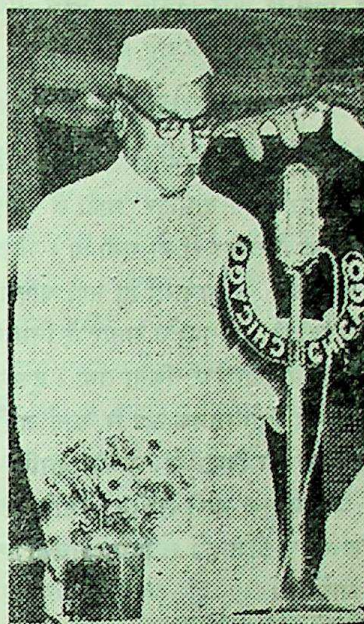
कुल खाद्य उत्पादन ६ करोड़ ८७ लाख टन हुआ जो १९५५-५६ की अपेक्षा ५ प्रतिशत अधिक था। कृषि-उत्पादन की अखिल भारतीय योजना के अनुसार पिछले वर्ष की अपेक्षा इस वर्ष करीब ३ प्रतिशत की वृद्धि हुई। व्यापारी फसलों के उत्पादन में भी महत्वपूर्ण वृद्धि हुई, जो कपास के उत्पादन में १८ प्रतिशत तथा गन्ने और तिलहन के उत्पादन में क्रमशः ६ प्रतिशत रही है।

कोयला व तेल

१९५७ में कोयले का उत्पादन ४ करोड़ ३० लाख टन हुआ, जो उत्पादन की नई सीमा थी, जबकि १९५६ में यह उत्पादन ३ करोड़ ९० लाख टन था।

अभी हाल में आसाम आयल कम्पनी के साथ समझौता किया गया है, जिसके अनुसार कम्पनी स्थापित की जायेगी और इसमें ३३.३ प्रतिशत हिस्सा सरकार का होगा। इस कम्पनी का काम नाहर कटिया के कूपों से तेल का उत्पादन और वहां से तेल का परिवहन होगा। तेल

की सफाई के लिये आसाम और बिहार में दो कारखाने स्थापित होंगे। तेल के लिये देश के दूसरे भागों में भी पूर्वेक्षण और ढूंढ खोज की जा रही है। भारतीय जहाजों के अविलम्ब निर्माण और विकास के लिये एक जहाज-निर्माण कोष की स्थापना की गई है

बांध-योजनाएं

बहुमुखी नदी घाटी योजनाओं के सम्बन्ध में संतोष-जनक प्रगति हो रही है। दामोदर घाटी में माइथान बांध का उद्‌घाटन गत सितम्बर में हो गया था। भाखरा योजना के संबंध में कार्यक्रम के अनुसार ही नहीं बल्कि उससे बढ़ कर प्रगति हो रही है। नागार्जुन सागर में निर्माण का काम गत जुलाई मास में आरम्भ किया गया। दूसरी बहुमुखी योजनाओं पर भी संतोषजनक रूप से कार्य जारी है।

भारी उद्योगों की दिशा में काफी प्रगति हुई है। सार्वजनिक क्षेत्र में एक भारी मशीन बनाने का कारखाना और कई एक अन्य योजनायें सोवियत संघकी सहायता से चालू की जायेंगी।

लोहा ढालने का एक बड़ा कारखाना चैकोस्लोवाकिया के एक सहयोग से स्थापित किया जाएगा। नंगल में वैज्ञानिक खाद का एक बड़ा कारखाना इङ्गलैंड फ्रांस और इटली की आर्थिक सहायता से बन रहा है। नेवेली में भी खाद का एक कारखाना बनाने की योजना है।

बिजली का सामान तैयार करने के लिये एक बड़ा कारखाना ब्रिटिश सहायता से भोपाल में बनाया जायगा। रुरकेला, भिलाई और दुर्गापुर में इस्पात के बड़े कारखानों के निर्माण की दिशा में काफी प्रगति की जा चुकी है।

पिछले वर्ष में आणविक शक्ति विभाग का काफी विस्तार किया गया। दो नये रियेक्टर और कई नये यंत्र इस समय बनाये जा रहे हैं। मौजूदा वर्ष के समाप्त होने तक आणविक शक्ति के लिये और रियेक्टरों के लिये ईंधन के रूप में उपयुक्त युरेनियम धातु का उत्पादन शुरू हो जायगा। द्वितीय पंचवर्षीय योजना के कार्यकाल में एक या अधिक अणु-शक्ति केन्द्र स्थापित करने का सरकार का विचार है।

सामुदायिक विकास तथा राष्ट्रीय विस्तार योजनाओं ने महत्वपूर्ण प्रगति की है। सामुदायिक विकास केन्द्रों की संख्या इस समय २,१५२ है जिनमें २,७६,००० ग्राम आते हैं। इन ग्रामों की जनसंख्या १५ करोड़ है।

कपड़ा और चीनी उद्योग के लिये त्रिदलीय वेतन-बोर्ड स्थापित किये गये हैं। दूसरे बड़े उद्योगों के लिये भी यथासमय ऐसे बोर्ड स्थापित करने का विचार है। फिलहाल कुछ चुने हुए उद्योगधन्धों में ऐसी योजनाएं चालू की गई हैं, जिनमें उद्योगों के संचालन में मजदूर अधिकाधिक भाग ले सकें।

कर्मचारी राज्य बीमा योजना का विस्तार किया जा रहा है और १९५२ के कर्मचारी प्राविडेंट फंड अधिनियम को अब १९ उद्योगों पर लागू कर दिया गया है और इस अधिनियम के अंतर्गत अब ६२१५ कारखाने आ गये हैं। चन्दे की कुल रकम प्रायः १०० करोड़ रुपये जमा हो चुकी है।

—

आंध्र का प्रकाशम बांध

आंध्रप्रदेश में कृष्णा नदी पर प्रकाशम बांध बनकर तैयार हो गया है। इससे १२ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई हो सकेगी और इस पर सड़क का पुल बन जाने से मद्रास और कलकत्ता के बीच सड़क बारहों मास चालू रहेगी। आंध्र प्रदेशके पुराने कृष्णा बांध को सुधार कर अब जो बांध बनाया गया है, उसका नाम आंध्र के सबसे पहले मुख्य मंत्री आंध्र केसरी स्व० श्री प्रकाशम के नाम पर प्रकाशम बांध रखा गया है। पुराने बांध से ११ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई होती थी। अब १ लाख एकड़ और भूमि सींची जा सकेगी। इस बांध पर २ करोड़ ८४ लाख रु० के खर्च का अन्दाजा लगाया गया था। लेकिन यह २ करोड़ ३० लाख रु० में ही और निर्धारित समय से छः महीने पहले बनकर तैयार हो गया है।

यह बांध ३,७३६ फुट लम्बा है और इससे २० फुट गहरा पानी संचित होता है। इसमें ४० फुट चौड़े ७० फाटक हैं जिनमें १२ फुट ऊंची झिलमिलियां हैं, जिनसे बाढ़ के समय पानी का निकास होता है और दोनों ओर बनी नहरों में भी पानी छोड़ा जाता है। बांध पर २४ फुट चौड़ी सड़क बनायी गयी है, जिसके दोनों ओर ५-५ फुट चौड़ी पटरियां पैदल चलने वाले के लिये हैं। इसमें १० हजार टन इस्पात, ५० हजार टन सीमेंट, ७० लाख घन फुट कंकरीट और पत्थर आदि लगे हैं। बांध की नींव में कंकरीट के ६०० कुएं गलाए गये हैं।

---

१५८ गांवों में जापानी ढंग की धान की खेती

उत्तर प्रदेश में जापानी ढंग की धान की खेती लोकप्रिय होती जा रही है। दिसम्बर, १९५७ को समाप्त होने वाली चौथाई अवधि में १५०० गांवों की ३,१४,००० एकड़ भूमि में इस ढंग की खेती प्रचलित हो चुकी है और इस अवधि में ५१,००० प्रदर्शनी की व्यवस्था की गयी है।

खेती के इस ढंग की सफलता उर्वरकों के व्यापक प्रयोग पर निर्भर है। अतएव किसानों को उर्वरकों के लिए ३३ लाख ३१ हजार रुपये के ऋण भी बांटे गये हैं।

गांवों का 'गणतंत्र'

ग्राम-स्वराज्य की मेरी कल्पना यह है कि प्रत्येक गांव सम्पूर्ण गणराज्य होना चाहिए, जो अपनी जीवन-सम्बन्धी आवश्यकताओं के लिए अपने पड़ोसियों से स्वतंत्र हो, फिर भी बहुत-सी बातों में, जिनमें आश्रितता जरूरी है, वे एक-दूसरे पर निर्भर रहें। इस प्रकार प्रत्येक गांव का पहला काम यह होगा कि वह खाने के लिए अपना अनाज और कपड़े के लिए अपनी कपास उगायें। पशुओं के लिए उसका अपना चरागाह होना चाहिए और बालिगों तथा बच्चों के लिए मनोरंजन और खेलकूद के स्थान होने चाहिए। इसके बाद, अगर और जमीन उपलब्ध हो, तो वह रुपया पैदा करने वाली उपयोगी फसलें उगायेगा; परन्तु गाँजा, अफीम, तम्बाकू आदि का पूर्ण बहिष्कार करेगा।

गांव की अपनी ग्राम-नाटकशाला, पाठशाला और अपना सभा-भवन होगा। उसकी अपनी पानी की योजना होगी, जिससे साफ पानी मिलता रहेगा। प्रबन्ध नियंत्रित कुओं और तालाबों से किया जा सकता है। जहां तक सम्भव होगा, सब काम सहकारी ढंगसे किये जायेंगे। उसमें छूआछूत जातिप्रथा न होगी। गांव का शासन पंचायत करेगी। उसके पास सारी आवश्यक सत्ता और न्यायाधिकार होगा।

और, जिस स्वराज्य का सपना मैं देखता हूँ, वह गरीबों का स्वराज्य होगा। उसमें जीवन की जरूरी चीजें सबको वैसी ही मिलनी चाहिए, जैसी राजा-महाराजा और धनवानों को नसीब होती हैं। पर इसका यह मतलब नहीं कि सबके पास उनके जैसे आलीशान महल भी होने चाहिए! सुखमय जीवन के लिए यह कोई जरूरी चीज नहीं है।

जो स्वराज्य सबको जीवन संबधी सहूलियतों की गारंटी नहीं देता, वह पूर्ण स्वराज्य नहीं है; इसमें मुझे कतई शक नहीं!

मेरी कल्पना का स्वराज्य सबका होगा; उसमें धनिकों का भाग होगा, पर उनके साथ अंधे-अपाहिज और लाखों-करोड़ों भूखे-नंगे मेहनतकश भी उसमें पूरे हक़वाले हिस्सेदार होंगे।

—महात्मा गांधी

भारत पर विदेशों का उधार

इस समय भारत पर विश्व बैंक और विभिन्न देशों का कुल २ अरब २१ करोड़ ३२ लाख कर्ज है। इसके अलावा कुछ देशों को २२ करोड़ ६१ लाख रु० का भुगतान करना है।

विदेशों के कर्ज और उसकी ब्याज-दरों का ब्यौरा इस प्रकार है—

(करोड़ रुपयों में)

	योजना का नाम	ब्याज दर	कर्ज की राशि (अब तक मिली रकम में से भुगतान घटाकर)
विश्व बैंक	रेलों के लिए पहला ऋण	४%	८ करोड़ ६५ लाख रु०
	रेलों के लिए दूसरा ऋण	५.५/८%	१४ करोड़ ६३ लाख रु०
	दामोदर घाटी निगम (पहला ऋण)	४%	६ करोड़ ७५ लाख रु०
	दामोदर घाटी निगम (दूसरा ऋण)	४.७/८%	४ करोड़ ३६ लाख रु०
	एयर इण्डिया इंटर नेशनल	५.५%	८१ लाख रु०
	इंडियन आयरन एण्ड स्टील कं० (पहला ऋण)	४ ३/४%	६ करोड़ ४४ लाख रु०
	इंडियन आयरन एण्ड स्टील कं० (दूसरा ऋण)	५%	२ करोड़ ५४ लाख रु०
	टाटा आयरन एंड स्टील कं० (पहला ऋण)	४ ३/४%	२८ करोड़ १० लाख रु०
	ट्राम्बे (पहला ऋण)	४ ३/४%	५ करोड़ ८६ लाख रु०
	ट्राम्बे (दूसरा ऋण)	५.५/८%	६० लाख रु०
		कुल	८२ करोड़ ४ लाख रु०
ब्रिटेन	आइ० एस० सी० ओ० एन० का दुर्गापुर इस्पात कारखाने के लिए स्टर्लिंग ऋण	ब्रिटेन की बैंकदर से १% ऊपर	१ करोड़ २६ लाख रु०
		कुल	१ करोड़ ५६ लाख रु०
रूस	भिलाई इस्पात कारखाने के लिए	२॥ प्रतिशत	१२ करोड़ ८५ लाख रु०
जर्मनी	राउरकला इस्पात कारखाने के लिए अन्तरिम उधार	६ प्रतिशत	१३ करोड़ १६ लाख रु०
अमेरिका	१९५१ में अमेरिका से गेहूँ खरीदने के लिए कर्ज	२॥ प्रतिशत	८६ करोड़ २१ लाख रु०
	अमेरिका से १९५५ में	(यदि डालर में लौटाया गया तो ३ प्रतिशत और रु० में लौटाया गया तो ४ प्रतिशत)	१५ करोड़ ३३ लाख रु०
	अमेरिका से १९५६ में	,,	३ करोड़ ३३ लाख रु०
	अमेरिका से १९५७ में	,,	३ करोड़ ४४ लाख रु०
		अमेरिका से कुल	२२१ करोड़ ३२ लाख रु०

बाद में भुगतान ❀

अमेरिका	२ करोड़ ६० लाख रु०
जापान	३ करोड़ ३७ लाख रु०
इटली	६ करोड़ ५४ लाख रु०
पश्चिम जर्मनी	१ करोड़ ६४ लाख रु०
फ्रांस	६ करोड़ ६७ लाख रु०
ब्रिटेन	१ करोड़ १७ लाख रु०
नार्वे	३६ लाख रु०
चैकोस्लोवाकिया	२६ लाख रु०
कुल	२२ करोड़ ६१ लाख रु०

नोट : ये आंकड़े बिलकुल सही नहीं, लगभग हैं।

★

१९५८-५९ का रेल्वे बजट

(पृष्ठ १६० का शेष)

अनूपपुर-कटनी सेक्शन में ६ करोड़ ७० लाख के खर्च से दोहरी लाइन। दक्षिण रेलवे में गूडीवाड़ा-भीमावरम सेक्शन में छोटी लाइन को बदलकर बड़ी लाइन बिछायी जाएगी। इस पर २ करोड़ २५ लाख रु० खर्च होगा। और कटिहार-बरौनी के बीच खगड़िया-कटरिया सेक्शन में १ करोड़ ८८ लाख रु० के खर्च से दोहरी लाइन बिछायी जाएगी।

पटरी बदलने के काम पर ३३ करोड़ रु० रखे गये हैं, जबकि चालू वर्ष में २८ करोड़ रु० रखे गये थे। ३ करोड़ रु० यात्रियों आदि की सुविधा के लिए खर्च किया जाएगा। और ११ करोड़ रु० कर्मचारियों के लिए घर बनाने और अन्य सुविधाओं पर खर्च होगा।

बिजली की रेल

बिजली से रेल चलाने के लिए २५ का० वा० ए० सी० ५० साइकिल सिंगिल फेस प्रणाली को अपनाने का निश्चय किया गया है। इस प्रणाली के अन्तर्गत १,०६२ मील लम्बी लाइनों का विद्युतीकरण होगा, जिस पर करीब ७५ करोड़ रु० खर्च होने का अनुमान है। १९५८-५९ में, विद्युतीकरण कार्यक्रम पर १६ करोड़ २९ लाख रु० खर्च होगा।

इंजन डिब्बों आदि का निर्माण

रेल के काम आने वाला सामान अब देश में अधिकाधिक बनाया जा रहा है। मामूली इस्तेमाल के वैगनों का आयात काफी पहले से बंद हो चुका है और अब सवारी लाइनों के लिए २-४ इंजनों को छोड़कर भाप से चलने वाले इंजनों का आयात भी बंद हो गया है। १९५८-५९ में, चल-स्टाक (डब्बे आदि) खरीदने के लिए ८७ करोड़ ९५ लाख रु० रखे गये हैं। इनमें से ६० करोड़ १७ लाख रु० की खरीद देश के अन्दर से होगी। बाकी बाहर के सामान आदि मंगाने, जहाज-भाड़ा, सीमा-शुल्क आदि में खर्च होगा। १९५६-५७ में, चित्तरंजन में १५६ इंजन बनाये गये। इस वर्ष तथा अगले वर्ष १६८ इंजन बनाये जाएंगे। टैलको कारखाने से पिछले साल ७८ इंजन लिये गये। चालू वर्ष में ९० और अगले वर्ष १०० लिये जाएंगे।

गत वर्ष इंटिगरल सवारी डिब्बा कारखाने में ८८ डिब्बे बने थे। चालू वर्ष में १८० और अगले वर्ष में २९५ बनने की आशा है। एक पारी काम करने पर इस कारखाने की पूरी क्षमता ३५० डिब्बा बनाने की है। आशा है कि १९५९-६० में इतने डिब्बे बनने लगेंगे। पहली अप्रैल, १९५९ से दो पारी काम चालू किया जाएगा, जिससे दूसरे आयोजन के अंत तक १८० डिब्बे और तैयार होने लगेंगे। इन डिब्बों में सजावट का सामान लगाने के लिए कारखाने में ३ करोड़ ६९ लाख रु० की लागत से एक विभाग और खोला जा रहा है।

सामान और रुपए आदि की कमी के कारण रेलों में भीड़-भाड़ अभी कम न की जा सकेगी। यात्रियों को अन्य सुविधाएं देने की कोशिश जारी है।

पिछले साल कर्मचारियों के लिए १० हजार क्वार्टर बनाए गए थे। १९५७-५८ में १६ हजार बनाए जाएंगे और अगले साल १५ हजार बनाने की व्यवस्था है। सब मिलाकर दूसरे आयोजन में ६४,५०० नये क्वार्टर बनाये जाएंगे।

—

❀ ये केवल सरकारी क्षेत्र की बाद में भुगतायी जाने वाली रकमें हैं।

(पृष्ठ १६४ का शेष)

पूर्वी जर्मनी से व्यापार

१९५६-५७ में भारत ने जर्मन लोकतंत्री गणराज्य को ४६ लाख रु० का माल भेजा है और ४७.२४ लाख रु० का वहां से मंगाया है।

पूर्वी जर्मनी ने भारतीय माल के बदले उतनी ही कीमत की कारखानों की मशीनें और कुछ और सामान देने का प्रस्ताव किया है। पूर्वी जर्मनी के एक राज्य व्यापार संगठन से, भारत के राज्य व्यापार निगम ने १ २ करोड़ रु० की सूती मिलों की मशीनें मंगाने का करार किया है। इसी तरह के और भी लेन-देन की बातचीत चल रही है।

पूर्वी जर्मनी के इस प्रस्ताव पर अमल होने से भारत को अपनी जरूरत की मशीनें मिल जायेंगी और बदले में हमारा निर्यात भी बढ़ेगा।

★

मध्य एशिया का सबसे बड़ा विद्युत स्टेशन

'जनगण की मैत्री' नामक काराकुम-जल-विद्युत-स्टेशन जलप्रवाह के सहारे सालभर में औसत एक अरब किलोवाट घंटा बिजली तैयार करेगा।

ताज़िकिस्तान में सिर-दरया के तट पर स्थित यह विद्युत् स्टेशन जो मध्य एशिया में अपने ढंग का सबसे बड़ा स्टेशन है और हाल ही में अपनी पूर्ण उत्पादन-क्षमता सहित चालू किया गया है, ताजिकिस्तान और उजबेकिस्तान के दर्जनों औद्योगिक संस्थानों, कोयला और खनिज धातु की खानों, नगरों और गांवों को बिजली प्रदान करेगा।

जलविद्युत् स्टेशन के कार्य को सुचारु रूपेण चलाने तथा खेतों की अबाध सिंचाई को सुनिश्चित बनाने के लिए तेईस मीटर (लगभग ७५ फीट) ऊंचा बांध खड़ा किया गया है। इस बांध के पीछे ६० किलोमीटर (३७ मील) लम्बा और २० किलोमीटर (१२ मील) चौड़ा मानव-निर्मित 'ताजिक सागर' है।

★

९३७ मील लम्बी गैस पाइप-लाइन

१५०० किलोमीटर (९३७ मील) लम्बी अति शक्तिशाली नयी गैस पाइप-लाइन का निर्माणकार्य सोवियत संघ में आरम्भ हो गया है। नयी लाइन क्रास्नोदार क्षेत्र, उत्तरी काकेशस में मिले गैस क्षेत्रों को लेनिनग्राद से मिला देगी। सोवियत संघ के युरोपीय भाग के मध्य में स्थित सैकड़ों शहरों और देहातों को भी, जो इस नयी लाइन के मार्ग में पड़ेंगे, गैस दिया जाएगा। प्रथम भाग को इसी साल चालू कर दिया जाएगा।

उत्तरी काकेशस के गैस क्षेत्रों का उज्ज्वल भविष्य है। फलतः उन्हें तीन ट्रांसकाकेशियाई जनतंत्रों—जार्जिया, आर्मेनिया और अजरबैजान से मिला दिया जाएगा। इस व्यवस्था की दक्षिणी शाखा को उन गैस पाइपलाइनों से मिलाया जाएगा, जो कारादाग और अवस्तागा के स्थानिक ट्रांस काकेशियाई भंडारों से लेकर तिफलिस और येरेवान तक बिछायी जा रही है।

★

दो लाख नये घर

सोवियत गृह-निर्माण उद्योग इस वर्ष लगभग २००,००० बने-बनाये घर अर्थात् १९५७ की तुलना में लगभग ३० प्रतिशत अधिक तैयार करेगा। इनमें से अधिकांश घर शहर और देहात की जनता के हाथ बेच दिये जाएंगे।

यूराल के दक्षिण में २३४ लम्बी गैस पाइप-लाईन का निर्माण आरम्भ हो गया है। यह पाइप लाईन बश्कीरिया शकाप्सेवो के तेलक्षेत्र को मैग्नीतोगोर्स्क के साथ जोड़ देगी, जो यूराल में धातु उद्योग का केन्द्र है।

चौरानवे मील की लम्बाई में यह पाईप लाइन यूराल पर्वतमाला के चट्टानों से भरे दक्षिणी पाद प्रदेश में तथा पचहत्तर मील की लम्बाई में जंगलों से भरे स्थान में बिछाई जाएगी। यह पाईप-लाईन चौवालीस नदियों के ऊपर ले जाई जाएगी।

यह पाईप-लाइन १९५८ के अन्त में चालू की जाएगी। मैग्नीतोगोर्स्क के औद्योगिक संस्थानों को जहां अन्य जगह से लाये गये कोयलों की बृहत् परिमाण में खपत होती है, प्रतिवर्ष करोड़ों घन मीटर गैस प्राप्त होगा।

१८ नहीं : २४ करोड़ रु०

सम्पदा के पिछले अंक में जापान की भारत को अग्रिम ऋण की राशि १८ करोड़ रु० प्रकाशित हो गई है। वस्तुतः वह राशि १८ बिलियन येन या २४ करोड़ रु० है, न कि १८ करोड़ रुपये। यह ऋण १० वर्षों में किश्तों द्वारा चुकाया जायगा।

जर्मन गणराज्य की आर्थिक उन्नति

लेo : वो ल्यूगैग हैंकर　　　　अनुवादक : श्री टीo एनo वर्मा

जब १९४५ मई में विश्वयुद्ध की आग की लपटें शांत हो गईं, तो लाखों आश्रय हीन लोगों ने देखा कि चारों ओर विध्वंस का नाच हो रहा था। तीस लाख से भी अधिक आलीशान मकान, खण्डहर बना दिए गए थे। कई कारखाने चकनाचूर हो गए थे। यातायात का प्रबन्ध समाप्त हो गया था। पानी का इंतजाम नहीं था। बिजली की बत्ती तक नहीं बची थी। जीवनोपयोगी छोटी २ वस्तुएं तक उपलब्ध नहीं थीं। तबाही के कारण चारों ओर दर्दनाक दृश्य नजर आता था। हमारे सामने जीवन मरण की समस्या थी।

फिर भी हमारी जीवन यात्रा चल पड़ी, क्योंकि हमें आगे बढ़ना था। प्रतीक्षा करने के लिए हमारे पास समय नहीं था। पहले जीवनोपयोगी मुख्य चीजें रोटी, पानी, कपड़ा तथा बिजली की सुविधाएं दी गईं। धीरे २ परिस्थिति काबू में आने लगी। बम बारी से जो संस्थाएं ध्वंस हो गई थीं, उनको फिर से बनाया गया। सड़कें, हस्पताल, बिजली तथा यातायात आदि अत्यन्त आवश्यक मामलों पर काफी ध्यान दिया गया। स्त्री-पुरुष सभी कारखानों में जाकर काम करने लगे। मशीनें ठीक की गईं। लघु तथा भारी उद्योगधंधों की स्थापना हुई। भारी मशीनों का निर्माण जोरों से हुआ। मशीनों के मलबे से नई मशीनें बनाई गईं!

जमीन जोतने वाले को मिलनी चाहिए थी। इसलिए भूमि सुधार हुआ। जमीन जोतने वालों में बांट दी गई। शरणार्थियों को प्लाट तथा मकान अलाट किये गए। औद्योगिक क्षेत्र में सब तरफ से नया परिवर्तन हुआ। यातायात, व्यापार तथा औद्योगिक क्षेत्र में कारीगरों ने पहला स्थान हासिल किया। इन कारीगरों को सीखना पड़ा कि कारखाना कैसे चलाया जाता है, प्लान किस तरह बनाया जाता है तथा शहर अथवा प्रांत का प्रबन्ध किस तरह किया जाता है। उनके सामने कई कठिनाइयां भी थीं जिनका हल शीघ्र करना ज़रूरी था। फिर भी कारीगरों ने साहस नहीं छोड़ा। नई समस्याएं तथा कठिन मामलों को सुलझाने का उन्हें पूर्ण अनुभव हो गया। सफलता की पहली मंजिल पर पहुँचे। व्यापार की प्रगति हुई। १९४६ में ही मेलों के लिए प्रसिद्ध शहर लीपजीग में प्रथम शांति मेला सम्पन्न हुआ। इस वक्त इस मेले का मैदान २६००० वर्ग मीटर था, जबकि लेन देन तथा व्यापार १९ करोड़ मार्क का हुआ।

आज वे परिणाम, जो उस वक्त महत्वपूर्ण थे, हमें शायद साधारण लगेंगे। लेकिन धीरे २ इस मेले की गतिविधि में गत कुछ वर्षों के अन्दर सराहनीय प्रगति हुई है। इस साल जो लीपजीग मेला हुआ था (जिसमें टेकनीकल मेला शामिल नहीं है) उसका मैदान, जहां जर्मनी तथा विभिन्न देशों की चीजें प्रदर्शित हुई थीं,—१०८,००० वर्ग मीटर का था तथा लेन देन व व्यापार एक अरब मार्क से भी अधिक था। १९४७ में जर्मनी का सर्वतोमुखी औद्योगिक विकास हुआ और प्रतिमास इसकी क्षमता बढ़ती ही जा रही है।

"अधिक उपजाओ", 'धन का बंटवारा करो' 'जीवन स्तर बढ़ाओ, आदि नारों के अन्तर्गत उत्पादन स्तर, कपड़े तथा नित्य जीवनोपयोगी चीजों के उत्पादन को भी बढ़ाना पड़ा। लोहा, कोयला तथा मशीनरी की काफी मात्रा में आवश्यकता पड़ी। लेकिन इन चीजों के उत्पादन के केन्द्र अधिक तर राइन (Rhine) जिले में ही थे, जो जर्मनी के पश्चिमी भाग में था। भारी उद्योगों के पुनर्निर्माण की समस्या हमारे सामने पहली थी। नए-नए लोहे के कारखाने तथा कोयले के डिपों खोलने थे। कृषि के साधन ट्रैक्टर तथा मछली धंधों के लिए जहाज आदि की अत्यन्त आवश्यकता थी। युद्ध से पहले समुन्दरी जहाजों का निर्माण वर्तमान जर्मन गणराज्य के क्षेत्र में साधारण ही था। गत-वर्ष जहाजों पर माल लादने वाली १०००० (t) क्रेनें समुद्री तटों पर लगाई गईं और भी बड़े बड़े काम किए गए। इस प्रकार कुछ वर्षों के अन्दर ही औद्योगिक क्षेत्र में

हमें पूर्ण सफलता मिली।

जर्मन गणराज्य में शुरू से लेकर भारी उद्योगों की प्रगतिके प्रति प्राथमिकता दी जा रही है। राष्ट्रीय सम्पत्ति की निरन्तर वृद्धि के लिए यह आवश्यक भी था। हल्के तथा भारी उद्योगोंके क्षेत्र में स्थिरता लाने के साथ-साथ उत्पादित वस्तुओं का निर्यात भी भारी मात्रा में होने लगा।

यह सारा काम अपने कारीगरों के, जिन्होंने प्रत्येक रुकावट तथा मुसीबतों को पार करने में साहस दिखाया, अथक परिश्रम तथा अदम्य उत्साह का सफल परिणाम है। 'ओडर' के समीप जो कि जर्मन गणराज्य तथा पोलण्ड गणराज्य की सीमा पर स्थित है, यूरोप के महान तथा आधुनिक साधनों से युक्त 'लोह कर्मागार' का निर्माण हुआ है, जो कि पहले असंभव सा लगता था। जो लोग कल तक अन्य धंधों में लगे हुए थे, वे अब कुछ महीनों के कठिन परिश्रम से मशीनरी कला में विशेषज्ञ बन गए हैं।

पुनर्निर्माण की महान प्रगति में जिस पर हम आज गर्व कर सकते हैं, इतनी सफलता न मिली होती, अगर जर्मन कारीगरों ने अदम्य उत्साह, अथक परिश्रम, तथा कार्य निपुणता न दिखाई होती।

[पृष्ठ १५८ का शेष]

पर लगा कर हमें अधिक काम को पूरा करने की आशा है।

सरकार और जहाजरानी

भारतीय जहाज मालिकों को सरकार के द्वारा गत वर्ष जारी किए गए सम्पत्ति तथा दूसरे करों के कारण पर्याप्त रोष उत्पन्न हुआ था। तथापि प्रसन्नता की बात है कि भारतीय शिपिंग कम्पनियों को सम्पत्ति कर से छूट प्राप्त हो गई है। हम अब पूंजीगत लाभ से छूट प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहे हैं।

१ जनवरी १९५७ को भारत में १२४ जहाज ५१७३०० जी आर टी वाले थे। दस जहाज करीब ६६०१७ जी आर टी वाले सन् १९५७ में जोड़े गए थे। १ जनवरी १९५८ को १,३८१०० जी आर टी० वाले २३ जहाज, निर्माण में अथवा आर्डर दिए गए, भारतीय और बाह्य शिपयार्ड्स में थे। १८७१ जी० आर टी वाले दो सेकिंड हैंड जहाज सन् १९५८ में होने वाली डिलीवरी के लिए खरीदे गए थे। इस प्राप्ति के द्वारा भारत की रजिस्टर्ड टनेज ७२४२९६ जी आर टी के १५९ जहाजों के योग पर पहुँचता है। सन् १९६०।६१ तक करीब ९०००० जी आर टी रद्द किए या बेच डालने योग्य हो जायेंगे और भारत वर्ष को तब भी अनुमानतः २५५००० जी आर टी की आवश्यकता होगी, जिससे ९ लाख जी आर टी के कम से कम और आवश्यक लक्ष्य पर पहुँचा जा सके, जो कि प्लानिंग कमीशन के द्वारा निर्धारित किया गया है। यातायात व संचारमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री के उस प्रोत्साहनीय वक्तव्य को सुनकर उत्साह उत्पन्न होता है, जो उन्होंने पिछले दिसम्बर में इण्डियन नेशनल स्टीमशिप ओनर्स एसोसिएशन की आम बैठक में दिया था गये। विशेष रूप में शिपिंग डिवेलपमेंट फंड, कोस्टल जहाजों की प्राप्ति के लिए जहाजी कम्पनियों को दिए गए ऋण के ब्याज की दरों में घटती तथा उनकी उन आशाओं को जिनके द्वारा उन्होंने डिवलपमेंट रिबेट एलॉउन्स की बढ़ती हैं के लिए कहा है, उनके प्रोत्साहनीय विचार बहुत मूल्यवान मानता हूँ। उन्होंने भारतीय जहाज़रानी में लाए जाने वाले कार्गो की प्राप्यता के सम्बन्ध में भी कुछेक सुझाव दिए हैं और हमें यह जानकर प्रसन्नता है कि, उनकी कोशिशों व भारत सरकार के अन्य मंत्रियों के सहयोग के लिए एक शिपिंग कोऑर्डिनेशन कमेटी का निर्माण हो गया है। भारतीय जहाज मालिक वास्तव में ही उनके कृतज्ञ हैं।

इस्पात राष्ट्र की शक्ति

राष्ट्र की शक्ति के लिये इस्पात एक अनिवार्य वस्तु है। मूल और भारी उद्योगों एवं विशाल मशीनें जो दैनिक जीवन में काम आने वाली वस्तुओं का निर्माण करने वाले यन्त्र तैयार करेंगी, बनाने के लिए अधिकाधिक इस्पात की आवश्यकता है। इस आवश्यकता पूर्ति के लिए भिलाई, रूरकेला और दुर्गापुर में इस्पात के कारखाने बनाए जा रहे हैं।

लाखों टन कोयला और करोड़ों वाट बिजली, उद्योग के मूलाधार इस इस्पात के निर्माण में काम आती है।

प्रगति का मूलाधार

कच्चे माल और तैयार सामान ढोने के लिए परिवहन की सुविधाओं का विस्तार किया जा रहा है।

इस्पात, कोयला, रेल, बन्दरगाह आदि आर्थिक विकास के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। इसी लिए द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में इनको उच्चतम प्राथमिकता दी गई है।

आयोजना सफल बनाइए

प्रगति और समृद्धि के लिये

DA.57/296

सम्पादक— कृष्णचन्द्र विद्यालंकार द्वारा अशोक प्रकाशन मन्दिर के लिए अर्जुन प्रेस, दिल्ली से मुद्रित व प्रकाशित।

सम्पदा

अप्रैल, १९५८

व्यवस्थापकीय नियम

(१) स्थायी ग्राहक पत्र-व्यवहार करते समय या चंदा भेजते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिख दिया करें। ग्राहक संख्या न लिखे होने की दशा में पत्र का उत्तर दे सकना कठिन हो जाता है।

(२) हमारे यहां से 'सम्पदा' का प्रत्येक अंक महीने की ७ तारीख को भेज दिया जाता है। अंक १० दिन तक न मिले तो कार्यालय को शीघ्र सूचित कर दें। इसके बाद आने वाले पत्रों का उत्तर देना कठिन होगा। पत्र के साथ ग्राहक संख्या लिखना आवश्यक है। ग्राहक संख्या महीने के प्रत्येक अंक के रैपर पर लिखी होती है, देखकर नोट कर लें।

(३) नये ग्राहक बनने के इच्छुक चंदा भेजते समय इस बात का उल्लेख अवश्य करें कि वे नये ग्राहक बन रहे हैं तथा वर्ष के अमुक महीने से बनना चाहते हैं।

(४) नये ग्राहक बनने वालों को उनकी ग्राहक संख्या की सूचना कार्यालय से पत्र द्वारा दे दी जाती है।

(५) कृपया वार्षिक चंदा धनादेश (मनी आर्डर) द्वारा ही भेजा करें। वी० पी० से आपको १० आने का अतिरिक्त व्यय देना पड़ता है।

(६) कुछ संस्थाएं चैक द्वारा चंदा भेजती हैं। वे पोस्टल आर्डर से भेजें अथवा बैंक खर्च भी साथ भेजें।

(७) अपना पूर्व स्थान छोड़ने पर नये पते की सूचना शीघ्र देखें, अन्यथा अंक दुबारा नहीं भेजा जायगा।

(८) नये अंक के नमूने के लिये १२ आने का मनीआर्डर अथवा डाक टिकट भेजें।

(९) अगर आप अपनी प्रति स्थानीय एजेन्ट से चाहते हैं, तो हमें लिखिए, प्रबन्ध हो जायगा।

—मैनेजर प्रसार विभाग

विषय-सूची

इस अंक के प्रमुख लेखक

१. श्री घनश्यामदास बिड़ला भारत के प्रमुखतम उद्योग-पतियों में से हैं और आर्थिक समस्याओं पर उनके वि[चार] देश में आदर से सुने जाते हैं।

२. अनेक उद्योगों के संचालक श्री करमचन्द था[पर] कलकत्ते के प्रमुख व्यवसायी हैं। देश की आर्थिक समस्या[ओं] का व्यावहारिक ज्ञान रखते हैं।

३. श्री विश्वम्भर नाथ पाण्डेय झरिया में शिवप्र[साद] कालेज में अर्थ शास्त्र के अनुभवी अध्यापक हैं और स[मय] समय पर सम्पदा में लिखते रहते हैं।

४. डा० श्री शिवध्यान सिंह चौहान आगरा के बी. [आर.] कालेज में अर्थशास्त्र के प्राध्यापक हैं। उन[्होंने] भारतीय परिवहन नामक उत्कृष्ट ग्रन्थ लिखा है।

५. श्री कैलाश बहादुर सक्सेना सम्पदा के सुपरि[चित] लेखक हैं और बीकानेर में एक कालेज के प्रोफेसर हैं।

६. दिल्ली फैक्टरी ओनर्स असोसियेशन के प्र[धान] श्री मुरलीधर डालमिया बिड़ला मिल दिल्ली के जन[रल] सेक्रेटरी हैं और दिल्ली की औद्योगिक समस्याओं [पर] अधिकार पूर्वक लिख सकते हैं।

—

क्षमा प्रार्थना

प्रेस की कठिनाइयों के कारण इस अंक में दो दिन विलम्ब हो रहा है और ४ पृष्ठ कम निकाले जा रहे। किसी आगामो अंक में यह कमी पूरी कर दी जायगी।

—व्यवस्था[पक]

वर्ष : ७] अप्रैल, १९५८ [अङ्क : ४

यथार्थ की ओर

किसी देश के और विशेष रूप से लोकतन्त्र देश के आर्थिक विकास में जनता का हार्दिक सहयोग अनिवार्य होता है, परन्तु वह केवल भावुकता और आदर्शवाद से अधिक समय तक प्राप्त नहीं किया जा सकता। भावुकता का अपना महत्त्व है। राजनैतिक स्वाधीनता की प्राप्ति के लिए लोग असाधारण त्याग और आत्मोत्सर्ग करने के लिए तैयार हो जाते हैं, किन्तु निरन्तर बलिदान के मार्ग पर चलने वाले देशभक्त सैनिकों की संख्या बहुत थोड़ी रहती है, यद्यपि उसे अधिकांश जनता की हार्दिक सहानुभूति प्राप्त रहती है। अधिकांश जनता से निरन्तर त्याग की आशा चिरकाल तक नहीं की जा सकती। महात्मा गांधी के असाधारण व्यक्तित्व और ब्रिटिश शासन से मुक्ति की भावना के संकेत रूप होने के कारण खद्दर जनता में कुछ प्रचलित अवश्य हुआ, पर आज भी महान् नेताओं द्वारा खद्दर के प्रचार के निरन्तर ३५ वर्ष बाद भी उसे प्रोत्साहित करने के लिए सरकार ३ आने प्रति रुपया छूट के रूप में करोड़ों रुपया व्यय करती है, तब भी उसका यथेष्ट प्रचार नहीं हो पाता। यह इसका स्पष्ट प्रमाण है कि आर्थिक गतिविधि में भावुकता एक नियत सीमा तक ही काम करती है। एक तन्त्रात्मक आतंकवादी शासन में मिलों पर प्रतिबन्ध लगाकर भले ही खद्दर का प्रचार हो सके, सामान्य जनता उसे अपनी इच्छा से तभी अपनावेगी, जब उसे वह आर्थिक दृष्टि से अधिक लाभकर प्रतीत होगा। देश की आर्थिक नीति निर्धारित करते हुए हम जब इस सत्य की अवहेलना करके भावुकता व आदर्शवाद को आवश्यकता से अधिक महत्व देंगे, तभी हम धोखा खायेंगे, यह हमें समझ लेना चाहिए।

पिछले कुछ वर्षों से भारत की आर्थिक नीति के निर्धारण में, यह एक सचाई है कि यथार्थ और वस्तुस्थिति की अपेक्षा राजनीतिज्ञों की भावुकता, महत्वाकांक्षा, आदर्श और सैद्धान्तिक चर्चा अधिक प्रभावशालिनी सिद्ध हुई हैं। अर्थशास्त्र पर राजनीति हावी हो गई और देश के अर्थशास्त्री, राजनीतिज्ञों और नेताओं के प्रभावशाली व्यक्तित्व से अभिभूत हो गये। अपनी दृष्टि को स्वतन्त्र रूप से प्रकट करने का आवश्यक साहस उनमें नहीं रहा। यही कारण है कि हमारी जो अर्थनीति बन पाई, उसमें कुछ त्रुटियां रह गईं।

आर्थिक विकास के लिए मानव को मूल प्रेरणा केवल भावुकता से प्राप्त नहीं होती, यह हम ऊपर लिख आये हैं। समाजवाद, राष्ट्रीयकरण, मजदूरों और कर्मचारियों को (उत्पादन क्षमता का विचार किये बिना) अधिकाधिक

वेतन देने भावना, आवश्यकता तथा विषमता कम करने के लिए अमीरों पर अधिकाधिक कर आदि बहुत ऊंचे आदर्श हो सकते हैं। देश के आर्थिक संकट को दूर करने के लिए बहुत बड़ी महत्त्वाकांक्षा पूर्ण योजना की प्रशंसा कौन नहीं करेगा, परन्तु इनका आधार ही यदि कमजोर होगा, तो निरा आदर्शवाद हमारी सब योजनाओं को चलाने में बहुत समय तक सहायक नहीं होगा। आज के अनुभव हमें अपनी समस्त नीति पर पुनर्विचार के लिए—यथार्थ परिस्थिति को देखकर पुनर्विचार के लिए विवश कर रहे हैं।

जब द्वितीय योजना बनाई गई थी, तब अनेक अर्थशास्त्रियों ने उसे अपनी क्षमता से बाहर, अत्यन्त महत्त्वाकांक्षापूर्ण बताते हुए कुछ अधिक सावधान होकर चलने की सलाह दी थी, किन्तु उस समय उन्हें निराशावादी, अदूरदर्शी तथा साहसहीन बताया गया। प्रथम योजना की सफलता ने हमें इतना अधिक आशावादी और उत्साहयुक्त बना दिया कि हम अपनी क्षमता भूलकर बड़े-बड़े सुनहले स्वप्न लेने लगे। कृषि सुधारों के उत्साह में हमने किसानों में भूमि वितरण की अधिक चिन्ता की, उत्पादन बढ़ाने की कम। मजदूरों के वेतन बढ़ने चाहिए, इसमें सन्देह नहीं, परन्तु इसका उत्पादन वृद्धि के साथ सम्बन्ध जोड़ने पर भी महत्त्व देना चाहिए था। उद्योगों के राष्ट्रीयकरण का नारा इतना जोर पकड़ गया कि हम यह विचार नहीं कर सके कि आखिर हमारे पास न इतनी विशाल पूंजी है और न इतने अधिक अनुभवी, कार्यकुशल और ईमानदार कर्मचारी कि हम नये उद्योगों को चला सकें। अपने साधनों को नये उद्योगों में लगाने की अपेक्षा योजना आयोग की चेतावनी के बावजूद सब राज्य बस-यातायात आदि को हथियाने में लग गये। कोल-उद्योग के सम्बन्ध में नई नीति इसी का एक उदाहरण है। अपनी महत्त्वाकांक्षापूर्ण योजना की पूर्ति के लिए हमने दो काम और किये, एक तो उद्योग और सामान्य जनता पर भारी कर लगाये और दूसरे जनता से छोटी बचत और विदेशी सहायता की बड़ी योजनाएं बना लीं। नई कर नीति का परिणाम आज हम देख रहे हैं। पूंजी निर्माण के साधन ही कमजोर पड़ गये हैं और जनता आशा से बहुत कम रुपया बचा पा रही है। शानदार इमारतों तथा थोड़े-थोड़े समय बाद विदेशों में प्रतिनिधि मण्डल भेजने, लिफ्ट और एयरकन्डीश सामग्री आदि पर अपनी क्षमता से अधिक हम व्यय क लगे और यह भूल गये कि विदेशी मुद्रा कम होती जा र है। हमारे आयात केवल एक वर्ष में ही ३२६ करोड़ बढ़ गये। कला प्रेम, सौन्दर्य और भव्यता के फेर में हम अशोका होटल बनाया। देश की आर्थिक नीति विदेशी पूंजी को प्रोत्साहित करने में सफल नहीं हुई बरमा शैल ने ट्राम्बे में एक रासायनिक खाद का कारखा खोलने की अनुमति मांगी थी, पर सरकार इस उद्योग निजी उद्योग के हाथ में न सौंपने का निश्चय कर चु थी, अन्यथा दो वर्ष पूर्व यह कारखाना बनकर देश आर्थिक विकास में सहायता दे रहा होता। इसी तरह अ भी अनेक ऐसे उदाहरण दिये जा सकते हैं कि व्यवह और यथार्थ की अपेक्षा सरकारी नीति का निर्धा सैद्धान्तिक आदर्शवाद या भावुकता पर किया गया है।

किन्तु जो हो गया, सो हो गया। स्वाधीनता प्राप्ति के ब हमारा उत्साह, हमारा आशावाद और हमारी महत्त्वाकांक्ष अत्यंत स्वाभाविक थीं। प्रथम योजना की सफलता ने, जिस उदार प्रकृति का भी बहुत सहयोग रहा, हमारे उत्स को द्विगुणित कर दिया था। यह संतोष की बात है पिछले वर्ष से हमने अपनी नीति और कार्यपद्धति गम्भीरता से पुनर्विचार करना शुरू कर दिया है विदेशी पूंजी और सुरक्षित निधि की समस्या हमें विवश कर दिया कि हम समस्त प्रश्न पर पुनर्विच करें। योजना आयोग ने इस उद्देश्य से एक समि नियुक्त की थी, जिसकी रिपोर्ट सामने आ चुकी है। रिपोर्ट में सरकार को अधिक सतर्क होने की सूचना गई है।

पिछले कुछ समय से सरकार की नीति में परिव के लक्षण भी दृष्टिगोचर होने लगे हैं। वस्त्र-उद्योग उत्पादन कर कम कर दिये गये हैं, अधिकारियों को फण्ड सरकारी खजाने में जमा न करने की छूट दे दी है, विदेशी पूंजी को अनेक ऐसी सुविधाएं दी गई जिनसे वह यहां आ सके, जहाजी उद्योग के विकास के ४० प्रतिशत की छूट दी गई है। निर्यात-व्यापार को ब के लिए आयात करों में कमी का आश्वासन दिया गया

निजी उद्योग का कार्यक्षेत्र सीमित करने का आन्दोलन अब कम उग्र होता जा रहा है । नये वित्तमंत्री श्री देसाई ने लोकसभा में चाय उद्योग के राष्ट्रीयकरण या चाय निर्यात को स्टेट ट्रेडिंग कारपोरेशन के हाथ में देने का स्पष्ट विरोध किया है । ट्रक-यातायात के राष्ट्रीयकरण शीघ्र न करने का आश्वासन दिया जा रहा है, डाक-तार विभाग भी कुछ छूट देने को तैयार हो गया है, भारी उद्योगों के साथ-साथ कृषि पर फिर अधिक ध्यान दिया जाने लगा है, औद्योगिक शांति बनाये रखने की ओर अब सरकार कुछ अधिक सावधान नीति बरतने के लिए उत्सुक दीखती है, आयात नीति अधिक कठोर कर दी गई है, और पिछले कुछ समय से योजना में कांट-छांट करने की नीति पर अमल होने लगा है, बहुत-सी योजनाएं, जिनमें विदेशी-मुद्रा की अपेक्षा थी तीसरी योजना के लिए स्थगित की जा रही हैं । संचारमंत्री श्री राजबहादुर ने लारी ट्रक परिवहन पर लगे भारी करों को उद्योग के हित का विरोधी माना है । केरल की कम्युनिष्ट सरकार श्री बिड़ला ब्रादर्स को केरल में रेयन कारखाना खोलने की अनुमति दे रही है । कागज पर उत्पादन कर में कमी तथा आयात में सुविधा व रेल भाड़े में कमी आदि पर भी विचार हो रहा है । भूल करना उतना अपराध नहीं है, जितना भूलों से अनुभव न लेना । यह प्रसन्नता की बात है कि हम अव्यावहारिकता और भावुकता की बजाय यथार्थ और वस्तुस्थिति की ओर देखने लगे हैं ।

उद्योग में वेतन निर्धारण

भारत सरकार द्वारा वस्त्र उद्योग के लिए नियुक्त वेतन बोर्ड आजकल विभिन्न औद्योगिक नगरों में जाकर विविध दलों से उनके मत जान रहा है । मिल मालिक और मजदूर अपने अपने प्रश्न को पुष्ट करने के लिए प्रमाण दे रहे हैं । २७ मार्च को अ० भा० ट्रेड यूनियन कांग्रेस की ओर से देश भर में मजदूर दिवस मनाया गया । इसी दिन मजदूरी में २५ प्रतिशत वेतन बढ़ाने और महंगाई भत्ते को वेतन में सम्मिलित करने आदि आदि मांगों को करने का निश्चय किया गया था । जूट, चाय, लोहा, सीमेंट, रेलवे, डाक-तार, सैनिक विभाग, यातायात और बीमा उद्योग के लिए भी वेतन मण्डल नियुक्त करने की मांग की गई है । कुछ भाइयों ने इन मांगों को मजदूरों का अधिकार पत्र (चार्टर) कहा है । जहां तक मजदूरों की आवश्यकताओं और उनका जीवन-स्तर ऊंचा करने की भावना का प्रश्न है, वहां तक सभी यह चाहेंगे कि मजदूरों का जीवन-स्तर ऊंचा हो, उन्हें अधिक से अधिक सुविधाएं मिलें । लेकिन जिस समाचार पत्र में उक्त समाचार प्रकाशित हुआ है, उसी पृष्ठ पर एक दूसरा समाचार भी प्रकाशित हुआ है कि इण्डियन नेशनल ट्रेड यूनियन कांग्रेस की कार्य समिति को स्थान-स्थान पर बन्द होती हुई मिलों की संख्या बढ़ते जाने के कारण बहुत चिंता हो रही है । कपड़े, जूट मिल, तेल मिल, चाय के बागान तथा अन्य अनेक उद्योग धंधों में बेकारी बढ़ती जा रही है । कार्य समिति ने भारत सरकार से बंद होने वाली मिलों को शीघ्र चालू करने तथा निकट भविष्य में दूसरी मिलों को बन्द न होने देने की व्यवस्था करने का आग्रह किया है । पाठकों को यह मालूम होगा कि पिछले कुछ समय से सूती मिलें अपने असाधारण संकट में विविध सुविधाएं पाने की आवाज उठा रही हैं । ऐसी स्थिति से वेतन वृद्धि की मांग कहां तक सुसंगत है, यह निश्चय भारत सरकार द्वारा नियुक्त वेतन मंडल करेगा ।

हमारी नम्र सम्मति में इस प्रश्न पर निष्पक्ष और व्यावहारिक दृष्टि से विचार नहीं किया जा रहा । मिल मालिक अधिक वेतन देने में अक्षमता दिखाते हैं और मजदूर प्रतिनिधि मिलों के घाटे की जिम्मेवारी संचालकों और प्रबन्धकर्ताओं पर डालते हैं । हमारा सुझाव यह है इन्टक, कम्युनिस्ट प्रभावित ट्रेड यूनियन कांग्रेस और सरकार देश के भिन्न-भिन्न भागों में दो-दो औसत मिलें एक वर्ष के लिए अपने प्रबन्ध में लें । इन्हें साधारण मिलों से अतिरिक्त कोई सुविधा न दी जाय । एक वर्ष के परीक्षण के बाद, मजदूर और सरकार इस स्थिति में हो जायेंगे कि यह निश्चय कर सकें कि किस मजदूर को कितनी तनखा दी जा सकती है । मिल में लगी हुई पूंजी पर उचित मात्रा में ब्याज, सरकारी टैक्स, रेल-भाड़ा, घिसाई फण्ड आदि चुकाने की चिन्ता भी इन्हें करनी पड़ेगी । यदि मिल मालिकों का कोई दोष है तो वह स्पष्ट हो जायगा और यदि इसके विपरीत मजदूरों को नियत वेतन देना असम्भव

होगा तो मजदूर संघ अपनी मांगों में कमी करने को तैयार होंगे। कागजी आंकड़ों की अपेक्षा यह क्रियात्मक परीक्षण विविध दलों की स्थिति का स्पष्ट ज्ञान करने में अधिक सहायक होगा। आशा है कि इस पर सब सम्बद्ध दल विचार करेंगे। शोलापुर में सरकार एक मिल चलाने लगी है। उसका अनुभव भी सहायक होगा।

हमारी नम्र सम्मति में आज वेतनों के देशव्यापी प्रश्न पर उचित दिशा में विचार नहीं हो रहा। वेतन बढ़ाने की अपेक्षा, जीवन-व्यय कम करने की ओर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिये, भले ही हमें जीवन स्तर में कुछ थोड़ी सी कमी भी करनी पड़े। परन्तु इसके लिए आवश्यक यह है कि पांच सौ रुपये से ऊपर वेतन पाने वाले सरकारी या गैर सरकारी सभी कर्मचारियों व अधिकारियों के वेतन में क्रमिक कटौती की जाय, तीन चार वर्ष उनकी वेतन बृद्धि रोक दी जाय। हमें जहां एक ओर मजदूर और किसान का जीवन-स्तर ऊंचा करना है, वहां उच्च या उच्च मध्यम-वर्ग के स्तर को कुछ नीचा भी करना होगा। तभी समाज-वाद के लिए आवश्यक वातावरण उत्पन्न हो सकेगा।

परिवहन पर बोझ

भारत सरकार के मंत्री मण्डल में श्री लालबहादुर शास्त्री उन मंत्रियों में से हैं जो किसी प्रश्न की गहराई तक पहुँचकर पूर्व आग्रहों को छोड़कर निष्पक्ष दृष्टि से विचार करते हैं। कुछ समय पहले परिवहन सम्बन्धी कठिनाइयों पर अखिल भारतीय उद्योग व्यापार मण्डल ने उनका ध्यान खींचा था। उन्हें यह बताया गया था कि मोटर उद्योग किस संकट में से गुजर रहा है। भारत में प्रति मोटर गाड़ी को वर्ष में २०७० रु० टैक्सों के रूप में देना पड़ता है, जबकि फ्रांस में ८००, पश्चिम जर्मनी में १२००, इंग्लैण्ड में १३०० और इटली में १५०० रु० देना पड़ता है। विभिन्न राज्यों में पिछले वर्षों में मोटर परिवहन पर लगातार तरह तरह के कर बढ़ाने की प्रवृत्ति का परिणाम यह हुआ है कि १९४४-४५ में प्रति गाड़ी (जिसमें मोटर साइकिल भी सम्मिलित है) से ६११ रु० करों के रूप में लिया जाता था। १९४९-५० में यह रकम १११५ रु० और १९५४-५५ में १६०६ रु० हो गयी। अब २०७० रु० हो गयी है। सरकार ने इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार किया है। इसी के परिणामस्वरूप श्री लाल बहादुर ने जो शास्त्री जी के साथ परिवहन मंत्री हैं, संसद में खुले तौर पर इसे स्वीकार किया कि हमें मोटर गाड़ियों पर कर भार कम करने पर विचार करना चाहिये। मोटर गाड़ियों पर केन्द्र, राज्य और स्थानीय समितियां तरह तरह के कर लगाती हैं। केन्द्र शासन मोटर गाड़ियों, टायरों, ट्यूबों, जरूरी पुर्जो तथा मोटर स्पिरिट पर तट कर या उत्पादन कर लेता है। राज्य सरकारें माल और यात्रियों पर टैक्स लगाती हैं। विभिन्न मार्गों के लाइसेन्स देने पर टैक्स लगाती हैं। विभिन्न वस्तुओं की बिक्री पर कर लगाती है और स्थानीय समितियां गाड़ियों पर तरह तरह के कर लगाती हैं। इन सबको देखकर ही श्री लाल बहादुर शास्त्री ने इन भारी करों का विरोध किया। पंच वर्षीय योजना के शेष तीन वर्षों में १ लाख २० हजार माल ढोने वाली गाड़ियों की जरूरत है। इन पर २५० करोड़ रुपये की लागत आ सकती है। सड़क यातायात को प्रोत्साहित करने के लिए आवश्यक है कि मोटर यातायात को कर भार से न लादा जाय और राष्ट्रीयकरण का खतरा भी उनके सिर पर न लटकता रहे। श्री लाल बहादुर शास्त्री ने अत्यन्त बुद्धिमत्तापूर्वक यह घोषणा की है कि तीसरी पंचवर्षीय योजना तक अर्थात् ८ वर्ष तक माल परिवहन सड़क उद्योग का राष्ट्रीयकरण नहीं किया जायगा। यह व्यावहारिक और दूरदर्शितापूर्ण नीति है।

विश्व की बढ़ती हुई जनसंख्या

एक ओर हम कृषि और औद्योगिक पदार्थों का उत्पादन बढ़ाकर जीवन-स्तर ऊंचा करने का प्रयत्न कर रहे हैं, दूसरी ओर आबादी निरन्तर बढ़कर अर्थशास्त्रियों के सम्मुख चिन्ता का कारण उपस्थित कर रही है। १९२० में जनसंख्या १ अरब ८१ करोड़ थी। तीस वर्ष बाद १९५० में दुनिया की आबादी २ अरब ४९ करोड़ ५० लाख हो गई। और पिछले ५-६ सालों में यह २४ करोड़ २० लाख बढ़कर २ अरब ७३ करोड़ ७० लाख हो गई है। हिसाब लगाया गया है कि प्रतिदिन संसार में १ लाख १८ हजार नये बच्चे पैदा हो जाते हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ के जनसंख्या पत्रक में उक्त संख्यायें देते हुए बताया गया है कि १९५

से १८५० तक की दो सदियों में ०.४ प्रतिशत के हिसाब से जनसंख्या बढ़ी है। आगामी शताब्दी में यह प्रतिशत दुगना हो गया और आजकल यह १.७ प्रतिशत है। जन-संख्या बढ़ने का एक कारण यह भी बताया जा रहा है कि चिकित्सा, शिक्षा और सफाई के क्षेत्र में अधिक उन्नति के कारण अब मृत्यु संख्या पहले से बहुत कम हो गई है। यह सुधार प्रशंसनीय है, पर नई समस्या का कारण बन गया है।

नये वित्तमंत्री

भारत के स्वतन्त्र होने के बाद यदि कोई मंत्रीपद सबसे अधिक आलोचना का विषय रहा है और यदि किसी को सबसे अधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है तो वह वित्तमंत्री का पद है। १९४६ में श्री षणमुखम् चेट्टी ने यह पद सम्भाला था, किन्तु इन्कमटैक्स तथा कुछ कम्पनियों को लेकर जो वातावरण उत्पन्न हो गया, उसके कारण, उन्होंने त्याग पत्र दे दिया। इसके बाद भी जान-मथाई भारत के वित्त मंत्री बने, किन्तु वे भी इस पद पर बहुत समय तक नहीं रह सके। उन्हीं दिनों भारत सरकार ने योजना आयोग की नियुक्ति की थी। श्री मथाई का विचार यह था कि मंत्रीमण्डल पार्लियामेंट के प्रति उत्तर-दायी है, इसलिए योजना आयोग को इतने अधिक अधिकार नहीं देने चाहियें, जिससे उसके सामने मंत्री-मण्डल नीति के निर्धारण में असमर्थ हो जाय। योजना-आयोग को मंत्रीमण्डल की इच्छा के अनुसार काम करना चाहिये, न कि आयोग मंत्रीमण्डल पर हावी हो जाय। तीसरे वित्तमंत्री श्री देशमुख ने राजनीतिक मतभेद के कारण त्यागपत्र दे दिया। उन्हें महाराष्ट्र में बम्बई नगर न मिलाने पर तीव्र असन्तोष था। चौथे वित्तमंत्री श्री कृष्णमाचारी को भी गत फरवरी में अलग हो जाना पड़ा, क्योंकि जीवन बीमा निगम ने मूंदड़ा के विपुल मात्रा में बहुत महंगे दामों पर शेयर खरीद लिये थे, जिसकी देश में कठोर आलोचना हुई। बहुत से सार्वजनिक कार्य-कर्त्ताओं तथा पत्रों ने श्री कृष्णमाचारी को इसके लिए उत्तरदायी ठहराया। वस्तुतः वित्तमंत्री का पद अत्यन्त उत्तरदायित्व तथा कठिनाइयों से पूर्ण है। आज देश की प्रगति का प्रमुखतम क्षेत्र आर्थिक है। इसलिए वित्तमंत्री को ही देश की प्रगति के लिए विपुल मात्रा में आवश्यक मुद्रा की व्यवस्था और साधनों के संगठन आदि का भार लेना होता है। सरकार के निरन्तर बढ़ते हुए उत्तरदायित्वों को पूर्ण करने की जिम्मेदारी उसी पर आती है। इसके लिए उसे समय २ पर अप्रिय टैक्स लगाने पड़ते हैं, और सब तरफ से आलोचनाओं का शिकार होना पड़ता है।

अब श्री मोरारजी देसाई के कन्धों पर यह गुरु भार डाला गया है। वे कुशल और अनुभवी व्यक्ति हैं। वे अर्थशास्त्र के महा पण्डित न भी हों, तो भी उन्हें बम्बई में मुख्य मंत्री के पद पर रहते हुए देश की आर्थिक और औद्योगिक समस्याओं का अच्छा परिचय है। उन्हें देश के निजी उद्योगपतियों और व्यापारियों की भावनाओं तथा कठिनाइयों का भी ज्ञान है। गत वर्ष आयात नीति में कठोरता बरतकर उन्होंने देश की विदेशी मुद्रा को काफी हद तक बचा लिया। आज हमारे सामने अनेक आर्थिक समस्याएं हैं, जिनमें से विदेशी मुद्रा, देश में पूंजी निर्माण का स्वस्थ वातावरण, और उद्योग को आवश्यक प्रोत्साहन, बढ़ती हुई महंगाई को रोकना तथा जन सामान्य में बचत की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन आदि मुख्य हैं। हमें आशा करनी चाहिये कि श्री देसाई देश की आर्थिक समस्याओं को यथार्थवादी दृष्टिकोण से देखेंगे और इन कार्यों में सफल होंगे।

वस्त्रोद्योग-संगठन

जब विपत्ति आती हैं, तब वह साथियों को संगठन के लिए विवश कर देती है, इसका एक उदाहरण गत मास में इण्डियन काटन मिल्स फैडरेशन की स्थापना है। यद्यपि १९५० में इस प्रकार के संगठन का विचार उत्पन्न हो चुका था, किन्तु उसकी स्थापना अब हुई है, जब वस्त्रो-द्योग काफी संकट में पड़ गया। श्री कस्तूरभाई लाल भाई इसके अध्यक्ष चुने गये हैं। बम्बई, अहमदाबाद, पश्चिमी बंगाल, इन्दौर, बड़ौदा, नागपुर, कानपुर, सौराष्ट्र और राजस्थान के मिल मालिक संघ इसमें सम्मि-लित हुए हैं। अभी तक दक्षिण भारतीय मिल मालिक संघ इसमें सम्मिलित नहीं हो सका। बहुत सम्भवतः इसका कारण दक्षिण और उत्तर भारत की मिलों के हितों में परस्पर विरोध है। दक्षिण में अधिकांश मिलें केवल

सूत कातने वाली हैं। वे हथकरघा उद्योग को सक्रिय सहायता पर विशेष जोर देना चाहती हैं, क्योंकि उससे उनका सूत बिकता है। उत्तर भारत की मिलें हथकरघा उद्योग को अपना प्रतिस्पर्धी मानती हैं। दृष्टिकोण के इस भेद के कारण वे इस नये एसोसिएशन में अभी तक सम्मिलित नहीं हुईं। नये एसोसिएशन को वस्त्रोद्योग के सामने आने वाली विविध समस्याओं का सामना करना है। एक ओर उसे भारत सरकार के नियंत्रणों तथा बन्धनों का एक सीमा तक विरोध करना है, दूसरी ओर वस्त्रोद्योग के विकास की विविध समस्याओं को हल करना है। मशीनों का आधुनिकीकरण, निर्यात में वृद्धि, वेतनों में एक समान रूपता आदि आज की मुख्य समस्याएं हैं। श्री कस्तूर भाई लालभाई के कथनानुसार यह एसोसिएशन प्रदर्शनियों का संगठन करेगा, उद्योग की समस्याओं को देश के सामने रखेगा, शोधकार्य तथा अध्ययन की व्यवस्था करेगा। और व्यापारिक हितों की रक्षा के लिए प्रयत्न करेगा परन्तु यह सब काम तभी हो सकेंगे, जब यह एसोसिएशन क्षेत्र की सीमा छोड़ कर विविध भागों के हितों को एक समान रूप से देखेगा, और छोटे बड़े उद्योगों पर सामान रूप से दृष्टि रखेगा।

उद्योग की आचरण संहिता

कुछ समय पूर्व सरकार, मिल मालिक और मजदूर-संघ में एक निर्णय हुआ था कि औद्योगिक शान्ति के लिए एक आचरण संहिता बनाई जाय, जिसका पालन सभी दल करें। अब मालूम हुआ है कि कर्मचारियों और मिल-मालिकों की अनेक संस्थाओं ने मालिकों के तीन केन्द्रीय संघों और ४ मजदूर संस्थाओं ने इसे स्वीकार कर लिया है। चारों मजदूर संस्थाएं २० लाख मजदूरों का प्रतिनिधित्व करती हैं। इस संहिता के अनुसार दोनों पक्ष समस्त विवादों और कठिनाइयों को परस्पर बातचीत, समझौते तथा पंच फैसलों द्वारा समझायेंगे। बल प्रयोग, दमन, धीरे कार्य करो, हड़ताल और ताला बन्दी आदि का आश्रय कोई पक्ष नहीं लेगा। किसी विवाद में एक पक्षीय कार्यवाही नहीं की जायेगी। मजदूर अनुशासन में रहकर काम करेंगे। तोड़ फोड़ आदि अनुशासनहीनता के कार्य नहीं करेंगे। अपराधियों के विरुद्ध भले ही वे मजदूर हों या प्रबन्धकर्त्ता, उचित कार्यवाही की जायगी। यह आचरण संहिता अत्यन्त उपयोगी है और यदि इस पर ईमानदारी से दोनों पक्षों ने पालन किया तो इसमें सन्देह नहीं कि उद्योग की स्थिति बहुत अच्छी हो जायगी। पिछले कुछ समय से भारत सरकार एक बहुत बड़ा विनियोजक (एम्प्लायर) होती जा रही है। इसलिए उसके कर्मचारियों और अधिकारियों के जिम्मे विशेष उत्तरदायित्व आ गया है। उन्हीं के व्यवहार से सरकारी उद्योगों में काम करने वाले मजदूर भी अपना रूख बदलेंगे और समस्त देश को नयी प्रेरणा देंगे। आज स्थिति संतोषजनक नहीं है। मजदूरों को यह शिकायत है कि अनेक औद्योगिक सुविधाएं जो निजी उद्योग में कानूनन मजदूरों को मिलती हैं, सरकारी उद्योगों में नहीं मिलतीं। मध्य प्रदेश के रा० मजदूर संघ ने इसकी विशेष शिकायत की है। दूसरी तरफ हम मजदूर नेताओं से भी एक बात कहना चाहते हैं कि उनका उत्तरदायित्व भी आचार संहिता से बहुत बढ़ गया है। आज प्रत्येक नागरिक को यह समझना है कि उसके आलस्य और परिश्रम, नियमित अनुशासन और अनुशासनहीनता, ईमानदारी से मेहनत और शिथिलता— सबका प्रभाव देश की आर्थिक समृद्धि पर पड़ता है।

व्ययों में कटौती

कुछ समय पहले श्री घनश्यामदास बिड़ला के नेतृत्व में एक प्रतिनिधि मण्डल विदेशों में गया था। उसने अपनी रिपोर्ट देते हुए एक सलाह यह दी थी कि हमें अभी उत्पादन योजनाओं पर अधिक व्यय करना चाहिये, जिससे निकट भविष्य में हम कुछ कमा सकें, न कि समाज सुधार योजनाओं पर, जो वस्तुतः अधिक आय के बाद स्वयं किये जायेंगे। ऐसा प्रतीत होता है कि भारत सरकार ने इस परामर्श को स्वीकार कर लिया है। १९५८-५९ की योजना सम्बन्धी प्रवृत्तियों पर जो नोट प्रकाशित किया गया है, उससे यह प्रतीत होता है कि सरकार हथ-करघा और चरखा-उद्योग की राशि ८.३२ करोड़ को आधा कर रही है। प्रारम्भिक और बेसिक शिक्षा आदि पर भी व्यय ५०% कर दिया जायगा। विभिन्न राज्यों में शुरू होने वाली योजनाओं में भी ७० करोड़ रु० की कमी की

(शेष पृष्ठ २२८ पर)

हमारी पंचवर्षीय योजना : कुछ विचार व परामर्श

(श्री घनश्यामदास बिड़ला)

देश के प्रमुख उद्योगपति श्री घनश्यामदास बिड़ला ने पंचवर्षीय विकास योजना के सम्बंध में एक भाषण देते हुए कुछ महत्वपूर्ण विचार प्रकट किये थे। उसके कुछ आवश्यक अंश नीचे दिये जा रहे हैं।

द्वितीय योजना की सफलता प्रति व्यक्ति की आमदनी में वृद्धि तथा अधिक रोजगार से मापी जायगी। इस लक्ष्य तक पहुँचने के लिए योजना में कुछ संशोधन होने चाहिए।

कृषि सम्बन्धी उत्पादनों तथा खाद के उत्पादन के प्रति अधिक ध्यान देना होगा। औद्योगिक क्षेत्र में अधिक से अधिक भारी माल के उत्पादन के प्रति प्रयत्न करना होगा। उद्योग का हित आज वही है जो जनसामान्य का हित है। दोनों में कोई विरोध नहीं है। मैं इस बात पर प्रधान मंत्री से सहमत हूँ कि हमारा लक्ष्य समाजवादी समाज की स्थापना है। समाजवादी समाज में न सरकारी क्षेत्र के लिए स्थान है और न ही निजी क्षेत्र के लिए। समाजवादी समाज में एक ही सामाजिक क्षेत्र (सोशल सेक्टर) होगा—जिसका उद्देश्य समाजका का कल्याण होगा तथा सभी साधन देश के कल्याण के लिए प्रयुक्त होंगे।

० ० ० ०

द्वितीय योजना के सम्बन्ध में काफी तर्क वितर्क चल रहा है। हम में से बहुत से यह भूल गये है कि योजना स्वयं एक साधन मात्र है, वह साध्य या लक्ष्य नहीं है। योजना का लक्ष्य अधिक उत्पादन, अधिक समृद्धि तथा सम्पत्ति का न्याय पूर्ण वितरण है।

द्वितीय योजना में ८० लाख लोगों के लिए रोजगार देने का मतलब यह नहीं है कि सिर्फ औद्योगिक क्षेत्र में ही सब की खपत हो जाय। सिर्फ औद्योगिक तथा कृषि क्षेत्र में अधिक उत्पादन से नहीं, पढ़ाई, स्वास्थ्य तथा समाज कल्याण आदि क्षेत्रों में भी लोगों को अधिक रोजगार मिलेगा। सभी समुन्नत देशोंमें रोजगार इन्हीं अतिरिक्त सेवाओं के द्वारा दिया जाता है। यह ठीक है कि इससे उत्पादन की वृद्धि में बहुत मदद नहीं मिलती। आज तक हम काफी लोगों को रोजगार नहीं दे पाये, इस दृष्टि से अभी समाजवादी समाज का लक्ष्य दूर की बात है। जहाँ तक निजी पूंजीका प्रश्न है, ७०० करोड़ रु० के विनियोजन का लक्ष्य बहुत पहले ही पूर्ण हो चुका है।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत निजी क्षेत्र ने अपने लक्ष्य को पूरा कर लिया है तथा अनेक क्षेत्रों में उत्पादन बढ़ाने की दिशा में वह तेजी से आगे बढ़ता जा रहा है। जहाँ तक सरकारी क्षेत्र का सवाल है, उस क्षेत्र का किस्सा कुछ अलग ही है।

० ० ० ०

औद्योगिक उन्नति के अनुपात से प्रतिव्यक्ति की आय में भी वृद्धि नहीं हुई, जिससे खपत में और उसके परिणाम स्वरूप उत्पादन में क्रमशः कमी हो गई। अगर उत्पादन के साथ साथ आमदनी में भी वृद्धि होती तो अधिक उत्पादन तथा अधिक बिक्री में कोई कठिनाई नहीं हुई होती।

निजी क्षेत्र में जहां इतनी सफलता प्राप्त हुई है, वहां इसके विपरीत सरकारी क्षेत्र में सफलता बहुत कम मिली है। अगर पूंजी लागत के लक्ष्य में हम सफल भी हुए, मुझे सन्देह है कि उत्पादन के लक्ष्य की पूर्ति न होगी। सरकारी क्षेत्र में इस्पात के उत्पादन के लक्ष्य की पूर्ति संभव होगी, जब कि कोयले का उत्पादन का लक्ष्य पूर्ण रूप से असफल रहा। सिर्फ ३.९. मिलियन टन ही कोयले का उत्पादन हुआ, जबकि हमारा लक्ष्य १६ मिलियन टन का था। २२ लाख टन खाद की आवश्यकता थी जबकि केवल ९ लाख टन का ही उत्पादन हुआ। रेल्वे अभि वृद्धि सम्बन्धी योजनाओं में उन्नति हुई, लेकिन हमने लक्ष्य ही बहुत कम रखा था इसे बहुत ऊंचा करने की आवश्यकता है।

कृषि क्षेत्र

नियमित उत्पादन के सम्बन्ध में अधिक निराशा औद्योगिक क्षेत्र में नहीं है, बल्कि कृषि क्षेत्र में है। कृषि

क्षेत्रमें उत्पादन लक्ष्य की प्राप्ति की दिशा में घोर निराशा हुई है। इस दिशा में हम लोग बुरी तरह विफल हुए हैं। देश की करीब २ आधी सम्पत्ति कृषि द्वारा पैदा की जाती है। अगर लक्ष्य की पूर्ति न हुई तो जनता में क्रय शक्ति क्षीण हो जायगी, जिससे उत्पादन पर और भी बुरा प्रभाव पड़ेगा। कृषि में देश का विकास बहुत कम हुआ है। सूखे तथा बाढ़ से बचने के लिए बड़ी २ रकमें खर्च की गईं, फिर भी काफी अधिक मात्रा में जल सुविधाओं का उपयोग नहीं हो रहा है। हमारी सारी योजना व कार्य पद्धति में कहीं नुक्स जरूर है। अगर कृषि क्षेत्र में हम लोग विफल हुए तो समस्त आयोजना ही चकनाचूर हो जायगी। कृषि क्षेत्र में भीषण भूलें की गई हैं। और तो और उत्पादन लक्ष्य का ठीक ठीक निर्देश तक नहीं किया गया है। वस्त्रोत्पादनके लक्ष्य के साथ साथ उसके लिए आवश्यक मात्रा से रुई के उत्पादन का लक्ष्य बहुत कम रखा गया है और हमें ४५ करोड़ रु० की लागत से १० लाख गांठों का आयात करना पड़ता है, ताकि हमारी मिलें चालू रह सकें। व्यापारिक फसलोंके बारे में भी यही बात है। चाय उत्पादन पर भारी निर्यात करों का बुरा प्रभाव पड़ रहा है। यदि हम लोगों ने कृषि उत्पादन की ओर अधिकाधिक ध्यान नहीं दिया तो हमारे सभी लक्ष्य अधूरे सिद्ध होंगे और हम लोग बिल्कुल विफल सिद्ध होंगे। भारत की उन्नति कृषि पर ही अवलम्बित है।

ο ο ο ο

मैं कुछ उद्योगपतियों की इस बात से सहमत नहीं हूँ कि, बढनेके वजाय, राष्ट्रीय आय बहुत कम हो गई है। वास्तवमें जनता का जीवन स्तर—काफी मात्रा तक ऊंचा उठा है।

द्वितीय योजना की सफलता तथा कृषि सम्बन्धी उत्पादन की वृद्धि के लिए यह एक जरूरी बात थी कि देश के अन्दर जो जल सुविधाएं तथा साधन प्राप्त हैं उन का उचित उपयोग हो। खादों के अधिकाधिक उत्पादनको प्राथमिकता मिलनी चाहिए। निजी उद्योगको भी खाद-उत्पादन में भाग लेने का अधिकार दिया जाना चाहिए।

बिजली का उत्पादन

यह दुःख की बात है कि प्रान्तीय सरकारें बिजली के उत्पादन पर जो कि औद्योगीकरण का मुख्य साधन है अधिक कर का बोझ लाद रही हैं। वे अपने आप नुकसान पहुँचा रही हैं, क्योंकि इस प्रकार के कर के बोझ से औद्योगिक विकास में रुकावट पैदा हो जाती है और एक ओर हम लोहे का उत्पादन बढ़ा रहे हैं, दूसरी ओर नये उद्योग खोलने की सुविधाएं नहीं दे रहे हैं। अब उन कामों में पूंजी लगाने की प्राथमिकता दी जानी चाहिए जिससे थोड़े समय के अन्दर ही अधिक प्रतिफल मिल जायगा। पूंजीगत माल के उत्पादन पर विशेष ध्यान देना होगा। इस्पात उत्पादन के केन्द्रों के चारों तरफ सैकड़ों कारखाने खुलने चाहिए, जिससे निजी पूंजी को भी लाभ होगा। सरकारी तथा निजी पूंजी के मध्य अधिक सहयोग व संगति होनी चाहिए। मुझे खुशी है कि देश इस दिशा में अग्रसर हो रहा है तथा निजी पूंजी के प्रति जो शंकाएं थीं, दूर हो रही हैं। हमें सरकारी क्षेत्र के भी महत्त्व का अनुभव करना चाहिए, तथा उसे सहयोग देना चाहिए।

ο ο ο ο

आने वाले कुछ वर्षों तक विदेशी मुद्रा सम्बन्धी कठिनाइयां रहेंगी। मैं इस बात का स्वागत नहीं करता कि विदेशों से भारी मात्रा में ऋण लें, क्योंकि आखिर जब चुकाने का समय आयगा तो यह समस्या बहुत अधिक गम्भीर हो जायगी है। अच्छा तो यह है कि विदेशी पूंजी लगाने के लिए आवश्यक वातावरण पैदा करें।

सरकार को चाहिए कि इस मामले पर अधिक ध्यान दें। कोई भी देश विदेशी पूंजी की लागत के बिना समृद्ध नहीं हुआ है। विदेशों से सीधा ऋण लेने की बजाय यदि विदेशी पूंजी ली जाय, तो वह अधिक हानिकारक सिद्ध होगी, यह हमारा भ्रम है। विदेशी पूंजी से देश का उत्पादन व सम्पत्ति भी बढ़ेगी, और उसके चुकाने का सवाल बहुत समय तक नहीं उठेगा। दूसरी ओर लिये गये ऋण एक नियत समय चुकाने पड़ेगें।

———

अमेरिका में आर्थिक मन्दी?

कृष्णचन्द्र विद्यालंकार

पिछले कुछ समय से समस्त संसार का ध्यान अमेरिका की आर्थिक स्थिति की ओर चला गया है। उसकी आर्थिक स्थिति का प्रभाव विश्व के बहुत बड़े भाग पर पड़ता है, इसलिये उसकी आर्थिक स्थिति के सुधार या ह्रास की ओर ध्यान जाना स्वाभाविक भी है। पिछले कुछ समय से वहां आर्थिक मंदी बढ़ती जा रही है। यह ख्याल था कि फरवरी तक चरम सीमा पर पहुँचने के बाद बेकारी कम होने लगेगी, किन्तु मार्च के मध्य तक भी स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ। उत्पादन भी लगातार कम हो रहा है। जनवरी में बेकारों की संख्या ७ लाख बढ़ी थी। फरवरी में यह संख्या ११ लाख बढ़ गई। अब वहां ५२ लाख बेकार हैं। उत्पादनका सूचक अंक १३० है, जो कि १९४५ के बाद से न्यूनतम है।

विभिन्न देशों में

अमेरिका की आर्थिक मंदी का प्रभाव संसार के विभिन्न देशों पर भी पड़ने लगा है। बहुत से देशों में बेकारी बढ़ती जा रही है। लन्दन के प्रसिद्ध पत्र "इकानामिस्ट" में प्रकाशित एक लेख के अनुसार कुछ विभिन्न देशों की आर्थिक स्थिति संक्षेप से निम्नलिखित है:—

अमेरिका—फरवरी, ७.७ प्र० श० बेकारी (पिछले वर्ष ४.७ प्र० श०), जनवरी में गत वर्ष की अपेक्षा कारखानों में उत्पादन ८.९ प्र० श० कम, विदेशी स्वर्ण मुद्रा में ३० करोड़ डालर की कमी, ट्रेजरी बिलों का दर घटा दिया गया है। सरकारी व्यय में वृद्धि और करों में कमी।

कैनाडा—जनवरी, ८.८ प्र० श० बेकारी (५.३ प्र० श०), दिसम्बर में ६.७ प्र० श० उत्पादन में कमी, अमेरिकन पूंजी के विनियोजन में कमी, करों में कमी।

इंगलैंड—फरवरी, १.९ प्र० श० बेकारी (१.८ प्र० श०), उत्पादन में १ प्र० श० कमी, ब्याज के ऊंचे दर, स्वर्ण भण्डार में वृद्धि।

जापान—बेकारी की संख्या अस्पष्ट, औद्योगिक उत्पादन में ३ प्र० की वृद्धि, मई में बैंक दर में वृद्धि।

जर्मनी—जनवरी, बेकारी में थोड़ी सी कमी, औद्योगिक उत्पादन में ५ प्र० श० वृद्धि, परन्तु निर्यात के आर्डर कम हो रहे हैं, स्वर्ण और विनिमय कोष में दिसम्बर से कमी, बैंक रेट में ३॥ प्र० श० तक कमी।

बैलजियम—फरवरी, बेकारी ९ प्र० श० (७.२ प्र० श०), उत्पादन में ५ प्र० श० कमी, बैंक दर ४॥ प्रतिशत प्र० श० (३॥ प्र० श०) और कमी की संभावना।

इसी तरह एक और अखबार 'टाइम्स' (लन्दन) ने बढ़ती हुई बेकारी के अंक प्रकाशित किये हैं; जिनसे पता लगता है कि बैलजियम, ब्रिटेन, कैनाडा, डेनमार्क, फ्रांस, हालैण्ड और अमेरिका में बेकारी बढ़ रही है। 'यू० एस० न्यूज एण्ड वर्ल्ड रिपोर्ट' के १५ फरवरी के अंक में डैट्रायट (मोटर कारखानों का प्रसिद्ध नगर) के बारे में लिखा है कि इस शहर में ८ मजदूरों में से १ मजदूर बेकार हो गया है और काम की तलाश में है। अमेरिकन संकट का असर अन्य देशों पर भी पड़ने लगा है, जैसा कि ऊपर लिखे आंकड़ों से स्पष्ट है।

अमेरिका के १२ फैडरल रिजर्व बैंकों को अपना डिस्काउंट रेट ७ मार्च को २॥। से २। प्र० श० करना पड़ा है। पिछले ५ महीनों में यह तीसरी बार बैंक दर में कटौती हुई है। नवम्बर में ३॥ से ३ प्र० श०, जनवरी में ३ से २॥। प्र० श० और अब $\frac{1}{2}$ प्र० श० कमी की गयी है। सरकारी ट्रेज़री बिलों का रेट भी कम हुआ है। प्रमुख बैंकों के डिपोजिट भी कम होते जा रहे हैं, क्योंकि बैंक दर कम हो गया है।

कृषि में कमी

अमेरिकन अर्थ व्यवस्था का एक और पहलू यह है कि कृषि-पदार्थ बिक नहीं पा रहे हैं। उनका मूल्य यदि कम किया जाय तो समस्त अर्थ-व्यवस्था में क्रांति होने का खतरा है। इसलिए अमेरिकन सरकार ने किसानोंको यह राय दी है कि वे अपनी सारी भूमि में खेती नहीं करें। प्रत्येक फार्म के मालिक को प्रति एकड़ भूमि में खेती न करने पर मुआवजा के रूप में ५५ रु० दिये जायेंगे। अभी २०२७३ एकड़ में खेती घटाने की यह योजना चालू की

गई है। इसका मुख्य उद्देश्य कृषि में हो रहे अति उत्पा-दन को रोकना है। हम भारतवासियों के लिए तो सचमुच यह आश्चर्य की चीज है। हम तो एक एक इंच भूमि में कृषि बढ़ाने की चेष्टा कर रहे हैं और अमेरिकन सरकार अच्छी जमीन को परती रखने की सलाह दे रही है।

शायद बहुत से पाठकों को यह पता न हो कि आज से २७-२८ वर्ष पूर्व भी अमेरिका में एक भयानक मंदी आगई थी और अति उत्पादन के दुष्परिणामों को रोकने के लिए हजारों टन रुई और अनाज जला दिया गया या समुद्र में डाल दिया गया था, क्योंकि गिरते हुए मूल्यों ने अमेरिका में एक भयानक आर्थिक संकट उत्पन्न कर दिया था और लगातार बड़े बड़े कारखाने और बैंक फेल हो रहे थे। उसी समय रिपब्लिकन गवर्नमेन्ट को हटा कर डैमोक्रेट दल के नेता श्री रूजवेल्ट ने शासन-सूत्र संभाला था। अब फिर डैमोक्रेट आज के आर्थिक संकट का नारा लगा रहे हैं कि रिपब्लिकन सरकार आर्थिक मन्दी को दूर करने में बिलकुल असफल हो रही है।

अमेरिकन सरकार की दृष्टि

यह बात नहीं है कि अमेरिकन सरकार का इस दिशा में कोई ध्यान नहीं है। यह ठीक है कि अभी तक अमेरिकन राष्ट्रपति श्री आइजन हावर ने इस संकट को दूर करने के लिए कोई विशेष आदेश नहीं दिये। उनकी और उनके आर्थिक परामर्शदाताओं की सम्मति आज भी यह है कि वर्तमान स्थिति से घबराने की आवश्यकता नहीं है। संकट चरम सीमा पर पहुँच चुका है और अब उतार शुरू हो जायगा। अमेरिका के श्रममंत्री श्री मिचेल ने बताया है कि स्थिति में सुधार के लक्षण दिखाई देने लगे हैं और यदि आशा के अनुसार सुधार नहीं हुआ तो शासन उचित कार्यवाही अवश्य करेगा। टैक्सों में कमी आवश्यक होगी तो व्यवहार के प्रोत्साहन के लिए वह भी की जायगी। वित्तमंत्री श्री ऐंडरसन के कथनानुसार अनेक क्षेत्रों में दामों में कमी हो जाने से अधिक अच्छा सन्तुलन हो गया है तथा सभी पदार्थों के मूल्यों में स्थिरता आ गयी है। व्यक्तिगत आय अभी तक उच्च बनी हुई है। गृह निर्माण तथा विभिन्न उद्योगों के उत्पादन में वृद्धि हो रही है। १९४६ के बाद से कुल अमेरिकी उत्पादन और सेवाओं में लगभग [illegible] ३.३८ प्र० श० वार्षिक की वृद्धि हो चुकी है। १९०८ से १९४५ तक की औसत वृद्धि ३.३ प्र० श० प्रति वर्ष थी। यह ठीक है कि पिछले कुछ वर्षों से बहुत सी वस्तुओं की मांग पहले से कम हो रही है, किन्तु दूसरी ओर अनेक नयी वस्तुओं की मांग बहुत बढ़ रही है। मोटरों की संख्या में वृद्धि के कारण नयी सड़कों की और नये मकान बन जाने से रेफ्रीजेटर आदि घरेलू उपकरणों की मांग बढ़ भी गयी है। अमेरिका की बढ़ती हुई आबादी के कारण भी पदार्थों की मांग बढ़ रही है और इन बातों से यह अनुमान किया जा सकता है कि आर्थिक संकट की संभावनाएं बहुत अधिक नहीं हैं। १९५७ में वार्षिक उत्पादन की रफ्तार ४ खरब ३२ अरब ५० करोड़ डालर की थी, जबकि १९५६ में इससे १४ अरब डालर कम थी। उपभोग्य वस्तुओं की खपत भी १९५६ से इस वर्ष ५ प्र० श० अधिक रही। इस तरह सरकारी क्षेत्रों का यह विश्वास है कि आर्थिक संकट अभी तक नियंत्रण में है और यों तो अमेरिकन अर्थ-व्यवस्था "भीषण उतार-चढ़ावों से युक्त स्थिरता की व्यावस्था" है भारत स्थित अमेरिकी राजदूत श्री बंकर ने राष्ट्रपति के इस विचार का समर्थन किया है कि वर्तमान गिरावट एक अस्थायी घटना है, जिसका प्रभाव अधिक समय तक रहने वाला नहीं है। दीर्घकालीन स्थिरता का मुख्य कारण अमेरिकी आर्थिक क्रियाकलाप की असाधारण व्यापकता और विविधता है। यही कारण है कि कोरिया युद्ध के बाद फौजी खर्च में भारी कमी होने के बावजूद अर्थ व्यवस्था में कमी नहीं आई। यह ठीक है कि आज की स्थिति में कुछ संस्थाओं का व्यापार चौपट होगा और लोग बेकार हो जायंगे; किन्तु नये उद्योग उनका स्थान ले रहे हैं। सरकार ने पिछले २० वर्षों में अर्थ-व्यवस्था पर अनेक नियंत्रण अवश्य लगाये हैं, किन्तु पूंजीवादी स्वतन्त्र साहस की मूल प्रवृत्ति को नहीं बदला। सरकार समय-समय पर उद्योग और कृषि के लिए मार्गदर्शन पहले भी करती रही है और आगे भी करती रहेगी।

उपायों पर विचार

श्री बंकर के इस वक्तव्य से यह तो स्पष्ट है कि अमेरिका प्रतिकूल परिस्थितियों में से गुजर रहा है, किंतु यह भी मानना

पड़ेगा कि अमेरिकन अर्थशास्त्री स्थिति की वास्तविकता से अपरिचित नहीं हैं। उद्योग को प्रोत्साहन देने के लिए करों में कमी की सम्भावना जल्दी की जा रही है। निर्यात बहुत अधिक बढ़ाये जा रहे हैं। विभिन्न देशों को अधिकाधिक सहायता देकर भी निर्यात के लिए वातावरण उत्पन्न किया और उत्पादन बढ़ाया जा रहा है। राष्ट्रपति बेकारी का मुआवजा बढ़ाने का विचार भी कर रहे हैं।

राष्ट्रपति ने कांग्रेस से १६५६ में नदियों व बन्दरगाहों के विकास तथा बाढ़ नियंत्रण के लिए १७१.५ करोड़ डालर की मांग की है। सड़कों के निर्माण के लिए ६६० करोड़ डालर की योजना बनाई जा रही है जबकि, पहले ४०० करोड़ डालर व्यय करने का विचार था। घरों के निर्माण के लिए १८० करोड़ डालर व्यय करने की योजना पर सीनेट की स्वीकृति मिल चुकी है। डाकखानों, सरकारी इमारतों के निर्माण पर २०० करोड़ डालर की योजना बनाई गई है।

लोगों को अपने कारोबार बढ़ाने के लिए ३०० करोड़ डालर ऋण देने की व्यवस्था की जा रही है। रेल, जहाज तथा अन्य उद्योगों को सरकार विपुल राशि में सहायता प्रदान कर रही है। वाशिंगटन के निर्यात-आयात बैंक जिसकी पूंजी १ अरब डालर है और जिसे सरकार से ४ अरब डालर ऋण लेने का अधिकार है, इस दिशा में बहुत सहायता कर रहा है। राष्ट्रपति को यह विश्वास है कि सरकार और जनता के सहयोग से देश सम्भावित आर्थिक संकट के खतरे को दूर करने में अवश्य सफल होगा।

कारण

अमेरिका के इस संकट का मूल कारण क्या है, इस संबंध में मतभेद की पूरी गुंजाइश है। कुछ अर्थशास्त्री इसे अर्थचक्रकी स्वाभाविक गति मानते हैं जो निश्चित अवधि के बाद आया करती है। साम्यवादके समर्थक इसे पूंजीवादी व्यवस्था का दुष्परिणाम मानते हैं, तो गांधीवादी अर्थशास्त्री इसे बड़े-बड़े यंत्रों द्वारा मांग की अपेक्षा अत्यधिक मात्रा में उत्पादन मानते हैं। विभिन्न देशों में स्वावलम्बन की भावना बढ़ जाने तथा कुछ देशों में क्रय शक्ति कम हो जाने की वजह से अमेरिकन निर्यात में कमी भी इसका एक कारण है। यदि अमेरिका ने इस संकट को शीघ्र पार न किया तो यह असम्भव नहीं है कि अन्य देशों पर भी इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़े। खतरा यही है कि १६२६-३० की व्यापक मन्दी की पुनरावृत्ति न होने पाये। किन्तु हमें विश्वास करना चाहिए कि यह खतरा व्यापक रूप में आने वाला नहीं है और यदि विदेशों में मन्दी आई भी तो भारतीय नेता उसके प्रभाव को यथाशक्ति कम करने का प्रयत्न करेंगे, पर अभी तो देश में उत्पादन अधिक से अधिक बढ़ाने और मूल्य कम करने की आवश्यकता है।

कोयला उद्योग और सरकारी नीति

श्री कर्मचन्द थापर

भारतवर्ष के खनिजों में कोयले का महत्वपूर्ण स्थान है। शक्ति की ४० प्रतिशत व्यापारिक आवश्यकता कोयले से पूर्ण होती है। पंचवर्षीय योजना की प्रगति के साथ-साथ कोयला व्यवसाय को भी यह सिद्ध करना है कि वह देश की आवश्यकता-पूर्ति में पूरा भाग लेगा।

सौभाग्य से प्रकृति-माता भारत में, इस दृष्टि से बहुत उदार है। एक अनुमान के अनुसार ४० से ६० बिलियन टन कोयला भारत भूमि के भूगर्भ में विद्यमान है। रानीगंज की खानों में २ हजार फुट नीचे तक कोयला मिलता है। और भी जो जांच-पड़ताल हो रही है, उससे ज्ञात होता है कि भारत में ऐसा कोयला काफी मात्रा में है जो लोहे के कारखानों के काम आ सकता है और उत्कृष्ट कोटि के कोयले (कोकिंग कोल) को अनावश्यक रूप से न जलाकर सुरक्षित रखा जा सकता है। यह भी संतोष की बात है कि भारत का कोयला उद्योग देश की बढ़ती हुई आवश्यकताओं के अनुसार अपना उत्पादन बढ़ाने के लिए प्रयत्नशील है। पिछले १० वर्षों में कोयले का उत्पादन बहुत बढ़ा है, जैसा कि निम्न तालिका से स्पष्ट होता है :—

१९४६	२९२.७ लाख टन
१९५६	३९४.३ ,,
१९५७	४२०.० ,,

दूसरी योजना में कोयला उद्योग

दूसरी पंचवर्षीय योजना के अनुसार कोयला उद्योग को और भी उन्नति करनी है तथा ६०० लाख टन तक अपना उत्पादन आगामी ४ वर्षों में बढ़ाना है। विभिन्न खानों में निजी और सरकारी उद्योगों के द्वारा क्रमशः १०० और १२० लाख टन उत्पादन बढ़ाना है। यह अत्यन्त कठिन कार्य अवश्य है, परन्तु असंभव नहीं है। यह कुछ आश्चर्य की बात अवश्य है कि यद्यपि निजी उद्योग आज ९० प्रतिशत कोयला उत्पन्न करता है, तथापि उसकी उन्नति का लक्ष्य सरकारी उद्योग की अपेक्षा कम रखा गया है। निजी उद्योग अपने अतीत अनुभव, योग्यता और वर्तमान में उपलब्ध साधनों के कारण अधिक कोयला उत्पन्न करने की स्थिति में है। यद्यपि निजी उद्योग एक मूल्यवान व[र्ष] सरकारी निश्चय की प्रतीक्षा में बरबाद कर चुका है, तथा[पि] उसने ३० लाख टन अपना उत्पादन बढ़ा लिया है। य[दि] सरकार पूरी सुविधाएं और प्रोत्साहन दे तो कोयला उद्यो[ग] बहुत कम समय में अपनी उन्नति प्रदर्शित कर सकता है[।] सरकारी उद्योग दूसरी योजना के पहले दो वर्षों में ३[०] लाख टन के स्तर को कायम ही रख सका है। अतिरि[क्त] उत्पादन में उसने सफलता नहीं पाई। आज की गति के देखते हुए, यह आशा करना कठिन ही है कि वह आगाम[ी] ३ वर्षों में अपना १२० लाख टन का लक्ष्य पूरा क[र] सकेगा।

हमें यह समझ लेना चाहिये कि यदि कोयल[ा] उद्योग अपने लक्ष्य को पूर्ण नहीं कर सका तो इसक[ा] औद्योगिक विकास की समस्त योजना पर प्रभाव पड़ेगा[।] इसलिए अभी से हमें यह सोच लेना चाहिये कि अ[प]ने नये लक्ष्यों को पूरा करने के लिए दोनों क्षेत्रों में (नि[जी] और सरकारी) किस प्रकार विभाजन किया जाये। सरका[री] उद्योग को १२० लाख टन का अतिरिक्त उत्पादन करने [के] लिए एक अनुमान के अनुसार ६० करोड़ रु० पूंजी क[ी] आवश्यकता होगी। सरकार ने बहुत भारी संख्या में मशी[नें] खानों के पास जरूरत से बहुत पहले ही मंगवा रखी हैं। अ[भी] कोयले की खानें इस स्थिति में नहीं पहुँचीं कि मशीनों [का] इस्तेमाल किया जा सके। निजी उद्योग को यह विश्वास [है] कि वह बहुत कम खर्च में कोयले का उत्पादन बढ़ा सक[ता] है और इस तरह सरकार को भारी खर्च की परेशानी [से] बचा सकता है। लेकिन, ऐसा प्रतीत होता है कि सरकार [के] कोयला उत्पादन के सम्बन्ध में कुछ अपने ही विचार हैं[।] उसे इस बात की चिन्ता अधिक है कि कोयला कौ[न] उत्पन्न करता है। कोयला कितना पैदा होता है और कित[ने] कम खर्च पर उत्पन्न होता है, इसकी चिन्ता कम है।

योजना का महत्व इस बात में है कि वह निश्चि[त] समय में पूर्ण हो। यदि दुर्भाग्य से सरकारी क्षेत्र के भरो[से] बैठने से कोयले के उत्पादन लक्ष्य पूर्ण नहीं होते, [तो]

[सम्पू[र्ण]

योजना को काफी धक्का लगेगा। इसलिए यह आवश्यक है कि उत्पादन लक्ष्य की अधिक जिम्मेदारी निजी उद्योग पर हो और उसे प्रत्येक प्रकार की सुविधा और प्रोत्साहन दिया जाय।

सरकारी क्षेत्र से पक्षपात

लेकिन, असल में हो क्या रहा है? कोयले का विकास भविष्य में सरकारी खानों के लिए ही सुरक्षित रख दिया प्रतीत होता है। कोयले के बोर्ड से निजी उद्योग को बिलकुल पृथक कर दिया गया है। पूंजी निर्माण की स्थिति विकट होती जा रही है और ज्यों-ज्यों समय बीतता जायगा, खानों के सुधार और विकास में रुपया लगाना और भी कठिन होता जायगा। आज से पहले ऐसा समय नहीं आया था कि जब कोयला उद्योग को सुदृढ़ आधार पर खड़ा करने की इतनी आवश्यकता प्रतीत हुई हो। किन्तु सरकार की नीति अब तक उत्साहवर्धक नहीं है। सरकार ने कोयले के दाम कुछ बढ़ाये अवश्य हैं, किन्तु वह इतने ना-काफी हैं कि उससे कोयला उद्योग को कोई प्रोत्साहन नहीं मिल सकता। एक तरफ कुछ दाम बढ़ाये गये हैं, दूसरी और मजदूरी की लागत और भी ज्यादा बढ़ा दी गई है।

मूल्य वृद्धि बनाम उत्पादन

बहुत समय से कोयला उद्योग बग़ैर मुनाफा कमाये किसी तरह चलता भर रहा है। यद्यपि १९४७ के २९७ की अपेक्षा अक्तूबर, १९५७ में ४३२.८ तक सामान्य मूल्यों के निर्देशक अंक बढ़गये हैं, तथापि कोयले के मूल्यों में २० प्र० श० से अधिक वृद्धि नहीं हुई। मूल्यों में जो वृद्धि हुई है, वह मजदूरों के वेतन दर बढ़ने के परिणाम स्वरूप की गई है। उदाहरण के तौर पर सबसे अन्तिम लेबर अपीलेट ट्रिब्यूनल के फैसले के परिणामस्वरूप मजदूरों की निम्नतम श्रेणी की मजदूरी ६६ रु० १ आने से बढ़ाकर ७८ रु० सवा आठ आने मासिक कर दी गई है

इस खर्च की पूर्ति के लिए डेढ़ रु० प्रति टन मूल्य वृद्धि से वस्तुतः अतिरिक्त उत्पादन व्यय भी पूरा नहीं होता। यदि ट्रिब्यूनल के नये फैसले पर अमल किया जाय तो उत्पादन व्यय प्रति टन १ रु० १२ आ० बढ़ जायेगा अर्थात ४ आ० प्रति टन मजदूरों को उद्योग अपने पास से देगा, जबकि मशीनरी तथा भवन निर्माण आदि सामग्री के मूल्य भी पहले से बहुत बढ़ गये हैं। इस तरह यह स्पष्ट है कि भारत सरकार की कोयला मूल्य-नीति उद्योग के लिए असंतोषजनक है। अभी तक सरकार इस सम्बन्ध में कोई अन्तिम निश्चय नहीं कर पाई है।

सरकारी नियंत्रण

कोयला उद्योग सरकार द्वारा अत्यन्त नियंत्रित है। विविध स्थितियों में कोयले पर सरकार नियंत्रण करती है—कोयले की उत्पादन विधि, वितरण, मूल्य निर्धारण मजदूरी की दर और मजदूरों को सुविधाएं आदि सब पर सरकार का नियंत्रण है। कोयले पर करीब १५ वर्ष से सरकारी नियंत्रण चले आ रहे हैं। इनके कारण उद्योग के विकास का प्रोत्साहन बहुत शिथिल पड़ता जा रहा है। सरकार का कर्तव्य है कि वह कोयला उद्योग पर लगी हुई पाबंदियां कुछ शिथिल करे और सरकारी मशीनरी की पेचीदगियों को भी कम करे। आजकल कोयला उद्योग को निम्नलिखित सरकारी संस्थाओं से वास्ता पड़ता है। १—कोल बोर्ड, २—कोल कन्ट्रोलर, ३—माइन्स डिपार्टमेन्ट, ४—लोहा इस्पात मंत्रालय, ५—खान और ईंधन, ६—श्रम मंत्रालय, और ७—रेलवे आदि। सरकार के विभिन्न भागों में परस्पर संगति व सुव्यवस्था न होने के कारण किसी प्रश्न के निर्णय में बहुत देरी लग जाती है और कभी कभी इन विभागों के आदेशों में परस्पर विरोध भी होता है। इन सरकारी विभागों में परस्पर संगति होनी चाहिये।

परिवहन की कठिनाइयां

कोयला उद्योग के विकास में एक बड़ी बाधा परिवहन की है। जब तक परिवहन का उचित प्रबन्ध नहीं होता, तब तक उद्योग से यह आशा करना अनुचित होगा कि वह खानों से लगातार कोयला निकाल कर बाहर पहुँचाये। यद्यपि दूसरी योजना में रेलवे के विकास के लिए काफी राशि नियत की गई है तथापि आवश्यकता को देखते हुए वह कम है। १८०० लाख टन कोयला ले जाने की व्यवस्था १९६० तक आवश्यक होगी, जबकि अनुमानतः रेलवे १९[illegible] तक केवल १६०० लाख टन ढोने में समर्थ होगी। वस्तुतः परिवहन कठिनाइयां बहुत अधिक हैं। जितना कोयला खानों से निकाला जाता है, उतना कोयले का निकास [illegible] हो पाता। यह अनुमान किया गया है कि १९५७-५८ [illegible] ४८६० माल गाड़ी के डिब्बे प्रतिदिन चाहियें और १९६० तक क्रमशः बढ़ते बढ़ते ६८०४ डिब्बों की दैनिक आवश्यकता पड़ेगी। सरकारी उद्योग के कोयले को परिवहन की सुविधाएं भी अधिक मिल रही हैं, जबकि निजी क्षेत्र के [illegible] स्टाक में बहुत भारी मात्रा में कोयला मौजूद है और [illegible] दारों को सख्त जरूरत होने पर भी नहीं मिल रहा। जुलाई १९५७ के अन्त में निजी खानों के पास ३० लाख [illegible] निकाला हुआ कोयला विद्यमान था, जबकि सरकारी खानों के पास केवल ३७११० टन कोयला था। वस्तुतः कोयले के परिवहन की समस्या बहुत गम्भीर है।

उद्योग के सभी अंगों का कर्तव्य है कि वे राष्ट्रीय महत्व के इस उद्योग की उन्नति में अपना अपना [illegible] अदा करें। जब तक खनक यथाशक्ति कोयला उत्पादन [illegible] लिए प्रयत्न नहीं करता, तब तक राष्ट्रीय विकास की समस्त योजनाओं पर उसका बुरा प्रभाव पड़ता रहेगा। कोयले [illegible] खनक आज २६ कार्य दिनों के महीने में ७८ रु० ४[illegible] न्यूनतम वेतन पाता है। अन्य अनेक सुविधाएं [illegible] मिलती हैं। उसके वेतन और सुविधाओं में आज किसी [illegible] भी कोई शंका नहीं है। परन्तु हमारी यह आशा पूर्ण न हुई कि मजदूरी की दर में वृद्धि के साथ साथ उत्पादन [illegible] बढ़ जायेगा। इसके विपरीत काम की शिथिलता और [illegible] शासनहीनता बढ़ी है। अधिकारों के साथ साथ [illegible] कर्तव्य की भी चिन्ता अवश्य करनी चाहिये। मजदूर [illegible] सरकार तथा मिल मालिकों सबका कर्तव्य है कि वह [illegible] मजदूरों में यह भावना उत्पन्न करने का प्रयत्न करें।

स्वाधीन भारत में पोत-निर्माण

श्री शिवध्यानसिंह चौहान

पोत-निर्माण किसी देश की अर्थ-व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण अंग गिना जाता है। इसकी गणना आधारभूत उद्योगों में की जाती है। सम्भवतः इसी कारण भारत सरकार ने पोत-निर्माण को अपने औद्योगिक नीति प्रस्ताव १६५६ की 'ए' अनुसूची में स्थान दिया है और उसके विकास का सारा उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिया है। यह सर्वमान्य है कि इस उद्योग की उन्नति से भारत को १२० करोड़ रुपए वार्षिक की बचत हो सकती है, जो कि अब जहाज़ी भाड़ों के रूप में हमें विदेशी कम्पनियों को देने पड़ते हैं।

जहाज-निर्माण भारत के ऐसे प्राचीनतम समुन्नत व्यवसायों में से हैं, जिस पर हम गर्व कर सकते हैं, किन्तु विदेशी सरकार ने हमारे इस सुसंगठित उद्योग के विनाश के सक्रिय प्रयत्न किए तथा कानून द्वारा भारतीय जहाजों का ब्रिटेन आना-जाना बन्द कर दिया। अतएव यह उद्योग पततोन्मुख होने लगा और १६ वीं शताब्दी के अन्त तक मृतप्राय हो गया। अनेक पोत-निर्माण घाट जो भारतीय तट पर थे, वे लुप्त हो गए और हमारे नामी जहाज निर्माताओं का नाम तक मिट गया+। विदेशी सरकार की घातक नीति से भारतीय पोत-निर्माण कला का ह्रास अवश्य हो गया, किन्तु वह लुप्त नहीं हुई। अत्याचार से अवनति हो सकती है, किसी जीवित कला का प्राणान्त नहीं। भारतीय कलाकारों ने साहस नहीं छोड़ा और विषम परिस्थितियों का सामना करते हुए प्रयत्न करते रहे। अब हमारे पोत-निर्माताओं और नाविकों के दुर्दिन की काली घटायें फट चुकी हैं और सुख-वैभव की सुहावनी घड़ियां आ गई हैं। तो भी अभी हमें एक लम्बा रास्ता तय करना है।

इस समय बम्बई, कलकत्ता और कोचीन में पांच जहाज बनाने वाली कम्पनियां हैं, किन्तु ये छोटे-छोटे जहाज (लांच, टग, बजरा, ट्रालर आदि) बनाती हैं। ये कम्पनियां बड़े-बड़े धुआंकशों की मरम्मत भी करती हैं।

पाल-पोत (Sailng Vessels) बनाने के भारत के पूर्वी और पश्चिमी तट पर अनेक घाट (यार्ड) हैं, जहां उत्तम पोत बनते हैं। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण घाट ये हैं—माण्डवी, अंजार, सलाया, जोदिया, जामनगर (बेदी), सीका, नवलक्खी, पोरबन्दर, वीरावल, भावनगर, नवसारी, बुलसर, बिलीमोरा, डामन, बेसीन, थाना, ऊरन, पनवेल, अलीबाग, अंजनवल, जैगढ़, रत्नागिरि, देवगढ़, मलवां, वेंगुरला, मारमागोआ, मंगलौर, बेपुर (कालीकट) कोचीन, तूतीकोरन, मछलीपट्टम, राजमन्द्री, काकानाडा और कलकत्ता आदि।

विशाखापटनम जहाजघाट

ये छोटे जहाज और पाल-पोत केवल तटीय व्यापार के लिए उपयोगी हैं, विदेशी व्यापार के लिए नहीं। वस्तुतः आज हमें बड़े जहाजों की विशेष आवश्यकता है। ऐसे जहाज बनाने का देश में केवल एक कारखाना है जिसकी स्थापना का श्रेय पूर्णतः सिंधिया कम्पनी को है।

सन् १६१६ में सिंधिया कम्पनी के बनने के साथ ही इस कम्पनी ने एक जहाज बनाने का कारखाना स्थापित करने का विचार किया, किन्तु कम्पनी द्वारा उस काम के लिए बुलाए गए विदेशी विशेषज्ञ की अनायास मृत्यु हो जाने के कारण यह सारी योजना ताक में रख गई। सन् १६३३ में इस योजना पर फिर विचार किया गया और कारखाने के लिए बम्बई अथवा कलकत्ता को उपयुक्त स्थान चुना गया। सरकार ने इन दोनों स्थानों में पोत-निर्माण घाट स्थापित करने की कम्पनी को आज्ञा न दी। द्वितीय विश्व-युद्ध छिड़ने के उपरान्त सिंधिया कम्पनी ने विजगापट्टम स्थान को इस उद्योग के लिए चुना और आठ-दस हजार टन

+माण्डवी (कच्छ), भावनगर, बेसीन, अलीबाग, अगशी, बिजयदुर्ग, मलवां, कालीकट, ट्रिकोअली, मछलीपट्टम कोरिंगा पट्टम, बालासोर कलकत्ता, ढाका, सिलहट, चिटगांव, इत्यादि जहाज बनाने के प्रसिद्ध केन्द्र थे और सिंध के जाट, कच्छ के नखवास, काठियावाड़ के घोबरी, गुजरात के कोली, अलीबाग, और मलवां के मरहठा तथा अय्यर, डोम और अनेक अन्य जातियां जहाज बनाने में नाम पा चुकी थीं।

के जहाज बनाने का कारखाना बनाना प्रारम्भ कर दिया। २१ जून १९४१ को डा० राजेन्द्रप्रसाद ने इस घाट का उद्घाटन किया। किन्तु ६ अप्रैल १९४२ को जापान ने इस कारखाने पर बम्ब बरसाए। अतएव भारत सरकार ने इसका काम कुछ समय के लिए बन्द कर दिया। तुरन्त कुछ मशीनें बम्बई ले जाई गयीं। १९४२ के अन्त में फिर काम चालू किया गया, किन्तु आवश्यक साधन-सामग्री की कठिनाई के कारण काम अत्यन्त मन्दगति से चलता रहा। अनेक कठिनाइयों के उपरान्त १९४७ में कारखाना बनकर तैयार हो सका और निर्माण कार्य प्रारम्भ हो गया। आर्थिक कठिनाइयों और अन्य कारणों से मार्च १९५२ में कारखाने का प्रबन्ध भारत सरकार ने अपने हाथ में ले लिया। १४ मार्च १९४८ को प्रथम जहाज ने समुद्र में प्रवेश किया। यह दिवस भारतीय पोत-निर्माण कला के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जाएगा। यह दिन देश के आधुनिक पोत-उद्योग का ऊषा-काल माना जाता है जब कि गहन अंधेरी का अवसान हुआ और सुनहरी किरणों के साथ उषा का उदय हुआ। अनुकूल अवसर के अनुरूप ही हमने अपने उस जहाज का नाम "जल-उषा" रखा। "जलऊषा" ने अपनी आभा प्रस्फुटित की और २० नवम्बर १९४८ तक उसकी प्रभा सागरतल पर उतराती दृष्टिगोचर होने लगी अर्थात् "जल प्रभा" का जन्म हुआ। दो नवजात शिशु भारतीय समुद्र रूपी आंगन में क्रीड़ा करने लगे, जिनके तेज और मनोविनोद से जल-तल प्रकाशित हो गया और ८ अगस्त १९४९ को "जल-प्रकाश" नामक जलयान समुद्र में उतरा। इस भांति एक के उपरांत अनेक जहाज इस कारखाने में बनने लगे। १९५६ के अंत तक यहां १८ जहाज बन चुके थे, जिनके नाम नीचे दिए हैं—

जहाज का नाम	सागर प्रवेश तिथि
१. जल ऊषा	१४.३.१९४८
२. जल प्रभा	२०.११.१९४८
३. कुतुबतरि	१८.१२.१९४८
४. जल प्रकाश	८.८.१९४९
५. जल पंखी	६.१२.१९४९
६. जल पद्म	१४.९.१९५०
७. जल पालक	१७.१२.१९५०
८. भारत मित्र	२६.३.१९५१
९. जगरानी	१५.१२.१९५१
१०. जल प्रताप	२७.२.१९५२
११. जल पुष्प	६.७.१९५२
१२. भारत रत्न	२६.८.१९५३
१३. जल पुत्र	६.११.१९५३
१४. जल विहार	१६.८.१९५४
१५. जल विजय	२६.८.१९५५
१६. जल विष्णु	२.११.१९५५
१७. कच्छ राज्य	२९.३.१९५६
१८. अंडमन राज्य	२५.७.१९५६

इनमें से प्रथम १२ जहाज ८,००० टन माल लादने वाले बड़े जहाज हैं; तेरहवां ३९० टन का छोटा जहाज है; चौदहवें से सोलहवें तक के तीन ७,००० टन के तेल (Diesel) के जहाज हैं; तथा शेष दो क्रमशः ८,१९० टन और ४,००० टन के तेल के जहाज हैं।

इनके अतिरिक्त विभिन्न आकार के निम्नांकित ११ जहाजों पर निर्माण-कार्य जारी है। इस कार्य के १९६० तक समाप्त होने की संभावना है और इससे पूर्व कोई नए आदेश नहीं स्वीकार किए जा सकते।

दो—७,००० टन के माल ढोने के तेल के जहाज।

एक—४,००० टन का माल और यात्री ले जाने वाला मिश्रित जहाज।

एक—८,००० टन का माल ले जाने वाला तेल का जहाज।

एक—५,००० टन का माल ले जाने वाला तेल का जहाज।

दो—६,००० टन के माल ले जाने वाले तेल के जहाज।

एक—४,००० टन का माल और यात्री ले जाने वाला जहाज।

आठ—९,५०० टन के माल ले जाने वाले तेल के जहाज।

इस भांति यह कारखाना दिन दूनी और रात चौगुनी उन्नति करता जा रहा है। द्वितीय योजना काल में इसकी निर्माण-क्षमता बढ़ाने और एक शुष्क निर्वेश

(Dry Dock) बनाने का विचार है ।

बढ़ते हुए यातायात और परिवहन सुविधाओं की कमी को ध्यान में रखकर एक दूसरा पोत-निर्माण घाट स्थापित करने का भी निश्चय कर लिया गया है और प्रारम्भिक कार्यक्रम चालू हो चुका है । यह कारखाना कोचीन में स्थापित किया जाएगा । इसके लिए विशाखापटनम कारखाने में पांच छः सौ व्यक्तियों को आवश्यक प्रशिक्षण दिया जा रहा है । भारत सरकार जहाजों के लिए डीजल इन्जन बनाने का एक कारखाना भी खोलना चाहती है ।

लागत व्यय

विशाखापटनम कारखाने के चालू होने के समय से अब तक कई कठिनाइयां और समस्यायें हमारे जहाज-निर्माताओं के सन्मुख उपस्थित हुई हैं । हमारे इस शिशु-उद्योग की भावी उन्नति के लिए इन समस्याओं का समाधान आवश्यक है । सबसे बड़ी समस्या इस कारखाने में बनने वाले जहाजों का ऊंचा मूल्य है । इसका कारण मजूरी में वृद्धि, कार्य की मन्दगति, आवश्यक सामग्री एवं उपकरणों का अभाव, तथा अनुभव की कमी है । जहाजों की मूल्य वृद्धि एक मात्र भारत की समस्या नहीं, अन्य पाश्चात्य देशों में भी युद्धोपरान्त काल में इसने सिर उठाया है । ब्रिटेन में जो कि विश्व का सबसे बड़ा जयाज निर्माता है, सन् १९४५ और १९५६ के बीच के दस वर्ष में नए जहाजों के मूल्य में १६ प्रतिशत वृद्धि हो गई है । द्वितीय युद्ध से पूर्व के मूल्यों को आधार मानकर देखें तो यह वृद्धि ३७५ प्रतिशत होती है । ९,५०० टन के जिस जहाज का मूल्य अगस्त १९३९ में १९.३३ लाख रुपए था, दिसम्बर १९४५ में उसका मूल्य ३५.३२ लाख रुपए और जनवरी १९५६ में १०३.०६ लाख रुपए था । दूसरे शब्दों में, यदि प्रतिटन मूल्य १९३९ में २०३ रुपए था तो १९४५ में ३७३ रुपए, दिसम्बर १९५० में ६१६ रुपए और अप्रैल १९५६ में १००३ रुपए हो गया । लाइबेरिया के १९४३ के बने ९,८६७ टन के एक जहाज की बिक्री ३८ लाख रुपए में हुई, किन्तु १९४८ में ऐसे ही जहाज का विक्रय मूल्य ६६ लाख रुपए था । ब्रिटेन जैसे प्राचीन और प्रसिद्ध जहाज-निर्माता देश के मूल्य इतने ऊंचे हैं और और भी ऊंचे होते जा रहे हैं, तो भारतीय जहाजों के मूल्य का ऊंचा होना कोई आश्चर्य की बात नहीं, क्योंकि हमारा उद्योग अपनी बाल्यावस्था में है और न केवल हमारे पास अनुभव की ही कमी है, वरन् योग्य व्यक्तियों और आवश्यक साधन सामग्री एवं उपकरणों का भी भारी अभाव है, स्पात बायलर (Boilers) तथा प्लेट (Plates) हमें विदेश से मंगाने पड़ते हैं, जो बहुत महंगे पड़ते हैं । ब्रिटेन में नए जहाजों का मूल्य अन्य देशों की अपेक्षा ऊंचा है । किन्तु भारत में ब्रिटेन से भी लगभग २० प्रतिशत अधिक है । अतएव विशाखापटनम में बने हुए जहाजों के लिए मूल्य के २० प्रतिशत के बराबर भारत सरकार आर्थिक सहायता (Subsidy) देती है । भारतीय कम्पनियों ने एक भी जहाज बनने के लिए गत वर्षों में ब्रिटेन में आदेश नहीं दिया । सन् १९५५-५६ में सात जहाजों के लिए जर्मनी में और एक जहाज के लिए जापान में आदेश भेजे थे, क्योंकि इन देशों में ब्रिटेन की अपेक्षा सस्ते जहाज बनते हैं । जिस जहाज का मूल्य ब्रिटेन में ८० लाख रुपए हैं, जर्मनी में उसका मूल्य ६० लाख रुपए और जापान में इससे भी कम है । यह स्वाभाविक है कि जब अन्यत्र ६० लाख रुपए में जहाज मिल सकते हैं तो ८० लाख रुपए में विशाखापटनम से क्यों कोई कम्पनी जहाज लेने लगी ? अतएव सरकारी सहायता का आधार भी जर्मनी और जापान का मूल्य-स्तर होना चाहिए, न कि ब्रिटेन का ।

भारत सरकार की जहाज-निर्माण सम्बन्धी सहायता भी अपर्याप्त बतलाई जाती है ।+ जहाज-निर्माण के लिए जापान की सरकार ने स्पात का मूल्य बाजार भाव से १०० रुपए प्रति टन कम कर दिया है । स्पात और अन्य सामग्री का मूल्य कम करके भारत सरकार भी विशाखापटनम में बनने वाले जहाजों का मूल्य कम कर सकती है और जो धन अब विदेश से जहाज लेने में व्यय किया जाता है वह देश में ही रह सकता है तथा निर्माण-गति भी बढ़ाई जा सकती है । फ्रांस के विशेषज्ञों के स्थान पर जर्मनी और जापान के विशेषज्ञ रख कर भी विशाखापटनम में बनने

+ १९५६ में ब्रिटेन ने ३० करोड़ रुपए और फ्रांस ने १५ करोड़ रुपए जहाज-निर्माण के लिए आर्थिक सहायता के रूप में बजट में रखे थे, किन्तु भारत सरकार ने केवल ६० लाख रुपए रखे थे ।

वाले जहाजों का मूल्य कम किया जा सकता है। इस समय फ्रांस के विशेषज्ञों को ६ लाख रुपए वार्षिक दिया जाता है। यह कहा जाता है कि जर्मनी और जापान से ऐसे विशेषज्ञ २ लाख रुपए वार्षिक में मिल सकते हैं और संभवतः इन देशों के जहाज-निर्माता फ्रांसीसियों की अपेक्षा अधिक चतुर और अनुभवी भी हैं, क्योंकि १९५५ में फ्रांस में केवल ५५ जहाज बने, जबकि जर्मनी में ३८९ और जापान में १८८ जहाज बने।

लम्बा निर्माण-काल

दूसरी समस्या जो हमारे जहाज-निर्माताओं के सामने उपस्थित है, वह जहाजों के देरी से बनने की है। हमारे यहां किसी जहाज के पूरे होने में तीन-चार वर्ष का समय लगता है, जबकि जर्मनी में केवल दो वर्ष। इस देरी के कारण प्रबन्ध का ढीलापन, अनुभवी और योग्य विशेषज्ञों की कमी हो सकती है। अधिकारियों को इस ओर सचेत रहने की आवश्यता है।

प्रतिमानीकरण

विशाखापटनम में बनने वाले जहाजों के प्रतिमानीकरण की आवश्यकता पूर्णतः प्रगट हो गई है। इस प्रश्न पर विचार करने के लिए भारत सरकार ने एक विशेषज्ञ समिति नियुक्ति की थी, जिसने निम्नांकित सुझाव दिए हैं:—

(क) विदेशी व्यापार के लिए ६,५०० टन के खुले और ११,००० टन के बन्द जहाज बनने चाहियें, जिनकी चाल १६ से १७ नॉट (Knots) हो;

(ख) तटीय व्यापार के लिए ८,००० टन के खुले और ६,५०० टन के बन्द जहाज हों, जिनकी चाल १३ नॉट हो;

(ग) तटीय व्यापार के लिए एक और छोटा आकार भी हो। ५,००० टन के खुले और ६,००० टन के बन्द जहाज जिनकी चाल १३ नॉट हो।

भारत सरकार ने इन सुझावों को मान लिया है और तदनुसार काम होने लगा है।

प्रशिक्षण सुविधायें

विशाखापटनम में अभी तक औद्योगिक प्रशिक्षण सम्बन्धी कोई सुविधायें नहीं थीं। झलाई करने वाले (welders) और चित्रकारों (draughtsmen) के लिए कुछ व्यवस्था अवश्य थी। शिक्षार्थियों के लिए भी संध्या समय कुछ व्याख्यानों का आयोजन किया जाता था। हाल में एक परीक्षण स्कूल की योजना बनाई गई है जहां कारखाने के पक्ष कर्मियों को प्रशिक्षण दिया जाएगा तथा दूसरे कारखाने के लिए कुछ दक्षकर्मी तैयार किए जायेंगे।

पोत-निर्माण-सम्बन्धी उपर्युक्त कार्यक्रम वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए बड़ा सराहनीय है, किन्तु इस विश्व में जहाज-निर्माण सम्बन्धी जो प्रतिस्पर्द्धा चल रही है और हमारे यातायात में जिस तीव्रगति से वृद्धि हो रही है, उसे देखते हुए यह कार्यक्रम अपर्याप्त प्रतीत होता है। ब्रिटेन के जहाजी बेड़े की शक्ति १९४६ में ११.[illegible] लाख टन थी। १९५५ में यह १४.७४ लाख टन हो गई। फ्रांस की सामुद्रिक शक्ति इसी अवधि में ०.२३ लाख टन से बढ़कर ३.२६ लाख टन, नीदरलैंड की ०.३३ लाख टन से ३.९७ लाख टन, स्वीडन की १.४७ लाख टन से २.२६ लाख टन, इटली की ०.६२ लाख टन से १.६७ लाख टन हो गई। इसी भांति जर्मनी ने अपने जहाजी बेड़े में १९५० की अपेक्षा ६-गुनी और जापान ने १९४९ की अपेक्षा [illegible] पांच गुनी वृद्धि कर ली है। इस वृद्धि के उपरान्त उनके उत्साह में कमी नहीं आई। १ अप्रैल १९५[illegible] ब्रिटेन में ४५.३३ लाख टन के ४५८ जहाज, जापान में ३३.५२ लाख टन के २०७ जहाज, जर्मनी में २[illegible] लाख टन के ३५८ जहाज तथा स्वीडन में १९.४५ [illegible] टन के १८६ जहाज बन रहे थे, जबकि भारत में उक्त [illegible] को केवल ४४ हजार टन के ९ जहाज बन रहे थे। हमारा लक्ष्य २० लाख टन के जहाजी बेड़े का है, किन्तु हमारी पोत-क्षमता केवल ६ लाख टन है। द्वितीय योजना के अन्त तक यह ९ लाख टन होने की संभावना है। प्रगति अति धीमी है। अतएव दो पोत-निर्माण घाटों से हमारा काम नहीं चल सकता। इतने ऊंचे लक्ष्य को [illegible] करने के लिए हमें कम से कम पांच निर्माण केन्द्रों की आवश्यकता है। इस पर हमें गंभीरता से विचार [illegible] भावी योजनायें बनानी चाहियें।

———

भारतीय अर्थव्यवस्था में ऊन का महत्व

प्रो० कैलाशबहादुर सक्सेना

भोजन के पश्चात सभ्य मनुष्य की प्रमुख आवश्यकता वस्त्र की होती है। कपास, रेशम व ऊन वस्त्र निर्माण के प्रमुख स्रोत हैं। ऊनका महत्व विभिन्न देशों में वहां की जलवायु निर्धारित करती है। कपास पृथ्वी से उत्पन्न की जाती है, रेशम कीड़े से व ऊन भेड से। ऊन प्राप्ति के लिए कृषि की फसलों की भांति भूमि की जुताई, वर्षा पर अधिक निर्भरता व फसल के समय कठिन परिश्रम नहीं करना पड़ता, क्योंकि भेड केवल घास व अर्द्ध-शुष्क भागों में रखी जा सकती हैं तथा देखभाल के लिए बहुत कम श्रम की आवश्यकता होती है। ठंडे जलवायु वाले देशों में गर्म देशों की अपेक्षा ऊन का अधिक महत्व है।

ऊन प्राप्ति का स्रोत—भेड

नवीनतम उपलब्ध आंकड़ों से ज्ञात होता है कि विश्व में ७० करोड़ से भी अधिक भेड़ें हैं, जिनमें से लगभग ५.७ प्रतिशत भेड़ें अथवा लगभग ४ करोड़ भेड़ें भारतीय संघ में ही हैं। दूसरे शब्दों में भारत की जनसंख्या का लगभग १० प्रतिशत भेड़ें हैं। विश्व में, भेड़ों की संख्या की दृष्टि से, भारत को चौथा स्थान प्राप्त है।

भेड़ों के पनपने के लिए शीतोष्ण जलवायु श्रेष्ठ होती है। ऊन देने वाली भेड़ों के लिए प्रायः ठंडी, शुष्क एवं समतापक्रम वाले प्रदेश आदर्श हैं। जिन भागों में ४० इंच वार्षिक वर्षा होती है वे प्रदेश भेड़ों के लिए अनुपयुक्त होते हैं। अधिक वर्षा वाले भागों में भेड़ों के खुर की व अन्य बीमारियों का भय रहता है। भेड का औसत जीवन लगभग १२ वर्ष होता है। सर्वश्रेष्ठ ऊन मेरिनो भेड से प्राप्त होता है।

भारत में भेड प्राप्तिकी दो पट्टियां प्रमुख हैं। प्रथम पट्टी मध्य प्रदेश के लगभग मध्य के दक्षिण में है जिसके अन्तर्गत बम्बई का दक्षिणी भाग, मध्य हैदराबाद, पूर्वी मैसुर और मध्य तथा दक्षिणी मद्रास प्रमुख क्षेत्र हैं। दूसरी पट्टी उत्तरी भारत में है जिनमें काश्मीर, राजस्थान, पूर्वी पंजाब, पश्चिमी उत्तर-प्रदेश व मध्य-प्रदेश का उत्तरी भाग प्रमुख हैं। उड़ीसा, बिहार व पश्चिमी बंगाल में बहुत ही कम भेड़ें हैं और आसाम में तो बिल्कुल नहीं। ऊन की किस्म तथा मात्रा की दृष्टि से दूसरी पट्टी तथा भेड़ों की संख्या से प्रथम पट्टी महत्वपूर्ण है।

ऊन उत्पादक राज्य

उत्तरी भारत की भेड़ों का दक्षिण भारत की भेड़ों की अपेक्षा श्रेष्ठ तथा श्वेत ऊन होता है। राजस्थान (विशेषतः बीकानेर, जोधपुर, जैसलमेर व शेखावाटी और अजमेर में); गुजरात व काठियावाड़ प्रदेश; उत्तर प्रदेश (हिमालय क्षेत्र विशेषतः गढ़वाल, अलमोड़ा व नैनीताल—तथा आगरा व मिर्जापुर जिले में); मध्य प्रदेश (जबलपुर, चांदा, वर्धा, रायपुर आदि); दक्षिण भारत (बेलारी, करनूल, कोयम्बतूर, और मद्रास इस दिशा में प्रमुख हैं।

औसत रूप में देश में, योजना आयोग के अनुसार, ५.५ करोड़ पौंड ऊन प्राप्त होती है जिसमें से लगभग ३३ प्रतिशत ऊन केवल राजस्थान से ही प्राप्त होती है। भेड की वर्ष में दो बार—मार्च व अक्टूबर में—ऊन काटी जाती है। यहां यह उल्लेखनीय है कि भारत में प्रति भेड औसत रूप में दो पौंड प्रति वर्ष ऊन देती है, जो कि बहुत कम है।

देश विभाजन के फलस्वरूप श्रेष्ठ किस्म की ऊन प्राप्ति के अधिकांश क्षेत्र पाकिस्तान में चले गये हैं। सीमांत प्रदेश व सिंध में उत्तम किस्म की भेड़ें होती हैं। इस प्रकार फीरोजपुर, पेशावर, डेरा इस्माइल खां, मुल्तान, रावलपिंडी, झेलम, झंग आदि अच्छी किस्म के ऊन क्षेत्रों से भारत अब वंचित हो गया है।

भारतीय अर्थ व्यवस्था में ऊन का महत्व

ऊन का भारतीय अर्थव्यवस्था में पर्याप्त महत्व है। भेड़ चराने, ऊन काटने, ऊन का क्रय-विक्रय, साफ करने व कातने बुनने में भारत के करोड़ों नर-नारी अपना जीवन यापन करते हैं। सूखे एवं पहाड़ी क्षेत्रों में जहां कृषि नहीं हो सकती, वहां भेडें चराकर उस क्षेत्रका उपयोग हो जाता है।

ऊन से बनाए गये कपड़ों का कोई प्रतिस्पर्द्धी नहीं है।

भारत में ऊन से संबंधित छोटे व बड़े कारखानों की संख्या लगभग ५३० है, जिनमें लगभम २४ बड़े कारखाने ऊनी वस्त्र बनाने के हैं। भारत में ऊनी वस्त्र बनाने की सर्वप्रथम मिल कानपुर में सन् १८७६ में व दूसरी मिल धारीवाल (पंजाब) में स्थापित की गई। कानपुर, पूर्वी पंजाब, बंबई, बंगलौर, ग्वालियर व इलाहाबाद आदि में भारत की प्रमुख ऊनी मिलें स्थित हैं। मुजफ्फरनगर, मद्रास, कलकत्ता व बंबई में सेना के लिए कंबल बनाने के कारखाने हैं। इन कारखानों में हजारों व्यक्ति कार्य पाते हैं।

कुटीर उद्योग के रूप में भी ऊन का बड़ा महत्व है। ग्रामीण क्षेत्रों में ऊन से नमदें, दरियां, वस्त्र, घोड़े व ऊंट की जीन, कम्बल, शाल, चादरें, कालीन व अन्य अनेक उपयोगी वस्तु बनाई जाती हैं। बीकानेर व जोधपुर क्षेत्र के नमदे व घोड़े और ऊंट की जीनें; और काश्मीर की शाल दूर दूर तक प्रसिद्ध हैं। काश्मीर की शालों की भारत में ही नहीं, वरन् विश्व के अन्य देशों में भी मांग रहती है।

विदेशी व्यापार

दुर्लभ तथा नर्म विदेशी मुद्रा के अर्जन में ऊन पर्याप्त सहायक सिद्ध हुआ है। भारत से प्रतिवर्ष औसतन ३१.६० करोड़ पौंड ऊन जिसका मूल्य लगभग ४३ करोड़ पौंड होता है—निर्यात की जाती है जिससे विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है। नीचे की तालिका में भारत से विदेशों को निर्यात होने वाली कच्ची ऊन की मात्रा व उसका मूल्य स्पष्ट है—

वर्ष	मूल्य (लाख रु०)	कच्ची ऊन (००० पौंड)
१९५०-५१	७८७	२५३७१
१९५१-५२	४६०	१८२९५
१९५२-५३	८४१	३७९६६
१९५३-५४	५८७	२०६९४
१९५४-५५	८६१	३०८०६
१९५५-५६	६७३	३३७४४

अन्यत्र उल्लेख किया जा चुका है कि भारत में श्रेष्ठ किस्म की ऊन अधिक मात्रामें नहीं होती है। अतः भारत कच्ची ऊनका आयातकर्त्ता भी है। यद्यपि पहले हम बड़ी मात्रा में कच्ची ऊन विदेशों से आयात करते थे किन्तु अब कच्ची ऊन के मूल्य [illegible] हुई है, जो कि नीचे की तालिका से स्पष्ट है—

	मूल्य (लाख रु०)
१९५०-५१	५६२
१९५१-५२	२६०
१९५२-५३	९६
१९५३-५४	१७६
१९५४-५५	१००
१९५५-५६	१४२

ऊन का केवल भारत की अर्थ-व्यवस्था में ही [illegible] वरन् इंग्लैण्ड, संयुक्त राज्य अमेरिका व आस्ट्रे[लिया] आदि देशों की अर्थव्यवस्था में भी पर्याप्त महत्व[पूर्ण] स्थान है। इंगलैंड के कुल निर्यात व्यापार में ५ प्रति[शत] से भी अधिक मूल्य का ऊनी माल होता है और [विदेशी मुद्रा] अर्जन में चौथा महत्वपूर्ण साधन है।

भारतीय ऊन विकास में बाधाएं व निवा[रण]

भारत में ऊन व ऊन उद्योग का संतोषजनक वि[कास] अनेक कारणोंसे नहीं हुआ है, उनमेंसे प्रमुख कारणों [का] विवेचन यहां संक्षेप में किया गया है। देश में भेड़ों [से] ऊन काटने के प्राचीन एवं अवैज्ञानिक तरीके होने के [कारण] बहुत सी ऊन नष्ट हो जाती है। भेड़ को लिटाकर [कैंची] से ऊन काटते हैं, जिसके फलस्वरूप बहुत सी ऊन मिट्टी में गिर कर नष्ट हो जाती है, कुछ उड़ जाती है [और] कुछ भेड़ के शरीर पर ही लगी रह जाती है। पाश्चा[त्य] देशों में ऊन काटने के लिए मशीनों का प्रयोग करते [हैं] जिससे जरा भी ऊन नष्ट नहीं होने पाती है। भारत [में] मशीनों का इस सम्बन्ध में प्रयोग कुछ कठिन प्रतीत [होता] है; क्योंकि चरवाहे गरीब होते हैं और गांव आदि [में] ऊन खरीदने वाले आढ़तिये अनेक कारणों व कठिना[इयों] से मशीन का प्रयोग नहीं कर सकते हैं। द्वितीय भार[त में] भेड़ चराने वाले बिखरे हुए हैं तथा उनका कोई ऐसा सं[ग]ठन नहीं है जो उनको समय समय पर ऊन की [बिक्री] में व उनकी स्थितिमें संगठित रूप से प्रयत्न करें।

भारत में जलवायु के कारण ऊन तथा ऊनी माल [की] मांग केवल मौसमी ही है। इसके अतिरिक्त अनेक [ग्रामीण] विशेषतः ग्रामीण क्षेत्र में ऊनी वस्त्र आदि का उप[योग]

नहीं करते। इसके अतिरिक्त ठंड से बचने के लिए कपास का भी प्रयोग किया जाता है, जो प्रायः अपेक्षाकृत अत्यन्त सस्ती होती है। इस कारण मांग कम होने के कारण पूंजीपतियों ने भी ऊन व्यापार व ऊन उद्योग की ओर कम ध्यान दिया है।

ऊन के क्रय विक्रय की दोषपूर्ण प्रणाली होनेके कारण मूल विक्रेताओं का शोषण होता जा रहा है, अतः ऊन की किस्म में वृद्धि करने की अपेक्षा उन्हें अपने पेट की ही अधिक चिंता रही। विदेशी शासकों अथवा देशी राजाओं ने भी भेड़ चराने वाले अथवा ऊन की उन्नतिके लिए उदासीन नीति अपनाई। देश में यातायात के अविकसित साधनों ने भी ऊनके विकासमें रुकावट ही डाली।

योरोप व आस्ट्रेलिया आदि देशों की तुलना में भारतीय ऊन अच्छी नहीं होती, क्योंकि यह छोटे रेशे की होती है, अतः बढ़िया किस्म के कपड़े इससे नहीं बन पाते हैं। इसके अतिरिक्त भारतीय भेड़ से प्रति वर्ष औसत रूप से २ पौंड ऊन ही प्राप्त होती है जो कि अन्य देशों की तुलना में बहुत कम है। देशमें इस सम्बन्ध की अनुसन्धानशालाएं एवं गवेषणशालाओं का पहले पूर्ण अभाव होने के कारण इसकी उन्नति की दिशामें कुछ न किया जा सका।

अच्छी किस्म की ऊन प्राप्ति के लिए उत्तम श्रेणी के नर-भेड़ से 'क्रास-ब्रीडिंग' लाभदायक है। अफगानिस्तान की दुम्बा नर भेड़ से प्रयोग करने पर उत्तम परिणाम प्राप्त हुए हैं। सहकारिता के आधार पर ऊन उत्पादकों के संगठन, वैज्ञानिक बिक्रीके साधन व ऊन काटने के नये तरीके प्रयोग करने चाहिए। इंग्लैण्ड के वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसन्धान विभागके अन्तर्गत कार्य करने वाले 'ऊन व ऊन उद्योग अन्वेषण संगठन' के आधार पर भारत में भी अनुसन्धानशालाएं एवं गवेषणशालाओं की स्थापना करनी चाहिए। सरकार को ऊन प्रदर्शिनियां व प्रशिक्षण की ओर भी अधिक ध्यान देना चाहिए। भारत सरकार व कुछ राज्य सरकारें इस ओर अब ध्यान दे रही हैं।

—

सरकार के दो सिर

भारत सरकार का एक अजीब ढंग है। उसके दो सिर हैं। एक सिर से वह अम्बर चर्खे को उत्तेजन देती है और दूसरे से सोचती है कि बुनकरों को पावर लगाना चाहिए। अगर पहले सिर से पूछा जाय कि "तुम अम्बर को उत्तेजन क्यों देते हो, मिल का सूत तो बहुत है और उसे बढ़ाया भी जा सकता है?" तो उत्तर मिलेगा : "अम्बर चर्खे से ज्यादा लोगों को रोज़ी मिलेगी।" यह एक सिर का विचार हुआ। अब दूसरे सिर से पूछा जाय कि "तुम करघे को पावर लगाने के लिए क्यों कहते हो?" वह कहेगा, "हम बुनकरों की आमदनी बढ़ाना चाहते हैं। आज से चार-छः गुना अधिक आमदनी होगी।" किन्तु इससे सब बुनकरों को काम कैसे मिलेगा? पावर आयगी, तो पांच-छः करघों की जगह एक ही करघा चलेगा, बाकी बेकार हो जायेंगे। इसीलिए सेलम के बुनकरों ने कहा कि "सरकार की पावर वाली बात गलत है, उससे हमें लाभ न होगा।"

—विनोबा

सर्वोदय पात्र

सर्वोदय-पात्र क्या चीज है? सर्वोदय-पात्र रखने का मतलब है, घरमें एक बरतन रखना। इस बरतन में घर का बच्चा रोज एक मुट्ठी अनाज डालेगा। इसके लिए बड़ों की मुट्ठी नहीं चाहिए। इससे बच्चों को तालीम मिलेगी कि समाज को देना है। इस प्रकार महीने भर में जितना अनाज इकट्ठा होगा, लोग उसे कार्यकर्त्ता के पास पहुँचा देंगे। किसी पर इसका ज्यादा बोझ नहीं पड़ेगा। यदि लोग घर-घर में इस प्रकार का सर्वोदय-पात्र रखेंगे, तो उससे हिन्दुस्तान का एक बहुत बड़ा काम होगा। ग्रामदान का काम करने वाले उसका उपयोग करेंगे। इससे बहुत बड़ी ताकत पैदा होगी। अनाज से जो पोषण मिलेगा, उसका उतना महत्त्व नहीं है। उससे जो पैसा मिलेगा, उसका भी महत्त्व नहीं है। महत्त्व इस चीज का है कि घर-घर का लड़का तालीम पायेगा। आप जो 'कर' देते हैं, उससे सरकार राज्य चलाती है, कानून बनाती है। उसीसे वह सेना भी रखती है और आपके जीवन पर अनेक प्रकार का नियंत्रण भी। हम नहीं चाहते कि एक मुट्ठी प्रत्ये[क] लड़के को मिले। हम तो हर परिवार की एक मुट्ठी चाह[ते] हैं। हिन्दुस्तान में सात करोड़ परिवार हैं। सात करो[ड़] मुट्ठी हमें रोज मिलनी चाहिए। इसके आधार से कु[छ] हिन्दुस्तानमें शान्ति-सेना स्थापित होगी और वह सेना हमे[शा] सेवा सेना का रूप लेगी।'

सर्वोदय और नेहरू जी का समाजवाद

"समाजवाद" एक विलक्षण शब्द है। उसके पचा[सों] अर्थ होते हैं। हिटलर ने जर्मनी में एक "समाजवा[द]" चलाया था। उसे "राष्ट्रीय समाजवाद" कहते हैं। सोशलिज्म या समाजवाद, यह पश्चिम का शब्द है। उ[सके] अनेक अर्थ होते हैं। इसलिए "सोशलिज्म" कहने से स[ही] अर्थ नहीं निकलता, किन्तु "सर्वोदय" कहने से अर्थ स[ाफ] हो जाता है।

सोशलिज्म जो चला है, उसे हम नहीं चाहते, [ऐसा] नहीं। लेकिन समाजवाद की क्रिया ऊपर से नीचे आते[ी] है और "सर्वोदय" तो नीचे से ऊपर जाता है। ग्राम[-]ग्राम-स्वराज्य होगा। उसमें एक ग्राम-सभा होगी। [ऐ]से पचास गांव मिलकर एक सभा होगी। ऐसी कुछ सभाएं मिलकर जिला-सभा होगी। ऐसी अ[नेक] सभाएं मिलकर प्रांत सभा होगी। सारांश, सारी ता[कत] नीचे रहेगी और ऊपर कम। हम इस तरह निर्मा[ण] करना चाहते हैं।

लेकिन उनकी हालत क्या है? दिल्ली में एक योज[ना] बनेगी और फिर उसकी शाखाएं होंगी। फिर क्रमशः नी[चे] नीचे के प्रांत, जिला, तालुका, गांव और गांवोंमें [ह]लोग। ऊपर से पानी डाला जाय, तो नीचे गिरते-गि[रते] आखिर कितना नीचे आयेगा? यहां बारिश हुई और [...] पानी गया, तो वहां थोड़ा गीला हुआ। उसके अन्दर [...] थोड़ा गया, तो थोड़ा और गीला हुआ, लेकिन आखि[र] सारा शुष्क ही रहेगा और नीचे कुछ भी नहीं। तो ऊप[र] धन, पैसा, विद्या डालेंगे। सबसे बड़ी विद्या मिले[गी] दिल्ली, मद्रास, बम्बई में। उससे कम धारवाड़, हुबली [में] उससे कम येल्लापुरमें और फिर इल्लापुर में, जहां कुछ [...]

(शेष पृष्ट २२२ पर)

दिल्ली के उद्योग की कुछ समस्याएं

श्री मुरलीधर डालमिया

बिजली कर

छोटे उद्योगों को दिल्ली प्रदेश में प्रोत्साहित करने के लिए कुछ कदम उठाये गये हैं, किन्तु इस प्रसंग में दिल्ली राज्य के बिजली बोर्ड ने जो निश्चय किये हैं, वे चिन्ता के कारण हैं। यदि नये दर लगाये गये तो छोटे-बड़े सभी उद्योगों को उससे नुकसान होगा। बड़े उद्योगों पर ६.०१ न० पै० प्रति यूनिट आजकल लिया जाता है, लेकिन अब ६.७६ न० पै० प्रति यूनिट लिया जायगा। इन्हीं प्रस्तावों के अनुसार मझोले उद्योगों से ७.२६ न० पै० से दर बढ़ाकर ११.६१ न० पै० लिये जायेंगे। छोटे उद्योगों से ७.३४ न० पै० से बढ़ाकर नई दर १०.१२ न० पै० हो गई है। यदि पंजाब के बिजली दर से तुलना करें तो मालूम होगा कि दिल्ली में दर कितना भारी है। पंजाब का बिजली बोर्ड प्रति यूनिट क्रमशः ५.६२, ८.८४ और ८.८१ न० पै० वसूल करता है। नये भारी दरों से दिल्ली के उद्योगों को जरूर नुकसान होगा। दिल्ली के औद्योगिक विकास के लिए यह जरूरी है कि यहां भी बिजली के दर पंजाब जैसे लिये जायें। बिजली बोर्ड न भुगताये गये बिलों पर १२ प्रतिशत ब्याज लेता है, जबकि वह स्वयं उद्योगों की ओर से जमा राशि पर २ प्र० श० ब्याज देता है। इस भारी अन्तर के लिये बिजली बोर्ड के पास कोई उचित कारण नहीं है।

\+ \+ \+ \+

बिक्री कर

कपड़े पर बिक्री-कर यद्यपि अब उत्पादन कर में बदल गया है, तथापि इसके तुलनात्मक दरों पर एक दृष्टि डालना मनोरंजक होगा। उत्पादन कर में विलयन होने से पहले तक दिल्ली में बिक्री कर ३.१२ प्र० श० था। उत्तर प्रदेश, बंगाल या बम्बई, बिहार, केरल और उड़ीसा में १.५६ प्रतिशत तथा अन्य अनेक राज्यों में ३.१२ प्रतिशत था। अन्तः राज्यकीय बिक्री कर भी १ प्रतिशत था। दोनों को बिक्री के अनुपात से मिला दिया जाय तो यह बिक्री कर ३.६२ प्रतिशत पड़ता है। यदि मोटे औसत कपड़े की कीमत आठ आना प्रतिगज लगाई जाय तो प्रतिगज पर १.८० न० पै० बिक्री कर पड़ता है, किन्तु बिक्री कर को उत्पादन कर में मिलाकर ३ न० पै० कर दिया गया है।

उत्पादन कर में विलयन के बाद एक नई बात हुई है। उत्पादकों को यह सूचना दे दी गई है कि अब क्योंकि कपड़े पर बिक्री कर नहीं रहा है, इसलिए कच्चे माल पर बिक्री कर से छूट नहीं मिलेगी। कपड़ा उत्पादकों को कच्चे माल पर बिक्री कर से छूट मिली हुई थी, लेकिन बिक्री-कर के अधिकारियों ने कहा कि कपड़ा बिक्री कर से मुक्त हो गया है, इस आधार पर यह छूट वापिस लेनी चाहिये। परन्तु, वस्तुतः बिक्री कर समाप्त किया ही नहीं गया है, केवल उसे उत्पादन कर के साथ वसूल करने की व्यवस्था की गई है। इसलिए कच्चे माल पर छूट जारी रहनी चाहिये। आशा है, दिल्ली राज्य की सरकार इस सम्बन्ध में उद्योग के दृष्टिकोण को समझेगी।

\+ \+ \+ \+

समय समय पर कई क्षेत्रों से यह आवाज सुनाई देती है कि मिलें खूब नफा कमा रही हैं और अमीर ज्यादा अमीर हो रहा है तथा गरीब ज्यादा गरीब हो रहा है। कुछ भाई तो समय समय पर उद्योगों के राष्ट्रीयकरण की आवाज़ भी उठाते हैं, परन्तु यह ख्याल बहुत ही भ्रान्त और निराधार है। निम्नलिखित उदाहरण से यह स्पष्ट हो जायगा। एक मिल की प्रदत्त पूंजी ७५ लाख रु० है। कारोबार में लगी हुई पूंजी ७० लाख रु० इसके अलावा है। कुल वार्षिक लाभ २० लाख रु० है। यदि इस रकम में से घिसाई की रकम निकाल दी जाय तो शुद्ध लाभ १४ लाख रु० रह जाता है। आय कर, निगम कर तथा सरचार्ज के रूप में ७ लाख २० हज़ार रु० सरकार को देना पड़ेगा। ५० हजार रु० सम्पत्ति कर के रूप में देना पड़ेगा। शेष ६ लाख ३० हज़ार रु० बचता है यह हिस्सेदारों में बांटा जाय तो इस वितरण पर ४० हज़ार रु० और कर के रूप में देना पड़ेगा। इस तरह हिस्सेदारों तक कुल ५ लाख

६० हज़ार रु० पहुँचेगा । हिस्सेदार अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार इस आमदनी पर और कर देंगे। यह कर भी करीब २ लाख ४० हजार रु० हो जाता है। तब उनके पास केवल ३ लाख ५० हज़ार रु० बच रहेगा।

आय-व्यय पत्र के अध्ययन से यह भी पता लगता है कि मजदूरों और कर्मचारियों को मंहगाई और बोनस के रूप में ७५ लाख रु० दिये गये। ५ लाख रु० खरीद बिक्री पर एजेन्टों और दलालों को दिया गया। और ७५ लाख रु० सरकार को उत्पादन कर के रूप में देना पड़ा। इस तरह एक मिल की वास्तविक आमदनी में निम्नलिखित भागीदार हुए।

१—३.५ लाख रु० हिस्सेदारों को।

२—७५ लाख रु० मजदूरों को।

३—५ लाख रु० एजेन्टों और दलालों को।

४—८६ लाख रु० सरकार को (११ लाख रु० कर तथा ७५ लाख रु० उत्पादन कर)।

इन सबका कुल योग १६६.५० लाख रु० होता है। यदि इस कम्पनी के हिस्सेदार, जो ५० से अधिक हैं, लोहे और ईंटों में ७५ लाख रु० और ७० लाख रु० स्टाक व स्टोर सामग्री में लगाते हैं तथा सरकार तथा देशवासियों को १६६ लाख रु० बांट कर केवल साढ़े तीन लाख रु० कमाते हैं, तो क्या यह विभाजन अनुचित और असमान कहा जायगा? कम्पनी को चलाने वाले हिस्सेदार असफलता या नुकसान का खतरा भी उठाते हैं और दिन रात व्यवसाय की चिन्ता और सतर्कता की परेशानियां भी उठाते हैं। क्या उन्हें इस राशि का भी अधिकार नहीं है। तटस्थ विचारक इसका उत्तर देंगे।❀

—

❀ दिल्ली फैक्टरी ओनर्स असोसियेशन के अध्यक्षीय भाषण के कुछ अंश।

दूसरे देशों में भूमि-सुधार

डा० ए० एन० खुसरो

अन्न संकट दूर करने के लिए योजना आयोग ने भूमि-सुधारों की आवश्यकता पर विशेष बल दिया है। गोहाटी में कांग्रेस के अधिवेशन ने भूमि सुधारों को शीघ्र से शीघ्र क्रिया में परिणत करने का आग्रह किया है। पर यह भूमि सुधार हैं क्या?

भूमि सुधार में बहुत सी बातें आ जाती हैं, जैसे मध्यस्थ या जमीदारों को हटाना, जिनका काम केवल महसूल वसूल करना होता है और खेती की उन्नति से उनका कोई सीधा सम्बन्ध नहीं होता।

भूमि सुधार का दूसरा अंग किसान को अपनी जोत में अधिकार देना और बेदखली से बचाना है। इसी से उसे खेती की उन्नति करने और उसमें अधिक पूंजी लगाने की प्रेरणा मिलेगी। जब तक किसान दूसरों का खेत जोता बोया करता है, तब तक उसका उस खेत के साथ कोई लगाव नहीं होता, चाहे वह उसे आजीवन जोतता रहे।

भूमि सुधार में एक बात यह भी तय करने की होती है कि एक आदमी के पास अधिक से अधिक कितनी जमीन रहनी चाहिए। जिस देश में आदमी अधिक और भूमि कम हो, वहां तो यह बहुत ही जरूरी है। इस प्रकार अधिकतम सीमा से ऊपर जितनी जमीन होगी, उसे सरकार भूमिहीन या कम भूमि वाले किसानों को दे देगी।

अनेक देशों में भूमि के छोटे छोटे टुकड़ों की चकबन्दी करने की भी जरूरत अनुभव की जाती है। इससे खेती की उपज बढ़ती है तथा खर्च कम होता है।

भूमिसुधार कार्यक्रम भारत के अतिरिक्त अन्य अनेक देशों में भी आरम्भ किया गया है। इसके लिए उन्होंने अनेक तरह के तरीके अपनाये हैं और उन्हें सफलता भी मिली है। इन पंक्तियों में हम उन देशों में भूमि सुधार के प्रयत्नों पर एक विहंगम दृष्टि डालना चाहते हैं ताकि इनमें से कुछ तरीके हम अपने देश में अपना सकें, और कुछ की खराबियों से हम शिक्षा भी ले सकें।

रूस में

रूस ने अपने यहां १९२० और १९३० में अपनी दो पंचवर्षीय आयोजनाओं में भूमि सुधार का सबसे विशाल कार्यक्रम अपनाया था। इस कार्यक्रम के अनुसार खेती करने के पुराने घिसे पिटे तरीकों को समूल मिटाकर उन्नत तरीके चलाये गये। किसानों में निजी खेती के स्थान पर सरकारी खेती (कलेक्टिव फार्मिंग) चलायी गयी।

निजी खेती से सरकारी खेती में परिवर्तन के समय रूसी सरकार ने बहुत कड़ाई से काम लिया, जिसके परिणामस्वरूप जनता और देश दोनों को ही आर्थिक हानि पहुँची। सरकार की कड़ाइयों की प्रतिक्रिया रूसी किसानों पर यह हुई कि उन्होंने जी जान से सरकार का विरोध किया। फसलों को जलाकर, पैदावार को छिपाकर तथा अपने ढोरों को मारकर उन्होंने सरकार के भूमि सुधारों को विफल बनाने की कोशिश की।

इस उथल पुथल के बाद भी सरकारी खेती से रूसी सरकार को आशा के अनुरूप सफलता नहीं मिली, क्योंकि सरकारी संस्था के नियम बड़े ही कठोर थे। सरकारी खेतों पर खर्च तो बहुत बैठता ही था, साथ ही उन खेतों के प्रबन्ध और निरीक्षण करने में उससे भी अधिक खर्च पड़ता था। दूसरी ओर खर्च के अनुपात से खेती की उपज नहीं बढ़ी। किन्तु यह मानना पड़ेगा कि इन आंशिक विफलताओं के बावजूद इस कार्यक्रम से रूस में गांवों की काया पलट हो गयी और गांव वालों को बहुत लाभ पहुँचा।

इस प्रकार रूस में जो भूमि-सुधार किये गये, उनका लोगों ने बहुत विरोध किया तथा इसके लिए उनका बड़ी कठोरता से दमन किया गया। रूस के भूमि सुधार कार्यक्रमों को देखकर हम इसी परिणाम पर पहुँचते हैं कि वहां के तरीके यहां लागू नहीं किये जा सकते तथा कोई भी कार्यक्रम जोर जबरदस्ती से नहीं चलाया जाना चाहिए। इनसे हमें यही शिक्षा मिलती है कि भूमि सुधार कार्यक्रमों में किसानों का हार्दिक सहयोग होना चाहिए तथा उन्हें इस बात का पूरा विश्वास होना चाहिए कि उनसे भूमि छीनी

नहीं जाएगी तथा उसकी मेहनत का पूरा-पूरा लाभ उसे मिलेगा। यदि हम देश में सहकारी खेती भी चलाना चाहें तो इसके लिए जबरदस्ती न करें, बल्कि किसानों को राजी करें तथा इस का पूरा ध्यान रखें कि किसान का उत्साह नष्ट न होने पाये।

चीन में

चीन के भूमि सुधार बहुत ही महत्वपूर्ण हैं और उनसे हम बहुत कुछ सीख सकते हैं। चीन में भी वही कठिनाइयां थीं, जिनका सामना अब भारत को करना पड़ रहा है, जैसे, घनी आबादी, कम जमीन, भूमि का छोटे-छोटे टुकड़ों में बंटना तथा कम उपज।

चीन में भूमि का बटवारा बहुत ही गलत और अन्यायपूर्ण था। भूमि पर अधिकार एक खास वर्ग का था, जो उसे गरीब काश्तकारों को जोतने को देता था तथा उससे बहुत अधिक लगान बदले में लाता था।

माऊ-त्से-तुंग की सरकार ने इन बुराइयों को जड़ से उखाड़ने का प्रयत्न किया। उसने खेती न करने वाले जमींदारों से उनकी सारी जमीन, खेती के जानवर, फालतू अनाज आदि छीनकर गरीब किसानों को बांट दी। जमींदारों के पास उनके निर्वाह लायक थोड़ी सी जमीन छोड़ दी गयी और उन्हें कोई भी मुआवजा नहीं दिया गया। इस तरह हरेक किसान परिवार के पास अपनी कुछ जमीन हो गयी। चीन में यह भी नियम बना दिया गया कि एक किसान नियत मात्रा से अधिक भूमि नहीं रख सकेगा।

भारत में चीन के इन तरीकों को ज्यों का त्यों अपनाया नहीं जा सकता। यहां सभी जमींदारों को अमीर तथा काश्तकारों को गरीब नहीं समझा जा सकता। हम जमींदारी का उन्मूलन तो कर सकते हैं, पर उसके बदले उन्हें मुआवजा भी देना चाहेंगे तथा उन्हें यह भी अनुमति देंगे कि वे खुद खेती के लिए शिकमी से जमीन निकाल लें। पर इसके साथ-साथ यदि किसान की परिभाषा ठीक की गई होती और अधिकतम जोत ठीक से निर्धारित की जाती तो जमींदारों को वे रियायतें देनेसे भी कोई नुकसान न होता और खेती न करने वाले जमींदारों को खेती के बहाने शिकमी काश्तकार को बेदखल करने का मौका न मिलता।

चीन में भूमि सुधार का काम भूमि के उचित बटवारे से ही समाप्त नहीं हो गया। उन्होंने उसके बाद किसानों की टोलियां बनायीं, जो मिलजुल कर खेती करें और बाद में इन टोलियों को सहकारी खेती का रूप दिया गया। पहले ये सहकारिता मामूली रूप में शुरू की गई। बाद में इन्हें यह रूप दे दिया गया, जिसमें मेहनत करने पर हिस्सा मिलता था न कि भूमि के स्वामित्व पर। सहकारी खेती के विकास के साथ-साथ केन्द्रीय सरकार ने उपज बढ़ाने के लिए बीज, खाद, खेती के औजार आदि भी दिये।

पूर्वी यूरोप

दूसरे महायुद्ध के बाद पूर्वी यूरोप के देशों में भी व्यापक भूमि सुधार किये गये। यहां भी जमींदारी समाप्त की गई, भूमि काश्तकारों को दी गई, अधिकतम जोत बांधी गई तथा किसानों को समझा बुझाकर या दबाकर सहकारी खेती के लिए राजी किया गया। यहां भी कठिनाइयां आयीं और खेती की उपज में आशानुरूप वृद्धि नहीं हुई।

सहकारी और सामूहिक ढंग से खेती करने में अभी भी कई त्रुटियां हैं और कभी-कभी इनमें निजी खेतों से बहुत कम उपज होती है। सरकारी हस्तक्षेप और नौकरशाही कामकाज की खराबियां हटाने के ढंग पर इस समय काफी सोच-विचार और आत्म निरीक्षण चल रहा है। पर सहकारी पद्धति की अच्छाई के बारे में किसी को संदेह नहीं है।

——

समाजवाद राष्ट्रीयकरण का पर्याय नहीं

प्रो० विश्वम्भरनाथ पाण्डेय

समाजवाद और पूंजीवाद में चुनाव करते समय यह उचित है कि आदि में ही एक भूल का निराकरण कर दिया जाय। साधारण धारणा के अनुसार समाजवाद राष्ट्रीयकरण का पर्याय है। किन्तु वस्तुतः राष्ट्रीयकरण समाजवाद का साधन है, स्वयं समाजवाद की सिद्धि नहीं। साधारणतः जिन कारणों से राष्ट्रीयकरण की पुकार होती है, उनके कुछ प्रमुख कारण निम्नांकित हैं:—

(१) समाजवादी व्यक्तिगत सम्पत्ति को जब्त कर लेना चाहते हैं क्योंकि समाज में अवसर और आय की जो असमानता है उसका प्रधान कारण व्यक्तिगत सम्पत्ति है। किन्तु यह सोचना उचित नहीं है कि राष्ट्रीयकरण से व्यक्तिगत सम्पत्ति का अनिवार्यतः अन्त हो जाता है। आज कल जिन देशों में 'संसदीय प्रजातन्त्र' (जैसे भारत और इंगलैंड) है वहां राष्ट्रीयकरण के बदले में उपयुक्त मुआवजा दिया जाता है। इस मुआवजे के देने के कई कारण हो सकते हैं। प्रथमतः यह कि सभी उद्योगों का राष्ट्रीयकरण एक साथ नहीं होता। अतः जब किसी एक उद्योग का राज्य अपहरण करता है और दूसरे को छोड़ता है तब समान न्याय की रक्षा के लिये अपहृत उद्योग के मालिक को क्षतिपूरक (मुआवजा) प्रदान करना वैध ही है। द्वितीयतः यदि मुआवजे के उद्योगों का राष्ट्रीयकरण क्रमशः प्रारम्भ हो तब प्रायः ऐसा होगा कि औद्योगिक अंचल में आतंक छा जायेगा और अराष्ट्रीकृत (जिनकी बारी आगे आने वाली है) उद्योगों की प्रगति रुक जायेगी। अतः क्षति पूर्ति के रूप में मुआवजा (क्षति पूरक) देना इसलिये भी जरूरी है कि राष्ट्रीयकरण होने के पूर्व तक कम से कम इस विश्वास पर उनका संचालन पूंजीपति भलीभांति करते रहें कि स्वामित्व-विसर्जन के समय उन्हें उचित मूल्य मिल जायेगा।

जो हो, जिस कारण से भी मुआवजा दिया जाता हो या दिया जाना उचित हो, इससे व्यक्तिगत सम्पत्ति की मात्रा घटती तो नहीं अपितु ज्यों की त्यों रह जाती है। (यद्यपि यह आवश्यक है कि भावी आय की असमानता का स्रोत कुछ बन्द हो जाता है।)

२. कभी-कभी ऐसा देखा जाता है कि पूंजीपति आवश्यक उद्योगों में पूंजी विनियोजन नहीं करता। जैसे १९२० से १९३९ तक इङ्गलैण्ड में कोयला, सूती वस्त्र-उद्योग कृषि और इस्पात के उद्योगों में पूंजी विनियोजन की कमी अनुभव हुई। किन्तु विचारणीय है कि पूंजीवाद का पूंजी अविनियोजन प्रधान लक्ष्य का गुण नहीं है। पूंजीपति पूंजी तभी विनियोजित नहीं करते जब उस उद्योग का भविष्य संदिग्ध होता है। और एक सामजवादी राज्य का राष्ट्रीयकरण के द्वारा उन उद्योगों में पूँजी फंसाना शायद ही विवेकपूर्ण माना जाय, जिसका भविष्य अंधकारपूर्ण ज्ञात होता हो।

३. राष्ट्रीयकरण की मांग मजदूर और सर्वहारा वर्ग के उन्नयन के नाम पर भी की जाती है। किन्तु राष्ट्रीयकरण से यदि पूंजीवाद के स्थान पर 'राज्य पूंजीवाद' की ही स्थापना होती है जैसे रूस में, तो प्रसंग रूप से यह एक बहुत मंगलकारी घटना नहीं मानी जा सकती, क्योंकि जिन जिन देशों में उद्योगों का राष्ट्रीयकरण हुआ है उन देशों के राष्ट्रीय उद्योगों में मजदूरों की हड़तालें और क्षोभ असामान्य घटनायें नहीं हैं।

४. जिन उद्योगों की योग्यता का आधार एक 'सत्तात्मक नियंत्रण' (Unitary Control) है, उन उद्योगों के राष्ट्रीयकरण की मांग बहुत ठोस भूमि पर खड़ी है। उदाहरण के लिये खनिज पदार्थों का स्वामित्व यदि हजारों व्यक्तियों के हाथ में हो और प्रत्येक असम्बद्ध ठेके के आधार पर विभिन्न ठेकेदारों को उनके उत्खनन का कार्य दे दिया जाय तो विविध अपव्ययों के अतिरिक्त राष्ट्रीय आय की हानि होगी। इसका कटु अनुभव भारत स्वयं करता है। इसीलिये कोयला तथा अन्यान्य खनिज पदार्थों के राष्ट्रीयकरण की बात सोची जा रही है।

कृषि के भी क्षेत्र में यही बात लागू है। किन्तु एकात्मक नियंत्रण का अर्थ पूर्ण राष्ट्रीयकरण नहीं है। किसी भी उद्योग के एक प्रमुख भाग को अपने नियंत्रण

में लेकर राज्य उस उद्योग पर अपना 'एकात्मक नियंत्रण' स्थापित कर सकता है; जैसे कुछेक औद्योगिक प्रतिष्ठानों के मालिक उस उद्योग के सभी प्रतिष्ठानों के मालिक न होते हुए भी उस उद्योग पर पूर्ण नियंत्रण रखते हैं। अस्तु !

राष्ट्रीयकरण व्यापक और निरपेक्ष रूप से समाजवाद का मुख्य रूप (Cult) नहीं बन सकता । परिस्थितियों व विभिन्न चिन्तनों की पृष्ठ भूमि में इसकी वैधता पर विचार करना होगा। ऊपर हमने राष्ट्रीयकरण का विरोध नहीं किया है, अपितु समाजवाद और राष्ट्रीयकरण के अनिवार्य पर्यायत्व को अस्वीकार किया है; क्योंकि ऐसा नहीं करना व्यावहारिक तथा समाजवाद के वर्तमान तथा भूत इतिहास की दृष्टि से गलत होगा । उदाहरणार्थ—शिल्प संघी तथा मजदूर संघी समाजवादी राष्ट्रीयकरण में नहीं अपितु क्रमशः शिल्पियों तथा मजदूरों के संघ द्वारा औद्योगिक अंचल के नियंत्रित होने में विश्वास करते हैं। राबर्ट ओवेन विलियम मोरिस, जे. एल. ब्रे आदि द्वारा निर्धारित समाजवादी कार्यप्रणाली में राज्य का बहुत कम काम है। उसी प्रकार ब्रिटेन के फेबियन समाजवादियों ने राज्य के गौरव को अतिरंजना नहीं प्रदान की है। सन् १८६४ ई० में बिट्रिस वेब ने लिखा था—'कभी-कभी मुझे आश्चर्य होता है कि हमारा समष्टिवादी सिद्धान्त हमें कहां ले जायेगा। ....व्यक्तिवादियों ने राज्य के अनुचित हस्तक्षेप का विरोध किया और हम समष्टिवादी व्यक्तिवाद के असामाजिक प्रवृत्तियों से ऊब कर उसका (व्यक्तिवाद का) विरोध करते हैं। किन्तु स्पष्ट ही यह संदिग्ध लगता है कि समष्टिवाद के सिद्धान्तों का व्यापक प्रयोग ५० वर्ष पूर्व के व्यक्तिवादी सिद्धान्तों की तरह ही समाज की सभी समस्याओं का हल कर सकेगा।' (आर्थर लेविस की पुस्तक से उद्धृत्)

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से राज्य का गौरव मार्क्स, लेनिन और सिडनी वेब ने बढ़ाया और उन्हीं के प्रभाव में राष्ट्रीयकरण को समाजवाद का पर्याय आजकल कह दिया जाता है। समाजवाद मुख्य रूप से न तो सम्पत्ति का सिद्धांत है न राज्य का। समाजवाद समता का सिद्धान्त है। आजकल चूंकि आर्थिक वैषम्य का मुख्य कारण सम्पत्ति है, इसलिये सभी समाजवादी सम्पत्ति और उसके प्रधान नियंत्रण-सूत्र राज्य से सम्बन्ध रखते हैं । किन्तु सम्पत्ति की समता को छोड़कर समाजवादी सम्पत्ति के संचालन, वितरण और नियंत्रण के सिद्धान्तों पर एक मत नहीं। अस्तु। राष्ट्रीयकरण और समाजवाद को एक नहीं माना जा सकता क्योंकि—

१. जैसा कि मार्शल टीटो ने स्टालिन को सुझाया था, जब तक भूमि का वितरण आर्थिक जोत के रूप में न्याय-पूर्ण रूप से होता है और जब तक इतनी जमीन है कि हर परिवार को समान मात्रा में दी जा सके, भूमि में व्यक्ति-गत स्वामित्व की प्रतिष्ठा स्वीकार की जा सकती है और यह समाजवाद के विरुद्ध नहीं होगा।

२. १६ वीं शताब्दी के समाजवादी राष्ट्रीयकरण में नहीं अपितु सम्पत्ति पर सामुदायिक रूप से मजदूरों के संघों के स्वामित्व में विश्वास करते थे, जहां क्रियाशील उत्पादकों के रूप में मजदूर लाभ के समान भागी होते।

३. राष्ट्रीयकरण समाजवाद का साधन है और साधन को सिद्धि का पर्यायवाची नहीं कह सकते।

४. निजी क्षेत्र के उद्योगों में यदि मजदूर वर्ग को भी औद्योगिक शासन का पूंजीपतियों के समान ही साझीदार बना दिया जाय, बोनस की राशि से मजदूरों में कम्पनियों का शेयर खरीद कर बांटा जाय और उन्हें भी कुछ अंश में मालिक की संज्ञा प्रदान की जाय तथा पूंजीपतियों के अधिकतम आय पर सीमा निर्धारित कर दी जाय, तो मैं समझता हूँ यह समाजवादी सिद्धान्त के सर्वथा अनुकूल तो होगा ही साथ ही पूंजीवाद के सर्वथा प्रतिकूल। यह व्यवस्था राष्ट्रीयकरण की नहीं है पर समाजवादी अवश्य है। इसके स्पष्टतः दो सद्परिणाम होंगे। एक परिणाम तो यह होगा कि निर्देशक समितियों (Boords of dirictars) में मजदूरों के भी प्रतिनिधि स्थान पा सकें जिससे वे मजदूरों के हित की रक्षा पहले से अधिक योग्यता और प्रभाव से कर सकेंगे। दूसरा यह कि मजदूर तब केवल नौकर ही नहीं, अपितु उद्योगों से मालिक और साझीदार भी माने जायेंगे जिससे आर्थिक उन्नति के साथ उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा भी बढ़ेगी एवं श्रम की गरिमा (Dignity of labour) व्यावहारिक स्तर पर सार्थक सिद्ध हो सकेगी।

(शेष पृष्ठ २२२ पर)

फोन : ३३१११
तार : 'ग्लोबशिप'
न्यू ग्लोब शिपिंग
सर्विस लिमिटेड
खताऊ बिल्डिग्स
४४ ओल्ड कस्टम हाउस रोड, फोर्ट बम्बई
सब प्रकार का क्लियरिंग, फारवर्डिंग, शिपिंग
का काम शीघ्र व सुविधापूर्वक
किया जाता है ।
सेक्रेटरी—
श्री बी० आर० अग्रवाल
बी० काम:० एल० एल० बी०
मैनेजिंग डायरेक्टर—
श्री सी. डीडवानिया

नया सामयिक साहित्य

नागरिक शास्त्र के सिद्धान्त—ले०-श्री राजनारायण गुप्त । प्रकाशक: – किताब महल प्रकाशन, इलाहाबाद । पृष्ठ सं०४६० । मूल्य ४) ।

आजकल नागरिक शास्त्र सामाजिक विज्ञानों में अधिकाधिक महत्व प्राप्त करता जा रहा है और स्वाधीनता प्राप्ति के बाद भारत के नागरिकों के लिए तो इसका ज्ञान प्राप्त करना बहुत आवश्यक हो गया है। मानव को समाज के लिए और समाज को मानव के लिए अधिक उपयोगी बनाने की विद्या और कला ही वस्तुतः नागरिक शास्त्र है। सामाजिक और राजनैतिक जीवन में आने वाली कठिन समस्याओं को हल करने में हम इस शास्त्र के अध्ययन से पर्याप्त सहायता पा सकते हैं। विद्वान लेखक ने नागरिक शास्त्र के सैद्धान्तिक पक्ष को उसके विविध पहलुओं का विवेचन करते हुए इस पुस्तक में लिखने का सुन्दर प्रयत्न किया है।

प्रस्तुत पुस्तक वस्तुत: एफ० ए० के विद्यार्थियों को सामने रखकर लिखी गई है, ताकि वे इस महत्वपूर्ण विषय से भली भांति परिचित हो जावें। नागरिक शास्त्र का महत्व, उसका अन्य शास्त्रों से सम्बन्ध, व्यक्ति और समाज, समाज के विविध रूप, नागरिक के अधिकार और कर्तव्य, राज्य और उसके तत्व, राज्य की उन्नति, उद्देश्य, कार्य और संप्रभुता संविधान, विभिन्न शासन पद्धतियां आदि सभी आवश्यक विषय सरल शैली में पाठक को पढ़ने को मिलेंगे

मूलतः पुस्तक विद्यार्थियों के लिए लिखी गई हैं, इसलिए प्रत्येक प्रकरण के अन्त में परीक्षार्थियों के लिए उपयोगी प्रश्न दे दिये गये हैं। अन्त में अंग्रेजी व हिन्दी पारिभाषिक कोष दिया गया है। छपाई सफाई अच्छी है।

★

भूदान गंगा (५) ले०-आचार्य विनोबा। प्रकाशक—अ० भा० सर्व सेवा संघ, राज घाट, वाराणसी। पृष्ठ संख्या ३३०। मूल्य १.५० रु०।

भूदान के सम्बन्ध में आचार्य विनोबा के समय-समय पर किये गये प्रवचनों का संग्रह भूदान गंगा के नाम से प्रकाशित किया जाता है। इस दिशा में यह पांचवां संग्रह है। इस खण्ड में कांचीपुरम् सम्मेलन के बाद की तामिलनाड यात्रा की अवधि में दिये गये ७० भाषण दिये गये हैं। इन भाषणों में केवल भूदान या सर्वोदय अर्थ शास्त्र ही नहीं है, नैतिक दार्शनिक व आध्यात्मिक उत्कृष्ट विचार भी हैं। विनोबा की बहुविज्ञता, बहु श्रुतता व बहुमुखी प्रतिभा के, जो मस्तिष्क को विचार करने के लिए नई सामग्री देती है, दर्शन इन लेखों में होते हैं।

★

शान्तिसेना—लेखक और प्रकाशक वही। मूल्य [illegible] नये पैसे।

आचार्य विनोबा का मानसिक विकास बहुत तीव्रता से हो रहा है। वह जितना चिन्तन करते हैं, उतना ही [illegible] नया मार्ग स्पष्ट दिखाई देता है। शान्तिसेना का भी [illegible] ही विचार है। उनका विश्वास है कि आज अन्तर्राष्ट्रीय और आन्तरिक संघर्षों का उपाय दण्ड नहीं, शान्ति [illegible] की स्थापना है। क्षत्र पर ब्रह्म की विजय वे चाहते हैं। [illegible] सम्बन्ध में उनके भाषणों का संग्रह इस पुस्तक में [illegible] गया है। उनकी योजना है गांव गांव में शान्तिसेना [illegible] स्थापना हो ? ये सैनिक सब प्रकार के आक्रमण अपने [illegible] लें, प्राण त्याग तक के लिए तैयार रहें, तब आक्रमणकारी स्वयं ही अपनी हिंसक वृत्ति छोड़ देगा। भाषा, [illegible] सम्प्रदाय और राजनीति के आधार पर चलने वाले संघर्षों [illegible] निराकरण के लिए शान्तिसेना होगी। आज के हिंसा प्र[illegible] युग में शांतिसेना की सफलता का विचार अत्यन्त अव्यावहारिक प्रतीत होता है, परन्तु विनोबा इस क्रांतिकारी विचार [illegible] व्यावहारिक मानते हैं, भले ही इसके लिए पर्याप्त प्रतीक्षा [illegible] करनी पड़ेगी। दण्ड और हिंसा उनकी सम्मति में स[illegible] समाधान नहीं है। शान्तिसेना के सैनिक किसी राजनैतिक या सांस्कृतिक दल के प्रति निष्ठा नहीं रखेंगे, मानवता [illegible] उनका धर्म होगा और शान्तिपूर्वक त्याग और कष्ट स[illegible] उनका अस्त्र होगा। आचार्य विनोबा का यह स[illegible] व्यावहारिक है या नहीं, इसमें मतभेद रखने वालों की [illegible] आन्तरिक इच्छा उसकी सफलता की है।

★

सुबह के भूले (उपन्यास) ले०—श्री इलाचन्द्र जोशी, प्रकाशक—हिन्दी भवन, इलाहाबाद, मूल्य ५ रु०।

श्री इलाचन्द्र जोशी हिन्दी के उन गिने-चुने साहित्यकारों में है जिनकी प्रतिभा बहुमुखी है। जोशी जी कवि, समालोचक, निबन्ध लेखक के साथ साथ उपन्यासकार भी हैं। उपन्यासकार के रूप में उनको निजी 'मान्यताएं' हैं, लेकिन प्रस्तुत उपन्यास उनकी मान्यताओं से कुछ भिन्न लगेगा। इसका कारण यह प्रतीत होता है कि यह उपन्यास "जन साधारण" के लिए नहीं वरन् "वर्ग" विशेष के लिए लिखा गया है और यह वर्ग है किशोर और तरुणों का वर्ग, जो कथा के मनोरंजन के साथ साथ उपदेश-लाभ भी प्राप्त कर सकें। इसीलिए कथावस्तु सरल है। उसमें जटिलता नहीं। न ही पात्रों की भीड़-भाड़ है, और न ही मनोवैज्ञानिक गुत्थियों" को सुलझाने का प्रयास। उपन्यास की नायिका गुलबिया सुबह की भूली है, जो भटक कर "गिरिजा" बनती है। लेकिन सुबह की भूली गुलबिया "शाम" को वापस लौट आती है। तब गुलबिया और गिरिजा का एकाकार हो जाता है। गुलबिया और गिरिजा की इन दो सीमाओं में ही घटनाएं बंधी पड़ी है। कथा जितनी आकर्षक और रोचक है, भाषा भी उतनी ही सरल और प्रवाहपूर्ण है। निस्संदेह यह उपन्यास एक सफल रचना है।

पुस्तक की छपाई-सफाई अच्छी है। लेकिन मूल्य ५) अधिक प्रतीत होता है।

कुलदीप—ले० श्री रामाश्रय दीक्षित। मूल्य २५ न० पै०।

माता पिताओं से—ले० महात्मा भगवानदीन। मूल्य ५० न० पै०।

बालक सीखता कैसे है। लेखक वही। मूल्य ३७ न० पै०।

उपयुक्त तीनों पुस्तिकाएं सर्व सेवा संघ प्रकाशन राजघाट बाराणसी द्वारा प्रकाशित हुई है। कुलदीप एक छोटासा नाटक है, जिसका उद्देश्य भूदान, समानता, मानवता आदि के विचार को जनसामान्य तक पहुँचाना है। श्री भगवानदीन बाल मनोविज्ञान के पंडित हैं। उनकी दोनों पुस्तिकाएं बालकों के विकास से सम्बन्ध रखती हैं। पहली पुस्तक में बालकों से व्यवहार और उन्हें पढ़ाने के सम्बन्ध में बहुत सी उपयोगी और व्यावहारिक सूचनाएं संक्षेप में दी गई हैं। दूसरी पुस्तक में अपने वे अनुभूत प्रयोग दिये गये हैं, जिनसे उन्होंने बच्चों के स्वभाव को बदल दिया। यह पुस्तक भी माता पिता के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

सर्वधर्म समभाव—ले० श्री रघुनाथ सिंह, प्रकाशक—अ० भ० कांग्रेस कमेटी, जन्तर मन्तर रोड, नई दिल्ली। मूल्य ७५ न० पै०।

प्रस्तुत पुस्तिका में, जैसा कि नाम से स्पष्ट है, विभिन्न धर्मों में समानता और मूल उद्देश्य की एकता दिखाने का प्रयत्न किया गया है। आज से कुछ समय पूर्व इसकी राजनैतिक आवश्यकता भी थी। धर्म के विद्यार्थियों के लिए भले ही इसका बहुत महत्व न हो, सामान्य जन को विभिन्न धर्मों—हिन्दू, इस्लाम, ईसाई, जैन, बौद्ध धर्मों के सिद्धान्तों तथा विचारों का परिचय इससे प्राप्त हो जायगा।

आयोजन (साप्ताहिक राष्ट्रीय बचत विशेषांक)—सम्पादकः—श्री सुमनेश जोशी, कार्यालय—नारनोली भवन, सांगानेरी दरवाजा, जयपुर।

पिछले कुछ समय से श्री सुमनेश जोशी के सम्पादन में यह पत्र निकल रहा है। इसका मुख्य उद्देश्य समाजवादी समाज की रचना है। देश की और विशेषकर राजस्थान की विविध आर्थिक प्रवृत्तियों का परिचय और प्रचार इसकी विशेषता है। चित्रों व रेखा चित्रों से इसे अधिक आकर्षक बनाने का भी प्रयाग किया जाता है। बचत की प्रवृत्ति को प्रचार भावना से बचत विशेषांक निकाला गया है। बचत के सम्बन्ध में योजना आयोग, कांग्रेस देश व राज्य के नेताओं के विचार, बचत के नये उपाय, सरकारी योजनाएं आदि सामग्री अत्यन्त आकर्षक रूप में उपस्थित की गई है।

"भारतीय समाचार" और "इंडियन इन्फौर्मेशन" प्रथमांक, प्रकाशक—प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय—भारत सरकार, दिल्ली—८। मूल्य क्रमशः २० और २५ नये पैसे।

सरकार की गतिविधियों की सूचना नियमित रूप से जनता को मिलती रहे, इस दृष्टि से ५, ७ साल पहल इन्हीं नामों से याने, भारतीय समाचार और इंडियन इन्फौ

मैशन पत्रिकाएं हिन्दी और अंग्रेजी में प्रकाशित होती थी। लेकिन बीच में कारणवश इन्हें बन्द कर देना पड़ा। पाक्षिक रूप से इनका पुनः प्रकाशन स्वागत योग्य है। पत्रिकाएं सभी सरकारी विभागों की सूचनाएं, योजना और विकास सम्बन्धी विवरण तथा अन्य जानकारी नियमित रूप से देती रहेंगी। इनकी उपयोगिता असंदिग्ध है।

इतना सब होते हुए भी इन पत्रिकाओं को बढ़िया और मोटे कागज पर छापना उचित प्रतीत नहीं होता। साधारण कागज पर छापने से भी इन पत्रिकाओं के महत्व में कोई कमी न होगी। 'मितव्ययता' के लिए ऐसा करना ही होगा। फिर यदि सूचनाओं से सम्बन्धित चित्र आदि भी अन्दर के पृष्ठों में दिये जा सकें तो इनकी उपादेयता बढ़ सकती है।

विश्व ज्योति (नव वर्ष विशेषांक)—सम्पादक—श्री विश्वबन्धु और श्री सन्तराम। प्रकाशक—साधु आश्रम, होशियारपुर (पंजाब)। वार्षिक मूल्य ८) रु०।

इस अंक के साथ विश्व ज्योति ने सातवें वर्ष में प्रवेश किया है। इसका एक उद्देश्य भारतीय संस्कृतिपरक उत्कृष्ट व स्वस्थ साहित्य का प्रचार है। प्रस्तुत विशेषांक में दार्शनिक, धार्मिक, ऐतिहासिक, सामाजिक और साहित्यक लेखों का सुन्दर संकलन है। कुछ लेख तो बहुत विद्वत्तापूर्ण हैं। स्वर्ण युग की संस्कृति, आध्यात्मिक जीवन के नियम, भारतीय मनन शक्ति का ह्रास, दर्शन की उपयोगिता आदि ऐसे ही लेख हैं। कहानियों व सुन्दर कविताओं से इसकी रोचकता बढ़ गई है। अङ्क संग्रहणीय है।

प्रवास और सफलताएं—मध्य प्रदेश शासन भोपाल द्वारा प्रकाशित।

इस पुस्तिका में मध्य प्रदेश शासन द्वारा राज्य के पुनर्गठन के बाद एक वर्ष में विकास योजना के विविध अंगों की प्रगति का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। इस वर्ष के विशेष कार्य चम्बल योजना, भिलाई—लोह संयंत्र, भोपाल के पास कोरवा विद्युत: गृह आदि की प्रगति है। तवा योजना नेपा मिल्स में कैमिकल मिल तथा भूमि सुधार, सिंचाई, शिक्षा, सामुदायिक विकास उद्योग आदि क्षेत्रों में की गई प्रगति का परिचय भी इस पुस्तिका से मिल जायगा।

———

विविध राज्यों में—

आर्थिक प्रवृत्तियां

द्वितीय योजना में

बम्बई राज्य का औद्योगिक विकास

सहकारी शक्कर फैक्टरियां

राज्य में गन्ने के बढ़ते हुए विस्तारों में सहकारी शक्कर फैक्टरियों का विकास करने की दृष्टि से बम्बई सरकार ने लगभग ऐसी १२ फैक्टरियों की शेयर पूंजी में रकम लगायी है, जिनको लायसेन्स प्राप्त है तथा गत वर्ष के दरमियान एक फैक्टरी ने तो उत्पादन को प्रारंभ कर दिया है। मध्यम तथा छोटे उद्योगों के विकास के कारण बम्बई राज्य का औद्योगिक विभाग महत्वपूर्ण बन गया। १९५६-५७ वर्ष के दरमियान औद्योगिक विभाग की सिफारिशों के आधार पर वाणिज्य तथा औद्योगिक मंत्रालय द्वारा १३४ लायसेन्स जारी किये गये। ए. सी. मोटर्स, इलेक्ट्रिक कन्ट्रोल गिअर्स, नट् तथा वोल्ट, स्टील स्ट्रक्चरल, केबिल्स स्प्रिंग तथा रोक ड्रिल्स, एयर कान्व्रे अर, इन्टरनलकम्बुशन इंजीनों के लिए एयर फिल्टर आदि जैसे नये औद्योगिक प्रतिष्ठानों की स्थापना के लिए २७ लायसेन्स जारी किये गये। महत्वपूर्ण रासायनिक उत्पादन को भी आवश्यक सुविधाएं प्रदान की गयीं। इसके अलावा बिनौले की खली और तेल, कांच के प्याले तथा चिमनियां, शक्कर, वनस्पति तेल आदि के उत्पादन को भी प्रोत्साहन दिया गया।

इंजीनियरिंग तथा रासायनिक उद्योग

उद्योगों के विस्तार के फलस्वरूप ६५ लायसेन्सधारियों के उत्पादन में भी वृद्धि होने की संभावना है। इन लायसेन्सधारियों में नये सामान के निर्माण करनेवाले घटक भी शामिल है। १९५६-५७ वर्ष के दौरान में २१ लायसेन्स दिये गये।

ग्रामोद्योगों को अपने माल को बेचने की दिशा में विभिन्न प्रकार की सहायताएं प्रदान की जाती हैं। १९५६-५७ वर्ष के दौरान में बम्बई के उद्योग विभाग के केन्द्रीय स्टोर खरीद संगठन ने ६.७४ करोड़ रुपये का सामान खरीदा, जिसमें १.२५ करोड़ रुपये की खरीद बम्बई राज्य में की गयी तथा १०.४ लाख रुपये का खर्च कुटीर और ग्रामोद्योगों के माल पर किया गया। खरीद करते समय सरकार की यह नीति रही है कि राज्य औद्योगिक सहकारी संस्था, व्यवसाय, प्रशिक्षण केन्द्र, कल्याण, जेल की फैक्टरियों, पुनर्वास उत्पादन केन्द्रों आदि के मूल्यों में २५ प्रतिशत प्राथमिकता दी जाय। इसके अलावा आयात किये हुए माल की (तट कर सहित) कीमतों की अपेक्षा देशी माल की कीमतों पर १५ प्रतिशत प्राथमिकता दी जाती है। यह संरक्षण संरक्षित उद्योगों पर भी लागू किया जाता है। लेकिन जहां कीमतों में १५ प्रतिशत प्राथमिकता भी पर्याप्त नहीं होती, वहां पर सरकार की स्वीकृति से निर्दिष्ट श्रेणी के सामानों पर प्राथमिकता दी जाती है।

छोटे उद्योगों को आर्थिक सहायता प्रदान करने के अलावा कुछ उद्योगों के उत्पादन के कार्यक्रम को निर्धारित

द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना के दौरान में औद्योगिक विकास पर अधिक बल देने से एवं बृहत्तर बम्बई राज्य के निर्माण होने के फलस्वरूप औद्योगिक प्रवृत्तियों का काफी विस्तार हुआ है। यदि सभी आयोजित विकास कार्यों का हिसाब लगाया जाय तो इससे अन्दाजन १६,००० कामगरों को रोजगार मिलेगा तथा २२-२४ करोड़ रुपये की पूंजी लगायी जायगी। १९५६-५७ के दौरान में ४१ छोटे घटकों के लिए कुल १४.१३ लाख रुपये के कर्ज स्वीकृत किये गये, जिनमें से ३१ पार्टियों को मशीनों की खरीद तथा चालू पूंजी के लिये १.८५ लाख रुपये वितरित किये गये। जीप, सायकिल के हिस्से, रसायन, इंजीनियरिंग तथा वस्त्र उत्पादन एवं फाउण्ड्री कार्य के उद्योगों को कर्ज दिये गये।

करने के लिए आवश्यक कदम उठाये जाते हैं और इस प्रकार लघु उद्योग मण्डल नई दिल्ली के विकास आयुक्त के पास छः पार्टियों की सिफारिश साइकिलों को एकत्रित करने के लिए की गयी। ये दल जब पूर्ण रूप से कार्य करने लगेंगे तब वे बाजार में २४५०० बायसिकलें सालाना रख सकेंगे। इसी प्रकार बम्बई के उद्योग विभाग ने एक और निर्माता की सिफारिश की है जो सिलाई की ६००० मशीनें सालाना तयार करेगा। इसके अलावा सामुदायिक योजना विस्तार कर्जत में छातों के निर्माण के केन्द्रों की स्थापना की एक योजना को भी बम्बई के उद्योग विभाग ने तैयार किया है।

बिजली की पूर्ति

ट्राम्बे के प्रथम थर्मल सेट द्वारा कार्य आरंभ करने के फलस्वरूप वृहत्तर बम्बई में बिजली पूर्ति में काफी सुविधा हुई है। औद्योगिक कार्यों के लिए अब अधिक बिजली की पूर्ति की जा सकेगी। अभी बम्बई राज्य में पैदा की जानेवाली बिजली का लगभग ६० प्रतिशत भाग औद्योगिक उपयोग में लाया जाता है। यह हिस्सा देश में औद्योगिक प्रयोजनों से प्रयोग में लायी जानेवाली बिजली का ३३ प्रतिशत होता है।

सरकार ने कल्याण के निकट अटाले स्थान पर भारी और बुनियादी उद्योगों का एक औद्योगिक प्रतिष्ठान कायम करना भी निश्चय किया है। १९५६-५७ वर्ष के दौरान में इस दिशा में जाँच कार्य जारी रहा। द्वितीय पंचवर्षीय आयोजन के अन्तर्गत औद्योगिक प्रतिष्ठानों के स्थापनार्थ १९९.५२५ लाख रुपयों का प्रबन्ध किया गया है।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के दौरान में बम्बई की औद्योगिक शोध प्रयोगशाला माटुंगा में एक सरकारी प्रयोगगृह, पूना में औद्योगिक प्रतिष्ठान प्रयोगशाला की स्थापना और बडोदा की प्रयोगशाला को विस्तृत करना प्रस्तावित किया गया है। माटुंगा और बडौदा की औद्योगिक रसायन प्रयोगशालाओं में महत्वपूर्ण औद्योगिक समस्याओं पर जांच कार्य है तथा राज्य के रासायनिक उद्योगों के लिए प्रक्रियाओं का कार्य भी किया जाता है।

★

राजस्थान

संसार में सबसे लम्बी नहर

राजस्थान नहर के निर्माण का श्रीगणेश इस राजस्थान के आर्थिक इतिहास में बहुत महत्वपूर्ण है, जो पूर्ण होने पर राजस्थान की अर्थ व्यवस्था में क्रांति प्रभाव डालेगी। इसकी खुदाई का श्रीगणेश ३० मार्च श्री गोविन्दवल्लभ पन्त ने किया है। यह नहर संसार सबसे लम्बी नहर होगी।

इस ४२६ मील लम्बी नहर के निर्माण पर अनुमान साढ़े ६६ करोड़ रुपया व्यय होगा। इस योजनाके पूर्ण पर १० लाख टन अनाज प्रति वर्ष उत्पन्न होगा, जि मूल्य ३० करोड़ रुपया होगा। इस नहरके निर्माण कार्य में ५० हजार से अधिक लोगों को रोजगार मिलेगा

यह नहर पंजाब में फिरोजपुर के समीप हरिके से सतलुज नदी से निकलेगी और ११० मील तक में होती हुई राजस्थान में प्रवेश करेगी। राजस्थान में लाख एकड़ भूमि रेगिस्तान है।

राजस्थान में यह नहर हनुमानगढ़ के समीप करेगी और नचाना से जिला जेसलमेर तक चली जायेगी यह दस वर्ष में तैयार हो जाएगी। इसके तैयार हो पर न केवल राजस्थान के उत्तर पश्चिमी विभाग के भुखमरी और अकाल के प्रकोप से बच जायंगे, प्रत्युत राजस्थान समृद्ध हो जाएगा। अभी इस क्षेत्र में बहुत जनसंख्या है। नहर के तैयार होने पर जब खेतीवाड़ी तो अन्य क्षेत्रों के लोगों को यहां आबाद किया सकेगा। इस बड़ी नहर से अन्य नहर भी सिंचाई के निकाली जायेंगी। इसका एक लाभ होगा कि रेगि का फैलाव रुक जायेगा।

इस नहर के पानी के परिणामस्वरूप अमरीकी यहां विशेष रूप से पर्याप्त मात्रा में उगाई जा सकेगी। भूमि इस कपास के लिए अच्छी है।

१९५१ में राजस्थान की खेतीहर भूमि का क्षेत्र केवल ११ लाख एकड़ था और १९६६ तक सभी योजनाओं के पूर्ण हो जाने पर यह क्षेत्रफल ४६ लाख आयगा।

राजस्थान की राजधानी

राजस्थान के पुनर्गठन के साथ ही राजधानी किस नगर में हो, यह प्रश्न गंभीर विवाद का रूप धारण कर गया था, पर अब इस प्रश्न का निर्णय हो गया दीखता है। इस प्रश्न पर पड़ताल करके विगत जुलाई में श्री राव के सभापतित्व में जो कमेटी बनाई गई थी, उसने जयपुर, जोधपुर, अजमेर, उदयपुर, बीकानेर और माउंट आबू और कोटा के दावों पर प्रशासनिक सुविधा, अर्थात उनकी भौगोलिक स्थिति और संचार की अच्छी सुविधाएं, उपलब्ध राजकीय इमारतों और सरकारी अधिकारियोंके आवास के लिए निजी मकानों की संख्या, उनके भावी विकास की सम्भावनाएं, आबहवा, जीवन की आवश्यकताओं के लिए साधनों की उपलब्धि, शिक्षा और डाक्टरी सुविधाएं व उनका ऐतिहासिक एवं राजनीतिक महत्व और उनकी सांस्कृतिक परम्पराओं की दृष्टि से विचार किया।

उसने मत व्यक्त किया है कि चूंकि चंडीगढ़ और भुवनेश्वर की तरह नई राजधानी बनाने पर भारी खर्च करना पड़ेगा, इसलिए एक ऐसे स्थान को, जो राजधानी बननेकी अधिकांश शर्तें पूरी करता है, छोड़ना और नई राजधानी बनाना अनुचित होगा। उपर्युक्त सातों शहरों में उपलब्ध सुविधाओं के तुलनात्मक अध्ययनसे पता चलता है कि जयपुर कई तरह से राजधानी बनने की आवश्यकताएं पूरी करता है। यहां सरकारी भवन काफी हैं, पानी और बिजलीकी उपलब्धि बढ़ाई जा सकती है। शिक्षा और चिकित्सा सुविधा उपलब्ध है, शानदार इतिहास है और सबसे ऊपर वह योजनाबद्ध रूप से बसा हुआ है। वह राज्यका सबसे बड़ा शहर है और उसकी आबादी तेजी से बढ़ने के साथ साथ निजी मकान भी बड़ी संख्या में बन गए हैं। यहां की आबहवा अच्छी है। जनमत भी जयपुर को राजधानी रखने के पक्ष में है।

अब आशा है, राजधानी के विवाद को न उठाकर समस्त राजस्थानी राज्य के विकास में लग जायंगे, किन्तु शासन को यह तो ध्यान रखना ही होगा कि राजस्थान के अन्य नगरों का भी आर्थिक, सामाजिक विकास होते रहना चाहिए।

★

उत्तर प्रदेश

राजकीय सूक्ष्म यंत्र निर्माणशाला

उत्तरप्रदेश के सूक्ष्म यंत्र निर्माण कारखाने में १९५१-५२ के वर्षमें केवल ४२४ जलमापक यंत्रोंका निर्माण हुआ और १९५५-५६ में अर्थात प्रथम पंचवर्षीय आयोजना के अन्तिम वर्षमें उत्पादन संख्या बढ़कर १३,३३१ हो गई। द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में प्रति वर्ष ३६,००० जलमापक यंत्रों और तीन सौ अणुवीक्षण यंत्रोंका निर्माण करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया, जो प्रथम पंचवर्षीय आयोजनाके लिए निर्धारित लक्ष्य से लगभग ३०० प्रतिशत अधिक है।

स्थान की कमी के कारण कारखाने के पुराने अहाते में इस दिशा में अधिक प्रगति न की जा सकी। कारखाने की सभी मशीनों आदि का स्थानान्तरण नए भवन में किया जा चुका है। नई भूमि में कारखाने की प्रत्येक शाखा के पास काफी जगह है। आवश्यकता पड़ने पर कारखाने का चौगुना विस्तार किया जा सकता है।

देश के सूक्ष्म यंत्र-निर्माण कारखानों में इस कारखाने ने अपना विशिष्ट स्थान बना लिया है। नीचे दिए गए आंकड़ों से ज्ञात होगा कि इस कारखाने ने प्रति वर्ष अधिकाधिक प्रगति की है। फरवरी १९५८ के अन्त तक इस कारखाने ने कुल ७३,९९५ जल-मापक यंत्रों और ४१० अणुवीक्षण यंत्रों का उत्पादन कर लिया है। केवल जल-मापक यंत्रों का मूल्य ५० लाख रुपए के करीब है।

	जल मापक यंत्र	अणुवीक्षण यंत्र
१९५१-५२	४२४	—
१९५२-५३	३,६२७	५४
१९५३-५४	६,८०१	११२
१९५४-५५	९,८८३	९७
१९५५-५६	१,३३१	३२
१९५६-५७	१९,००४	७१
१९५७-५८		
फरवरी १९५८ के अन्त तक	२०,९२५	११९
	कुल ७३,९९५	कुल ४१०

सूक्ष्म यंत्र निर्माण शाला को १९५४-५५ वर्ष से लाभ होने लगा। यह उल्लेखनीय है कि १९५६-५७ के वित्तीय वर्षमें ९१,६०१ रु० का लाभ हुआ। इस कारखाने पर कुल १३,९९,३३४ रु० की पूंजी लगी हुई है और इसकी राजस्व सम्पत्ति कुल १४,८२,१९३ रु० की है।

इस समय इस कारखाने में विशेष प्रकार के आधा इन्ची, पौन इन्ची और एक इन्ची जल-मापक यंत्रोंका निर्माण हो रहा है। अन्य यंत्रोंमें, विद्यार्थियों तथा अनुसन्धान के काम में आने वाले और "बुलेट कम्पेरिजन' अणुवीक्षण यंत्रोंका निर्माण भी हो रहा है। 'बुलेट कम्पेरिजन' अणुवीक्षण यंत्र का निर्माण देश में प्रथम बार खुफिया विभाग की वैज्ञानिक शाखा के उपयोगके लिए यहां किया गया है। यहां के अणुवीक्षण यंत्र की सहायता से वस्तुओं को ३७५० गुने बड़े आकार में देखा जा सकता है। 'बुलेट कम्पेरिजन' अणुवीक्षण यंत्र की कीमत केवल २,५०० रु० है जबकि विदेशों से आयात किये गये इसी प्रकार के यंत्र का मूल्य ६,००० रु० है।

जिन नये यंत्रोंका निर्माण इस कारखाने में अब हो रहा है, उनमें गैस, पानी और भाप के 'प्रेशर गाज' तथा शल्य चिकित्सा के कुछ उ करण भी सम्मिलित हैं। इनमें से कुछ यंत्र आगामी दो महीने की अवधि के भीतर बाजार में बिक्री के लिए उपलब्ध हो जायंगे। कारखाने के अधिकारियों ने प्रति वर्ष १२,००० 'प्रेशर गाज' का उत्पादन करने का लक्ष्य निर्धारित किया है। इन सभी यंत्रों की डिजाइनें आदि तैयार कर ली गई हैं।

अनुमान है कि इस कारखाने ने कुल ४२ लाख रुपये की विदेशी मुद्रा की अब तक बचत की है जो प्रति वर्ष बढ़ती जायगी।

★

मध्यप्रदेश

चम्बल-योजना प्रगति के पथ पर

यदि राजस्थान में नई नहर के खुदाई कार्य के उद्घाटन से नई हलचल जारी हो गई है, तो मध्यप्रदेश व राजस्थान की चम्बल योजनाभी निरन्तर प्रगति कर रही है।

मध्यप्रदेश की चम्बल जल विद्युत और सि[ंचाई] योजना के एक प्रगति-प्रतिवेदन के अनुसार माह फर[वरी] १९५८ में गांधी सागर बांध पर ७६११० बोरी से अधि[क] सीमेन्ट, १८२ टन इस्पात और २५ टन कोयले का उपयो[ग] किया गया। आलोच्च अवधि में, बांध पर ६.०८ ला[ख] घनफुट चिनाई और कांक्रीट का कार्य और ०.४१ ला[ख] घनफुट चिनाई का कार्य गांधी सागर शक्ति केन्द्र [में] पूरा किया गया। प्रदर्शनी, कैंटीन और क्लब भवन त[था] विदेशी लोगों तथा निर्माताओं के ठहरने के लिये विश्रा[म] गृह का कार्य प्रगति पर था और ८० प्रतिशत से अधि[क] कार्य पूरा हो चुका है।

उक्त मास में वैचिंग प्लान्ट ने ३१,३९१ घनफु[ट] कांक्रीट को मिलाया। वकेट एलीवेकेटर ६२५० बोरे सीमे[न्ट] और सुरखी लाये। जा-क्रशर और कोन क्रशरों ने २२[...] टन सामग्री का चूरा किया। ५ तथा १० टन वाले के[बल] वेजों के द्वारा ५१२ बार में २२३१ टन कांक्रीट, चू[ना] पत्थर, सीमेन्ट, रेत, तथा अन्य सामग्री ढोई गई।

मुख्य दाहिनी नहर

इस मास मुख्य दाहिनी नहर क्षेत्र में २८२.४० ला[ख] घनफुट मिट्टी बिछाने का काम, ५.६७ लाख घनफुट [...] इमारती और कांक्रीट का काम तथा ५.४२ लाख चट्टानों [की] कटाई का काम किया और पार्वती, अहेली, रतडी, सी[...] अमराल, दावरा, धातरी, दोनी, परम, सरारी १ तथा [२] और कुनू एक्विड्क्ट में प्रमुख नालियों को बनाने का का[म] ठीक ढंगसे चल रहा है।

वरोडिया विंडी, त्रीपुरा, बरोढा, शियपुर और सबल[गढ़] में आवास तथा गैर आवास के लिए अस्थायी भवनों [का] निर्माण समाप्त हो चुका है। और धोती, कलहर[...] सिल्लीपुर, तीरभकलन, गिरधरपुर, सेभरदा, इसील[पुर] कुनुकादायां विनारा, वीरपुर और टेन्द्रा की नहरी [...] बस्तियों में निर्माण कार्य चल रहा है।

बांध और नहर क्षेत्र में प्रतिदिन औसतन कु[ल] ६००० और १६००० मजदूर क्रमशः कार्यरत हैं।

—

विभिन्न देशों की राष्ट्रीय आय

देश	वर्ष	आबादी (लाखों में)	करोड़ रुपयों में आय	प्रति व्यक्ति आय रु० में
भारत	५५-५६	३८३०.०	१०,४२०	२७२
	५६-५७	,,	११४१०	२८४.३
			वर्तमान मू० के आधार पर	
पाकिस्तान	५६-५७	८८५.०	२,०७६	२४६
बर्मा	१६५५	१६४.३	४०६	२१०
श्री लंका	१६५५	८३.८	४७५	५६७
जापान	१६५६	६००.०	६,२८३	१,०३१
आस्ट्रेलिया	१६५६	६४.०	४,६२३	४,६१८
इंगलैंड	१६५६	५१२.०	२१,६५३	४,२८७
अमेरिका	१६५६	१६८०.०	१६३,५५४	६,७३१
कनाडा	१६५६	१६०.०	१०,७८७	६,७४२
फ्रांस	१६५६	४३६.०	१७,६४०	४,०४६
पश्चिमी जर्मनी	१६५६	५१५.०	१६,८८६	३,२७६
इटली	१६५६	४८१.०	८,७६०	१,८२१
स्वीडन	१६५६	७३.०	४,१२७	५,६५३
स्विट्जरलैण्ड	१६५६	५०.०	२,७१४	५,४२८
नार्वे	१६५६	३४.६	१,४०८	४,३५८

विभिन्न चुने हुए उद्योगों का उत्पादन

		१६५१	१६५६	१६५७
कोयला	००० टन	३४२०८	३६४३२	४३४५२
आयरन और	,,	३६६०	४२४८	४४६८
कच्चा लोहा	,,	१७०६	१८०७	१७८०
तैयार इस्पात	,,	१०७६	१३१६	१३३७
अलमुनियम	टन	३८४८	६५००	७८१२
ताम्बा	,,	७०८४	७६२८	७८१६
चीनी	००० टन	१११५	१८५४	२०६७
काफी	,,	१८०६६	३४४४०	४०८४६
चाय	लाख पौंड	८६६०	६६४०	६७७०
बनस्पति घी	००० टन	१७२	२५६	२६८
सिमेंट	१० लाख	२१४४६	२६१५८	२८८३०
सूत	लाख पौण्ड	१३०४४	१६७१६	१७७४०
कपड़ा	लाख गज	४०७६४	५३०७६	५३१७२
जूट सामान	००० टन	८७५	१०६३	१०३०
ऊनी सामान	००० पौंड	१७७००	२५४४०	२७५६८
कागज, गत्ता	००० टन	१३२	१६३	२०६
कास्टिक सोडा	(टन)	१४७२४	३६४२०	४२०४४
सोडा ऐश	,,	४७५३२	८४२६०	६१३६५
दिया सलाई	००० डब्बे	५७८	५८६	५६३
साबुन	(टन)	८३४३६	१०६६०८	१०४१४७
सीमेन्ट	००० टन	३१६६	४६२८	५६५२
रेज़र ब्लेड	(लाख)	२२६	२६५२	३३६५
हरीकेन लालटेन	(०००)	३६७७	५१७६	३८३६
डीज़ल इंजन	(संख्या)	७२४८	११६४०	१६२८८
सिलाई मशीन	,,	४४४६०	१३०३६२	१६४८००
मशीन टूल	(००० रु० मूल्य)	४७३०	८२०३	२१७६४
बिजली के पंखे	(०००)	२१२	३३८	५२१
रेडियो रिसीवर्स	(संख्या)	८२७८८	१५००००	१८४१६२
मोटरें	,,	२२२७२	२६८३६	३३०००
बाइसिकल (पूरे)	(०००)	११४	६५७	७५६

(पृष्ठ २१२ का शेष)

स्पष्ट है यह व्यवस्था औद्योगिक प्रजातन्त्र की व्यवस्था होगी, जो पूंजीवाद से दूर और समाजवाद के सर्वथा निकट होगी।

कहने का तात्पर्य यह है कि समाजवाद मानव समाज के संश्लिष्ट विकास में विश्वास करता है। यह मानता है कि व्यक्ति के विकास के लिये राज्य जैसी राजनीतिक संस्था के अभिभावकत्व की अपेक्षा है किन्तु इसका अर्थ यह नहीं होता कि उत्पादन वितरण और विनिमय के साधनों का सामूहिक राष्ट्रीय स्वामित्व ही समाज का भाग्य तय कर डालेगा और समाजवाद के ध्येय की पूर्ति का दूसरा कोई तरीका ही नहीं। सत्य यह है कि जब तक हमारे सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक जीवन के विभिन्न अंगों का संचालन समता और सामाजिक न्याय के आधार पर होगा, हमारा विरोध समाजवाद से नहीं होगा और इनके इस प्रकार के संचालन का राष्ट्रीयकरण ही एकमात्र उपाय है, यह पूर्ण सत्य नहीं है। इसीलिये श्री आर्थर लेविस ने कहा है कि—

"साधारण धारणा के विपरीत समाजवाद अपने इति[हास] तथा दर्शन किसी भी दृष्टि से राज्य के गौरव की [अभि]रंजना करने (Glorification of state) तथा उ[सकी] शक्ति प्रसार के लिये बचन-बद्ध नहीं है।"

(पृष्ठ २०६ का शेष)

नहीं है। पर छोटे-छोटे गांवों में विद्या कहां चुकती [है]। ऊपर से डालने से नीचे कुछ नहीं मिलता।

किन्तु सर्वोदय फुहारे-सा स्रोत है। नीचे खूब [भरा] रहेगा और फिर नीचे से ऊपर थोड़ा-थोड़ा उड़ेगा। [ज्यादा] ऊपर कम उड़ेगा। इस तरह ऊपर कम-कम होता जाय[गा]। यह बहुत बड़ा फरक है।

योजना प्रथम दीन, दरिद्र, दुखी लोगों के लिए होनी चाहिए। बाद में ऊपर वालों की योजना हो। [यह] सर्वोदय है। वे भी चाहते हैं कि सबको मिले और हम [भी] चाहते हैं कि सबको मिले। लेकिन वे ऊपर से आरम्भ [करते] हैं और हम नीचे से। दोनों की अलग-अलग प्रक्रिया [है]।

पश्चिम रेलवे की आर्थिक गतिविधि

गत कुछ वर्षों की आर्थिक गतिविधियों के तुलनात्मक संख्याओं से ज्ञात होता है कि पश्चिम रेलवे सम्बन्धी प्रवृत्तियां बढ़ती जा रही हैं। उसके व्यय-सम्बन्धी आंकड़े इस प्रकार हैं—

१९५२-५३	१०७.४४ करोड़ रु०
१९५३-५४	१०९.१४ ,,
१९५४-५५	११३.१३ ,,
१९५५-५६	१२२.१७ ,,
१९५६-५७	१३६.२२ ,,

१९५६.५७ में कुल आमदनी ५५.७० करोड़ रु० हुई है।

कुल आमदनी की वृद्धि १९५२-४३ में ४१.५० करोड़ रु० की तुलना में १९५६-५७ में ५५.७० करोड़ रु० तक हुई है। कुल आमदनी में से ४० प्रतिशत आय यात्रियों से हुई है जबकि यात्रियों से प्राप्त आय में से ८० प्रतिशत आय तीसरे दर्जे के यात्रियों से हुई है।

यातायात की घनता

प्रथम पंचवर्षीय योजना की सफल पूर्ति तथा द्वितीय योजना के प्रारम्भ के साथ साथ रेल्वे यात्रा में भी काफी वृद्धि हुई है, जो निम्नलिखित तालिका से स्पष्ट होगी।

बड़ी लाइन	१९५६-५७ में
माल गाड़ी (मील-हजारों में)	९,४२६
पैसेंजर ट्रेन ,,	७,५९३
ट्रेन-मील प्रति रूट तथा प्रतिदिन के लिए	२९ . ५
प्रतिदिन माल डब्बे के ट्रेन मील	२०. ४९
छोटी लाइन	
माल गाड़ी (मील-हजारों में)	९,१०३,
पैसेंजर ट्रेन ,, ,,	७,७४२
ट्रेन मील प्रति रूट तथा प्रति दिन	१०, ९९
प्रतिदिन माल-डब्बे के ट्रेन मील	१०, ९३

यातायात का प्रबन्ध

रेल्वे की तरफ से जो यातायात सम्बन्धी प्रबन्ध हुआ है, वह निम्न प्रकार है।

	१९५२-५३,	१९५३-५४,	१९५४-५५,	१९५५-५६,	१९५६-५७,
यात्रियों की संख्या (हजारों में)	२,५७,८७८,	२,५९,३२७,	२,८७,००९,	३,०५,०८३,	३,१७,८५३,
पैसेन्ज़र मील	६,०३३,२६५,	६,०४७,२०४,	६,४०३,५९८,	६,६९९,७०९,	७,२८८,०००,
माल की रवानगी (टनों में)	१३,२३३,	१४,२१२,	१५,३०१,	१७,६४१,	१९,२३८,
ट्रेन मील	३,४२९,८५३,	३,६४४,३०७,	३,८९८,५४२,	४,६५८,०८८,	५,१५५,०८८,

१९५६ की दुनिया

संयुक्त राष्ट्रसंघ की ओर से १९५७ की आंकड़ा संबंधी 'इयरबुक' प्रकाशित की गई है। उसमें बताया गया है कि १९५६ में विश्व की औद्योगिक गतिविधियों और अंतर-राष्ट्रीय व्यापार के युद्धोत्तरकाल के पिछले सभी रेकार्ड टूट गये हैं।

इस पुस्तक में बताया गया है १९५६ में विश्वभर की खानों और कारखानों ने १९३८ की अपेक्षा २॥ गुना उत्पादन किया। उसी वर्ष (१९५६) में जहाजों ने १९३८ की अपेक्षा दूना माल ढोया, विमानों ने ८

गुनी दूरी तक की उड़ानें और निर्यात ८० प्रति-

शत अधिक रहा ।

उसमें बताया गया है कि १९४० से १९५६ के बीच विश्व की आबादी में २० प्रतिशत वृद्धि हुई है ।

१९५६ के मध्य में दुनिया की कुल आबादी २ अरब ७३ करोड़ ७० लाख होने का अनुमान था जबकि १९५० में दुनिया की आबादी २ अरब ४९ करोड़ ५० लाख, १९४० में २ अरब २४ करोड़ ६० लाख और १९२० में १ अरब ८१ करोड़ थी ।

एशिया की आबादी (रूस को छोड़कर) इस समय दुनिया में सबसे अधिक दुनिया की कुल आबादी के आधे से भी अधिक है ।

यूरोप (रूस को छोड़कर) दुनिया में सबसे घनी आबादी वाला देश है । १९५० से ५६ के बीच दुनिया की आबादी प्रतिवर्ष १.६ प्रतिशत की गति से बढ़ी है । कुछ देशों, खास तौर से पूर्वी जर्मनी और आयरलैंड में, आबादी घटी है ।

विश्व उत्पादन (रूस, पूर्वी यूरोप और चीन को छोड़कर) सम्बन्धी आंकड़ों में बताया गया है कि १९५६ में उत्पादन उसके पिछले वर्ष की अपेक्षा ४॥ प्रतिशत, १९५० की अपेक्षा ४० प्रतिशत और १९३८ की अपेक्षा १२७ प्रतिशत अधिक था ।

रूस और पूर्वी यूरोप के देशों के लिए वहां की सरकारों द्वारा प्रकाशित आंकड़ों में बताया गया है कि रूस, पोलैंड, बल्गेरिया, चेकोस्लोवाकिया, रूमानिया और हंगरी में उत्पादन निरन्तर बढ़ रहा है ।

——

उत्तरप्रदेश में खनिज

ज्ञात हुआ है कि उत्तर प्रदेश में हाल में हुए भूगर्भ सर्वेक्षण से कोयला, जिप्सम, चूने का पत्थर, खड़िया मिटी, ऐसबेस्टस, सीसा, मेग्नेसाइट, गन्धक और कुछ अन्य खनिज पदार्थों के सम्बन्ध में ऐसे संकेत मिले हैं, जिनका समुचित लाभ उठाने से करोड़ों रुपये का लाभ हो सकता है और सदा से अभावग्रस्त पहाड़ी तथा पूर्वी जिलों का तो भाग्योदय हो जायगा ।

लोहा-तांबा

मात्रा तो अधिक नहीं होगी, पर बहुत अच्छी कि[illegible] का कुछ लोहा भी मिला है जिसके बने औजार—[illegible] कैंची इत्यादि जर्मन माल से मुकाबला कर सकेंगे। लोहा पर्वतीय अंचल में चट्टानों के साथ मिला है। मि[illegible]पुर से मिली हुई बिजवार पहाड़ी पर जो लोहा पाया [illegible] है उसकी भी किस्म 'उत्तम' बतायी जाती है ।

इसी प्रकार अच्छी किस्म का तांबा अलमोड़ा जि[illegible] कुछ भागों में मिला है । खान की खोदाई का काम स[illegible]वतः शीघ्र हाथ में लिया जायगा ।

मिरजापुर में कोयला खान

राज्य के दक्षिण पूर्वी भाग मिरजापुर जिले में [illegible] समय पूर्व जब कोयले की खान का पता चला था [illegible] अन्दाज था कि इसकी मात्रा करीब २० लाख टन होगी [illegible] बाद में कुछ और परीक्षण से प्रकट हो रहा है कि [illegible] मात्रा इससे अधिक हो सकती है। यह खान सिंगरौ[illegible] कोयला क्षेत्र से मिली हुई है और ऐसा समझा जाता है [illegible] मिरजापुर जिले से विन्ध्य प्रदेश के अन्दर तक गयी [illegible] परन्तु झरिया, आसनसोल इत्यादि कोयला क्षेत्रों के मु[illegible]बले मिरजापुर का क्षेत्र बहुत मामूली समझा जाता [illegible] फलस्वरूप उत्तर की समृद्धि की दृष्टि से इसका जो [illegible] महत्त्व हो, देशव्यापी दृष्टि से इस हलके का हक पीछे [illegible] जाता है।

चूने का पत्थर

चूने का पत्थर इतनी अधिक मात्रा में मिला है [illegible] मीरजापुर की सरकारी चुर्क सीमेंट फैक्ट्री के अलावा छोटी-छोटी सीमेंट फैक्ट्रियां और खोली जा सकती हैं।

मीरजापुर में रोहतास का पत्थर चुर्क फैक्ट्री में [illegible] आता है । इसका एक नाला मकरीबरी और रुदौली [illegible] जिसकी मोटाई २५ से १०० फुट तक है। दूसरा प[illegible] पहाड़ पर बताया जाता है, जो उत्तम कोटिका है और जि[illegible] मोटाई १५० फुट तक होगी । कघौरा और महौना के [illegible] १७ मील चूने से पत्थर का क्षेत्र है, जिसकी मोटाई [illegible] फुट होगी । महोबा और बसहारी में बीच के [illegible] मील के इलाके में १२५ फुट मोटाई का सीमेंट बनाने यो[illegible]

पत्थर मिला है। फजराइट पहाड़ के निकट कोटा में अब तक की जानकारी के अनुमार इतना पत्थर बताया जाता है कि २५० टन नित्य पैदा करने वाली फैक्टरी १०० साल तक बेखटके चल सकती है।

मैगनेसाइट, ग्रेफाइट, सल्फर, खड़िया मिट्टी, रेह, जिप्सम, एसबेस्टस, सैंड-स्टोन, सीसा आदि देहरादून, अलमोड़ा, मीरजापुर, बांदा, गाजीपुर, गढ़वाल, नैनीताल आदि स्थानों में मिलने का संकेत मिला है।

—

चीनी की मात्रा बढ़ाने का नया तरीका

कानपुर की राष्ट्रीय चीनी गवेषणाशाला ने कुछ समय पूर्व गन्ने का रस साफ करने का नया तरीका निकाला है। इससे अधिक और अच्छी चीनी बनेगी। राष्ट्रीय गवेषणा विकास निगम के अन्तर्गत, एक साल से अधिक इस विषय में खोज होती रही, जिससे पता चला कि नये तरीके से पुराने तरीके के मुकाबिले ५ से १० प्रतिशत तक अधिक चीनी तैयार हो सकती है।

प्रचलित तरीके से गन्ने के रस से जो चीनी बनती है, वह गन्ने के तोल का दसवां भाग होती है। इस तरीके से कुछ चीनी खांड बन जाती है। इसलिए ऐसा तरीका निकालने का प्रयत्न किया गया, जिससे खांड न बनकर अधिक से अधिक चीनी ही तैयार हो सके।

कुछ ऐसे कृत्रिम गोंद (रेजिन) बनाये गये हैं, जो गन्ने का रस साफ करने और उसमें से शर्करा तत्त्व को अलग करने में बहुत उपयोगी हैं। इस गोंद को तैयार करने के लिए प्रायोगिक कारखाने का डिजाइन तैयार किया जा चुका है। यह कारखाना परीक्षा के तौर पर गवेषणाशाला में खोला जायगा। इसके बाद देश में चीनी के कारखानों के लिए यथेष्ठ मात्रा में उक्त गोंद को तैयार करने का काम उठाया जाएगा।

देश में २० लाख टन चीनी और ७ लाख टन खांड बनती है। यदि यह नया तरीका सफल हुआ तो उतने ही गन्ने से १ लाख ४० हजार टन और चीनी तैयार होने लगेगी।

—

राष्ट्रीय आमदनी में वृद्धि

भारत की राष्ट्रीय आमदनी वर्तमान भावों के अनुसार १९५६-५७ में ११,४१० करोड़ रु० तथा १९५५-५६ में ९,९९० करोड़ रु० थी। ये दोनों संख्याएं १९५४-५५ की तुलना में १,८०० तथा ३८० करोड़ रु० अधिक हैं।

वर्तमान भावों के अनुसार प्रति व्यक्ति आमदनी क्रमशः १९५५-५६ में २६०.८ तथा १९५६-५७ में २९४.३ रु० रही, जबकि १९५४-५५ में २५४.२ रु० ही आमदनी रही। इस आय वृद्धि का एक मुख्य कारण पदार्थों के मूल्यों में वृद्धि है।

१९५५-५६ के आंकड़े, उस विवरण पूर्ण पद्धति पर आधारित हैं जो कि इससे पहले वर्षों के लिए स्वीकृत थी। ये आंकड़े बताते हैं कि गत वर्ष प्रकाशित आंकड़ों से किस प्रकार इसमें क्रमशः वृद्धि हुई है। १९५६-५७ के के आंकड़े प्राप्त अपूर्ण सामग्री पर आधारित हैं और इनमें परिवर्तन सम्भव हैं।

इन आंकड़ों से ज्ञात होता है कि प्रथम योजना के १९५१.५२ तथा १९५५-५६ की अवधि में १८.४ प्रतिशत राष्ट्रीय आय बढ़ गई है। द्वितीय योजना के प्रथम वर्ष १९५६-५७ में ५.१ प्रतिशत आमदनी बढी है।

प्रति व्यक्ति आमदनी में जो वृद्धि हुई है, वह क्रमशः ११.१ तथा ३.८ प्रतिशत है।

१९५५-५६ का वर्ष कृषि उत्पादन में कुछ मन्द रहा। १९५६-५७ में जो राष्ट्रीय आय में वृद्धि हुई, उसमें कृषि तथा अन्य क्षेत्रों से उत्पादन समान रूप से बढ़ा है। १९४८.४९ के भावों के आधार पर जो सुधार हुआ वह कृषि क्षेत्र में २४० करोड़ रु० तथा अन्य क्षेत्रों में २९० करोड़ रु० थी। इन आंकड़ों से स्पष्ट है कि हमारा जीवन-स्तर बढ़ रहा है और हम आगे बढ़ रहे हैं। यद्यपि यह इतनी धीमी प्रगति दीखती है कि हम इसे विशेष रूप से अनुभव नहीं कर पाते।

—

उत्पादकता में वृद्धि

भारत सरकार ने कुछ समय से यह अनुभव किया है कि देश के विविध उद्योगों में जितना उत्पादन होना चाहिये,

उतना नहीं हो रहा है। इसलिए अनेक विदेशों की भांति भारत में भी उत्पादकता परिषद् का संगठन किया जाय। इसमें सरकार, मजदूर तथा मिल मालिक सबका सहयोग प्राप्त किया जायगा। श्री मनुभाई शाह की अध्यक्षता में अब इस परिषद् का संगठन हो गया है। यह परिषद् प्रबन्धकर्त्ताओं को बताएगी कि प्रबन्ध, मशीनरी तथा उत्पादन पद्धति में क्या परिवर्तन किये जायें ताकि प्रति व्यक्ति उत्पादन बढ़े। इस तरह से मजदूरों को तरह तरह के सुझाव दिये जायंगे ताकि व्यक्तिगतरूपसे भी उत्पादन बढ़ा सकें। टैक्नीकल परामर्श भी इस परिषद के द्वारा मिलेगे। विदेशों में शिक्षण के लिए कारीगरों को भेजा जायगा और विदेशी विशेषज्ञ भारत में कारीगरों को शिक्षा देने के लिए आवेंगे। हमें आशा है कि यह परिषद विदेशों की भांति यहां भी सफल होगी। जब तक उत्पादन के विविध अंग मिलकर उत्पादन वृद्धि का प्रयत्न नहीं करेंगे, तब तक देश की उत्पादन की समस्या हल नहीं होगी। १९५८-५९ में १५ स्थानीय उत्पादन परिषदें स्थापित हो जावें, यह प्रयत्न किया गया है।

—

दूध की खपत

आपकी गाय या भैंस कितना दूध देती है और आप या आपके बच्चे प्रतिदिन कितना दूध पीते हैं, यह तो आप ही जानते हैं, किन्तु देश में साल भर में हर गाय औसतन ३६१ पौंड, हर भैंस ९७० पौंड दूध देती है। १९५६-५७ में घी तथा दूध की बनी वस्तुओं की बिक्री के प्रतिवेदन में संशोधन करने के लिए पड़ताल की गयी थी। १९५६ में मवेशियोंकी जो गणना हुई थी, उसी के आधार पर देश में दूध के उत्पादन का अनुमान लगाया गया था। देश में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन ४.७७ औंस दूध (दूध की बनी वस्तुएं भी) की खपत होती है। ये आंकड़े भी १९५५ की जनगणना पर आधारित हैं।

—

दुर्गापुर के पास कोयला-धुलाई मशीनें

सम्पदा के पाठक जानते हैं कि रूस जिस तरह भिलाई लौह के संयंत्र निर्माण में प्रयत्नशील है, इसी तरह दुर्गापुर में ब्रिटेन का सहयोग भारत सरकार ले रही है।

दुर्गापुर के समीप स्थित राजकीय, अथवा, स्टेट "राज्यीय", खानों के लिये कोयला-धुलाई मशीनें ब्रिटेन एक विख्यात फर्म द्वारा प्रदान की जा रही हैं। ब्रिटेन अपनी सबसे बड़ी कोयला-धुलाई मशीनें बनाने-वाली फर्म यही है। कोयले का अच्छे से अच्छा उप करने के लिये इन मशीनों की आवश्यकता उत्पन्न हैं; और ब्रिटेन के, तथा समुद्र पार के, कोयला इसी फर्म की मशीनें लगी हुई हैं।

—

गांवों की आबादी

आंकड़ों से पता चलता है कि भारत की ग्रामीण आ का प्रतिवर्ष ह्रास हो रहा है। १९२१ में यह आबादी ८८.६३ प्रतिशत थी, १९३१ में वह ८७.८७ रह १९४१ में ८६.०९, १९५१ में यह ८२.६६ प्रतिशत गयी है और १९५६ में इसका अनुमान ८१.०१ प्रति बताया जाता है।

—

अरब देशों का तेल

चित्रगुप्त

खोज से यह पता चला है कि पूरी दुनियां के पृथ्वी गर्भ में जितना तेल भण्डार छिपा पड़ा है, उसका आधा अकेले अरब प्रदेशों में है। यह तैल भण्डार लगभग ६ अरब ८० करोड़ टन के बराबर है, जिसमें से बेहरीन में ४ करो टन, मिश्रमें ८ करोड़ टन, इराक में १ अरब ६५ करोड़ टन, कुवैत में २॥ अरब टन, कातार में ३० करोड़ टन और सऊदी अरब में २। अरब टन तेल है।

दुनियां के बड़े देश, जो बीसवीं सदी के वरदान इस तैलभण्डार पर इस समय अधिकार जमाये बैठे हैं, इस बात की पूरी कोशिश कर रहे हैं कि जैसे हो इस तेल को जल्दी से जल्दी बाहर निकाल लिया जाय। उनके इस प्रयत्न में कितनी तेजी आती जा रही है, इसका पता नीचे के आंकड़ों से मिलेगा।

१९३८ में अरब देशों और ईरान को मिलाकर कुल १॥ करोड़ टन तेल निकला था जो उस समय पूरे विश्वके उत्पादन का केवल ५.५ प्रतिशत था। १९४६ में यह उत्पादन बढ़कर ३ करोड़ ५५ लाख टन (पूर विश्व के उत्पादन का ९.४ प्रतिशत) हो गया। १९५२ में केवल अरब देशों का (ईरान में झगड़े के कारण उस समय उत्पादन बन्द था) उत्पादन १० करोड़ ४५ लाख टन (विश्व उत्पादन का १७ प्रतिशत) था जिसमें सऊदी अरब का उत्पादन ४ करोड़ १० लाख टन, कुवैतका ३ करोड़ ७० लाख टन, ईराकका १ करोड़ ८९ लाख टन, कातार का ३२ लाख टन, मिस्र का २४ लाख टन और बेहरीन का १५ लाख टन था। इसके बाद ३ वर्ष में ही १९५५ में अरब देशों का तैल उत्पादन बढ़कर १४ करोड़ ७० लाख टन हो गया, जिसमें कुवैत में ५॥ करोड़ टन, सउदी अरब में ४ करोड़ ८० लाख टन, ईराक में ३ करोड़ ४० लाख टन तथा अन्य छोटे-मोटे स्थानों पर १ करोड़ टन था। उस वर्ष ईरान में १ करोड़ ६० लाख टन तेल निकला था।

१९५५ में विश्व उत्पादन

१९५५ में पूरे विश्व में खनिज तेल का कुल उत्पादन ७८ करोड़ ६० लाख टन था, जिसमें से अमेरिका में ३५ करोड़ ७० लाख टन, पश्चिमी एशिया में (ईरान सहित) १६ करोड़ ३० लाख टन, वेनेजुएला में ११ करोड़ १० लाख टन, रूस में ७ करोड़ टन, लैटिन अमेरिका के देशों में (वेनेजुएला को छोड़कर) ३ करोड़ टन, कनाडा में १ करोड़ ७० लाख टन, हिन्देशिया में १ करोड़ १० लाख टन, पश्चिमी तथा पूर्वी यूरोप में क्रमश एक-एक करोड़ टन तथा सुदूर पूर्व में (हिंदेशिया को छोड़कर) कुल ७० लाख टन तेल का उत्पादन हुआ था।

अरब के तेल का महत्व

इस प्रकार हम देखते हैं कि १७ वर्षों के अन्दर ही पश्चिमी एशिया के देशों का तेल उत्पादन १० गुनेसे भी अधिक बढ़ गया है और निरन्तर तेजी से उत्पादन की गति में वृद्धि होती जा रही है।

यदि पश्चिमी एशिया के देशों से किसी कारण तेल मिलना बन्द हो जाय तो क्या स्थिति हो जायगी इसका अनुभव दुनिया के देशों को पिछले स्वेज संकट के समय हो चुका है।

अरब देशों में तेल की दृष्टि से सबसे धनी देश १९५० वर्गमील क्षेत्रफल तथा लगभग २॥ लाख की आबादी का छोटा सा प्रदेश कुवैत है, जहां कुल लगभग २॥ अरब टन तेल होने का अनुमान है और आजकल प्रतिवर्ष लगभग ५॥ करोड़ टन तेल निकलता है। इस तेल से कुवैत के शेख को, जो दुनियां का सबसे अधिक धनी व्यक्ति समझा जाता है, प्रतिवर्ष जो लगभग १ अरब रुपये की आय होती है, उसका एक प्रमुख अंश अब कुवैत के विकास पर व्यय किया जने लगा है। ("आज" से)

—भारत में कुल ८१ करोड़ एकड़ जमीन है और प्रति आदमी (३६ करोड़ आबादी के अनुमान से) २। एकड़ जमीन आती है; जबकि अमेरिका और रूस में क्रमशः प्रति आदमी १२.६ और ३०.५ एकड़ जमीन आती है।

संसार की सबसे बड़ी नहर

राजस्थान नहर एशिया की सबसे बड़ी नहर बताई जा रही है, पर रूस में इससे भी बड़ी नहर बन रही है।

तुर्कमेनिस्तान जगतंत्र के उप-जलविद्युत्-मंत्री ग्रिनबेर्ग के कथनानुसार जलविद्युत् इंजीनियरिंग के इतिहास में पहली बार सिंचाई के लिए जलधारा तुर्कमेनिस्तान की बालुकामयी मरुभूमि में प्रवाहित की जाएगी। यह जलधारा ५७८ मील लम्बी नहर में प्रवाहित होगी जिसका निर्माण काराकुम मरुभूमि के आरपार हो रहा है। यह दुनिया की सबसे बड़ी नहर होगी।

इस नहर का पूर्वार्द्ध (२५० मीलों की लम्बाई में) इस वर्ष बनकर तैयार हो जाएगा। इस नहर से एक करोड़ पच्चीस लाख एकड़ भूमि की सिंचाई होगी।

३० लाख फुट में तैलकूप

इस वर्ष अजरबेजान में २९२५००० फुट से अधिक में जो विगत वर्ष की तुलना में ४८७,००० फुट अधिक है, तैल कूप खोदे जाएंगे। तेल-उद्योग के मंत्रालय ने यह घोषित किया है कि कास्पियन समुद्र तट से दूर कूरा घाटी में हाल के वर्षों में पता लगाये गये नये इलाकों में बरमा करने का अधिकांश काम पूरा कर लिया जाएगा।

वृहत् काकेशियन पर्वतश्रेणी के पूर्वी ढलानों पर नई सम्भावनाओं से पूर्ण तेल निधि को चालू करने का काम तेजी से हो रहा है। वर्ष के आरम्भ से अब तक ८१,२५० फ़ुट से अधिक में तेलकूप खोदे जा चुके हैं।

ब्रिटिश जूट उद्योग

जहां पाकिस्तान भारतीय जूट उद्योग की प्रतिस्पर्धा पर उतर आया है, वहां ब्रिटेन में भी इस उद्योग को विकसित करने का बहुत प्रयत्न किया जा रहा है।

ब्रिटिश जूट उद्योग के अभिनवीकरण तथा सुधारों पर १९५७ के दौरान में दस लाख पौण्डों की राशि खर्च की गयी है; और इस प्रकार युद्धोत्तरकालिक कुल संख्या १,०५,००,००० पौंड बनती है। जूट ट्रेड फेडरल कौंसिल के अध्यक्ष ने कौंसिल की वार्षिक सभा में यह भी बताया है कि प्रति-व्यक्ति-उत्पादन की उल्लेखनीय वृद्धि में नवीनतम मशीनों के उपयोग, तथा व्यवस्था-विषयक आधुनि[क] रीतियों के योग से बड़ी सहायता मिली है। श्रमिक [की] उत्पादन-क्षमता की वृद्धि, हाल के वर्षों में, सामूहिक [रूप से] पर टेक्सटाइल उद्योग की वृद्धि की दुगनी से अधिक पा[यी] गयी है।

मैनचेस्टर की वस्त्रोद्योग प्रदर्शिनी

मैनचेस्टर में इस वर्ष अक्तूबर १५ से २५ तक हो[ने] वाली अन्तर्राष्ट्रीय वस्त्र मशीनों तथा उसकी सहाय[क] वस्तुओं की प्रदर्शिनी किसी भी देश में अब तक हुई ऐसी प्रदर्शिनियों में सबसे बड़ी और सर्वांगीण होगी। यह प्र[द]र्शिनी पांच वर्ष पूर्व मैनचेस्टर में, अपने प्रकार की हु[ई] सबसे बड़ी प्रदर्शिनी से भी बढ़कर होगी।

सन् १९५३ में, १० देशों की २७५ कम्पनियों [ने] १,३०,००० वर्ग फुट स्थान घेरा था। इस वर्ष १४ देशों [की] कोई ३२५ कम्पनियां १,५०,००० वर्ग फुट प्रदर्शिनी स्था[न] को अपनी वस्तुओं को दिखाने के लिये ग्रहण करेंगी, औ[र] इनमें से तीन देश—आस्ट्रिया, पोलैंड, और स्पेन—यु[द्ध] के समय से पहली बार ऐसी प्रदर्शनियों में भाग ले र[हे] हैं।

प्रदर्शित वस्तुओं में होंगी मशीनें, उपकरण, औ[र] कताई में सहायक वस्तुयें, बुनाई के ताने बाने, ब्लीच से कप[ड़े] साफ करने, रंगने, और प्राकृतिक तथा कृत्रिम रेशों [को] पूर्ण करने के उपकरण।

(पृष्ठ १६० का शेष)

विचार है। किन्तु योजना के व्यय को, जो सावधानी, भ्रष्टाचार तथा आडम्बर प्रियता के कारण होते हैं, घटाने की ओर विशेष ध्यान दिया गया हो, ऐसा प्रतीत नहीं होता। संगीत नृत्य कला और संस्कृति के नाम पर किये जाने वाले व्यय के औचित्य के सम्बन्ध में किसी को सन्देह हो सकता है, परन्तु जब तक रोटी और मकान की समस्या हल नहीं होती, तब तक वाग्विलास या मनोरंजन के लिए क्या आज देश करोड़ों रुपया व्यय कर सकता है, इस सम्बन्ध में देश के सार्वजनिक नेताओं को सन्देह नहीं रहना चाहिए।

बैंक और बीमा

डाकखानों में चैक पद्धति

बम्बई के मुख्य डाकखाने में सेविंग बैंक खाते का रुपया चैक से निकालने की पद्धति आजमाइशी तौर पर शुरू की गई थी। यह पद्धति सफल रही है, इसलिए सरकार ने धीरे-धीरे इसे देश के छोटे-बड़े सभी डाकखानों में लागू करने का निश्चय किया है। १ अप्रैल १९५८ से यह कलकत्ता, मद्रास, दिल्ली, नई दिल्ली, अम्बाला, पटना, लखनऊ, नागपुर, जयपुर और अहमदाबाद के बड़े डाकखानों और कुछ चुने हुए छोटे डाकखानों में लागू की जाएगी। जिसके खाते में कम-से कम २५० रु० होंगे और जो साक्षर होगा, उसे ही चैक से रुपया निकालने का अधिकार होगा। चैक से रुपया निकालने पर कोई फीस आदि नहीं लगेगी। निजी कम्पनियां चैक से कर्मचारी भविष्य निधि खाते का रुपया निकाल सकती हैं। १ अप्रैल से ही चैक से रुपया जमा कराया जा रहा है।

चैक से रुपया निकाला अपने नाम से जा सकता है और जमा पोस्ट-मास्टर के नाम से कराना होगा।

विदेशी-मुद्रा

वित्त उपमंत्री, श्री बलिराम भगत की सूचना के अनुसार अनुमान है कि दूसरी पंचवर्षीय आयोजना के लिये अक्तूबर, १९५७ से . . १९६१ तक ७०० करोड़ रु० की विदेशी मुद्रा की कमी पड़ेगी। हाल में जो विदेशी सहायता मिली है, उससे यह कमी कुछ हद तक पूरी हो जायगी।

सरकार इस बात विचार कर रही है कि अप्रैल १९५८ से मार्च, १९६१ तक कितनी विदेशी मुद्रा की आवश्यकता होगी। अगले छः महीनों में विदेशी मुद्रा की कितनी कमी पड़ेगी, यह अभी नहीं बताया जा सकता।

भारत में ब्रिटेन की पूंजी

३१ दिसम्बर, १९५५ को भारत के व्यापार में ब्रिटेन की ३ अरब ९१ करोड़ ९१ लाख रु० की पूंजी लगी हुई थी, जबकि ३१ दिसम्बर १९५३ को ३ अरब ४७ करोड़ २८ लाख रु० और ३० जून, १९४८ को २ अरब ९ करोड़ ९२ लाख रु० की पूंजी लगी थी।

भारत में विदेशी पूंजी का सालाना हिसाब नहीं रखा जाता, बल्कि समय-समय पर आंकड़े जमा किये जाते हैं। इसलिए पिछले हरेक साल भारत में कितनी विदेशी पूंजी लगी थी, इसका हिसाब नहीं दिया जा सकता।

ब्रिटेन के बैंकों में ब्याज की दर

ब्रिटेन ने बैंकों की ब्याज-दर बढ दी है, इसका प्रभाव उस समझौते पर पड़ सकता है, जो भारत ने ब्रिटेन के साथ माल का मूल्य बाद में चुकाने के लिए किया है।

१९ सितम्बर, १९५७ तक ब्रिटेन से ८ करोड़ ८५ लाख २६ हजार रु० का ऐसा माल मंगाना स्वीकार किया गया, जिसका मूल्य बाद में चुकाया जाना था। इनमें से तीन ऐसे मामले थे, जिन पर ६ प्रतिशत ब्याज देना था। ऐसे माल का कुल मूल्य ४ करोड़ ३५ लाख ५९ हजार रु० था। परन्तु वहां से बाद में भुगतान के आधार पर कोई भी ऐसा माल नहीं मंगाया गया, जिस पर बैंक की दर के अनुसार ब्याज पड़े, इसलिए बिब्रटेन के बैंकों में ब्याज की दर बढ़ने से भारत और ब्रिटेन के बीच बाद में भुगतान के आधार पर जो व्यापार चल रहा है, उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

ब्रिटेन में २० सितम्बर, १९५७ से बैंक की दर बढ़कर ७ प्रतिशत हो गई। तब से अब तक १५ मामलों में ४ करोड़ ३४ लाख २१ हजार रु० का माल मंगाना स्वीकार किया गया। इनमें से कुल २ करोड़ २१ लाख रु० के ४ मामलों में ब्याज की दर निर्धारित कर दी गई थी, जो इस प्रकार है :—

आयातित माल का मूल्य	ब्याज की दर
१. ७४ लाख ६३ हजार रुपये	१. ७ प्रतिशत
२. १ करोड़ ३५ लाख रु०	२. बैंक की दर से २ प्रतिशत अधिक
३. ६ लाख ६७ हजार रु०	३. ८. प्रतिशत (बैंक की दर से १ प्रतिशत अधिक)
४. ३४ लाल ७० हजार रु०	४. ७ प्रतिशत

इससे स्पष्ट है कि उक्त मामलों में ब्याज की जो दर निर्धारित की गई है, वह २० सितम्बर १९५७ को बैंक की दर से अधिक है। अन्य मामलों में ब्याज की दर नहीं दी गई है, बल्कि केवल इस बात का उल्लेख किया गया है कि कितनी किश्तों में माल का मूल्य चुकाया जाए। इसलिए यह कहना बहुत कठिन है कि ब्रिटेन के बैंकों में ब्याज की दर बढ़ने से उक्त मामलों पर क्या प्रभाव पड़ेगा।

२० मार्च १९५८ से बैंक आफ इङ्गलैण्ड ने ब्याज की दर घटाकर ६ प्रतिशत कर दी है।

आयात-निर्यात बैंक से एशिया को १ अरब डालर का ऋण

अमेरिकी आयात-निर्यात बैंक के अध्यक्ष सैम्युअल सी० वौ का कथन है कि अधिकृत ऋणों के रूप में बैंक की १ अरब डालर की राशि एशिया के देशों में लगी हुई है।

आपने प्रतिनिधि सभा की बैंकिंग और मुद्रा समिति ने मांग की है कि बैंक का ऋण देने अधिकार २ अरब डालर तक बढ़ा दिया जाए। यह राशि वर्तमान नीतियों और क्रियाकलापों को ध्यान में रखते हुए उनको चालू रखने की दृष्टि से आवश्यक है। प्रस्तावित वृद्धि के बाद बैंक को ७ अरब डालर तक ऋण देने का अधिकार प्राप्त हो जाएगा।

१९५७ में
जीवन बीमा निगम की प्रगति

१९५७ जीवन बीमा निगम के लिए महत्त्वपूर्ण वर्ष सिद्ध हुआ है। अभी अन्तिम आंकड़े उपलब्ध न होने पर भी अब तक प्राप्त अंकों से ज्ञात होता है कि १९५७ में जीवन बीमा निगम का २५६ करोड़ रु० का कारोबार पूरा हुआ है।

गत वर्ष के मध्य जीवन बीमा निगम के अध्यक्ष ने संकेत किया था कि १९५७ में निगम का पूरा कारोबार २५० करोड़ रु० तक पहुँच जायगा, जबकि १९५४ में २३६ करोड़ तथा १९५५ में १३८ करोड़ रु० तक ही हुआ था। यह भी जानने योग्य है कि १९५६ में राष्ट्रीयकरण के प्रथम वर्ष में, कारोबार केवल १८८ करोड़ का था।

जीवन बीमा निगम के केन्द्रीय कार्यालय से प्रकाशित विवरण के अनुसार अब तक संग्रहीत आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि निगम अपने लक्ष्य से आगे पहुँच गया है तथा १९५७ का कारोबार २५९ करोड़ रु० रहा है। ... करोड़ रु० का कारोबार और भी हुआ है, लेकिन उसकी लिखा पढ़ी की कार्रवाई पूरी होने में अभी कुछ दिन लगेंगे। बीमे के प्रस्ताव ३२० करोड़ रु० से भी ऊपर हुए हैं।

१९५७ का अन्तिम पूर्ण विवरण निगम की ... शाखाओं से प्राप्त विशेष विवरणों के बाद ज्ञात होगा। २५६ करोड़ रु० सिर्फ भारत में हुए कारोबार को सूचित करते हैं। विदेशी कारोबार का विवरण अलग प्रकाशित किया जायगा।

एक और ज्ञातव्य बात यह है कि कुछ समय ... प्रकाशित विवरण के अनुसार ३० जून १९५७ तक कुल ब्योरा ७५ करोड़ रु० था, और अगले तीन महीनों में ७३ करोड़ रु० का अतिरिक्त कारोबार हुआ। अक्तूबर, नवम्बर तथा दिसम्बर में आय अधिक हुई और इस अवधि में ११७ करोड़ से भी अधिक कारोबार हुआ। कारोबार के साप्ताहिक विवरणों से भी यह पता लगता है कि अक्तूबर तथा नवम्बर की अवधि में औसत कारोबार २१ करोड़ से भी अधिक था। दिसम्बर के चारों हफ्तों में लगातार कारोबार बढ़ता गया, जिसका विवरण निम्न प्रकार है।

	चालू कारोबार
९ दिसम्बर तक समाप्त सप्ताह में	७ करोड़
१६ ,, ,, द्वितीय ,, ,,	९ ,,
२३ ,, ,, तृतीय ,, ,,	११ ,,
३१ ,, ,, चतुर्थ ,, ,,	३८ ,,
कुल	६५ करोड़

निगम के निवेदन के अनुसार ये आंकड़े सिर्फ साधारण जीवन पालिसी से सम्बन्ध रखते हैं। जनता पालिसी का कारोबार का विवरण इन आंकड़ों में शामिल नहीं है।

कैसेल्स आनन्द लकी आज़ाद
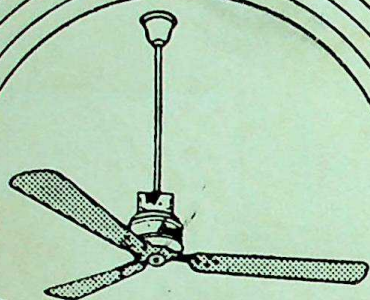
सीलिंग, टेबुल, केबिन व रेलवे के पंखे

एअर सर्कुलेटर, पेडेस्टल व सिनेमा टाइप पंखे

भारत में बिक्री के लिए
सोल एजेण्ट
मे. रेडियो लैम्प वर्क्स लि०
हेड आफिस :
पो० बा० नं० १२७, बम्बई
नई दिल्ली शाखा
१३/१४ अजमेरी गेट
एक्सटेंशन, फोन नं० २५५६८

सम्पादक— कृष्णचन्द्र विद्यालंकार द्वारा अशोक प्रकाशन मन्दिर के लिए अर्जुन प्रेस, दिल्ली से मुद्रित व प्रकाशित।

सम्पदा

मई, १९५८

अशोक प्रकाशन मन्दिर रोशनारा रोड दिल्ली

ASPILIC 25
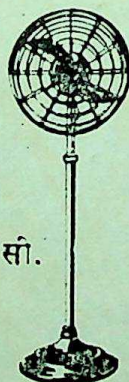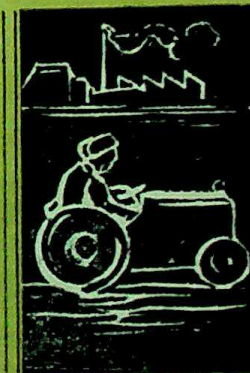
प्रथम विजय

अपने बच्चे की प्रथम विजय पर पिता का हृदय आनन्द तथा गर्व से खिल उठता है—क्यों कि उसने अपने होनहार बच्चे को हमेशा उत्साहित करके, उसकी सफलता में अपना योग दिया है।

क्या आप उसकी प्रगति और उन्नति के लिये उसे हमेशा सहारा दे सकेंगे? आप अपनी ये ज़िम्मेदारियाँ लाइफ़ इन्श्योरन्स को सौंप दें। लाइफ इन्श्योरन्स की कई ऐसी पॉलिसियाँ भी हैं, जो कि आप की आवश्यकता के अनुकूल हैं।

एक प्रकार से होल लाइफ़ (संपूर्ण जीवन) पॉलिसी ही लीजिये। यह पॉलिसी, जीवन बीमा का सब से आसान और कमखर्चीला रुप है। उदाहरण के तौर पर, यदि आप की आयु आज २८ वर्ष की है तो १६ रु. माहवार प्रीमियम के हिसाब से आप का बीमा १०,००० रु. का हो सकता है। बीमा की पूरी रक़म मृत्यु के बाद ही परिवार को दी जाती है।

आप ५ रु. या ५० रु. माहवार, जो भी खर्च कर सकें, उसे होल लाइफ़ (संपूर्ण जीवन) पॉलिसी में ही खर्च कीजिये। यह कम से कम खर्च में आप के प्रिय-जनों की सुरक्षा है।

लाइफ़ इन्श्योरन्स कॉर्पोरेशन ऑफ़ इन्डिया

सेन्ट्रल ऑफिस: "जीवन केन्द्र", जमशेदजी टाटा रोड, बम्बई—१

विषय-सूची

सम्पादक—कृष्णचन्द्र विद्यालंकार

सम्पादकीय परामर्श मण्डल

१. श्री जी० एस० पथिक

२. श्री महेन्द्रस्वरूप भटनागर

बम्बई में हमारे प्रतिनिधि

श्री टी० एन० वर्मा, नेशनल हाउस,
२री मंजिल, टुलक रोड, बम्बई—१

वर्ष : ७] मई, १९५८ [अङ्क : ५

योजना क्या है ?

योजना क्या चीज है ? एक छोटी सी किताब, जिसमें बहुत सी बातें लिखी हैं । इससे मालूम होता है
कि देश में कितने-कितने तरह के काम हैं, जो हमें करने हैं । परन्तु इस योजना के पीछे क्या है ? आपको
नजर आवेंगे ३७-३८ करोड़ गरीब पुरुष व बच्चे और योजना का उद्देश्य है आगे बढ़ना ।

आप किधर जा रहे हैं ? क्या-क्या बोझ उठाने होंगे । तो एक तस्वीर सामने आएगी—वह तस्वीर है
करोड़ों लोगों की यात्रा की—मुश्किल सफर है । इस सफ़र में एक दो, तीन, चार नहीं; केवल इन्हीं के
पहुँचने का सवाल नहीं है । करोड़ों को साथ जाना है । हम सब हम-सफर हैं । यात्रा करनी है । उसमें सभी
प्रकार के लोग हैं—लंगड़े, लूले, कमजोर, मजबूत—सबको साथ ले जाना है । इसी दृष्टि से हम देखें ।”

हमें देश की दरिद्रता को दूर करना है । हमें अपने देश को उठाना है । काम से उठेगा । देश गरीब है ।
धन-दौलत, -सोना-चांदी—रुपया पैसा नहीं होता, साहूकारा नहीं होता । आज धन-दौलत है—मेहनत ।
किसान जमीन से पैदा करता है; वह धन है । घर के धंधे (घरेलू उद्योग) से माल बनाओ, वह धन है,
कारीगरी से कमाओ ।

“योजना का पहला अर्थ है—जमीन से पैदा हो । गल्ला, चावल, गन्दम की पैदावार बढ़े । नये
कारखाने खुलें । सवाल है—कैसे करें और वह धन जो पैदा हो, वह कहां जाए ? हमने भारत में कुछ
किया है । जमींदारों को हटाया है और दूसरे उपाय भी निकाले जा रहे हैं; और जो धन पैदा हो वह कुछ
जेबों में न जाए, वह फैले । जो पैदा हो, जनता में उसका ठीक बटवारा हो । यही योजना का सारांश है ।

उत्तर प्रदेश में, बिहार में विशेषकर, जो प्रति एकड़ पैदावार है, उससे तिगुनी मद्रास में होती है ।
बिहार में इतने मजबूत तगड़े व्यक्ति हैं—इस ढंग से कार्य करते हैं कि बस-बस कहना पड़ता है । आस्मान की
ओर देखते हैं । सोचते हैं किस्मत में ऐसा ही लिखा होता है । पर हमें क़िस्मत को काबू में लाकर, गर्दन
मोड़कर अपनी तरफ लाना है । यह समझिए कि पंचवर्षीय योजना में परिश्रम जितना हम करेंगे, उतना फल
पाएंगे । देश में गरीबी है बेरोजगारी है । पर नई जड़ डाली जा रही है देहातों में शहरों में—बड़े-बड़े
लोहे व बिजली की ताकत आ रही है । लोहे व बिजली दोनों की ताकत से, दोनों के मेल पर देश की
प्रगति निर्भर है ।

जवाहरलाल नेहरू

सहकारिता आन्दोलन की नई दिशा

किसी भी देश के लिए गर्व और सन्तोष की बात यह है कि वह अपने अनुभवों से लाभ उठावे और अपनी भूलों को स्वीकार कर अपनी नीति में यथोचित परिवर्तन करे। इस दृष्टि से हम भारत सरकार की नीति का स्वागत करते हैं। देश के स्वाधीन होने पर भारतीयों के हाथ में शासन आते ही यह संभव नहीं था कि वह अपनी नीति निर्धारण करते समय अपने प्राचीन अनुभवों से लाभ उठाये। अनुभवों के नाम पर उसके पास कुछ नहीं था। उसके पास था अपने राष्ट्र को उन्नत करने के लिए महत्त्वाकांक्षापूर्ण उत्साह, आदर्श या कुछ नारे। विदेशी शासन की कुछ दूषित परम्पराएं उसको विरासत में मिली थीं। विदेशों ने जो परीक्षण किये, उनका भी अध्ययन भारतीय नेताओं ने किया और इस सब मिली-जुली अपूर्ण सामग्री के आधार पर उन्होंने अपनी आर्थिक नीतियों का निर्माण किया। कुछ वर्षों के अनुभव के बाद उन्होंने अपने कार्यक्रम तथा नीति में परिवर्तन प्रारम्भ किया है। प्रारम्भ में उन्होंने जिन आलोचनाओं को अनसुना कर दिया था, उन्हें अब उनकी भी सचाई कहीं कहीं अनुभव हो रही है और वे स्पष्ट या अस्पष्ट रूप से अपनी भूलों को स्वीकार कर रहे हैं। उन्नति और जीवन का यह मूल मंत्र है कि पूर्वाग्रह को छोड़कर अनुभवों से लाभ उठाया जाय। इसका एक उदाहरण देश का सहकारी आन्दोलन है।

राष्ट्र की विकासशील योजनाओं को अधिक तीव्रता के साथ पूर्ण करने तथा समाजवादी समाज के लक्ष्य को प्राप्त करने की अभिलाषा और साम्यवादी आतंकपूर्ण शासन से बचने की सतर्कता ने देश में सहकारी आन्दोलन को बहुत तेजी के साथ चलाने के लिए प्रेरित किया। हमने यह समझ लिया कि पूंजीवाद और साम्यवाद के बीच का मार्ग सहकारिता पद्धति है। इसलिए पिछले कुछ वर्षों में सहकारिता आन्दोलन बढ़ाने और सहकारी समितियों की स्थापना में हम लग गये। इसके लिए सरकार ने अधिकारियों के नियंत्रण में सहकारी समितियों की देश में बाढ़ ला दी। किन्तु इस उत्साह में हम मूलभूत उद्देश्य को भूल गये। समाजवादी समाज की स्थापना के नारे ने राष्ट्रीयकरण या नियंत्रण के रूप में अधिकारियों को देश [के] आर्थिक प्रगति में अधिकाधिक सरकारी हस्तक्षेप के लि[ए] प्रेरित किया है। पिछले दिनों द्वितीय भारतीय सहकारि[ता] कांग्रेस में इस कमी को बहुत तीव्रता के साथ अनुभ[व] किया गया। राष्ट्र की प्रत्येक आर्थिक प्रवृत्ति के राष्ट्री[य]करण या सरकारी नियंत्रण ने जनता में आत्म विश्वा[स] और आत्म निर्भरता की भावना नष्ट कर दी है। [पं०] जवाहरलाल नेहरू ने अपने भाषण में इस कमी को स्वीका[र] करते हुए कहा है कि "सरकारी नियंत्रण की नीति स्वीका[र] करने के लिए मैं भी उतना ही उत्तरदायी हूँ, जितना अ[न्य] कोई व्यक्ति। किन्तु इस सम्बन्ध में जैसे-जैसे सोचता [हूं] वैसे-वैसे यह अनुभव करता हूं कि ग्रामीण ऋण जां[च] समितिका रुख बहुत ही ठोस न था, क्योंकि इसमें साधार[ण] जनता और उसकी योग्यता में अविश्वास करने की प्रवृ[त्ति] है। यह प्रवृत्ति बहुत ही खराब है और हमें इससे यथाशी[घ्र] छुटकारा पाने का यत्न करना चाहिये।

"वह नीति अच्छी नहीं जिससे बराबर कद[म] कदम पर जनता को सरकारी सहायता से ही आगे ब[ढ़ने] का प्रोत्साहन मिले, क्योंकि भारत में सबसे ब[ड़ी] चीज हम यही चाहते हैं कि जनता में आत्मनिर्भर[ता] तथा आत्म विश्वास की भावना घर करे। सहाय[ता] करना सरकार का कर्तव्य है परन्तु सहायता करना ए[क] बात है और कदम-कदम पर सहायता लेना दूस[री] बात है।"

भारत में सहकारिता आन्दोलन का विकास जनता क[ी] आकांक्षा या आवश्यक अनुभूति के आधार पर नहीं हुआ। जन सामान्य की अपेक्षा नेताओं और सरकारी अधिकारि[यों] ने सरकारी स्तर पर अपनी साधन सम्पन्नता के सहारे दे[श] भर में इसे फैलाने का प्रयत्न किया। इसका परिणाम य[ह] हुआ कि जनता में स्वावलम्बन और आत्म विश्वास क[ी] भावना का विकास नहीं हुआ। तरह तरह की सुविधा[एं] देकर सरकार ने इस आन्दोलन को आगे बढ़ाने का य[त्न] अवश्य किया, किन्तु वास्तविक सहकारिता-आन्दोलन ज[न] सामान्य में जड़ नहीं जमा सका। सरकारी सहायता औ[र]

नियंत्रण ने सारे आन्दोलन की दिशा ही बदल दी। उक्त सम्मेलन के अध्यक्ष श्री केशवदेव मालवीय ने ठीक ही कहा है कि सहकारिता आन्दोलन उस समय सहकारी आंदोलन नहीं रहेगा, जबकि उसे सरकारी अधिकारी ही चलाने लग जायेंगे। सहकारिता आन्दोलन की सबसे बड़ी विशेषता उसका प्रजातंत्रवादी और आत्मनिर्भरता का स्वरूप है। वह वस्तुतः जनता का आन्दोलन है।" भारी राशि में दी गयी सरकारी सहायता और इसके फलस्वरूप अधिकारियों के अत्यन्त हस्तक्षेप के कारण सहकारिता आन्दोलन कुछ पथ भ्रष्ट हो गया है। "सहकारिता का विकास ग्रामीणों की स्वेच्छा और स्वप्रयास से होना चाहिये, वह उन पर लादा नहीं जा सकता। सरकार मदद कर सकती है किन्तु मदद देना और बात है और "बौस" बन जाना अलग। सरकार द्वारा संचालित सहकारी समितियों में छोटा कर्मचारी भी बड़े से बड़ा "बौस" बन जाता है।" पं० नेहरू के इन शब्दों में सरकार की जिस भूल की ओर संकेत किया गया है, सहकारिता सम्मेलन ने अपने प्रस्तावों में इसी को दूर दूर करने की मांग की है। और लाभांश, मताधिकार अथवा घाटे या घिसाई के हिस्से से कोई सुविधा का बन्धन न रखने, प्रबन्धक मण्डल में तीन से अधिक सरकारी सदस्य न रखने, सहकारी बैंकों और अन्य सहकारी संस्थाओं को अपना गैर सरकारी अध्यक्ष चुन लेने आदि की मांगें इसी दिशा में की गयी हैं।

आज से ३ वर्ष पूर्व ग्रामीण ऋण जांच समिति ने यह अनुभव किया था कि ग्रामीण किसानों की अवस्था तब तक नहीं सुधर सकती जब तक कि सरकार उनकी सहायता के लिए न आये। कमेटी की जांच के अनुसार किसानों की ऋण सम्बन्धी केवल ३०.१ प्र० श० आवश्यकता ही सहकारी समितियां पूर्ण करती थीं। शेष ६९.९ प्र० श० आवश्यकता ज़मीदार और महाजन पूरी करते थे। इसलिए उक्त समिति ने यह सिफारिश की थी कि रिजर्व बैंक सहकारी बैंकों की स्थापना करें और इसके लिए अधिकतम सहायता करें। इम्पीरियल बैंक को स्टेट बैंक बनाते समय यह आवश्यकता विशेष रूप से ध्यान में रखी गयी थी। सरकारी सहायता के साथ साथ उक्त समिति ने सरकारी हस्तक्षेप की आवश्यकता पर जोर दिया था। इस सरकारी नीति का परिणाम यह हुआ कि सहकारी समितियों के लिए ऋण की राशि दूसरी पंचवर्षीय योजना में ४३ करोड़ रुपये से बढ़ाकर २२५ करोड़ रुपये की नियत कर दी गयी। यह सहायता २२०० समितियों को दी जानी थी, जिनमें १६० कपास ओटने और चीनी बनाने के कारखाने शामिल थे। ५५०० गोदाम तथा ३५० बड़े गोदाम (वेयर हाउस) स्थापित करने और समितियों के सदस्यों की संख्या ५० लाख से डेढ़ करोड़ तक बढ़ाने के लक्ष्य भी नियत किये गये थे। किन्तु इतनी तेजी के साथ चलते हुए हम यह भूल गये कि सहकारिता आन्दोलन का मूल उद्देश्य जनता में स्वावलम्बन और आत्म-विश्वास की भावना उत्पन्न करना है। आर्थिक प्रवृत्तियों पर सरकारी नियंत्रण और हस्तक्षेप की वृद्धि उसी मूल उद्देश्य को नष्ट कर देगी। श्री मालकम डार्लिंग ने इस सम्बन्ध में कुछ सूचनाएं दी थीं, जिनकी चर्चा हम अपने मार्च के अंक में कर चुके हैं। यह प्रसन्नता की बात है कि सरकार ने पिछले कुछ वर्षों के अनुभव से अपनी नीति में कुछ संशोधन करने की बात स्वीकार कर ली है। हमें आशा करनी चाहिये कि अन्य आर्थिक नीतियों के सम्बन्ध में भी सरकार अपने अनुभवों से पूर्ण लाभ उठायेगी और यथोचित परिवर्तन करने में संकोच नहीं करेगी।

नासिक प्रेस से

भारत के नये वित्तमंत्री श्री मुरारजी देसाई ने एक अत्यन्त महत्वपूर्ण घोषणा करके देश को चकित कर दिया है। पंचवर्षीय योजना में यह विचार प्रकट किया गया था कि १२०० करोड़ रु० के नोटों का सहारा लिया जायगा। किन्तु पिछले वित्तमंत्री ने यह घोषणा की थी कि हम ६०० करोड़ रु० से अधिक कागजी मुद्रा नासिक के प्रेस से नहीं लेंगे। किन्तु अब श्री देसाई ने घोषणा की है कि ६०० करोड़ रु० की सीमा हम नहीं स्वीकार करेंगे और १२०० करोड़ रु० तक की मुद्रा घाटे की अर्थ-व्यवस्था से प्राप्त करेंगे।

भारत सरकार ने योजना के प्रथम दो वर्षों में ७०२ करोड़ रु० की मुद्रा नासिक के प्रेस से प्राप्त की है। इसका परिणाम देश में निरन्तर महंगाई के रूप में हुआ है। १९५५-

५६ में जो मूल्य ६२.५ थे, वे मार्च १६५८ में १०८.४ हो गये। अर्थात् १७ प्रतिशत मूल्य बढ़ गया। नीचे की मूल्य तालिका से मूल्य वृद्धि किस तरह हुई, यह मालूम हो जायगा।

आधार १६५२-५३ = १००

	१६५५-५६	१६५६-५७	१६५७-५८
सामान्य अंक	६२.५	१०५.३	१०८.४
खाद्य पदार्थ	८६.६	१०२.३	१०६.४
शराब और तम्बाखू	८१.०	८४.३	६४.०
ईंधन, शक्ति, प्रकाश-और तेल	६५.२	१०४.६	११३.६
औद्योगिक कच्चा माल	६६.०	११६.०	११६.५
कारखानों में तैयार माल	६६.७	१०६.३	१०८.१

एक ओर भारत सरकार अधिकतम कर लगाकर मुद्रा प्रसार को रोकना चाहती है, दूसरी ओर स्वयं भारी संख्या में नोट निकाल कर महंगाई को बढ़ाना चाहती है। इन दोनों में कैसे संगति बैठेगी? हमारी नम्र सम्मति में योजना के कुछ लक्ष्यों को स्थगित कर देना अधिक अच्छा होगा, बजाय नासिक प्रेस के निर्मर्यादित प्रयोग के। स्वयं सरकार योजना के वर्तमान स्वरूप को कम करने पर विचार कर रही है। इसीके साथ योजना के व्यय पर भी विचार कर लेना चाहिए।

फिर से विदेशी जहाज कम्पनियां

यह आश्चर्य की बात है कि भारत सरकार ने अपनी योजना के आठवें वर्ष में फिर से "इण्डिया लिमिटेड" की उसी दूषित व्यवस्था को जिसका हमने ब्रिटिश शासन काल में भी सफलता के साथ विरोध किया था, लागू करने का निश्चय किया है। जहाजी उद्योग-सम्बन्धी विधेयक में 'इण्डियन लिमिटेड' की जो नई परिभाषा की गई है, उससे विदेशियों को भारतीय अर्थ व्यवस्था पर अधिकार ही नहीं प्राप्त होगा, बल्कि भारतीय नौका निर्माण की नीति में उनका प्रभाव भी जम जायगा।

वर्तमान जहाज उद्योग की नीति की घोषणा जुलाई १६४७ में हुई थी। उस नीति के अनुसार "भारतीय जहाज उद्योग का अर्थ है:—जहाज रानी के मालिक भारतीय होंगे तथा अधिकार और संचलन भी भारतीयों द्वारा हो[ंगे।] "भारतीय जहाज रानी कम्पनी" कहलाने के लिए जो [शर्तें] हैं, वे इस प्रकार हैं :

(१) कम्पनी के जहाजों की रजिस्ट्री भारतीय बन्[दर]गाहों पर होनी चाहिए।

(२) कम से कम ७५ प्रतिशत शेयर भारतीयों [के] अधिकार में रहने चाहिए।

(३) सभी डायरेक्टर भारतीय ही हों।

(४) मैनेजिंग एजेन्ट भी भारतीय ही हों।

गत दस वर्ष की अवधि में भारतीय जहाज उद्योग [ने] उपर्युक्त नीति से प्रशंसनीय उन्नति की है। आज कोई भी व्यक्ति जो भारतीय नहीं है, भारतीय जहाज के तौर [पर] जहाज को रजिस्ट्री नहीं करा सकता, परन्तु नये वि[धेयक] की भारतीय जहाज की नई परिभाषा के अनुसार, कोई [भी] विदेशी किसी भी जहाज की रजिस्ट्री भारतीय जहाज [के] नाम से करा सकता है।

नये कानून की १२ वीं धारा में भारतीय जहाज होने [के] लिए ३३ प्रतिशत भारतीय शेयर या इण्डियन कम्प[नीज़] एक्ट के मातहत भारत में रजिस्टर्ड कम्पनी का मालि[क] होना आवश्यक है। इसके अनुसार ४८ प्रतिशत विदे[शी] विदेशी शेयर वाला जहाज अथवा शत प्रतिशत विदे[शी] पूंजी से भारत में रजिस्टर्ड कम्पनी का जहाज भारती[य] जहाज कहलायगा, भले ही उसका प्रबन्ध व नियंत्रण विदे[]शियों के हाथ में हों। आजकल की परिपाटी के अनुसा[र] भारत सरकार भारतीय जहाजों को विदेशी जहाजों [की] अपेक्षा अधिक सुविधा देती है। किन्तु इस नयी प्रस्तावि[त] १२ वीं धारा के पास होने के बाद भारतीय जहाजों को विशे[ष] सुविधा मिलनी बन्द हो जायगी। भारतीय जहाज मालि[क] संघ की अध्यक्षा श्रीमती सुमति मुरारजी ने ठीक [ही] पूछा है कि क्या इस तरह हम भारतीय जहाज उद्योग [के] हितों का बलिदान करने तो नहीं जा रहे हैं, जबकि विदे[शी] जहाज भी भारतीय जहाज के नाम से पर्याप्त सुविधा[एं] उठाएंगे। क्या जहाजों के तेजी से निर्माण के लिए वि[श्व] बैंक से ३८ करोड़ रु० ऋण लेकर हम भारतीय उद्योग [को] खतरे में जाने से बचा नहीं सकते?

एक बार विदेशी जहाजी कम्पनियों के बन जाने के बा[द]

यह बहुत स्वाभाविक है कि वे देश की जहाजी नीति पर प्रभाव डालेंगे और स्वभावतः उनका हित भारत की अपेक्षा अपने २ देशों के साथ होगा। इसलिए भारत सरकार को प्रस्तावित बिल में उचित परिवर्तन कर लेना चाहिए।

भारतीय जहाज निर्माण अभी तक ६ लाख टन के लक्ष्य तक भी नहीं पहुँचा है। भारतीय समुन्द्री व्यापार में से छः प्रतिशत से अधिक व्यापार इससे नहीं हो रहा है। इस उद्योग में अभी काफी उन्नति की आवश्यकता है। उधर सरकार ने विदेशी कम्पनियों के लिए अपने दरवाजे खोल दिये हैं। अधिक समृद्धिशाली अमेरिका तथा नार्वे जैसे देशों ने भी शत प्रतिशत अधिकार तथा संचालन विदेशियों पर नहीं छोड़ा है। भारत ही एक ऐसा देश है, जो विदेशियों के साथ भारतीय जैसा बर्ताव करने जा रहा है।

चाय का संकट

भारतवर्ष की राष्ट्रीय आय का एक बहुत बड़ा स्रोत चाय है। विदेशी मुद्रा के उपार्जन में इसका प्रमुख स्थान है। किन्तु अन्य कठिनाइयों के साथ-साथ चाय के निर्यात व्यापार में भी कमी शुरू हो गई है १९५६ में ५३२६ लाख पौंड चाय का निर्यात हुआ था। किन्तु १९५७ में यह घटकर ४४७० लाख रह गया। इंगलैंड हमारी चाय का सबसे बड़ा ग्राहक है। १९५६ में उसने उत्तरी भारत की चाय ३०८२ लाख पौंड मंगवाई थी। इस वर्ष केवल २४७२ लाख पौंड मंगवाई है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, कनाडा और मिश्र ने भी चाय बहुत कम मंगवाई है। इन सब के परिणामस्वरूप १९५६ में १४३ करोड़ रु० की विदेशी मुद्रा की बजाय १९५७ में १०७ करोड़ रु० की विदेशी मुद्रा प्राप्त हुई है। यदि चाय का निर्यात इसी तरह कम होता गया तो हमारी विदेशी मुद्रा की समस्या और कठिन हो जायगी। चाय संघ के अध्यक्ष श्री घोष ने कहा है कि भारत में चाय उद्योग संकट में से गुजर रहा है और हमें लागत खर्च से भी कम पर चाय बेचनी पड़ रही है। अफ्रीका और लंका में चाय का उत्पादन बहुत बढ़ गया है। भारत में चाय का उत्पादन व्यय अनेक कारणों से बढ़ गया है। श्री घोष ने बताया है कि चाय उद्योग पर तरह-के नये टैक्स लग गए हैं। मजदूरों के असन्तोष के कारण भी बहुत वेतन बढ़ाने पड़े हैं। उनकी अनुशासन हीनता के कारण भी उत्पादन बहुत कम हो पाता है। कारणों में मत-भेद हो सकता है; किन्तु यह सचाई है कि चाय उद्योग को और विशेषकर उसके निर्यात को प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है और उसके मार्ग की बाधाओं को तुरन्त दूर कर देना चाहिए।

अल्प बचत योजना : एक उपहास

भारत सरकार की जो योजनाएं सबसे कम सफल हुई हैं, उनमें अल्प बचत योजना शायद प्रथम है। योजना आयोग ने प्रथम दो वर्षों में २०० करोड़ रु० छोटी बचतों द्वारा मिलने की आशा की थी। किन्तु केवल १२० करोड़ रु०, अर्थात् ६० प्रतिशत मिले है। लेकिन उत्तर प्रदेश से जो समाचार मिले हैं, इनसे यह प्रतीत होता है कि वस्तुतः इतनी रकम भी प्राप्त नहीं हुई। 'आज' के एक संवाददाता के अनुसार १५ मार्च १९५८ तक अर्थात् ११½ महीने में वहां २१ करोड़ रु० की कुल बचत-लक्ष्य में से सवा छः करोड़ रु० भी इकट्ठा नहीं हुआ। कुछ जिलों से तो गत वर्ष के बचत में से भी लाखों रु० निकाले जा चुके थे। लेकिन १६ मार्च से ३१ मार्च तक सिर्फ पन्द्रह दिनों में न जाने कैसा छूमंतर हुआ कि मेरठ, इटावा और जौनपुर में ही ८५ लाख रु० से अधिक जमा हो गया। अन्य जिलों में भी इन पिछले पंद्रह दिनों में करीब तीन करोड़ रुपया जमा हो गया, जबकि साढ़े ग्यारह महीनों में सवा छः करोड़ भी नहीं हुआ था। वाराणसी जिले में ७५ प्रतिशत बचत केवल आखिरी पन्द्रह दिनों में एकत्र हुई है। आखिर इन पन्द्रह दिनों में कौन-सा जादू होगया है ? 'आज' के संवाददाता के कथनानुसार स्थानीय अधिकारी तकावी की रकम अल्प बचत योजना में जमा करवा लेते हैं। कुछ अधिकारी अमीर लोगों से एक बार किसी तरह रुपया जमा करा कर अपने जिले का कोटा पूरा करनेकी कोशिश करते हैं, भले ही वे सब १ अप्रैल के प्रारम्भ होते ही रु० निकलवा लें। इस तरह सरकार की बचत योजना निरन्तर धोखा है। वस्तुतः गांवों में और शहरों में बचत योजना का प्रचार जिस तरह चल रहा है, हमें संदेह है कि यह भी बचत योजना पर एक भार ही है।

इस सम्बन्ध में हम अपने विचार किसी आगामी अंक में प्रकाशित करने की चेष्ठा करेंगे।

इंगलैण्ड का नेतृत्व

भारत की अर्थ पद्धति ब्रिटिश अर्थ नीति के साथ एक सीमा तक सम्बद्ध है। स्टर्लिंग और रुपए का सम्बन्ध ब्रिटिशी शासन समाप्त होने के बाद भी किसी अन्य देश के सिक्के की अपेक्षा अधिक घनिष्ठ है। दोनों देशों के बीच होने वाला व्यापार और लन्दन में हमारी स्टर्लिंग निधि इस सम्बन्ध को बनाए हुए है। ब्रिटेन की अर्थ परम्पराओं का भी हमारे देश पर विशेष प्रभाव पड़ता है। कुछ वर्ष पहले ब्रिटेन के मुद्रा अवमूल्यन के साथ ही हमें भी अपनी मुद्रा की कीमत कम करनी पड़ी थी। इन कारणों से यह स्वाभाविक है कि हम ब्रिटेन की अर्थनीति में रुचि लें। जब भारत के वित्त मंत्री विविध कारणों से करों में विशेष कमी करने को तैयार नहीं होते तब ब्रिटेन के वित्त मंत्री ने नये वर्ष के बजट में १० करोड़ पौंड करों में कमी कर दी है। किसी देश में एक वर्ष में करों में इतनी भारी कमी का उदाहरण ढूंढने के लिए परिश्रम करना पड़ेगा। ४ करोड़ पौंड खरीद-कर में कमी की गई है। मनोरंजन कर में करीब ५० प्रतिशत कमी की गई है। बुजुर्गों के लिए आयकर में भी कुछ कमी की गई और भी अनेक करों में कमी करके पूंजी निर्माण को प्रोत्साहित किया गया है। क्या भारत का शासन इस दिशा में विचार करेगा?

मुख्य प्रश्न

उत्तर प्रदेश सरकार की मितव्ययता समिति ने अपनी रिपोर्ट देते हुए कहा है कि राज्य में नशा बंदी का प्रसार संभव नहीं है, क्योंकि जिन ४० जिलों में आज नशा बंदी नहीं है, उनसे सरकार को आबकारी में ५ करोड़ रुपये की आय होती है। इस आमदनी को आज किसी तरह छोड़ना संभव नहीं है। हम यह स्वीकार करते हैं कि सरकार आज के खर्च करते हुए इस आमदनी को छोड़ने की स्थिति में नहीं है, परन्तु यही दलील ब्रिटिश सरकार तब दिया करती थी, जब कांग्रेस के नेता सरकार से शराब बंदी की मांग किया करते थे। महात्मा गांधी कहा करते थे कि शराब के द्वारा पैसा इकट्ठा कर, स्कूल खोलने की अपेक्षा मैं यह पसंद करूंगा कि बच्चों को २-४ साल और न पढ़ाया जाय और सड़कें तथा हस्पताल न खोले जायें। मानव की नैतिक और भौतिक आवश्यकताओं में आज हम किसे प्राथमिकता देते हैं, मुख्य प्रश्न यही है। आज हमारे देश के नेता और शासक इस दृष्टि को भूल चुके हैं। वे संस्कृति प्रचार के नाम से लोक नृत्य और लोक गीतों पर लाखों रुपया बरबाद कर सकते हैं, सरकारी कर्मचारियों और अधिकारियों के भत्तों पर करोड़ों रुपये व्यय कर सकते हैं किन्तु मद्य निषेध की उस आधार भूत मांग को स्वीकार नहीं करते, जिसके लिए हजारों कांग्रेसी स्वयं सेवक और स्वयं सेविकाएं जेल और लाठी की शिकार हुई थीं। हमारी नम्र सम्मति में यदि मद्य निषेध के कारण आमदनी कम होती है तो अपने सब खर्च कम कर देने चाहिएं न कि शराब की आमदनी से पंचवर्षीय योजना को पूर्ण करने का यत्न करें। आखिर जनता को शराब पिलाकर २ पैसे भी लेना पाप है, क्योंकि शराबी जब शराब पीता है तो न केवल वह अपना नैतिक पतन करता है, बल्कि अपने गरीब बाल बच्चों के मुंह का कौर भी छीन लेता है। सरकार शराब की आमदनी लेकर इस पाप में हिस्सेदार होती है। मद्य निषेध से जन-सामान्य का नैतिक स्तर ऊंचा होगा तथा गरीब बाल बच्चों को दूध मिलेगा, इसलिए यह स्कूल खोलने और सड़कें बनाने से कहीं ज्यादा उपयोगी है।

योजना आयोग का संगठन

लोक सभा की लेखा-आकलन समिति ने यह सिफारिश की है कि योजना-आयोग के संगठन में कुछ परिवर्तन किये जावें। इसके अनुसार भारत सरकार के मंत्रियों को आयोग का सदस्य नहीं होना चाहिए। योजना आयोग ऐसे विशेषज्ञों का संगठन होना चाहिए जो राजनीतिक प्रभावों से स्वतन्त्र रह कर विशुद्ध आर्थिक दृष्टिसे प्रत्येक प्रश्न पर विचार कर सरकार को निष्पक्ष राय दें। इसमें सन्देह नहीं कि योजना आयोग पर बहुत से मंत्री छा गए हैं और वे केवल यथार्थ से प्रत्येक प्रश्न पर विचार करने के आदी नहीं होते। उन्हें अनेक राजनीतिक दलों के विचारों से प्रभावित होना पड़ता है। इसलिए हमें आशा है कि इस सिफारिश पर सरकार शान्तिपूर्वक विचार करेगी।

दूसरी योजना का लक्ष्य ४५ अरब रुपये रह गया !

विकास योजना के ऊंचे तथ्यों और साधनों की कठिनाइयों पर पिछले कुछ समय से निरन्तर विचार होता रहा है। देश में ऐसे विचारकों व अर्थ शास्त्रियों की कमी नहीं है, जो यह प्रारम्भ से मानते रहे हैं कि योजना के लक्ष्य अत्यन्त महत्वाकांक्षापूर्ण हैं, जिन्हें प्राप्त कर लेना देश की क्षमता से बाहर है। योजना आयोग व शासन के अधिकारी इस विचार का विरोध करते रहे हैं और इसे निराशाजनक मनोवृत्ति बताकर आशा व उत्साह का संदेश देते रहे हैं। किन्तु अब वे भी वस्तु-स्थिति को देखकर धीरे धीरे विपक्ष की सचाई को स्वीकार करने लगे हैं। पहले ५५-६० अरब रु० की बात करते थे, फिर ४८ अरब रु० पर उतर आये और योजना को पूर्ण करने पर जोर देने लगे। फिर अनिवार्य योजनाओं (कोर आफ दी प्लैन) को अवश्य पूर्ण करेंगे, यह कह कर दबी जबान से प्राथमिकता के अनुसार कुछ कम आवश्यक योजनाओं पर पुनर्विचार की बात की जाने लगी, फिर भी लक्ष्य को पूर्ण करने का नारा लगाया जाता रहा है। किन्तु अब स्थिति की गंभीरता को समझकर योजना ही ४५ अरब रु० की कर दी गई है, यद्यपि ४८ अरब रु० की संख्या के शब्दों को अभी तक वे छोड़ नहीं पाये हैं। राष्ट्रीय विकास परिषद् (नेशनल डिवैलपमैण्ट कौंसिल) ने मई के प्रथम सप्ताह में जो प्रस्ताव पास किया है, वह वस्तुतः स्थिति के बहुत निकट है और स्वागत के योग्य है। परिषद ने यह भी अनुभव किया है कि ४५ अरब रु० की योजना के लिए भी २४० करोड़ रु० के साधन अभी तलाश करने होंगे, जो करों द्वारा पूरे किये जायंगे। इसका स्पष्ट अर्थ है कि योजना का लक्ष्य ४८ अरब रु० की बजाय ४५ अरब रु० ही रहेगा, यद्यपि उसके लिए भी पर्याप्त साधन उपलब्ध नहीं हैं।

राष्ट्रीय विकास परिषद ने इस आशय का एक प्रस्ताव पास किया है कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना का ४८०० करोड़ रु० का लक्ष्य कायम रहे, लेकिन विभिन्न प्राथमिकताओंको दृष्टि में रखते हुए इसे दो भागों में विभाजित करने को कह दिया जाय।

प्रस्ताव में कहा गया है कि योजना के 'क' भाग पर ४५०० करोड़ रु० खर्च होगा और उसमें कृषि-उत्पादन से सम्बन्धित बुनियादी परियोजनाओं, 'मुख्य परियोजनाओं', अपरिहार्य परियोजनाओं तथा उन परियोजनाओं को जो कि बहुत कुछ आगे बढ़ चुकी हैं शामिल किया जाए।

यह भाग व्यय के उस स्तर को सूचित करेगा, जिस पर कि साधनों के वर्तमान आकलन को दृष्टि में रखते हुए योजना-काल के शेष भाग के लिए वचनबद्ध हुआ जा सकता है। शेष परियोजनाएं भाग 'ख' में शामिल होंगी;

> उन पर व्यय ३०० करोड़ रु० होगा। इसमें शामिल परियोजनाएं उस हद तक कार्यान्वित होंगी, जिस हद तक अतिरिक्त साधन उपलब्ध होंगे।

साधन-संग्रह

प्रस्ताव में कहा गया है कि यह निश्चित हुआ है कि केन्द्रीय तथा राज्य सरकारें अतिरिक्त करों, छोटी बचत योजनाओं तथा बचत योजना व आयोजना-सम्बन्धी खर्चों में कमी करके अधिकतम साधन संग्रह करने का प्रयत्न करें। मद्रास के वित्तमंत्री ने प्रस्ताव प्रस्तुत किया था कि छोटी बचत परियोजना के अतिरिक्त इनामी बांड जारी किए जाएं। इन पर कोई ब्याज न दिया जाएगा और इन पर जो ब्याज उचित है, उसका हिसाब लगा कर इनाम दिए जाएंगे। समय-समय पर 'लाटरी' खुलती रहेगी और बांड वालों में से जो कोई जीतेगा, उसे इनाम दिया जाएगा। बताया जाता है कि इस प्रस्ताव के पक्ष तथा विपक्ष में समान मत आये। गृह-मंत्री पं० गोविन्द वल्लभ पन्त तथा मध्य-प्रदेश के मुख्य मंत्री डा० काटजू इस सुझाव के विरोधी थे। उनका कहना था कि इससे जुए की भावना को प्रोत्साहन मिलेगा। अन्त में यह निश्चय हुआ कि केन्द्रीय तथा राज्य सरकारें इस प्रस्ताव पर विचार कर सकती हैं।

यह सुझाव भी पेश किया गया कि प्राविडेन्ट फंड सब उद्योगों व श्रमजीवियों वाले संस्थानों में जारी किया जाए। श्री गुलजारी लाल नन्दा ने कहा कि प्राविडेन्ट फंड योजना को इन उद्योगों के संस्थानों में जारी करने के लिए यह

१९५६-५६ में तटकरों से भारत की आय
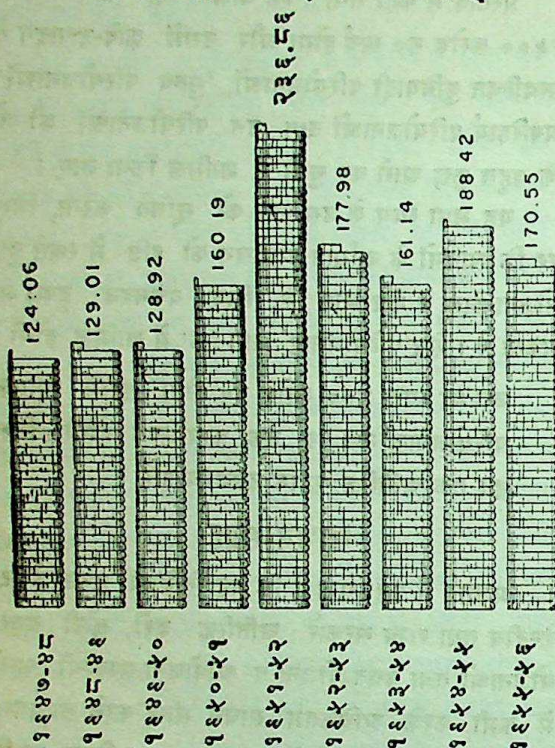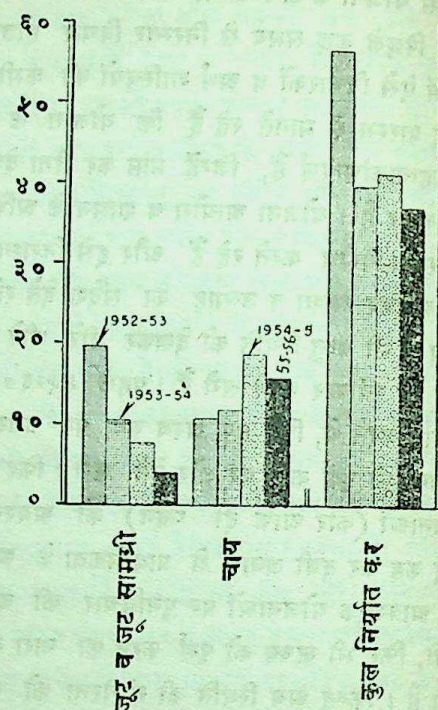
उपयुक्त समय है।

आयोग का ज्ञापन

द्वितीय योजना के सम्बन्ध में आयोजना आयोग के ज्ञापन में कहा गया है कि वर्तमान अनुमानों के अनुसार योजना-काल में कुल ४२६० करोड़ रु० के साधन उपलब्ध हैं। इनमें से,

घरेलू-बजट-साधन २०२२ करोड़ रु० के,

बाह्य सहायता-साधन १०३८ करोड़ रु० के, तथा

घाटे की अर्थव्यवस्था के साधन १२०० करोड़ रु० के हैं। आयोग ने कहा है कि ४५०० करोड़ रु० के न्यूनतम साधनों को एकत्र करने के लिए २४० करोड़ रु० की अतिरिक्त व्यवस्था करनी होगी। इनमें से १०० करोड़ रु० अतिरिक्त करों से, ६० करोड़ रु० कर्ज तथा छोटी बचत योजनाओं से तथा ८० करोड़ रु० खर्च में बचत तथा बकाया करों व ऋण की वसूली से मिल सकते हैं।

योजना आयोग ने ४८०० करोड़ रु० के कुल व्यय के पुनर्निर्धारण का सुझाव रखा है, ताकि औद्योगिक परियोजनाओं की आवश्यकताएं पूरी हो सकें। यह सुझाव रखा गया है कि जब तक अधिक साधन दृष्टिगोचर न हों, तब तक वचनबद्धता ४५०० करोड़ रु० तक सीमित रखी जाए। आयोग ने इस रकम को भी विभाजित करने का सुझाव रखा है।

योजना सम्बन्धी कुल व्यय के बारे में स्वीकृत प्रस्ताव में कहा गया है कि योजना के दो भागों में निहित परियोजनाओं की सूची पर आयोजन आयोग, केन्द्रीय व राज्य सरकारों में विचार-विमर्श होगा। परियोजनाओं के वितरण में इस बात का ध्यान रखा जाएगा कि अल्पविकसित क्षेत्रों की जरूरतों की उपेक्षा न हो तथा सामाजिक सेवाओं तथा सामुदायिक विकास को प्राथमिकता मिले। योजना को कार्यान्वित करने में आवश्यक हेर फेर किये जा सकते हैं।

आर्थिक विकास की नीति

(श्री घनश्यामदास बिड़ला)

कृषि और उद्योग—निजी व सरकारी उद्योग—
विदेशी पूंजी के लिए वातावरण—
निर्यात-व्यापार में वृद्धि।

भारतीय अर्थ व्यवस्था की समीक्षा करते हुए मुझे द्वितीय पंचवर्षीय योजना के बारे में कुछ विचार प्रकट करने हैं। आजकल द्वितीय योजना के बारे में काफी तर्क-वितर्क चल रहा है। कुछ लोग इस बात पर अड़े हुए हैं कि महंगाई बढ़ने तथा साधन प्राप्त न होने पर भी योजना में परिवर्तन नहीं होना चाहिए, जबकि और कुछ लोग—इस बात की जिक्र किये बिना कि कैसे और किस सीमा तक ?—कहते हैं कि फिर से योजना में परिवर्तन करना होगा। अक्सर लोग इस बात को भूल जाते हैं कि योजना स्वयं कोई लक्ष्य नहीं है। जैसे अधिक उत्पादन, समान वितरण, तथा रोजगार में वृद्धि आदि कुछ उद्देश्यों की पूर्ति के लिए योजना साधन मात्र है।

योजनाके अनुसार ४,८०० करोड़ रु० सरकारी क्षेत्र में तथा २,४०० करोड़ रु० निजी क्षेत्र में व्यय करना है। अर्थात् कुल मिलाकर ७,२०० करोड़ रु० व्यय किया जाना है, जो आगामी मूल्य निरूपण में बढ़े हुए खर्च तथा योजनाओं में वृद्धि के लिए और अधिक बढ़ा दिया गया है। लेकिन सरकारी क्षेत्रों में से मूलभूत योजना के व्यय का जो अनुमान किया गया है, उसका विवरण इस प्रकार है - २,३०० करोड़ रु० यातायात, बिजली तथा सिंचाई के लिए, तथा ६९० करोड़ रु० उद्योग तथा खानों के लिए (कुल ३,३३० करोड़ रु०)। निजी क्षेत्र में ७०० करोड़ रु० उद्योग, खानों तथा कारखानों के लिए। इन सब के लिए जो पैसा निर्धारित किया गया है, वह योजना के महत्वपूर्ण अंश ही है। शेष योजना व्यय विकास केन्द्रों तथा समाज कल्याण आदि के लिए है।

इस पर जोर देते हुए कि योजना को किसी भी तरह सफल बनाना है, सरकार कार्यक्रम में सजग होने की बजाय आंकड़ों पर ज्यादा ध्यान देती है तथा रोजगार बढ़ाने एवं निर्धारित उत्पादन बढ़ाने की बजाय, योजना व्यय पर अधिक ध्यान देती है। सरकारी क्षेत्र को लक्ष्य सीमा तक व्यय करने, उत्पादन और रोजगार के लक्ष्यों को हासिल

करने में बहुत कठिनता का सामना करना पड़ रहा है।

निजी क्षेत्र में सफलता

दूसरी तरफ यह साफ दिखाई दे रहा है कि निजी क्षेत्र में निर्धारित लक्ष्य पूर्ण हो रहे हैं, तथा द्वितीय योजना पूर्ण होने के बहुत पहले ही उसके अपने सारे लक्ष्य पूरे हो जायंगे। श्री टी० टी० कृष्णमाचारी ने वित्तमन्त्री पद से जिनके पदत्याग से मुझे बहुत अफसोस है—,२५ सितम्बर १९५७ को विश्व बैंक के वार्षिक अधिवेशन में भाषण देते हुए कहा था।

"भारत में निजी कारोबार का महत्त्वपूर्ण स्थान है। सचमुच गत दस वर्ष की अवधि में इसकी जितनी वृद्धि हुई है और जितने अधिक क्षेत्रों में यह विकसित हुआ है, उतना इससे पहले कभी नहीं हुआ है। हमारी कुछ कठिनताएं तो उद्योग के अत्यन्त विस्तार के कारण ही उत्पन्न हुई हैं। हमें इस उद्योग-वृद्धि के लिए दुःख नहीं है, क्योंकि इससे हम जीवनस्तर ऊंचा करने के अपने लक्ष्यों के निकट पहुँचते हैं।"

निजी पूंजी के क्षेत्र में निर्धारित स्थूल लक्ष्य शीघ्र ही पूर्ण होने वाले हैं। औद्योगिक वृद्धि १९५१ में १०० से जून १९५७ में १६८.५ तक हुई है। प्राइवेट खानों के मालिक पहले से ही प्रतिवर्ष ४०० लाख टन कोयला उत्पादन कर रहे हैं, जब कि १९६१ का लक्ष्य ४८० लाख टन उत्पादन का है। सूती मिलें योजना का लक्ष्य ८,५००० लाख गज कपड़ा-उत्पादन के प्रति निरन्तर प्रयत्नशील हैं। लेकिन इस परिमाण में कपड़ा उत्पादन के लिए रुई की बड़ी कमी है। आन्तरिक खपत तथा निर्यात में कमी हो जाने के कारण योजना के लक्ष्यों में कुछ कटौती करनी पड़ेगी। विदेशी पूंजी प्राप्त न होने के कारण सिमेंट की उत्पादन शक्ति भी पिछड़ती जा रही है। फिर भी आसानी से सीमेंट की प्राप्ति करने के क्षेत्र में सफलता मिली है। इस्पात का उत्पादन भी बढ़ रहा है। आंतरिक पूंजी तथा विदेशी सहायता की कमी के कारण औद्योगिक उन्नति के कार्यक्रम मन्द गति से चल रहे हैं तथा ८० लाख लोगों को रोजगार देने का लक्ष्य पूर्ण होता प्रतीत नहीं हो रहा है। सरकार को चाहिए कि वह स्थिति को संभाले, तथा निर्यात को बढ़ाकर विदेशी पूंजी की वृद्धि करे।

विदेशी पूंजी की आवश्यकता

आने वाले वर्षों में विदेशी सहायता की जो आवश्यकता होगी, वह हमारी अपनी आमदनी से बहुत अधिक होगी। लेकिन मैं दूसरे देशों से लगातार ऋण लेने के विरुद्ध हूँ, क्यों कि आखिर जब ऋण चुकाने का समय आयगा, तो समस्या गम्भीर बन जायगी। हमने इतनी भारी मात्रा में ऋण ले लिया है कि १९६०-६१ से शुरू होने वाले चार वर्षों में किश्तों में ९० करोड़ रु० की भारी राशि हमें चुकानी पड़ेगी।

इसलिए यह अच्छा होगा कि हम अनुकूल वातावरण पैदा करें, जिससे प्रोत्साहन पाकर विदेशी पूंजीपति हमारे देश के कारोबार में अपना धन लगाएं। भारतीय पूंजी के के साथ इस प्रकार विदेशी पूंजी के सम्मिश्रण से नई समृद्धि की वृद्धि होगी और जब तक विदेशी पूंजी के लिए स्वतन्त्रता सिर्फ नाममात्र को रहेगी, उस पर कठोर प्रतिबन्ध लगे रहेंगे, विदेशी पूंजी को भारत में प्रोत्साहन कठिन है। इस सम्बन्ध में मैं एक बात भारत सरकार के ध्यान में लाना चाहता हूँ। भारतीय औद्योगिक प्रतिनिधि मण्डल के सामने पिछले दिनों में वाशिंगटन के व्यापार विभाग ने एक आवेदन पत्र प्रस्तुत किया था, जिसमें कहा गया है कि अमेरिका की पूंजी भारत में लगने के लिए जो अवरोध व रुकावटें हैं, उन्हें दूर करना होगा।

कृषि

द्वितीय योजना का सबसे बड़ा कमजोर अंग उद्योग तथा कृषि में असमानता है। हमारी अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान है। द्वितीय योजना के अन्त तक हमारी कुल राष्ट्रीय आय १३.५०० करोड़ रु० तक बढ़ने की आशा है, जिसमें से ४६ प्रतिशत आय सिर्फ कृषि से आशा की जाती है। अगर कृषि उत्पादन में क्रमशः वृद्धि नहीं हुई, तो जनता की क्रयशक्ति कम हो जायगी तथा साथ ही औद्योगिक उत्पादन भी घट जायगा। खाद्य पदार्थों के अधिक उत्पादन से अभाव या संकट की स्थिति दूर हो जायगी और सामान्य जनता को और अधिक उत्पादन वृद्धि की प्रेरणा मिलेगी। इस पर एक और दृष्टि से भी जोर देना चाहिए।

विदेशी मुद्रा की कमी के कारण प्रतिवर्ष २० या ३० लाख टन खाद्य पदार्थों का लगातार आयात करना हमारी शक्ति से बाहर है। आंकड़ों के अनुसार अन्न का उत्पादन कम तो नहीं हो रहा है, लेकिन आबादी के अनुपात में उत्पादन नहीं बढ़ रहा है। देश के कुछ भागों में सूखा तथा अनावृष्टि होने पर भी, अन्य भागों में जहां पानी की सुविधा प्राप्त है, उसका अच्छी तरह उपयोग किया जा सकता था तथा खेती पर अधिक ध्यान देकर प्रति एकड़ अन्न का अधिक उत्पादन किया जा सकता था लेकिन बदकिस्मती से खादों के आयात में कटौती होने के कारण कृषि उत्पादन में और अधिक कमी की संभावना हो जायगी। खाद्य पदार्थों के उत्पादन को खतरे में डालकर हम लोहे के कारखाने खड़े करना सहन नहीं कर सकते। हमें कम से कम यह तो देखना ही चाहिए

(शेष पृष्ठ २८२ पर)

निकट भविष्य का प्रमुख उद्योग : अणुशक्ति

संसार अणुशक्ति के युग में प्रविष्ट हो चुका है। अणु से बिजली पैदा करने, अणु से जहाज और हवाई जहाज चलाने के काम शुरू हो चुके हैं। अगले वर्षों के लिए विभिन्न देशों ने अणु विज्ञान संबंधी विशाल योजनाएं बनाई हैं। व्यापारियों, इन्जीनियरों एवं वैज्ञानिकों ने इस समय जो अनुमान लगाये हैं उनके अनुसार इस शताब्दी के शेष काल में अणुशक्ति के विकास को सबसे बड़े एवं प्रमुख विकासशील उद्योगों में समझा जायेगा।

१९६० से लेकर १९७० तक के अगले १० वर्षों के बारे में जो अनुमान लगाये गये हैं उनसे पता चलता है कि लोकतंत्री देशों में लगभग १० अरब डालर के व्यय से आणविक बिजली उत्पादन-केन्द्रों की स्थापना की जायेगी। १९७० के बाद आणविक बिजली घरों के निर्माण पर और अधिक व्यय किया जायेगा।

अमेरिका की बिजली कम्पनियां १९६२ तक लगभग १० लाख किलोवाट बिजली तैयार करने की योजनाएं बना रही हैं। इसके बाद के पांच वर्षों में ये कम्पनियां ६५ लाख किलोवाट बिजली तैयार करने वाले अन्य आणविक बिजली घरों की स्थापना करेंगी।

अनुमान है कि १९६७ से १९७२ तक पांच वर्षों की अवधि में ३ करोड़ ५० लाख किलोवाट की विद्युत्-उत्पादन क्षमता वाले आणविक बिजली घर हो जायेंगे।

इस निरन्तर वृद्धि के कारण यह विश्वास किया जाता है कि १९८० तक अमेरिका में होने वाली लगभग ८० प्रतिशत बिजली आणविक बिजलीघरों से पैदा की जाने लगेगी।

रूस इस दिशा में भी असाधारण प्रगति कर रहा है, जिसकी सूचना समय-समय पर पाठक पढ़ते रहते हैं।

ब्रिटेन और अन्य यूरोपीय देशों की योजनाएं

ब्रिटेन इस दिशा में पहले से ही काफी आगे है। उसने १९६२ तक १४ लाख ७५ हजार किलोवाट बिजली और १९६५ तक ६० लाख किलोवाट बिजली के उत्पादन का लक्ष्य निर्धारित कर रखा है।

अणुशक्ति के पावर स्टेशन, अथवा बिजलीघर, को यथार्थ में वाणिज्यिक आधार पर चलाने वाला संसार का पहला राष्ट्र ब्रिटेन है, जिसे आगामी पन्द्रह वर्षों की अवधि में ऐसे बिजलीघरों के विश्वव्यापी हाट के अधिकांश की प्राप्ति की आशा है। अबसे लेकर १९७५ तक जितने बिजली-संयन्त्र विदेशों के हाथों उसके द्वारा बेचे जाने की सम्भावना है उनका मूल्य १,३७,९०,००,००० पौंड आंका गया है।

ये तथ्य ब्रिटिश उद्योग संघ, अथवा फेडरेशन आव ब्रिटिश इन्डस्ट्रीज के एक प्रपत्र में दिये गये हैं। इसके अनुसार जिन आठ से लेकर दस बिजलीघरों—विशेष तौर पर महाद्वीपीय योरप में—के लिये १९६० तक 'आर्डर' मिलने की सम्भावना है, उनमें से ६ से लेकर ८ तक की प्राप्ति का सबसे उपयुक्त और सम्भावित स्रोत ब्रिटेन होगा। यह आशा की जाती है कि १९६० और १९६५ के मध्य अणुशक्ति-संयन्त्रों के लिये ब्रिटेन के निर्यात बाजार एक निश्चित प्रकृति—एक निश्चित रंगढंग—ग्रहण करने लग जायेंगे। उद्योग-धन्धों से सत्वर गति से सम्पन्न हो रहे राष्ट्रमंडल-देशों से मांगों की प्राप्ति सम्भवतः होने लग जायेगी; और १९६६-७५ तक अणुशक्ति के संयन्त्रों के विश्व निर्यात बाजार में काफी अनेकरूपता आ जायेगी। जर्मनी तथा अमेरिका जैसे प्रतिस्पर्द्धियों की ओर से—तथा सम्भवतः फ्रांस की ओर से भी—प्रतिस्पर्द्धा अनपेक्षित नहीं है।

'यूरेटम' कार्यक्रम—जिसमें फ्रांस, इटली, लक्सम बर्ग, बेल्जियम, हालेंड तथा पश्चिमी जर्मनी भी शामिल हैं—के अन्तर्गत १९६७ तक कुल १ करोड़ ५० लाख किलोवाट बिजली तैयार करने वाले बिजलीघरोंके निर्माणकी व्यवस्था की गई है।

अनुमान है कि १९६५ के आसपास तक जापानके आणविक बिजलीघरोंमें १० लाख किलोवाट बिजली तैयार होने लगेगी और १९८० तक आणविक बिजली का उत्पादन १ करोड़ या १॥ करोड़ किलोवाट तक पहुँच जाने

की संभावना है।

भारत तथा अन्य एशियाई देशों और दक्षिणी अमेरिका के कुछ देशों ने १९६० से १९७० तक आणविक बिजलीघरों द्वारा बिजली तैयार करने की योजनाएं बना ली हैं।

अणुशक्ति-चालित जहाजों का निर्माण

अणुशक्ति द्वारा व्यापारी जहाजों तथा नौसेना के जहाजों के निर्माण-क्षेत्र में विशेष महत्वपूर्ण योग दिये जाने की सम्भावना है।

आणविक शक्ति से जहाज चलाने के भारी प्रारम्भिक खर्चे ऐसे जहाज के अन्य महत्वपूर्ण लाभों से बहुत कुछ सन्तुलित हो जायेंगे। अणुशक्ति को इस्तेमाल करने से जहाज में ईंधन (तेल या कोयले) रखने के गोदाम की आवश्यकता नहीं रहेगी और इस स्थान को माल ढोने के लिए प्रयुक्त किया जा सकेगा। दूसरे, इन जहाजों को बन्दरगाह पर ईंधन भरने के लिए रुकना नहीं पड़ेगा, इसलिए समय की बचत होगी। तीसरे, अणुशक्ति-चालित इंजनों के कारण ये जहाज अधिक तेज चलेंगे और इसके परिणामस्वरूप हर वर्ष अधिक सफर कर सकेंगे।

'नौटिलस' तथा इसी तरह की अन्य अणुशक्ति चालित पनडुब्बियों के निर्माण की सफलता से उत्साहित होकर अमेरिकी नौसेना-विभाग ने वर्तमान जहाजों को अणुशक्ति चालित जहाजों में परिवर्तित करने की योजना तैयार की है। अनुमान है कि अगले ८ या १० वर्षों में अमेरिकी नौसेना-विभाग को, उक्त योजना की पूर्ति के लिए सम्भवतः ७५ से १०० आणविक भट्टियों की जरूरत पड़ेगी। इन अणुशक्ति-चालित समुद्री जहाजों के निर्माण में ब्रिटेन भी रुचि ले रहा है।

भारत में अणुशक्ति का उद्योग

भारत में यद्यपि अणु शक्ति के प्रयत्न अभी बहुत प्रारंभिक अवस्था में हैं, तथापि इससे निराश होने की आवश्यकता नहीं है। पश्चिमी यूरोप के उन्नत देशों में भी केवल दो वर्ष पूर्व ही इस दिशा में कुछ प्रभावकारी कदम उठाये गए हैं।
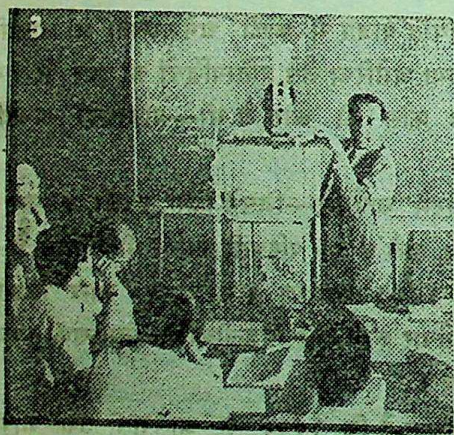
"१९५६ में बम्बई के पास ट्राम्बे में जो अणु भट्टी लगाई गई है, उसके माडल के साथ भारत के अणु-शक्ति आयोग के अध्यक्ष, डा० एच० जे० भाभा।"

अणु शक्ति विभाग की १९५७-५८ की रिपोर्ट से पता लगता है—भारत का पहला रि-एक्टर 'अप्सरा' दो साल से काम कर रहा है। इसके निर्माण से आइसोटोप का बनाना तथा विविध विज्ञान संस्थाओं को रेडियो सक्रियता की सुविधाएं देना सम्भव हो गया है। रेडियो सल्फर, रेडियो फोस्फरस, और रेडियो आयोडिन आदि पदार्थ अल्प मात्रा में बनाये भी गए हैं। रासायनिक अनुसन्धान के लिए भी इस रि-एक्टर (प्रतिक्रिया वाहक) का उपयोग किया गया है। कनाडा-भारत के रि-एक्टर में भी प्रगति हो रही है और १९५९ तक यह पूर्ण हो जाने की आशा है। मार्च १९५७ में जैर्लिना रि-एक्टर इस वर्ष के अन्त तक काम करने लगेगा। एक यूरेनियम प्लांट भी इस वर्ष अन्त तक काम शुरू कर देगा। इसी तरह से अन्य भी अनेक दिशाओं में काम हो रहा है। तांबे के मिश्रण से यूरेनियम निकालने का प्लांट भी बन चुका है। ट्राम्बे में थोरियम्-यूरेनियम प्लांट १९५५ से काम कर रहा है। टाटा अनुसन्धान संस्था इस दिशा में बहुत प्रयत्न कर रही है।

(शेष पृष्ठ २८४ पर)

खाद्य समस्या और भारत सरकार

श्री ओमप्रकाश तोषनीवाल

अन्न की समस्या प्रत्यक्ष रूप से सन् १९४२ में सामने आई और तभी से सरकार अन्न के सम्बन्ध में सर्व प्रथम अपने कर्त्तव्यों के प्रति जागरूक हुई है। अब तक इस समस्या पर कभी भी देशव्यापी आधार पर वैज्ञानिक विधि से नहीं सोचा गया था। लेकिन इस समय में आकर दिसम्बर १९४२ में केन्द्र खाद्य विभाग की स्थापना की गई। इसके बाद जुलाई सन् १९४३ में एक 'खाद्यान्न नीति समिति' की नियुक्ति की गई। समिति की प्रमुख सिफारिशों के अनुसार ही सरकार ने 'अधिक अन्न उपजाओ आन्दोलन' द्वारा (१९४३-४७) योजना को कार्यान्वित किया। यद्यपि आन्दोलन के उद्देश्य अच्छे थे तथापि इससे कृषकों को जो लाभ पहुँचना चाहिए था, वह नहीं पहुँच सका। इसके बाद सन् १९४३ के बंगाल दुर्भिक्ष के बाद सरकार ने अन्न पर नियंत्रण लगाने का कार्य किया। इस नीति के अनुसार अन्न के मूल्य नियंत्रण, उनकी उचित वितरण व्यवस्था, गांवों से अनिवार्य रूप में गल्ला वसूली, विदेशों से अनाज का आयात करना तथा देश में व्यापारियों की संग्रह प्रवृत्ति तथा काला बाजार को रोकने आदि के कार्य किये गये। इसके साथ ही किसी भी समय तत्कालीन खाद्यान्न की कमी को दूर करने के लिए सरकार खाद्यान्न का संग्रह रखने लगी।

स्वतंत्र भारत में खाद्य-नीति

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राष्ट्रीय सरकार ने देश की खाद्य समस्या पर नये सिरे से विचार शुरू किया। दिसम्बर सन् १९४७ में सरकार ने महात्मा गांधी के परामर्श से देश में खाद्यान्न के ऊपर से नियंत्रण हटा लिये। लेकिन कुछ समय बाद २४ सितम्बर सन् १९४८ को भारत सरकार ने अपनी खाद्य-नीति की घोषणा करते हुए खाद्यान्न पर मूल्य नियंत्रण और वितरण की व्यवस्था को पुनः लागू किया। अन्न विक्रेताओं के लिए अनिवार्य रूप से लाईसेंस लेने की व्यवस्था की गई। देश को ऐसे क्षेत्रों में बांटा गया जिनमें अति उत्पादन क्षेत्र, कमी वाले क्षेत्र और आत्म-निर्भर क्षेत्रों की सीमायें निर्धारित कर दी गयी थीं।

'अधिक अन्न उपजाओ' आन्दोलन

सितम्बर सन् १९४७ में सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदा[s] की अध्यक्षता में 'खाद्यान्न नीति समिति' (The Food grains Policy Committe) की नियुक्ति [की] गई। इस समिति ने 'अधिक अन्न उपजाओ' आन्दोल[न] की विफलताओं की जांच करते हुए अपना यह निष्क[र्ष] दिया कि अन्न उत्पादन बढ़ाने के उपाय अच्छे होते हुए [भी] उनको कार्य में लाने की पद्धति दोषपूर्ण थी। साथ [ही] समिति ने अन्न-उत्पादन बढ़ाने के लिए अपने सुझाव [भी] दिये। उस समय यह लक्ष्य रक्खा गया कि सन् १९[५२] तक देश को आत्म-निर्भर बना लिया जायेगा। फल[तः] सन् १९५२ में यह जानने के लिए पिछले ५ वर्षों में [क्या] कार्य हुआ, इसकी जांच के लिए तथा भविष्य में देश [को] अन्न में स्वावलम्बी बनाने के लिए 'अधिक अन्न उपजा[ओ] जांच समिति' (Grow More Food Enqui[ry] Committee) की नियुक्ति की गई। समिति ने [खाद्य] समस्या के मूल कारणों पर प्रकाश डाला, 'अधिक [अन्न] उपजाओ आन्दोलन' के अन्तर्गत चालू योजनाओं [का] मूल्यांकन किया और आन्दोलन की असफलता के कार[णों] पर भी संकेत किया। साथ ही समिति ने अपने कुछ सु[झाव] भी रक्खे।

पंचवर्षीय योजनाएं

१ अप्रैल सन् १९५१ को जब प्रथम पंचवर्षीय यो[जना] को चालू किया गया, यह वर्ष खाद्यान्न उत्पादन का [स]बुरा वर्ष था। कारण सूखा, बाढ़ व टिड्डियों के [कारण] फसलें खराब हो गई थीं तथा खाद्यान्न की काफी कमी [थी।] १९५२ में दशा सुधरने लगी और धीरे-धीरे [सा] 'आत्म-निर्भरता की मनोवृत्ति' के निर्माण करने में [सफलता मिली] गई। १९५२-५३ में वर्षा अनुकूल रही और १९५३[-५४] में तो खाद्यान्नों के उत्पादन में काफी वृद्धि हुई। [अन्त में] सन् १९५४ में आकर अनाजों पर से नियंत्रण हटा [लिये]

(शेष पृष्ठ २८५ पर)

योजना का खतरा टल गया ?

श्री विष्णुशरण

हमारी द्वितीय पंचवर्षीय योजना खतरेमें पड़ गई है। खतरे से तात्पर्य यह नहीं है कि योजना की प्रगति का मार्ग पूर्ण रूपसे अवरुद्ध हो गया है, बल्कि यह कि हम उतनी तेज गति से प्रगति नहीं कर पाये, जितनी गति से हम करना चाहते हैं तथा जो हमारे लिए आवश्यक है। पहला खतरा है बढ़े हुए मूल्य व दूसरा है विदेशी विनिमय की अत्यधिक कमी।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना का आधार यही है कि मुद्रा-स्फीति से उत्पन्न दबाव सुदृढ़ नियन्त्रण में रहेंगे और वे प्रभावशील नहीं हो पाएंगे। भुगतान तुला इन दबावों के प्रति विशेष रूप से संवेदनशील होती है व देश में बढ़ते हुए मूल्यों से आयातों की नई मांगें उत्पन्न होती हैं। इस प्रकार निर्यातों के मार्ग में कठिनाइयां पैदा हो जाती हैं व उपलब्ध धनराशि में कमी आ जाती है।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के लिए ४८०० करोड़ रुपए की वित्त व्यवस्था में ८०० करोड़ अथवा १।६ भाग विदेशों से प्राप्त होने वाले धन के लिए रखा गया था। यह भी अनुमान लगाया गया था कि योजना के पंचवर्षीय काल के द्वितीय व तृतीय वर्षों में व्यापार तुला भारत के सबसे अधिक विपरीत होगी, क्योंकि इन्हीं वर्षों में आयात भी सबसे अधिक होंगे। इन्हीं वर्षों में मशीनरी व अन्य सामान, रेलवे के विस्तार व पुनर्सज्जा के समान के आयात बहुत होंगे। इस्पात के कारखानों पर—जो कि योजना का एक प्रमुख अंग हैं, सबसे अधिक व्यय योजना के तृतीय वर्ष में होगा। आने वाला वर्ष विदेशी मुद्रा की दृष्टि से सबसे अधिक कठिनाई का वर्ष होगा।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में विदेशी मुद्रा की इतनी अधिक मात्रा में आवश्यकता न थी। स्टर्लिंग निधि की जिस मात्रा में व्यय होने की सम्भावना थी, उतनी भी व्यय नहीं हुई। पहले योजना ही इतनी विशाल न थी और फिर उसका लक्ष्य कृषि उत्पादन की वृद्धि था। नई मशीनरी के आयात भी आशा से कम थे। दूसरी ओर द्वितीय योजना का एक प्रमुख लक्ष्य भारी व आधारिक उद्योगों की स्थापना है, ताकि भावी आर्थिक विकास के लिए एक सुदृढ़ आधार का निर्माण हो सके व भारतीय आर्थिक व्यवस्था की एक भारी दुर्बलता दूर हो सके।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना पर ४८०० करोड़ रुपए की धनराशि व्यय होनी थी—बाद में लगभग ६००-७०० करोड़ रुपए की धनराशि और बढ़ा दी गई। पर जब धन की कमी होने लगी तो पुनः यह निश्चित किया गया कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना का लक्ष्य ४८०० करोड़ रुपए ही रखा जाए। बाह्य साधनों व विदेशी मुद्रा की कमी तो है ही—परन्तु आन्तरिक साधन भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं हो रहे। १२०० करोड़ रुपए की घाटे की अर्थव्यवस्था करने के बाद भी आन्तरिक साधनों में ४०० करोड़ रुपए की कमी आती है। लोक सभा के अंतिम सत्र में वित्तमन्त्री ने घोषित किया कि वर्तमान आर्थिक परिस्थितियों को देखते हुए घाटे से अर्थ-व्यवस्था की सीमा को ९०० करोड़ रुपए से अधिक नहीं मानना चाहिए।❀ इस प्रकार आन्तरिक साधनों की कमी बढ़कर ७०० करोड़ रु ए हो जाती है।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के शेष काल के लिए एक कठोर आयात नीति व विदेशी मुद्रा का व्यय वाली कुछ विकास परियोजनाओं को छोड़ देने के बाद भुगतान तुला में १६०० करोड़ रुपए की कमी होने का अनुमान है। द्वितीय योजना के प्रारम्भ से अब तक ४४० करोड़ रुपए की बाह्य सहायता मिली है अथवा उसके लिए वचन मिले हैं, यद्यपि मूल योजना में ८०० करोड़ रु० विदेशी ऋणों से मिलने का अनुमान लगाया गया था। पौण्ड पावना और विदेशी व्यापार के प्रतिकूल होने और अन्न तथा मशीनरी के भारी आयात के कारण विदेशी परिसम्पत कम होती गई, और विदेशों से सहायता भी पर्याप्त नहीं मिली। जो वचन मिले हैं, उनमें से कुछ तृतीय योजना में व्यय किये जा सकेगा। स्टर्लिंग निधि बहुत तेजी से खर्च होती जा रही है। १९५५-५६ में भुगतान तुला के चालू खाते में १७ करोड़ रुपए की

❀अब वित्तमंत्री ने इस सीमा को १२०० करोड़ रु० घोषित किया है।

अधिकता थी पर द्वितीय योजना के प्रथम वर्ष अर्थात् १९५६-५७ में ही २९२.५ करोड़ रुपए की कमी हो गई।

विदेशी विनिमय की इस बढ़ती हुई कमी को देखकर ही सरकारी क्षेत्रों में चिन्ता प्रकट की जा रही है कि ४८०० करोड़ रुपए की योजना की पूर्ति में भी संदिग्धता है। इस कारण विकास की कुछ योजनाओं को कार्यान्वित नहीं किया जा सकता—यद्यपि इसकी रूपरेखा अभी निश्चित नहीं की गई है। पर सरकार यह भी चाहती है कि ऐसी कोई परियोजना छूटने न पावे, जिससे भावी विकास की गति अवरुद्ध हो अथवा उसकी सम्भावनाओं में कमी आवे। ऐसी परियोजनाओं में लोहा व इस्पात, शक्ति, रेलवे, बड़े बन्दरगाह व कोयला खनन की परियोजनाएं आती हैं, जिन्हें हम "योजना का हृदय" अथवा भावी विकास का आधार कह सकते हैं। इन परियोजनाओं को किसी भी प्रकार पूर्ण करने के लिए सरकार विशेष रूप से चिन्तित है—यद्यपि इनके लिए अभी कुछ और विदेशी विनिमय के व्यय वाले सौदे करने पड़ेंगे। इनके साथ कुछ ऐसी भी परियोजनाएं हैं, जिनको क्रियान्वित करना आवश्यक समझा गया है—यथा जिन पर पर्याप्त प्रगति हो चुकी है तथा जिन पर विदेशी माल की खरीद के सौदे हो चुके हैं, अथवा जो न्यूनतम अनिवार्य आवश्यकताएं हैं।

इन सब की पूर्ति के लिए ही ७०० करोड़ रुपए की विदेशी सहायता की आवश्यकता है। इसी कमी के कारण सरकार विदेशी विनिमय का कोई नया खर्च नहीं बढ़ा रही, जब तक कि मूल्य का भुगतान भविष्य के लिए स्थगित न कर दिया गया हो। योजना की सफलता के लिए आने वाले १६ महीने अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। ७०० करोड़ रुपए की बाह्य सहायता अधिकांश में इन्हीं १८ महीनों के लिए चाहिए। ये १८ महीने देश व देशवासियों की क्षमता के परीक्षक सिद्ध होंगे।

विदेशी मुद्रा की यह कमी क्या एकाएक ही उत्पन्न हो गई? योजना के निर्माता साधनों की कमी की गम्भीरता को तो पहले से ही समझते थे, पर कुछ नए कारण भी पैदा हो गए:—

१. प्रतिरक्षा व्यय में वृद्धि—प्रतिरक्षा के लिए केवल ३० करोड़ डालर का विदेशी विनिमय रखा गया था। बाद में ५५ करोड़ डालर का अतिरिक्त प्रावधान करना पड़ा।

२. कुछ अनिवार्य परियोजनाओं—यथा विद्युत तेल विकास—पर अपर्याप्त प्रावधान। इस्पात परियोजना में बस्तियों के लिए प्रावधान नहीं रखा गया—बाद रखने से लोहा, इस्पात, सीमेंट आदि की आयात आवश्यकताएं बढ़ गईं।

३. विदेशी वस्तुओं के मूल्यों में वृद्धि जो कि कहीं कहीं ३३ प्रतिशत तक है। विशेषकर लोहा व इस्पात विविध प्रकार की मशीनरी के मूल्यों में।

४. अन्नोत्पादन की असन्तोषजनक स्थिति।

५. देश की आन्तरिक बचत के संग्रह में कमी।

६. खाद्यान्नों के बढ़े हुए आयात जो १९५५-५६ ४ लाख टन से बढ़कर १९५६-५७ में २० लाख टन अधिक हो गए।

७. विदेशी व्यापार में भारतीय वस्तुओं की स्थिति गिरावट। १० प्रतिशत गिरावट से ही ८० करोड़ रुपए असंतुलन हो जाएगा।

८. व्यक्तिगत क्षेत्र में आशा से अधिक विनियोग।

९. स्वेज नहर बन्द हो जाने से किराये में १५ प्रतिशत तक वृद्धि।

वांछित मात्रा में सहायता न मिलने से कुछ परियोजनाओं का मोह तो छोड़ना ही पड़ेगा, पर यह आसान सिद्ध न होगा—योजना आयोग को पुनः प्राथमिकता निर्धारित करनी पड़ेगी—उर्वरक के कारखाने तथा विद्युत शक्ति के बीच कौन अधिक आवश्यक है? किसी बन्दरगाह के विकास को स्थगित किया जाए अथवा कोयला खनन की किसी परियोजना को? जिस राज्य में अशान्ति होगी, केन्द्र को उसी का कोपभाजन बनना पड़ेगा। जिन परियोजना में प्रगति हुई और ठेके दे दिए गए हैं, उन्हें रद्द कराने में सरकार को हर्जाना देना पड़ेगा और उस दिशा में अब तक हुई प्रगति लगभग शून्य प्राय हो जाएगी। राजनैतिक समस्याएं खड़ी होंगी सो अलग। पुनः यदि यह निश्चय कर लिया जाए कि विदेशी विनिमय के व्यय वाली कोई भी नई परियोजना हाथ में नहीं ली जाएगी तो इससे प्राथमिकताओं का सहीं चित निर्धारण नहीं हो सकेगा।

भूतपूर्व वित्तमंत्री के विदेश यात्रा से लौटने के बाद विदेशी मुद्रा की स्थिति में सुधार के लक्षण दिखाई पड़े हैं। अमेरिका ने २२.५ करोड़ डालर (१०६ अरब रुपये) की सहायता अगले १२-१५ महीनों के लिए दी है। जापान ने भारत को १८०० करोड़ येन (२४ करोड़ रुपये) का ऋण ३ वर्षों के लिए दिया है। फ्रांस ने २५०० करोड़ फ्रैंक (२८ करोड़ रुपये) का ऋण स्थगित भुगतान व्यवस्था पर देने की घोषणा की है। अगले ३-४ महीनों में विश्व बैंक से १० करोड़ डालर का ऋण मिलने की आशा की जाती है। पश्चिम जर्मनी के साथ रूरकेला तथा अन्य उद्योगों के लिए भुगतान स्थगित करने पर अन्तिम निर्णय करना मात्र ही शेष है।

अपने संकटकाल में सहायक इन सब देशों का भारत आभारी है। निश्चय ही यह सहायता धन की कमी से उत्पन्न संकट को कम करेगी। पर यह सहायता आवश्यकताओं के अनुरूप नहीं है। वस्तुतः वांछित मात्रा में मिल जाती तब भी वह आदर्श स्थिति न होती क्योंकि उससे आत्मनिर्भरता, आत्म विश्वास व स्वावलम्बन की भावनाओं की हानि होती। पुन: यह भी सोचने की बात है कि लम्बी-लम्बी वार्त्ताओं को चलाने में धन व समय के व्यय के अतिरिक्त ब्याज के रूप में भी अधिक भुगतान करना पड़ता है।

यह निर्विवाद है कि पंचवर्षीय योजना पर छाया हुआ खतरा टला नहीं है, भले ही उसकी गम्भीरता कम हो गई हो।

इस नई स्थिति से उत्पन्न कठिनाइयों का मुकाबला करने के लिए भारत सरकार प्रयत्नशील है। यह "योजना के हृदय" को क्रियान्वित करने के लिए विशेष रूप से उत्सुक है। १९५६ के द्वितीय वर्ष में विदेशी विनिमय के नियन्त्रण को केन्द्रित कर दिया गया। प्रत्येक मन्त्रालय विदेशी मुद्रा के व्यय की स्वीकृति देने से पूर्व उसकी सूक्ष्म जांच करता है। अदृश्य वस्तुओं के विदेशी मुद्रा व्यय को कम किया जा रहा है। आयात नीति के प्रतिबन्ध कठोर होते जा रहे हैं। विदेशी विनिमय व्यय का कोई नया सौदा जुलाई-सितम्बर १९५७ में नहीं किया गया। पूंजीगत माल का आयात करने वालों को परामर्श दिया गया है कि वे विदेशी पूंजी के सहयोग को आमन्त्रित कर अथवा स्थगित भुगतान की इन शर्तों पर आयात कर विदेशी मुद्रा व्यय को कम से कम करें। भारत सरकार ने निश्चय किया है कि एक सामान्य नीति के रूप में आयात लाइसेंस वही दिए जावेंगे, जहां कि प्रथम भुगतान १ अप्रैल १९६१ के बाद आता हो। स्थगित भुगतान की शर्त से समस्या को केवल टाला ही जा सकता है। उसके सम्यक् हल करने के लिए आवश्यक है कि इसी बीच में देश का उत्पादन बढ़ जावे तथा भुगतान का समय आने तक वह उतनी ही विदेशी मुद्रा के उपार्जन में सक्षम हो सके। पुनः स्थगित-भुगतान में कुल व्यय भी अधिक पड़ता है। एक अध्यादेश द्वारा रिजर्व बैंक की विदेशी प्रतिभूतियां व स्वर्ण की न्यूनतम परिनियत मात्रा २०० करोड़ रुपए कर दी गई है। सरकार निर्यातों में अधिकतम वृद्धि के लिए प्रयत्नशील है। कारखानों का विस्तार किए बिना ही, जहां तक संभव हो पारियां बढ़ाकर उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है। ऐसे उद्योगों को प्राथमिकता दी जाए जिनके उत्पादन से निर्यात की सम्भावनाएं हों। अपने देशी साधनों का अधिकतम उपयोग किया जाए।

क्या विदेशी मुद्रा के उपार्जन अथवा इस समस्या के हल में हमारा भी कुछ योग हो सकता है?

१. समस्त आर्थिक उन्नति का आधार अधिक उत्पादन है। देश में उत्पादन अधिक से अधिक हो—चाहे वह उत्पादन खेतों में होता हो, अथवा विशाल कल कारखानों में अथवा कुटीर उद्योगों में।

२. हर एक व्यक्ति अधिकतम उत्पादन में पूर्ण सहयोग दे—उत्पादन वृद्धि में आफिस में काम करने वाले व्यक्ति का सहयोग उतना ही आवश्यक है, जितना एक मशीन चलाने वाले का।

३. बचत की मात्रा बढ़ाई जाए—छोटी से छोटी धन-राशि को भी जोड़ा जाए। किसी भी परियोजना के क्रियान्वयन के लिए विदेशी विनिमय के साथ साथ आंतरिक साधनों का होना अनिवार्य है।

४. यदि विदेशों से आर्थिक सहायता प्राप्त नहीं होती तो अपने स्वर्ण के बदले ही हम विदेशी उत्पादक उपकरणों

का क्रय करने के लिए तत्पर रहें ।

५. उपभोग की मात्रा कम करें—विशेष कर ऐसी वस्तुओं की, जिनकी निर्यात सम्भावनाएं पर्याप्त हैं ।

६. यथाशक्ति स्वदेश निर्मित वस्तुओं का ही उपयोग करें ।

७. विदेशी सहायता का तो स्वागत हो—पर उस पर निर्भर बन कर निष्क्रिय न बन जाएं । स्वावलम्बन की भावना ही सफलता का बीजमन्त्र है ।

८. आय कर, बिक्रीकर व भूमि लगान की बकाया की पूरी वसूली हो ।

विदेशी विनिमय की कमी से उत्पन्न खतरे से बचने व भारत और अपनी सर्वांगीण प्रगति की दृष्टि से निर्मित पंचवर्षीय योजना को सफल बनाने में हमारा यही सर्वाधिक मूल्यवान योग है ।

——

आर्थिक व्यवस्था साधन है, साध्य नहीं

डा० एन० ए० शा[illegible]

आर्थिक पद्धति भी अन्य व्यवस्थाओं की तरह एक लक्ष्य का साधन है । यह अनुभव ही बता सकता है कि किसी विशेष प्रकार के लक्ष्य तक पहुँचने के लिए जो साधन अपनाये गये हैं, वे पर्याप्त हैं या नहीं । इसलिए यह आवश्यक है कि इन साधनों पर समय समय पर पुनर्विचार हो; और अगर यह सिद्ध हो कि ये साधन हमें अभीष्ट लक्ष्य तक नहीं पहुँचा सकते, तो इन साधनों में उचित परिवर्तन लाना चाहिए । इन साधनों को ही सर्वेसर्वा समझ लेना आपत्ति को मोल लेना है ।

सदा परिवर्तन होने वाले इस संसार में, कोई निश्चित लक्ष्य भी अन्तिम रूपसे निर्धारित नहीं हो सकते । जैसे-जैसे संसार बदलता है, नई नई विचार धाराएं निकल आती हैं । इस लिए यह स्पष्ट है कि ऐसे समय जब कि विचार-धाराएं बदलती रहती हैं, अगर हमें आगे बढ़ना है तो साधनों पर निरन्तर पुनर्विचार होते रहना आवश्यक है ।

असल में देखा जाय तो वर्तमान स्थिति तथा जिस लक्ष्य तक हम पहुँचना चाहते हैं, उसमें निरन्तर संघर्ष चल रहा है । इतिहास यह बताता है कि वे सब जो वर्तमान स्थिति के लाभों का उपभोग कर रहे हैं, पूरा जोर लगाकर कोशिश करते हैं कि उनके अपने विशेष अधिकार बने रहें । कई लोग वर्तमान स्थिति को ही सही समझकर सन्तुष्ट हो जाते हैं । इस स्थिति को बदलने की उनके अन्दर न इच्छा पैदा होती है और न उनमें सामर्थ्य ही होता है । बहुत थोड़े लोग ऐसे हैं जो वर्तमान स्थिति को बुरी और असह्य समझते हैं । वे जनता को प्रेरित करने तथा विशेष अधिकार प्राप्त लोगों का विरोध करने की अपनी सामर्थ्य पर विश्वास रखते हैं ।

मनुष्य बन्धन रहित होकर पैदा हुआ है, लेकिन वह हर जगह बन्धनों में जकड़ा हुआ है । फिर भी उसके अन्दर धधकती हुई आग है जो कि सदा के लिए इन बन्धनों में जकड़ा न रहने देगी । यह ठीक है कि मनुष्य सिर्फ खाने के लिए ही नहीं जीता । लेकिन इससे भी ज्यादा सत्य है कि वह रोटी के बिना जी भी नहीं सकता ।

हर देश का यह प्रथम कर्तव्य है कि अपने देश की जनता को पर्याप्त खाना, कपड़ा तथा मकान की सुविधा दे । यही मूलाधार है । इसी नींव पर पढ़ाई, स्वास्थ्य सेवाएं, यातायात, तथा सामाजिक और आर्थिक सुरक्षा आदि का क्रमशः निर्माण हो ताकि प्रत्येक व्यक्ति पर्याप्त विकास के लिए पूर्ण अवसर प्राप्त कर सके ।

अगर यह मत स्वीकार कर लें तो आर्थिक व्यवस्था में ऐसा परिवर्तन लाना पड़ेगा कि प्रत्येक व्यक्ति को पूर्ण विकास करने की सुविधा प्राप्त हो । चाहे वह पूंजीवाद हो अथवा साम्यवाद; मुक्त अर्थ-व्यवस्था हो अथवा नियंत्रित; हमें किसी भी व्यवस्था का दास बनकर रहना ठीक नहीं है । वह व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए, जिससे हमारे उद्देश्य पूर्ण हों ।

हमारे देश ने समाजवादी समाज की स्थापना का निश्चय कर लिया है । समाजवादी समाज की परिभाषा अभी तक कहीं भी स्पष्ट नहीं हुई है । फिर भी इस विषय पर सभी सहमत हैं कि गरीबी समाप्त हो तथा देश समृद्धि

के पथ पर अग्रसर हो। सम्पत्ति तथा आमदनी की वर्तमान असमानता को मिटाना होगा। पढ़ाई, स्वास्थ्य, घरबार, नौकरी, चिकित्सा, कानून—संक्षेप में सामाजिक तथा आर्थिक सुरक्षा, जितनी जल्दी हो सके सबको देनी होगी। इसमें जितना विलम्ब होगा—समस्या उतनी ही गम्भीर हो जायगी। कुछ लोगों के अनुसार वर्तमान कांग्रेस सरकार बहुत तेजी से आगे बढ़ रही है, और कुछ के मत में इसके बिलकुल विरुद्ध। जहां तक मेरा विचार है असमानता को मिटाने के प्रति देश की उन्नति की जो गति है वह बहुत मन्द है। यहां तो निहित स्वार्थों का जाल बहुत पैमाने पर बिछा हुआ है। प्रजातंत्र व्यवस्था होने पर भी राष्ट्रीय हित की बजाय किसी वर्ग विशेष के हितों का बोल बाला है।

यह सब इसलिये हो रहा है कि हमारे देश के अधिकांश लोग धन के उपासक हैं तथा उसके सामने सिर झुकाते हैं। इतनी ही भयंकर चीज यह है कि लोग एक सूत्र में बंधे हुए नहीं हैं। हम में से अधिकांश लोग उनके साथ ताल बजाने वाले हैं, जो सत्तारूढ़ हैं। हममें यह बहुत बड़ी कमजोरी है, जो समाजवादी समाज के निर्माण में बाधा डालती है। यहां इस बात का जिक्र करना होगा कि किसी भी देश में आर्थिक व्यवस्था न ही पूर्ण रूपेण स्वतंत्र है न ही पूर्ण नियंत्रित। हर जगह संयुक्त अर्थ-व्यवस्था अमल में है। हर एक आदमी देश की रक्षा के लिए धन को त्याग ने के लिए तैयार है। लेकिन कई लोगों को रोटी के बजाय तोप चुनने के लिए विवश किया जाता है। मेरे विचार में मौलिक मतभेद सरकार के रुख में है। प्रत्येक देश की अर्थ-व्यवस्था उसके राजनीतिक संगठन के अनुसार चलती है।

अगर देश की सरकार तानाशाही के मार्ग पर चलती है तो वह निरन्तर अर्थ-व्यवस्था पर नियंत्रण बढ़ाने का प्रयत्न करेगी। इस विचार से नहीं कि जनता का जीवन स्तर निरन्तर बढ़े, बल्कि इस विचार से कि उसके अपने हाथों में सत्ता केन्द्रीकृत हो जाय। ऐसी व्यवस्था देश को निर्जीव तथा कमजोर बना देगी।

अगर देश की सरकार पूर्णरूपेण प्रजातंत्रात्मक है, तो वह अर्थ व्यवस्था का ऐसा नियंत्रण करेगी जिससे जनता का जीवन-स्तर निरन्तर बढ़ेगा, सम्पत्ति तथा आय की असमानता शीघ्र समाप्त हो जायगी तथा लोग अपनी उन्नति के लिए अपनी सुविधा के अनुसार आय साधन, तथा अवसर को प्रयोग करने में पूर्ण स्वतन्त्र रहेंगे।

अर्थ व्यवस्था को नियन्त्रण में रखने की कसौटी राष्ट्रीय हितों की वृद्धि है और इसे मापने के लिए कोई विशिष्ट मान दण्ड नहीं है। इस सिद्धान्त पर विभिन्न प्रकार की विचारधाराएं हो सकती हैं। उन सबको प्रगट करने की पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए, और उचित तथा वैधानिक पद्धति पर उनका निर्माण होना चाहिए। प्रजातन्त्रात्मक निर्णय प्रयोग में लाने चाहिएं। जो इनसे भिन्न मत रखते हैं, उन्हें चाहिए कि वे सहिष्णुता तथा योग्यता से मतदाताओं को समझाएं और वैधानिक पद्धति से उनको अपनी तरफ कर लें। इस प्रकार सत्ता को अपने हाथ में लें और अपनी नीति के अनुसार आर्थिक व्यवस्था को चलाएं। प्रजातन्त्रात्मक तथा विचार पूर्ण समाज के निर्माण के लिए इससे बढ़कर और कोई रास्ता नहीं है।

कोई भी अर्थ व्यवस्था, चाहे वह स्वतन्त्र हो अथवा योजनाबद्ध, अपने व्यवहार में अगर देश को निश्चित आर्थिक लक्ष्यों तक पहुँचाने में असफल होती है तो वह निकम्मी है। चालू अर्थ-व्यवस्था का पूर्ण अध्ययन होते रहना चाहिए तथा देश की आर्थिक आवश्यकताओं के अनुसार उसमें फेर बदल करते रहना चाहिए।

भारत में आधुनिक उद्योगों का विकास और प्रगति

प्रो० चतुर्भुज मामोरिया

प्राचीन अवस्था

भारत प्राचीन समय में कला-कौशल में बहुत अधिक उन्नति कर चुका था, जैसा कि औद्योगिक आयोग के इन शब्दों से ज्ञात होगा, "उस समय जब कि पश्चिमी यूरोप में, जो आधुनिक औद्योगिक व्यवस्था का जन्मदाता है, असभ्य लोग निवास करते थे, भारत अपने राजा नवाबों की सम्पत्ति और अपने कारीगरों के कौशल के लिये विख्यात था। इसके बहुत समय बाद भी, जबकि पश्चिम के व्यापारी पहले पहल यहां आये, यह देश औद्योगिक विकास की दृष्टि से पश्चिम के जो अधिक उन्नत राष्ट्र हैं उनसे यदि आगे बढ़ा हुआ नहीं तो किसी प्रकार कम तो नहीं था।" अत्यन्त प्राचीनकाल से भारतवासी अपने विभिन्न प्रकार के कला कौशल—सुन्दर ऊनी वस्त्रों के उत्पादन, अलग-अलग रंगों के समन्वय, धातु और जवाहरात के काम तथा इत्र आदि अर्कों के उत्पादन के लिए विश्व विख्यात रहे हैं। इस बात का प्रमाण मिलता है कि सन् ई० पू० ३०० में भारत और बेबीलोन में व्यापारिक सम्बन्ध थे। सन् ई० १—२००० तक की पुरानी मिश्र की कब्रों में जो शव हैं वे भारत की बहुत बढ़िया मलमल में लिपटे हुए पाये गये हैं। लोहे का उद्योग भी बहुत उन्नत अवस्था में था। यहां इस्पात से ब्लैड अच्छे बनते थे। किन्तु भारत की यह औद्योगिक उन्नत अवस्था अधिक समय तक न रह सकी। भारत में ईस्ट-इण्डिया कम्पनी के स्थापित होने के साथ ही साथ भारत केउद्योग धन्धों के विनाश का श्रीगणेश हुआ। इस कंपनी ने ब्रिटिश कारखानों के लिए आवश्यक कच्चे माल को भारत से निर्यात करने पर जोर दिया और उसके बदले में विलायत से तैयार माल आने लगा। इस समय की तत्कालीन सरकार भी यही प्रचार करती रही कि "भारत की उपजाऊ भूमि और वहां की जलवायु ही ऐसी है कि वहां कच्चे माल का उत्पादन हो और उसके बदले में बाहर से तैयार माल मंगवाया जाय। भारतीय मजदूर बहुत ही अयोग्य हैं तथा उनमें साहस की कमी है, इसलिए इस देश में आधुनिक उद्योगों का विकास नहीं हो सकता। इसके लिए जनता में यह विश्वास पैदा किया गया कि भारत औद्योगीकरण की दृष्टि से अनुपयुक्त है।

हमारे उद्योगों के ह्रास के कई और कारण भी थे। विलायत में औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप वहां बड़े-बड़े पुतलीघर और कारखाने स्थापित हुए, जिनमें बड़े परिमाण में और सस्ता सामान उत्पन्न किया जाने लगा। यह सामान भारत सरकार की मुक्त द्वार नीति (Free Trade Policy) अपनाने के कारण भारत में सस्ता पड़ने लगा। इसके विपरीत भारतीय उद्योगों का माल काफी महंगा पड़ता था, अतः लोगों ने इस सस्ते माल का हार्दिक स्वागत किया। देश के कई भागों में देशी नवाबों और राजाओं की आर्थिक अवनति के साथ-साथ कई देशी उद्योग-धन्धों का भी विनाश हो गया। रेलवे कम्पनियों ने भी अत्यन्त दोषपूर्ण किराये की नीति को अपना रखा था। इस नीति के अनुसार जो माल देश के भीतरी भागों से बन्दरगाह की ओर तथा बन्दरगाह से भीतर की ओर जाता था, उस पर कम किराया लिया जाता था। इस नीति का उद्देश्य यह था कि इङ्गलैंड का तैयार माल कम खर्च में आ जाय और भारत का कच्चा माल बाहर चला जाय। इस प्रकार औद्योगिक उन्नति के प्रति सरकार की उदासीनता होने से तथा कुछ सहायक कारणों से उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ से ही भारत का औद्योगिक महत्व समाप्त होने लगा और वह केवल एक कृषि-प्रधान देश बना दिया गया। इस प्रकार भारत का आर्थिक पतन अपनी चरम सीमा तक पहुँच चुका था।

आधुनिक उद्योगों का विकास

आधुनिक ढंग के कारखानों की स्थापना भारत में उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में हुई। आरम्भ में ये उद्योग कलकत्ते के आस-पास में स्थित थे, क्योंकि यूरोपीय व्यवसायी इस प्रदेश में सबसे अधिक थे। बाद को क्रमशः देश

के भीतरी भागों में भी भारतवासियों ने कारखाने स्थापित करना आरम्भ किया। सन् १९१४ के यूरोपीय महायुद्ध आरम्भ होने के समय तक भारत में सूती वस्त्रों के कारखाने, बंगाल के जूट के कारखाने, उड़ीसा और बंगाल का कोयले का उद्योग और आसाम में चाय के उद्योग को छोड़कर अन्य कारखाने स्थापित नहीं हुए थे। सूती कपड़े के उद्योग को छोड़कर बाकी सब उद्योग विदेशियों के हाथ में थे। यूरोपिय महायुद्ध के उपरान्त देश में लोहे और इस्पात तथा सीमेंट के उद्योगों, कागज, दियासलाई, शक्कर, कांच और वस्त्र तथा चमड़े के उद्योगों की उन्नति शीघ्रता से हुई। दूसरे महायुद्ध के समय भारत के औद्योगिक विकास के मार्ग में कई प्रमुख कठिनाइयां उपस्थित थीं—यथा उपयुक्त मशीनों और टैकनीकल लोगों की कमी, यातायात के साधनों की अपूर्ण उन्नति, तथा विदेशी सरकार की बड़े-बड़े उद्योगों को प्रोत्साहन देने की नीति आदि। इस कारण जितनी औद्योगिक उन्नति इस देश में हो सकती थी उतनी अवश्य नहीं हो सकी, किन्तु फिर भी कुछ हद तक इस युद्ध से भारतीय उद्योग धन्धों को काफी सहायता मिली। कई उद्योगों में अधिक से अधिक उत्पादन होने लगा। कई कद्योगों में नई मशीनें लगाई गयीं और कुछ आधारभूत उद्योगों की स्थापना हुई। छोटे पैमाने पर चलने वाले उद्योगों का काफी प्रसार हुआ और अनेकों प्रकार का सामान तैयार होने लगा। इस प्रकार वस्त्र, जूट, कागज, चाय, सीमेंट, इस्पात, शक्कर आदि के उद्योगों को काफी प्रोत्साहन मिला। कई नये उद्योगों का भी युद्धकाल में विकास हुआ, जैसे हवाई जहाज तैयार करने वाली हिन्दुस्तान एअर क्राफ्ट कम्पनी, अल्यूमीनियम उद्योग, युद्ध सामग्री और शस्त्रों के उद्योग आदि। रोजर मिशन (Roger Mission) ने जो सन् १९४० में भारत आया था, युद्ध सम्बन्धी उद्योग धन्धों के विकास की रिपोर्ट दी, जिसके परिणामस्वरूप कई

नीचे की तालिका में भारतीय उद्योग-धन्धों की उत्पत्ति का विस्तार बताया गया है :—

भारत में औद्योगिक उत्पत्ति

वस्तु	मात्रा	१९३९	१९४३	१९४५	१९४७
पक्का लोहा	(००० टनों में)	७०२	९४७	९५४	८९३
सूत	(लाख पौंड में)	१,२८९	१,६८५	१,६४४	१,२९६
सूती कपड़े	(लाख गज में)	४,३०६	४,७५१	४,७११	३,७६२
जूट का सामान	(००० टनों में)	१,२९६	१,०८४	१,०८६	१,०५२
कागज	(००० हंडर वेट)	१,१६४	१,७९२	१,९६४	१,८६२
गन्धक का तेजाब	(,,)	४८५	८६४	७३४	१,२००
अमोनियम सलफेट	(००० टनों में)	१४.५	२,१०७	२२०	२१३
वारनिश	(००० हंडर वेट)	५७२	१,१०५	१,०३०	७७२
दियासलाई	(१० लाख ग्रोस)	२१.६	१,६०८	२२.८	२३.३
शक्कर	(००० टनों में)	९९४	१,०७५	९६७	९०१
सीमेंट	(,,)	१,४०४	२,११८	२,२०९	१,४७८
नमक	(००० मन)	४३,९६८	५३,५१८	५४,६०२	५१,६०२
कोयला	(००० टनों में)	२८,३४४	२५,५१२	२८,७१६	३०,०००
			३,५७६	४,११६	४,०७३
बिजली	(१०,००,००० किलोवाट)		३,०१२	३,४३९	३,४१५
घासलेट	(००० गेलन)	२८,२८४	१९,८९४	११,११०	१३,५९४

करोड़ रुपये खर्च करके वर्तमान कारखानों का विस्तार किया गया और कई नये कारखाने बन्दूकों, गोलों, कारतूसों, बमगोलों आदि का उत्पादन करने के लिए स्थापित किये गये। रासायनिक पदार्थ, गन्धक का तेजाब, क्लोरीन, बोरिक एसिड, एलकली आदि के उत्पादन को भी बड़ा प्रोत्साहन मिला। मशीनों के भाग, हल्के ढंग की कृषि और शक्कर की मशीनरी और टूल, लोहे की चद्दरें, छड़ें, कीलियें तथा बाईसिकल के उत्पादन के लिये कई नये कारखानों का भी श्रीगणेश हुआ।

विभाजन का प्रभाव

सन् १९४७ ई० में देश का बंटवारा हुआ। इसका हमारे आर्थिक जीवन पर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा। कपास और जूट जैसे महत्वपूर्ण कच्चे माल के लिए भारत को बहुत हद तक पाकिस्तान पर निर्भर होना पड़ा। जूट की सब मिलें भारतीय संघ में आ गयीं, पर जूट पैदा करने वाली अविभाजित भारत की केवल एक तिहाई भूमि ही भारत को मिली। इसी प्रकार अविभाजित भारत की ९९ प्रतिशत सूती वस्त्र की मिलें भी भारत में हैं तथा इनके लिये १० लाख लम्बे और मध्यम धागे वाली कपास की गांठों के लिए पाकिस्तान पर निर्भर रहना पड़ा है। नीचे की तालिका में औद्योगिक बंटवारे की स्थिति बतलाई गई है :—

कारखानों की संख्या

उद्योग धन्धे	भारत में	पाकिस्तान में
सूती वस्त्र	४१९	१२
जूट के कारखाने	९७	०
लोहा व इस्पात	२४	०
इन्जीनियरिंग	५६३	२७
सीमेंट	२०	३
रासायनिक पदार्थ	५५	३
ऊनी वस्त्रों के कारखाने	१६	२
रेशम ,,	६	०
कागज ,,	२०	०
शक्कर ,,	१६६	२
दियासलाई ,,	१६	३
शीशा ,,	७९	०

राष्ट्रीय सरकार की औद्योगिक नीति

युद्ध के समय भारतीय उद्योग-धन्धों को जो प्रोत्सा[illegible] मिला वह देश के बंटवारे के बाद में स्थायी नहीं रह सक[illegible] इसके कई कारण थे—यातायात की कठिनाई, उद्योगपति[illegible] और श्रमिकों के आपसी सम्बन्धों में खिचाव और बिगा[illegible] कच्चे माल की कमी, मशीन आदि पूंजीगत वस्तुओं के प्र[illegible] करने और इमारत के सामान मिलने की कठिनाई त[illegible] टैकनीकल लोगों की कमी आदि। इसका परिणाम, देश [illegible] धीरे-धीरे औद्योगिक संकट का अविर्भाव के रूप में हुआ[illegible] देश के स्वतन्त्र होने के समय हमारी औद्योगिक स्थिति अ[illegible] नहीं थी, अतः दिसम्बर १९४७ में उद्योग-धन्धों के स[illegible] का सम्मेलन हुआ, जिसमें देश की औद्योगिक स्थिति [illegible] विचार किया गया और कुछ प्रस्ताव उपस्थित किये ग[illegible] इसके फलस्वरूप अप्रैल १९४८ ई० राष्ट्रीय सरका[illegible] अपनी औद्योगिक नीति की घोषणा की। सरकार [illegible] उद्योग धंधों को चार श्रेणियों में बांटा—(१) पहली श्रे[illegible] में वे उद्योग धंधे गये हैं जो केवल राज्य द्वारा [illegible] संचालित किये जायेंगे—जैसे शस्त्र और सैनिक साम[illegible] (arms and ammunitions) संबंधी उद्योग, एटा[illegible] शक्ति का उत्पादन और नियंत्रण, तथा रेलवे यातायात[illegible] (२) दूसरी श्रेणी में उन उद्योगों की गिनती की गई [illegible] जहां तक उनके क्षेत्रों में नये कारखाने खोलने का प्रश्न [illegible] राज्य के लिए ही सुरक्षित रखे गये, यद्यपि रा[illegible] को (यदि राज्य के हित में आवश्यक मालूम पड़े तो[illegible] आवश्यक नियंत्रण के साथ व्यक्तिगत उत्पादन का सह[illegible] लेने का भी अधिकार दिया गया। कोयला, लोहा, इस्पा[illegible] हवाई जहाज निर्माण, जहाज निर्माण, टेलीफोन, टेली[illegible] और वायरलेस औजारों का उत्पादन और मिट्टी का ते[illegible] निकालने के सम्बन्धी उद्योग इस श्रेणी में आते थे। इ[illegible] उद्योगों से सम्बन्ध रखने वाले जो वर्तमान कारखाने आ[illegible] थे, उनका दस वर्ष तक राष्ट्रीयकरण नहीं होगा और उन[illegible] भली प्रकार चलने और उचित विस्तार के लिए सब प्रक[illegible] की सुविधाएं दी जायंगी। (३) तीसरी श्रेणी में [illegible] आधारभूत धंधे रखे गये जिनका आयोजन और नियंत्र[illegible] राष्ट्रीय हित में केन्द्रीय सरकार द्वारा होना आवश्यक सम[illegible]

(शेष पृष्ठ २७४ पर)

भारतीय अर्थव्यवस्था पर जनसंख्या-वृद्धि का प्रभाव

श्री ज्योतिप्रकाश सक्सेना एम० ए०

पूर्व काल में अब से बहुत कम उर्वरा भूमि-भाग भारत देश में होते हुए भी पुराणों के अनुसार यहां ५६ करोड़ की आबादी का निर्वाह भली भांति होता था।[1] पता नहीं यह सच है या झूठ, परन्तु जब हम यह सोचते हैं कि इस देश में संतान पैदा करना एक परम आवश्यक धर्म, पितृ-ऋणसे मुक्त होने का एक-मात्र उपाय माना जाता है, तो इस बात को सही मानने को जी करने लगता है। इसी प्रकार की विशाल जनसंख्या वाली बात आज से लगभग ५५० वर्ष पूर्व एक विदेशी यात्री निकोलो कॉन्टी ने दक्षिण भारत के विजयनगर के बारे में लिखी थी। उसके अनुसार उक्त राज्य में "इतने लोग निवास करते हैं कि जिस पर विश्वास नहीं किया जा सकता।"[2] प्राचीन ग्रन्थों में केवल इसी प्रकार का वर्णन मिलता है। कुछ भी हो, इससे यह तो निश्चित हो ही जाता है कि जनसंख्या के मामले में हम कभी पीछे नहीं रहे।

भारत में जनसंख्या की वृद्धि

सन् १८८१ में, जब भारत की प्रथम किन्तु अपूर्ण जनगणना हुई, तो भारतवर्ष की आबादी २५.४० करोड़ थी। पचास वर्ष पश्चात्, सन् १९३१ में, यही आबादी बढ़कर ३५.३० करोड़ हो गई। सन् १९४१ की जनगणना के अनुसार उस वर्ष भारत की आबादी ३८.९० करोड़ थी।[3] पिछली गणना ने फिर इसी प्रकार की वृद्धि को इंगित किया है। उसके अनुसार सन् १९५१ में स्वतंत्र भारत की जनसंख्या ३६ करोड़ की सीमा पार कर गई। इस प्रकार पिछले दशक (१९४१-५१) में भारत की जनसंख्या में ४.३० करोड़ की वृद्धि हुई।[4]

इस प्रकार भारत की जनसंख्या को कभी भी स्थिर संज्ञा प्रदान नहीं की जा सकती। परन्तु वृद्धि की दर ऊंची होने पर भी असाधारण नहीं रही है। उदाहरणार्थ, १८७२ और १९४१ के बीच संयुक्त भारत की जनसंख्या में ५४ प्रतिशत वृद्धि हुई जबकि इसी बीच इंग्लैंड की आबादी ५६ प्रतिशत और जापान की १३६ प्रतिशत बढ़ी।[5] इस प्रकार समस्या वृद्धि दर की नहीं, बल्कि प्रति वर्ष बढ़ने वाली संख्या की है। चूंकि देश की आबादी वैसे ही बहुत काफी है, इसलिए १०-१५ प्रतिशत की मामूली वृद्धि ही लगभग ५ करोड़ की हो जाती है जो इंग्लैंड की आबादी के बराबर या आस्ट्रेलिया की आबादी की छः गुनी है। पिछले दशक में होने वाली वृद्धि के अनुसार भारत की जनसंख्या प्रतिवर्ष १¼ प्रतिशत की दर से बढ़ती है, जिसका अर्थ हुआ वर्ष में ४० लाख या दिन में १२०००।[6]

जनसंख्या की वृद्धि का आर्थिक प्रभाव

एक आदर्श और कार्यकुशल जनसंख्या किसी भी देश के लिए महान् सौभाग्य की बात हो सकती है, क्योंकि वह उसकी आन्तरिक शक्ति का सूचक है।[7] उसके द्वारा देश के प्राकृतिक उपहारों का समुचित शोषण होता है जिससे देश में उत्पादन बढ़ता है, राष्ट्रीय आय में वृद्धि होती है और देश के निवासियों का जीवन-स्तर ऊंचा उठ जाता है। परन्तु यही जनसंख्या जब एक निश्चित सीमा को लांघ जाती है, तब वह राष्ट्र के रक्त को पी डालती है,

---

१. ज्यूलियन हक्सले : कितने दांत - कितने चने, 'नवनीत', जुलाई, ५६, पृ० ३३।
२. ईस्टर्न इकानॉमिस्ट वार्षिकांक १९५१, पृ० १००५।
३. १९४१ तक के आंकड़े संयुक्त भारत के हैं। विभाजन के पश्चात् जो भू-भाग भारत में रह गया है, उसकी आबादी सन् १९४१ में ३२.६६ करोड़ होती है।
४. एस० चन्द्रशेखर : हंगरी पीपुल एंड एम्पटी लैन्डस, पृ० १५२-५३।
५. वही : पृ० १५३।
६. मृत्युंजय बनर्जी : इंडियन फुड रिसोर्सेज़ एंड पॉपुलेशन, ईस्टर्न इकानॉमिस्ट, १४ अगस्त १९५३, पृ० ३०४।
७. ज्ञानचन्द : द प्रॉबलम ऑफ पॉपुलेशन, पृ० ४।

गरीबी, बीमारी और मृत्यु को देश के कोने-कोने में फैला देती है और उत्पादन में वृद्धि कर जनताके रहन सहन के स्तर को ऊंचा उठाने के स्वप्न को धूल में मिला देती है। इसीलिए, ऊंचा जीवन-स्तर और जनाधिक्य सदा एक दूसरे के विरोधी के रूप में हमारे सामने आते हैं और हमारे समक्ष एक बड़ा-सा प्रश्नवाचक चिन्ह बनकर खड़े हो जाते हैं। आज माल्थस की बहुत-सी बातें गलत सिद्ध हो गई हैं, लेकिन उसका यह कथन कि जनसंख्या खाद्य-पूर्ति से अधिक तीव्र गति से बढ़ती है, वर्तमान भारतीय परिस्थितियों में अक्षरशः लागू होता है। और यही सबसे बड़ी समस्या है, देश के लिए, सरकार के लिए, क्योंकि अपनी जनता के कल्याण को ध्यानमें रखने वाली कोई भी सरकार इस ओर से उदासीन नहीं हो सकती।

जनसंख्या और खाद्य-पूर्ति :

जन संख्या की समस्या की मूल बात यह है कि उसने खाद्य-पूर्ति को काफी पीछे ढकेल दिया है। पिछली जन-गणना के अनुसार सन् १९५१ में भारत की जनसंख्या (जम्मू और कश्मीर और आसाम के कबायली इलाकों को छोड़कर) ३५६,८९१,६२४ थी। और यदि १०० आद-मियों को ८६ वयस्कों के बराबर मान लिया जाय, जैसा कि माना जाता है, तो इसका अर्थ यह हुआ कि सन् १९५१ में भारत में लगभग ३० करोड़ वयस्क मौजूद थे,[८] जिनको १४ औंस प्रतिदिन प्रति व्यक्ति के हिसाब से खिलाने के लिए लगभग ४.४ करोड़ टन खाद्यान्नों की आवश्यकता थी।

सरकारी आंकड़ों के अनुसार भारत में सन् १९४९-५० से खाद्यान्नों के उत्पादन का स्वरूप इस प्रकार रहा है :[९]

वर्ष	खाद्यान्नों का उत्पादन (करोड़ टनों में)			
	चावल	गेहूँ	ज्वार-बाजरा	कुल
१९४९-५०	२.२८	०.६५	१.६२	४.५५
१९५०-५१	२.२१	०.६७	१.५४	४.४२
१९५१-५२	२.२८	०.६२	१.५४	४.४४

उपर्युक्त आंकड़ों के अनुसार भारत का खाद्यान्न-उत्पादन लगभग ४.४ करोड़ टन के रखा जा सकता है। इसमें से बीज और बरबादी के रूप में १० से १२॥ प्रतिशत कटौती कर, कुल खाद्यान्न जो उपभोग के लिए उपलब्ध होता है, वह लगभग ४ करोड़ टन के आता है। इस प्रकार लगभग ४० लाख टन की कमी पड़ती है। और जो बात सन् १९५१ के लिए ठीक उतरती है, वह आज भी ठीक है। आखिर, इन वर्षों में स्थिति में कोई विशेष सुधार नहीं हुआ है। इस प्रकार यह सिद्ध हो जाता है कि भारत में बढ़ते हुए दांतों को खिलाने के लिए पर्याप्त चने उपलब्ध नहीं हैं।

इस समस्या का गुणात्मक स्वरूप और भी भयंकर है। यह असंदिग्ध सत्य है कि आदमी को केवल पर्याप्त भोजन ही नहीं मिलना चाहिये, बल्कि उस भोजन में पर्याप्त प्रोटीन, मिनरल साल्ट और विटामिन भी होने चाहिये। परन्तु अपने निम्न रहन सहन के स्तर के कारण भारत के अधिकांश लोग इस प्रकार का भोजन नहीं कर सकते। वास्तव में, सर जॉन मेगा के सर्वेक्षण के अनुसार सन् १९३३ में भारत में केवल ३९ प्रतिशत लोग हीअच्छा खाना खाते थे।[१०] यही हाल आज भी है। निम्न तालिका[११] से बिभिन्न देशों की भोजन-सम्बन्धी स्थिति स्पष्ट हो जाती है : और इससे हमारे गुण पर बड़ा विपरीत प्रभाव पड़ता है। हमारी कार्यक्षमता कम हो जाती है और लोग यह कहने के लिए विवश हो जाते हैं कि 'भारतवर्ष के निवासी रहते नहीं, बल्कि रह लेते हैं।'

---

८. प्रथम पंचवर्षीय योजना (वृहद् अंग्रेजी संस्करण) पृ० १९७।

९. इन्डिया एट ए ग्लान्स (औरियन्ट लौंगमैन्स) पृ० २८१।

१०. जे० मेगा : एन इन्क्वायरी इन्टु सरटेन पब्लिक हैल्थ आस्पैक्ट्स ऑफ विलेज लाइफ इन इंडिया—पृ० १०।

११. ईस्टर्न इकानॉमिस्ट वार्षिकांक १९५६—पृ० ६८७।

कैलोरीज और प्रोटीन का उपयोग
(प्रति व्यक्ति, प्रति दिन)

देश	कैलोरी की संख्या		प्रोटीन (ग्रामों में)	
	युद्धके पूर्व	५४-५५	युद्ध के पूर्व	५४-५५
अमरीका	३१५०	३०९०	८९	९२
इंग्लैंड	३११०	३२३०	८०	८६
आस्ट्रेलिया	३३०५	३०४०	१०३	९१
जापान	२१८०	२१६५	६४	५८
भारत	१९७०	१८४०	५६	५०

जनसंख्या और कृषि-अर्थ व्यवस्था

कृषि ही भारतवर्ष की समृद्धि की आधारशिला है। यही उसकी विशाल जनसंख्या के लगभग ७० प्रतिशत भाग की रोटी-रोजी की समस्या को हल करती है। दूसरे शब्दों में, भारत के राष्ट्रीय ढांचे में कृषि का स्थान सर्वोपरि है और हमारी आर्थिक उन्नति उसके विकास पर ही निर्भर है। परन्तु यह सब होते हुए भी भारतीय कृषि पिछड़ी हुई अवस्था में है। जैसा कि डा० क्लाउस्टन ने कहा है : "भारत में दलित जातियां हैं, दलित उद्योग भी हैं, और दुर्भाग्य से कृषि उनमें से एक है।"[१२]

और इसका प्रमुख कारण है भूमि पर जनसंख्या का अत्यधिक दबाव। भारत की अर्थ-व्यवस्था की यह विशेषता रही है कि उसकी जनसंख्या सदा ही खाद्य पूर्ति से आगे रही है दूसरे प्रगतिशील धन्धों के अभाव में लोगों ने सदा ही खेती को अपने जीविकोपार्जन का साधन बनाया। इस प्रकार भूमि पर दबाव बढ़ता ही गया। उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार जहां पोलैन्ड, चेकोस्लोवोकिया, हंगरी, रूमानिया, यूगोस्लाविया और इंग्लैंड में १०० एकड़ भूमि क्रमशः ३१, २४, ३०, ३०, ४२ और ९ आदमियों को आश्रय देती है, वहां, भारत में, उसे १४८ आदमियों का भार वहन करना पड़ता है।[१३] इसीलिए यहां प्रति एकड़ उपज विदेशों के मुकाबले बहुत कम है। इस प्रकार जनसंख्या के भार ने कृषि की उत्पादन शक्ति को कम करने के साथ ही साथ उसके रूप को भी बदल डाला है[१४] और भारतीय कृषि एक 'घाटे की अर्थ-व्यवस्था'[१५] बन गई है।

जनसंख्या और उद्योग

कृषि के अलावा बढ़ती हुई जनसंख्या का दूसरा आघात उद्योगों पर हुआ है। यह प्रहार अप्रगतिशील कृषि और कार्य-अकुशलता के शस्त्रों द्वारा किया गया है। यह प्रकट ही है कि उद्योग और कृषि अन्तःनिर्भर हैं। कृषि उद्योग के लिए कच्चे माल की पूर्ति करती है, और उद्योग कृषि-उत्पादन की मांग का सृजन कर किसानों की आय में वृद्धि करता है। परन्तु जैसा अभी कहा जा चुका है, कि जनसंख्या के दबाव के कारण कृषि एक अलाभकारी व्यवसाय बन गई है, क्योंकि उसमें लगे हुए आदमियों का भली प्रकार जीवन-निर्वाह नहीं हो पाता और इसका प्रभाव उद्योगों पर भी पड़ता है।

फिर, रहन-सहन का स्तर, श्रम की कार्यक्षमता और औद्योगिक विकास साथ साथ चलते हैं। रहन-सहन के ऊंचे स्तर से कार्यक्षमता में वृद्धि होती है, जिससे औद्योगिक विकास सम्भव होता है। परन्तु दुर्भाग्यवश, जनाधिक्य के कारण, भारत के निवासियों का जीवन-स्तर दूसरे देशवासियों के मुकाबले में बहुत ही नीचा है। इसीलिए भारत की फैक्टरी में काम करने वाला श्रमिक पश्चिमी देशों या जापान में काम करने वाले श्रमिकों से समय की प्रति इकाई कम काम करता है,[१६] जिससे कुल उत्पादन कम होता है; राष्ट्रीय आय कम होती है। वस्तुतः यह सिद्ध हो जाता है कि जनाधिक्य भारत के औद्योगिक विकास में भी बाधक सिद्ध हुआ है।

जनसंख्या और बेरोजगारी

यही जनाधिक्य भारत में बढ़ती हुई बेरोजगारी के

१२. कृषि आयोग रिपोर्ट, साक्ष्य अभिलेख, खण्ड १।

१३. जे० ई० रसैल : एग्रैरियन प्रॉबलम्स फ्रॉम बाल्टिक टू एजियन।

१४. डी० घोष : प्रैशर आफ पॉपुलेशन एंड इकॉनोमिक एफीशियैन्सी इन इंडिया—पृ० ५१-५२।

१५. रिज़र्व बैंक ऑफ इन्डिया।

१६. डी० घोष : प्रैशर ऑफ पॉपुलेशन एंड इकॉनोमिक एफीशियैन्सी इन इंडिया—पृ० ३५।

लिए भी जिम्मेवार है। स्थिति यह है कि युद्ध-काल को छोड़कर भारत में बेरोजगारी बढ़ती ही रही है, क्योंकि आर्थिक कार्यकलाप बढ़ती हुई जनसंख्या की बराबरी नहीं कर सके। यदि हम भारत में जनसंख्या की वृद्धि को ४० लाख प्रति वर्ष मान लें, तो इस हिसाब से हमको लगभग २५ लाख वयस्कों के लिए रोजगार का प्रबन्ध प्रति वर्ष करना पड़ेगा। इस प्रकार यदि योजना कमीशन के रोजगार सम्बन्धी आशावादी आंकड़े पूरे भी हो जांय, तब भी हमें बढ़ती हुई बेरोजगारी की समस्या का सामना करना पड़ेगा क्योंकि भारत में जहां जनसंख्या ४०-५० लाख प्रति वर्ष के हिसाब से बढ़ती है वहां रोजगार में वृद्धि की दर इससे बहुत कम होती है। अस्तु बढ़ती हुई बेरोजगारी बराबर हमारी नई जीती हुई आज़ादी के लिए हिंसात्मक उपद्रवों का खतरा पेश कर रही है।

वस्तुतः, शक्ति के एक अपरिमेय साधन के रूप में जो जनसंख्या हमारे लिए एक महान् वरदान सिद्ध हो सकती थी, आज राष्ट्र के सामने एक विकट समस्या बनकर आ खड़ी हुई है, जिसका समाधान देश के सर्वांगीण विकास के लिए आवश्यक ही नहीं, अपितु अनिवार्य है। जब तक यह नहीं होता, हम अपने जीवन-स्तर को ऊंचा कर देश के अधिकाधिक कल्याण के स्वप्न को कभी भी साकार नहीं कर सकते, चाहे इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए हम कितनी ही पंचवर्षीय योजनाएं क्यों न पूरी कर डालें।

विकास योजनाओं के लिए विदेशी सहायता

के. सी. खत्री, सु. इंजीनियर
केन्द्रीय जल व विद्युत आयोग

देश में अनेक नदी घाटी योजनाएं शुरू की गयी हैं और उन्हें पूरा किया जा रहा है। परन्तु लोगों को अभी इस काम का विशेष अनुभव नहीं है। अमेरिका, कनाडा, प० जर्मनी जैसे अधिक उन्नत देशों ने इन योजनाओं को पूरा करने में बहुत सहायता दी है। प्रस्तुत लेख में बताया गया है कि किन-किन देशों ने क्या-क्या सहायता दी है।

देश में हाल ही में बहूद्देशीय नदी-घाटी योजनाएं शुरू की गयी हैं। इनके लिये स्थानों की जांच करनी पड़ती है, योजनाओं के नक्शे बनाने पड़ते हैं और नक्शों के अनुसार काम करना पड़ता है। इन सब कामों के लिये काम जानने वाले विशेषज्ञों की आवश्यकता है। अमेरिका, ब्रिटेन, कनाडा, प० जर्मनी आदि कुछ देश ऐसे हैं जो इस विषय में बहुत उन्नत हैं। इन देशों ने भारत की विकास योजनाओं को पूरा करने के लिये बहुत सहायता दी है। इन देशों ने काम जानने वाले विशेषज्ञ यहां भेजे, यहां के इंजीनियरों को काम सिखाने की व्यवस्था की, आवश्यक यंत्र आदि भेजे और अपनी प्रयोगशालाओं में अनुसंधान करने की व्यवस्था की।

अमरीकी सहायता

नदी-घाटी योजनाओं के लिये अमेरिका ने सबसे अधिक सहायता दी है। भारत और अमेरिका के बीच १९५२ में एक समझौता हुआ था। इसके अनुसार अमेरिका भारत की सहायता के लिये विशेषज्ञ भेजता है, भारतीय इंजीनियरों को अमेरिका में काम सिखाया जाता है और विभिन्न योजनाओं के लिये आवश्यक यंत्र आदि मिलते हैं। इसके अलावा अमेरिका भारत को योजनाओं के सम्बन्ध में आवश्यक शिल्पिक सलाह आदि भी देता है। इस प्रकार की सलाह का प्रबन्ध करने पर जो खर्च आता है, वह भी अमेरिका ही उठाता है। इसके लिये अमेरिका ने एक लाख डालर रखे हैं।

पहली पंचवर्षीय आयोजना में अमेरिका ने ३२ शिल्पिक विशेषज्ञ यहां भेजे। इनमें से दस दामोदर घाटी निगम के लिये, दो हीराकुड योजना के लिये और बाकी केन्द्रीय जल-विद्युत आयोग के लिये थे। यहां से सत्रह इंजीनियर अमेरिका में काम सीखने गये।

अमेरिका ने भारत को ट्रैक्टर, डंपर, कंकरीट बनाने वाले यंत्र आदि भेजे। पहली पंचवर्षीय आयोजना में हीराकुड, चंबल, काकरापार, माही, पथरी आदि योजनाएं बनायी गयी थीं, जिन पर १२९ करोड़ से भी अधिक खर्च होने वाला था। अमेरिका ने इन योजनाओं के लिये ६८,२०,१२८, डालर दिये।

अमेरिका ने भारत सरकार को बाढ़-नियंत्रण की योजनाओं के लिये २,०२,००० डालर के यंत्र भेजे और वहां से कुछ विशेषज्ञ भी आये।

अमेरिका ने रेंड-योजना के लिये भी सहायता देना स्वीकार किया है। इसके लिये आवश्यक मशीनों और शिल्पिक सहायता के लिये अमेरिका ६४,१३,०१' डालर और बांध के निर्माण के लिये ७ करोड़ रु० खर्च करेगा। रेंड-योजना पर कुल ४८ करोड़ रु० खर्च होगा।

भारत सरकार ने अमेरिका की सहायता से कोटा में और नागार्जुन सागर के पास दो केन्द्र खोले हैं जिनमें बुलडोजर जैसी जमीन साफ करने वाली भारी मशीनों की देखरेख करने और उनको चलाने की ट्रेनिंग दी जाती है। इन केन्द्रों में हर साल ४० मशीन चलाने वालों तथा मिस्तरियों को ट्रेनिंग दी जाती है।

कोलम्बो योजना के अन्तर्गत सहायता

कोलम्बो योजना के अन्तर्गत कनाडा, आस्ट्रेलिया और ब्रिटेन भारत को सहायता देते हैं। इनमें कनाडा ने भारत को सबसे अधिक सहायता दी है।

कनाडा ने पहली आयोजना के पहले दो वर्षों में देश को जो सहायता दी, वह मुख्यतः जिन्सों के रूप में थी। कनाडा के साथ जो करार हुआ था, उसमें यह तय हुआ था

कि कनाडा भारत को एक करोड़ पचास लाख डालर (कनाडा) का गेहूँ भेजेगा और इसकी बिक्री से जो रुपया मिलेगा, वह मयूराक्षी योजना (प० बंगाल) पर खर्च किया जायगा। इसके अलावा कनाडा ने योजना के लिये ३० लाख डालर (कनाडा) के बिजली के यंत्र भी दिये। कनाडा द्वारा दी गई सहायता के स्मरणार्थ मयूराक्षी बांध का नाम कनाडा बांध रखा गया है।

इसके अलावा कनाडा ने आसाम की बिजली योजना के लिये भी १२ लाख डालर के यन्त्र दिये। केवल तार उद्योग के लिये ५० लाख डालर का जो माल कनाडा ने दिया था, उसकी बिक्री से मिलने वाले रुपयों से इस योजना के निर्माण का खर्च निकाला गया।

कनाडा ने दो भारतीय इन्जीनियरों को वहां काम सिखाने की व्यवस्था की है।

आस्ट्रेलिया से सहायता

आस्ट्रेलिया ने ३ करोड़ ७२ लाख रु० का गेहूं और आटा यहां भेजा और उसकी बिक्री से जो धन मिला, उसका उपयोग तुंगभद्रा योजना के खर्च के लिये किया गया। इसके अलावा आस्ट्रेलिया ने तुंगभद्रा योजना और आंध्र की रामगुंडम योजना के लिये १ करोड़ ६० लाख रु० की मशीनें और बिजली का सामान दिया। दो भारतीय इन्जीनियरों को आस्ट्रेलिया में काम सिखाने की व्यवस्था की गई।

ब्रिटेन द्वारा सहायता

ब्रिटेन ने भारत को चार विशेषज्ञ भेजे और लगभग ४५,००० रु० के अनुसंधान के उपकरण भेजे। इसके अलावा केन्द्रीय जल और विद्युत आयोग के सात अधिकारियों को ब्रिटेन में ट्रेनिंग देने की व्यवस्था की।

संयुक्त राष्ट्र संघ से सहायता

संयुक्त राष्ट्र संघ और उसके विशेष संगठनों ने भी भारत को शिल्पिक सहायता दी है। यहां बांधों के डिजाइनों की जांच के लिये और जहाजों के नमूनों की जांच के लिये दो केन्द्र खोले गये हैं। शिक्षा-विज्ञान-संस्कृति संगठन ने इन केन्द्रों के लिये चार विशेषज्ञ यहां भेजे और केन्द्रीय जल-विद्युत अनुसंधान केन्द्र पूना के लिये १,५०,००० रु० के और फोटो-इलेस्टिक प्रयोगशाला के लिये ८०,... रु० के उपकरण दिये।

इसके अलावा केन्द्रीय जल-विद्युत आयोग के ... अधिकारियों को फ्रांस, स्विटजरलैंड, ब्रिटेन और सं... की प्रयोगशालाओं में काम सिखाने की व्यवस्था की। ... राष्ट्र संघ के शिल्पिक सहायता संगठन ने भी जल-वि... आयोग के आठ अधिकारियों को विभिन्न देशों में ... सिखाने की व्यवस्था की।

प० जर्मनी से सहायता

प० जर्मनी की सरकार ने वहां की फर्मों के ... भारतीय इन्जीनियरों को उनमें काम सिखाने की व्यव... की है। केन्द्रीय जल-विद्युत आयोग के दो अधि... वहां काम सीखने गये थे।

अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग

इस तरह भारत को शिल्पिक और आर्थिक दृ... उन्नत देशों से उदारतापूर्वक सहायता मिलती रहती है... यह सही है कि देश की नदी घाटी योजनाएं अपने सा... के सहारे ही चल सकती हैं और विदेशों से धन के रू... जो सहायता मिलती है वह इन योजनाओं के लि... आवश्यक पूंजी की तुलना में बहुत थोड़ी है। परन्तु ... भी सत्य है कि इस बारे में विदेशों को जो अनुभव है... इन योजनाओं की प्रगति में बहुत सहायक सिद्ध हो ... है। अंतर्राष्ट्रीय सहयोग से पिछड़े देशों की उन्नति ... और वे आगे चलकर अन्य जरूरतमंद देशों को इसी प्र... का सहयोग देने के काबिल हो जायेंगे। इस प्रकार ... दूसरे की सहायता करने से विश्व बन्धुत्व की भावना ... बढ़ावा मिलता है।

"भगीरथ के सौजन्य ...

नया सामयिक साहित्य

(१) अर्थशास्त्र का प्रारम्भिक ज्ञान।

(२) आर्थिक भूगोल का प्रारम्भिक ज्ञान--

दोनों के लेखक:—श्री लालता प्रसाद शुक्ल, प्रकाशक:—इंडस्ट्रियल एण्ड कमर्शियल सर्विस, इलाहाबाद, पृष्ठ संख्या क्रमशः ४०८ और ३५२, मूल्य २.७० और २.२५ रु०।

उपर्युक्त दोनों पुस्तकें उत्तर प्रदेश शिक्षा बोर्ड के, हाई स्कूल के कला के विद्यार्थियों के लिए अर्थशास्त्र के प्रथम और द्वितीय प्रश्न पत्र के निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुसार लिखी गई हैं।

प्रथम पुस्तक के दो भाग हैं। पहले भाग में अर्थशास्त्र के सिद्धांतों का प्रारम्भिक ज्ञान कराया गया है। दूसरे भाग में ग्रामीण समस्याओं और उसके विभिन्न पहलुओं जैसे ग्राम्य ऋण, सहकारिता, कृषि आदि पर १६ अध्यायों में प्रकाश डाला गया है।

दूसरी पुस्तक में भारत के भूगोल का आर्थिक दृष्टि से अध्ययन किया गया है। भारत की प्राकृतिक रचना, जलवायु, वनस्पति, खनिज पदार्थ आदि का भारत के अर्थतंत्र से क्या सम्बन्ध है और किस प्रकार उसको प्रभावित करती है, इसकी विवेचना की गई है। साथ ही भारत की आर्थिक समस्याएं क्या हैं और आर्थिक योजनाओं द्वारा किस प्रकार इन समस्याओं को हल करने का प्रयत्न किया जा रहा है—इसका भी वर्णन किया गया है।

दोनों पुस्तकें विद्यार्थियों के अनुकूल सरल भाषा और बोधगम्य शैली में लिखी गई हैं। प्रत्येक अध्याय के अन्त में अभ्यास के लिए प्रश्न तथा पुस्तकों के अन्त में हाईस्कूल परीक्षा के पिछले ५ वर्षों के प्रश्न पत्र भी विद्यार्थियों की सुविधा के लिए दे दिये गये हैं। इतना होते हुए भी एक अभाव खटकता है। वह यह कि आर्थिक भूगोल के पुस्तक में जहां पर्याप्त चित्र नक्शे आदि दे दिये गये हैं, वहां अर्थशास्त्र की पुस्तक में ऐसे चित्र आंकड़े आदि कम हैं, जो हैं भी वे अनुपयोगी हैं। अर्थशास्त्र के प्रारम्भिक ज्ञान में चित्रों व आंकड़ों आदि से काफी सहायता मिलती है। इनका होना अनिवार्य है।

म० मो० शि

★

स्वदेश—हिन्दी मासिक। वार्षिक मूल्य ८) रुपये एक प्रति ७५ नए पैसे। सम्पादक—स्वदेशाभरण प्रकाशन:—स्वदेश कार्यालय, ५४, हीवेट गेट, इलाहाबाद।

'स्वदेश' मार्च १९५८ से निकलने लगा है। सर्वश्री सुमित्रानन्दन पन्त, वासुदेवशरण अग्रवाल, वृन्दावनलाल वर्मा, हरिभाऊ उपाध्याय, देवेन्द्र सत्यार्थी, प्रभाकर माचवे आदि उच्च कोटि के विद्वानोंके लेख, प्रहसन तथा निबन्ध आदि संकलित हैं।

हिन्दी में मासिक पत्रों की कमी नहीं है, परन्तु अधिकांश पत्र उच्च कोटि के नहीं निकलते। 'स्वदेश' की रचनाओं का स्तर काफी अच्छा है। इसकी विशिष्टता इसकी विविधाता में है। निबन्ध, लोकगीत, प्रहसन, यात्रा, गजल, नीति, उद्धरण, एकांकी तथा कहानी आदि कार्यालय रोचक सामग्री है।

विकास किरण—सम्पादक—दत्ता वामन काले प्रकाशन—खेतान भवन, मिर्जा इस्माइल रोड, जयपुर। वार्षिक मूल्य ८), एक प्रति २५) नए पैसे।

"विकास किरण" जनवरी १९५८ से प्रकाशित होने लगा है। उद्योग, वाणिज्य तथा सहकारिता आदि के सम्बन्ध में विभिन्न समस्याओं पर प्रकाश डालना इसका मुख्य विषय है। विकास सम्बन्धी अनेक विषयों पर भी पूर्ण जानकारी देने का प्रयत्न किया गया है। वर्तमान गतिविधियों का परिचय देते हुए देश की समृद्धि के लिए सहयोगदेने की भी प्रेरणा दी गई है। लेखों का चयन प्रशंसनीय है। पत्र की सफलता के लिए हमारी मंगल कामनाएं।

—रघुराम

मिलिक का बाल साहित्य—श्री सत्यप्रकाश मिलिक अकस्मात् ही बाल साहित्य के लेखक के रूप में हमारे सामने आये हैं। इनकी पुस्तकें विशेष रूप से बालकों के लिए लिखी गई हैं।

हम पहले और अब—में भारत के प्राचीन

आज का अमेरिकन पूंजीवाद

"आजका अमेरिकी पूंजीवाद उस पूंजीवादसे सर्वथा भिन्न है, जिसका साम्यवादियों द्वारा अपने प्रचारमें उल्लेख किया जाता है। यह उस पूंजीवादसे भी सर्वथा भिन्न है, जो पूंजीवादके शुरूमें उसका रूप था। तब स्वामित्व व्यक्तिगत वस्तु थी और निर्णय लोग अपनी इच्छाके कर सकते थे। लोगोंको अधिक समय तक काम करना पड़ता था। और वेतन बहुत कम मिलता था। रोजगारके अवसर भी कम मिलते थे तथा उनके बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता था। एक समय वह भी था, जब उद्योगपति जनताकी तनिक भी परवाह नहीं करते थे। पर अब वे दिन लद गए हैं।

आज प्रबन्धक लोग संचालक मण्डलके प्रति उत्तरदायी हैं और वे जनता के रवैये, कर्मचारियों के अधिकारों तथा उनकी आवश्यकताओं की ओर अधिकाधिक ध्यान देने लगे हैं। जनता की भी इसके अनुकूल प्रतिक्रिया व्यवसायों के एक नए विकास के रूप में हुई है।

स्वामित्व तेजी से बंटता जा रहा है

स्वामित्व तेजी के साथ बंटता जा रहा है। अमेरिकी व्यवसायों में एक तिहाई से अधिक ऐसे हिस्सेदार हैं, जिनकी वार्षिक आय ५ हजार डालर से कम है। इसमें बीमा कम्पनियों में जमा पूंजी तथा पेन्शन फण्ड शामिल नहीं हैं, जिनके द्वारा अधिकांश अमेरिकी सामान्य जन अप्रत्यक्ष रूप से व्यवसायों के स्वामी बने हुए हैं।

"कर सम्बन्धी व्यवस्था से आज के अमेरिकी पूंजीवादकी रूप रेखा प्रकट हो जाती है। इसके अन्तर्गत हजार डालर की आय वाले ४ सदस्यों के एक परिवार से संघीय आय-कर के रूप में केवल १० प्रतिशत, २५ हजार डालर की आय वाले परिवार से २५ प्रतिशत और १ लाख डालर की आय वाले परिवार से आय का आधेसे भी अधिक भाग वसूल किया जाता है। इससे यह भी प्रकट होता है कि ६० प्रतिशत अमेरिकी परिवारों के पास अपने मकान हैं, ७२ प्रतिशत के पास टैलिविजन सैट हैं।

"इन सबमें शायद सब से महत्व पूर्ण बात यह है कि शिक्षा प्राप्त लोगों की संख्या में वृद्धि होती जा रही है, जिससे भविष्य में विस्तृत पैमाने पर अवसर प्राप्ति का मूल आधार स्थापित हो रहा है। १९५५ के बाद के वर्षों में हर वर्ष १९०० की तुलना में १० गुणा अधिक छात्र स्नातकीय उपाधियां प्राप्त कर रहे हैं, जबकि जन-संख्या में दुगने से कुछ ही अधिक वृद्धि हुई।

बहुत से सुधार शेष

यह ठीक है कि जनताकी आम दशा में सुधार करने के लिए अभी बहुत कुछ किया जाना शेष है। जरूरतमंद लोगों के लिए पर्याप्त चिकित्सा व्यवस्था, विश्वविद्यालयों में शिक्षा प्राप्त करने वालों के लिए आर्थिक बाधाओं को दूर करने, मकानों की अच्छी व्यवस्था करने और रोजगार में अधिक स्थिरता लाने की अभी तक आवश्यकता है। सभी लोगों को रोजगार तथा उन्नति सम्बन्धी समान अवसर प्रदान करने में अभी और भी अधिक विस्तार किया जाना आवश्यक है।

(शेष पृष्ठ २८२ पर)

अर्वाचीन इतिहास पर एक सिंहावलोकन किया गया है। इसके पढ़ने से देश का समस्त इतिहास आंखों के आगे आ जाता है। यह अच्छा होता कि यह पुस्तक कुछ बड़े टाइप में प्रकाशित होती और कुछ भाषा को सरल कर दिया जाता। ८७ पृष्ठों की पुस्तिका का मूल्य १।) अधिक है।

★

हमारी योजनाएं—इस पुस्तिका में दोनों पंचवर्षीय योजनाओं का संक्षेप से सार दिया गया है। ७२ पृष्ठों की इस पुस्तिका में प्रथम योजना की सफलता व दूसरी योजना के विविध पहलुओं की जानकारी हो जाती है। पृष्ठ संख्या ७२। मूल्य ७५ नये पैसे।

मन्दिर प्रवेश—दलितों के मन्दिर प्रवेश के समर्थन में यह छोटा सा एकांकी लिखा गया है। इस नाटिका को अच्छी तरह खेला जा सकता है।

सबका बहिरंग आकर्षक है और सबके प्रकाशक दास ब्रादर्स, निकलसन रोड, अम्बाला हैं।

——

सर्वप्रमुख राष्ट्रीय उद्योग रेलवे

उन्नति व प्रगति के कुछ तथ्य

चितरंजन कारखानेकी डायरी

चित्तरंजन के रेल इंजन के कारखाने में दिसम्बर १९५७ के अंत तक यानी उत्पादन शुरू होने के करीब ८ साल के अन्दर यहां ९२५ इंजन बने । २६ जनवरी, १९५० को यह कारखाना चालू हुआ था और ४ साल बाद, ६ जनवरी, १९५४ को यहां से १०० वां इंजन बनकर निकला । इसके बाद उत्पादन तेजी से बढ़ा और ५ फरवरी १९५५ को २०० वां, ३० नवम्बर १९५५ को ३०० वां १२ अगस्त १९५६ को ४०० वां, २५ मार्च, १९५७ को ५०० वां और नवम्बर, १९५७ में ६०० वां इंजन बन कर निकला ।

+ + + +

रेलें कितना कोयला खाती हैं

भारत में जितना कोयला निकाला जाता है, उसका एक तिहाई हमारी रेलों के काम आता है । १९५६-५७ में ४ करोड़ ३ लाख १० हजार टन कोयला निकाला गया, जिसमें से १ करोड़ ३२ लाख टन रेलों में भस्म हुआ । इससे पहले साल ३ करोड़ ८४ लाख ६० हजार टन में से

करोड़ २३ लाख टन कोयला रेलों के हिस्से आया।

\+ + + +

छःगुने मार्ग पर बिजली की रेलें

दूसरी पंचवर्षीय आयोजना में, रेलों के विकास के कामों में बिजली से रेलें चलने की योजना सबसे बड़ी है। क्यों न हो। आखिर आजकल जितने मार्ग में बिजली की रेलें चलती हैं, उसको छःगुना जो बढ़ाना है। इस समय केवल २४०.२४ मील में बिजली की रेलें दौड़ती हैं और दूसरी आयोजना के अन्त में इनका मार्ग १,४३४ मील और बढ़ जायगा।

भारत में सबसे पहली बिजली की रेल ३ फरवरी, १९२५ को चली और तीन साल बाद यानी ८ जनवरी, १९२८ को पुरानी बी. बी. सी. आई. रेलवे पर बिजली की रेलों का पहला मार्ग बना। इसके तीन साल बाद ११ मई, १९३१ को पुरानी साउथ इंडियन रेलवे पर भी बिजली की रेलें चलने लगीं। लेकिन पूर्वी क्षेत्र में बिजली की रेलों का श्रीगणेश काफी समय बाद, १४ दिसम्बर, १९५७ को हावड़ा से हुआ।

फौलाद की सड़क

अब भारत के रेलमार्ग की लम्बाई ३५ हजार मील से ऊपर पहुँच गयी है। एशिया में अब भी हमारी रेलों का पहला और संसार भर में चौथा स्थान है। स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद से देश में ५,०१६.७ मील में रेलें और निकाली गयी हैं।

यात्रा-प्रेमी भारतीय

क्या भारत के लोग बहुत यात्रा करते हैं?

भारत की एक प्रतिशत आबादी, यानी लगभग ३८,०००.०० लोग हर रोज रेल से यात्रा करते हैं। सन् १९५६-५७ में इन लोगों ने जो यात्रा की, उसका औसत हर रोज १२ करोड़ मील रहा। इतने में ४,८०० बार दुनियां की परिक्रमा की जा सकती है।

सन् १९४१-४२ में हर दस लाख आदमियों में से ४,३६० लोग यात्रा करते थे। सन् १९५६-५७ में यह अनुपात ढाई गुना बढ़ा, यानी हर दस लाख में से १०,६५० लोग प्रतिदिन रेल से यात्रा करने लगे।

\+ + + +

रेल गाड़ियां कितना काम देती हैं

भारत की रेलगाड़ियों से कितना अधिक काम लिया जाता है?

सन् १९५६-५७ में मुसाफिर गाड़ियों ने हर रोज ३,२५,००० मील और मालगाड़ियों ने हर रोज २,३७,००० मील सफर किया। दूसरे शब्दों में भारत की रेलगाड़ियां प्रतिदिन इतना चलीं, जिससे संसार की हर रोज २५ परिक्रमाएं हो जातीं।

\+ + + +

रेल यात्री और मुनाफा

भारत की रेलों ने १९५६-५७ में एक यात्री को एक मील ले जाने पर औसतन ५.३४ पाइयां कमायीं, जबकि एक टन माल एक मील तक ढोने पर उन्हें ११.३ पाइयां यानी दुगने से भी अधिक रकम मिली।

सन् १९५६-५७ में रेलों को जो आमदनी हुई, उसका एक-तिहाई हिस्सा १ अरब, ३८ करोड़, २० लाख यात्रियों
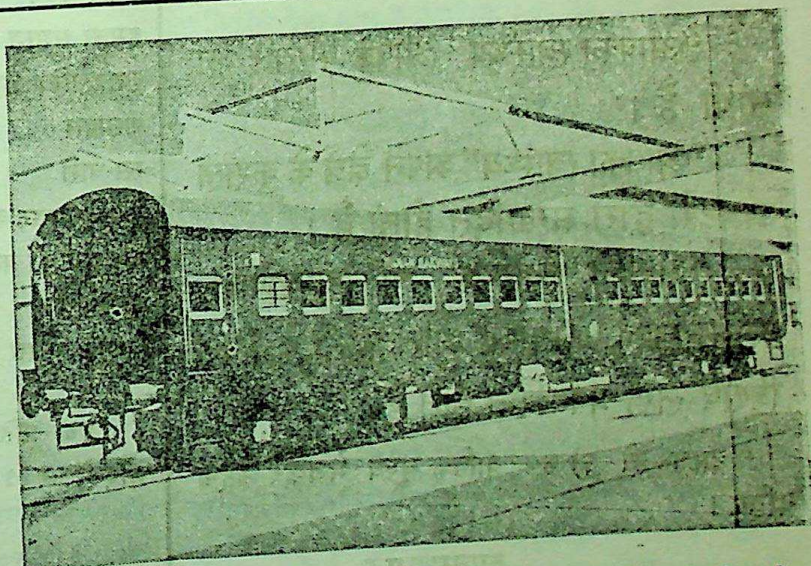
इंटेग्रल कोच फैक्टरी द्वारा निर्मित एक तृतीय श्रेणी का इस्पात निर्मित कोच

को ढोने पर मिला। रेलों को माल की ढुलाई से कुल आमदनी का ५७.३७ प्रतिशत हिस्सा मिला।

सन् १९५६-५७ में मुसाफिर गाड़ियां कुल ११ करोड़ ९० लाख मील चलीं, जबकि मालगाड़ियां कुल ८ करोड़ ७० लाख मील चलीं।

इसके बावजूद मुसाफिर गड़ियों की अपेक्षा, रेल विभाग को मालगाड़ियों से ८४ करोड़ रु० की अधिक आमदनी हुई।

प्रति दिन ७,००० रेलें

देश में हर रोज लगभग ७,००० मुसाफिर तथा माल गाड़ियां औसतन ५,६२,००० मील चलती हैं। इतने में दिल्ली से मद्रास तक ४ सौ बार यात्रा की जा सकती है।

रेलों पर १९५६-५७ में जितना बोझ पड़ा, उतना पहले कभी नहीं पड़ा था।

——

अर्थ-वृत्त-चयन—

मांसाहार बहुत मंहगा पड़ता है

सम्पदा अर्थशास्त्र की पत्रिका है, इसलिए मांसाहार के नैतिक और धार्मिक दृष्टि से औचित्य व अनौचित्य के विषय पर हम कुछ नहीं कहना चाहते। किन्तु निरामिष भोजियों के अन्तर्राष्ट्रीय संघ ने स्वास्थ्य सम्बन्धी दृष्टिकोण के अतिरिक्त आर्थिक दृष्टि से भी मांसाहार के प्रश्न पर विचार किया है। इसके अनुसार मांसाहार अन्नाहार की अपेक्षा बहुत अधिक खर्चीला तथा देश की अर्थ व्यवस्था को नुक्सान पहुँचाने वाला है। इस संघ ने अपने मत की पुष्टि में जो संख्याएं दी हैं, वे बहुत मनोरंजक हैं। यद्यपि वे संख्याएं भारत में भिन्न हो सकती हैं, किन्तु बहुत संभवतः उनका अनुपात भारत में भिन्न नहीं होगा।

मांस के लिए अन्न की अपेक्षा कम जमीन की अधिक आवश्यकता है। इसके परिणाम स्वरूप हम कम अन्न उत्पादन कर सकते हैं। मांस के लिए पैसा अधिक खर्च होता है जबकि इसमें पुष्टिकारक तत्व कम हैं। वास्तवमें शारीरिक रचना की दृष्टि से भी मनुष्य फलाहारी है, न कि मांसाहारी। यह खतरनाक चीज है। भोजनके अधिकांश विष इसमें विद्यमान होते हैं। इसे प्राप्त करना ही कठिन व हिंसा पूर्ण है। इसे दूसरी जगह भेजना, जमा करना तथा वितरण करना भी बहुत कठिन है। इसलिए मांसाहार का मतलब है जमीन, समय, सुविधा तथा पैसे का महान् अपव्यय। इनकी तुलना कीजिए—

प्रति टन का मूल्य

गेहूं	३१ पौ०	गो मांस	१३३ पौ०
ओट	२६ पौ०	भेड़ का मांस	३२२ पौ०
जव	२४ पौ०	सुअर का मांस	३०३ पौ०

उपर्युक्त मूल्य ब्रिटिश सरकार द्वारा १९५५ में किसानों से खरीद के लिए निश्चित किये गए थे। इन पदार्थों की भोजन की दृष्टि से उपयोगिता मूल्यों के बिलकुल विपरीत है। इंग्लैण्ड में मांस तथा शाकाहार सम्बन्धी खाद्य पदार्थों के उत्पादन के लिए आधुनिक वैज्ञानिक साधन विद्यमान हैं। इसलिए यह तुलना मूल्यों के वास्तविक सम्बन्ध को बतलाती है।

खाद्य पदार्थों की तुलनात्मक उपयोगिता

खाद्य पदार्थ	पानी,	प्रोटीन	चर्बी	कैलरी	कारबोनेट
पनीर	३७	२५	३४	४१०	—
मटर	४	२८	४६	५८४	७.७
बादाम	५	२०	५३	५७६	३.६
मसूर की दाल	६	२६	—	२८७	४८.०
सोयाबीन	७	४०	२३	४२६	१३.३
भुना हुआ मांस	६५	१७	१६	२१२	—
भेड़ का मांस	६४	१६	१६	२३५	—

ये आंकड़े ब्रिटिश सरकार के एक कार्यालय से प्राप्त किये गए हैं। इन अंकों से यह स्पष्ट है कि अन्न की अपेक्षा एक समान वजन के मांस पदार्थ पुष्टि के लिए निम्नतर श्रेणी के हैं और इस प्रकार इस पर खर्च किया अधिकांश पैसा मांस के कलुषित पानी को ही खरीदने में व्यर्थ ही जाता है।

आवश्यक भूमि

आबादी की निरन्तर वृद्धिने मनुष्य जाति के भविष्य को खतरे में डाल दिया है। इस समय हिसाब लगाया गया है कि दुनियां में प्रति व्यक्ति के पीछे एक एकड़ उपजाऊ जमीन है जो सब तरह के खाद्य पदार्थों के उत्पादन के लिए उपलब्ध है।

एक शाकाहारी के लिए .५ या .६ एकड़ जमीन की आवश्यकता है, जिसमें दूध, मक्खन, उत्पादनका स्थान भी शामिल है।

एक मांसाहारी के लिए १.६३ एकड़ जमीन की आवश्यकता है, जिसमें से १.३ एकड़ जमीन सिर्फ मांस पदार्थों के लिए चाहिए।

कम उत्पादन वाले देश में ये आंकड़े कुछ ऊंचे होंगे। जब हम मांस तथा शाक खाद्य पदार्थों के औसत प्रति एकड़ उत्पादन की तुलना करते हैं तो स्पष्ट होता है कि ये आंकड़े बहुत कम परिवर्तन शील हैं। जमीन के उपजाऊपन, जल-वायु तथा कृषि की पद्धति आदि से होने वाले परिवर्तनों की इन अंकों में चिन्ता नहीं की।

प्रति एकड़ खाद्य पदार्थों का वार्षिक उत्पादन

कृषि खाद्य पदार्थ	
गेहूँ, जौ, ओट	२,००० से २,५०० पौं०
सीम, मक्की,	३ से ४,००० ,,
चावल	४ से ५,००० ,,
आलू	२०,००० ,,
गाजर	२५,००० ,,
शलगम	३०,००० ,,
मांसाहार पदार्थ	
गो मांस	१६८ पौं०
भेड़ तथा भेड़ के बच्चे का मांस	२२८ ,,
सुवर का सब तरह का मांस	३०० ,,
अंडे (मुर्गी तथा दूसरे पक्षी)	४०० ,,

कम्युनिस्ट पार्टी का नया संविधान

पिछले दिनों अमृतसर में कम्युनिस्ट पार्टीके एक सम्मेलन में पार्टी का संविधान बदला गया था। उसकी प्रधान विशेषता यह थी कि उसका रूप कुछ जनतांत्रिक कर दिया, विरोधी राजनैतिक दलों की स्थिति और सत्ता को भी स्वीकार किया गया और समाजवाद की स्थापना के लिए भी शान्तिपूर्ण तथा लोकतन्त्रीय साधनों को अपनाना स्वीकृत हुआ।

इस सम्मेलनके निश्चयों पर प्रायः सभी अखबारों व नेताओं ने अपने विचार प्रकट किए हैं। यहां केवल दो मत दिए जाते हैं। पं० जवाहरलाल नेहरू ने कहा है—

पं० नेहरू

मुझे खुशी है कि साम्यवादी दल ने अपने अमृतसर अधिवेशन में कुछ हद तक एक ऐसी दिशा की ओर मोड़ लिया है, जिसे मैं भारतीय दृष्टि से युक्तियुक्त मार्ग कह सकता हूँ। यदि साम्यवादी लोग भारत की दृष्टि सोचने लगें तो वे उस मार्ग पर और भी अधिक अग्र होते जायंगे। वास्तव में यदि साम्यवादी दल और अधिक विचार करेगा तो वह अन्तर्राष्ट्रीय ढंग का सा वादी दल रह ही नहीं जाएगा।

साम्यवादी लोगों का मन इस हद तक नक्काल गया है कि उसमें मौलिक चिन्तन रहा ही नहीं उनके सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व आदि के नारे पुराने पड़ गए हैं और समयानुकूल नहीं रहे। हमें परि देशों, सोवियत रूस, चीन तथा अन्य देशों से, जो निक और टैकिनीकल दृष्टि से आगे बढ़े हुए हैं, सी है, किन्तु जिस क्षण हम यह भूल जायंगे कि हमारी भारत में हैं और जिस क्षण हम यह सोचने लगेंगे हमें दूसरों का पिछलग्गू बनना है, उसी क्षण अपनी सृजनात्मक शक्ति खो देंगे। मुझे अपने साम्यवादी मि की एक चीज नापसन्द है और वह यह है कि किसी अन्य देश द्वारा की गई किसी भी चीज को दम खुले मुंह स्वीकार कर लेने की प्रवृति है।

पश्चिमी जर्मनी एक पूंजीवादी देश है और सो यत रूस साम्यवादी, किन्तु दोनों ने ही युद्ध जन्य वि से अपना बहुत बड़े पैमाने पर उद्धार कर लिया इसका कारण यह है कि दोनों देशों में प्रशिक्षित गुणी आदमी हैं। इसलिए अन्ततः महत्व इस या नीतिके बारे में बड़े बड़े नारे लगाने का नहीं है। प्रशिक्षित और गुणी नर-नारियों और उनकी कठोर करने की क्षमता का है।

श्री श्रीमन्नारायण

कांग्रेसके मुख्य मंत्री श्री श्रीमन्नारायण लिखते हैं

भारत के लोग अपनी प्राचीन विरासत और परम्प के मुताबिक यह विश्वास नहीं करते कि नफरत, हिंसा संघर्षों के जरिए स्थायी नतीजे हासिल हो सकते हैं। की विचारधारा जरूरी तौर पर वस्तु के ऊपर आत्म प्रभुत्व की धारणा पर आधारित है, जबकि साम्यवाद मानता है कि खुद दिमाग भी भौतिक वातावरण की है। इसी से गांधी जी को यह विश्वास हो गया था कम्यूनिस्ट विचारधारा भारत की मिट्टी में कामया

साथ पनप नहीं सकती। यह विचारधारा हमारे राष्ट्र की अन्दरूनी प्रतिभा के लिए परायी है।

साम्यवाद बुनियादी तौर पर लोकतन्त्र और सर्वोदय के बुनियादी सिद्धान्तों का विरोधी है। कम्युनिस्ट पार्टी अपने मक़सदों को और अपने संविधान की भूमिका को तब्दील कर सकती है। लेकिन कोई भी उन पर संजीदगी से तब तक यकीन नहीं कर सकता, जब तक कि वे मार्क्स-वादी तरीकों और ढंगों में अपने विश्वास का परित्याग नहीं कर देते।

बेशक कार्ल मार्क्स एक महान विचारक थे। लेकिन मार्क्स भारत और दूसरे देशों की कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों की तरह मार्क्सवादी नहीं थे। उनका सिद्धान्त औद्योगिक क्रान्ति के बाद यूरोप में फैली हुई सामाजिक और आर्थिक दशाओं पर आधारित था। वे अच्छी तरह उन दूरगामी परिवर्तनों की कल्पना नहीं कर सके थे, जो कि पूंजीवादी देशों के आर्थिक ढांचे में धीरे धीरे होने वाले थे। द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद का मार्क्सवादी दर्शन रूस और यूरोप के दूसरे हिस्सों के तत्कालीन दर्शनों पर आधारित था। लेकिन सभी आर्थिक आधुनिक स्थितियों की व्याख्या मार्क्सवादी विचारों के रूप में, जो कि सौ वर्ष पहले लिखे गये थे, करने की कोशिश करना बेवकूफी होगी। पूंजीवाद और स्वेच्छाचारिता की विचारधारा की तरह ही मार्क्सवाद भी पुराना और बेकार हो चुका है और उसमें क्रांतिकारी तब्दीलियों की जरूरत है। इस समय वर्ग-संघर्ष की धारणा की जगह सहकारी जीवन और कोशिशों का आदर्श कायम होता जा रहा है। जमींदारों से जमीन छीनने के लिए हत्याओं और खूनी आन्दोलनों की जगह अब हम भूदान और ग्रामदान के रूप में एक महान् अहिंसक क्रान्ति का शानदार दृश्य देख रहे हैं। हिंसा को एक सामाजिक आर्थिक क्रान्ति की "धाय" मानने की बजाय, आचार्य विनोबा भावे हृदय और मस्तिष्क के परिवर्तन को सही माने में किसी भी आर्थिक क्रान्ति का आधार मानते हैं। हिंसा और अहिंसा के बीच यह बुनियादी फर्क सिर्फ सैद्धांतिक बात नहीं है। जैसा कि गांधी जी ने कहा है, यह बुनियादी फर्क "मार्क्सवादी सिद्धांत का मूलोच्छेद कर देता है।"

——

चीन के देहातों की उपेक्षा

चीनी समाचार-पत्रों के एक विद्यार्थी ने २२ मार्च १९५८ के न्यू स्टेट्स मैन में यह लिखा है कि कम्युनिस्ट चीन में भी औद्योगिक मशीनों को अधिक से अधिक प्रोत्साहन और महत्व देने के फलस्वरूप किसानों और देहातों की उपेक्षा हुई है और वे काफी हद तक भुला दिये गये हैं। वहां पर आजकल कारखानों मजदूर को ही अधिक प्रतिष्ठा प्राप्त है। पिछले साल चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति ने इस बात को मंजूर किया था कि देहातों पर, औद्योगीकरण पर ज्यादा जोर देने का बुरा प्रभाव पड़ा है। कृषि क्षेत्र पर ध्यान न देने के कारण दूसरी गम्भीर समस्यायें, जैसे ज्यादा से ज्यादा संख्या में देहाती लोगों का नगरों की ओर प्रवास, पैदा हो गयी है। चीन की सरकार गांवों से इस प्रवास को किसी तरह रोकने की कोशिश कर रही है। गांव के लोगों के शहरों की ओर प्रवास को रोकने की कुंजी यह है कि किसान और आम जनता को विचारधारा सम्बन्धी अधिक से अधिक शिक्षा दी जाय। केन्द्रीय और राज्य समितियों ने अभी हाल में इस विषय पर एक आदेश पत्र जारी किया है जिसके फलस्वरूप ५ प्रांतों में, जहां पर कि ग्रामीण प्रवास की समस्या काफी तीव्र है, रेलवे लाइन से लगे हुए क्षेत्रों पर प्रतिरोधक अधिकारी नियुक्त कर दिये गए हैं और स्थानीय अधिकारियों को भी इसलिए नियुक्त कर दिया गया है कि वे किसानों को उनके घर वापस भेज सकें। सभी कम्युनिस्ट देशों ने अविवेकपूर्ण औद्योगीकरण को आर्थिक विकास की कुंजी बनाई है। किन्तु चीन जैसे देश में, जहां पर कि खेती सबसे बड़ा आर्थिक क्षेत्र है, यदि किसानों की ओर पर्याप्त ध्यान न दिया गया, तो आखिर में चलकर, उससे स्वयं औद्योगिक विकास खत्म हो जाएगा। (आर्थिक समीक्षा से)

—

कुछ ज्ञातव्य अंक

विश्व की जानकारी

सं०	वस्तु		१९५२	१९५३	१९५४	१९५५	१९५६	१९५ [illegible] जन-सि[illegible]
१.	आबादी	दस लाखों में	२५६०	२६०३	२६४७	२६९१	२७३४	
२.	कृषि उत्पादन	१९३४-३८=१००	१२५	.१३०	१३१	१३५	१३८	
३.	खाद्य पदार्थों का उत्पादन	,,	१२६	१३२	१३२	१३५	१३९	
४.	औद्योगिक उत्पादन	१९५३=१००	९४	१००	१००	१११	११६	१२[illegible]
५.	विश्व के आयात	१००००— अमेरिकन डालर	७९.२	७५.८	७९.०	८८.०	९६.९	७[illegible]
६.	,, निर्यात	,,	७२.३	७३ ३	७६.१	८२.८	९१.९	७[illegible]
७.	आयात मात्रा	१९५३=१००	९४	१००	१०५	११५	१२४	१३[illegible]
८.	आयात का मूल्य	,,	१०५	१००	९९	९९	१०१	१०[illegible]
९.	उपयोग में बस व कारें	दस लाखों में	५८.२	६२ ६	६७.०	७२.९	७७.८	
१०.	व्यापारी गाड़ियां	,,	१७.२	१९.४	१९.०	२०.२	२१.३	
११.	रेल्वे माल परिवहन	१०००००००००० टन किलोमीटर	२१८८	२२४९	२२४१	२५१५	२७१३	

अन्न का उत्पादन—१९५६-५७ में अन्नों का उत्पादन—दालों को भी गिन कर—गत वर्ष की अपेक्षा ५.४ प्रतिशत अधिक रहा। देश के कुछ भागों में खरीफ की फसल बिगड़ जाने पर भी समस्त उत्पादन में वृद्धि हुई।

भारत में अन्नों का उत्पादन

(परिमाण लाख टनों में)

	५५-५६	५६-५७	५६-५७ में ५५-५६ से अधिकता का प्रतिशत
चावल	२६८.५	२८१.४	४.८
गेहूं	८५.७	९०.७	५.८
अन्य अनाज	१९०.४	२००.४	५.३
सब अनाज	५४४.६	५७२.५	५.०
दालें (चनों को भी गिनकर)	१०८.३	११४.४	५.६
समस्त अन्न	६५२.९	६८६.९	५.४

अन्नों का आयात

आयात—इस वर्ष १६२.२ करोड़ मूल्य का ३[illegible] लाख टन अनाज विदेशों से मंगवाया गया। इसकी तु[illegible] में, १९५६ में ५६.३ करोड़ रु० मूल्य का १४.२ लाख [illegible] मंगवाया गया था।

(परिमाण लाख टनों

	१९५७	१९५६
गेहूँ	२=.४	१०.९
चावल	७.४	३.३
योग	३५.८	१४.२

इस वर्ष इतना अधिक आयात करने में सुगमता [illegible] कारण हुई कि अमरीका की सरकार ने अपने सहा[illegible] कार्यक्रम के अन्तर्गत बड़ी मात्रा में सहायता दी। [illegible] भी कई देशों ने सहायता दी। २८.४ लाख टन गेहूँ [illegible]

लगभग २६.७ लाख टन तो अमरीका के पी० एल० ४८० और पी० एल० ६६५ कार्यक्रमों के अन्तर्गत आया और ०.११ लाख टन कैनाडा से आया, जो कि उससे कोलम्बो योजना के अन्तर्गत प्राप्तव्य ७० लाख डालर मूल्य के १.१५ लाख टन का एक भाग था। शेष १.६ लाख टन गेहूं आस्ट्रेलिया से खरीदा गया। चावल लगभग १.६४ लाख टन तो अमरीका से पी० एल० ४८० कार्यक्रम के अन्तर्गत आया, ४.७६ लाख टन बर्मा से आया जो कि उसके साथ किए हुए पांच वर्ष में २० लाख टन चावल खरीद लेने के समझौते का एक भाग था, ०.१४ लाख टन चीन से लिया गया, ०.३३ लाख टन रूस-सरकार की मारफत बर्मा से मिला, ०.१२ लाख टन पाकिस्तान से ऋण की अदायगी में वसूल हुआ, और लगभग ७ हजार टन उत्तरी विएतनाम से खरीदा गया।

चीनी का तल-पट

(परिमाण हजार टनों में)

	१९५५-५६ (संशोधित)	१९५६-५७
पहली नवम्बर को मौजूद माल	५४३	५३२
मौसम में उत्पादन	१,८६२	२,०२६
आयात	६५	—
कच्ची खांड साफ करके चीनी बनाई गई	३	—
उपलब्ध माल का योग	२४७३	२५९१
३१ अक्तूबर को वर्ष की समाप्ति पर मौजूद	५३२	४३५
भर का उठाव	१,९४१	२१२१

इस तालिका से प्रकट है कि १९५६-५७ में सब मिलाकर, १९५५-५६ की अपेक्षा, लगभग एक लाख टन माल अधिक उपलब्ध हो गया था।

थोक मूल्यों के सूचक अंक

अगस्त ५६ में सूचक अंक चरम सीमा पर बढ़ कर कुछ घटने शुरू हुए हैं।

(१९५२-५३ के मूल्यों को १०० मानकर)

वर्ष और माल	चावल	गेहूं	ज्वार	सब अनाज	दालें
जुलाई	१०८	८९	१२८	१०५	८७
अगस्त	१११	८९	१२२	१०६	८७
सितम्बर	१०८	८७	११२	१०३	८३
अक्टूबर	१०७	८८	११३	१०२	८३
नवम्बर	१०७	८७	११५	१०२	८३
दिसम्बर	१०२	८६	१०९	९८	८०
१९५८					
जनवरी	१०१	८६	१०३	९७	८०

आर्थिक समानता

आर्थिक समानता के लिए काम करने का मतलब है–पूंजी और मजदूरों के बीच के झगड़ों को हमेशा के लिए मिटा देना।……अगर धनवान लोग अपने धन को और उसके कारण मिलने वाली सत्ता को खुद राजी-खुशी से छोड़कर और सब के कल्याण के लिए सब के साथ मिलकर बरतने को तय्यार न होंगे तो यह तय समझिए कि हमारे मुल्क में हिंसक और खूंखार क्रान्ति हुए बिना नहीं रहेगी।

— म० गांधी

(पृष्ठ २५८ का शेष)

गया। नमक, मोटर, ट्रेक्टर, इलैक्ट्रिक इन्जीनियरिंग, मशीन टूल्स, भारी रासायनिक पदार्थ, खाद, ऊनी-सूती वस्त्र उद्योग, सीमेंट, शक्कर, कागज खनिज पदार्थ, रक्षा से सम्बन्ध रखने वाले उद्योग, हवाई और समुद्री यातायात, अलोह धातु आदि उद्योगों का समावेश इसी श्रेणी में होता है। (४) चौथी श्रेणी में बाकी के सब उद्योग शामिल थे और व्यक्तिगत उत्पादन के लिए इनमें पूरी स्वतन्त्रता दी गई, परन्तु राज्य भी इस क्षेत्र में अधिकाधिक भाग ले सकेगा और यदि उद्योग-धंधों की भावी उन्नति के लिए आवश्यक मालूम पड़ा तो राज्य को हस्तक्षेप करने में भी कोई संकोच नहीं होगा। (क्रमशः)

सरकारी कर्मचारी व मैनेजर

शुरू में सारे मनुष्य श्रमजीवी थे। सब लोग श्रम द्वारा उत्पादन करके अपना गुजारा करने के साथ-साथ मिल-जुल कर अपनी व्यवस्था कर लेते थे। समाज छोटे-छोटे झुंडों में बंटा हुआ था। सहकार के आधार पर जिन्दगी चलती रहने के कारण सामाजिक समस्या में जटिलता नहीं थी, तो यह तरीका ठीक से चल जाता था। लेकिन प्रतिद्वन्द्विता के अविर्भाव से वह मर्यादित रहे और समय-समय पर उसमें से निकली हिंसा नियंत्रित रहे, इसलिए राज्य की सृष्टि हुई। राज्य की सृष्टि के साथ ही अनुत्पादक उपभोक्ता के रूप में एक वर्ग का जन्म हुआ और वह बढ़ता गया। पहले राज्य का काम था : "दुष्ट का दमन और शिष्ट का पालन।" फिर इतनी तादाद में राज्यकर्ता थे, जितने उस काम के लिए आवश्यक थे। लेकिन लोक-

केवल ५ लाख परिवार

"...ग्रामदान के कारण मेरा काम अब बहुत सहज हो गया है, पांच लाख देहातों के करोड़ों परिवारों का विचार करने के स्थान पर मुझे अब पांच लाख परिवारों का ही विचार करने की आवश्यकता है, क्योंकि ५ लाख ग्रामदान याने ५ लाख परिवार। ग्रामदान-आन्दोलन की ओर मैं बड़ी आशा और सूक्ष्म दृष्टि से देख रहा हूँ।

—प्रो० महालनोबिस (प्रख्यात अंक-शास्त्रज्ञ)

तंत्र के युग में राज्य का कर्म-क्षेत्र बढ़ता गया और आज जन-कल्याणकारी राज्यवाद के नाम से सर्वव्यापी होता गया। फलस्वरूप समाज में रहने वाला एक और समाज की व्यवस्था करने वाला दूसरा वर्ग हो गया। इसके नतीजे से दुनिया के सामने एक विराट नौकरशाही की फौज खड़ी हो गयी, जो कहने को उत्पादक-वर्ग की सेवक है, लेकिन वस्तुतः वह वर्ग मालिक बन गया है। इतना ही नहीं, बल्कि उत्पादक-वर्ग के उत्पादन का मुख्य हिस्सा यही उपभोग कर लेते हैं। दूसरी तरफ वैज्ञानिक प्रगति के साथ-साथ केन्द्रीय उत्पादन-पद्धति बढ़ी, उसमें से व्यापार बढ़ा और इसके फलस्वरूप

सर्वोदय के लक्षण

"सबै भूमि गोपाल की।
घर घर चरखा चालै।
गांव गांव सुथरा हो।
झगड़ा नहीं, व्यसन नहीं।
सब मिलकर एक परिवार हो।
मुख में है नाम, हाथ में रे काम।
यह है सर्वोदय का सच्चा नाम।"

—विनोबा

समाज में जन-जीवन की आवश्यकता की पूर्ति के सिलसिले में एक दूसरी जाति अनुत्पादक उपभोक्ता वर्ग की सृ[illegible] हुई। इस प्रकार यद्यपि मनुष्य ने राजा और पूंजीपति [illegible] समाप्त किया, लेकिन राज्यवाद और पूंजीवाद के जमाने में मैनेजर रूपी बुद्धिजीवी और उत्पादक-रूपी श्रमजीवी, [illegible] दो वर्ग खड़े हो गये हैं। प्रकृति का नियम है कि जि[illegible] चीज का जन्म होगा, उसका विकास होता रहेगा—जब त[illegible] कोई शक्ति उनको न रोके। तो, आज मैनेजरवाद [illegible] निरन्तर विकास ही होता चला जा रहा है। सत्ता, उद्यो[illegible] तथा व्यवसाय के क्षेत्र बढ़ते चले जा रहे हैं और [illegible] त्रिधारा विकास के नीचे उत्पादक-वर्ग निरन्तर संकुचि[illegible] और निष्पेषित होता चला जा रहा है। यही है आज [illegible] वर्ग-विषमता का स्वरूप। इसी के निराकरण में आपको वर्ग-परिवर्तन की प्रक्रिया ढूंढनी होगी।

वर्ग-परिवर्तन के माने यह नहीं है कि श्रमजीवी आ[illegible] जहां है, वहीं रहे और बुद्धिजीवी उनकी समान भूमिका पर पहुँच जाय; बल्कि वर्ग-परिवर्तन की क्रांति सारे समाज के लिए है, किसी एक वर्ग के लिए नहीं। वर्ग-हीन समाज का मनुष्य न आज का श्रमजीवी रहेगा और न आज का बुद्धिजीवी ही। वह एक बुद्धिपूर्ण सांस्कृतिक श्रमिक होगा। इसलिए यह आवश्यक है कि आज के बुद्धिजीवी जीवन में श्रम की साधना में लगें और श्रमजीवी को बौद्धिक और सांस्कृतिक विकास का अवसर मिले।

— धीरेन्द्र मजूमदार

विदेशी विनिमय और विकास

(श्री शांतिप्रसाद जैन)

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अभी तीन वर्ष शेष हैं। हमें अपना अंतिम लक्ष्य प्राप्त करना है। हमें समझ लेना चाहिये कि हमारा विकास कार्यक्रम अच्छी खासी विदेशी सहायता के बिना पुरा नहीं हो सकता। हमारे देश के कुछ वर्गों की धारणा है कि अब विदेशी सहायता से भारी विकास व्यय करना अपनी तीसरी योजना को गिरवी रखना है। किन्तु विदेशी सहायता से हमारे विकास कार्यक्रम को अधिक तेजी से आगे बढ़ाने में वास्तव में कोई हानि नहीं है। यदि प्राप्त किया हुआ विदेशी विनिमय भारतीय रुपये के निर्मित ऋण के मिश्रण के साथ भी विकास कार्यो में लगाया जाय तो भी ऐसा विकास स्वयमेव मुद्रास्फीति को रोकने वाला कदम होगा।

विदेशी पूंजी किसी भी रूप में आवे, हमारे विकास कार्यक्रम की पूर्ति के लिए उसका उपयोग हमारे देश के अन्दर से आवश्यक धन पाने की हमारी योग्यता से सम्बन्धित है।

कृषि और उद्योग के लिए सहायता

इस प्रकार समस्या की मूल पहेली आंतरिक साधन, और बढ़ी हुई राष्ट्रीय आय में उपभोग तथा बचत के मध्य महत्वपूर्ण सन्तुलन स्थापित करना है।

यद्यपि कृषि और औद्योगिक उत्पादन पिछले वर्ष अधिक रहा है, तथापि वह दुर्बलता के लक्षण दिखा रहा है। इन वर्षों में ग्रामीण ऋण का विस्तार अच्छा रहा है, किन्तु बढ़े हुए उत्पादन के लिए कृषक की आवश्यकताओं पर विचार करते हुए ग्रामीण ऋण विस्तार के लिए प्रयत्न बढ़ाने की अधिक आवश्यकता है। व्यापारिक बैंकों की सेवाओं का इस क्षेत्र में लाभप्रद उपयोग किया जा सकता है। इससे व्यापारिक बैंकों को भी ग्रामीण क्षेत्रों में ब्रांच बैंकिंग में सहायता मिलेगी।

उद्योग द्वारा भूत काल में एकत्रित किये गये आर्थिक साधन अधिकतर समाप्त हो चुके हैं। भारी करों ने चालू लाभ से पर्याप्त धन प्राप्त करने की उनकी क्षमता को भी प्रभावित किया है। प्राप्त होने वाली विदेशी पूंजी के दक्ष और प्रभाव पूर्ण उपयोग के लिए आवश्यक भारतीय रुपये की पूंजी को भी ऊंचा उठाना होगा। आशा है, रिफाइनेंस कार्पोरेशन कुछ साधनों के साथ कुछ महीनों में अपना कार्य प्रारम्भ कर देगा। ये विनियोग-निगम कुछ सीमा तक ही उद्योग को ऋण दे सकते हैं, पूरी आवश्यकता की पूर्ति के लिए नहीं। आर्थिक अधिकारियों को विकास के लिए आंतरिक साधनों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कोई व्यवस्था अवश्य करनी चाहिए। इसके लिए व्यक्तिशः अथवा बैंकों की संस्था के द्वारा कमर्शियल बैंकों की सेवाओं का उपयोग किया जा सकता है। हमारी आर्थिक समस्याओं के इस मूलभूत रूप को पूर्णतः समझ कर विशाल दृष्टिकोण से श्री आयंगार ऐसी नीति को जन्म देने में योग देंगे, जो हमारे अर्थतंत्र को सुदृढ़ कर सके, ऐसा मुझे विश्वास है।

योजना के लिए प्रयत्न और करनीति

श्री नेहरू ने अपने बजट भाषण में कहा था, "जिस संकट में से हम गुजर रहे हैं, वह विकास का संकट है, साधनों का संकट है। हमें चाहिए कि हम अधिक उत्पादन करें और योजना की पूर्ति के लिए साधन जुटाने के हेतु अधिक बचत करें।" जनता भी योजना की पूर्ति के लिए चिंतित है। स्वभावतः योजना की सफलता विकास में सहायक परिस्थितियों के निर्माण पर और ऐसी नीतियों तथा शक्तियों से बचने पर निर्भर करती है जो हमारे लक्ष्यों की प्राप्ति के प्रयत्नों को निर्बल करने वाली हों। इस माप दंड से हमें सरकारी कर-नीति और अन्य नीतियों का मूल्यांकन करना चाहिए।

यह ख्याल किया गया था कि योजना व्यय को पूरा करने के लिए राज्य जो नये कर लगायेंगे, उनके परिणाम-स्वरूप ८०० करोड़ रु० विकास कार्यों के लिए बच

जायगा। इसमें सन्देह नहीं कि कर बहुत लगाये गये और आमदनी भी बढ़ी, किन्तु विकास भिन्न कार्यों में वह रुपया खर्च हो रहा है। ११३० करोड़ रु० वार्षिक अनुमान व्यय था किन्तु १९५६-५७, १९५७-५८ और १९५९ में ये संख्याएं—११२६, १३९० और १५०० करोड़ रु० तक जा पहुँची हैं। वस्तुतः योजना के अधीन विकास के लिए लगाये साधनों के हिसाब को केन्द्र और राज्यों दोनों ने अत्यधिक बढ़े हुए विकास भिन्न और योजनेतर व्ययों ने उलट दिया है। राज्य निरन्तर घाटे के बजट दिखा रहे हैं। केन्द्र ने निधि की खोज में धड़ाधड़ कर लगाने आरम्भ कर दिये हैं, जिसने योजना प्रयत्नों में उत्तेजन या सहायता दिये बिना पूंजी लगाते रहने की क्षमता और पहल को नष्ट कर दिया है। इसने अनेक समस्याओं को उत्पन्न कर दिया है, जो विशेषतः बचत के परिमाण पर प्रभाव डालती हैं और फलस्वरूप प्रजा की बचत की मनोवृत्ति पर, जो योजना की सफल कार्यान्विति के लिए विशेष महत्त्व रखती है। सरकारी सेक्योरिटियों का मूल्य पिछले अनेक वर्षों में निम्नतम धरातल तक गिर गया है। प्रिफ्रेंस शेयरों और साधारण शेयरों में भी तेजी से गिरावट आई है।

नीचे की तालिका से शेयरों के मूल्यों में गिरावट का अन्दाजा हो जायगा।

सप्ताहों का औसत १९४९-५०=१००

वर्ष	सेक्योरिटी मूल्य		प्रतिशत वृद्धि या कमी	
	सरकारी सेक्योरिटी	प्रेफेरेन्स शेयर	सरकारी सेक्योरिटी	प्रेफेरेंस शेयर
१९५५	९०.८	८७.७	०.४४	०६८
१९५६	९०.८	८४.६	—	३.६०
१९५७	८९.५	७६.७	१.५५	१५.५९

स्पष्ट है कि जनता को बचत के लिए तभी प्रेरित किया जा सकता है, जबकि उसे यह विश्वास दिलाया जा सके कि उसकी बचत का मूल्य बढ़ेगा, गिरेगा नहीं।

सरकार और योजना आयोग को योजना की पूर्ति पर पड़ने वाले गत वर्ष की कर नीति के प्रभाव का अध्ययन करना चाहिये और यदि उसे हानिकारक पाया जाय तो राष्ट्रीय हित में उसमें सुधार करना चाहिए या उसे बदल देना चाहिए।*

* पं० ने० बैंक के अध्यक्षीय भाषण से।

पंजाब नेशनल बैंक की प्रगति

पंजाब नेशनल बैंक के गत वर्ष के विवरण से मालूम होता है कि इस वर्ष में चुटी फंड ट्रस्ट के लिए ९.३२ लाख रु० की व्यवस्था के बाद बैंक को ११७.२७ लाख रु० लाभ हुआ है, जबकि गत वर्ष ९०.२० लाख रु० का लाभ हुआ था। ५० लाख रु० करों के लिए, २२.५ लाख रु० रिजर्व के लिए १८ लाख रु० कर्मचारियों के बोनस के लिए निकालने के बाद ढाई रु० प्रति शेयर डिविडेंड बांटा जायगा अर्थात् २० प्रतिशत वार्षिक तक यह मिलेगा।

इस वर्ष प्रदत्त पूंजी गत वर्ष (८७.५ लाख रु०) से बढ़कर १.२५ करोड़ हो गई। डिपोजिट भी १२५ करोड़ तक हो गये हैं। १९५६ में डिपोजिटों में १६ करोड़ की वृद्धि हुई थी, इस वर्ष १८ करोड़ रु० की वृद्धि हुई है। इन अंकों से यह स्पष्ट है कि बैंक संतोषजनक प्रगति कर रहा है। रिजर्व बैंक की ऋण कम देने की नीति के कारण इस वर्ष केवल ६६.९९ करोड़ रु० ऋण दिया जा सका, यद्यपि यह राशि भी गत वर्ष से १३ करोड़ रु० अधिक है। इस वर्ष बैंक की १३ नई शाखाएं खुलने से शाखाओं की संख्या कुल ३५३ हो गई है।

विश्व बैंक की आय में वृद्धि

विश्व बैंक को ११ मार्च १९५८ तक पिछले ९ महीनों में ३२,४००००० डालर की खालिस आय हुई, जबकि १९५७ में ९ महीनों में २६,२००,००० डालर की आमदनी हुई थी।

जीवन बीमा निगम की प्रगति

१९५७ और १९५८ में जीवन बीमा निगम द्वारा किए गए बीमा की रकम का क्षेत्रवार विवरण निम्नलिखित है :

(करोड़ रुपयों में)

	उत्तर क्षेत्र	मध्य क्षेत्र	पूर्व क्षेत्र	दक्षिण क्षेत्र	पश्चिम क्षेत्र
१९५७— जनवरी से दिसम्बर तक	३३.९०	३५.७१	६८.०५	७४.१४	६४.७०
१९५८— जनवरी से २४ मार्च तक	३.९९	२.४१	४.७२	६.८७	५.७५

विकास कार्यों के लिए ऋणों में छूट

नयी मशीनें आदि लगाने पर जो विकास छूट दी जा रही है, वह नयी रियायत नहीं है। कर जांच आयोग की सिफारिशों के अनुसार यह १९५५ से ही लागू है।

किसी उद्योग में ७ लाख रुपए का मुनाफा हुआ। नियमानुसार उस उद्योग के मालिक को लगभग ३॥ लाख रु० आयकर देना होगा। अगर वह नयी मशीनें आदि लगाने पर किसी साल १० लाख रुपया खर्च करता है तो उसे २½ लाख रु० की छूट मिलेगी। अर्थात् ७ लाख रु० के मुनाफे से २॥ लाख रु० घटा कर आयकर लगाया जाएगा। इस प्रकार आयकर ४॥ लाख रु० पर ही लगेगा, और मोटे तौर पर उसे ३॥ लाख रु० की बजाय २,२५,००० रु० आय कर देना होगा। इससे उसे सवा लाख रु० की बचत होगी। यह छूट केवल एक बार मिलेगी, हर साल नहीं।

लेकिन नयी कम्पनी की स्थिति कुछ भिन्न है। मान लीजिए, किसी नयी कम्पनी ने १९५६ में १० लाख रु० की मशीनें लगायीं और पहले वर्ष उसे कुछ लाभ नहीं हुआ। आय न होने की स्थिति में वह छूट का कैसे लाभ उठाये। नयी कम्पनियों को अगले ८ साल में कभी भी यह छूट मिल सकती है। इन ८ सालों में अगर वह मुनाफा कमावें तो इस छूट का उन्हें भी लाभ पहुँचेगा क्योंकि उनके मुनाफे में विकास-छूट की रकम कम करके आय-कर लिया जायगा।

विकास छूट इसलिये दी गयी है कि इससे कम्पनियों को अपना विस्तार करने और नई मशीनें आदि लगाने का प्रोत्साहन मिले। मशीनों आदि की कीमतें बढ़ जाने पर भी कम्पनियां, इस छूट के कारण, नई मशीनें आदि खरीदने और लगाने के लिये तत्पर हो जायेंगी।

वित्त विधेयक का उद्देश्य केवल यह है कि कम्पनियों को जो विकास की छूट मिले, उसे वह लाभांश के रूप में न बांट दें, बल्कि उसे अपनी वित्तीय स्थिति मजबूत करने में लगाएं। इसके लिए जो नयी शर्तें लगाई गयीं, वह ये थीं : १. जो कम्पनी विकास-छूट मांगे, वह कम-से-कम दस वर्ष तक विकास-छूट के बराबर रुपया संरक्षित राशि रूप में रखे, २. जो नयी मशीनें और यंत्र आदि लगाने पर कम्पनी को विकास-छूट मिली है, उन्हें कम्पनी दस वर्ष तक न बेचे।

वित्त विधेयक या नये संशोधनों को कम्पनियों द्वारा भुगताये जाने वाले कर से कुछ लेना-देना नहीं। इसका उद्देश्य वास्तव में कम्पनी की वित्तीय हालत को ही मजबूत बनाना है और यह देखना है कि जो छूट दी जाय, उसका उचित उपयोग हो।

★

उद्योग उत्पादन बढ़ गया

१९५७ में देशके २८ प्रमुख उद्योगोंके रजिस्टर्ड कारखानों में १,२२८ करोड़ रु० की कीमत का माल तैयार हुआ, ७ अरब ८७ करोड़ ७५ लाख रु० की पूंजी लगायी गयी और १७ लाख १५ हजार लोगों को कारखानों में काम मिला। १९५३ में इन उद्योगों के कारखानों में केवल १,१२३ करोड़ रु० की कीमत का माल तैयार हुआ, ७ अरब २८ करोड़ ६५ लाख रु० की पूंजी लगायी गयी और १६ लाख २८ हजार लोग कारखानों में काम कर रहे थे।

वैसे तो देश में कुल ६३ उद्योग हैं, किन्तु जिन २८ उद्योगों को इस पड़ताल में शामिल किया गया, उनमें मुख्य हैं—सूती, ऊनी कपड़ा और पटसन, रसायन, लोहा और और इस्पात, अलुमुनियम, बाइसिकिल, सिलाई की मशीनें, बिजली के लैंप और पंखे, चीनी मिट्टी दियासलाई, वनस्पति तेल, साबुन, माड़ी, बिस्कुट, रंग-रोगन आदि। भारत के २० भूतपूर्व राज्यों में यह पड़ताल करायी गयी। इसमें जम्मू-कश्मीर, भूतपूर्व मध्यभारत, हैदराबाद, भोपाल, विलासपुर, मणिपुर, त्रिपुरा, अंडमान-निकोबार राज्य शामिल किए गए, जिनमें बिजलीसे मशीनें चलती हैं और २० या इससे अधिक व्यक्ति रोज काम करते हैं।

★

दो आश्चर्य

आर्थिक जगत् में कभी कभी आश्चर्यकारी घटनाएं होती हैं। आजकल ब्रिटेन का वस्त्र-उद्योग भारतीय और पाकिस्तानी वस्त्रों के बढ़ते हुए आयात से बहुत चिन्तित

है। किसी समय भारतीय बाजारों को अंग्रेजी कपड़ों से पाट देने वाला इंग्लैंड आज स्वयं भारतीय कपड़े के आयात पर अंकुश लगाने की चिन्ता कर रहा है, पर इसमें उसे सफलता नहीं मिल रही। इंगलैंड की सरकार कामनवैल्थ के लाभों की चिन्ता कर रही है, इसलिए भारतीय कपड़े पर पाबन्दी भी नहीं लगा सकी। दूसरी ओर मोटरों के निर्माण का प्रमुख देश अमेरिका ब्रिटिश मोटरों के आयात से परेशान है। न्यूयार्क में होने वाली प्रदर्शनी के पहले दो ही दिनों में ७५०००० पौं० की ब्रिटिश मोटरें व मोटर सामग्री बिक गई। जनवरी १९५८ में ही १२००० ब्रिटिश गाड़ियां वहां बिक गई, जिनकी कीमत ५५ लाख पौं० है। गत वर्ष वहां ८५००० मोटरें बिकी थीं, जबकि १९५५ में ३२००० ब्रिटिश मोटरें बिकी थीं। अमेरिका में मोटरों का निर्माण कम हो रहा है, क्योंकि वहां की बड़ी कारें एक गैलन पैट्रोल में ८ मील चलती हैं, जब कि विदेशी कारें २० से ४० मील चलती हैं। क्राइसलर कारपोरेशन, जनरल मोटर्स और फोर्ड की बिक्री इस वर्ष ४५,१२ और ३६ प्रतिशत गिर गई है। ब्रिटेन व जर्मनी दोनों मोटर उद्योग में इस उद्योग के नेता अमेरिका को पछाड़ रहे हैं।

★

१९५७ में टाइप राइटर

१९५७ में देश में १५,४३० टाइप रायटर तैयार हुए, १९५६ में केवल १३,४२० तैयार हुए थे। जुलाई, १९५७ से विदेशों से टाइप राइटर मंगाने पर बिल्कुल रोक है।

१९५७-५८ में हर टाइप-राइटर के लिए औसतन २५ से ३२ रु० तक की कीमत का इस्पात विदेशों से मंगाया गया। इस्पात का आयात कम होने से टाइपराइटरों के उत्पादन पर साधारण असर पड़ा होगा। इस्पात की सप्लाई बढ़ जाने पर और अधिक टाइपराइटर बनने लगेंगे।

१९५५-५६ में विदेशोंसे ९२ लाख ३२ हजार रु० के १९५६-५७ में १ करोड़ ११ लाख रुपएके और १९५७-५८ में अक्टूबर १९५७ तक ५० लाख ७० हजार रु० के टाइपराइटर मंगाये गये।

★

कुल राजस्व में उत्पादन कर का भाग (करोड़ रु० में)
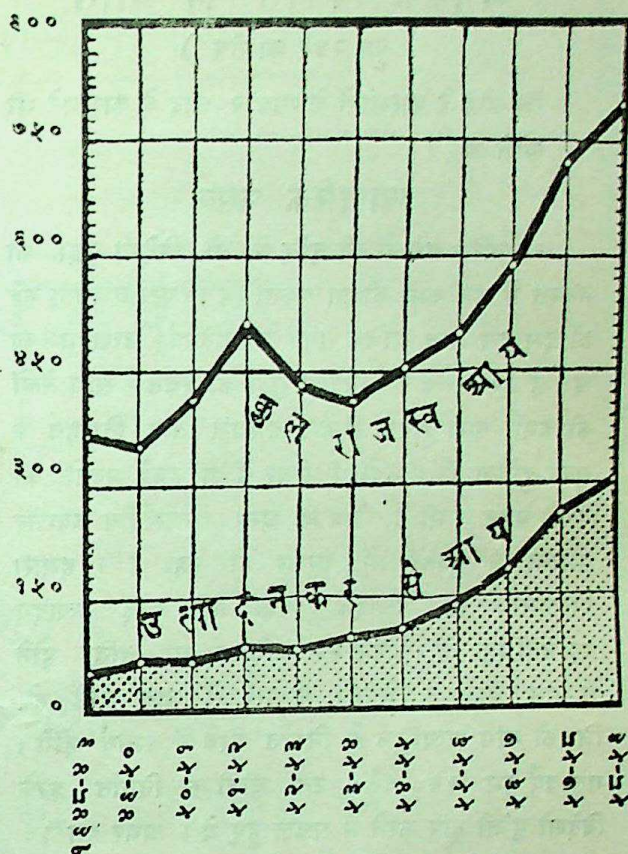
कुल आय में उत्पादन कर का अनुपात किस तेजी से बढ़ रहा है !!

मोटर साइकिलों का निर्माण

मद्रास की जिस फर्म को मोटर-साइकिलें बनानेका लाइसेंस दिया गया है, उसने १९५७ में १८२७ मोटर-साइकिलें तैयार कीं। इस फर्म को हर साल ५,००० तक मोटर साइकिलें तैयार करने के लिए लाइसेंस दिया गया है। इस समय देश में हर साल तीन-चार हजार से अधिक मोटर साइकिलों की मांग नहीं है।

पूरी मोटर साइकल की लागत के ६० प्रतिशत तक के कल-पुर्जे आदि विदेशों से मंगाने पड़ते हैं। मोटर साइकल के कुछ पुर्जे, जैसे टायर, ट्यूब, बैटरी, पिस्टन, पेट्रोल टैंक, बैठने की सीट, इनफ्लेटर, वोल्ट नट तथा रबड़ की कई चीजें देश में ही बनने लगी हैं।

—

आर्थिक विकास की नीति

(पृष्ठ २४६ का शेष)

कि लोहे के कारखानों के साथ २ खाद के कारखाने भी खोले जाएं।

व्यापारिक फसलें

व्यापारिक फसलों की वृद्धि से भी विदेशी मुद्रा की जरूरत में कुछ कमी की जा सकती है। पटसन तथा रुई की दस दस लाख अधिक गांठों के प्रतिवर्ष उत्पादन का अर्थ है ५५ करोड़ रु० विदेशी मुद्रा की बचत। खाद्य तेलों की कमी सारी दुनियां में है। नारियल तथा तिलहन के मुख्य दुनिया की मंडियों में स्थिर हैं या इनके मूल्यों की घटती बहुत धीमी है, जब कि अन्य अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार सामग्री के मूल्यों में हेरफेर हो रहा है। हमारा तिलहनों का उत्पादन तथा प्रति एकड़ उत्पादन बढ़ नहीं रहा है। इसमें २५ प्रतिशत भी वृद्धि होने से हम धीरे २ विदेशी बाजारों में खाद्य तेलों को, जिनकी मांग अत्यधिक है, निर्यात करने में समर्थ होंगे। गत वर्ष हम १६०,००० टन चीनी का निर्यात करके विदेशी पूंजी प्राप्त करने में सफल हुए थे। अगर हम १० प्रतिशत भी खाद्य पदार्थों का उत्पादन बढ़ायें, चाय और कच्चे माल के निर्यात में सुधार करें तो विदेशी मुद्रा के कोश बढ़ाने में सरलता होगी।

मेरा तो सुझाव यह है कि अंतर्राष्ट्रीय बाजार में चीनी तथा अन्य सामग्रियों के निर्यात को प्रोत्साहन देना होगा, भले ही हमारे देश में इन चीजों की कुछ कमी भी हो जाय या इसके निर्यात के लिए सरकारी सहायता ही क्यों न देनी पड़े। +

+दि यूनाइटिड कमर्शल बैंक के अध्यक्षीय भाषण का एक अंश।

आज का अमेरिकन पूंजीवाद

(पृष्ठ २६७ का शेष)

जीवन के सभी क्षेत्रों में समस्याएं समाधानों से आगे ही रहती हैं। किन्तु उनके हल करने की निरन्तर खोज होती रहती है और अमेरिकी व्यवस्था की शक्ति तथा लचीलेपन ने यह दिखा दिया है कि वे इस कार्य को सम्पन्न करने के लिए पर्याप्त हैं। जो कुछ सफलता प्राप्त की गई है, वह उस गतिशीलता की अपेक्षा कम महत्वपूर्ण है, जो निरन्तर और अधिक सफलता प्राप्त करने की दिशा में अग्रसर हो रही है।

गतिशीलता का स्रोत

यह गतिशीलता कहां से आई है? "इसमें से कुछ गतिशीलता उस मार्ग-दर्शक अमेरिकी जनता से प्राप्त होती है, जिसका रुख विकासकी दिशा में अग्रसर है; कुछ स्वाधीनता तथा समानता सम्बन्धी क्रान्ति से उत्पन्न हुई है, जिसके कारण बड़ी संख्या में लोग हमारे देश में आकर बसे हैं तथा कुछ प्रगतिशीलता हमारे देश के बाहुल्य का परिणाम है। १९३० के बाद के वर्षों में आई अत्यधिक मन्दी की चुनौती से भी कुछ गतिशीलता उत्पन्न हुई जब फ्रैंकलिन रुजवेल्ट की सरकार ने यह देखा कि प्राचीन पूंजीवाद अपर्याप्त है तथा समयकी मांग की पूर्ति की दृष्टि से एक नई व्यवस्था का विकास आवश्यक समझा गया।

"और यह गतिशीलता एक व्यापारी के प्रयत्नों का भी परिणाम है, जिसने इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया है। १९१४ में हेनरी फोर्ड ने अपने श्रमिकों को ५ डालर प्रतिदिन के हिसाब से वेतन देना प्रारम्भ किया, क्योंकि उन्होंने सोचा था कि जो लोग उनके लिए मोटर गाड़ियां तैयार करते हैं, उनके पास भी मोटर गाड़ियां होनी चाहिएं।

भारत का अणुशक्ति उद्योग

(पृष्ठ २४८ का शेष)

भारत सरकार के अणु शक्ति विभाग के सचिव डा० एच. एच. भाभा के कथनानुसार अणु शक्ति टक्नोलोजी की नवीनतम कड़ी है। वह ऐसी कड़ी है जिस पर बीसवीं शताब्दी की औद्योगिक क्रांत निर्भर है तथा देश के सीमित ईंधन-साधनों का ख्याल करते हुए इसकी महत्ता और भी अधिक बढ़ गई है।

देश में अणु शक्ति के उत्पादक पदार्थों—थोरियम तथा यूरेनियम की पर्याप्त मात्रा है। वतमान प्राक्कलन के अनुसार, हमारे पास ५ लाख टन थोरियम तथा ३० हजार टन यूरेनियम है। तथ्य तो यह है कि यूरेनियम तथा थोरियम का यह संचय वर्तमान कोयले की शक्ति से तीस गुना अधिक शक्ति दे सकेगा। तीन सदियों से अधिक के लिए यह शक्ति पर्याप्त होगी।

जनसाधारण का यह विश्वास है कि भारत जैसे अनुन्नत देश के लिए अणु शक्ति का उत्पादन करना आर्थिक दृष्टि से संभव नहीं हो सकेगा, क्योंकि इस में काफी लागत आती है। परन्तु श्री भाभा का विचार है कि अणु शक्ति का उत्पादन कम व्यय पर किया जा सकता है। ताजे अनुभव से यह प्रकट होता है कि एक ६० मेगावाट स्टेशन पर कुल लागत १५० पौंड (रु. २०००) प्रति किलोवाट बैठेगी १५० मेगावाट पर स्टेशन १२० पौंड व १३० पौंड प्रति किलोवाट के बीच लागत आएगी।

प्रधान मंत्री नेहरूजी के एक वक्तव्य के अनुसार यदि हम अणु शक्ति से बिजली तैयार करने के लिए प्रथम स्टेशन खोलने का कार्य शीघ्र प्रारम्भ कर दें तो हम १९६२ में अणु शक्ति से बिजली तैयार कर सकते हैं।

ऐसा अनुमान है कि अणु शक्ति कारखाने से बिजली तैयार करना बहुत सस्ता—२.६ नया पैसा प्रति इकाई (यूनिट)—पड़ेगा। हमारा देश आज भी बिजली के बजाय गोबर से काम चलाता है; ईंधन या बिजली-जैसी ८० प्रतिशत शक्ति गोबर से तैयार होती है। कुछ लोग कहते हैं कि हम अणु शक्ति से बिजली क्यों तैयार करें, जबकि बिजली तैयार करने के लिए कोयला काफी परिमाण में हमारे देश में उपलब्ध है। यदि हम अपने सभी साधनों का उपयोग करें और अमरीका जितनी बिजली खपत करें तो हमारे सभी साधन ३० वर्षों में खत्म हो जाएंगे। इसलिए बिजली तैयार करने के लिए अणु-शक्ति का उपयोग करना अमरीका की अपेक्षा हमारे लिए अधिक जरूरी है, क्योंकि हमारे अन्य साधन सीमित है। यदि हमें निकट भविष्य में अणु-शक्ति से बिजली तैयार करना है तो हमारे लिए यह बहुत जरूरी है कि हम इस दिशा में शीघ्र कार्य प्रारम्भ कर दें।

अणु-शक्ति विभाग में अभी ६०० ऊंचे दर्जे के वैज्ञानिक काम कर रहे हैं और इस वर्ष के अन्त तक यह संख्या ९०० हो जाएगी। वस्तुतः जैसा कि अणु शक्ति के विभाग के अध्यक्ष पं० नेहरू ने कहा है देश के लिए अणु-शक्ति का उपयोग करना और भी अधिक अनिवार्य है। शक्ति का प्रधान साधन कोयला या बिजली है। कोयला समस्त देश में एक समान रूप से उपलब्ध नहीं होता।

भारत का ५६ प्रतिशत कोयला बिहार व बंगाल में है, तथा लगभग २५ प्रतिशत मध्य प्रदेश में है। उद्योग मुख्यतः पश्चिमी भारत में हैं तथा कोयला क्षेत्रों से बहुत दूर हैं। फलतः कोयला १५०० मील से अधिक दूर तक ले जाना पड़ता है।

देश की रेल-व्यवस्था लगभग १०० वर्ष पूर्व की व्यवस्था पर आधारित है। फिलहाल, रेलें कोयले को इधर-उधर ले जाने में बड़ी सहायता देती हैं। रेल विभाग कोयले के लदान पर रु. .८५ प्रति टन प्रति मील किराया लेता है, जबकि अनाज के लदान पर रु. ५.३६ प्रति टन प्रति मील किराया वसूल किया जाता है। अतः कोयला लाने—ले जाने में रेलों को भारी घाटा उठाना पड़ता है।

देश का औद्योगिकीकरण करने में योग देने के अलावा अणु शक्ति केन्द्र रेलों पर कोयले के लदान बचत करेंगे तथा इस प्रकार रेलों का अनाज या अन्य पदार्थों के लदान से रु. १.२८ करोड़ प्रति वर्ष की अतिरिक्त आय हो सकेगी।

भारत में बिजली भी शक्ति का एक साधन है, किन्तु इसका भी देश में समान रूप से विभाजन नहीं हो पाता, और इससे जो शक्ति प्राप्त भी होती है—वह बहुत थोड़ी

खाद्य समस्या और सरकार

(पृष्ठ २५० का शेष)

गये और धीरे-धीरे कन्ट्रोल समाप्त कर दिये गये। प्रथम योजना में निर्धारित लक्ष्य पूरे किये गये और योजना की समाप्ति पर जैसा कि तत्कालीन खाद्यमंत्री का वक्तव्य था—'हम अब केवल अन्न में स्वावलम्बी ही नहीं बल्कि भविष्य के लिए कुछ संचित करने योग्य भी अपने को बना सके हैं।' इस प्रकार योजना की सफलता को आंका गया और इसी सफलता की आशा से द्वितीय पंचवर्षीय योजना बनाते समय केवल आवश्यकतानुसार ही अतिरिक्त अन्न की आशा के लिए खर्चे की रकम निर्धारित की गई।

खाद्य समस्या फिर एक बार

द्वितीय पंचवर्षीय योजनामें जिस आशा से अन्न उत्पादन के लक्ष्य रक्खे गये थे, परिस्थिति उसके विपरीत दृष्टिगोचर हुई। योजना के प्रथम वर्ष में ही स्थिति चिन्ताजनक रही। एक ओर लोगों के पास बढ़ी हुई क्रय-शक्ति और फलस्वरूप उनकी अन्न के लिए अधिक मांग और दूसरी ओर अन्न उत्पादन आशा के प्रतिकूल रहा। विशेषकर उत्तरी भारत के पूर्वी क्षेत्रों में—बिहार, पश्चिम बंगाल, पूर्वी उत्तर प्रदेश और उत्तरी मध्य प्रदेश आदि में बाढ़, सूखा आदि के कारण फसलें खराब हो गईं। योजना के द्वितीय वर्ष में अन्न का अभाव और भी बढ़ गया, साथ ही अन्न के मूल्य काफी चढ़ गये। कीमतों में होने वाली इस वृद्धि के कारण जनता और सरकार दोनों को ही परेशानी में पड़ जाना पड़ा। अतः सरकार को सोचना पड़ा कि उसका कैसे सामना किया जाय। फलस्वरूप सरकार ने खाद्य अभाव और मूल्य जांच के लिए श्री अशोक मेहता की अध्यक्षता में जून सन् १९५७ में 'अनाज जांच समिति' (The Food grains Enquiry Committee) की नियुक्ति की। समिति ने अपनी रिपोर्ट नवम्बर सन् १९५७ में सरकार के समक्ष रख दी।

अशोक मेहता समिति रिपोर्ट

समिति इस निष्कर्ष पर पहुँची है कि देश की खाद्य-स्थिति आगामी कई वर्षों तक अच्छी होने की आशा नहीं है। अतः उसे हल करने के लिए तात्कालिक और दूरवर्ती दोनों प्रकार के उपाए काम में लेने होंगे। समिति ने सुझाव दिया है कि अनाज के मूल्य में स्थिरता लाने के लिए ठोस कदम उठाना सबसे अधिक जरूरी है। समिति ने इसके लिए उच्च अधिकार प्राप्त 'मूल्य स्थिरता मंडल' (Price-Stabilisation Board) स्थापित करने पर सबसे अधिक जोर दिया है। समिति का सुझाव है कि खाद्यान्न के क्रय-विक्रय, गल्ला वसूली और स्टाक जमा करके रखने के लिए अलग से एक 'खाद्यान्न मूल्य स्थिरता संगठन' बनना चाहिए। समिति का यह भी सुझाव है कि एक 'केन्द्रीय खाद्य सलाहकार परिषद्' की स्थापना की जाय जिसका कार्य केन्द्रीय खाद्य मंत्रालय और मूल्य स्थिर संगठन की मदद करना होगा। सरकार को खाद्यान्नों के मूल्यों में होने वाले परिवर्तनों का पता लगता रहे, इसके लिए एक अलग 'मूल्य सूचना विभाग' स्थापित करने का सुझाव भी दिया गया है।

अन्य सिफारिशें

(१) सस्ते अनाज की दुकानें—समिति ने सिफारिश की है कि सस्ते अनाज की दुकानों पर अनाज इस आधार पर बिकना चाहिये कि न तो नफा हो और न घाटा पड़े।

(२) कलकत्ते और बम्बई जैसे शहरों की अस्थायी रूप से घेरा बन्दी करने की सिफारिश की गई है।

(३) गल्ला वसूली—रिपोर्ट में कहा गया है कि

है। भारत में अन्य उन्नत देशों की अपेक्षा शक्ति का बहुत कम प्रयोग होता है। यदि भारत आज की गति से शक्ति का व्यय करे तो हमारे कोयले के साधन दो तीन सौ साल से अधिक नहीं चलेंगे। लेकिन यदि हम अमेरिका के स्तर पर शक्ति का व्यय करने लगें तो कोयले के बड़े २ क्षेत्र जिन पर हम गर्व करते हैं, तीस वर्ष में समाप्त हो जायंगे। दूसरी तरफ जैसा कि हमने ऊपर कहा है—अणु शक्ति के साधन पर्याप्त मात्रा में भारत में विद्यमान हैं।

वह दिन दूर नहीं माना जाना चाहिए जबकि भारत अणु शक्ति के उत्पादन में शीघ्र ही समर्थ हो जायगा और इसे बहुत ही कम मूल्य पर देश के औद्योगिक विकास के लिए वितरित कर सकेगा।

—

फिलहाल गेहूं और मोटे अनाज आदि की अनिवार्य वसूली की जरूरत नहीं है । इन्हें मंडी से खरीद लेना काफी होगा । लेकिन चावल की कुछ हद तक अनिवार्य वसूली जरूरी होगी, जिससे सरकारी भंडार में ६-७ लाख टन चावल रखा जा सके । रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि अनाज पर न तो पूरा कन्ट्रोल अथवा राशनिंग करना उचित है और न अनिवार्य गल्ला वसूली । लेकिन अनाज के व्यापार को खुली छूट देना भी ठीक नहीं माना गया है ।

(४) समिति ने कहा है कि अनाज के व्यापार पर नियंत्रण करना बहुत आवश्यक है । अनाज के सभी व्यापारियों और मुख्य उत्पादकों को जो १०० मन से अधिक अनाज का व्यापार करते हैं, लाइसेंस दिये जांय ।

(५) समिति ने सिफारिश की है कि सरकार शनैः-शनैः गल्ले के पूरे थोक व्यापार को अपने हाथ में लें ।

(६) समिति का अनुमान है कि भारत के अगले कुछ वर्षों में, दूसरी योजना के पूरी होने के बाद भी, काफी मात्रा में आयात किये बिना अन्न का भंडार जमा करना अभाव ग्रस्त लोगों की आवश्यकतायें पूरी करना संभव नहीं होगा । इसलिए विदेशों से अन्न का आयात आवश्यक है । समिति का अनुमान है कि यह आयात [illegible] से ३० लाख टन के बीच करना होगा ।

(७) आयोजनाओं के विषय में जो द्वितीय आयोज[ना] में चल रही हैं, समिति ने अन्न का उत्पादन बढ़ाने के लि[ए] अनेक सुझाव दिये हैं । ये सुझाव सिंचाई की छोटी [बड़ी] योजनाओं, उत्तम बीजों की पैदावार बढ़ाने और उ[नका] उचित वितरण करने, देशी खाद के उपयोग बढ़ाने [और] रासायनिक खाद की उत्पत्ति बढ़ाने, भूमि चरण को रोक[ने] और बन विकास करने तथा पशु धन का उचित [उप]योग करने से सम्बन्धित हैं ।

(८) अन्त में समिति ने इस बात पर भी [बल] जोर दिया है यदि देश की आबादी को अधिक तेजी [से] बढ़ने को रोकने के लिए संगठित देशव्यापी आन्दोल[न] नहीं किया गया तो देश की खाद्य स्थिति भयानक [रूप] धारण कर सकती है ।

हमारी सम्मति में मेहता समिति ने अन्न समस्या [का] एक नये ढंग से अध्ययन किया है, जो इससे पूर्व कभी न[हीं] किया गया । उसके अनेक सुझावों को कार्य रूप में परि[णत] करने की दिशा में, आशा है सरकार, शीघ्र ही ठोस क[दम] उठायेगी ।

विराट योजनाएं

बहुमुखी समृद्धि

भरपूर फसल उपजाने के लिये खेतों को पानी . . .

घरों में प्रकाश के लिये बिजली . . .

छोटे बड़े उद्योग चलाने के लिए विद्युत-शक्ति . . .

भारतीय जनता को इसी प्रकार के अनेक लाभ पहुंचाने और देश को समृद्ध बनाने के लिये इन विराट नदी घाटी योजनाओं का निर्माण हुआ है ।

द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में भाखड़ा-नांगल, हीराकुड, तुंगभद्रा, दामोदर घाटी, चम्बल, मयूराक्षी और इसी प्रकार की अन्य योजनाओं को पूरा करना हमारा परम लक्ष्य बना रहेगा ।
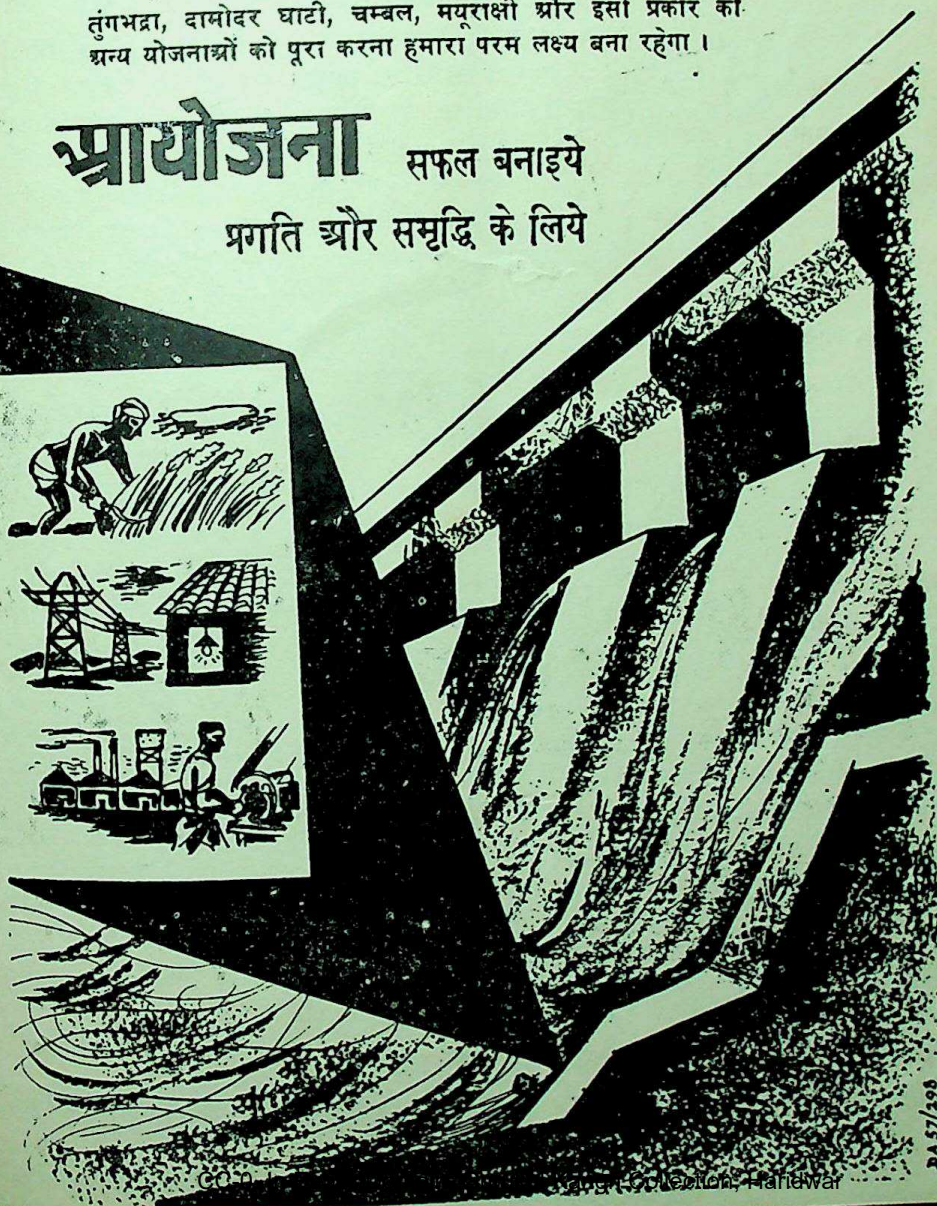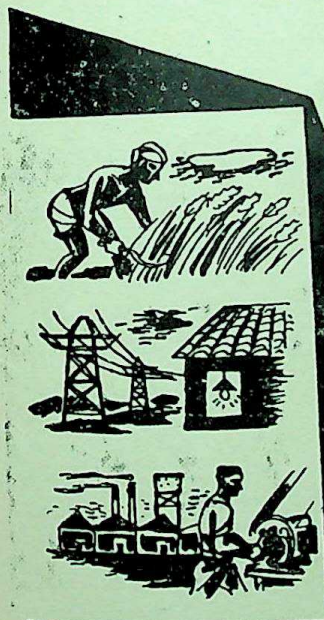
३,००,००० टन से अधिक

का उपयोग हीराकुड बांध में हो चुका है।

भारत के विशालतम बांधों में से एक यह बांध उड़ीसा में महानदी के ऊपर बन रहा है। यह एक ऐसी बहुमुखी परियोजना है जिससे बाढ़ों का नियन्त्रण, १९ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई और २००,००० किलोवाट्स विद्युतशक्ति का उत्पादन हो सकेगा। मुख्य बांध १५८०० फीट लम्बा है और इसकी सर्वाधिक ऊंचाई १८३ फीट होगी। जिसमें से लगभग १२००० फीट बांध कच्चा है और लगभग ३८०० फीट बांध का निर्माण सिमेंट कंकरीट का है जिसमें कोणार्क सिमेंट का ही व्यवहार हो रहा है।
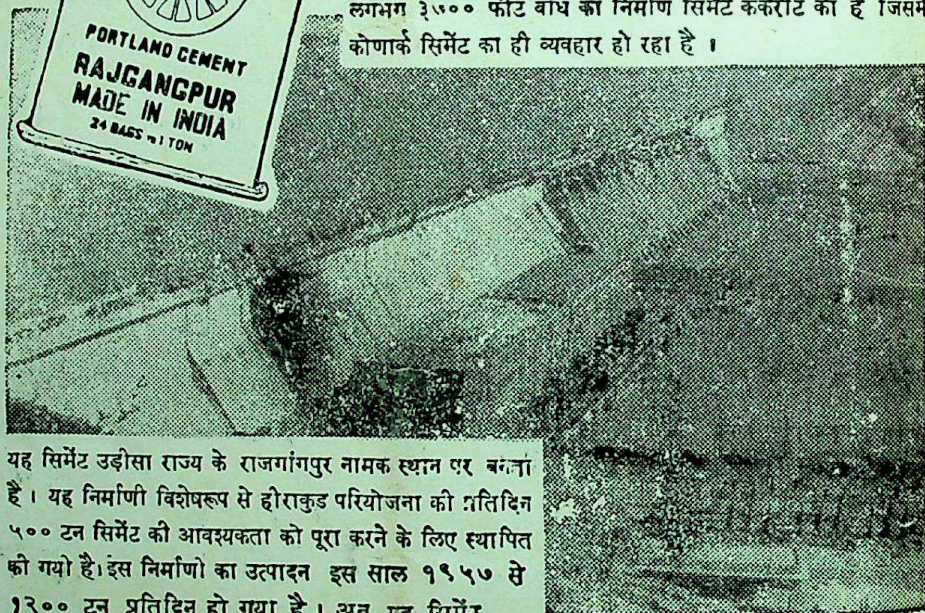
यह सिमेंट उड़ीसा राज्य के राजगांगपुर नामक स्थान पर बनता है। यह निर्माणी विशेषरूप से हीराकुड परियोजना की प्रतिदिन ५०० टन सिमेंट की आवश्यकता को पूरा करने के लिए स्थापित की गयी है। इस निर्माणी का उत्पादन इस साल १९५७ से १२०० टन प्रतिदिन हो गया है। अब यह सिमेंट जनोपयोग के लिए भी पर्याप्त मात्रा में मिल सकेगा।

उड़ीसा सिमेंट लिमिटेड

राजगांगपुर, उड़ीसा

प्रबंध-अभिकर्त्ता डालमिया एजेन्सीज प्राइवेट लिमिटेड

O.C.H10.57 A.I.A.

सम्पादक— कृष्णचन्द्र विद्यालंकार द्वारा अशोक प्रकाशन मन्दिर के लिए अर्जुन प्रेस, दिल्ली से मुद्रित व प्रकाशित

सम्पदा

जून, १९५८

ोक प्रकाशन मन्दिर रोशनारा रोड दिल्ली
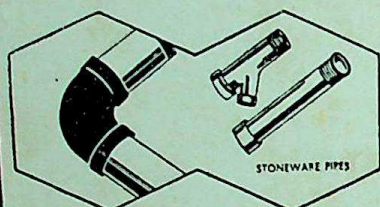
STONEWARE PIPES
REFRACTORIES
R.C.C. SPUN PIPES
DALMIA CEMENT
Made in India
INSULATORS
PORCELAIN SANITARY WARES
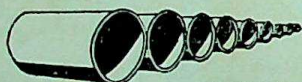
विषय सूची

सम्पादक—कृष्णचन्द्र विद्यालंकार

सम्पादकीय परामर्श मण्डल

१. श्री जी० एस० पथिक
२. श्री महेन्द्रस्वरूप भटनागर

बम्बई में हमारे प्रतिनिधि

श्री टी० एन० वर्मा, नेशनल हाउस, तुलक रोड

वर्ष : ७] जून, १९५८ [अङ्क : ६

समाजवाद क्या है ?

कुछ लोगों के लिए समाजवाद के दो मतलब होते हैं : पहला, धन का बटवारा, जिसका मतलब यह लगाया जाता है कि जिनके पास बहुत ज्यादा धन है, उनकी जेब कतर ली जाय; और दूसरा राष्ट्रीयकरण। ये दोनों ही मकसद माकूल हैं और अच्छे हैं, लेकिन इनमें से कोई भी खुद समाजवाद नहीं है। उत्पादन करने वाली व्यवस्था को नुकसान पहुँचाकर, बटवारे की कोशिश करना एकदम गलत बात है। इसका मतलब यह होगा कि हम खुद अपने-आपको कमजोर करेंगे। समाजवाद की बुनियाद यह है कि ज्यादा दौलत हो। गरीबी का कोई समाजवाद हो ही नहीं सकता, चुनांचे समानता की प्रक्रिया का क्रम बैठाना पड़ता है।

मेरा ख्याल है कि किसी चीज को ठीक ढंग से चलाने के लिए तैयार हुए बगैर उसका, सिर्फ राष्ट्रीयकरण कर देना भी खतरनाक है। राष्ट्रीयकरण करने के लिये हमें चीजें चुननी पड़ती हैं। समाजवाद का मतलब यह है कि राज्य में हर आदमी को तरक्की करने के लिऐ बराबर मौका मिलना चाहिए। मैं हरगिज इस बात को पसंद नहीं करता कि राज्य हर चीज पर नियंत्रण रखे, क्योंकि मैं इन्सान की व्यक्तिगत आजादी को अहमियत देता हूँ। मैं उस उग्र किस्म के राज्य-समाजवाद को पसन्द नहीं करता, जिसमें सारी ताकत राज्य के हाथों में होती है और देश के करीब-करीब सभी कामों पर उसी की हकूमत हो। राजनीतिक दृष्टि से राज्य बहुत ताकतवर है। अगर उसे आर्थिक दृष्टि से भी बहुत ताकतवर बना दें, तो वह सत्ता का, और अधिकार का केन्द्र बन जायेगा, जिसमें इन्सान की आजादी राज्य के मनमानेपन का गुलाम बन जायगी।

चुनाचे, मैं आर्थिक सत्ता का विकेन्द्रीकरण पसन्द करूंगा। बेशक, हम लोहा और इस्पात, रेल के इंजन और इसी तरह के बहुत सारे दूसरे उद्योगों को विकेन्द्रित नहीं कर सकते। लेकिन आम तौर पर, जहां तक मुमकिन हो, हम सहकारिता के आधार पर उद्योगों की छोटी-छोटी इकाइयां चला सकते हैं, जिन पर राज्य का सामान्य नियंत्रण हो। लेकिन इस बारे में मैं बिल्कुल रूढ़िवादी या हठवादी नहीं हूं। हमें व्यवहार से, व तजुर्बों से सीखना है और खुद अपने तरीकों से आगे बढ़ना है।

जवाहरलाल नेहरू

जमशेदपुर से शिक्षा

गत मास की सबसे उल्लेखनीय, परन्तु खेदपूर्ण घटना जमशेदपुर की हड़ताल थी, जिसमें राष्ट्र को १६००० टन स्पात अथवा १.११ करोड़ रु० की हानि उठानी पड़ी। यह हड़ताल १४ दिन तक चली और फिर वापस ले ली गई। हमने इस हड़ताल को खेदपूर्ण घटना कहा है, इसका यह अर्थ नहीं कि हम मजदूरों के हड़ताल के अधिकार को स्वीकार नहीं करते और न केवल राष्ट्र की होने वाली हानि के अंक देखकर ही हम इसे अत्यन्त खेदपूर्ण मानते हैं, (यद्यपि यह अंक भी कम चिन्तनीय नहीं हैं)। ऐसी हानि तो अनेक दैवीय प्रकोपों के कारण भी हो जाती है। इस घटना के पीछे जो मूलभूत प्रवृत्ति काम कर रही है, वह अत्यन्त खेदजनक है और एक गंभीर समस्या उत्पन्न करती है, जिसका यदि समाधान शीघ्र न किया गया, तो संभव है कि वह राष्ट्र के लिए एक भारी खतरा बन जाय।

सम्पदा के पाठक जानते हैं कि कुछ समय पहले भारत सरकार, मिल मालिकों और मजदूर संघों के प्रतिनिधियों ने एक आचरण-संहिता पर सहमति प्रकट की थी, जिसमें मजदूर संघों के हड़ताल आदि के सम्बन्ध में कुछ सिद्धान्त स्वीकार किये गये थे। हमने तभी संहिता में प्रतिपादित उन आदर्शों के पालन के सम्बन्ध में सन्देह प्रकट किया था, क्योंकि आज देश का मजदूर-आन्दोलन वस्तुतः मजदूर-आन्दोलन नहीं है। यह राजनीतिक दलों का परस्पर शक्ति-वृद्धि के लिए संघर्ष का एक प्रमुख साधन बन गया है। जिस तरह राजनीतिक विरोधी दल का एक मात्र उद्देश्य दूसरे दल को बदनाम करके गुणावगुण का विवेक किये बिना उसकी प्रत्येक नीति का विरोधमात्र होता है उसी तरह आज के मजदूर संघ एक दूसरे को नीचा दिखाने के लिए मजदूरों में लोकप्रियता प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं और यह लोकप्रियता शिक्षा, स्वास्थ्य चिकित्सा, बुराइयों के निवारण, उनमें परस्पर सौहार्द भावना आदि सेवा के द्वारा नहीं, सस्ते लुभावने नारों के द्वारा उनकी कोमल भावनाओं को भड़का कर, गुमराह कर, और अन्त में तोड़ फोड़ और हड़ताल के मार्ग पर लाकर प्राप्त की जाती है। मजदूरों में असंतोष की आग भड़काने के लिए संभव असंभव [illegible] पेश करने और लच्छेदार भाषा में लैक्चरों के सिवा [illegible] करना नहीं पड़ता।

जमशेदपुर में यही कुछ हुआ है। वहां का मज[illegible] संगठन बहुत शान्ति के साथ अधिकारियों से मिल जुल [illegible] अनेक ऐसी सुविधाएं प्राप्त कर चुका था, जो देश के [illegible] भागों में मजदूरों को प्राप्त नहीं हैं। कल्याणकारी प्रवृ[illegible] के लिए जमशेदपुर आदर्श केन्द्र बना हुआ था। मजदूरों [illegible] मालिकों की संयुक्त समितियां सफलतापूर्वक काम कर [illegible] थीं, वेतन बोनस आदि के प्रश्न भी वहां पेचीदे नहीं [illegible] टाटा वर्कर्स यूनियन के नेता अधिकारियों से बातचीत [illegible] रहे थे। टाटा कम्पनी के चेयरमैन श्री जे० आर० डी टा[illegible] हड़ताल से पहले यह घोषणा कर दी थी कि कारखा[illegible] विस्तार और २० लाख टन निर्माण की जो योजनाएं [illegible] रही हैं, उससे देश की जहां सम्पत्ति बढ़ेगी, वहां मजदूरों [illegible] भी लाभ पहुँचेगा, उनके वेतनों में खासी वृद्धि हो [illegible] सकेगी। वेतन वृद्धि की योजना पर विचार हो रहा है, [illegible] जल्दी अमल में आयगी। रिपोर्ट के तैयार होने [illegible] बातचीत के परिणामों की प्रतीक्षा किये बिना कम्यु[illegible] नेताओं के संकेत पर मजदूर हिंसात्मक प्रदर्शनों पर उतर [illegible] शहर का एक बाजार अग्निकाण्ड का शिकार हुआ, गोलि[illegible] चलानी पड़ीं और अनेक प्रकार की अवांछनीय लज्जाज[illegible] घटनाएं हुईं, जिनके विस्तार में हम नहीं जाना चाहते। [illegible] कार इस बात की जांच करेगी कि समस्त हड़ताल में [illegible] द्वारा स्वीकृत आचरण संहिता का कहां तक पालन कि[illegible] गया।

यह सब क्यों हुआ, इसलिए कि अ० भा० ट्रेड यू[illegible] यन कांग्रेस के अधिकारी लोह-उद्योग केन्द्र में अपना प्र[illegible] स्थापित करना चाहते थे। वे अ० भा० राष्ट्रीय म[illegible] कांग्रेस के सफल प्रभाव को सहन करने के लिए तै[illegible] नहीं थे। पिछले कई महीनों से वे वहां अपना गढ़ स्था[illegible] करने के लिए प्रयत्न कर रहे थे और उन प्रयत्नों की [illegible] सीमा थी यह गैर कानूनी हड़ताल।

प्रश्न केवल जमशेदपुर की हड़ताल का नहीं है। [illegible]

प्रश्न यह है कि जब देश पंचवर्षीय योजनाओं की पूर्ति में लगा हुआ है, और विदेशी मुद्रा की समस्या भयंकर रूप से मुंह बाये खड़ी है, तब क्या किसी भी वर्ग को चाहे वह मिल मालिक हो या मजदूर, यह अधिकार दिया जा सकता है कि वह देश के आर्थिक विकास के मार्ग में कोई बाधा डाले ? क्या कोई ऐसी मशीनरी नहीं स्थापित की जा सकती कि कम से कम पांच वर्षों तक ऐसी कोई भी दुरभिसंधि सम्भव न हो सके, जिससे उद्योग को कोई हानि पहुँच सके ? क्या कोई देश में ऐसी शक्ति नहीं है, जो दोनों दलों को कोई भी ऐसा प्रयत्न करने से रोक सके ? और यदि कोई ऐसा गैरकानूनी प्रयत्न करता है, तो उसे यथोचित दण्ड दिया जा सकें ? देश किसी भी वर्ग से चाहे वह कितना महत्वपूर्ण क्यों न हो, बड़ा है, यह सत्य जिस दिन हम भूल जावेंगे, उसी दिन हम धोखा खावेंगे। इंगलैंड में १९२६ में मजदूरों ने जो हड़तालें की थीं, उनसे मजदूर दल जनता की सहानुभूति खो बैठा था। इटली में साम्यवादियों ने उद्योग व्यापार को ठप्प कर दिया था और जनता मुसलिनी के कठोर फासिष्ट शासन को स्वीकार करने को विवश हो गई थी। जर्मनी में हर हिटलर के निन्दनीय नाज़ी शासन को भी जर्मन जनता ने सहन किया था, क्योंकि वह देश में अव्यवस्था को दीर्घकाल तक पसन्द नहीं कर सकती थी।

आज हम सब को इस प्रश्न पर गम्भीरता से सोचना है कि क्या राष्ट्र के लिए बलिदान करना हमारा—मिल मालिक, मजदूर और जनता सभी का कर्तव्य नहीं है ? यदि शेयर होल्डर कम मुनाफा लेकर, पूंजीपति कम आमदनी करके और मजदूर पांच प्रतिशत कम मजदूरी लेकर भी उत्पादन व्यय कम कर सकें, तथा जनता को जिसकी क्रयशक्ति कम हो रही है, सस्ता माल दे सकें, और विदेशी बाजारों की प्रतिस्पर्धा में ठहर सकें, तो यह लाभ अन्ततोगत्वा हम सबके लिए लाभकारी होगा। त्याग केवल एक पक्ष को नहीं, सभी को करना होगा। उत्पादन पहले बढ़ाइये, फिर उसके वितरण का प्रश्न हल कर लेंगे। लेकिन आज तो विभिन्न राजनैतिक दल अपने शक्तिवर्धन के लिए देश के मजदूर वर्ग को जिस तरह अपना औजार बनाने का षड्यंत्र कर रहे हैं, वह तो देश के प्रति घोर अपराध है। यदि इस दुष्प्रवृत्ति को समाप्त नहीं किया तो देश की अर्थव्यवस्था के सामने भारी खतरा पैदा हो जायगा।

—

वस्त्र निर्यात में कमी

विदेशों में भारतीय वस्त्रों की बिक्री के लिये निरन्तर प्रयत्न करने पर भी तथा वस्त्र-निर्यात समिति की कोशिशें होने पर भी विदेशों के साथ भारतीय वस्त्र व्यापार में निरन्तर कमी होती जा रही है। वर्तमान वर्ष के प्रथम चार महीनों में कपड़े का जो कुल निर्यात हुआ, वह २१६० लाख गज ही है, जबकि १९५७ के इन महीनों में ३२१० लाख गज कपड़ा निर्यात हुआ था। इसका अर्थ है १९५७ की तुलना में १९५८ में १०५० गज कपड़े के निर्यात में कमी। आगामी महीनों में भी निर्यात में इसी प्रकार की कमी होने की संभावना है। इस से १९५८ के पूरे वर्ष में ६५०० लाख गज निर्यात होने का अनुमान है, जबकि १९५७ में ८५०० लाख गज का निर्यात हुआ था।

कपड़े के निर्यात में कमी हो जाना बहुत निराशाजनक है, विशेषतः ऐसी अवस्था में जबकि विदेशी पूंजी की प्राप्ति दिन व दिन कठिन होती जा रही है। वस्त्र उद्योग विदेशी पूंजी कमाने के क्षेत्र में प्रमुख स्थान रखता है। ऐसी स्थिति में निर्यात सम्बन्धी कठिनाई को दूर करने की सख्त आवश्यकता है। यह तभी संभव है, जब सरकार तथा व्यापार दोनों पक्षों की तरफ से परस्पर सहयोग पूर्ण विचार विमर्श हो। यह बात तब प्रकाश में आई, जब बम्बई में व्यापार तथा उद्योग मंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री को अखिल भारतीय निर्यात समिति की तरफ से एक आवेदनपत्र पेश किया गया। अत्यन्त प्रसन्नता की बात है कि मंत्री महोदय ने इस आवेदन तथा सदस्यों के सुझावों का उत्तर देते हुए, वस्त्र निर्यात की वृद्धि के लिये अपनी सहानुभूति प्रकट की और आश्वासन भी दिया कि सरकार यथाशक्ति निर्यात को बढ़ाने के लिये सहयोग देगी। १९५७ के प्रथम चार महीनों के निर्यात की तुलना में १९५८ के प्रथम चार महीनों के निर्यात के अंकों से वास्तविक स्थिति स्पष्ट हो जायगी:—

(दस लाख गजों में)

	कुल	मोटा	साधारण	बढ़िया	सुपर फाइन
जनवरी	९०.६६	२३.०७	६३.०७	२.९०	१.६२
फरवरी	७१.४७	१७.३०	५०.९३	१.५८	१.६६
मार्च	८३.९९	२०.९७	५९.८०	१.३२	१.९०
अप्रैल	७४.९०	१८.६७	५२.६२	१.८७	१.७४
	३२१.०२	८०.०१	२२६.४२	७.६२	६.९२
१९५८					
जनवरी	६३.९२	१९.६६	४२.०६	०.४४	१.७९
फरवरी	४७.७२	१५.०४	३०.२७	०.६५	१.७६
मार्च	५३.९५	१६.९१	३४.५८	०.४५	२.०१
अप्रैल	५०.३५	१५.८७	३१.४४	०.६१	२.४३
	२१५.९७	६७.४८	१३८.३५	२.१५	७.९९

संसार के बाजारों में भारतीय वस्त्र के लिये लगातार कठिनाइयां बढ़ती जा रही हैं। सूडान ने भारतीय कपड़े को खुले लाइसेन्स देने से इनकार कर दिया है। इंडोनेशिया में आंतरिक अव्यवस्था और उपद्रवों के कारण भारतीय वस्त्र निर्यात कम हो गया। कनाडा वस्त्र आयात नीति को कठोर कर रहा है। ग्रेट ब्रिटेन, भारत पर लगातार जोर डाल रहा है कि हम अपना कपड़ा वहां कम भेजें। पूर्वी आफ्रीका के केनिया, युगाण्डा और टांगानिका आदि देशों ने कोरे और धुले कपड़े पर आयात-कर अधिक बढ़ा दिया है। ये कर ५०% तथा छपे हुए कपड़े पर १००% तक होंगे। पूर्वी आफ्रीका के बाजारों में भारत का ७½ करोड़ गज कपड़ा खपता है। इन करों से भारतीय वस्त्र निर्यात और कठिन हो जायगा।

भारतीय वस्त्र उद्योग जिस भारी संकट में से गुजर रहा है, उस का यह एक पहलू है। देश में खपत के लिये भी कपड़ा तय्यार करने वाली मिलों की हालत अच्छी नहीं है। वे लगातार बन्द हो रही हैं, और मजदूरों में लगातार बेकारी बढ़ रही है। इस संकट को दूर करने के लिये उद्योग की ओर से अनेक छोटे बड़े सुझाव दिये गए हैं। उन पर विचार करके भारत सरकार क्या निर्णय करेगी, यह नहीं कहा जा सकता। लेकिन जो कुछ भी किया जाय, वह बहुत जल्दी किया जाना चाहिए।

—

कागज उद्योग

'कामर्स' के व्यापारिक संवाददाता ने देश के कागज के कारखानों की ओर नियोजकों के रुपया लगाने के परिणाम स्वरूप मिलों के बढ़े हुए शेयरों की एक सूची प्रकाशित की है।

ओरियंट पेपर्स के शेयरों की कीमत २४-५० (फरवरी के अंत में) से बढ़कर ३१-३० रु० हो गई है। टीटागढ़ की कीमत ३३-५० रु० से ३८-५० रु०। श्री गोपाल मिल के शेयरों की कीमत १३.९७ से १६.१९ तक बढ़ गई है। वस्तुतः कागज उद्योग का भविष्य बहुत उज्ज्वल है। देश में लगातार कागज की मांग बढ़ रही है। शिक्षा प्रसार के साथ अखबारों और किताबों की जरूरत बढ़ गई है। एक अनुमान के अनुसार कागज की मांग १०% प्रति वर्ष बढ़ जाती है। किन्तु इस कारण कागज महंगा हो जाय, यह स्वाभाविक होते हुए भी वांछनीय नहीं है। कागज का मूल्य इतना नहीं बढ़ने देना चाहिए, चूंकि इसका असर पुस्तक और अखबार पढ़ने वालों पर ही पड़ता है।

——

चीनी उद्योग

१९३२ में संरक्षण करों के द्वारा चीनी उद्योग को विशेष प्रोत्साहन मिला था, तब से यह उद्योग निरन्तर उन्नति करता रहा है। आज वस्त्र उद्योग के बाद इसका स्थान है। बहुत से किसानों व मजदूरों को इससे आजीविका मिलती है। १९५५ में चीनी मिलों की संख्या यद्यपि १६१ थी, पर १५३ मिलों ने अपने अंक भेजे हैं। इस उद्योग ने सब खर्च निकाल कर २९.६४ करोड़ रु० कमाया है। कुल मिलों में ११६.४९ करोड़ रु० की चीनी १९५५ में तैयार हुई थी। २.२४ करोड़ रु० के सह-उत्पादन (बाई प्रोडक्ट) भी तैयार हुए। इसमें से उत्तर प्रदेश का भाग सबसे बड़ा अर्थात् ६४.४५ करोड़ रु० था। बिहार में २३.५१ करोड़ रु० की चीनी पैदा हुई। बम्बई, मद्रास और आंध्र में क्रमशः १३.६४, ४.८६ और ४.८८ करोड़ रु० की चीनी तैयार हुई।

इस वर्ष १५३ मिलों में, जिनके अंक प्राप्त हुए हैं, १,२१,३८० कारीगर काम कर रहे थे। यह संख्या देश के सब कारखानों में काम करने वाले मजदूरों की ४.१ प्रतिशत है। इस वर्ष वेतन और मजदूरी के रूप में चीनी

मिलों ने १०.९७ करोड़ रु० बांटा है। प्रति मजदूर ६०४ रु० वार्षिक आय हुई, जबकि देश के प्रति व्यक्ति आय २७४ रु० है। परन्तु मजदूरों से अधिक किसानों को इस उद्योग से आय होती है। गन्ने के मूल्य में ७०.६८ करोड़ रु० किसानों को दिये गये। यह रकम कुल उत्पन्न चीनी आदि के मूल्य का ६० प्रतिशत हैं। चीनी की कीमत कम करने के लिए गन्ने की कीमतों में कमी अनिवार्य होगी।

दूसरों की दृष्टि में

हम अपनी पंच वर्षीय योजनाओं की प्रगति की प्रशंसा करें, यह स्वाभाविक है। किन्तु दूसरों की सम्मति अधिक निष्पक्ष और अधिक प्रामाणिक होगी। विश्व बैंक के प्रमुख अधिकारी आर्थिक विषयों के विशेषज्ञ माने जाते हैं। उन्हें भिन्न २ देशों की आर्थिक स्थिति देखकर विभिन्न योजनाओं की पूर्ति के लिये ऋण देना पड़ता है। इसलिए इनकी सम्मति का विशेष महत्व है। विश्व बैंक के प्रमुख 'पर जेकप्सन' ने संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में एक भाषण देते हुए भारतीय अर्थनीति की विशेष रूप से प्रशंसा की है। देश की मुद्रा नीति में जनता का विश्वास है; भारत में पदार्थों के मूल्य बढ़े अवश्य हैं; किन्तु बहुत से देशों की अपेक्षा कम बढ़े हैं, देश की बैंक व्यवस्था योग्यता से चलाई जा रही है, उसके प्रबन्धकर्ता काफी कुशल हैं; भारत विदेशी पूंजी का उचित उपयोग कर रहा है और विदेशियों को सम्पत्ति करसे मुक्त कर उपयुक्त नीति अपना रहा है। इसलिये उन्होंने यह आशा प्रकट की है कि विश्व बैंक तथा अन्य देशों से भारत को पर्याप्त पूंजी और ऋण मिलने की संभावना है। विश्व बैंक के एक दूसरे अधिकारी 'पीटर राइट' ने भी भारत की अर्थनीति और व्यवस्था की विशेष प्रशंसा की है। वे कहते हैं कि भारत बहुत ईमानदारी से विकास योजनाओं की पूर्ति में लगा हुआ है। यह बात इस की साख को बहुत बढ़ा देती है। विश्व बैंक के अधिकारियों की ये सम्मतियां उन निराशावादियों को उत्तर देने के लिये काफी हैं, जो भारत की आर्थिक नीति और व्यवस्था से सदा असन्तुष्ट रहते हैं।

यथार्थ की ओर चिन्तन

पिछले दिनों केरल के मुख्य मंत्री श्री नम्बूद्रीपाद ने एक पत्र प्रतिनिधि सम्मेलन में कहा था कि यदि पत्रकार वेतन बोर्ड की सिफारिशें केरल में अमल में लायी जायं तो केरल के अनेक पत्र बन्द करने पड़ेंगे। हमारी दृष्टि में यह आदर्श से यथार्थ की ओर चिन्तन है। केरल शासन मिश्रित अर्थव्यवस्था के पक्ष में है, यह भी यथार्थवाद की ओर एक कदम है। हमारी यह निश्चित सम्मति है कि यदि बिना पूर्व आग्रह के कम्यूनिस्ट भी अपना उत्तरदायित्व समझकर देश की आर्थिक समस्याओं पर विचार करेंगे तो वे भावुकता की बजाय व्यावहारिकता के अधिक निकट आयेंगे और प्रस्तुत समस्याओं के स्पष्ट रूप को देखकर अपनी नीति में उचित परिवर्तन करने का प्रयत्न करेंगे और इस तरह समस्याओं का समाधान आसान हो जायगा।

सम्पदा के ग्राहकों व एजेण्टों से

सम्पदा का कार्यालय अब किराये के मकान से हटकर अपने मकान में आ गया है। इसलिए भविष्य में इस पते पर पत्र-व्यवहार करें—

सम्पदा कार्यालय
२८/११ शक्तिनगर दिल्ली—६
—मैनेजर

हमारे कुछ प्रमुख एजेन्ट

(१) ऊषा बुक एजेन्सी,
चौड़ा रास्ता, जयपुर सिटी।

(२) साहित्य निकेतन,
श्रद्धानन्द पार्क, कानपुर।

(३) श्री प्रकाशचंद सेठी,
३१, मल्हारगंज, इन्दौर शहर।

(४) मोहन न्यूज एजेन्सी,
कोटा (राजस्थान)।

(५) श्री बालकृष्ण इन्दोरिया,
किले के पीछे, चूरू (राजस्थान)।

देश का महान् घरेलू उद्योग—

घी तथा दूध से बने पदार्थ

भारत में प्रति वर्ष लगभग १ करोड़ ३ लाख ८ हजार मन घी उत्पन्न किया जाता है, जिसका मूल्य लगभग १ अरब ८५ करोड़ रु० होता है। उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, बम्बई तथा बिहार घी उत्पादन के मुख्य केन्द्र हैं। देश के कुल घी उत्पादनका ५० प्रतिशत उत्पादन इन राज्यों में होता है। सभी क्षेत्रों में दूध से समान मात्रा में घी नहीं निकलता। यह दूध की किस्म था घी निकालने की विधि पर निर्भर करता है।सामान्यतः एक मन दूध से लगभग २ सेर ५ छटांक घी निकलता है।

भारत में घी का व्यापार उतना प्राचीन है, जितना कृषि। घी उत्पादन यहां का घरेलू उद्योग रहा है। वस्तुतः यह पशु-पालन का एक अंग है। गांवों में दूध काफी होता है। सबकी खपत नहीं हो पाती। बचे हुए दूध की चिकनाई को सुरक्षित रखने का एकमात्र उपाय है—उसका घी तैयार कर लेना। अतः यही विधि यहां प्रचलित है।

भारत में घी का सबसे अधिक प्रयोग भोजन पकाने में किया जाता है। इसके अतिरिक्त देशी दवाइयां तैयार करने, मालिश करने तथा सुंघनी को खुशबूदार बनाने में भी घी का उपयोग होता है।

बाजार में बिकने वाला घी अधिकतर भैंस के दूध से तैयार किया जाता है। कभी-कभी उसे गाय के दूध से तैयार किये गये घी के साथ मिला दिया जाता है। एग मार्क योजना के अंतर्गत सबसे पहले घी का वर्गीकरण किया गया, जिससे शुद्ध तथा पूर्व परीक्षित घी प्राप्त हो सके।

दूध से बने पदार्थ

भारत में घी के अतिरिक्त मक्खन, दही, खोआ, आइसक्रीम तथा क्रीम भी तैयार की जाती है और इन पदार्थों का व्यापारिक महत्व बहुत है। किन्तु घी की अपेक्षा इन पदार्थों का उत्पादन बहुत कम है। दूध से इन वस्तुओं का औसत उत्पादन इस प्रकार है—मक्खन ६.६ प्रतिशत, दही ८६.२ प्रतिशत, खोआ २० प्रतिशत, आइसक्रीम १२.१६ प्रतिशत तथा क्रीम ६.८ प्रतिशत। अनुमान है कि भारत में मक्खन का वार्षिक उत्पादन १६ लाख ३० हजार मन है, जिसमें ७.४ प्रतिशत मक्खन तथा शेष देशी मक्खन होता है। कुल उत्पादन का २।५ से अधिक भाग केवल पंजाब में उत्पन्न होता है। उत्तरप्रदेश, बम्बई तथा बिहार मक्खन उत्पादन की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

भारत में प्रतिवर्ष दही का उत्पादन ३ करोड़ ५६ लाख ७६ हजार मन है। सबसे अधिक उत्पादन उत्तरप्रदेश में होता है। इसके बाद बिहार, आन्ध्र तथा पंजाब का नम्बर आता है। आइसक्रीम तथा खोआ के उत्पादन में भी उत्तरप्रदेश अन्य राज्यों से बढ़ा-चढ़ा है। देश में २७ लाख ३७ हजार मन आइसक्रीम तैयार की जाती है, जिसका काफी भाग उत्तरप्रदेश में तैयार होता है। देश में खोए का उत्पादन ४२ लाख ५८ हजार मन है, जिसका तीन-चौथाई भाग केवल उत्तरप्रदेश में तैयार होता है।

क्रीम केवल शहरी क्षेत्रों में तैयार की जाती है और इसकी खपत भी शहरी क्षेत्रों में ही है। इसका वार्षिक उत्पादन ३ लाख ३१ हजार मन है, जिसका ५० प्रतिशत उत्तरप्रदेश में ही होता है।

राज्यों में सम्पदा स्वीकृत

सम्पदा को निम्नलिखित राज्यों के शिक्षा-विभाग ने अपने अपने राज्य के स्कूलों, कालेजों तथा सार्वजनिक वाचनालयों के लिए स्वीकृत किया है—

राज्य	परिपत्रक संख्या	दिनांक
(१) उत्तरप्रदेश	पुस्तक ५२५७	१२-१-[illegible]
(२) बिहार	७३३/२पी/१/५३	२७-११-[illegible]
(३) पंजाब	३२०६/५/२५/बी-५३-२६१४३	२३-७-[illegible]
(४) मध्यप्रदेश		
(स्कूलों के लिए)	२ जी/वी	२-८-[illegible]
(कालेजों के लिए)	३४२८ ३XVIII	२४-८-[illegible]
(५) राजस्थान	३६८०/Edu II/५२	६-१२-[illegible]
(६) मध्यभारत	३ : १५ : २ : ५२बी/२५६५	२४-३-[illegible]

नई कर पद्धति : एक विचारपूर्ण अध्ययन

श्री एन. ए. पालखीवाला

वर्तमान कर-पद्धति के अन्दर पहली भूल यह है कि उसकी रूपरेखा अस्थायी और अनिश्चित है। आय कर निगमके अन्दर यह अनिश्चितता सबसे ज्यादा है। कोई वर्ष ऐसा नहीं जाता है और कभी कभी आधे वर्ष के अन्दर ही, जिसमें इनकम टैक्स धारा १९२२ में कोई संशोधन हुये, बिना नहीं होता। हमारे देश के इतिहास में किसी भी कर में इतना संशोधन या परिवर्तन नहीं हुआ है, जितना कि इन्कम टैक्स में हुआ है। इसमें कई परिवर्तन ऐसे हुये हैं, जिनके लिये कोई भी विचारपूर्ण कारण नहीं है। उदाहरणार्थ, व्यापार घाटा जो प्रति वर्ष हिसाब में आगे ले जाया जाता है, उस सम्बन्धी नियम को देख लें।

फाइनेन्स एक्ट १९५५ में परिवर्तन होने से पूर्व ऐसा नियम था कि किसी भी घाटे को छः वर्ष से आगे ढोकर नहीं ले जाया जा सकता। फाइनेन्स एक्ट १९५५ में इसकी अवधि पूर्णरूपसे हटा दी गयी और ऐसा माना गया कि अनिश्चित अवधि तक हम घाटे को ढोये ले चल सकते हैं। फिर फाइनेन्स एक्ट (नम्बर २) में घाटे ढोये ले चलने की नयी अवधि आठ वर्ष की निर्धारित की गई। इसके बीच में इसमें परिवर्तन के लिये कुछ भी उपाय नहीं किया गया है।

इनकम टैक्स नियम में जिसका नागरिक पर कठोर प्रभाव पड़ता है, कई ऐसे दोष हैं जिनके सम्बन्ध ने खास-खास जगह पर अधिकारियों को बतलाया गया है लेकिन खेद है कि इसमें कोई भी सुधार नहीं हुआ है। लेकिन साथ ही साथ जहां पर राजस्व प्राप्ति में बाधा पहुँचने की बात है, वहां इसका तत्काल संशोधन कर दिया गया है बिना इस बात को ध्यान दिये कि यह संशोधन न्यायपूर्ण, उचित अथवा अनुचित है। ऐसा कहना कि जैसे मनुष्य का संपूर्ण जीवन परीक्षण से भरा है, वैसे ही कानून भी परीक्षण से भरे हैं, उचित नहीं है। परीक्षण आंख मूंद जल्द जल्द नहीं होना चाहिये, जिससे आगे चलकर कानून का आवश्यकीय विकास ही पूर्णरूप से नष्ट हो जावे। इस तरह के संक्रामक परिवर्तनसे काफी कष्ट पहुँचता है कि आय एक वर्ष में होती है और कर अगले वर्ष के लिये निर्धारित किया जाता है। इस तरह जब तक फाइनेन्स बिल पास होता है, कर दाता के सामने मुसीबत उपस्थित हो जाती है। किसी भी करदाता को न्यायपूर्ण और साफ साफ तरीकों तथा इमानदारी से काम करने का मौका नहीं मिलता है।

नई कर-पद्धति के अन्दर दूसरी सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण बात यह है कि इसके अन्दर नागरिक की सुविधा का कुछ भी ध्यान नहीं किया गया है। आज किसी को भी इस बात की चिन्ता नहीं है कि कानूनी ढंग से कारोबार चलाने के लिये कानून मानने वाले नागरिक को कानून सम्बन्धी जटिल फार्म भरना होता है और कितना झंझट उठाना पड़ता है। एक दूषित वातावरण उपस्थित हो जाता है। जितना ही ज्यादा कर लगाने के पेंचीदे तरीके होंगे उतना ही शासन शक्ति ज्यादा कायम करनी होगी, मानव शक्ति ज्यादा नष्ट होगी, ज्यादा सरकारी कर्मचारी रखे जावेंगे, ज्यादा व्यय होगा और इसलिये ज्यादा कर लगाने की आवश्यकता होगी।

नई कर पद्धति के अन्दर तीसरी कमी यह है कि इसके अन्दर न्याय और ईमानदारी नहीं है। बहुत वर्ष पूर्व हाउस आफ लार्डस ने निर्णय दिया था कि कर और न्याय दोनों परस्पर अपरिचित चीजें हैं। लेकिन इतना होते हुए भी हम ऐसे कोई कारण नहीं देखते, जिससे वे एक दूसरे के लिये शत्रु हों। नई कर पद्धति के अन्दर कई ऐसी धाराएं हैं जो कि सचाई और स्वस्थ व्यवहार की दुश्मन हैं। उदाहरणार्थ इंडियन इनकम टैक्स धारा २३ को देखें। इसमें एक उपधारा है जिसमें ऐसी कंपनियों में जिनमें जनता का हिस्सा कम है, नफे का निर्धारित भाग लाभांश के रूप में घोषित करना होगा। एक कम्पनी के केस में जैसा कि हाउस आफ लार्डस ने कहा था कम्पनी के लिये यह कानूनी दंड है कि वह ज्यादा लाभांश नहीं घोषित करती है। भारतीय कानून में यदि ज्यादा लाभांश घोषित नहीं करने के लिये ज्यादा कारण हैं तो भी कम्पनी को धारा २३ ए के अनुसार कम्पनियों को कुछ निश्चित प्रतिशत लाभांश

दती है तो उसे फाइनेन्स एक्ट १६५८ के अन्दर दंड देना होगा। इस सम्बन्ध में इंडियन पेनल कोड याद आता है, जिसमें बतलाया गया है कि यदि आप डकैती करते हैं तो आपको सात वर्ष का कारागार होगा और यदि आप डकैती नहीं करते, तो आपको पांच वर्ष की जेल होगी।

इसी के समान उदाहरण बोनस शेयरों का भी है। इस कर से सरकार को कम राजस्व प्राप्त होता है लेकिन इसको लागू करने से स्वस्थ रूप से आर्थिक विकास नष्ट हो जाता है। इस तरह का कर बिलकुल ही नहीं लगाया जाना चाहिये। बोनस शेयर कम्पनी के नफे से निकलते हैं, जिस पर पहले भी कर लग चुका है और बोनस शेयर लगने के बाद शेयर होल्डरों की उचित कीमत पहले के समान ही रह जाता है।

चौथी बात जो नई कर प्रणाली के अन्दर दिखाई देती है, वह यह है कि इसका आकार राष्ट्र के विकास के लिये लाभप्रद न होकर ज्यादातर केवल सिद्धान्त पर ही आधारित है। मनगढ़न्त सिद्धान्त से देखने पर तो नई करपद्धति अवश्य ही आकर्षक दिखाई देगी। आपकी आय पर आय-कर लगता है, व्यय पर कर, बचत पर, पूंजी पर, जीवन में आप जो दान देते हैं उस पर उपहार कर (गिफ्ट टेक्स) और यदि आप बिना खर्च के किये हुए मर जाते हैं तो उस पर एस्टेट ड्यूटी। अब यह प्रश्न उठता है कि इस तरह की कर प्रणाली क्या स्वस्थ आर्थिक विकास के लिये उचित है। यदि हम स्पष्ट रूप से ध्यान दें तो पता चल जावेगा कि भारतवर्ष में लाभ कमाने के लिये धन कम है, खर्च करने के लिये कम है, पूंजी लगाने के लिये कम है, दान देने के लिये कम है ऐसी हालत में नये कर सर्वथा अविवेकपूर्ण दिखाई देते हैं। जहां पर केवल वेल्थ टेक्स और इनकम टैक्स ही मिलकर व्यक्ति की वार्षिक आय से १०० प्रतिशत ज्यादा हो जाते हैं, वहां स्पष्ट यह पता चलता है कि नई कर पद्धति लगाने का केवल एकमात्र यही उद्देश्य है कि हम किसी की सम्पत्ति को बिना मुआवजा (उचित मूल्य) दिये ही हड़प कर लें।

इस संदर्भ में यह ध्यान में देने योग्य है कि जो राष्ट्र अविवेकपूर्ण सिद्धान्तों पर अपनी नीति बनाते हैं, उनको भारी नुकसान उठाना पड़ता है। यथार्थवादी नीति अपनाने से उन्हें कुछ भी नुकसान नहीं होता।

नई कर प्रणाली के अन्दर पांचवीं और अति घातक चीज है कर लगाने-सम्बन्धी अधिकारियों की व्यवहार नीति। जहां हमारे सामने कई ऐसे उदाहरण हैं जहां पर करदाता कर नहीं देने के कारण बरबाद हो गए वहां हमें एक भी ऐसा उदाहरण नहीं दिखाई दिया, जिसमें एक भी इनकम टैक्स अधिकारी को अन्यायपूर्वक कर लगाने के लिये, जो विभिन्न प्रान्तों में लगाये जाते हैं, दण्ड मिला हो। कई ऐसे उदाहरण आये देखे गये हैं जहां इनकम टैक्स अधिकारियों ने कभी-कभी ऐसा अनुमान लगाया है, जहां पर किसी भी मनुष्य की विचार शक्ति नहीं पहुँच सकती है। जहां आजकल ज्यादा कर लगने लगा और कर का बोझ भी ज्यादा है वहां यह उचित है कि अधिकारीगण केवल उचित कर ही लें और देश के किसी भी नागरिक से अन्यायपूर्ण कर न लें। कर से बचना गुनाह है, लेकिन उससे भी ज्यादा गुनाह है अन्यायपूर्ण कर लगाना। हमारे शासकों में बुद्धि की कमी नहीं, वास्तविक दोष उच्च पदाधिकारियों का है, जो इनकम टैक्स अधिकारियों को तरक्की देते हैं चूंकि अधिकारियों के अंदर एक भ्रम उपस्थित हो गया है कि उनकी तरक्की केवल इस पर निर्भर है कि वे अनुचित तरीकों से ज्यादा से ज्यादा कर सरकार को दिला सकें। ऐसी हालत में कई जगह जहां पर इनकम टैक्स आफिसर को मालूम है कि उसे वैसा आदेश नहीं देना चाहिये जैसा वह दे रहा है, फिर भी अपनी तरक्की के लोभ में बाध्य होकर अनुचित कार्य करने में संकोच नहीं करता।

यदि हम कर प्रणाली में हुये परिवर्तन तथा कर वसूल करने वाले अधिकारियों की नीति दोनों की तुलना करके देखें तो हमें पता चलेगा कि कर वसूल करने वाले अधिकारियों की नीति में परिवर्तन होना चाहिये। कानून से उतनी हानि नहीं है, जितना कर वसूल करने वालों से।

अंत में हम इतना ही कहना चाहते हैं कि यह ज्यादा अच्छा है कि हम स्वच्छ और न्यायपूर्ण कानून बनायें जिसका पालन प्रत्येक नागरिक सहयोग की भावना से कर सके। ऐसा अन्यायपूर्ण कानून नहीं बनाना चाहियें, जिससे कानून मानने वाले नागरिक उसका पालन नहीं कर सकें।

—

आज की कुछ आर्थिक समस्याएं

ले०—जी० डी० सोमानी

इस बात से सभी सहमत हैं कि जनता कल्याण राज्य में सुखी रहे तथा राष्ट्र की शक्ति इस लक्ष्य की प्राप्ति की ओर संलग्न रहे। कल्याण राज्य में निस्सन्देह समान वितरण न्यायोचित, आवश्यक व अनिवार्य है। यह बात हमारे हृदय तथा दिमाग दोनों को ठीक जंचती है। कुछ वर्गोंका विचार है कि ऐसा न्याय तभी हो सकता है, जब कुछ लोगों की भारी आय को घाटा दिया जाय।

समान वितरण के नाम पर अब चालू होने वाले नवीन वेतन सिद्धान्त के बारे में मैं कुछ तर्क किये बिना नहीं रह सकता। यह उतना ही भ्रमजनक है, जितना पुराना सिद्धांत। प्रथम वेतन सिद्धान्त का—जिसके अनुसार वेतन के रूप में बांटने के लिए प्राप्य राष्ट्रीय आय को नहीं बढ़ाया जा सकता—मजदूरों ने विरोध किया था। वर्तमान नया वेतन सिद्धांत भी, जो आजकल देश में प्रचलित हो रहा है और जिसके अनुसार जनता का जीवन स्तर, कुछ धनी लोगों की सम्पत्ति को घटाये बिना तथा उस सम्पत्ति पर विविध कर लगाये बिना ऊंचा नहीं किया जा सकता, सरासर भ्रमजनक है। मैं मजदूरों से अनुरोध करता हूँ कि वे इस पक्षपातपूर्ण वेतन निधि सिद्धान्त का दृढ़ता से विरोध करें। धन को ही अन्तिम लक्ष्य समझना गलत है। वह एक साधन मात्र है। दूसरे शब्दों में—असल समस्या यह नहीं है कि एक आदमी कितना कमाता है ? अथवा कितना धनी है ?—बल्कि समस्या यह है कि वह अपनी आमदनी तथा पूंजी को कैसे खर्च करता है।

अगर आमदनी तथा पूंजी का उपयोग उत्पादन कार्यों में होता है तो उससे दूसरों के धन में भी वृद्धि होगी।

\+ + +

वैयक्तिक तथा संयुक्त आमदनी—दोनों पर कर लगाने की नीति भारी बोझ डालती है। निजी कारोबार ने राष्ट्र के कल्याण के लिये बहुत कुछ किया है, और कर रहा है—इस नीति के कारण उससे अधिक आशा रखना व्यर्थ है। सरकार को इस बात पर ध्यानपूर्वक विचार करना चाहिए कि कर लगान की नीति में किस प्रकार उदारता दिखाई जाय, जिससे पूंजी निर्माण अधिक हो सके और विकास के प्रयत्न अधिक से अधिक सफल हो सकें। लेकिन यह भी ध्यान में रखे कि इस प्रकार की उदारता से सरकार की वार्षिक आय में भी कमी न हो, क्योंकि न्यायोचित कर लगाने से सरकार को अन्ततोगत्वा अधिक लाभ होता है। कर लगाने की नीति ऐसी होनी चाहिए, जिससे उद्योगों के विकास की संभावना बढ़ती रहे।

\+ + +

आधुनिक व्यापार तथा कारोबार कुछ थोड़े से लोगों की चीज नहीं है। वास्तव में आधुनिक व्यापार सबसे अधिक प्रजातंत्रात्मक संस्था है। "टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी" संभवतः भारत में सबसे बड़ी निजी संस्था है। इसके ४७,००० शेयर होल्डर हैं, करीबन उनमें से बहुत कम लोगों के शेयर प्रतिव्यक्ति १०,००० रु० से भी कम हैं तथा ८७ प्रतिशत लोगों के शेयर ५००० रु० प्रति व्यक्ति है। ऐसी अवस्था में उद्योग को कुछ थोड़े से लोगों की चीज समझना सचाई से दूर भागना है।

\+ + +

मजदूर सम्बन्धी कानूनों के सम्बन्ध में स्थिति कुछ संतोषजनक है। इस क्षेत्र में राष्ट्रीय तौर पर त्रिपक्षीय विचार विमर्श हुए, जिससे परस्पर मतभेद दूर हुए। प्रबन्धक कमेटियों में कारीगरों के भाग लेने का विचार एक निश्चित रूप धारण करता जा रहा है और ३० से भी अधिक मिलों ने (सिजी तथा सरकारी क्षेत्र में) "संयुक्त प्रबन्धक समिति" चलाने के लिए सहमति प्रकट की है। निजी क्षेत्र के अनेक अधिकारियों ने संयुक्त समिति के विचार के प्रति कुछ तर्क वितर्क किया तथा यह इच्छा प्रकट की कि कुछ चुने हुए औद्योगिक संगठनों में अपनी इच्छापूर्वक संयुक्त प्रबन्धक समितियों की स्थापना की जाय। न कि कानूनी तौर पर अनिवार्य रूप से उद्योग में अनुशासन वा आचरण सम्बन्धी संहिता, जिसे सरकार, मिल मालिक एवं कारीगरों के प्रतिनिधियों ने काफी विचार विमर्श के बाद तय्यार किया था,—सचमुच बहुत महत्वपूर्ण है।

आज देश में ट्रेड यूनियन आन्दोलन का अनेक कारणों से राजनीतिक पार्टियों के कार्यक्रमों के साथ निकट सम्बन्ध है। आवश्यकता यह है कि यह आन्दोलन राजनीतिक नेताओं की दलबन्दी से स्वतन्त्र हो और मजदूरों से ही उनके नेतृत्व का विकास हो। इसलिए मैं इस बात का स्वागत करता हूँ कि औद्योगिक कारीगरों को ट्रेड यूनियन आन्दोलन के बारे में प्रशिक्षित करने का कार्यक्रम तय्यार किया गया है।

राज्य बीमा योजना में कुछ सुधार करने होंगे। मजदूरों ने शिकायत की है कि उनका दवा-दारू तथा चिकित्सा सम्बन्धी स्तर बहुत निम्न है, तथा उन्हें आवश्यक कागजातों को भरने के लिए बड़ी मुसीबतें उठानी पड़ती हैं, जिससे समय तथा पैसा दोनों बरबाद हो जाते हैं। राज्य बीमा निगम के पास करीबन १२ करोड़ रु० की निधि है जिसका उपयोग अब तक नहीं हुआ है। फिर भी यह निगम कर्मचारियों की सुविधाओं के लिये तथा उनकी आर्थिक कठिनाइयों को दूर करने के लिए बिलकुल कोशिश नहीं कर रहा है और दूसरी ओर समय समय पर सुझाव रखा जाता है कि इस निधि को बढ़ाने के लिये मिल मालिक अपना योग और अधिक दें। मेरा स्पष्ट सुझाव यह है कि, सरकार तथा राज्य बीमा निगम—दोनों मिल मालिकों पर अतिरिक्त बोझ डालकर निगम की धन राशि बढ़ाने की बजाय कर्मचारियों की स्थिति को सुधारने के प्रति तुरन्त ध्यान दें।*

* अखिल भारतीय उद्योग विनियोजक संगठन के रजत जयन्ती सम्मेलन के अध्यक्षीय भाषण के कुछ अंश।

भारत में आधुनिक उद्योगों का विकास

प्रो० चतुर्भुज मामोरिया

प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत

प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत राजकीय और निजी उद्योग क्षेत्र में औद्योगिक उत्पादन बढ़ाने की व्यवस्था की गई। योजना को कार्यान्वित करने के लिए निर्धारित २३.५६ करोड़ रुपयों में से १४६ करोड़ (अर्थात् ७.६ %) उद्योगों और खनिज विकास में लगाया गया। प्रथम योजना में ऐसे उद्योगों को प्राथमिकता दी गई जो देश के लिए आधारभूत उद्योग माने जाते हैं, और जिन उद्योगों का अभी तक अपेक्षाकृत कम विकास हुआ था। यदि राजकीय और निजी उद्योग क्षेत्रों को एक साथ मिलाकर देखा जाय तो ज्ञात होगा कि कुल व्यय का २६ प्रतिशत धातु शोधन उद्योगों के लिए २० प्रतिशत पेट्रोल शोधन शालाओं के लिए, १६ प्रतिशत इन्जीनियरिंग उद्योगों के लिए; ८ प्रतिशत वस्त्र उद्योग के लिए; ५ प्रतिशत सीमेंट और लगभग ४ प्रतिशत कागज, पट्टे और अखबारी कागज उद्योग के लिए रखा गया था। औद्योगिक विकास कार्यक्रम के लिए प्रथम योजना काल में निम्न प्रकार से प्राथमिकता दी गई :—

(१) जूट और प्लाईवुड जैसे उत्पादक वस्त्र उद्योग और सूती कपड़े, चीनी, साबुन, बनस्पति, रंग और वार्निश जैसे उपभोक्ता उद्योग की वर्तमान उत्पादन क्षमता का पूर्ण उपयोग किया जाय।

(२) लोहा व इस्पात, एल्यूमीनियम, सीमेंट, रासायनिक खाद, भारी रासायनिक पदार्थ, मशीनों के औजार आदि उद्योगों की वर्तमान उत्पादन क्षमता को बढ़ाया जाय।

(३) जिन उद्योगों को आरम्भ करने के लिए पूंजी लगा दी गई है, उन्हें पूरा किया जाय।

(४) देश के औद्योगिक ढांचे को अधिक शक्तिशाली बनाने के लिए अपने साधनों को ध्यान में रखते हुए नये कारखाने स्थापित किये जायें, जैसे जिप्सम से गन्धक और रेयन के लिए रासायनिक लुब्दी बनाने के उद्योग।

प्रथम योजनाकाल में (१) जूट, मोटरों, मशीनों के औजार तथा कपड़े की मशीनों और चूड़ियों का उत्पादन करने वाले उद्योगों की वास्तविक उत्पादन क्षमता में किसी प्रकार का परिवर्तन करने की व्यवस्था नहीं की गई, क्यों कि इनकी उत्पादन क्षमता पर्याप्त थी और इनकी वर्तमान उत्पादन क्षमता को बनाये रखने के लिए ही अधिकांशतः प्रयत्न किये गये।

(२) ढले हुए लोहे, इस्पात. चीनी, सीमेंट, कागज, पट्टा, दियासलाई तथा अन्य रासायनिक पदार्थों के उद्योगों की वास्तविक उत्पादन क्षमता में वृद्धि की योजना की गई किन्तु यह वृद्धि प्रत्येक उद्योग में १०० प्रतिशत से कम ही रखी गई।

(३) बिजली से चलने वाले पम्पों, डिजिल-इन्जिनों, सीने की मशीनों, बाइसिकलों इत्यादि उद्योगों के जिनकी वास्तविक उत्पादन क्षमता मांग के अनुपात में कम थी, काफी प्रसार करने की योजना बनाई गई। इसी श्रेणी में अन्य उद्योग—काटन लिंटर्स, रासायनिक लुगदी, कुछ दवाइयां, (जिनका भारत में उत्पादन नहीं किया जाता था) भी रखे गये।

प्रथम योजना काल में उत्पादन के जो लक्ष्य निर्धारित किए गये थे, उनमें से कुछ लक्ष्यों की पूर्ति हो चुकी है; कुछ में उत्पादन लक्ष्य से भी अधिक बढ़ गया है। और कुछ में विभिन्न कारणों से लक्ष्यों की पूर्ति नहीं हो पाई। प्रथम श्रेणी के अन्तर्गत सीमेंट, कागज, रेयन, सोडा एश, कास्टिक सोडा, बिजली के ट्रांसफार्मर, बाइसिकलें, सीने की मशीनें, पैट्रोल शोधन आदि उद्योग हैं। द्वितीय श्रेणी के अन्तर्गत सूती वस्त्र, शक्कर और बनस्पति तेल उद्योग हैं। तृतीय श्रेणी के अन्तर्गत लोहा और इस्पात, एल्यूमीनियम, मशीन टूल, खाद, डीजल एन्जिन, पम्प, रेडियो, बैटरी, बिजली के लैंप, लालटेनें, बिजली के पंखे जूट उद्योग, रंग, रोगन, प्लाईवुड, अलकोहल, कांच और सुपरफास्फेट आदि उद्योग हैं।

इस योजना काल में देश में प्रथम बार इन वस्तुओं का उत्पादन किया गया :—

विरल मिट्टी (Rare Esrth) कम्पाउंड, धुनने की मशीनें, स्टैलपरेशे, सैलूलोज के धागे, कैल्शियम कारबाइड,

हाईड्रोजन पेरोक्साइड, कास्टिक सोड़ा, अमोनियम क्लोराईड, पेन्सीलिन, डी. डी. टी. अखबारी कागज, स्वचालित करघे, इस्पात के तार, जूट कातने की फ्रेमें, टरबाइन, पंप, बिजली की मोटरें और ट्रांसफार्मर आदि।

इस योजना काल में सरकारी क्षेत्र में निम्न औद्योगिक विकास योजनाएं कार्यान्वित की गईं ;—

(१) सिन्द्री खाद का कारखाना, (१९५१) सिन्द्री बिहार।

(२) चित्तरंजन रेल इन्जिन का कारखाना, मिहो-झाम, बिहार।

(३) भारतीय टेलीफोन तार का कारखाना, रूपनारायनपुर, पश्चिमी बंगाल।

(४) हिन्दुस्तान टेलीफोन उद्योग, बंगलौर।

(५) हिन्दुस्तान वायुयान कारखाना, बंगलौर।

(६) हिन्दुस्तान पोत निर्माण कारखाना, विशाखापट्टनम्।

(७) रेल के डिब्बों का कारखाना, पेराम्बूर, मद्रास।

(८) पेन्सीलीन कारखाना, पिम्परी, पूना।

(९) डी. डी. टी. कारखाना दिल्ली।

(१०) मशीनों के पुर्जे बनाने का कारखाना, जलहाली बंगलौर।

(११) इस्पात के कारखाने—(i) क्रप-डिमाग द्वारा आयोजित रूरकेला का इस्पात का कारखाना, रूरकेला (उड़ीसा)।

(ii रूस द्वारा आयोजित, भिलाई इस्पात कारखाना, भिलाई (म० प्र०)

(iii) ब्रिटिश योग द्वारा दुर्गापुर इस्पात कारखाना दुर्गापुर (प० बंगाल)

(१२) राष्ट्रीय वैज्ञानिक यंत्रों का कारखाना।

(१३) भारतीय विस्फोटक कारखाना, बिहार।

(१४) नीपा पेपर मिल, नीपानगर, (मध्य प्रदेश)।

प्रथम योजना काल में औद्योगिक उत्पादन के सूचनांक १९४६ के आधार पर १९५० में १०५ से बढ़कर १९५१ में ११७, १९५२ में १२९, १९५३ में १३५, १९५४ में १४७ और १९५५ में १६२ हो गये। इस काल में विभिन्न उद्योगों में इस प्रकार उत्पादन बढ़ा :—

उत्पादन में वृद्धि

	१९५०-५१	१९५५-५६	प्रतिशत वृद्धि
डीजल एन्जिन	५,५३६	१०,३६९	८७
मोटरें	१६,५००	२५,३००	५३
एल्यूमीनियम	३,६७७ टन	७,३३३ टन	९९
सीमेंट	२,६८९ ह० टन	४,५९२ ह० टन	७१
इस्पात	९७६ ह० टन	१,२७४ ह० टन	३१
बिजली की मोटरें	९९ ह० अ० श०	२७२ ह० अ० श०	१७५
गंधक का तेजाब	९९ ह० टन	१६४ ह० टन	६६
सोडा एश	४५ ह० टन	८१ ह० टन	८०
अमोनियम सल्फेट	४६ ह० टन	३९४ ह० टन	७५६
रंग-रोगन	३० ह० टन	३९ ह० टन	३०
कांच की चादरें	११७ ला० वर्ग फीट	३९७ ला० वर्ग फीट	२३९
जूट का सामान	८२४ ह० टन	१,०५४ ह० टन	२८
सूत	११,७९० ला० पौंड	१६,३३० ला० पौंड	३९
सूती वस्त्र	३७,१६० ला० गज	५,१०२ ला० गज	३७

ढला लोहा	१,५७२ ह० टन	१,७८७ ह० टन	१४
दियासलाई	५४० हजार डिब्बे	६६२ ह० डि०	२३
बाइसिकलें	१०१ हजार	५१३ हजार	४१०
जूते (विदेशी टाइप के)	३,१८२ हजार जोड़े	३,२५६ हजार जोड़े	२
चीनी	१,०६४ हजार टन	१७०१ ह० टन	६०
कागज और पट्ठा	११४ हजार टन	१८७ ह० टन	६४

नई औद्योगिक नीति (१६५६)

देशमें १६५४ में राष्ट्रीय सरकार द्वारा समाजवादी व्यवस्था को स्वीकार किये जाने पर औद्योगिक नीति में भी परिवर्तन किया गया। यह नई नीति ३० अप्रैल १६५६ को घोषित की गई। इस नीतिका अभिप्राय यह है कि देश के भावी औद्योगिक विकास में राज्य का उत्तरदायित्व दिन पर दिन बढ़ता जायेगा और बहुत से आधारभूत उद्योगों का राष्ट्रीयकरण किया जायेगा तथा नये आधारभूत उद्योग राज्य द्वारा ही खोले जायेंगे। इस प्रकार सार्वजनिक क्षेत्र का उत्तरोत्तर विकास किया जायगा। कुछ उद्योगों को वैयक्तिक क्षेत्र (Private Sector) में भी रखा गया है जिससे वैयक्तिक प्रयास भी देशके औद्योगिक विकास में अपना सहयोग दे सके।

नई औद्योगिक नीति के अनुसार भारतीय उद्योगों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया गया है:—

(१) प्रथम भाग में, जो कि सूची 'क' (Schedule A) कहलाता है, ये उद्योग सम्मिलित हैं जो पूर्णतः सार्वजनिक क्षेत्र में रहेंगे। इस प्रकार के उद्योगों की संख्या १७ है। इस प्रकार के उपयोग ये हैं:—

सुरक्षा के लिए हथियार व गोला, बारूद और युद्ध सामग्री सम्बन्धी अन्य उद्योग, लोहा और इस्पात, अणु-शक्ति, भारी मशीन निर्माण (जिनकी आवश्यकता लोहे और इस्पात के उद्योग, खानों, मशीन टूल उद्योग और अन्य आधारभूत उद्योगों में होता है); भारी बिजली की मशीनें, भारी कास्टिंग, कोयला और लिगनाइट, खनिज तेल, लोहा, मैंगनीज, क्रोम, जिप्सम, गंधक, सोना और हीरा निकालने का उद्योग, ताम्बा, जस्ता, सीसा, टिन, वूलफ्रॉम, और मोली बिड़नम निकालने और उन्है साफ करने का उद्योग, अणु-शक्ति से सम्बन्धित खनिज, वायुयान व रेल निर्माण तथा जलपोत निर्माण उद्योग, टेलीफोन और बिजली का उत्पादन और वितरण।

(२) दूसरे प्रकार के वे उद्योग होंगे, जिनमें राज्य तथा वैयक्तिक प्रयास दोनों ही सम्मिलित होंगे अर्थात् जिनकी स्थापना राज्य के द्वारा होगी और उनमें वैयक्तिक प्रयास भी सहयोग देंगे। ये उद्योग सूची 'ख' में निर्देशित हैं। इस प्रकार के उद्योग ये हैं :—

अन्य सभी प्रकार के खनिज (छोटे खनिजों को छोड़ कर) अल्यूमीनियम और वे खनिज जिनका उल्लेख सूची 'क' में नहीं किया गया है, मशीन टूल्स, फैरो-एलाय और यन्त्र बनाने का इस्पात, रासायनिक उद्योगों में प्रयोग में आने वाले पदार्थ, दवाइयां, रंग, प्लास्टिक आदि ऐन्टी-बायोटिक दवाइयां, खाद, रासायनिक लुगदी, सड़क और जल यातायात।

(३) तीसरी श्रेणी में वे सभी उद्योग होंगे जो पूर्णतः वैयक्तिक क्षेत्र में छोड़ दिये जायेंगे और वैयक्तिक पूंजीपतियों के अधिकार में रहेंगे—इनमें मुख्यतः बागान उद्योग, कपड़ा उद्योग, चीनी उद्योग आदि हैं।

अब तक जो भारी व आधारभूत उद्योग वैयक्तिक प्रयास के अंतर्गत हैं, वे बने रहेंगे किन्तु जो नये भारी कारखाने खोले जायेंगे, उन्हें सरकार खोलेगी। जिन उद्योगों में सरकार प्रवेश करेगी वह कार्य धीरे-धीरे ही किया जायगा और क्रमशः ही उनका राष्ट्रीयकरण होगा।

—

जीवन बीमा कार्पोरेशन का विनियोजन

भारत में पूंजी विनियोजन का सबसे बड़ा प्रतिष्ठान जीवन बीमा कार्पोरेशन है। १९५७ के अंत में इस संस्था का कुल विनियोजन ४०० करोड़ रुपए था। विनियोजन के लिये अतिरिक्त बचत की रकम का अनुपात वार्षिक दर में ३० करोड़ रुपये या प्रतिदिन १० लाख रु० का है। यह अनुमान किया गया है कि अगले दस वर्षों के अंत में इस संस्था का विनियोजन १००० करोड़ रुपए तक पहुँच जाएगा। अपने विनियोजन और काम-काज के स्तर में इस संस्था का स्थान वही है, जो ग्रेट ब्रिटेन में प्रूडेनशियल और अमेरिका में मेट्रोपालिटन का है। इधर यह प्रश्न उठा है कि जीवन-बीमा कार्पोरेशन के विनियोजन की क्या नीति हो। इस संबंध में कई सुझाव दिये गये। पर वे सब इस दृष्टि से दिए गए कि यह संस्था केवल विनियोजक मात्र है। पर हकीकत में उसके लिए विनियोजन का कार्य गौण स्थान नहीं रखता है। उसका प्रमुख कार्य ट्रस्टी का है। लोगों से प्रीमियम चंदे के द्वारा जो रकम उसे मिलती है, जनता की उस बचत को सुरक्षित रखना उसका प्रथम काम है। यद्यपि कानून की दृष्टि से सरकार को उसके काम-काज को देखने का अधिकार है, पर यह स्मरण रहे कि जीवन-बीमा कार्पोरेशन की रकम सरकार की नहीं है। उसकी रकम ट्रस्ट फंड के रूप में है, जो सरकारी निधियों से जुदा है। इसलिए उसके धन के विनियोजन की योजना निर्धारित करते समय इस तत्व को न भूलना चाहिए। यदि इस पर दुर्लक्ष किया गया, तो कार्पोरेशन की प्रगति को धक्का लगेगा। इसलिए उसके धन का विनियोजन करते समय इन लक्ष्यों पर ध्यान रहना चाहिए—

(१) जिन धंधों में रकम लगायी जाए, उनके मूल्य की स्थिरता हो। उसकी रकम आसानी से किसी भी समय वापस मिल सके।

(२) मूलधन की सदा सुरक्षा हो।

(३) मूल्य की स्थिरता पर विचार न करने पर विनियोजन किया जाए तो आयकी सबसे ऊंची दर हो।

(४) विनियोजन लेने वाले प्रतिष्ठान की सम्पदा पर अधिकार हो, जबकि विनियोजन की रकम जोखम में प्रकट हो।

(५) एक व्यक्ति अपना विनियोजन चाहे जैसे कर सकता है, यद्यपि वह भी इन निर्देशों पर ध्यान देता है, किंतु वह किसी के आगे जबाव देह नहीं होता है। किन्तु कार्पोरेशन का विनियोजन विधिवत आधार पर ही संभव है। किन्तु इसका यह भी अर्थ नहीं कि कड़े शिकंजे में विनियोजन हो। उससे भी समाज को कोई लाभ न पहुँचेगा। विनियोजन की व्यवस्था इन निर्देशों के आधार पर लचीली हो।

★

३ करोड़ ४४ लाख रु० के नये सिक्के

१९५८-५९ में ३ करोड़ ४४ लाख रु० के नये सिक्के ढाले जाएंगे और जारी किये जाएंगे। अब तक काफी नये सिक्के डाले जा चुके हैं और पुराने सिक्कों के स्थान पर उन्हें जारी भी किया जा चुका है। मार्च, १९५८ के अंत तक २ करोड़ ५६ लाख रु० के नये सिक्के जारी किये गये। इनमें से ३८ लाख ६६ हजार रु० के १ नये पैसे के, ३१ लाख ७० हजार रु० के २ नये पैसे के, ६१ लाख २१ हजार रु० के ५ नये पैसे के और १ करोड़ २० लाख २६ हजार रु० के १० नये पैसे के सिक्के हैं।

★

सबसे अधिक ऋण भारत को

भारत के लिए स्वीकृत दो ऋणों पर हस्ताक्षर हो जाने तथा जापान को विद्युत्-शक्ति के लिए प्रदान किए जाने वाले दो अन्य ऋणों की बातचीत सम्पूर्ण हो जाने के बाद विश्व-बैंक द्वारा एशिया को दिये जाने वाले ऋण १ अरब डालर तक पहुँच जायेंगे।

शेष पृष्ठ ३३२ पर

आर्थिक विषमता और बेरोजगारी

श्री विश्वम्भरनाथ पाण्डेय

जिन अनेक कारणों से समाजवादी वर्तमान समाज के पुनर्निर्माण की मांग करते हैं, उनमें पूंजीवाद की आर्थिक विषमता और बेरोजगारी तथा इनसे उत्पन्न होने वाली अनेक सामाजिक बुराइयों का महत्वपूर्ण स्थान है। पूंजीवादी देशों में जनसंख्या के अल्प प्रतिशत लोग ही राष्ट्रीय आय का अधिकांश हड़प लेते हैं—जैसे इंगलैन्ड में श्री आर्थर लेविस के अनुसार वहां की कुल जनसंख्या के दो प्रतिशत लोग राष्ट्रीय आय का २० प्रतिशत भाग प्राप्त कर लेते हैं और शेष ९८ % प्रतिशत जनता के भाग में राष्ट्रीय आय का मात्र ८० % भाग ही पड़ता है। सामाजिक नीति तथा न्याय की दृष्टि से यह स्थिति सर्वथा अनपेक्षित है। समाजवाद का आदर्श समता है। आर्थिक कारणों के अतिरिक्त सामाजिक एवं नैतिक न्याय की प्रतिष्ठा के लिये भी समता की आवश्यकता सिद्ध होती है। इस बात का कोई आधार तथा संतोषजनक उत्तर नहीं मिलता कि क्यों समाज के कुछ व्यक्तियों को नितान्त विलासितापूर्ण जीवन बिताने के लिये आवश्यकता से अधिक साधन प्राप्त होने दिये जायं, जबकि अधिकांश व्यक्तियों को जीवन की न्यूनतम आवश्यकताओं के उपभोग से भी वंचित रहना पड़ता है।

विषमता निवारण के उपाय

समाजवादी दर्शन के प्रभाव में वर्तमान समाज की विषमताओं को दूर करने के निम्नांकित उपाय बताये जाते हैं:—

(क) मृत्युकर तथा आयकर जैसे प्रत्यक्ष करों को और भी अधिक प्रगतिशील बनाया जाय;

(ख) सरकार उन वस्तुओं के उत्पादन में आर्थिक सहायता (Subsidies) प्रदान करें जिनका उपभोग गरीबों द्वारा होता है। इसका परिणाम यह होगा कि उन वस्तुओं के मूल्य में कमी हो जाने के कारण गरीबों का उपभोग-स्तर ऊंचा होगा तथा उनकी सीमित आय का कम भाग साधारण-उपभोग की वस्तुओं के क्रय में खर्च होगा। आय का शेष भाग वे आराम की वस्तुओं पर व्यय कर सकेंगे और उनका सर्वांगीण जीवन-स्तर भी ऊंचा होगा।

(ग) गरीबों के शारीरिक, मानसिक तथा सांस्कृतिक विकास के लिये सरकारी जन-सेवा का पर्याप्त विस्तार होना चाहिये, जिससे इनके समाज का नवनिर्माण हो। एतदर्थ स्वास्थ्य-सेवाओं (अस्पतालों), औषधि केन्द्रों, निःशुल्क शिक्षा संस्थाओं, विनोद घरों तथा शिशु एवं मातृ सदनों आदि का यथेष्ट प्रसार होना अपेक्षित है।

इन सेवाओं का परिणाम द्विपक्षी (दुतरफा) होगा। पहला यह कि इससे सम्पत्ति का हस्तान्तरण होगा, क्योंकि सरकार धनियों से कर लेकर कर की राशि को ही सेवाओं और वस्तुओं के रूप में गरीबों को अर्पित करेगी। (२) गरीबों के बच्चों की अर्जन शक्ति का शारीरिक तथा मानसिक स्तर पर विकास होगा, जो आर्थिक विषमता को मिटाकर एक स्वस्थ और समता-प्रधान समाज की नींव डालने समर्थ होगा।

(घ) कभी कभी समाजवादी आय की विषमता को रोकने के लिये मजदूरों की न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर देने की भी सिफारिश करते हैं। किन्तु यदि गम्भीरतापूर्वक सोचा जाय तो पता चलेगा कि इससे उद्देश्य की सिद्धि होने में संदेह है। मजदूरी के बढ़ाने से पूंजीपति के लाभ की मात्रा घट जायगी। पूंजीपति यह आसानी से बर्दाश्त नहीं कर लेगा। वह अपने लाभ की पुरानी मात्रा बनाये रखने के लिये वस्तुओं का मूल्य बढ़ा देगा। अस्तु, मजदूरों को जो लाभ मजदूरी के बढ़ने से होगा वह मूल्य की वृद्धि के कारण शून्य (Neutralized) हो जायेगा और वे ज्यों के त्यों बने रहेंगे। पूंजीपतियों की इस विरोधी-क्रिया को अशक्त करने का एक उपाय है और वह यह कि सरकार वस्तुओं का उचित मूल्य निश्चित कर दे और उनमें वृद्धि न होने दे। किन्तु तब इस बात का भय होगा कि पूंजीपति धीरे धीरे उन वस्तुओं के उद्योगों में पूंजी विनियोजन शुरू कर दें, जिनका मूल्य निश्चित (Control) नहीं किया गया है और लाभ की कमी के कारण निर्धारित मूल्यों के उद्योगों का संकोचन करने लगें। उद्योगों के संकोचन के कारण उत्पा-

दन कार्य घटेगा और अनेक मजदूरों की छटनी शुरू हो जायेगी। समष्टिगत दृष्टि से मजदूर वर्ग के लिये यह स्थिति हितकर नहीं कही जायेगी। अतः आर्थिक विषमता को दूर करने के लिये न्यूनतम मजदूरी निश्चित करने की नीति का क्षेत्र संकुचित तथा कंटकमय है।

कहने का तात्पर्य यह है कि सरकार को कुछ ऐसे कार्य (वित्तीय एवं सामाजिक) करने होंगे, जिनसे आय का वर्तमान असमान वितरण नष्ट हो, क्योंकि कारण रूप से अर्जन और विकास के अवसर की विषमता को नष्ट करके ही भावी समाज की समता का आधार निर्मित किया जा सकता है।

बेरोजगारी

वर्तमान पूंजीवादी अर्थतंत्र के आय-वैषम्य (राष्ट्रीय आय के असमान वितरण) और उससे उत्पन्न सामाजिक बुराइयों के साथ एक दूसरी सामाजिक समस्या भी है, और वह है बेकारी की। समाजवाद व पूंजीवाद के बीच चुनाव करते समय हमें इस प्रश्न पर भी विचार करना होगा। पूंजीवाद का यह एक महान दुर्गुण है कि इसके अन्दर उत्पादन-यंत्र को रह रहकर शिथिल कर दिया जाता है, जबकि समाज में अभाव और गरीबी की कमी नहीं होती। इसका कारण यह होता है कि उत्पादन के अनेक साधनों तथा उनसे भी अधिक महत्वपूर्ण-मानव शक्ति को बेकार हो जाना पड़ता है। एक ओर मनुष्य काम और मजदूरी चाहता है, किन्तु दूसरी ओर काम के कारखाने जानबूझ कर बन्द कर दिये जाते हैं। इस प्रकार जानबूझ कर दैन्य और अभाव की स्थिति लादी जाती है और नितान्त दुखद रूप से 'विपुलता के बीच विपन्नता' की स्थिति उत्पन्न की जाती है। सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री श्री ए० सी० पीगू के शब्दों में यह एक कष्ट कर विरोधाभास (Paradox) की स्थिति होती है। समाज का एक वर्ग वस्तु और सेवाओं का अभाव अनुभव करता है तो दूसरी ओर मनुष्य एवं उत्पादन के साधनों का वह वर्ग बेकार रखा जाता है, जो उन वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन कर सकता है। वास्तव में यह विरोधाभास पूंजीवादी सभ्यता के उन विरोधाभासों में से एक है, जिनके आधार पर कार्लमार्क्स ने कहा था कि पूंजीवाद स्वयं अपने विरोधाभासों के कारण ही नष्ट हो जायेगा। अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक 'पूंजीवाद, समाजवाद और प्रजातंत्र' में प्रो० सुम्पीटर ने लिखा है कि 'पूंजीवाद मर गया और इसे मैं समझता हूँ दूसरी जिन्दगी उधार भी नहीं मिल सकती।' जिस विरोधाभास की चर्चा हम अभी कर रहे हैं, वह पूंजीवादी अर्थतंत्र की आकस्मिक घटना नहीं अपितु नियमित रूप से होने वाली आवश्यक घटना है, जो प्रायः १०, ११ वर्षों में एक वार होती ही रहती है। इतना ही नहीं पूंजीवादी अर्थतंत्र में वस्तुओं का अभाव जानबूझ कर उत्पन्न किया जाता है, जिससे मूल्य स्तर ऊपर उठे। यह विश्व-विदित है कि विश्व व्यापी मन्दी के १९२९-१९३३ के दिनों में ब्राजील ने पर्याप्त मात्रा में कहवा (काफी) समुद्र में फेंक दिये। अमेरिका और कनाडा में गेहूं जला दिया गया और पूंजीवादी मनोवृत्ति के अर्थशास्त्रियों के परामर्श से प्रेसिडेण्ट रूजवेल्ट ने केलिफोर्निया के सेव के बगीचे कटवा दिये। यह सब उन दिनों किया गया, जबकि उन्हीं देशोंमें व्यापक बेकारी के कारण गेहूँ, रुई, सेव और कहवा के लिये लालायित रहने वाले बेकार स्त्री पुरुषों की संख्या कम नहीं थी। इस प्रसंग में सुप्रसिद्ध फेबियन समाजवादी बर्नार्ड शा की एक कहानी श्रव्य है। एक पूंजीवादी देश में बड़े परिश्रम और अध्यवसाय के बाद किसी वैज्ञानिक ने एक ऐसे शीशे की उत्पादन-प्रणाली का आविष्कार किया, जो टूट नहीं सकता था और लागत व्यय भी कम पड़ता था। अपना इस लोक कल्याणकारी खोज पर वैज्ञानिक बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने सोचा, अब गरीब से गरीब व्यक्ति के घर में भी सुन्दर और स्वच्छ शीशे के बर्तन पहुँच जायेंगे। किसी पूंजीपति को यह बात मालूम हुई और छल-चातुर्य से उसने उस वैज्ञानिक के आविष्कार की 'पेटेन्ट' खरीद ली। किन्तु उस पेटेन्ट को काम में लाने की अपेक्षा उसने यह सोचकर जला दिये कि अगर कांच टूटेगा ही नहीं तो कारखाना चलेगा कैसे? इस प्रकार विज्ञान की लोककल्याणकारी खोज से समाज वंचित रह गया और विज्ञान की रचनात्मक शक्ति अग्नि की आहुति बना दी गई। तात्पर्य यह कि पूंजीवादी अर्थतंत्र जानबूझ कर उत्पादन यंत्र को इस प्रकार चलाता है कि मांग से अधिक पूर्ति होने न पावे, चाहे ऐसा करने में उत्पादक साधनों को बेकार भी

क्यों न कर देना पड़े। समाज के ऊपर कृत्रिम ढंग से लादी गई यह बेरोजगारी या बेकारी निन्द्य है।

गतिशील समाज

यदि समाज स्थिर हो, उसकी जनसंख्या, लोगों की रुचि व पसन्द, उत्पादन प्रणाली और आय आदि अपरिवर्तन शील हों तो अर्थशास्त्रियों का मत है कि विनियोजन (invest ment) की मात्रा को स्थिर करके उत्पादन क्रिया को ऐसे स्तर पर टिका दिया जा सकता है, जबकि उत्पादन का कोई भी साधन बेकार नहीं रहेगा। किन्तु वास्तव में समाज गतिशील है और लोकरुचि, जनसंख्या, परम्परा, रीति रिवाज (Fashion) और आमदनी आदि में निरन्तर परिवर्तन होते रहते हैं। समाज की इस गतिशीलता वा अस्थिरता के कारण नियुक्तियों के क्षेत्र में हम दो प्रकार की गति पाते हैं।

(१) सापेक्षिक गति—यह गति उत्पादन अथवा उत्पादन प्रणाली के बदलने के कारण उत्पन्न होती है। स्पष्ट है कि नियुक्तियों की यह सापेक्षिक गति पूंजीवादी तथा समाजवादी दोनों अर्थतंत्रों में अनिवार्य रूप से उपस्थित होगी। अतः इस सापेक्षिक गति के कारण समाज में उत्पन्न होने वाली सापेक्षिक बेकारी (Relative unemploy ment) जिसे अधिक प्रचलित शब्दावली में संघर्षात्मक बेकार (Frictional unemployment) कहते हैं दोनों ही अर्थतंत्र में अपरिहार्य रूप से उपस्थित रहेगी।

(२) निरपेक्ष गति—यह गति पूंजीवादी आर्थिक जगत के मन्दी और तेजी के काल में पायी जाती है जिसका प्रभाव सम्पूर्ण अर्थतंत्र पर पड़ता है। इसका प्रधान कारण विनियोजन की अस्थिरता है। मंदी के युग में मूल्य स्तर के गिर जाने तथा पूंजीपतियों के लाभ की मात्रा में कमी होने के कारण उत्पादन कार्य शिथिल हो जाता है। कारखाने या तो बन्द हो जाते हैं या उनके उत्पादन का पैमाना घटा दिया जाता है। ऐसी स्थिति में श्रमिकों की छटनी होती है। कुछ लोग बेकार हो जाते हैं—समाज में क्रयशक्ति की कमी हो जाती है जिसके कारण बाजार में वस्तुओं की मांग गिर जाती है। मांग की कमी के कारण मूल्य कुछ और घटता है, उत्पादन को और भी धक्का लगता है तथा उत्पादन की मात्रा फिर घटानी पड़ती है। फलतः कुछ और लोग बेकार होते हैं। क्रयशक्ति फिर कम होती है, मांग घटती है, मूल्य स्तर निम्नतर होता है और उत्पादन की मात्रा पुनः घटायी जाती है और छटनी के कारण बेकारों की संख्या पुनः बढ़ती है। इस प्रकार बेकारी का दुश्चक्र हर बार पिछली बार से बड़ा वृत्त बनाता है और अन्ततोगत्वा बेकारी की समस्या विकट रूप धारण कर लेती है। देखना यह है कि वास्तविक बेकारी को दूर करना समाजवाद में अधिक सम्भव है या पूंजीवाद में ?

प्रचलित समाजवाद में आर्थिक योजना और उसके संचालन के लिये एक केन्द्रीय योजना-समिति का विशिष्ट स्थान है और चूंकि समाजवाद में सभी उद्योग एक ही सरकारी नियंत्रण के आधीन होते हैं, अतः उनको एक नीति से चलाना तथा उनके कार्यों में समन्वय स्थापित करना समाजवाद में अधिक आसान है अपेक्षाकृत पूंजीवाद के। पूंजीवाद में कोई ऐसी केन्द्रीय संस्था नहीं होती जो सब उद्योगों की अभिभावक हो। इसके अतिरिक्त कार्य संचालन तथा नीति निर्धारण के लिये आवश्यक आंकड़ों की प्राप्ति भी समाजवाद में पूंजीवाद की अपेक्षा अधिक सहज है। इस पृष्ठ भूमि में हम बेकारी दूर करने के आधुनिक उपचारों की तुलनात्मक कार्यक्षमता पर विचार करेंगे।

आजकल दिवंगत अर्थशास्त्री श्री जे० एम० किन्स के सिद्धान्तानुसार बेकारी के दो उपचार प्रचलित और मान्य हैं—जनकार्य नीति (Public works policy) और मुद्रा नीति (Monetary policy)। पुलिस राज्य का युग बीत गया, अब कल्याण राज्य (welfare state) का युग है। अतः ऐसा माना जाता है कि जब कभी व्यक्तिगत अंचल के पूंजी-विनियोजन की मात्रा कम पड़ जाय और उत्पादन कार्य में ह्रास के कारण बेकारी फैलने की आशंका हो तब सरकार को जनकार्यों के नियोजन द्वारा पूंजी विनियोजन की कमी पूरी कर देनी चाहिये। इसके अतिरिक्त केन्द्रीय बैंक की सहायता से कुछ ऐसी मुद्रानीति—जैसे सूद की दर कम करना आदि का अनुसरण करना चाहिये, जिससे आर्थिक समाज में मुद्रा और साख का विस्तार हो। अस्तु—ये दोनों नीतियां एक दूसरे से पृथक् नहीं अपितु परस्पर पूरक हैं।

बेकारी की समस्या के परिहार के लिये इन दोनों ही उपचारों की कार्यक्षमता पूंजीवाद में अपेक्षाकृत कम होती है। इसके कई कारण हैं। प्रथम कारण यह है कि पूंजीवाद में सरकारी विनियोग का परिमाण इतना कम होता है कि उसके द्वारा कुल विनियोग को प्रभावित नहीं किया जा सकता। उदाहरण के लिये इंगलैंड में सरकारी विनियोग कुल विनियोग का मात्र $\frac{1}{4}$ भाग है। (२) इसके अतिरिक्त सरकारी विनियोग के अधिकांश की प्रकृति कुछ ऐसी होती है कि उसे प्रायः समान और एक स्तर पर रखा जाता है। अथवा यों कहें कि उनकी घटती-बढ़ती, मंदी व तेजी से नहीं प्रभावित होती अपितु देश की राजनीतिक स्थिति से। उदाहरण के लिये रक्षात्मक उद्योगों के विनियोजन को मंदी काल के लिये रोक नहीं रखा जा सकता। यह दूसरा कारण है। (३) तीसरा कारण यह है कि पूंजीवादी सरकार छोटी छोटी स्वायत्त संस्थाओं में विभक्त होती है, जिन्हें एक नीति के अनुसरण करने के लिये बाध्य करना कठिन होता है। यह नहीं कहा जाता कि समाजवाद में स्वायत्त संस्थाएं होंगी ही नहीं। अपितु कहने का अभिप्राय यह है कि समाजवाद में स्वायत्त संस्थाओं की नीति और दर्शन की एकात्म भावना के कारण एक अर्थ-नीति का व्यापक अनुसरण पूंजीवाद की अपेक्षा अधिक आसान होगा।

समाजवादी समाज, जिसके विभिन्न औद्योगिक अंचल एक ही केन्द्रीय योजना समिति के नियंत्रण में होते हैं, इन सब बाधाओं में से मुक्त होता है। इसलिये बेकारी की समस्या को दूर करने के लिये जन-कार्य-नीति को समाजवादी समाज अधिक योग्यता, क्रियाशीलता और सरलता से प्रयुक्त कर सकता है।

अब रही मुद्रा नीति की कार्यक्षमता की बात। अर्थशास्त्र का यह सर्वमान्य सिद्धान्त है कि रोजगार विनियोग स्तर पर अवलम्बित है। विनियोग को घटा बढ़ा कर हम रोजगार को घटा बढ़ा सकते हैं। उसी प्रकार विनियोग को स्थिर रखकर देश के रोजगार-स्तर को भी हम स्थिर कर सकते हैं। किन्तु चूंकि समाज प्रगति शील है, विनियोग की स्थिरता सदा अपेक्षित नहीं। सामाजिक आर्थिक स्थिति की विभिन्न परिस्थितियों के अनुसार विनियोग में भी परिवर्तन होना चाहिये। इसके लिये कुल चलित मुद्रा (money in circulation) की संख्या में परिवर्तन की अपेक्षा होती है। मुद्रा की संख्या को घटाने बढ़ाने में बैंकों की साख का महत्वपूर्ण स्थान है। अतः न्यायतः यह प्रमाणित हो जाता है कि बैंकों के द्वारा कुल मुद्रा की संख्या को यथास्थिति घटा बढ़ा कर अपेक्षित विनियोग-स्तर की स्थापना हो सकती है। किन्तु प्रश्न है—क्या पूंजीवाद के व्यावसायिक बैंक राष्ट्रीय हित की कामना से संचालित हो सकेंगे? क्या उनकी मुद्रा-नीतियों में अपेक्षित एकरूपता तथा सामञ्जस्य होगा? क्या मंदी के युग में जबकि विनियोग के स्तर को उठाने के लिये अर्थतंत्र को अधिक रुपये और ऋण की आवश्यकता होगी, ये बैंक लाभ की भावना का त्याग कर अपना सूद-दर घटायेंगे? इन तीनों ही प्रश्नों का उत्तर निश्चित 'नहीं' है। तभी तो पूंजीवादी देशों में भी व्यावसायिक बैंकों के ऊपर एक केन्द्रीय बैंक की आवश्यकता मानी जाती है तथा उसे प्रत्यक्ष रूप से राज्य के आधीन रखा जाता है। अस्तु। राष्ट्रीय हित की दृष्टि से अधिकोषण संस्थाओं की मुद्रा-नीति की अनुकूलता के लिये जिस अंश तक पूंजीवादी देशों में केन्द्रीय बैंकों तथा उनकी सरकारी आधीनता को स्वीकृति दी जाती है, कम से कम उस अंश तक तो समाजवाद की श्रेष्ठता स्वयं सिद्ध हो जाती है।

इस प्रकार प्रस्तुत विवेचन के निष्कर्ष निम्नांकित हुए:—

(१) पूंजीवादी समाज के स्थान पर उस समाजवादी समाज की स्थापना होनी चाहिये, जिसका आधार अवसर और आय की समानता होगा।

(२) केन्द्रीय योजना समिति से युक्त समाजवादी अर्थतंत्र में बेकारी की समस्या का समाधान पूंजीवादी अर्थतंत्र से अधिक उत्तम, योग्य और आसान होगा, इसमें संदेह नहीं।

हमारे नए बाट

श्री परमानन्द दोषी एम. ए.

भला कौन ऐसा सभ्य आदमी होगा, जो बाट-बटखरे को नहीं जानता होगा। रुपए-पैसों की तरह बाट बटखरों से हमें सदैव ही ताल्लुक रहा करता है। खरीद-फरोख्त, लेन-देन और उधार-पेंचे में परिमाण अथवा तौल की बात बाट-बटखरों से ही होती है। दशमिक प्रणाली जिसके करिश्मे हम लगभग एक वर्ष पूर्व से देखते चले आ रहे हैं। वह अब अपने दामन में 'बाटों' और पैमानों को भी समेटने जा रही है। जिस प्रकार जनवरी १९५७ से हम दैनिक तापमान को सेंटीग्रेड अन्शों में और वर्षा को मिलीमीटरों में नापने लगे हैं और अप्रैल, १९५७ से दाशमिक प्रणाली के सिक्के जारी किए गए हैं, जिसमें रुपए को १६ आने, ६४ पैसे अथवा १९२ पाइयों के बदले १०० नये पैसों में बांटा गया है, उसी प्रकार अब अक्तूबर, १९५८ से हमारे सम्मुख मीटर-प्रणाली के बाट और पैमाने आने वाले हैं।

बाट पैमाने की एकरूपता

मीटर-प्रणाली को क्यों चालू किया जा रहा है—यह प्रश्न जितना जटिल है, इसका उत्तर उतना ही सरल है। बात यह है कि वर्तमान समय में अपने देश में सैंकड़ों प्रकार के बाट और पैमाने चालू हैं। बाट और पैमानों की यह विविधता सैंकड़ों वर्ष पूर्व से चली आ रही है। इन नाना प्रकार के बाटों और पैमानों के चलते नाना प्रकार की दिक्कतें, उलझनें और गड़बड़ियां उत्पन्न होती रहती हैं। बेईमानी, ठगी, धोखेबाजी लूट, अन्धेर— चाहे जैसी भी संज्ञा दें, बाटों की विविधता के कारण सबकी सब उपयुक्त ही होंगी। एक राज्य के बाट और पैमाने दूसरे राज्य के बाट और पैमानों से भिन्न प्रकार के हों, यह बात कुछ हद तक न्यायसंगत जंचती है। परन्तु एक राज्य के विभिन्न जिलों, एक जिले के विभिन्न सबडिविजनों, एक सबडिविजन के विभिन्न स्थानों, यहां तक कि एक गांव के विभिन्न परिवारों के बाट और पैमानों में बड़ा अन्तर पाया जाता रहा है। यह एक दम असंगत बात है। ये बाट और पैमाने भी सिक्कों की अपेक्षा कम आवश्यक नहीं है; क्योंकि सिक्कों के समान ये भी व्यवहृत हुआ करते हैं। ऐसी दशा में इनके प्रतिमानों, आकार-प्रकार, तौल-बनावट आदि सभी पहलुओं में इतनी विषमता और विभिन्नता सर्वथा अनुचित है। इसी विषमता की वजह से बहुत असुविधाओं का सामना आये दिन लोगों को करना पड़ता है। इसका अन्त करके सिक्कों की भांति ही अखिल भारतीय स्तर पर बाटों और पैमानों की एकरूपता के सांचे में ढालना परमावश्यक है।

मीटर प्रणाली ही क्यों ?

देश भर में एक बाट और पैमाने एक ही प्रकार के रहें, इस बात को स्वीकार कर लेने के पश्चात अब यह देख लेना उपयुक्त प्रतीत होता है कि कौन कौन सी प्रणाली अपनायी जाय। किसी प्रणाली-विशेष के विषय में कुछ कहने के पूर्व यह देख लेना भी उचित जंचता है कि उस मान्य प्रणाली में कौन-कौन सी विशेषताएं होनी चाहिए। वैसे तो बाटों और पैमानों की एक-रूपता स्थिर करने वाली प्रणाली में बहुत सारे गुण होने चाहिएं; परन्तु संक्षेप में उसको सरल, बोधगम्य और सीधा साधा होना चाहिए। उसकी सभी इकाइयां एक इकाई से उत्पन्न हों, जिससे उसका परस्पर सम्बन्ध हो और समस्त प्रणाली मिल करएक हो। बड़े तथा छोटे बाट या पैमाने एक से और सरल अंशों के होने चाहिए, जो लम्बाई तौल और तरलता की माप आदि की सभी इकाइयों के लिए एक से हों तथा इनका रूप ऐसा हो, जिससे राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर उद्योग-व्यापार में सरलता से व्यवहार किया जा सके। ये सारी विशेषताएं किस प्रणाली में पाई जा सकती है—यह देख लेना भी प्रासंगिक प्रतीत होता है।

सर्व प्रथम अब तक प्रचलन में रहने वाली भारतीय प्रणालियों को देखें। भारत में बाटों के रूप में सेर और पौंड प्रचलित रहे हैं। उनके सबसे छोटे अंश विभाजित करके निकालने पर सवा-ढाई आदि का बखेड़ा रह जाता है। गज, फर्लांग, मील आदि में यही बात है। तरल पदार्थों के नापने का तो कोई ऐसा पैमाना ही नहीं है

जिसकी हमारी केन्द्रीय सरकार ने परिभाषा की है। क्षेत्रफल और घनफल नापने के पैमानों की भी यही दशा है। इस सबके सवा ढाई सूचक जब बाट और पैमाने बनेंगे तो वे काफी असुविधाजनक सिद्ध होंगे। यही वजह है कि किसी भी वर्तमान भारतीय प्रणाली में अखिल भारतीय रूप ग्रहण करने की क्षमता नहीं है। अब हमारे सम्मुख दो ही प्रणालियां शेष रह गयीं—पहली ब्रिटिश प्रणाली और दूसरी मीटर प्रणाली। जहां ब्रिटिश प्रणाली केवल ब्रिटेन, अमेरिका तथा ब्रिटिश-राष्ट्रमंडल के देशों में चलती हैं, वहां मीटर-प्रणाली विश्व के प्रायः अन्य सारे देशों में प्रचलित है। यहां तक कि इस प्रणाली को इंगलैण्ड, अमेरिका तथा ब्रिटिश-राष्ट्रमंडल के देशों का भी कानूनी समर्थन प्राप्त हो चुका है।

मीटर प्रणाली नाम क्यों ?

इस प्रणाली को मीटर की संज्ञा देने की मुख्य वजह यह है कि इसका मुख्य और आधारभूत पैमाना मीटर है। इससे बड़े जितने पैमाने होते हैं वे सब इसी मीटर को दस-दस से गुणा करते जाने पर और छोटे पैमाने दशमांश करते जाने पर बनते जाते हैं। सारे विश्व के लिए मान्य बना देने के उद्देश्य से मीटर की लम्बाई का पृथ्वी की परिधि से सम्बन्ध स्थापित किया गया है। पृथ्वी के उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव से निकलने वाली परिधि रेखा के चौथाई भाग के करोड़वें भाग को मीटर निश्चित किया गया है और इसी को मीटर-प्रणाली का आधारभूत पैमाना माना गया है। मीटर शब्द यूनानी शब्द मेट्रन और लेटिन क्रिया "मे" से निकला है, जिसका अर्थ है मापना।

मीटर प्रणाली की आधारभूत इकाई मीटर के नाम पर ही रखी गयी है। कुछ विशेष अवस्थाओं में एक मीटर के दसवें भाग के घन में आने वाले पानी का भार एक किलोग्राम माना जाता है। एक किलोग्राम पानी अंटने वाले पात्र को लीटर कहते हैं। एक घन डेसीमीटर एक लीटर के बराबर होता है। प्रत्येक इकाई को केवल दशमिक रीति से घटाया बढ़ाया जाता है। प्रत्येक दशमिक अंश के आगे एक एक उपसर्ग लगाकर उस अंश द्वारा व्यक्त की जाने वाली इकाई का बोध किया जाता है। केवल तीन आधारभूत इकाइयों अर्थात मीटर, ग्राम और लीटर तथा इन ६ उपसर्गों, अर्थात किलो (१०००) हेक्टो (१००), डेका (१०), डेसी (१/१०), सेन्टी (१/१००), मिलो (१/१०००) लगाकर समस्त मीटर-प्रणाली के बाट और पैमाने बना लिये गये हैं। आदर्श प्रणाली की कसौटी पर कसने से यह प्रणाली पूर्ण सिद्ध होती है।

मीटर-प्रणाली अभी ही क्यों ?

मीटर-प्रणाली यद्यपि अब चालू की जा रही है परन्तु इसके विषय में बातें आज से लगभग ६० वर्ष पहले से ही होने लगी थीं। सन् १८९० ई० में ही तत्कालीन भारत सरकार ने इस सम्बन्ध में आवश्यक कानून पास किया था। परन्तु कई कारणों से, जिनमें ब्रिटेन के व्यापारियों द्वारा विरोध किया जाना प्रमुख है, इसे लागू नहीं किया जा सका। जब से भारत स्वाधीन हुआ है, तब से ही इस दिशा में फिर से प्रयत्न होने लगा और अब यह प्रणाली इस स्थिति में आ गई है कि इसका विधिवत व्यवहार किया जा सके। दूसरे अभी अपने देश में द्वितीय पंचवर्षीय योजना चल रही है। इस योजना का मुख्य लक्ष्य देश में औद्योगिक विकास करना है। योजना की परिसमाप्ति तक देश में औद्योगिक क्रान्ति होकर रहेगी। वैसी दशा में नयी प्रणाली चालू करने में काफी कठिनाइयां उत्पन्न हो जायंगी। अभी तो देश का औद्योगिक विकास अपने प्रारम्भिक चरण पर ही है। अतएव मीटर प्रणाली लागू करने का यही उपयुक्त अवसर है।

अभी जब इस प्रणाली का समारम्भ किया जायगा तो एक बारगी अन्य प्रचलित प्रणालियों को समाप्त नहीं किया जायेगा। उन प्रणालियों के साथ-साथ यह नवीन प्रणाली भी चलती रहेगी। दस वर्षों तक ऐसी स्थिति रहेगी और दसवें वर्ष के समाप्त होते होते वर्तमान समय में प्रचलित सभी प्रणालियां स्वतः समाप्त हो जायेंगी और मीटर-प्रणाली ही अकेली बच पायेगी, ऐसी ही व्यवस्था की गयी है। ऐसा करना बड़ा ही अच्छा है, क्योंकि प्रचलित प्रणालियों के अनायास समाप्त कर दिये जाने से उत्पादन में बाधा पड़ेगी, औद्योगिक विकास के मार्ग अवरुद्ध होंगे और अनावश्यक खर्च होने की भी आशंका थी।

(शेष पृष्ठ ३३७ पर)

सामुदायिक विकास के मुख्य कार्य

श्री व्ही० टी० कृष्णमाचारी

कृषि उत्पादन को बढ़ाकर ही हम आयोजना के लक्ष्यों को पूरा कर सकते हैं और इस दृष्टि से आयोजना को सफल बनाने में सामुदायिक विकास आंदोलन को बहुत बड़ा काम करना है। कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए भारत के देहातों में रहने वाले ६ करोड़ परिवारों को प्रयत्न करना होगा। सामुदायिक विकास आंदोलन का यह काम है कि वह सहकारिता के आधार पर आयोजित ग्राम-संस्थाओं के द्वारा या सदस्य परिवारों द्वारा उपज बढ़ाने के प्रयत्नों में सहायता करे।

कृषि उत्पादन बढ़ाने के कार्यक्रम का मूल उद्देश्य देहाती जनता के जीवन स्तर को उन्नत करना है। यह तभी सम्भव हो सकता है, जब भूमि का पूरा लाभ उठाया जाये, आधुनिक वैज्ञानिक अनुसन्धानों को लागू किया जाए, और वर्तमान अर्थ-व्यवस्था में कुछ परिवर्तन किया जाए।

१९५६ में केन्द्रीय और राज्य सरकारों के प्रतिनिधियों ने इस बात पर जोर दिया था कि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं को पूरा करने, कृषि-आय को बढ़ाने तथा कृषि और अन्य उद्योगोंके बीच आय के अन्तर को कम करने के लिए ऐसा कार्यक्रम अपनाना जरूरी है, जिससे दस वर्ष में उपज दुगुनी हो जाए। ऐसा करके ही हम औसत आय को बढ़ाने का लक्ष्य पूरा कर सकते हैं। सरकार की यह नीति है कि जहां तक सम्भव हो, सिंचाई की सुविधाओं का जल्दी से जल्दी उपयोग किया जाए। पहले सरकार केवल बांध और नहर बनाकर देती थी और खेतों तक नालियां बनाकर पानी ले जाने का काम किसानों पर छोड़ देती थी। इससे बहुत समय तक सामान्यतः दस-पन्द्रह वर्ष तक सुविधाओं का पूरा उपयोग नहीं हो पाता था। पहली पंचवर्षीय आयोजना से सरकार ने अपनी नीति बदल दी है, क्योंकि जल्दी से जल्दी सिंचाई की सुविधाओं का उपयोग न करने पर हमें प्रति वर्ष लगभग ३०-४० करोड़ रु० का घाटा ब्याजके रूप में होगा। सिंचाई की सुविधाओं का जल्दी से जल्दी पूरा उपयोग करने के लिए निम्नलिखित बातों का होना आवश्यक है:

(१) पानी इकट्ठा करने के लिए बांधों का निर्माण

(२) गांवों तक पानी पहुंचाने के लिए नहरों और नालियों का निर्माण,

(३) प्रत्येक गांव में किसानों द्वारा अपने अपने खेतों तक नालियों का निर्माण, जिससे पानी मिलते ही तुरन्त उसका लाभ उठाया जा सके। और

(४) खेती के तरीकों में सुधार।

सिंचाई आयोजन का कार्य यह देखना है कि ये चारों बातें सुचारू रूप से पूरी हो जाएं और सिंचाई की सुविधाओं का पूरा लाभ मिल जाए।

दूसरे आयोजना-काल में बड़ी और छोटी सिंचाई योजनाओं से लगभग १ करोड़ ६० लाख एकड़ भूमि की सिंचाई करने का लक्ष्य है। दूसरे आयोजनाकाल के १५ वर्ष बाद की स्थिति का अनुमान लगावें तो १९७६ तक बड़ी और छोटी सिंचाई योजनाओं से लगभग ६ करोड़ एकड़ भूमि की सिंचाई की जा सकेगी। सिंचाई की इन सुविधाओं का पूरा लाभ उठाने के लिए अगले २० वर्ष तक लगभग ३०-४० हजार मील लम्बी नालियां प्रति वर्ष बनानी पड़ेंगी।

खेती के सुधरे हुए तरीके

उपज बढ़ाने के लिए सिंचाई के अतिरिक्त खेती के सुधरे हुए तरीके अपनाने की भी आवश्यकता है। सबसे पहली बात है, सुधरे हुए बीज का प्रयोग। दूसरी आयोजना में सुधरा हुआ बीज प्राप्त करने के लिए ४१८९ फार्म खोलने का लक्ष्य है। अब तक ९७८ फार्म खोले जा चुके हैं। १९५८-५९ में १२६० फार्म खोले जायंगे। खादों का प्रयोग दूसरी महत्वपूर्ण बात है। सुधरी हुई खेती के तरीके प्रचारित करने सम्बन्धी कार्यक्रम का यह लक्ष्य है कि हरेक गांव अपने काम के लायक खाद और हरी खाद खुद पैदा करे। खेती की जापानी विधि को भी प्रचारित करने की आवश्यकता है और आशा है कि दूसरे आयोजना काल में

लगभग ७०-८० लाख एकड़ भूमि में इस विधि से खेती की जाएगी।

सामाजिक परिवर्तन

सामुदायिक आन्दोलन को गांव की सहकारिता संस्थाओं के साथ मिलकर एक और महत्वपूर्ण काम भी करना है। यह है सामाजिक परिवर्तन। भूमि सुधार और सामाजिक विकास एक दूसरे से मिले-जुले हैं। सामाजिक परिवर्तन का काम इन दोनों को ही करना है, अतएव ये अलग अलग काम नहीं कर सकते। इस दिशा में सरकार को भी कुछ महत्वपूर्ण काम करने चाहिए, जिनमें से कुछ निम्नलिखित हैं :

(क) वह विभिन्न क्षेत्रों में विकास के काम शुरू करे और उन्हें आर्थिक सहायता दे,

(ख) ग्रामीणों के दिग्दर्शन के लिए वह प्राविधिक और अन्य विषयों में सलाह देने की व्यवस्था करे ;

(ग) गांवों की सहकारिता संस्थाओं को वह अल्प-कालीन, मध्यकालीन और दीर्घकालीन आर्थिक सहायता दे तथा उनके लिए ऐसा कार्यक्रम निश्चित करे, जिससे वे नियत समय में इस रुपए को लौटाकर अपनी पूंजी से काम चला सकें ; और

(घ) किसानों के लिए वह खेती के सुधरे हुए तरीके तथा खाद बनाने के ढंग आदि विषयों पर प्रशिक्षण देने की व्यवस्था करे।

हाल ही में सामुदायिक विकास कार्यक्रम में जो परिवर्तन किया गया है, उसके अनुसार ग्राम पंचायतों और ग्राम सहकारिता संस्थाओं की स्थापना को सबसे अधिक महत्व दिया जा रहा है और इरादा यह है कि दो तीन वर्ष में ही सभी गांवों में ऐसी संस्थाएं बन जाएं।

गांव की ३० करोड़ जनता के सामाजिक जीवन को बदलने का काम काफी कठिन है। लेकिन जिस ढंग से हम प्रगति कर रहे हैं, उससे किसी भी तरह निराश होने की आवश्यकता नहीं है।

सामुदायिक योजना का दूसरा पहलू

[श्री व्रजकिशोर पटैरिया]

अभी तक की प्रगति के आंकड़े जो समय समय प्रकाशित किए जाते रहे हैं व जिनमें युवा महिलाओं बच्चे देने की तादाद, मुर्गियों के अण्डे देने की ता बधिया किये गये सांडों की संख्या से लेकर, कृषि, शि स्वास्थ्य, संचार, सिंचाई कला, समाज शिक्षा-सम्म कार्य एवं सड़कें, शाला भवन, कुओं आदि के निर्मा कार्यों का जो विवरण प्रस्तुत होता है, वह ब ही आशाजनक व सन्तोषप्रद कहा जा सकता है। पर सव यह उठता है कि क्या ये सब आंकड़े सही हैं? इस का उत्तर केन्द्रीय विकास विभाग के सचिव श्री डे सा ने मध्यप्रदेश के विकास कार्यों का दौरा करने के बाद व्यक्त किया है, उससे मिल जाता है। उन्होंने स्पष्ट कि पैसे का दुरुपयोग हुआ व कागजी घोड़े दौड़ गये। दूसरा उदाहरण बड़ा दिलचस्प है। हमारे मध्यप्र के माननीय उद्योग मंत्री श्री तख्तमल जी ने किसी जिले जन-संपर्क दौरे में एक विकास खंड अधिकारी (बी डी० ओ०) से पूछा कि खाद के कितने गडढे खोदे गये उन्होंने फौरन फाइल उठाकर हजारों की संख्या बतला दी जब माननीय मंत्री जी ने एक गड्ढा देखना चाहा बी० डी० ओ० साहिब एक गड्ढा भी न बता सके। जी जागता एक गड्ढा वहां नहीं था याने गड्ढे कागज पर बने थे। यही हाल सब जगह समझिए।

गलती कहां पर है ?

एक विकास खंड में एक विकास खंड अधिका (बी० डी० ओ०) उसके नीचे ३ विकास सहायक अधिका (कृषि, पशुपालन, सहकारिता और पंचायत) २ समाज शि संगठन (एक पुरुष, १ स्त्री) १ ओवर सिअर २ क्लर्क ग्राम सेवक एवं ३ अन्य चपरासी वगैरह इस तरह २२-२ कर्मचारियों की व्यवस्था है। कर्मचारियों का रहन सह आचार व्यवहार, बोल-चाल यदि ग्राम वासियों के अनु कूल हो, व ये कर्मचारी यदि वास्तव में अपने को ग्रामीण का सेवक समझें, तो निश्चय है कि उन्हें ग्रामवासियों

(शेष पृष्ठ ३३८ पर)

आवश्यकता और सन्तुष्टि

श्री हेमचन्द जैन

विश्व में व्यक्तिगत या सामूहिक दृष्टि से साध्य के सम्बन्ध में मतैक्य पाया जाता है, परन्तु लक्ष्य प्राप्ति के अनेक मार्ग होते हैं, जिससे साधनों के कार्यान्वय में मतभेद होना स्वाभाविक हो जाता है। व्यावहारिक जगत में ऐसा होता भी है। मानव का उद्देश्य है कि उसे अधिकतम सन्तुष्टि या सुख प्राप्त हो। इस दिशा की ओर वह अपने आदर्शों व सिद्धान्तों का अन्वेषण या प्रयोग करता रहता है। सुख की मान्यताओं, मापदण्डों या परिधि के संबंध में विभिन्न विचार या दृष्टि व्यक्ति विशेष या समाज की हो सकती हैं। कोई भौतिक सुख को ही चरम सुख मान बैठते हैं तथा कुछ आत्मिक सुख की उपलब्धि को। वे भौतिक सुख को हेय एवं नश्वर मानते हैं। नास्तिक या निरीश्वरवादी प्रकृति से आत्मसत्ता का तादात्म्य स्थापित करके सुख की कल्पना पर आस्था रखते हैं। आज विश्व में जो अविश्वास, संघर्ष और मानवता पर घात-प्रतिघात हो रहे हैं, उसके मूल में आर्थिक कारण हैं। सुख की मृगतृष्णा के पीछे मानव इतना दीवाना हो गया और उसने आवश्यकताओं में इतनी अधिक वृद्धि कर ली, जिनकी सन्तुष्टि उसकी सीमा से पार हो गई और इसका परिणाम शोषण हुआ, जो छोटे रूप में सामन्तवाद, पूंजीवाद और वृहत रूप में साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद के रूप में दृष्टिगोचर हुआ। पश्चिम में किसी वस्तु की कमी नहीं है, फिर भी आवश्यकताओं का नित्य नवीन प्रसार होता जाता है और मानव मस्तिष्क के बल पर नये नये अन्वेषणों की उद्भावना करता जाता है। सम्पदा-वैभव की कमी नही है, परन्तु आज उनका हृदय अभावों का अनुभव करता है। आज सभ्यता के सन्मुख युग चुनौती दे रहा है।

प्रश्न यह है कि आवश्यकताओं के कम करने से मानव को अधिकतम सुख-तृप्ति या सन्तुष्टि प्राप्त होती है या आवश्यकता वृद्धि ही तृप्ति के विकास का मार्ग है—प्रश्न बादविवाद और गहन अध्ययन चाहता है। आवश्यकताएं ही अन्वेषण की जननी हैं तथा बेकारी, दरिद्रता, गरीबी को दृष्टिगत रख कर भविष्य की समस्याओं को ध्यान में न रखकर लोग आवश्यकता-वृद्धि को सुख उपलब्धि की रामबाण दवा समझते हैं। वर्तमान मानव-सुख की बाधक समस्याओं के रास्ते के अवरोधों को दूर करने के तीन मार्ग है। प्रत्येक देश इन तीनों में से दो या तीनों को एक साथ कार्यान्वित करता है। हम कभी एक मार्ग को द्रुतगति से कार्यान्वित होते देखते हैं और दूसरे को प्रच्छन्न रूप से। अर्थशास्त्र का केन्द्र आवश्यकताएं हैं जिनकी सन्तुष्टि के लिए मानव प्राणी उत्पादन वितरण और विनिमय करता है और उपभोग करके आवश्यकताओं की तृप्ति करता है।

जब मानव समाज आर्थिक दृष्टि से कम विकसित था, उसकी आर्थिक क्रियाएं कम थीं, तब उत्पादन के समस्त साधन व्यक्ति विशेष में अन्तर्निहित थे। उत्पादन के बाद ही वह उपभोग करके अपनी आवश्यकता की पूर्ति कर लेता था, परन्तु आवश्यकताओं की वृद्धि के साथ साथ मानव-जीवन जटिल होता गया और उपयोग की प्रक्रिया से पूर्व अनेक समस्याओं—वितरण-विनिमय-समयसे आर्थिक जीवन उलझता गया। श्रम विभाजन से जो लाभ या अलाभ होते हैं, वहीं लाभ-अलाभ उत्पादन के साधनों के विभाजन अविभाजन से होता है। आर्थिक प्रवृत्तियों के विकास के साथ साथ उत्पादक इकाइयों के पैमान में प्रसार होता गया। वस्तु का उन्मेष-निमेष मानव शक्ति से परे है। वह वस्तु की उपयोगिता में सृजन कर सकता है, निर्माण नहीं। भूमि या मुफ्त प्राकृतिक देन और श्रम उत्पादन के प्रारंभिक और आधार साधन है और पूंजी संगठन और साहस आधार साधनों पर निर्भर है। उत्पादन का कौन सा साधन प्रथम महत्त्वका है, इस में मतभेद हो सकता है, परन्तु यह निर्विवाद है कि अपने अपने स्थान में उत्पादक अंगों का एक विशेष स्थान हैं। उत्पादन के प्रत्येक अंग की अपनी अपनी समस्याएं हैं और विश्व में प्रत्येक अंग के प्रतीक धारियों में प्रथम महत्ता के संबंध में संघर्ष है।

उत्पादन पर ही पूंजीवादी अर्थ व्यवस्थामें आस्था

रखने वाले राष्ट्रों के सुख का मार्ग निहित है । साम्यवादी अर्थव्यवस्था वाले राष्ट्र वितरण को ही वर्ग-संघर्ष और उत्पादन की बुराइयों की जड़ बतलाते हैं। पूर्वी अध्यात्म पर विश्वास रखने वाले मुल्क और प्रायः ऐसे देश जो आर्थिक दासता में जकड़े हुए हैं तथा राजनैतिक दासता से मुक्त हुए अधिक समय का फल प्राप्त नहीं कर सके हैं। ऐसे देशों में राजनैतिक राजसत्ता प्राप्ति के उपरांत आर्थिक परतंत्रता या रचनात्मक आजादी की ओर पग उठाया गया है परन्तु पश्चिम के मुल्कों में आर्थिक क्रांति के उपरांत राजनैतिक परिवर्तन हुए हैं। यह पृष्ठभूमि पूर्व पश्चिम की आर्थिक प्रवृत्तियों के अध्ययन के समय दृष्टिमें रखना नितान्त आवश्यक है। साधन स्रोतों की प्रचुरता को देखते हुए ऐसे मुल्कों में सम्पदा सुख में वृद्धि होगी।

भारत का आर्थिक दर्शन प्राचीन काल में उपयोग पर आश्रित था। उपभोग के चारों ओर अर्थशास्त्र का चक्र भ्रमण करता रहता है। अतः भारतीय मनीषियों ने उपभोग को नियंत्रित या सन्तुलित करने पर जोर दिया। उन्होंने प्रतिपादित किया कि आवश्यकताओं के विकास को रोक कर धीरे धीरे क्षमता के अनुसार अनुकूल आवश्यकताओं को न्यून करते जाओ। ऐसा करने से मानव एक ऐसी सीमारेखा के अन्तर्गत पदार्पण करेगा कि वह आवश्यकताहीन हो जावेगा। उन्होंने सादा जीवन उच्च विचार के आदर्श को व्यवहार में कार्यान्वित किया। इस दर्शन पर आधारित आर्थिक विचारधारा पर इलाहाबाद विश्वविद्यालय के अर्थशास्त्र विभाग के अध्यक्ष श्री जे० के० मेहता शोध कार्य कर रहे हैं। वे इसका प्रतिपादन इस तरह करते हैं कि तृप्ति या सन्तुष्टि या सुख एक इकाई है और अनेक आवश्यकताओं के कारण साध्य इकाई साधनों में विभाजित हो जावेगी। साधनों के न्यून तथा प्रतिस्पर्धी बहु उपयोगी होने के कारण व्यक्ति अनेक आवयश्कताओं की तृप्ति करने में असमर्थ रहता है, जिस से अधिकतम सुख प्राप्त नहीं हो सकता। अतः क्यों न आवश्कयताओं को कम कर दें या उन्हें न बढ़ने दें, जिस से कुल सुख में वृद्धि होने में बाधा उत्पन्न हो परन्तु इस प्रकार आवश्यकताओं के कम करने से जो सन्तुष्टि मिलती है, उसके नापने के मापदण्ड के संबंध में शंका उत्पन्न की जाती है। कहा जाता है कि यह बैलगाड़ी के युग की अव्यावहारिक बात है, यदि ऐसा संभव भी आ गया तो मानव प्रगति छिन्न भिन्न हो जावेगी और मानव अपनी प्रारंभिक अवस्था में पहुंच जावेगा, तब समाज ही न रहेगा। समाज के फोड़ों को दूर करने के लिए उपभोग, उत्पादन-वितरण रूपी आर्थिक संकीर्णता को युगानुकूल परिवर्तन तथा विस्तार करने की आवश्यकता है। उपभोग आर्थिक जटिलता व संघर्ष की नींव है अतः क्यों न पहले नींव को ठोस बनाने का प्रयत्न करें। यदि आधार ही शंकापूर्ण रहा तो आधेय का क्या होगा, यह सर्वविदित ही है। लोग तर्क करते हैं कि अमेरिका के पास विश्व का ३/४ भाग से अधिक स्वर्ण है। स्वर्ण किसी देश की समृद्धि का माप दण्ड होता है परन्तु यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि नैतिकता तथा सत्यता का मापदण्ड वहां के मोती-जवाहर होते हैं, जो स्वर्ण की निकष हैं। कतिपय अर्थशास्त्रियों का मत है कि आवश्यता-वृद्धि से उत्पादन बढ़ता है, जिस से क्रमशः उद्योगों का विकास व प्रसार होता है, राष्ट्रीय आय में वृद्धि होती है, प्रत्येक व्यक्ति की आय में वृद्धि होती है, लोगों के रहन सहन का स्तर बढ़ता है, देश का स्तर बढ़ता है, देश की सम्पदा में वृद्धि होती है, देश की अन्तर्राष्ट्रीय जगत में साख बढ़ती है। यदि आवश्यकता की कमी की जावे तो इसके विपरीत चक्र चलता है, परन्तु ऐसे अर्थशास्त्रियों को भारत इस दृष्टि से आपवाद मालूम पड़ेगा। भौतिक समृद्धि एकांगी समृद्धि है। देश की समृद्धि वहां के नागरिकों की सर्वतोमुखी प्रगति के आधार पर होती है। 'खाओ पियो मौज उड़ाओ' चार दिन की चांदनी फिर अंधियारी रात के समान है। अतः जितनी चादर होगी मानव उतना पैर पसारे, इस का आभास उसे क्यों न पूर्व से करा दिया जावे। बाद में चादर से परे पैर पसारना उसने प्रारंभ किया तो उसका पतन अवश्यम्भावी है। आज सन्तुलित अर्थ प्रणाली को व्यवहार में उपयोग करने की आवश्यकता है। उपभोग उत्पादन वितरण जन्य समस्याओं पर सम्मिलित कुठाराघात करने पर ही लोक कल्याणकारी राज्यों की प्रस्थापना होगी और विश्व के अधिकतम लोगों को अधिकतम सन्तुष्टि के मार्ग प्रशस्त होंगे। ऐसा होने पर

भूमि समस्या का हल जन-शक्ति से

लोकनीति का अर्थ

लोकनीति का अर्थ एक-एक कर सत्ता का हस्तान्तरित होना है, याने सरकार के हाथ से निकलकर जनता के हाथ में आना है। यह छीजन प्रक्रिया याने क्षीण होने की प्रक्रिया चलनी चाहिये, याने सरकार क्षीण से क्षीणतर होकर सत्ता लोगों के हाथ में आनी चाहिये। कम्युनिस्ट कहते हैं कि स्टेट विल विदर (राज्य समाप्त हो जायगा।) लेकिन उससे पहले मध्यवर्ती समय में वह मजबूत होना चाहिये। तभी वह धीरे-धीरे नष्ट हो जायगा। मैं कहता हूं कि 'स्टेट विल विदर' तो ठीक है, पर आज से ही उसका विदर (नाश) शुरू हो जाना चाहिये। फिर वह कितने दिनों में नष्ट हो जायगा, यह तो हमारे पुरुषार्थ का प्रश्न है। मेरा और कम्युनिस्टों का मतभेद यही है।

इसीलिए हम लोगों ने भूदान और ग्रामदान शुरू किया है। हमें सरकार का एक-एक काम अपने हाथ में लेना चाहिये। जमीन का प्रश्न सर्वाधिक महत्त्व का है। इसीलिए हमने उसी से आरम्भ किया है। मैं चाहता हूँ जमीन का प्रश्न जनशक्ति से ही हल करना चाहिये। उड़ीसा, आन्ध्र, तामिलनाड, केरल इन सभी प्रदेशों के कम्युनिस्टों से मेरी बातचीत हुई है। आन्ध्र, तमिलनाड, केरल आदि में उनसे चर्चा करने पर यही अनुभव हुआ कि उनका अधिकांश अनुकूल है। इसलिए यह काम प्रत्यक्ष कर दिखाये तो इसका परिणाम अवश्य होगा। भूमि समस्या जनशक्ति से ही हल की जाय। हिन्दुस्तान ही नहीं, सारे एशिया के लिए यह कठिन समस्या है।

भले ही वे मुझसे अर्थशास्त्र की भाषा में प्रश्न करते रहें कि आपके इस काम से जमीन के टुकड़े हो रहे हैं, इसका क्या उपाय है? उनके इन अर्थशास्त्रीय प्रश्नों का मैं मानसशास्त्रीय उत्तर देता रहा। मैं उनसे कहता था कि हृदय के जो टुकड़े हुए हैं, मैं उन्हें जोड़ने का यह काम कर रहा हूं। एक बार हृदय के टुकड़े जुड जायं, तब आप जमीन के टुकड़े एक कीजिये या चार, वह आपके हाथ की बात होगी। इसलिए मैं टुकड़े करने वाला नहीं, जोड़ने वाला हूं।

वे हर प्रश्न अर्थशास्त्र की भाषा में ही पूछते हैं और मैं मानसशास्त्र की दृष्टि से ही उत्तर देता। होते-होते शंका-निरसन हो चला। इस पद्धति से भारत का अर्थशास्त्र सुधर रहा है। ऐसा हुआ तो सरकार यह पद्धति अपनायेगी, अन्यथा इसे नहीं अपनायेगी।

सरकार भूमि समस्या हल करने में असमर्थ

● जमीन का यह काम सरकार के हाथों हो सकेगा, ऐसा नहीं दीखता। नेहरू बड़े आवेश के साथ कहा करते हैं कि जमीन का प्रश्न हल करने में अत्यधिक विलम्ब हो रहा है, फिर भी सुस्त सरकारें उसे हल नहीं करतीं। कारण, आज सरकार में जो लोग हैं, वे जमीन के मालिक हैं। इसलिए वे जिस डाल पर बैठे हैं उसे तोड़ नहीं सकते। इसीलिए उन्हें लगता है कि पूर्व स्थिति (स्टेटस-को) अच्छी है। वे यही चाहते हैं कि आज की स्थिति में विशेष परिवर्तन न हो। केरल में १५ एकड़ तरीकी जमीन (वैट लैंड) रखने की अधितम सीमा निर्धारित की गई है। वहां ये २० एकड़ की सीमा रखेंगे। केरल में एक चौरस मील में १५०० लोग रहते हैं।

विश्व में "योग्यतानुसार करो आवश्यकतानुसार प्राप्त करो' और जितना करोगे उतना पावोगे" में एक रूपता की सीमा-रेखा प्राप्ति के प्रयत्न जल्दी होंगे, जिससे विश्व के आदर्श वाक्य 'एक सबके लिए और सब एक के लिए, जीने दो और जियो 'सर्वजन हिताय सर्वजन सुखाय' को मानव व्यवहार में देख सकेगा। इस से समाज में सेवा के स्थान पर सहयोग की भावना का प्रसार होगा।

मुझसे यहां वाले पूछते हैं कि रत्नागिरी में बहुत ही कम जमीन है, तब यहां की समस्या आप कैसे हल करेंगे? मैं उनसे कहता हूं कि आपसे ढाईगुनी जनसंख्या केरल की है, लेकिन वहां ग्रामदान काफी हो रहे हैं। अभी मैंने सुना कि केरल के मुख्यमन्त्री नम्बूदरीपाद कहने लगे हैं कि भूमि सुधार कानून की कुछ धाराओं से जमीन के मालिकों को कष्ट होगा, इसलिये उस पर हम लोग विचार करेंगे। याने यह समस्या हल ही न होगी, उन्होंने यह विज्ञापन कर दिया है कि हम जमीन बाटेंगे, लेकिन तब लोग अपने-अपने रिश्तेदारों को ढूंढ-ढूंढकर आपस में जमीन बांट लेंगे, तब सरकार घोषणा करेगी कि कोई भी व्यक्ति १५-२० एकड़ से ज्यादा जमीन रख नहीं सकता याने वह कानून सर्वथा निरुपयोगी सिद्ध होगा।

अब ग्रामदान के बाद जो सिद्ध होगा, वह क्रांतिकारी ही होगा। चीन में कानून ने क्रांति नहीं की। क्रांति ने ही कानून बनाया, रूस का भी यही हाल है। इसलिए अगर आप सरकार द्वारा क्रांति लाना चाहें तो वह हो नहीं सकती। क्रांति के बाद जो सरकार बनती है, वही क्रांतिकारी कानून बनाती है। इसलिए अगर आप भूमि समस्या जनशक्ति से हल करते हैं, तो कहा जायगा कि सरकार का एक काम कम हुआ।

देश में खादी उत्पादन की प्रगति

(अप्रैल १९५७ से लेकर जनवरी १९५८ तक)

राज्य	सूती खादी (वर्गगज)	ऊनी खादी (वर्गगज)	रेशम खादी (वर्गगज)	कुल बिक्री (रुपयों में)
१. आंध्र	३५,०२,७४४	२,३१,९५९	७५६	५४,७१,४८८
२. आसाम	१०,४६३	—	१६,३९७	१,०३,३७१
३. बिहार	२१,९९,६७४	३,७३५	२,०५,६९१	२३,९९,८७६
४. बम्बई	७,९६,९३८	४९,०५४	—	६२,३४,३९९
५. केरल	१,४२,४१२	३८१	—	२,१३,०५९
६. मद्रास	२५,६६,१६५	२३०	२१,५२६	३१,३९,६१२
७. मध्य प्रदेश	१,९८,९२३	—	—	१०,७७,९८५
८. मैसूर	५,८६,७०१	४,७१,२२४	९४०	२१,९२,४३३
९. उड़ीसा	१,५०,३३०	—	७,०२७	२,८८,९५४
१०. पंजाब	२०,८०,८३०	१,५०,७९४	—	२९,३४,२७४
११. राजस्थान	९,८४,०७८	८०,३१२	—	१३,०४,१३९
१२. उत्तर प्रदेश	३६,४३,००९	२,६५,९५४	७३,६८५	७६,८६,६१४
१३. पश्चिम बंगाल	१,०७,७०२	—	३,३३,४५८	८,०८,१०५
१४. जम्मू और काश्मीर	९,७२३	१,६४,९९९	—	४८,४७१
१५. दिल्ली	८३,२४३	—	—	२०,१३,७११
योग	१,७०,६२,९३५	१४,१८,६४२	२६,५९,४८०	३,५९,१६,५०९

नोट:—इसके अतिरिक्त, १,२८,७८,७४१ वर्गगज स्वावलम्बी खादी का भी उत्पादन हुआ, जिसकी कीमत २,२३,८३,२२९ रुपये हुई। उपर्युक्त अवधि में केन्द्रीय सरकार को १६,०४,२७१ रुपयों की खादी उपलब्ध की गई।

(शेष पृष्ठ ३३३ पर)

संसद का चतुर्थ अधिवेशन

संसद का चतुर्थ अधिवेशन, जिसका उद्घाटन राष्ट्रपति द्वारा १० फरवरी १९५८ को किया गया था, १० मई १९५८ के दिन स्थगित हुआ। रेलवे बजट तथा वित्तीय

बजट संसद के सामने १७ और २८ फरवरी को क्रमशः पेश किये गये थे। एक महत्वपूर्ण बात यह थी कि संसद के इतिहास में प्रथम बार प्रधानमन्त्री नेहरू ने वित्त बजट पेश किया। उपहार कर विधेयक तथा विभिन्न करों में कुछ परिवर्तन, जिससे उद्योग को विकास कार्य की प्रेरणा मिले, संसद के इस अधिवेशन की विशेषताएं हैं।

संसद में पेश हुए बिलों में निम्न बिल भी थे—

(१) मर्चेन्ट शिपिंग बिल १९५८ :—यह बिल इस दृष्टि से पेश किया गया था कि मर्चेन्ट शिपिंग सम्बन्धी कानूनों में संशोधन तथा सुदृढ़ी करण हो सके। यह दोनों सदनों की संयुक्त समिति को सौंपा गया है।

(२) केन्द्रीय सेल्ज टैक्स (द्वितीय संशोधन) बिल १९५८ :—जिससे खान उद्योग बिजली के काम काज आदि क्षेत्रों में रियायती कर दर पर अन्ततः प्रान्तीय—व्यापार चल सके।

(३) ट्रेड और मर्चेन्डाइज मार्कस बिल १९५८ :—जिसके अनुसार ट्रेड तथा मर्चेन्डाइस सम्बन्धी सिविल तथा क्रिमिनल कानूनों को एक करके तथा संशोधनों को संगठित करके श्री राजगोपाल अय्यंगार की सिफारिशों को अमल में लाया जायगा। यह बिल जायंट सेलेक्ट कमेटी को सौंपा गया है।

(४) उत्तराधिकार कर में १ लाख रु० की बजाय ५०००० रु० तक छूट करने का बिल भी पेश हुआ, किन्तु वह आगामी अधिवेशन के लिए स्थगित कर दिया गया।

संसद ने जिन बिलों को पास किया है उनमें धान कुटाई उद्योग बिल, भारतीय स्टैम्प बिल, जहाजरानी कन्ट्रोल बिल खनिज पदार्थों का बिल तथा कर्मचारियों का मितव्ययतानिधि (संशोधन) बिल—मुख्य थे।

कई महत्वपूर्ण कागजात भी संसद के समय दोनों सदनों में प्रस्तुत किये गए।

(१) विदेशी धन राशि में कमी हो जाने के बारे में योजना आयोग की रिपोर्ट।

(२) द्वितीय योजना की स्थिति-गति मूल्यांकन के बारे में योजना आयोग का ज्ञापन पत्र।

(३) लाइफ इन्सूरन्स कारपोरेशन के कारनामों के बारे में मुख्य न्यायाधीश श्री एम. सी. चागला की रिपोर्ट।

संसद की इस अवधि में पब्लिक अकाउन्टस तथा एस्टिमेट कमेटियों ने कई महत्वपूर्ण रिपोर्टें पेश कीं। एस्टिमेट कमेटी की अन्य रिपोर्टों में—आय व्यय सम्बन्धी सुधार, योजना आयोग तथा इन्डियन टेलीफोन इन्डस्ट्रिस प्राइवेट लिमिटेड, बंगलौर आदि विषय थे। एस्टिमेट कमेटी की एक और महत्वपूर्ण रिपोर्ट, इस विषय पर थी कि राष्ट्रीयकरण किये गये औद्योगिक कारोबार के संगठन तथा प्रबन्ध के बारे में कमेटी ने अपनी १६ वीं रिपोर्ट प्रथम लोकसभा) में जो सिफारिशें की थी, उन पर सरकार ने क्या कार्रवाई की है? कमेटी ने खेद प्रकट किया है कि, कई सिफारिशें अभी तक अमल में नहीं आई हैं, जबकि इस पर पूर्ण विचार करने के लिये सरकार ने डेढ़ साल का समय तक लिया है। अकाउन्टस कमेटी की सबसे महत्वपूर्ण रिपोर्ट "आय व्यय मूल्य निरूपण तथा आर्थिक नियंत्रण" के बारे में थी।

एक अन्य महत्वपूर्ण विषय "केन्द्रीय सरकार" की आय-व्यय जांच रिपोर्ट थी, जिसमें स्पष्ट किया गया है कि विभिन्न मंत्रालयों में अनियमित तथा अव्यवस्थित व्यय हुए हैं।

—

बम्बई प० बंगाल से दुगना धनी

सम्पत्ति कर संबंधी आंकड़ों के अनुसार बम्बई प्रांत में लोग पश्चिम बंगाल की अपेक्षा दुगुने धनी हैं।

भारत के कुल कर देने वालों में से ४०प्रतिशत लोग सिर्फ बम्बई प्रान्त में है। ३७,६०६ कर देने वालों में से, जिन में २६,५६२ वैयक्तिक, ४,१७३ संयुक्त परिवार तथा ४,१७१ कम्पनियां शामिल हैं १६५७-५८ के सम्पत्ति कर अ'कड़ों के अनुसार सिर्फ अकेले बम्बई प्रान्त में १२,६७४ वैयक्तिक ८१३ हिन्दू संयुक्त परिवार तथा १,२३० कम्पनियां कर देने वाले हैं।

पश्चिम बंगाल के आंकड़े क्रमशः ६,१३७ ४८८ तथा १,७२३ है अर्थात कुल संख्या ८३४८ है, जब कि बम्बई की कुल संख्या १५,०१७ है।

मद्रास का स्थान तीसरा है, जहां सम्पत्ति-करदाताओं की संख्या २५५० है। दिल्ली, राजस्थान में २,२३६, आंध्र प्रदेश में १,६३७, मैसूर में १,४६३, बिहार और उड़ीसा में १,२६६, उत्तर प्रदेश में १,१७६, केरल में १,११५, पंजाब और जम्मू-कश्मीर में १,१०४, मध्य प्रदेश में १,०१८ तथा आसाम में ५६३ करदाताओं की संख्या है।

नवीन सूचनाओं के अनुसार करदाताओं में वैयक्तिक तथा २१५ कम्पनियां ऐसी हैं जिन की नकद सम्पत्ति १ करोड़ से भी अधिक है। १६५७-५८ के बजट में सम्पत्ति-कर से १२.५करोड़ रु० आय की अनुमान किया गया था किन्तु ६,७०,८८,००० रु० वसूल हुए।

इस कमी का प्रधान कारण यह था कि इस कानून को राष्ट्रपति की स्वीकृति बहुत देर से मिली और तब तक बहुत सा समय बीत गया। आयकर लगाने का काम इस बर्ष जनवरी में प्रारंभ हुआ था। इस लिए चालू वित्तीय वर्ष समाप्त होने से पहले सारे मामलों को समाप्त करना संभव नही था। इस के अलावा कानून नया था। इस लिए करदाताओं को इसे समझाने में काफी समय लगा तथा बार बार अवधि बढाने के लिए प्रार्थनाएं की जाने के कारण प्रथम वर्ष में समय देना पड़ा। वैयक्तिक तथा हिन्दू संयु'क्त परिवारों के मामलों में नकद सम्पत्ति का पूर्व विवरण प्राप्त न होने के कारण आय के अनुसार सम्पत्ति का अनुमान लगाना पड़ा। अनुभव से यह पता चला है कि ऐसे अनुमान वास्तविक स्थिति से बढ़ा-चढ़ा कर लगाये गए हैं।

—

चन्द्रलोक में औद्योगिक संस्थान

आज निश्चित रूपसे यह कहना कठिन है कि आगामी पांच या दस वर्षों में चन्द्रमा के व्यावहारिक अध्ययन का विकास किस दिशा में होगा। लेकिन, एक बात निश्चित है : कुछ समय तक चन्द्रमा का अध्ययन करने के बाद उसे काबू में लाने की प्रक्रिया चालू होगी। मानव चालित यानों का निर्माण करेगा, जिसमें बैठकर वह स्वयं चन्द्रलोक में पहुँचेगा और उस भास्वर उपग्रह की सतह पर जो

प्रतिघंटे ५४०० नये मुख

संयुक्त राष्ट्र संघ ने सन् '५७ के जीवन-मरण वृत्त पर जो वार्षिक ग्रन्थ प्रकाशित किया है, उसमें कहा गया है कि विश्व की आबादी प्रति घंटे ५ हजार ४ सौ की संख्या में बढ़ रही है। इसका मतलब यह हुआ कि प्रतिवर्ष ४ करोड़ ७० लाख की संख्या में मानव-आबादी बढ़ रही है। पिछले २० वर्षों के भीतर एक चौथाई आबादी बढ़ चुकी है। प्रति एक हजार की आबादी में ३४ बच्चे जन्म ले रहे हैं और १८ व्यक्तियां की मृत्यु होती है। डच जनता का जीवन दीर्घतम होता है जिसमें मर्दों का औसत ७१ और महिलाओं का ७४ साल आता है। भारत के लोग जल्दी मरते हैं। यहां मर्द-औरत का औसत जीवन ३२ साल पाया गया है। लैटिन अमेरिका में जनसंख्या तेजी से बढ़ रही है यद्यपि इसमें एशिया ही आगे है, जहां हर साल २ करोड़ ४० लाख की संक्या आबादी बढ़ रही है।

हमारे निकटतम है, कदम रखेगा। और चन्द्रमा में पहुँचने के बाद वह वहां अस्थायी वैज्ञानिक स्टेशन स्थापित करेगा। उसके लिए हवा और भोजन की पूर्ति पृथ्वी से होगी। बाद में वेधशालाएं और संस्थान नियमित रूप में चालू हो जाएंगे तथा अन्ततः चन्द्रमा की प्राकृतिक सम्पत्ति का उपयोग करने के लिए औद्योगिक संस्थान स्थापित होंगे।

—श्री वी० शारानोव

जनता के पास ५१.१० अरब रुपये का चांदी और सोना

भारतीय रिजर्व बैंक बुलेटिन के ताजे अंक में एक

(शेष पृष्ठ ३३४ पर)

भारतीय राष्ट्र का आर्थिक प्रवाह

श्री जी० एस० पथिक

केरल सरकार और बिड़ला ब्रदर्स

केरल की कम्यूनिस्ट सरकार और बिडला ब्रदर्स में केरल राज्य में रेयन पल्प फेक्टरी की स्थापना के संबंध में इकरारनामा हुआ है। दो विरोधी तत्वों का यह जोड यदि निभा तो एक बड़ी घटना होगी और उससे भविष्य में आर्थिक क्षेत्र की प्रगति में एक नया कदम उठेगा। इससे यह तो प्रकट है कि केरल की कम्युनिस्ट सरकार देश के एक प्रमुख पुंजीपति या औद्योगिक प्रतिष्ठान के लिए हौवा साबित नहीं हुई। केरल की कम्यूनिस्ट सरकार ने पूंजीवाद से जो सम्बन्ध किया और जो रियायतें दीं, उससे अपने दल की गलत फहमियों का निराकरण करने में सफलता प्राप्त की है। दो शक्तियों में यह सहयोग देश के लिए आशाजनक है। कहा जाता है कि भारतीय विधान में जो गारंटियां दी गयीं है, उनसे कहीं अधिक बिडला ब्रदर्स को रियायतें मिलीं। केरल सरकार ने औद्योगिक शांति के प्रति विश्वास दिलाया, जिसे पूंजी लगाने वाले पक्ष ने संतोष-जनक माना।

केरल राज्य में नये उद्योग

केरल में नई औद्योगिक प्रगति के चिन्ह प्रकट हो रहे हैं। अंग्रेज विशेषज्ञों ने कोचीन को भारत का दूसरा शिपयार्ड स्थापित करने के लिए चुना है। विशेषज्ञों का मत है कि गहरे पानी का बन्दरगाह सुविधाएं प्रदान करेगा। निजी क्षेत्र भी केरल में नए उद्योगों की स्थापना के लिए आगे बढ़ रहा है। केरल का रेयन पल्प उद्योग सारे देश के लिए उपयोगी होगा। मैसूर की लैम्प फैक्टरी और भारत इलेक्ट्रोनिक का कारखाना उल्लेखनीय उद्योग हैं। सस्ती विद्युत की प्राप्ति से ये दोनों फैक्टरियां खुल सकी हैं। टायर फेक्टरी की स्थापना का प्रयत्न आगे नहीं बढ़ सका। अलबत्ता पम्बा की घाटी में स्टार्च फेक्टरी खोली जा सकती है। राज्य द्वारा संचालित उद्योगों का भी पुनर्गठन हो रहा है। प्लाईवुड और रबड़ के उद्योगों का संचालन मजबूत आधार पर किया जाने वाला है।

सोवियत रूस की आर्थिक सहायता

अविकसित क्षेत्र में अमेरिका और योरोपीय देश ही नहीं, सोवियट रूस की अर्थ व्यवस्था भी आर्थिक सहायता देने में आक्रमणात्मक है। इधर रूसी आर्थिक सहायता का इतना अस्थिर रूप हो गया है कि कह नहीं सकते कि कब उसका क्या रूप हो जाए। आर्थिक प्रश्नों पर रूस के निर्णय भी राजनीतिक सैनिक और नाकेबन्दी के खयाल के बिना शायद ही होते हों। आज रूसी अर्थ व्यवस्था ने अपने कुछ नियम बनाए हैं, उनमें राजनीति निश्चय ही प्रधानता रखती है। रूस का विदेशी व्यापार में आगे बढ़ना, माल का बदला करना आदि आर्थिक तत्व हैं। परन्तु पूंजीगत पदार्थों का निर्यात सीरिया, इण्डोनेशिया, भारत और अरजनटाइना में आर्थिक अवस्था के रूप में होने पर भी राजनीति से परे नहीं है। रूस की यह राजनीतिक विचारधारा कितनी तेजी से बदलती है—इस सम्बन्ध में सोचा नहीं जा सकता। आज भारत के साथ ऊंचे दर्जे की मित्रता है तो कल मिश्र के साथ हो सकती है। इधर कुछ समय से भारत के प्रति रूस की अन्यमनस्कता प्रकट हो रही है। रूस ने भिलाई के ऋण की व्यवस्था में परि-वर्तन करने से इन्कार कर दिया है। उसने औषधि उद्योग में सहायता देने से इन्कार कर दिया था। रूसी सहायता न मिलने की सम्भावना से ही केन्द्रीय सरकार के उद्योग और व्यापार विभाग को यह प्रकट करना पड़ा था कि औषधि उद्योग के निर्माण का जो कार्यक्रम सोवियत सहायता पर आश्रित था, उसमें परिवर्तन करना पड़ा। पर बाद में रूस को कुछ चेतना हुई, आगा पीछा सोचकर रूसी सरकार ने भारत के ८५ करोड़ रुपए की पूंजी से स्थापित होने वाले ड्रग उद्योग को १००० लाख रूबल का ऋण और टेकनी-कल सहायता देना स्वीकार किया। इस उद्योग में अमेरिकन और पश्चिम जर्मनी द्वारा सहयोग देने के निर्णयों का ही सोवियत रूस पर प्रभाव पड़ा। जो कुछ हो, भारत रूस की इस सहायता के प्रति कृतज्ञ रहेगा।

विदेशी मुद्रा का संकट

१६ मई १९५८ को भारत की स्टर्लिंग जमा २५२.५१ करोड़ रुपए की थी, जिसमें से ४२.८४ करोड़ रुपए रिजर्व बैंक के बैंकिंग विभाग में जमा थे। शेष २०९.६८ करोड़ रुपए के स्टर्लिंग ११८ करोड़ रुपए के सोने के साथ चलन की जमा में थे। कानूनी रूप से सोने को जो न्यूनतम जमा निर्धारित है, उससे सोने की रकम ३ करोड़ रुपए ऊंची है। मुद्रा के रक्षित कोष में गत वर्ष की तुलना में ४७७.५९ करोड़ रुपए थे, जिसमें से ४१२.५२ करोड़ रुपए बैंक के इश्यू विभाग में थे। सोने की रकम पूर्ववत् जमा है। इसमें २२५.०५ करोड़ रुपए का परिवर्तन है। ४.३ करोड़ रुपए प्रति सप्ताह औसतन व्यय होते हैं। अतएव प्रति सप्ताह ६ करोड़ रुपए की क्षति है। यदि सोने का स्तर न घटाया गया तो भारत के पास २५६ करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा जमा है और साप्ताहिक व्यय ३० प्रतिशत अधिक है। यदि वर्तमान कामकाज को जारी रखा जाए, तो भारत के पास जितनी विदेशी मुद्रा जमा है, वह अगले १० महीनों में खप जाएगी। पर इतना ही नहीं है। जून से अक्तूबर तक आज की अपेक्षा विदेशी मुद्रा की अधिक मांग है। इन महीनों में १५० करोड़ रुपए खप जाएंगे अर्थात् प्रति सप्ताह ९ करोड़ रुपए की क्षति होगी। इसका नतीजा यह होगा कि इस वर्ष के अन्त में भारत के पास विदेशी मुद्राएं बिलकुल न रहेंगी। आयात एकबारगी शून्य तक पहुँच गए हैं और निर्यात बढ़ने की कोई आशा नहीं है। निर्यात वृद्धि की जो योजनाएं हैं, वे दीर्घकालीन हैं। इधर निर्यात पदार्थों के दाम विदेशों में गिर रहे हैं और आयात कम करने से दूसरे देश भारत के माल की खपत घटा रहे हैं। इस समय योजना में कोई कमी करना कहां तक सम्भव है, यह विचारणीय है। जिन विकास पदार्थों के आर्डर दिए जा चुके हैं, उनके आयात न होने का प्रश्न नहीं है। अलबत्ता आगे के लिए विकास पदार्थों के आयात में कमी की जा सकती है। ग्रेट ब्रिटेन ने जो भारत का सबसे बड़ा खरीदार है, २३० लाख पौण्ड भारतीय माल के आयात में कमी की है। इंगलैण्ड ने चाय का आयात घटा दिया है। अलबत्ता एक आशा है कि भारत को अमेरिका के 'सीशोर' मद में से विशेष सहायता प्राप्त हो। यदि इस समय भारत को तुरन्त विदेशी सहायता प्राप्त नहीं होती तो दूसरी योजना का भावी विकास खतरे में है!

दूसरी पंचवर्षीय योजना का आलेखन

योजना आयोग ने दूसरी पंचवर्षीय योजना की [illegible] विधि और प्रगति का एक महत्वपूर्ण आलेखन प्रकट किया [illegible] वह देश के आर्थिक विश्लेषण का बढ़ता हुआ कदम [illegible] अब यह हमारे लिए आवश्यक है कि हम उसे राजनी[illegible] और आर्थिक दृष्टि से महत्ता प्रदान करें। यदि हम सा[illegible] और स्रोतों की दृष्टि से योजना का पर्यवेक्षण करें, तो [illegible] उनके जुटाने में कठिनाई हो रही है। पर यदि हम वि[illegible] की आवश्यकताओं पर दृष्टिपात करें, तो मा[illegible] होगा कि देश की आर्थिक उन्नति के लिए अभी [illegible] अधिक जरूरतों को पूरा करना होगा [illegible] केन्द्रीय सरकार ने दूसरी योजना के प्रथम दो [illegible] में भारी कर लगाए हैं। इन अतिरिक्त करों से पांच वर्षों [illegible] ७२५ करोड़ रुपए की आय का अनुमान किया गया [illegible] योजना के आरम्भ में करों का जो स्तर प्रकट किया गया [illegible] उस में ५०० करोड़ रुपए की वृद्धि हुई है। यदि हम के[illegible] और राज्यों में इन तीन वर्षों में जो अतिरिक्त कर लगाए [illegible] उन्हें आधार मानें तो ५ वर्षों में ९०० करोड़ रुपए की [illegible] होती है, जिससे ४०० करोड़ रुपए की कमी नहीं रहती [illegible] केन्द्रीय सरकार के भूतपूर्व वित्तमंत्री श्री कृष्णमाचारी [illegible] साहसपूर्वक नये करों के द्वारा योजना में [illegible] की कमी को दूर करने का प्रयत्न किया [illegible] उसमें कमी होने से योजना के लक्ष्य पूरे [illegible] हो पाएंगे। देश की जैसी परिस्थिति है, उससे योजना [illegible] स्रोतों की आय दूसरे मदों में लगी। योजना के [illegible] विकसित कार्य, गैर विकसित व्यय और सेना की बढ़ती [illegible] मांग योजना का बहुत धन ले गई। योजना के स्रोत [illegible] प्रकार हैं—

(करोड़ रुपए में)

	योजनाओं के पहले ३ वर्षों में	अगले २ वर्षों के अनुमान	और १९५६-[illegible]
बजट के आंतरिक स्रोतों से	११०१	९२१	२०२२

(शेष पृष्ठ ३३५ पर)

यदि रूस में साम्यवाद न होता ?

श्री गाइ सिम्स फिच

रूसी नेताओं का विचार है कि गत ४० वर्षों में रूस की असाधारण औद्योगिक उन्नति का मूल कारण वहां की साम्यवादी व्यवस्था है, परन्तु राष्ट्रपति आइजनहावर के आर्थिक परामर्शदाता श्री हौग का कहना है कि यदि रूस में साम्यवादी शासन न होता, तो वह और भी अधिक उन्नति कर सकता था।

एक यथार्थवादी विद्वान के नाते डा० हौग ने यह स्वीकार किया है कि सब मिलाकर रूस में खासी प्रगति की गई है, किन्तु यदि यथार्थ रूप में देखा जाये तो यह भी स्पष्ट है कि रूस में सभी क्षेत्रों में सन्तुलित रूप से प्रगति नहीं हुई है। भारी उद्योगों तथा सैनिक सामग्री के उत्पादन में काफी प्रगति हुई है और कृषि एवं उपभोग्य वस्तुओं के उत्पादन की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया गया है।

अमेरिका की तुलना में ४० प्रतिशत

यह अनुमान लगाया गया है कि रूस का कुल उत्पादन अमेरिका के उत्पादन की तुलना में लगभग ४० प्रतिशत के बराबर है। किन्तु रूस की प्रतिव्यक्ति खपत का अनुपात अमेरिका की अपेक्षा केवल २० प्रतिशत के बराबर है। उपभोग्य वस्तुओं के क्षेत्र में रूसी उत्पादन अमेरिकी उत्पादन के २ और ४ प्रतिशत के मध्य है और यहां तक कि अधिक मूलभूत आवश्यकताओं के क्षेत्र में भी अत्यन्त न्यूनता के साथ उपलब्ध रूसी आंकड़ों से स्पष्ट पता चल जाता है कि रूस में भोजन तथा मकान-सम्बन्धी औसत स्तर अमेरिका और अन्य अनेक स्वतन्त्र देशों के स्तर से बहुत नीचा ही नहीं है, बल्कि जारों के शासन-काल की अपेक्षा कुछ ही अच्छा है।

इसका उद्देश्य रूस की स्थिति के सम्बन्ध में यह सिद्ध करना नहीं है कि प्रमुख औद्योगिक राष्ट्र की हैसियत से रूस का स्थान अमेरिका के बाद दूसरे नम्बर पर नहीं है। किन्तु हमें यहां भी तथ्यों की जांच और सावधानतापूर्वक अन्य विकल्पों का अन्दाज करना चाहिए। यह बात भुला नहीं देनी चाहिए कि जारकालीन रूस में चाहे कुछ भी दोष थे—और वे थे भी बहुत से—आर्थिक दृष्टि से वह संसार के देशों में छठे स्थान पर था और उसका प्रतिव्यक्ति उत्पादन भी आज के किसी अल्प-विकसित देश की अपेक्षा निश्चित रूप से अधिक था। साम्यवादियों को नये सिरे से उन्नति नहीं करनी पड़ी है नव-निर्माण के लिए उनके पास पहले से ही ठोस आधार मौजूद था।

४० वर्षों में कैसी उन्नति की ?

इससे एक ऐसा प्रश्न उत्पन्न होता है जो अर्थशास्त्रियों को सदा से परेशान करता रहा है। वह प्रश्न यह है कि यदि रूस में भी ऐसी ही स्वतन्त्र व्यवसाय-प्रणाली व्यवहार में लाई गई होती, जैसी कि अमेरिका तथा कुछ अन्य देशों में व्यवहार में लाई जाती है, तो क्या गत ४० वर्षों में रूसियों की दशा अधिक अच्छी न होती ? यह स्पष्ट है कि इतिहास ने इस प्रश्न के निश्चित उत्तर को असम्भव बना दिया है। फिर भी, कुछ दिलचस्प संकेत हमें इस सम्बन्ध में अवश्य मिलते हैं।

अनेक विशेषज्ञों का विचार है कि १८८० से १९२० तक के अमेरिका विकास-काल की सोवियत रूस के विकास के ४० वर्षों से बहुत अधिक तुलना की जा सकती है। उस काल में अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था का विकास कम से कम उतनी ही तेजी से हुआ है, जितनी तेजी से गत ४० वर्षों में रूसी अर्थ-व्यवस्था का हुआ है। इसके अलावा, अमेरिका जैसा एक स्वतन्त्र समाज उत्पादन की कोटि में सुधार, वस्तुओं की विविधता, सेवाओं एवं सुख-सुविधाओं की व्यवस्था, फलतः जीवन-स्तर में सुधार एवं कल कारखानों के विस्तार के रूप में अपनी उन्नति करता है।

कनाडा से तुलना

अमेरिका की अत्यधिक उन्नत आर्थिक स्थिति होने के कारण यह प्रवृत्ति हो सकती है कि अमेरिका की स्थिति

को विशिष्ट और अपवाद बतलाया जाये। तब हम २० वीं सदी के एक अन्य विकासोन्मुख देश कनाडा के सम्बन्ध में विचार करते हैं। पिछले उन्हीं ४० वर्षों में, जिनमें सोवियत रूस ने उल्लेखनीय प्रगति की है, कनाडा की आर्थिक स्थिति में रूस की अपेक्षा कहीं तेजी से प्रगति हुई है। वहां उद्योगों तथा कृषि में और उत्पादन एवं खपत के मध्य अधिक सुन्दर सन्तुलन रहा है, और इनके परिणामस्वरूप कनाडा के लोगों का जीवन-स्तर भी रूसियों के जीवन-स्तर से बहुत अधिक उन्नत हुआ है।

सबसे पहले यह स्वीकार करना चाहिए कि स्वतन्त्र अर्थ-व्यवस्था के अन्तर्गत एक विकासोन्मुख देश में व्यापार सम्बन्धी उतार-चढ़ावों के कारण अनेक समस्याएं उत्पन्न हो सकती हैं, किन्तु गत दो दशकों की घटनाओं ने सिद्ध कर दिया है कि ये उतार-चढ़ाव सीमित रहे हैं, समस्याएं अस्थायी रही हैं और उनके प्रभाव भी अधिक गहरे नहीं पड़े हैं। उनका उन अशान्तियों एवं मानवीय कष्टों से कोई सम्बन्ध नहीं है, जो साम्यवादियों के तौर-तरीके जबरदस्ती लागू किये जाने के कारण हुए हैं।

अमेरिका की आर्थिक प्रगति के द्वारा इतिहास ने यदि किसी बात को सबसे अधिक जोरदार तरीके से सिद्ध किया है तो वह यह है कि स्वतन्त्रता और सम्पन्नता (अर्थात् सब वस्तुओं की यथेच्छ उपलब्धि) का निर्वाह साथ-साथ खूब अच्छी तरह हो सकता है। श्री हौग के शब्दों में, "अमेरिका में विद्यमान जनता के पूंजीवाद ने स्वतन्त्र मनुष्य में निहित सम्मान के साथ भौतिक समृद्धि जोड़कर सोने में सुगन्ध मिलाने जैसा काम किया है।"

—'ईस्टर्न इकोनोमिस्ट' से

१९५८ के लिपजीग मेले में भारत

लिपजीग का वसन्त मेला, जो २ मार्च से ११ मार्च १९५८ तक चला था, अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक क्षेत्र में फिर से महान् सिद्ध हुआ है। इस मेले में ७३ विभिन्न देशों के ५,७२,७२८ दर्शक एकत्र हुए थे। मेले के प्रारम्भ काल से लेकर लगातार रहने वाली चहल पहल व इतनी बड़ी मात्रा का व्यापार तथा मेले के समयों में हुए असंख्य व्यापार सम्बन्धी मामलों से इस बार भी स्पष्ट प्रतीत होता था कि सभी पश्चिमी व पूर्वी व्यापारी कई सालों से चलते आने वाले समझौतों को मजबूत करने, नये २ कंट्राक्ट करने तथा अंतर्राष्ट्रीय शांतिपूर्ण व्यापार में सहयोग देने को तय्यार थे।

जर्मन गणतंत्र का कुल विदेशी व्यापार २४८.५ करोड़ मार्क रहा। विदेशी प्रतिनिधि कम्पनियों के व्यापार में काफी वृद्धि हुई है। विशेषतः पश्चिमी देशोंके व्यापारी तथा समाजवादी देशों के व्यापारी प्रतिनिधियों के मध्य व्यापार में पर्याप्त वृद्धि हुई है।

उन सभी लोगों ने, जो अन्तर्राष्ट्रीय वस्तुविनिमय तथा उन्नति के प्रति रुचि रखते हैं, शीघ्र ही एक अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मण्डल के अधिवेशन बुलाने के पक्ष में अपने विचार व्यक्त किये। उस अधिवेशन में एक दूसरे देश के मध्य परस्पर व्यापार के प्रति जो रुकावटें व असुविधाएं हैं, उन्हें दूर करने के प्रति विचार किया जाय, जिससे वस्तुओं के परस्पर विनिमय में वृद्धि हो तथा विशेषकर पूर्व और पश्चिमी देशों से मध्य व्यापार बढ़े।

२,६०,००० वर्ग मीटर के विशाल मैदान में ७३ देशों के ९६९९ प्रदर्शकों ने अपनी परम्परागत निर्यात-वस्तुओं का प्रदर्शन किया।

सरकारी तौर पर प्रदर्शन में भाग लेने वाले २१ देशों में भारत का भी विशेष स्थान था। भारतीय प्रदर्शिनी का प्रबन्ध ६५० वर्ग मीटर के क्षेत्र में व्यापार तथा उद्योग मंत्रालय के प्रदर्शिनी विभाग द्वारा किया गया था, जो पिछले तीन वर्षों की तरह इस वर्ष भी अत्यन्त आकर्षक तथा सफल रहा। भारत से ११५ व्यापारी इस मेले में भाग लेने आए थे।

इस क्षेत्र में जो अनुकूल वातावरण तय्यार हुआ है, उससे जर्मन गणराज्य के विदेश व्यापार विभाग तथा भारत

के स्टेट ट्रेडिंग कॉरपोरेशन के मध्य तीन साल की लम्बी अवधि का समझौता हुआ है, जिसके अनुसार १,२०,००० लांगटन अमोनियम सल्फेट तथा इसके बदले में ६,०००० लांग टन मरिएट आफ पोटाश का परस्पर विनिमय होगा।

जर्मन गणतन्त्र के विदेश व्यापार विभाग ने, भारत से अबरक खरीदने के बारे में तीन साल का जो समझौता हुआ था, उसे पूरा कर लिया है। मेले के समय खाद तथा अबरक के लंबी अवधि के समझौतों के अलावा सोप-स्टोन, चाय, मसाले, आवश्यक तेल, दस्तकारी चीजें तथा कपड़ा आदि व्यापार के सम्बन्ध में भी समझौते हुए थे। वहां दर्शकों ने यह अनुभव किया कि यदि भारत के साथ व्यापार बढ़ाया जाय, तो आगामी प्रदर्शनी तक भारत व जर्मनी में व्यापार के बहुत अधिक बढ़ने की संभावनाएं हैं और अन्य देशों की अपेक्षा भारतीय माल को ज्यादा पसन्द किया जायगा।

काफी विचार विमर्श के बाद भारतीय प्रतिनिधियों से यह सिफारिश की गई थी कि लिपजीग के मेले की अवधि में वे क्रय-संभावनाओं का पूरी तरह लाभ उठाएं। उस वक्त लिपजीग में रहने वाले भारतीय व्यापारियों ने जर्मन गण-राज्य के इस प्रस्ताव से सहमति प्रकट की। जर्मन गण-राज्य के औद्योगिक विकास को देखते हुए यह प्रस्ताव मशीनों तथा फैक्टरी के निर्माण में सहयोग देने के क्षेत्र में अधिक उपयोगी हो सकता है। वस्त्रोत्पादन की मशीनें, दवाइयां, मुद्रण सामग्री आदि की मशीनें आदि खरीदने के लिए भी सौदे हुए थे।

भारत तथा रूमानिया के आर्थिक सम्बन्ध

ले० आयन टनसीनु

"भारत माता की जय" यह भारत की प्राचीन शुभ-कामना है। "उसकी विजय से उसकी उन्नति के लिए नये स्वतन्त्र उन्मुक्त आकाश खुल जायेंगे।" यह आशा बहुत वर्ष पहले पं० जवाहरलाल नेहरू ने की थी। अब वह स्वतन्त्र वातावरण उत्पन्न हो चुका है और आज भारत के लोग साम्राज्यवाद की दासता से मुक्त होकर राष्ट्रीय स्वतन्त्रता प्राप्त कर, आर्थिक आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर हो रहे हैं।

स्वतन्त्रता के बाद अन्न समस्या को सुलझाने तथा खाद्य सन्तुलन प्राप्त करने के लिए भारत ने प्रथम पंचवर्षीय योजना (१९५१-५६) की तरफ अपनी शक्ति लगाई। कृषि उत्पादन तथा औद्योगिक क्षेत्र में योजना के परिणाम अधिक प्रशंसनीय रहे। द्वितीय योजना में (१९५६-६१) देश के औद्योगीकरण करने, यातायात की सुविधाएं बढ़ाने, बिजली उत्पादन करने तथा कृषि उत्पादन में सुधार करने के लिए सही कदम उठाये जा रहे हैं।

आर्थिक समृद्धि के लिए भारतीय जनता के अदम्य उत्साह के प्रति रूमानिया की जनता बड़ी सहानुभूति दिखाती आ रही है। पहले यूरप वाले भारत के प्रति रुचि रखना व्यर्थ समझते थे। परन्तु आज जब कि विश्व शान्ति की इच्छा रूमानिया तथा भारतीय जनता को प्रेरणा देती है, दोनों देशों की दूरी मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों के कारण कम होती जा रही है।

रूमानिया की जनता अपने ही अनुभव से यह महसूस करती है कि किसी देश की उन्नति, तथा जीवन स्तर की वृद्धि तभी हो सकती है, जब एक दूसरे देश के सम्बन्ध, विशेषतः आर्थिक सहयोग सम्बन्ध सुदृढ़ हों।

इसी उत्साह और साहस से मार्च २३, १९५४ में रूमानिया ने भारत के साथ व्यापारिक समझौता किया, जो अत्यन्त महत्वपूर्ण था। परिणाम भी शीघ्र ही अच्छे निकले। समझौते के दो वर्ष बाद १९५४ की अपेक्षा व्यापार सम्बन्धी विनिमय काफी अधिक रहा। १९५६ की अपेक्षा १९५७ में व्यापार दुगुना रहा।

रूमानिया से भारत को निर्यात होने वाली चीजों में छपाई सामान, मशीन, खुदाई साधन, ट्रांसफार्मर तथा दवाइयां आदि थीं, जबकि भारत से रूमानिया को जाने वाली चीजों में खाद्य तेल, कपड़े, मिर्च मसाले, लाख तथा खाल, चमड़ा वगैरह थीं। यह व्यापार दोनों देशों के मध्य

टैक्नोलौजी और मानव-श्रम का योग

डब्ल्यू० एस० वोटिस्की

आधुनिक समृद्धिशाली और प्रगतिशील देशों की अर्थ-व्यवस्था का विकास टैक्निकल, सामाजिक, राजनीतिक और मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के पारस्परिक संयोग से हुआ है। आर्थिक विकास और समृद्धि की वर्तमान स्थिति तक पहुंचने में टैक्निकल जानकारी, सामाजिक और राजनातिक संघटन तथा आधुनिक मानव ने भरसक योग दिया है और इस उल्लेखनीय आर्थिक सफलता का श्रेय इन सबको ही प्राप्त होना चाहिए। आधुनिक अर्थ-व्यवस्था के स्वरूप को प्रभावित करने वाले तत्व आपस में इस प्रकार गुंथे हुए हैं कि उनका अलग अलग मूल्यांकन कर पाना या महत्व आंक पाना सरल नहीं।

उदाहरणार्थ उत्पादन-क्षमता को ले लीजिए। एक श्रमिक नेता की दृष्टि में उत्पादन-क्षमता में जो वृद्धि होती उसका श्रेय वह श्रमिकों को ही देना चाहेगा जब कि दूसरी ओर इंजिनियर और व्यवसायी की दृष्टि में उत्पादन-क्षमता में वृद्धि होने का मुख्य श्रेय टैक्निकल सूझ बूझ और जानकारी को प्राप्त होगा। इसी प्रकार अन्य बहुत से उदाहरण दिये जा सकते हैं, जहां एक ही शब्द भिन्न वर्गों के लिए भिन्न अर्थ का द्योतक है।

संक्षेप में यह कह पाना बहुत कठिन है कि आधुनिक औद्योगिक विकास में श्रम और टैक्निकल जानकारी अथवा सूझ बूझ ने अलग अलग कितना योग दिया है। इस सम्बन्ध में एक बहुत ही सुन्दर उदाहरण दिया जाता है। कुछेक अनुभवी और प्रख्यात अर्थशास्त्रियों का कथन है कि मानव-श्रम और टैक्निकल-ज्ञान उस पर्वतारोही की दो टांगों के सदृश हैं, जो २० हजार फुट ऊंची पर्वत की चोटी पर विजय प्राप्त करता है। प्रश्न यह उठता है कि चोटी पर विजय प्राप्त करनेका श्रेय किस टांग को दिया जाय। यही कहा जा सकता है कि दोनों टांगों ने मिल कर ही विजय प्राप्त की है यही उत्तर औद्योगिक विकास में मानय-श्रम और टैक्निकल-ज्ञान के योगदान के सम्बन्ध में दिया जा सकता है।

व्यावहारिक प्रश्न

महत्त्वाकांक्षी आर्थिक विकास योजनाओं में संलग्न राष्ट्रों के समक्ष कुछ व्यावहारिक प्रश्न उठ खड़े होते हैं। औद्योगिक विकास के इच्छुक ये राष्ट्र यह भली भान्ति अनुभव करते हैं कि औद्योगिक विकास कार्यों के लिए उनके पास दक्ष और कुशल कारीगरों और मिस्त्रियों की भारी कमी है। इस कमी की पूर्ति के लिए वह अपने कारीगरों को विदेशों में आवश्यक प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए

अभी प्राथमिक दशा में है। भविष्य उज्ज्वल प्रतीत हो रहा है। दोनों देशों की आर्थिक स्थिति प्रशंसनीय है। भारत व रूमानिया के व्यापार सम्बन्ध दोनों देशों के लिए लाभकारी हैं।

रूमानिया भारत को फैक्ट्री सामान, औद्योगिक साधन, सीमेंट निर्माण सम्बन्धी सामग्री, पुर्जे, ट्रेक्टर, कृषि सम्बन्धी मशीन, तेल परिशोधक यंत्र, कांच, दवाइयां वगैरह दे रहा है, जिससे भारत की द्वितीय योजना सफल होने में काफी सहायता प्राप्त हो रही है।

रूमानिया की आर्थिक उन्नति का पहला प्रदर्शन भारत को १९५५ का अंतर्राष्ट्रीय औद्योगिक मेले में हुआ, जहां रूमानिया का राष्ट्रीय प्रदर्शन कक्ष था। इसमें एक महान् भार वाहक यंत्र भी था, जिसका उपयोग आजकल ज्वालामुखी तैल परिशोधन में हो रहा है। इस सहयोग के साथ २ रूमानिया ने कुछ विशेषज्ञों को भी भेजा है, जो वहां से आई हुई मशीनों को ठीक बिठाने तथा उन्हें चालू करने में मदद दे रहे हैं।

परस्पर आर्थिक सहयोग इसलिए बढ़ता जा रहा है कि रूमानिया की जनता महान् भारतीय तथा दक्षिण पूर्वी एशिया की जनता से अधिक निकट सम्बन्ध स्थापित करना चाहती है।

—

भेजते हैं।

यह नहीं कहा जा सकता कि ये प्रशिक्षण प्राप्त व्यक्ति अपने देश की समस्याओं को हल कर लेते हैं। अनेकों कठिनाइयां और बाधाएं उठ खड़ी होती हैं और कभी कभी सम्बन्धित देश प्रशिक्षण-प्राप्त व्यक्तियों की सेवाओं का पूरा पूरा लाभ नहीं उठा पाते। यही बात विदेशों से आने वाले टैक्निकल विशेषज्ञों के बारे में भी कही जा सकती है। यदि विदेशी टैक्निकल विशेषज्ञ और सम्बन्धित देश के निवासी एक दूसरे को भली प्रकार नहीं समझ सके और पारस्परिक सद्भावना का उनमें अभाव रहा तो आधारभूत लक्ष्य पूरा नहीं होता। उपयुक्त औजारों और मशीनों के अभाव में स्थानीय प्रशिक्षण-केन्द्र भी इस अभाव की पूर्ति नहीं कर सकते।

लेकिन इन सभी कठिनाइयों और बाधाओं के होते हुए भी अमेरिका, संयुक्त राष्ट्रसंघ और कोलम्बो-योजना में शामिल राष्ट्रों द्वारा अल्पविकसित देशों के सहायतार्थ चालू किये गए टैक्निकल सहायता कार्यक्रम अत्यधिक सफल और लाभप्रद सिद्ध हुए हैं। अल्पविकसित और विकासोन्मुख देशों के निवासियों ने यह पूरी तरह सिद्ध कर दिया है कि यदि उन्हें उचित अवसर और पथ-प्रदर्शन प्राप्त हो तो वह आधुनिकतम राष्ट्रों द्वारा प्रयुक्त की जाने वाली सभी टैक्निकल विधियों को बिना किसी कठिनाई के सीख सकते हैं, और उनका सफलतापूर्वक उपयोग कर सकते हैं। यह पूरी तरह प्रकट हो चुका है कि टैक्निकल सूझ-बूझ और जानकारी किसी देश को विरासत में प्राप्त नहीं हुए हैं और इसके लिए विशेष शिक्षा इत्यादि की भी आवश्यकता नहीं। प्राचीन काल की दस्तकारी के लिए जितनी अधिक सूझ बूझ और दक्षता की आवश्यकता पड़ती थी, उससे कम दक्षता और सूझ बूझ की आवश्यकता आधुनिक मशीनों का संचालन करने के लिए होती है।

अल्पविकसित देशोंके नेताओंके समक्ष अपने देशका तीव्रगति से औद्योगीकरण करनेका लक्ष्य उपस्थित है। जनता और सरकार तेजी के साथ उद्योगोंका विकास चाहती है। उनका तर्क बहुधा यह होता है कि यद्यपि हमारा देश गरीब हैं, परन्तु हमारे पास प्राकृतिक साधन-स्रोतोंकी कमी नहीं। आवश्यकता केवल उनका उपयुक्त ढंगसे विकास करनेकी है। लेकिन इनका विकास करनेके लिए हमें धन की आवश्यकता है। हमारे पास इतनी पूंजी नहीं कि हम अपने प्राकृतिक साधन स्रोतों का विकास कर सकें। इस लिए हमें जनता पर नए नए कर लगाने, ऋण लेने, विदेशों से ऋण या आर्थिक सहायता प्राप्त करनेकी आवश्यकता पड़ती है। इसके लिए यदि जनता को कुछ आर्थिक तंगी उठानी पड़े और सामाजिक सुधारों एवं समाज-कल्याण कार्यक्रमों को चालू करने में कुछ देर हो जाए तो कोई परेशानी की बात नहीं। इस प्रकार इन देशों के योजना-निर्माता उन लोगों की आलोचनाओं की अवहेलना कर देते हैं जो कहते हैं कि शिक्षा इत्यादि मानवीय हित के विषयों पर भी हमें समुचित ध्यान देना चाहिए। लेकिन उनका यह दृष्टिकोण गलत है। शिक्षा इत्यादि की उपेक्षा करने से देश और जनता के हित को बड़ी हानि पहुँचने की सम्भावना रहती है।

महत्वाकांक्षी योजनाएं

कुछ लोग राजनीतिक, सैनिक, प्रादेशिक तथा इसी प्रकार के अन्य हितोंको दृष्टि में रख कर विकास योजनाएं तैयार करते हैं। कुछ राष्ट्रीय प्रतिष्ठा और सम्मान को बढ़ाने के उद्देश्य से महत्वाकांक्षी योजनाएं तैयार कर डालते हैं। उदाहरणार्थ उत्साही और महत्वाकांक्षी योजना-निर्माता छोटे छोटे उद्योगों के विकास की ओर ध्यान न देकर आधारभूत और बड़े-बड़े उद्योगोंके विकास को अपना लक्ष्य बनाते हैं। वे चाहते हैं कि उनके देश में मोटरें बनें, हवाई जहाज और भारी मशीनें बनें और इस्पात इत्यादि आधार-भूत और महत्वपूर्ण वस्तुओं का निर्माण हो। लेकिन वे यह भूल जाते हैं कि क्या उनके देश में इतनी आर्थिक क्षमता है और क्या उसके लिए आवश्यक कच्चा माल वहां पर्याप्त मात्रा और परिमाण में सुलभ है। वे वास्तविकताओं की उपेक्षा कर कल्पना के पंख लगा कर उड़ना चाहते हैं, और अपने इस प्रयास में बुरी तरह असफल होते हैं। मोटर चलाना, सीखना, अशिक्षित व्यक्ति के लिए भी बिल-कुल सरल और आसान है।

आधुनिक टैक्नौलोजी आज बहुत ही आसानी से एक देश से दूसरे देश में पहुँचाई जा सकती है। जंगलों, रेगिस्तानों और पठारों पर आसानीसे हवाई अड्डों का निर्माण किया जा सकता है। संक्षेप में आधुनिक टैक्नौलोजी ने संसार के

दूरस्थ स्थानों में, आधुनिक सभ्यता से बहुत दूर भी, आधुनिक सुविधाओं और उद्योगों का विकास करना बिलकुल सम्भव बना दिया है। केवल समय और व्यय का प्रश्न उठाता है। एक ही फर्म संसार के अनेकों भागों में एक ही प्रकार के औद्योगिक कारखानों का निर्माण करती है।

यातायात और परिवहन साधनों के विकास और विस्तार ने आधुनिक टैक्नौलोजी के प्रसार में बहुत अधिक योग दिया है। १८ वीं सदी में अधिकांश कारखाने रेल लाइनों, बन्दरगाहों और जल मार्गों के निकट स्थापित किए जाते थे, लेकिन आज इस बाधा पर भी विजय प्राप्त कर ली गई है। अब देश के किसी भी भाग में कारखानों की स्थापना की जा सकती है।

उपनिवेश काल में प्रचलित अर्थ-व्यवस्था आज पूरी तरह लोप हो चुकी है। राजनीतिक घटनाओं और टैक्निकल विकास ने सर्वथा एक नवीन प्रकार की परिस्थितियों का सृजन किया, जिनके प्रभाव से देशों की अर्थ व्यवस्थाएं भी अछूती नहीं रह सकीं। इस युग की समाप्ति के साथ ही अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में विद्यमान पुरानी आर्थिक और व्यापारिक व्यवस्था का भी अन्त हो गया। पहले कुछ देश वस्तुओं का निर्माण करते थे, तथा कुछ केवल कच्चे माल की सप्लाई करते थे। कच्चे माल की सप्लाई करने वाले देशों को अपने यहां उद्योग धन्धे स्थापित करने की छूट न थी। यूरोप के उद्योग प्रधान देशों का यह एक प्रधान लक्ष्य था कि संसार के विभिन्न भागों में स्थित उनके अधीन देश केवल कच्चा माल सप्लाई करें और उनके कारखानों से निकलने वाली वस्तुओं के लिए मण्डियां सुलभ करें। लेकिन अब उनकी इस परम्परागत नीति में परिवर्तन हो गया है और अब वह इस बात का भरसक प्रयास कर रहे हैं कि अल्पविकसित देशों की अर्थ-व्यवस्था को आत्म-निर्भर बनाने और वहां आवश्यक उद्योग धन्धों का विकास करने में भरसक सहायता दी जाए।

तीन सिद्धान्त

कुछ लोगों में यह गलत धारणा फैल गई है कि औद्योगीकरण की दिशा में सबसे पहला कदम देश में आधारभूत और भारी उद्योगों की स्थापना करना होना चाहिए। संसार के कुछ अत्यधिक उद्योग प्रधान और प्रगतिशील राष्ट्रों के अनुभवों के आधार पर औद्योगि[क] विकास कार्यक्रम के आधार मुख्यतः तीन सिद्धान्त हैं:—

१—देश में आर्थिक और राजनीतिक स्थिरता हो, यातायात और परिवहन के पर्याप्त साधन सुलभ हों, जन[ता] की क्रय-शक्ति में वृद्धि हो रही हो, सूझ बूझ वाले [प्र]बन्धकों व कारीगरों का अभाव न हो।

२—देशके अन्दर से प्राप्त कच्चे माल का उपयो[ग] किया जाए और उत्पादित वस्तुएं देश के अन्दर खप सकें।

३.—सरकार उपभोक्ता वस्तुओं के आयात पर प्रति-बन्ध लगा दे और उद्योगों के विकास में सहायक मशीनों [के] आयात पर अधिक जोर दे।

कुछ लोगों की धारणा यह भी है कि उपभोक्ता वस्तुओं कि उत्पादन करने वाला देश तेजीसे औद्योगिक विकास नहीं कर सकता। अतएव आवश्यकता यह है कि उपभोक्ता वस्तुओं का उत्पादन बहुत कम कर दिया जाय और समस्त शक्ति का उपयोग भारी उद्योगों की स्थापना के लिए किया जाए, भले ही इससे जनता को कष्टों का सामना करना पड़े। यह विचार धारा सही नहीं है और सोवियत रूस [के] परीक्षण के परिणामों से इसकी भली भन्ति पुष्टि होती है। भविष्य के लिए वर्तमान पीढ़ी को बलिदान कर देना बुद्धि-मत्तापूर्ण नीति नहीं कही जा सकती।

दूसरे यदि हम शिक्षा इत्यादि के विस्तार पर समुचि[त] ध्यान नहीं देंगे तो हर वर्ष अशिक्षितों की संख्या बढ़[ती] जाएगी और इसका परिणाम यह होगा कि आगे चल [कर] उन्हें अच्छी नौकरी नहीं मिल सकेगी। आधुनिक अर्थ-व्यवस्थाके उपयुक्त भावी पीढ़ी तैयार करने का कार्य बहु[त] कठिन है। इसकी तुलनामें विदेशी ठेकेदारों और विशेषज्ञों की सहायता से बांध, कारखाने इत्यादि का निर्माण कार्य बहुत आसान कार्य है।

समृद्धि प्राप्त करने के लिए कोई छोटा मार्ग नहीं है। शिक्षा और नवीन तथा विस्तृत दृष्टिकोण की पूर्ति अन्य कोई वस्तु नहीं कर सकती। स्थायी आर्थिक समृद्धि [के] लिए स्कूलों, अस्पतालों, सफाई, विकास की परिस्थिति[यों], आगे बढ़ने और प्रगति करने की अभिलाषा, व्यक्ति और श्रम की प्रतिष्ठा इन सभी बातों का होना अत्यधि[क] आवश्यक है।

श्रम-सम्बन्धी कानून

भारत सरकार किस तेजी से श्रम सम्बन्धी कानून बना रही है, यह नीचे के विवरण से ज्ञात हो जायगा :

क—इस साल बनाये गये कानून

१. औद्योगिक विवाद (संशोधन) कानून, १९५७—छंटनी मुआवजा देने की व्यवस्था के लिए।

औद्योगिक विवाद (केन्द्रीय) नियम, १९५७—औद्योगिक विवादों का जल्दी फैसला करने के बारे में।

२. औद्योगिक विवाद (बैंक कम्पनियां) संशोधन कानून, १९५७—ट्रावनकोर-कोचीन जांच कमीशन की सिफारिशों को अमल में लाने के लिए।

३. वेतन अदायगी (संशोधन) कानून १९५७—वेतन अदायगी कानून का लाभ निर्माण उद्योग के कामगरों को भी मिल सके, 'वेतन' की परिभाषा को बदला जा सके और वेतन सीमा को बढ़ाया जा सके।

४. न्यूनतम वेतन संशोधन कानून, १९५७—कम-से-कम वेतन निश्चित करने की तारीख बढ़ाने के लिए।

५. कोयला खान विनियम, १९५७—कोयला खान विनियम, १९२६ और कोयला खान (अस्थायी) विनियम, १९५५ में संशोधन।

ख—विचाराधीन कानून

१. खदान कानून, १९५२—अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के कनवेनशनों और कारखाना कानून, १९४८ की रूप रेखा पर लाने के लिए।

२. जच्चा लाभ कानून, १९४१।

३. धातु खाद विनियम।

४. कोयला खान बचाव अधिनियम १९३९—आन्ध्र प्रदेश और मध्य प्रदेश की खदानोंमें बचाव-केन्द्र स्थापित करने के लिए।

५. निर्माण-उद्योग के कामगरों के लिए कानून।

६. मोटर परिवहन के कामगरों के लिए कानून।

★

मजदूरों को बेकारी का संकट

पिछले दिनों राष्ट्रीय मजदूर कांग्रेस ने विभिन्न औद्योगिक केन्द्रों में उद्योग बन्दी के कारण जो बेकारी मजदूरों में हुई, उसकी जांच करवाई थी जो अधिकृत आंकड़े प्राप्त हुए, वे भयावह हैं। बम्बई, अहमदाबाद और शोलापुर की कुछ सूती कपड़ा मिलों के बन्द हो जाने से लगभग ५०,००० मजदूर बेकार हो गए हैं। निकट भविष्य में ही कुछ अन्य मिलों ने भी काम बन्द करने की धमकियां दी हैं; जिसके फलस्वरूप बहुत जल्द लगभग ३०,००० मजदूर और बेकार हो जायेंगे। अकेले कानपुर शहर में कुछ सूती कपड़ा मिलों के बन्द हो जाने से लगभग २०,००० मजदूर बेकारी का सामना कर रहे हैं। असम के चाय बागानों में मजदूर परिवारों के २५,००० लोग रोटी को तरस रहे हैं। लगभग १०,००० मजदूरों की ऐसी स्थिति पंजाब, बंगाल, राजस्थान तथा विदर्भ में है। मध्य प्रदेश के कुछ औद्योगिक केन्द्रों में बेकारी का हाल लगभग ऐसा ही है।

यह अवस्था तब है, जब कि देश दूसरी पंचवर्षीय योजना के मध्यकाल में से गुजर रहा है। इस चिन्ताजनक स्थिति का वास्तविक कारण क्या है, यह सोचने की आवश्यकता है। सरकार की उद्योगनीति, जनता की क्रयशक्ति में असाधारण कमी, मजदूरों की मांगें, उद्योगपतियों की अयोग्यता, अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में भीषण प्रतिस्पर्धा इनमें से वास्तविक कारण क्या है ? जो भी कारण हो, उस पर गम्भीरतापूर्वक विचार होना चाहिए और उसे शीघ्र हल करने का प्रयत्न होना चाहिए। नैनीताल में हुये श्रम सम्मेलन में प्रतिनिधियों ने इस प्रश्न पर विचार अवश्य किया है, किन्तु उसके निश्चय अभी प्रारंभिक अवस्था से आगे नहीं बढ़ पाये। उसके द्वारा सुझाई गई समितियां क्या प्रभावी उपाय बताती है, यह निकट भविष्य में होगा।

★

केरल के मजदूर

केरल की कम्युनिस्ट सरकार को शासन करते हुए कुछ समय बीत गया है। इसलिए आज जहां वह अपने क्रियाकलाप पर गर्व प्रकट कर सकती है, वहां जनता उसके कार्यों का मूल्यांकन और आलोचना कर सकती

कम्यूनिस्ट नेता बहुत समय से कांग्रेसी शासन की मज-दूर नीतिकी आलोचना करते हैं किन्तु 'इंटक' के एक प्रमुख नेता श्री रामसिंह वर्मा ने पिछले दिनों एक भाषण देते हुए इन्दौर और केरल के मजदूरों के वेतनों की तुलना की है। त्रिचूर और इन्दौर में वेतनों की तुलना निम्नलिखित है।

	त्रिचूर	इन्दौर
बेल ब्रेकर	२५	४१
मिक्सिंग स्प्रेडर	२१	३८
स्कूचर	२०	३४
कार्ड लेपकेरियर	२०	४३
केन मैन	२०	४०
ग्रैंडर	२५	५०
फ्रेम डाफर	१४	३०

इसी तरह अन्य खातों में भी वेतनों में पर्याप्त अन्तर है। अब केरल सरकार को इन संख्याओं के सम्बन्ध में प्रकाश डालना चाहिए। हम यह नहीं कहना चाहते कि परिस्थितियों का बिना विचार किए वहां वेतन एक दम बढा देने चाहिए। यदि वहां वेतन वृद्धि व्यावहारिक नहीं हो तो शासन को दोष नहीं दे सकते। परन्तु इससे यह तो स्पष्ट है कि वास्तविक स्थिति की उपेक्षा करके हम नहीं चल सकते। यदि केरल में कम्यूनिस्ट शासन अभी वेतन वृद्धि के प्रस्ताव को अव्यावहारिक समझता है तो यह नहीं भूल जाना चाहिए कि दूसरे शासन भी ऐसा ही समझ सकते हैं और इसके लिए उन्हें दोष नहीं देना चाहिए।

★

श्रम-सम्बन्धी महत्वपूर्ण निर्णय

नैनीताल में पिछले दिनों जो श्रम सम्मेलन हुआ, उसमें अनेक महत्वपूर्ण निर्णय किये गए हैं। बन्द होती हुई मिलों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है और इसके परिणाम स्वरूप मजदूरों की बेकारी बढ़ती जा रही है।

नैनीताल सम्मेलन ने एक उपसमिति नियुक्त करने की सिफारिश की है, जो मिलों के आर्थिक संकट के कारणों पर विचार करेगी, दूसरी ओर मिलों को अच्छी कपास तथा आर्थिक सहायता देने आदि की भी सिफारिश की गई है। यह भी सलाह दी गई है कि सरकार उन बन्द होने वाली मिलों को स्वयं चलाये ताकि मजदूरों की बेकारी न बढ़े और मजदूरी की दर शोलापुर की तरह से मजदूरों से समझौता करके तय की जावे। सरकार द्वारा नियत समिति कानपुर और इन्दौर का विशेष रूप से तथा अन्य मिलों के सम्बन्ध में मुामान्य रूप से विचार करेगी।

इस सम्मेलन में दो और महत्वपूर्ण प्रश्नों पर विचार किया गया है। आज देश में मजदूर संघों में परस्पर प्रति-स्पर्धा ने एक विकट समस्या उत्पन्न कर दी है। हर एक प्रतिस्पर्धी यूनियन अपनी मान्यता के लिए दूसरे को नीचा दिखाना चाहता है और इस स्वार्थ के लिये औद्योगिक शांति को नष्ट करके देश को नुकसान पहुँचाने में भी संकोच नहीं करता।

नैनीताल के श्रम सम्मेलन में इस प्रश्न पर विचार किया गया और यूनियन की मान्यता के सम्बन्ध में निम्न-लिखित सिद्धान्त स्वीकृत किये गये :

मान्यता के सिद्धान्त

—जहां एक से अधिक मजदूर संघ हैं, वहां यदि कोई संघ मान्यता के लिए दावा करे तो रजिस्ट्रेशन के बादद कम से कम १ वर्ष तक उसका सक्रिय होना आव-श्यक हे। जहां केवल एक ही संगठन है वहां यह शर्त लागू नहीं होती।

—सम्बद्ध उद्योग में इसकी सदस्यसंख्या कम से कम १५ प्रतिशत हो।

—यदि किसी मजदूर संघ के सदस्यों की संख्या सम्बद्ध स्थानीय उद्योग के मजदूरों की संख्या का २५ प्रति-शत है, तो वह उस क्षेत्र के लिए मान्यता प्राप्त करने का दावा कर सकती है।

—किसी मजदूर संघ को मान्यता मिलने पर स्थिति में दो वर्ष तक कोई परिवर्तन नहीं हो।

—जहां किसी उद्योग या संस्थान में कई मजदूर संगठन हों, वहां जो सबसे बड़ा संघ हो उसे मान्यता प्रदान की जाय।

—किसी क्षेत्र के उद्योग की प्रतिनिधि मजदूर यूनि-यन उस क्षेत्र के उस उद्योग के सभी कामगारों का प्रति-निधित्व करेंगी। परन्तु यदि किसी विशेष उद्योग की यूनि-

थन की सदस्य संख्या ५० प्रतिशत है तो, वह उस उद्योग की एक सीमा तक ही प्रतिनिधित्व कर सकती है।

—प्रतिनिध्यात्मक स्वरूप के विनिश्चय के लिए प्रक्रिया और अधिक सम्पूर्ण होनी चाहिए। जहां पर विभागीय तंत्र विनिश्चयात्मक निर्णय अन्य पक्षों को स्वीकार्य न हों, वहां सभी केन्द्रीय मजदूर संगठनों के प्रतिनिधियों की एक समिति बनायी जाय जो मामले पर विचार करे तथा निर्णय दे। इसके लिए केन्द्रीय सरकार मजदूर संगठन के स्थायी तंत्र के रूप में कार्य करेगी तथा स्थानीय आधार पर व्यक्ति और धन प्रदान करेगी।

—केवल उन्हीं मजदूर संघों को मान्यता दी जायगी, जो अनुशासन संहिता का पालन करेंगे।

—ऐसे मामले में जहां कोई मजदूर संघ केन्द्रीय मजदूरों के चारों संगठनों में से किसी से भी सम्बद्ध न हों वहां मामले को अलग रूप से ही तय किया जायगा।

सम्मेलन ने मजदूर यूनियन की मान्यता के ही प्रश्न पर विचार नहीं किया, मजदूर संघों की पारस्परिक आचरण संहिता पर भी विचार किया है। इस पर देश में विद्यमान चारों मजदूर संघों ने हस्ताक्षर कर अपनी स्वीकृति प्रदान को है। इस आचरण-सम्बन्धी संहिता के सिद्धान्त निम्नलिखित हैं :

मजदूर-संघों की आचरण-संहिता

● किसी उद्योग या इकाई के प्रत्येक मजदूर को अपने पसन्द के श्रम संगठन का सदस्य बनने की स्वतंत्रता और अधिकार होगा। इस सम्बन्ध में किसी प्रकार की जोर जबरदस्ती नहीं डाली जावेगी।

● श्रम संगठनों की सदस्यता दोहरी नहीं होगी। प्रतिनिधिक स्वरूप वाले श्रम संगठनों के सम्बन्ध में यह तय किया जाता है कि इस सिद्धान्त की पड़ताल करने की आवश्यकता है।

● श्रम संगठन के प्रजातांत्रिक कार्य संचालन के प्रति निर्लिक स्वीकृति एवं सम्मान होगा।

● श्रम संगठनों की कार्य समितियों एवं पदाधिकारियों का नियमित प्रजातांत्रिक निर्वाचन होगा।

● कोई भी संगठन मजदूरों के अज्ञान या पिछड़ेपन का दुरुपयोग नहीं करेगा। कोई भी संगठन अतिशयोक्तिपूर्ण एवं अनाप-शनाप मांगें प्रस्तुत नहीं करेगा।

● सभी श्रम संगठन जातीयता, साम्प्रदायिकता और प्रांतीयताका दमन करेंगे।

● श्रम संगठनों के पारस्परिक आचरण में हिंसा, जोर-जबरदस्ती, धमकी या व्यक्तिशः दुर्भावनाओं को स्थान नहीं दिया जावेगा।

——

(पृष्ठ ३०६ का शेष)

विश्व-बैंक के आंकड़ों के अनुसार एशिया में ऋण लेने वाले देशों में सबसे पहला स्थान भारत का है। १ मार्च १९५८ तक भारत को ३७ करोड़ २६ लाख १० हजार डालर के ऋण प्रदान किए जा चुके थे। भारत को नए प्रदान किए जाने वाले दो ऋणों में २ करोड़ ९० लाख डालर का ऋण कलकत्ता बन्दरगाह के सुधार के लिए दिया जा रहा है। इन्हें मिलाकर विश्व-बैंक द्वारा एशिया को दिए जाने वाले ऋणों की कुल राशि ८७ करोड़ ३० लाख डालर हो जाएगी।

भारत में गैर-सरकारी उद्योगों को भी विश्व-बैंक ने १९ करोड़ ५० लाख डालर के ऋण दिए हैं। इनमें से सबसे बड़ा ऋण भारत की इस्पात कम्पनियों—"टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी" तथा "इण्डियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी" को दिया गया है। उक्त दोनों कम्पनियों को १५ करोड़ ९० लाख डालर के ऋण बैंक ने विदेशों से सामग्री और आवश्यक सेवाओं की उपलब्धि के लिए प्रदान किए हैं। यह ऋण प्रदान करने का उद्देश्य इनकी उत्पादन-क्षमता दुगुनी करना है।

ट्राम्बे में बिजली घर के निर्माण तथा उसके विस्तार के लिए दो ऋण टाटा पावर कम्पनी को दिए गए हैं। यह बिजली घर बम्बई नगर को १,२५,००० किलोवाट बिजली इस समय प्रदान कर रहा है तथा १९६० तक बिस्तार पूरा हो जाने के बाद यह कारखाना ६२,५०० किलोवाट अतिरिक्त बिजली इस नगर को प्रदान कर सकेगा।

१ करोड़ डालर का एक अन्य ऋण भारत के औद्योगिक ऋण तथा पूंजी विनियोग सम्बन्धी निगम को प्रदान किया गया है।

——

(पृष्ठ ३१८ का शेष)

सर्वोदय का तत्त्व

जमाना अन्नप्रधान देशों का है, उद्योग-प्रधान देशों का नहीं, अतः अन्नोत्पादन के साधन बाजार से उठा दिये बिना कोई चारा नहीं है। जमीन रबड़ के जैसी बढ़ नहीं सकती, वैसे अन्न भी कारखानों में बढ़ नहीं सकता। अतः खेती का पहला उपयोग अन्नार्थ ही हो एवं दूसरा उपयोग आवश्यक कच्चे माल के उत्पादनार्थ। उत्पादन का वास्तविक उद्देश्य भी आर्थिक एवं सांस्कृतिक भूमिका पर ही साधा जा सकता है। गांधी के पहले भी चरखा, झाड़ू, चक्की, प्रार्थना थी, परन्तु गांधी ने इन्हें क्रांति का औजार बना कर इनमें और इनके द्वारा समाज में जान फूंक दी।

किसान

स्वराज्य की इमारत एक जबरदस्त चीज है जिसे बनाने में अस्सी करोड़ हाथों का काम है। इन बनाने वालों में किसानों की तादाद सबसे बड़ी है। सच तो यह है कि स्वराज्य की इमारत बनाने वालों में ज्यादातर (करीब ८० फ़ी सदी) वही लोग हैं; इसलिए असल में किसान ही कांग्रेस है, ऐसी हालत पैदा होनी चाहिए।

—म० गांधी

गांधी की परम्परा हमें जीवित रखनी है, उसे आगे बढ़ाना है।

उद्योग ऐसा हो, जिसमें से मनुष्यता का विकास होता रहे। इन्सान के सम्बन्ध ऐसे हों, जहां सौदा न हो। एक की मेहनत दूसरे द्वारा खरीदना बंद होगा, तभी यह संभव होगा। परस्पर के ताल्लुकात कानून से परिचालित न हों। यही लोक-चारित्र्य की भित्ति है। हमारा पुरुषार्थ गुण का विकास करने वाला हो, न कि विकारों की वृद्धि करने वाला!

वैज्ञानिक क्रांतिवाद में इस प्रश्न का जवाब न था कि दुनिया को बदलने वाला कौन है? गांधी ने इसका जवाब दिया कि जो खुद को बदलेगा, वह समाज को बदलेगा। अब क्रांति शांति के ही साधनों से होगी। इसलिए अमृतसर में कम्युनिस्टों को भी अपना रुख बदलना पड़ा और यदि वह 'पैंतरा' भी हो, तो भी वह यहीं संकेत प्रकट करता है कि जमाने का रुख किस ओर है!

गांधी ने पहले के परिमाणों में—डायमेंशन्स में, दो और परिमाण जोड़ दिये : शांति और व्यक्तिगत आचरण के। यही क्रांति की बुनियाद है। भूदान का भी यही उद्देश्य है कि समाज के नक्शे बदल देना, जमाने के रुख को बदल देना और इन्सान की तबीयत बदल देना। सर्वोदय की क्रांति का यह लक्ष्य है।

सर्वोदय की मांग है कि समाज को बदलने वाले का गुण-विकास भी हो! दुनियां को बदलते-बदलते ही उसे बनाना है! पर उसके लिए आवश्यक यह है कि दुनिया में गलत औजार नहीं होने चाहिए और सही औजार गलत आदमियों के हाथ में नहीं होने चाहिए। अतः शस्त्रों का भी बहिष्कार चाहिए और सत्ता की प्रतिस्पर्द्धा का भी।

—दादा (देहरादून सर्वोदय सम्मेलन में)

★

२७३ सहकारी समितियां आत्मनिर्भर बनी

उत्तर प्रदेश में चलाये गये व्यापक सहकारिता आन्दोलन के अच्छे परिणाम मिलने लगे हैं। जौनपुर की २७३ प्रारम्भिक सहकारी ऋण समितियां आत्मनिर्भर हो चुकी हैं और अपना कार्य संचालन निजी पूंजी से ही कर रही है।

ये समितियां अब बाहरी साधनों से ऋण नहीं लेतीं और न अपने सदस्यों को ऋण देने अथवा कारबार के लिए दूसरे वित्तीय साधनों पर निर्भर करती हैं।

इन समितियों की सदस्य संख्या ८ हजार से अधिक हो गयी है। साथ ही इनके हिस्से की पूंजी बढ़कर ३ लाख ४६ हजार रुपये और सुरक्षित धनराशि १ लाख २८ हजार रुपये हो गयी है।

सम्पदा व हिन्दी में आर्थिक साहित्य पर्यायवाची शब्द हैं।

अथवृत्त-चयन

(पृष्ठ ३२० का शेष)

आनुमानिक अध्ययन प्रकाशित कर बतलाया गया है कि प्रायः ५१ अरब १० करोड़ रुपये मूल्य की चांदी और सोना जनता के हाथों में है। अध्ययन में कहा गया है—देश में सोने के उत्पादन और सन् १९४९ से चालू तस्कर व्यापार को भी दृष्टि में रखकर १०॥ करोड़ औंस सोना जनता के हाथों में समझा जाता है। इसी प्रकार कुल चांदी का भी जनता के पास तथा ४ अरब २३॥ करोड औंस चांदी अनुमान लगाया गया है (१ औंस २ सही २।३ तोले का होता है)।

सोने के वर्तमान महंगे भाव २८९) प्रति औंस के हिसाब से १०॥ करोड़ औंस सोने का मूल्य ३० अरब ३५ करोड़ रुपया होगा। इसी प्रकार ४ अरब २३॥ करोड़ औंस चांदी भी २० अरब ७५ करोड़ रुपये की होगी।

भारत विभाजन के समय भारत में १३ करोड़ औंस सोने का अनुमान किया गया है। यदि विचार के लिए जनसंख्या को लें तो बर्मी और पाक हिस्से का सोना ३ करोड़ औंस आयेगा।

★

आंखें खोलने वाले प्रतिवेदन

पिछले दिनों सरकारी या लोकसभा के लेखा परीक्षकों की आंखें खोलने वाली रिपोर्टें अखबारों में प्रकाशित हुई हैं। हिन्दुस्तान मशीन टूल्स फैक्ट्री, हिन्दुस्तान हाउसिंग फैक्ट्री और हिन्दुस्तान स्टील लि० में जनता के लाखों रुपयों का दुरुपयोग हुआ है। उत्पादन प्रारम्भ होने से बहुत पहले ही पैकिंग फोरमैन की नियुक्ति, प्रशिक्षण अवस्था में करीब २ लाख रु० वेतन दर, भारत भेजने से पहले उनकी सेवाओं की समाप्ति, नियुक्ति के कई मास बाद भारत में विशेषज्ञों को भेजना, आठ मास के नियुक्तिकाल में से केवल एक मास अपनी ड्यूटी भुगताना, आवश्यक रूप से इन्जीनियरों की नियुक्ति आदि बीसियों शिकायतें रिपोर्ट में की गई हैं। नई दिल्ली में बने विलास गृह (अशोक होटल) के निर्माण में भी बीसियों अनियमितताएं की गई हैं। बिना काम देखे लाखों रु० के बिल चुकाये गये हैं, सरकारी नियत दर से बहुत ऊंची दर पर बिल चुकाये गये। जमीन की खुदाई, मलवे की ढुलाई, कच्चे पक्के पत्थर के मूल्य सभी में लाखों रु० बरबाद हो गये। समय-समय विभिन्न बांधों के निर्माण और सरकारी कार्यों में इसी तरह रुपये की बरबादी के उदाहरण मिलते हैं। इन रिपोर्टों के बाद क्या कार्रवाई होती है, यह ज्ञात नहीं होता। हमारी सम्मति में दोषी अपराधियों को कठोर दण्ड मिले बिना भ्रष्टाचार रुक नहीं सकता। मुंदड़ा काण्ड की तरह इन भ्रष्टाचारों के विरुद्ध भी कठोर कदम उठाने चाहिए।

★

स्वेज नहर मुआवजा सम्बन्धी समझौता

अरब गणराज्य के प्रतिनिधियों तथा स्वेज नहर कम्पनी के शेयर होल्डरों के मध्य मुआवजा चुकाने के सम्बन्ध में आखिर समझौता हो गया। इसके अनुसार अरब गणराज्य ने २८३ लाख मिश्री पौंड चुकाना स्वीकार किया है। समझौते के अनुसार सारी विदेशी पूंजी शेयर होल्डरों को छोड़ देनी होगी। प्राथमिक भुगतान ५३ लाख पौण्ड की किश्त में है। मिश्र ने भी स्पष्ट कह दिया है कि २६ जुलाई १९५६ से लेकर लंदन तथा पेरिस में जो धन वसूल किये गए हैं, उन पर मिश्र का हक होगा।

प्राथमिक भुगतान के बाद शेष रकम छः वार्षिक किश्तों में चुका दी जायगी। प्रथम पांच किश्तों में ४० लाख तथा छठे किश्तों में ३० लाख मिश्री पौण्ड के हिसाब से। इन किश्तों पर सूद नहीं लिया जायगा।

समझौते में यह स्पष्ट किया गया है कि असाधारण सेवा करने वालों तथा पेंशन लेने वालों के लिए सम्बन्धित दोनों पक्षों के ऋणों को चालू रखने की जिम्मेदारी अरब-गणराज्य अपने ऊपर लेगा।

अमेरिका के वित्तमंत्रालय ने ३० अप्रैल को घोषणा कर दी है कि १ मई से २६० लाख डालर की ईजिप्ट की जो पूंजी स्वेज संकट काल से रोक दी गई थी, वह मुक्त कर दी जायगी। स्वेज नहर कम्पनी की ४४० लाख डालर की सम्पत्ति को भी कम्पनी तथा शेयर होल्डरों के लिए अमेरिकन सरकार ने मुक्त करना शुरू कर दिया है।

★

राष्ट्र का आर्थिक प्रवाह

(पृष्ठ ३२२ का शेष)

विदेशी सहायता	४३८	६००	१०३८
घाटे की अर्थ-व्यवस्था द्वारा	९१७	२८३	१२००
कुल स्रोत	२४५६	१८०४	४२६०

इन भारी करों के लगने पर भी पहले ३ वर्षों में बजटों के स्रोतों से केवल ५० प्रतिशत आय हुई। विदेशी सहायता भी ५० प्रतिशत प्राप्त हुई। अगले दो वर्षों में वृद्धि सम्भव है, किन्तु अन्य स्रोत गिरे हुए होंगे। इस अवस्था में करों के स्तर का कैसे विरोध किया जा सकता है। यदि ये कर न लगते तो क्या हमारी अवस्था सुधरती?

फ्रांस की तरह इस देश में राजनीतिक दल देश के आर्थिक विकास का खयाल न कर आलोचना करते हैं। कहा जाता है कि इस बड़ी योजना की क्या जरूरत है। योजना जनता के लिए है, तब ये इस्पात आदि के बड़े धंधे क्या महत्त्व रखते हैं। पर हकीकत में ये अनर्गल प्रश्न हैं। १९६१ तक यदि गृह-निर्माण, रेलवे यातायात और रोजगारी के प्रश्न हल न हुए, तो हमारी अवस्था १९५६ से भी १९६१ में बदतर होगी। भारत को ११०० करोड़ रुपए के स्थान पर १७४० करोड़ रुपए की विदेशी सहायता अपेक्षित है। योजना में विदेशी सहायता २० प्र० श० की अपेक्षा ४० प्र० श० आवश्यक है। यह कहना न होगा कि योजना के जो कार्य केन्द्र के तत्वावधान में हैं, वे ठीक ढंग से चल रहे हैं। केन्द्र के अधिकार में उद्योगों का निर्माण है, किन्तु राज्यों

भारत में सोने की खपत

(हजार औंस में)

वर्ष	आयात	निर्यात	उत्पादन	असली खपत
१८८६-८७ से १९१८-१९	७००३३,	३४३५८,	१२४३५	५८८१०
१९१९-२० से १९३०-३१	५७०२४	७४४८	४७०८	५४२८४
१९३१-३२ से १९३६-३७	११३	३६६१८	१९८०	३३५२५
१९३७-३८ से १९४१-४२	४६५	८०२४	१५४१	६०१७
१९४२-४३ से १९४७-४८	९०४	१७०	११७३	९४००
१८८६-८७ से १९४७-४८	१३०२३९	७६६१८	२१८३७	८२९५८

भारत में चांदी की खपत

(हजार औंस में)

वर्ष	आयात	निर्यात	उत्पादन	असली खपत
१८८६-८७ से १९१८-१९	२३९९४५३	४५८६१०	१०१९५७	३०११३७५
१९१९-२० से १९३०-३१	११२७४६	२०९९१०	९७	९४४८७
१९३१-३२ से १९३६-३७	२१९६०७	२३४०९४	६६	६८१७२
१९३७-३८ से १९३९-४०	७४३४२	३५०४७	७०	३९३९५
१९४०-४१ से १९४२-४३	३५७२९	१०३९६७	३५६७४	२११८५
१९४३-४४ से १९४७-४८	९९७००	५२८०	६०८७८	९७८४३५
१८८६-८७ से १९४७-४८	६९५६२९६	१०४९९०८	५२३२	१९४९०७५

में कृषि और ग्रामीण क्षेत्र की प्रगति चिंतनीय हैं :—

कार्यक्रम	योजना के लक्ष्य	उपलब्धि	(लाख टन) अनुमानित उपलब्धि
		१९५६-५७	१९५७-५८
बड़ी सिंचाई	३०.२	१.७	२.७
छोटी सिंचाई	१८.९	३.०	४.०
रासयनिक खाद और खाद	३७.७	३.६	७.७
सुधरे हुए बीज	३४.०	१.७	२.०
भूमि विकास	९.४	०.९	१.७
खेती की प्रथाओं का सुधार	२४.०	२.२	५.०
जोड़—	१५४.९	१३.१	२३.१

ग्रामों में रकम लगने के स्रोत

(कुल रकम का प्रतिशत)

	भारत १९५०-५१	जापान १९५१-५२	थाइलैंड १९५३
सरकार द्वारा ऋण	३.३	५.८	७.२
सहकारी समितियों द्वारा ऋण	३.१	३६.९	१४.०
सम्बन्धियों द्वारा	१४.२	४६.१	५५.४
जमींदार	२.५	—	०.२
कृषक साहूकार	२४.९	५.७	२७.३
महाजन	४४.८	—	२७.३
व्यापारी और आढ़तिया	५.८	—	—
अन्य स्रोत	२.७	५.५	१.१

—

सीमेंट उद्योग एक दृष्टि में

१. देश में १९५७ की अवधि में ५६ लाख टन सीमेंट का उत्पादन हुआ, जबकि १९५६ में ४९ लाख टन सीमेंट तैयार किया गया।

२. १९५७ के आरम्भ में देश के सीमेंट कारखानों की उत्पादन-क्षमता ५७ लाख टन थी। किन्तु साल के अन्त तक यह उत्पादन-क्षमता बढ़कर ६६ लाख ३० हजार टन हो गयी।

३. इस समय देश में सीमेंट के २९ कारखाने हैं। केन्द्रीय सरकार ने अब तक २५ नये कारखाने खोलने की योजनाएं ता चालू कारखानों को बढ़ाने की २९ योजनाएं स्वीकार की हैं। इन योजनाओं के चालू होने पर देश की उत्पादन-क्षमता ८६ लाख ७० हजार टन सीमेंट और बढ़ जाएगी।

४. अनुमान है कि इसमें से १५ योजनाएं (४ नये कारखाने खोलने और चालू कारखानों के विस्तार की ११ योजनाएं) १९५८ के अन्त तक पूरी हो जाएंगी और देश की उत्पादन-क्षमता १८ लाख टन सीमेंट और बढ़ जाएगी। अन्य ११ योजनाए १९५९ के अन्त तक पूरी होंगी और इनसे उत्पादन-क्षमता १० लाख ४० हजार टन सीमेंट और बढ़ जाएगी। बाकी योजनाएं १९६०-६१ में पूरी होंगी।

५ देश में सीमेंट की कमी को पूरा करने के लिए १९५६ में विदेशों से ७,००,००० टन सीमेंट मंगाने का निर्णय किया गया था। किन्तु स्वेज नहर के झगड़े के कारण १९५६ में विदेशों से केवल १ लाख ८ हजार टन सीमेंट ही देश में आ सका है।

६. देश में सीमेंट का उत्पादन बढ़ जाने से पर्याप्त मात्रा में सीमेंट मिलने लगा है। परिणामस्वरूप सीमेंट के नियंत्रण में थोड़ी ढिलाई कर दी गयी है।

७. इन कारखानों में एस्बेस्टस सीमेंट के सायबान आदि तैयार करने के लिए उनमें नये यन्त्र लगाये गये हैं, जिससे इस उद्योग की उत्पादन-क्षमता बढ़कर २ लाख १० हजार एस्बेस्टस सीमेंट हो गयी। जबकि १९५५ में यह उत्पादन-क्षमता केवल १,४१,४०० टन थी। लगभग सभी कारखानों में भरपूर काम हो रहा है।

—

नये दार्शनिक बाट

(पृष्ठ ३१२ का शेष)

रहेगी। लोगों को असुविधा और कष्ट होगा।

नये बाटों के रूप

मीटर-प्रणाली और नये बाट व पैमाने के प्रचलन के औचित्य के सम्बन्ध में जान लेने के पश्चात् अब यह जान लेना उत्तम होगा कि इनके रूप क्या होंगे। भारतीय प्रतिमानशाला द्वारा प्रकाशित मेट्रिक बाटों की डिजाइनों के अनुरूप इन बाटों का शीघ्र ही प्रचुर परिमाण में निर्माण होना शुरू हो जायगा। इस प्रकार की डिजाइनें निर्धारित करने के लिए बम्बई के संयुक्त उद्योग-निर्देशक श्री वी० वी० आप्टे की अध्यक्षता में एक समिति गठित की गयी थी। समिति ने अच्छी तरह विचार कर इनका व्यावहारिक परीक्षण करके ही इनके रूप स्थिर किये हैं। ये बाट सभी दृष्टियों से दोषरहित रहें, इसके लिए भरपूर सतर्कता बरती गयी है। इन बाटों की बनावट ऐसी रहे जिससे किसी भी प्रकार की बेईमानी इनके माध्यम से नहीं हो सके। नये बांटों और पुराने बांटों के आकार-प्रकार में भी विभिन्नता रहे; क्योंकि जब तक नये और पुराने दोनों प्रकार के बाट चलते रहेंगे तब तक दोनों अलग-अलग पहचाने जा सकें। मीटर-प्रणाली के अनुसार सबसे बड़ा बाट ५० किलोग्राम का होगा, जो लगभग ५४ सेर का होगा। इसी प्रकार सबसे छोटा बाट १ मिलीग्राम का होगा, जो किलोग्राम का दस लाखवां भाग होगा। किलोग्राम के बटखरे में ५०,२०,१०,५ और १ ग्राम और ५००,२००,१००,५०,-२०,१०,५.२, और १ मिलीग्राम के बाट होंगे।

बाट-बटखरे के जो आकार अब तक रहे हैं—उनके मुताबिक वे मुख्यतः लोहे, पीतल अथवा कांसे, के पत्थर तथा केराट के रहे हैं। अनाज गल्ला तथा अन्य भारी भरकम वस्तुओं के तौलने के लिए लोहे के बाट; सोना-चांदी आदि तोलने के लिए पीतल अथवा कांसे के बाट; हीरे मोती अन्य रत्नों को तोलने के लिए केराट प्रणाली व्यवहृत होती रही है। मीटर-प्रणाली के बाट भी इसी प्रकार से बने रहेंगे।

लोहे के बाट ५० किलोग्राम से १०० ग्राम तक होंगे। २ किलोग्राम से १०० ग्राम तक के बाट मुलायम इस्पात के रहेंगे। लोहे का सबसे छोटा बाट १०० ग्राम का होगा, क्योंकि इससे छोटे बाट लोहे के अच्छे नहीं होंगे। मीटर-प्रणाली वाले अधिकांश देशों के बाट षटकोणाकार होते हैं। हमारे भारतीय मीटर प्रणाली वाले भी षटकोणाकार ही होंगे। ५०,२०,१० और ५ किलोग्राम के बाटों में दस्ते भी रहेंगे, जिससे उन्हें उठाने-धरने में सुविधा हो। ये दस्ते मुलायम इस्पात के होंगे, जिन्हें बाटों के साथ ही ढाल दिया जायगा। २ किलोग्राम से १०० ग्राम तक के बाटों के ऊपर दस्ता लगाया जायगा, जिससे कि वे उठाते समय फिसल न जायं।

सोना-चांदी आदि तोलने के लिए जो पीतल के बाट रहेंगे, वे २० किलोग्राम से घटते हुए १ ग्राम तक के होंगे। मीटर-प्रणाली वाले दूसरे देशों की ही भांति सोना-चांदी को तोलने वाले हमारे पीतल के बाट बेलनाकार होंगे, जिन्हें पकड़ने के लिए दस्ता या घुण्डी लगी रहेगी। २० और १० किलोग्राम के पीतल के मीटर प्रणाली वाले बाटों में दस्ते होंगे और ५ किलोग्राम से १ ग्राम तक के बाटों में घुण्डियां होंगी। सोना-चांदी तोलने के बाटों पर पहचान के लिए हीरे की शक्ल बनी होगी, जिसमें अंग्रेजी और हिन्दी दोनों भाषाओं में बुलियन शब्द लिखा रहेगा। स्थाना भाव के कारण २० ग्राम तथा इससे छोटे बाटों पर हीरे की शक्ल भर ही बनी रहेगी। धातु के पत्थर से बने बाटों में ऐसी कोई चीज नहीं रहेगी। साथ ही सोना-चांदी तोलने के बाटों के अतिरिक्त, अन्य किसी वस्तु के तोलने के बाटों के अतिरिक्त अन्य किसी वस्तु के तोलने वाले बाटों पर हीरे की शक्ल अंकित नहीं रहेगी। सुनारों की सुविधा के लिए १ किलोग्राम से १ ग्राम तक के बाट होंगे, जो आकार में चक्कों की भांति चपटे होंगे और पीतल, कांसा या इसी प्रकार की किसी अन्य धातु के बने रहेंगे।

एक दूसरी श्रेणी के भी पीतल के बाट होंगे, जो गोलाकार होंगे और १ किलोग्राम से लेकर १ ग्राम तक के वजन के होंगे। इनकी परिधि नीचे की ओर अधिक और ऊपर की ओर कम रहेगी।

बाटों की प्रामाणिकता

इन बाटों में घटती-बढ़ती न रहे—इसके लिए प्रत्येक

राज्य में इनकी जांच कर सम्बन्धित अधिकारी द्वारा इन पर मुहर लगायी जायगी। २० ग्राम और इससे ऊपर के वजन वाले सभी बाट जान बूझकर पहले कम तोल के ढाले जायेंगे। उनमें छेद रखा जायगा, जिसमें सीसा डालकर पूरी तौल करके छेद के ऊपर मुहर दे दी जायेगी। बिना मुहर को तोड़े सीसा नहीं निकाला जा सकता। आकार से छोटे होने के कारण २० ग्राम से कम वजन वाले बाटों में इस ढंग से मुहर नहीं लगायी जा सकेगी। घिस जाने पर भी बाट बदल दिये जाते रहेंगे।

मिलीग्राम वाले बाट पीतल, अलूमीनियम, निकिल आदि धातुओं के पत्थरों से बनाये जायेंगे, जिससे छोटा होने पर भी उनके धरातल काफी बड़े रहेंगे। ये बाट भी दो प्रकार के होंगे। एक साधारण तोलों के लिए और दूसरा सोना-चांदी आदि तोलने के कार्य में प्रयुक्त होगा। मिलीग्राम वाले बाट चार आकार के होंगे—षट्कोणाकार, वर्गाकार, त्रिभुजाकार और गोलाकार। षट्कोणाकार ५००, ५० और ५ मिलीग्राम के बाट होंगे, वर्गाकार २००,२० और २ मिलीग्राम के बाट होंगे, त्रिभुजाकार १००, १० और १ मिलीग्राम के बाट होंगे और सोना-चांदी तोलने वाले धातु के पत्तर के सभी बाट गोलाकार होंगे। धातु के पत्तरों से बने सभी बाट एक ओर से मुड़े हुए होंगे, जिससे उन्हें सुविधापूर्वक उठाया और पकड़ा जा सके।

निरन्तर प्रयोग में आते रहने के कारण यह संभव है कि ये बाट घिस जायं और तोल में कम हो जायं अतएव बाट-निरीक्षकों द्वारा इनका सदैव निरीक्षण परीक्षण होता रहेगा। घिस जाने अथवा टूट जाने के कारण तोल में कम हो जाने पर ये बदल दिये जाते रहेंगे। ठगी, बेईमानी आदि की आशंका नहीं रहेगी।

लोग आसानी से सभी बाटों को जान-पहचान सकें, इसके लिए सब पर अंग्रेजी और हिन्दी में उनका नाम और वजन लिखा रहेगा। यह हो सकता है कि कुछ प्रारम्भिक कठिनाइयों का सामना लोगों को करना पड़े, क्योंकि हर प्रकार के परिवर्तन से जनता को कुछ न कुछ कष्ट तो होता ही है। परन्तु लोगों को कम से कम कष्ट और दिक्कत हो, इसका पूरा ध्यान रखा गया है।

—

(पृष्ठ ३१४ का शेष)

पूरा पूरा सहयोग मिले व उनसे जो आशा रखी गई है, वह पूरी हो। पर ऐसा होता नहीं है, किसी भी विकास खंड कार्यालय में चले जाइये, वहां के कर्मचारियों में वही साहिबी बू आपको मिलेगी।

एक विकास की जिला सेमिनार में मैं आमंत्रित था। एक बहिन जो समाज शिक्षा संगठनकर्त्ता (एस. ई. ओ.) थीं, उन्होंने अपना अनुभव बतलाते हुए कहा कि गांवों में बहुत पिछड़ापन है। गांव की स्त्रियां उनके पास नहीं आती, न गांव वाले उनसे मिलने जुलने देते हैं। मैंने जबाव दिया कि जो वेष-भूषा आपकी है उसे देख कर ग्रामवासियों को अनेक प्रकार से डर लगता है।

यही हाल अन्य कर्मचारियों का समझिये। ग्रामवासियों का जब आप विश्वास ही प्राप्त नहीं कर सकते, फिर सहयोग क्या प्राप्त कर सकेंगे ? आखिर काम तो बतलाना ही है। इससे कागज रंगे जाते हैं। आपके अधिकारी भी जानते हैं कि यह सब खाना-पूरी की गई है। पर उन्हें भी अपने अधिकारी को काम बतलाना है, इस लिए वह कागजी घोड़ा एक से दूसरे के पास दौड़ता चला जाता है और जब उसके आंकड़े बनकर जनता के सामने आते हैं, तो जनता हैरान रह जाती है।

अगर हमें कागजी विकास छोड़कर सही विकास करना है, तो हमें मर्ज का मूल कारण पहचान कर उसका उचित निदान करना पड़ेगा। आज विकास खंड अधिकारी नायब तहसीलदारोंमें से चुने जाते हैं। नायब तहसीलदार वे नव युवक ग्रेजुएट होते हैं, जो यूनिवर्सिटी या कालेज की रंगीन दुनिया से निकलकर सीधे हकूमत की गद्दी पर आ बैठते हैं। इससे यह स्वाभाविक है कि उनकी जिन्दगी मालमलिया और हकूमती बू बास लिये रहती है। फिर वे एकाएक बी. डी. ओ. बना दिये जाते हैं। अब उनसे आप आशा करें कि वे एकदम काया-पलट करके जन-सेवक बन जायें तो यह एक मिथ्या कल्पना है। आज तो ग्रामीण जीवन का सामाजिक ढांचा बदलने के लिये पहले हमें उनके साथ दूध पानी की तरह मिलकर काम करना होगा, उनका विश्वास प्राप्त करना होगा, तब कहीं हम उनका स्तर ऊंचा उठा पायेंगे।—कांग्रेस संदेश से

संचालक पंचायत राज विभाग उ० प्र०
की
विज्ञप्ति संख्या ४/५५८० : २७/३३/५३, दिनांक १५
द्वारा
पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत

सुन्दर पुस्तकें

	लेखक	मूल्य रु०	आ०
वेद सा	प्रो. विश्वबन्धु	१	८
प्रभु का प्यारा कौन ? (२ भाग)	,,		
सच्चा सन्त			३
सिद्ध साधक कृष्ण		०	३
जीते जी ही मोक्ष		०	३
आदर्श कर्मयोग		०	३
विश्व-शान्ति के पथ पर		०	१
भारतीय संस्कृति	प्रो. चारुदेव	०	३
बच्चों की देखभाल	प्रिंसिपल बहादुरमल	१	१२
हमारे बच्चे	श्री सन्तराम बी. ए.	३	१२
हमारा समाज		६	०
व्यावहारिक ज्ञान		२	१२
फलाहार		१	४
रस-धारा		०	१४
देश-देशान्तर की कहानियां		१	०
नये युग की कहानियां		१	१२
गल्प मंजुल	डा० रघुबरदयाल	१	०
विशाल भारत का इतिहास	प्रो. वेदव्यास	३	८

१० प्रतिशत कमीशन और ५० रु० से ऊपर के आदेशों पर १५ प्रतिशत कमीशन।

विश्वेश्वरानन्द पुस्तक भंडार
साधु आश्रम, होशियारपुर
पंजाब

भारत आपसे क्या चाहता है ?
आजादी प्राप्त करने के बाद अब आप

क्या करें ?

देश की एकमात्र पुकार है— नव-निर्माण

किस प्रकार ?

दूसरी पाँच साला योजना को सफल बनाकर
और
रचनात्मक कामों में पूरा सहयोग देकर

किसके साथ ?

भारत सेवक समाज........जिसके

अध्यक्ष श्री जवाहरलाल नेहरू हैं। यह सर्वथा अ—राजनीतिक, अ—साम्प्रदायिक, और अ--हिंसात्मक संस्था है।

प्रेरणा, स्फूर्ति और जानकारी के लिए
भारत सेवक समाज का मुख पत्र

मासिक भारत सेवक

पढ़िए। सचित्र, वार्षिक मूल्य ५) । छः मास ३ रु०, एक प्रति ५०) नये पैसे।

पता—भारत सेवक समाज १७, थियेटर कम्युनिकेशन बिल्डिंग, कनाट सरकस, नई दिल्ली—१

आपका स्वास्थ्य

(हिन्दी की एक मात्र स्वास्थ्य सम्बन्धी मासिक पत्रिका)

"आपका स्वास्थ्य" आपके परिवार का साथी है।

"आपका स्वास्थ्य" अपने क्षेत्र के कुशल डाक्टरों द्वारा सम्पादित होता है।

"आपका स्वास्थ्य" में अध्यापकों, अभिभावकों, माताओं और देहातों के लिए विशेष लेख प्रकाशित होते हैं।

आज ही ६) रु० वार्षिक मूल्य भेजकर ग्राहक बनिए।

व्यवस्थापक,
आपका स्वास्थ्य—बनारस-१

मीटरिक प्रणाली

के प्रवर्तन का आरंभ

भारत में अभी तक नाप-तौल की समान प्रणाली नहीं है । हमारे यहां इस समय लगभग १४३ प्रणालियों का प्रयोग होता है । इस प्रकार की अनेकता से धोखाधड़ी को स्थान मिलता है । देशभर में मीटरिक नाप-तौल पर आधारित एक समान प्रणाली आरम्भ हो जाने से काफी सुविधा हो जायेगी और हिसाब-किताब बड़ा आसान हो जायगा, विशेषकर इसलिये कि हमारे यहां दाशमिक सिक्के शुरू हो चुके हैं । तौल और माप-प्रतिमान अधिनियम, १९५६ ने मीटरिक प्रणाली के अन्तर्गत आधारभूत इकाइयां निश्चित कर दी हैं । इस प्रकार का सुधार धीरे-धीरे किया जायेगा ताकि जनता को कम से कम असुविधा हो ।

इस प्रणाली के शुरू हो जाने के बाद भी किसी क्षेत्र या व्यापार में पुराने नाप-तौल का ३ वर्षों तक प्रयोग हो सकेगा ।

नाप-तौल की मीटरिक प्रणाली के प्रवर्तन का आरंभ अक्तूबर १९५८ से हो रहा है ।

मीटरिक बाटों को जानिये

तोल की इकाई
किलोग्राम = १ सेर ६ तोले (या ८६ तोले) या २ पौंड ३ औंस

उप इकाइयां

१० मिलीग्राम = १ सेंटीग्राम
१० सेंटीग्राम = १ डेसीग्राम
१० डेसीग्राम = १ ग्राम
१० ग्राम = १ डेकाग्राम
१० डेकाग्राम = १ हैक्टोग्राम
१० हैक्टोग्राम = १ किलोग्राम

बड़े बाट

१०० किलोग्राम = १ क्विटल
१० क्विटल या १,००० किलोग्राम } १ मीटरिक टन

1

da 58/210

भारत सरकार द्वारा प्रसारित

ASP LIC-26 Hindi

प्रथम महत्वपूर्ण परीक्षा
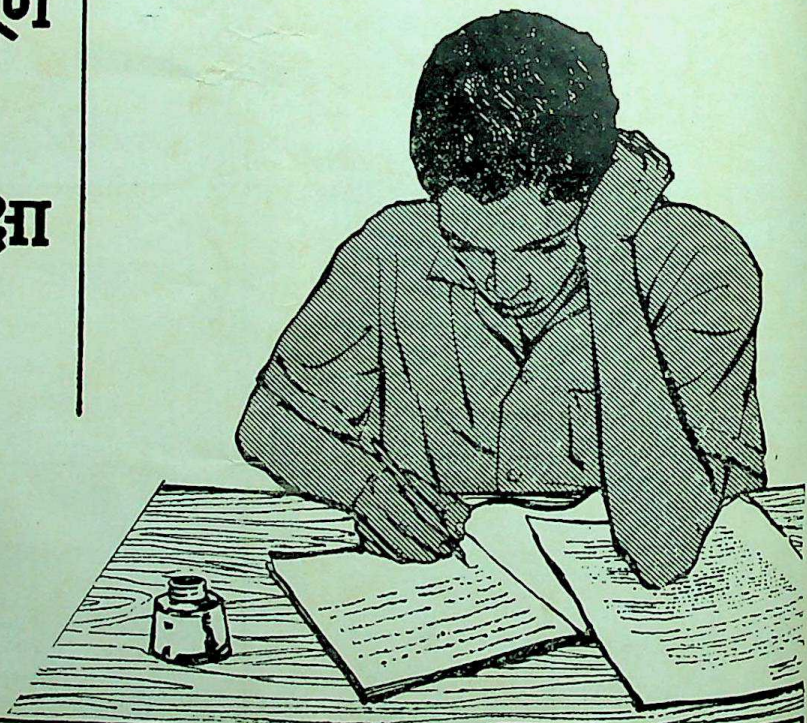
आज आप के बेटे की मैट्रिक की परीक्षा है—आप ने कभी कल्पना भी न की होगी कि यह महत्वपूर्ण दिन इतना शीघ्र आजायेगा।

जैसे जैसे आप के बेटे की आयु बढ़ती जायेगी, उतना ही आप भी वृद्धावस्था के निकट आते जायेंगे—और शीघ्र ही, एक दिन आप कामकाज से अवकाश ग्रहण कर लेंगे। क्या आप नें अपने उस अवकाश-काल के समय के लिये कुछ भी प्रबंध किया है—जब कि आप की आय एक साथ ही कम हो जायेगी।

बहुत लोगों नें एन्डाउमेंट पॉलिसी द्वारा इसका प्रबंध किया है। यह एक 'निश्चित-काल' की योजना है। उदाहरणतः २५ वर्षीय काल की ५००० रु. की पॉलिसी के लिये, ३० वर्ष की आयु के व्यक्ति को लगभग १५ रु. माहवार प्रीमियम देना पड़ता है।

इस प्रकार से ५५ वर्ष की आयु पर, अवकाश-ग्रहण करने के समय आप को ५००० रु. प्राप्त होंगे—और इन रुपयों से आप अपनी घटती हुई आय का संतुलन कर सकेंगे। 'पॉलिसी-काल' के अन्दर ही बीमा कराये हुए मनुष्य की मृत्यु हो जाने पर, उसी समय, उसके परिवार को बीमा की पूरी रक़म दे देनेका यह अतिरिक्त संरक्षण हैं।

अधिक से अधिक बचाइये—चाहे वह ५ रु. हो या ५० रु. लेकिन एन्डाउमेंट पॉलिसी में ही बचत का रुपया लगाइयें। यह पॉलिसी आप की ढ़लती हुई आयु की संरक्षक है।

योगक्षेमं वहाम्यहम्

लाइफ़ इन्श्योरन्स कॉर्पोरेशन ऑफ़ इन्डिया

सेन्ट्रल ऑफ़िस: "जीवन केन्द्र", जमशेदजी टाटा रोड, बम्बई-१

सम्पादक— कृष्णचन्द्र विद्यालंकार द्वारा अशोक प्रकाशन मन्दिर के लिए अर्जुन प्रेस, दिल्ली से मुद्रित व प्रकाशित

सम्पदा

जुलाई, १९५८

अशोक प्रकाशन मन्दिर शक्ति नगर दिल्ली

हमारी यह कहानी कहने योग्य है। यह वस्तुतः हमारे देश के औद्योगिक विकास की कहानी का एक अध्याय है। भारत का पहला 'रिंग स्पिनिंग फ्रेम' (सूत कताई की मशीन) सन् १९४६ में चालू हुआ। तब से हमने और भी कई चीजें पहले पहल प्रस्तुत की हैं—जैसे, लंकाशायर टाइप बॉएलर और वाटर-ट्यूब बॉएलार। हमने रुपर में भारत के कुछ बड़े बड़े स्लूस गेटों—(नहरों में पानी की धार को नियंत्रित करने के फाटक) का निर्माण किया है। हीराकुड में हमने बृहताकार 'पेन-स्टॉक-लाइनर' बनाया है। भारतीय रेलों के लिए हमने वागन तथा एंजिन बॉएलर प्रस्तुत किये हैं। सिंदरी में रासायनिक खाद प्रस्तुत करने वाले हमारे प्लाण्ट चालू हैं। हमने चीनी व जूट मिलों के लिए मशीनें बनाना शुरू कर दिया है। डी० वी० सी० के लिए हम अब नाना प्रकार के सामान तैयार कर रहे हैं। विश्व के प्रथम श्रेणी के विशेषज्ञों की टैक्निकल सहायता से हम अन्तर्राष्ट्रीय स्टैण्डर्ड के मुताबिक अपना सामान प्रस्तुत करते हैं। इस तरह टैक्समैको भारत के मूल उद्योगों की सहायता करता है।

एक कहने योग्य कहानी

टेक्सटाइल मेशीनरी कारपोरेशन लिमिटेड

TXC-3

संचालक पंचायत राज विभाग उ० प्र०
की
विज्ञप्ति संख्या ४/५५८० : २७/३३/५३, दिनांक १५
द्वारा
पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत

सुन्दर पुस्तकें

	लेखक	मूल्य रु०	आ०
वेद सा	प्रो. विश्वबन्धु	१	८
प्रभु का प्यारा कौन ? (२ भाग)	,,		
सच्चा सन्त			३
सिद्ध साधक कृष्ण		०	३
जीते जी ही मोक्ष		०	३
आदर्श कर्मयोग		०	३
विश्व-शान्ति के पथ पर		०	१
भारतीय संस्कृति	प्रो. चारुदेव	०	३
बच्चों की देखभाल	प्रिंसिपल बहादुरमल	१	१२
हमारे बच्चे	श्री सन्तराम बी. ए.	३	१२
हमारा समाज		६	०
व्यावहारिक ज्ञान		२	१२
फलाहार		१	४
रस-धारा		०	१४
देश-देशान्तर की कहानियां		१	०
नये युग की कहानियां		१	१२
गल्प मंजुल	डा० रघुबरदयाल	१	०
विशाल भारत का इतिहास	प्रो. वेदव्यास	३	८

१० प्रतिशत कमीशन और ५० रु० से ऊपर के आदेशों पर १५ प्रतिशत कमीशन।

विश्वेश्वरानन्द पुस्तक भंडार
साधु आश्रम, होशियारपुर
पंजाब

भारत आपसे क्या चाहता है ?

आजादी प्राप्त करने के बाद अब आप
क्या करें ?

देश की एकमात्र पुकार है— नव-निर्माण
किस प्रकार ?

दूसरी पाँच साला योजना को सफल बनाकर
और
रचनात्मक कामों में पूरा सहयोग देकर
किसके साथ ?

भारत सेवक समाज·······जिसके
अध्यक्ष श्री जवाहरलाल नेहरू हैं। यह सर्वथा अ—राजनीतिक, अ—साम्प्रदायिक, और अ--हिंसात्मक संस्था है।

प्रेरणा, स्फूर्ति और जानकारी के लिए
भारत सेवक समाज का मुख पत्र

मासिक भारत सेवक

पढ़िए। सचित्र, वार्षिक मूल्य ५)। छः मास ३ रु०, एक प्रति ५०) नये पैसे।

पता—भारत सेवक समाज १७, थियेटर कम्यु-निकेशन बिल्डिंग, कनाट सरकस, नई दिल्ली—१

आपका स्वास्थ्य

(हिन्दी की एक मात्र स्वास्थ्य सम्बन्धी मासिक पत्रिका)

"आपका स्वास्थ्य" आपके परिवार का साथी है।

"आपका स्वास्थ्य" अपने क्षेत्र के कुशल डाक्टरों द्वारा सम्पादित होता है।

"आपका स्वास्थ्य" में अध्यापकों, अभिभावकों, माताओं और देहातों के लिए विशेष लेख प्रकाशित होते हैं।

आज ही ६) रु० वार्षिक मूल्य भेजकर ग्राहक बनिए।

व्यवस्थापक,
आपका स्वास्थ्य—बनारस-१

विषय-सूची

वर्ष : ७] जुलाई, १९५८ [अङ्क : ७

यथार्थ की ओर

यद्यपि भारत सरकार के नेता आदर्शवादी भावुकतापूर्ण नीति की अब भी चर्चा करते हैं, किन्तु जानने वालों से यह छिपा नहीं है कि समय के साथ शनैः शनैः अपनी नीति में वे परिवर्तन करते जा रहे हैं। परिस्थितियों को देख कर उनके अनुसार अपनी कार्यविधि और नीति में थोड़ा बहुत परिवर्तन कर लेना जीवन का चिन्ह है। भावुकता और पूर्व आग्रह के वश में यदि हम यथार्थ की ओर से आँखें मूंदे रहें, तो उससे देश की भारी क्षति हो सकती है। इस लिए दूरदर्शिता इसमें है कि अपनी नीति को लचकीला रखा जाय। इसी दृष्टि से सूती मिलों के उत्पादन-कर को कम करने की घोषणा का सर्वत्र स्वागत किया जायगा।

सम्पदा के पाठक जानते हैं कि पिछले कुछ समय से देश का वस्त्रोद्योग काफी संकट में था। मिलों के गोदाम भरे हुए थे, बहुत सी मिलें बन्द हो रही थीं या उनकी रातपाली बन्द हो रही थी। हजारों मजदूर बेकार हो गए थे। मिल मालिक बहुत समय से अपने संकट को सरकार के सामने रखकर कुछ राहत देने की प्रार्थना कर रहे थे। पहले भी उन्हें उत्पादन कर में कुछ छूट दी गई, किन्तु वह बहुत अपर्याप्त थी। उससे स्थिति में सुधार नहीं हुआ। जब सरकार के सामने उद्योग की यथार्थ स्थिति रखी गई तब यह जवाब मिला कि अब करों में और कमी नहीं की जा सकती, किन्तु यथार्थ की उपेक्षा अधिक समय तक नहीं की जा सकती। भारत के इस राष्ट्रीय उद्योग की स्थिति निरन्तर गिरती जा रही थी। अब विवश होकर ४ जुलाई की एक साधिकार घोषणा में बतलाया गया है कि भारत सरकार ने सूती वस्त्र जांच समिति का अन्तरिम सर्वसम्मत सुझाव मानकर विभिन्न किस्म के कपड़ों के उत्पादन कर में कुछ हेरफेर स्वीकार कर लिया है, जिससे सूती वस्त्र उद्योग क्षेत्र में रुद्ध वस्त्र भण्डार की निकासी सम्भव हो सके।

इस निश्चय के अनुसार, मोटे और मध्यम किस्म के कपड़ों पर उत्पादन कर घटाया गया है और महीन तथा अति महीन किस्म के कपड़ों पर कुछ वृद्धि कर दी गई है। उत्पादन-कर की यह संशोधित दर अमल में भी आ गई है।

उसी दिन से विद्युतचालित करघों के भी क्षेत्र में देय कर की दर में सुधार किया गया है।

यह तीसरा अवसर है कि वस्त्रों पर उत्पादन-कर घटाया गया है। प्रथम बार दिसम्बर १९५७ में और दूसरी मार्च सन् १९५८ में उत्पादन कर घट चुका है। वर्तमान में जो सुधार किया गया है, इससे राजकीय कोष को २॥

करोड़ रुपए का घाटा होगा। पर इससे मोटे और मध्यम किस्म के कपड़े बनाने वाली खासकर कानपुर, नागपुर, इन्दौर आदि की मिलोंको राहत मिलेगी।

मोटे किस्म के कपड़े पर नया उत्पादन-कर मूलतः ४ नये पैसे प्रति वर्ग गज होगा। विरंजित (ब्लीच किये) वस्त्र पर आधा नया पैसा, संकोचनहीन वस्त्र पर ३ नये पैसे और अन्य प्रकार भी संस्कारित वस्त्र पर १॥ नये पैसे अतिरिक्त देय होंगे।

मध्यम किस्म के कपड़े (१७ से २५ नम्बर) पर नया उत्पादन कर मूलतः ५ नये पैसे प्रति वर्ग, बीच की श्रेणी के मध्यम कपड़े (नं० २६ से ३५) पर६ नये पैसे, उत्तम श्रेणी के मध्यम कपड़े [धोती-साड़ियों] पर ७ नये पैसे और अन्य सभी किस्मों के मध्यम कपड़ों पर ६ नये पैसे प्रति वर्ग गज होगा।

महीन और अति महीन कपड़ों पर उत्पादन कर कुछ बढ़ाया गया है।

यह भी घोषणा की गई है कि मोटी धोती और साड़ियां, जो ३ जुलाई तक गाँठोंमें बंधी पड़ी रही हैं, उन पर भी ३ नये पैसे प्रति गज की दर से उत्पादन-कर वसूल किया जायगा, बशर्ते उक्त कर ३० सितम्बर तक या उससे पहले जमा कर दिया जाय।

आज वस्त्र उद्योग का संकट जिस सीमा तक बढ़ गया है, यह नहीं कहा जा सकता कि सरकार का यह कदम उसे कहाँ तक दूर करेगा, किन्तु इससे वस्त्रोद्योग को काफी सहायता अवश्य मिलेगी। सरकार ने देर में सही, उचित दिशा में कदम उठाया है। अब उद्योग का भी कर्त्तव्य है कि वह स्वयं अपनी कठिनाइयों का हल करने का प्रयत्न करे।

❀ ❀ ❀ ❀

पाठक अन्यत्र सीमेंट उद्योग सम्बन्धी एक लेख पढ़ेंगे। सरकार से सीमेंट उद्योग को यह शिकायत थी कि वह उत्पादन व्यय और विकास की संभावनाओं का ख्याल करके मूल्य निर्धारण नहीं करती और इस कारण सीमेंट उद्योग के विकास में बाधा आ रही है। सरकार ने अब इस की आवश्यकता अनुभव कर ली है और नये मूल्य निर्धारित कर दिये हैं। वस्तुतः कुछ क्षेत्रों में उद्योग पति को शोषक मानकर उसके प्रति विरोधी भावना पैदा करने के प्रयत्न दोषपूर्ण हैं। हमें यह समझ लेना चाहिए कि उद्योगपति भी देश का हित चाहता है। उसकी वास्तविक कठिनाइयों को समझने की कोशिश करनी चाहिए। सीमेंट का नया मूल्य निर्धारण इसी दिशा में किया गया है।

❀ ❀ ❀ ❀

१९५६ और ५७ में इस्पात के आयात पर लगभग १२५ करोड़ रु० खर्च किया गया। भारत में इस्पात का उत्पादन बढ़ाकर आयात के खर्च में कमी की जा सकती है और यही धन नये कारखाने खोलने तथा मशीनें खरीदने के काम आ सकता है। तैयार माल के निर्यात से कुछ विदेशी मुद्रा भी प्राप्त हो सकती है। देश के नये इस्पात कारखानों को जल्दी तैयार किया जा रहा है। भिलाई और राउरकेला में आगामी वर्ष के अंत तक उत्पादन आरम्भ हो जायगा। १९५९ में दुर्गापुर के कारखाने में काम चालू हो जायगा और भिलाई तथा राउरकेला की दूसरी भट्टियां चालू हो जाएंगी। जहां तक कच्चे लोहे का सवाल है, देश में उसकी कोई कमी नहीं। इतना ही नहीं, १९५९ और बाद के वर्षों में यह बहुतायत में उपलब्ध हो सकेगा। लोहे के छोटे मोटे टुकड़ों और सरियों को फिर से पिघला कर उनका इस्पात बनाया जाता है। इस उद्योग में भी १९५७ में, १९५६ की अपेक्षा २४ प्रतिशत अधिक उत्पादन हुआ। इस उद्योग के लिए कच्चे माल की कमी अनुभव की जाती थी, वह अब दूर हो गया है। औजार, मिश्र धातु और विशेष किस्म का इस्पात का कारखाना भी सरकार जल्दी खोलने वाली है।

❀ ❀ ❀ ❀

देश के उद्योग के लिए पूंजी का प्रश्न एक विकट समस्या है। इसका हल किये बिना उद्योग का विस्तार नहीं हो सकता। पुनर्वित्त निगम (रि-फाइनसिंग कारपोरेशन) की स्थापना से एक बड़ी कमी दूर हो गई है। इससे पहले सं० रा० अमरीका की सहायता से निजी क्षेत्र के लाभ के लिए एक निगम स्थापित हुआ था। अब पुनः वित्त निगम स्थापित किया गया है। इस निगम के पास शुरू में ३१ करोड़ रु० की पूंजी होगी। भारत अमरीकी कृषि वस्तु समझौते से उत्पन्न निधि से २६ करोड़ रु० मिलेगा। यह निधि वह होगी, जो अमेरिका से ऋण के रूप में अनाज

आदि मिला उसे बेचकर भारत सरकार यह निधि स्थापित करेगी। इस २६ करोड़ रु० के अलावा रिजर्व बैंक, जीवन बीमा निगम, राज्य बैंक और दूसरे बड़े बैंक १२॥ करोड़ रु० देंगे। इस निगम का मुख्य उद्देश्य मध्यम उद्योगों की सहायता करना है।

❀ ❀ ❀ ❀

हमने ऊपर कुछ ऐसी बातों का निर्देश किया है जिनसे प्रतीत होता है कि सरकार उद्योग की वास्तविक कठिनाइयों को समझने और उन्हें दूर करने की चेष्टा कर रही है किन्तु हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि केवल सरकार के भरोसे पर बैठकर कुछ नहीं किया जा सकता। जनता को और जनता के प्रत्येक वर्ग को देश के आर्थिक विकास में अधिकतम सहायता देनी चाहिए। उद्योगपति, मजदूर, किसान और सरकारी कर्मचारी तथा नागरिकों को अपने-अपने कर्त्तव्यों का पालन करना चाहिए।

———

भारत और विदेश

पिछले दिनों रिजर्व बैंक के गवर्नर श्री आयंगार ने विदेशी मुद्रा सम्बन्धी चिन्ता पर आश्चर्य करते हुए कहा है कि हम लोग व्यर्थ ही बहुत चिन्ता प्रगट कर रहे हैं। पिछले दशक में अन्य देशों (अमेरिका और ब्रिटेन) की अपेक्षा भारतीय मुद्रा का मूल्य बहुत कम गिरा है। परन्तु इससे विदेशी पूंजीपतियों को भारत में रुपया लगाने का बहुत प्रोत्साहन नहीं मिल सकता, क्योंकि यह सभी जानते हैं कि भारतवर्ष में मंहगाई अपेक्षाकृत ज्यादा बढ़ रही है। गत दो वर्षों में अमेरिका और ब्रिटेन में ७ प्रतिशत महंगाई बढ़ी है, जबकि भारत में १५ प्रतिशत से कम नहीं बढ़ी। भारतीय नागरिक की क्रयशक्ति पहले की अपेक्षा कम हो गई है। एक भारतीय की वार्षिक आय २८० रु० है जबकि ब्रिटेन और अमेरिका में एक नागरिक की आय क्रमशः ४३०० रु० और ९७५० रु० है। इसलिए भारत में थोड़ी भी महंगाई नागरिकों पर भारी प्रभाव डालती है। हमें यह स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं करना चाहिए कि हमारी मुद्रा सम्बन्धी स्थिति चिन्तनीय है। अपनी कमी छिपाने से समस्या के समाधान में और कठिनता ही आयगी।

मानव निर्मित सबसे बड़ी झील

भाखड़ा नांगल योजना देश की अत्यन्त महत्वपूर्ण योजना है। भाखड़ा बांध के तालाब में ७४ लाख एकड़ फुट पानी जमा हो सकता है। यह ६८.४ वर्गमील तक फैला हुआ है। इस पर कुल ६८ करोड़ रु० व्यय होगा। नांगल बांध के निर्माण पर ४ करोड़ रु० व्यय होगा। भाकरा की मुख्य नहर १०८ मील लम्बी है, जबकि शाखा प्रशाखाएं ४२१ मील लम्बी हैं। ६७.६ लाख एकड़ कृषि-भूमि को इससे पानी मिलेगा। इस बृहत् योजना को कई भागों में पूर्ण किया जा रहा है। गत ८ जुलाई को एक और सफलता प्राप्त की गई। विश्व की सबसे बड़ी मानव-निर्मित झील। गोविन्द सागर जलागार में पानी उस स्तर पर पहुँच गया, जो कि इस मौसम के लिए निर्धारित जज-स्तर की सबसे ऊंची सीमा है। पानी बांध के ऊपर से बहने लगा है और २०० फुट की ऊंचाई से बहने वाला सर्वोच्च मानव-निर्मित निर्झर प्रवाहित हो उठा। कुछ दिनों पूर्व सतलुज के पानी को नियंत्रित करने वाली बायीं सुरंग बन्द कर दी गई थी, ताकि भाखड़ा जलागार काफी भर जाए। २०५ टन इस्पात के अवरोधकों द्वारा वह मार्ग बन्द किया गया था। इस प्रकार इन्जीनियरों का प्रयत्न सफल हुआ। हम इस पर गर्व और गौरव प्रकट कर सकते हैं।

भूमि का राष्ट्रीयकरण नहीं

इंगलैण्ड के मजदूर दल ने पिछले दिनों में एक बहुत महत्वपूर्ण निर्णय किया था। भूमि का राष्ट्रीयकरण, उसकी नीति का एक अंग था, किन्तु उसने निश्चय किया है कि अब भूमि का राष्ट्रीयकरण मजदूर दल की कृषि नीति का अंग नहीं है। मजदूर दल के कुछ उग्र समाजवादियों ने यह प्रस्ताव रखा था कि जब मजदूर दल शक्ति प्राप्त करे, तब भूमि का राष्ट्रीयकरण कर ले। मजदूर सरकार के भू० पू० मंत्री श्री विलियम्स ने बताया है कि १९५३ में ही मजदूर दल के विराट सम्मेलन ने २० लाख मतों से इस प्रस्ताव को अस्वीकृत कर दिया था। मजदूर दल के इस निश्चय से यह प्रतीत होता है कि समाजवाद के सम्बन्ध में ब्रिटेन के समाजवादी किस दिशा में विचार कर रहे हैं। वस्तुतः समाजवाद का अर्थ उद्योग और कृषि का राष्ट्रीय-

करण मात्र नहीं हैं । समाजवाद तो पारस्परिक विषमता को कम करना चाहता है और सबको उन्नति का समान अवसर देना चाहता है । हम भारतीयों को भी इस दिशा में विचार करना चाहिये ।

समाजवाद की ओर

ब्रिटिश सरकार की ओर से प्रकाशित एक रिपोर्ट के कुछ अंक सम्पदा के पाठकों के लिए रोचक होंगे । ३१ मार्च १९५५ को समाप्त होने वाले वर्ष में ब्रिटेन में आय कर देने वाली आमदनियों की कुल संख्या दो करोड़ दो लाख थी । ब्रिटेन की काम करने वाली कुल जनसंख्या प्रति व्यक्ति १५५ पौंड प्रति वर्ष कमाती थी । इनमें से ३२ लाख लोगों की आय १५५ से १५० पौंड के बीच थी, जबकि १ करोड़ लोगों की आय २५० पौंड से ५०० पौंड तक, ६० लाख लोगों की आय ५०० से १००० पौंड, ६.२ लाख लोगों की आय १,००० पौंड से २००० पौंड तक, १.२ लाख लोगों की आय २००० से ४००० पौंड तक और ६५१० लोगों की आय ४००० से ६००० पौंड सालाना थी । केवल ३६० ही आदमी ऐसे थे, जिनकी शुद्ध आय कर अदा कर देने के बाद ६००० पौंड थी । इन अंकों से एक बात साफ होती है कि अब पहले की तरह से धन कुछ एक व्यक्तियों के हाथ में केन्द्रित होने की बजाय अधिकाधिक बंटने लगा है और इस तरह विभिन्न देश अपने आप ही शनैः शनैः समाजवाद की ओर जा रहे हैं ।

सरकारी कर्मचारी व हड़ताल

पटना उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश श्री रामा स्वामी और न्यायाधीश श्री चौधरी ने सरकारी कर्मचारियों के हड़ताल के अधिकार के सम्बन्ध में एक महत्वपूर्ण निर्णय किया है । सरकारी कर्मचारियों की आचार संहिता के ४ ए नियम के अनुसार सरकारी कर्मचारियों का हड़तालों और प्रदर्शनों में भाग लेना निषिद्ध है । कुछ कर्मचारियों ने अपनी याचिका में कहा था कि नियम ४—ए भाषण और अभिव्यक्ति तथा संगठन बनाने की स्वाधीनता का जिसकी संविधान के १९ वें अनुच्छेद में गारन्टी दी गई है, हनन करता है । इसलिए राज्य सरकार को आदेश दे दिया जाए कि वह इस नियम को अमल में न लाए ।

परन्तु विद्वान् न्यायाधीशों ने कहा है । कि "जहां तक सरकारी कर्मचारियों का सम्बन्ध है, हड़ताल और प्रदर्शन का अधिकार भाषण, अभिव्यक्ति तथा संगठन की स्वतन्त्रता में शामिल नहीं हैं । हड़ताल ऐसा अस्त्र है जिसका उपयोग किसी उद्योग के कर्मचारी किन्हीं परिस्थितियों में अपने लाभ के लिए कर सकते हैं । सरकारी कर्मचारियों के आचरण में सार्वजनिक हित का प्रश्न निहित रहता है और यह स्पष्ट है कि अगर वे हड़तालों और प्रदर्शनों में भाग लें तो उनके अनुशासन और कार्यकुशलता में कमी आएगी। यह भी स्पष्ट है कि महत्वपूर्ण प्रशासननिक सेवाओं का जारी रहना भी जनहित में आवश्यक है । अगर हड़ताल और प्रदर्शन होते हैं तो जनहित की हानि होती है, इसलिए संविधान के अन्तर्गत गारंटी-प्राप्त अधिकार में सरकारी कर्मचारियों का हड़तालों व प्रदर्शनों में भाग लेना शामिल नहीं है ।" यह बहुत महत्वपूर्ण निर्णय है, जिसका आदर सभी राज्यों के सरकारी कर्मचारियों को करना चाहिए।

अनावृष्टि से संकट

देश पहले ही खाद्य-अन्नों के अभाव से परेशान था। इस वर्ष देश के अनेक भागों में अनावृष्टि ने और भी बुरा प्रभाव डाला है । अनेक प्रान्तों में फसलें सूख गई हैं। प्रकृति के इस प्रकोप को अपनी परीक्षा समझ कर हमें और भी अधिक उत्साह से अन्न उत्पादन में लग जाना चाहिये। हैदराबाद में होने वाले लघु-सिंचाई-सम्मेलन ने छोटी योजनाओं पर अधिक जोर देने की सिफारिश की है। छोटी योजनाओं से जल्दी लाभ पहुँचता है । एक ओर जहां हम कृषि उत्पादन को बढ़ाने की चेष्टा करें, दूसरी ओर अन्न के मित व्यय पर भी विशेष ध्यान देना होगा । यह भी सोचना होगा कि कम आवश्यक या अनावश्यक पदार्थों की पैदावार कम की जाये और उनकी जगह अन्न का उत्पादन बढ़ाया जाये ।

एक विचारणीय प्रश्न

हिन्दुस्तात एयर क्राफ्ट फैक्टरी के कर्मचारियों की सभा में रक्षा मंत्री श्री मेनन ने यह घोषणा की है कि फैक्टरी के कर्मचारियों को इस वर्ष से उत्पादन-बोनस मिला करेगा। जहां तक एक सरकारी कारखाने में बोनस का प्रश्न है, सब

इसका स्वागत करेंगे। आखिर एक निजी और सरकारी उद्योग में क्यों अन्तर हो ? उद्योग सम्बन्धी सब व्यवस्थाएं दोनों क्षेत्रों में एक समान होनी चाहियें, किन्तु इसके साथ ही एक नया प्रश्न उत्पन्न हो जाता है। बोनस मिलता है लाभ या मुनाफे पर। क्या किसी उद्योग को, चाहे वह निजी हो या सरकारी, यह अधिकार है कि वह इतना मुनाफा कमाये कि शेयर होल्डरों को एक नियत मात्रा से अधिक डिविडेन्ड दे सके या मजदूरों को उनके उचित वेतन से अतिरिक्त बोनस दे सके। मिल मालिक ग्राहक से अधिक मूल्य लेकर ही ज्यादा मुनाफा कमाते हैं। मजदूरों के लिए भी उस अनुचित मुनाफे में हिस्सा बांटना क्या उचित होगा ? होना यह चाहिये कि मिल मालिक अपनी वस्तु का इतना मूल्य ही न रखें, जिससे वे और मजदूर ग्राहक से ज्यादा पैसा लें। यदि सरकारी उद्योग मजदूरों को उचित पारिश्रमिक से अधिक पैसा देते हैं तो यह राष्ट्र की गरीब जनता पर एक बोझ ही है। हमें उचित से अधिक लाभ (डिविडेण्ड या मजदूरी) नहीं लेना चाहिये। मिल मालिक और मजदूर दोनों के लिए एक ही नियम है।

हड़तालें व जनता

केन्द्रीय यातायात और परिवहन मंत्री श्री एस० के० पाटिल ने एक भाषण देते हुए जनता को एक उपयोगी सलाह दी है। आजकल केवल निजी उद्योग में नहीं, सरकारी उद्योगों में भी हड़तालें हो रही हैं। इन सरकारी उद्योगों में कोई पूंजीपति नफा कमाने वाला नहीं हैं। इन उद्योगों की यदि कोई बचत होती है तो वह राष्ट्र की, जिसके मजदूर व किसान प्रधान अंग है, बचत होती है। किन्हीं ४-५ या ८-१० पूंजीपतियों की जेब में मुनाफा नहीं जाता। वहां वस्तुतः श्रम और पूंजी में कोई भेदभाव नहीं है। जब काम के घंटे सीमित हैं, डिवीडेन्ड सीमित हैं, मजदूरों की सुविधाएं बढ़ाई जा रही हैं और कर बढ़ रहे हैं, तब कहां पूंजी रह जाती है और कहां श्रम। इन उद्योगों में यदि हड़ताल होती है तो यह मानना चाहिये कि वह उद्योग और श्रम की हड़ताल नहीं है। वह जनता के विरुद्ध कुछ निहित स्वार्थों की लड़ाई है।" इसलिए श्री पाटिल ने नागरिकों को यह सलाह दी है कि वे ऐसे उद्योगों में हड़तालियों के साथ सहानुभूति नहीं करें।

भारत का सीमेंट उद्योग

भारत सरकार ने १९५७ में तटकर आयोग को सीमेंट उद्योग के उत्पादन और व्यय की जांच करके बिक्री के लिये उचित भावों की सिफारिश करने के लिये कहा था। आयोग ने जांच पूरी करके कुछ सिफारिशें की हैं और यह प्रसन्नता की बात है कि उसने उन सिफारिशों को स्वीकार करके सीमेंट उद्योग के संकट को एक सीमा तक दूर करने का प्रयत्न किया है।

एक समय था, जब सीमेंट की बहुत कमी महसूस की जाती थी और उसके लिये सरकार ने परमिट प्रणाली नियुक्त की थी, किन्तु इस उद्योग के उत्साही और योग्य संचालकों ने सीमेंट का उत्पादन इस सीमा तक बढ़ा दिया कि सरकार ने परमिट पद्धति समाप्त कर बाजार में इसकी बिक्री खुली कर दी। वस्तुतः १९५७ में सीमेंट उद्योग ने बराबर प्रगति की है। वर्ष के आरम्भ में ५७ लाख टन की स्थापित क्षमता थी, जो वर्ष के अन्त में बढ़कर ६६ लाख ३० हजार टन हो गई। १९५७ में ५६ लाख टन वास्तविक उत्पादन हुआ, जबकि १९५६ में कुल ४९ लाख टन ही हुआ था।

देश में पहले से चालू २९ कारखानों के अतिरिक्त अब तक २५ नये कारखाने खोलने तथा २९ पुराने कारखानों का विस्तार करने की प्रायोजना भारत सरकार द्वारा स्वीकृत की जा चुकी है। इनके फलस्वरूप कुल ८६ लाख ७० हजार टन वार्षिक की अतिरिक्त क्षमता बढ़ जायेगी। ये योजनायें प्रगति की भिन्न-भिन्न अवस्थाओं में हैं। इनमें से पन्द्रह योजनाओं की (चार नये कारखाने खोलने तथा ग्यारह पुराने कारखाने खोलने की योजनायें) १९५८ के अन्त तक पूर्ण हो जाने की आशा है, जिनकी कुल क्षमता १८ लाख टन होगी। इसके बाद आशा है कि ग्यारह योजनायें १९५९ के अन्त तक पूर्ण हो जायेंगी, जिनकी कुल क्षमता उस समय तक १ करोड़ ४ लाख टन होगी। शेष योजनाओं के निर्धारित समय १९६०-६१ तक पूर्ण हो जाने की आशा है। इन योजनाओं को अमल में लाने के लिये विदेशों से पूंजीगत माल मंगाने की आवश्यकता हुई। इसके लिये शैल्पिक सहयोग मिशन से विदेशी मुद्रा की सहायता प्राप्त हुई है।

देशी उत्पादन तथा मांग के बीच की खाई को किसी हद तक पूरा करने के लिये १९५६ के आरम्भ में उस को विदेशों से ७००,००० टन तक सीमेंट आयात करने का निश्चय किया गया था राज्य व्यापार निगम ने इस सीमेंट के अधिकांश का आयात करने के लिये पक्का प्रबन्ध कर लिया था, परन्तु स्वेज संकट के कारण १९५६ में केवल १०८,००० टन सीमेंट ही आ सका। इसके बाद १९५७ में इन सौदों में से ३२१,००० टन सीमेंट और आया। पश्चिमी पाकिस्तान से ३०,००० टन सीमेंट का आयात किया गया और इसके बदले में पूर्वी पाकिस्तान को इतना ही देशी सीमेंट भेज दिया गया। देश में सीमेंट का उत्पादन बढ़ जाने के कारण उपलब्धि की स्थिति कुछ हद तक सुधर गई है। इसी कारण वितरण के नियन्त्रण में कुछ ढील की जा सकी है। विदेशी मुद्रा की कमी के कारण भविष्य में सीमेंट का आयात सम्भव नहीं होगा। इस वर्ष कुछ सीमेंट का निर्यात भी किया गया।

ऐसबस्टस सीमेंट की वस्तुएं बनाने वाले कुछ कारखानों के आधुनिकीकरण के कारण इस उद्योग की क्षमता अब २१०,००० टन तक पहुँच गई है, जबकि १९५६ में १४१,४०० टन थी। चालू वर्ष में उत्पादन बढ़कर १५३,७६१ टन हो गया, जबकि १९५६ में ११९,८२८ टन ही था। लगभग सभी कारखाने अपनी पूरी क्षमता के साथ काम कर रहे हैं।

१९५१ में जो प्रथम पंचवर्षीय योजना का प्रथम वर्ष था, केवल ३१.९ लाख टन सीमेंट पैदा हुआ था और गत वर्ष करीब ५६ लाख टन सीमेंट तैयार हुआ। तटकर कमीशन के अनुमान के अनुसार १९५८ के अन्त में ८४ लाख, १९५९ में १०५ लाख, १९६० के अन्त में १२० लाख और १९६२ के अन्त में १५१ लाख टन सीमेंट तैयार होने लगेगा।

(शेष पृष्ठ ३९२ पर)

विदेशी मुद्रा की दुर्लभता

कृष्णचन्द्र विद्यालंकार

भारत में विदेशी मुद्रा की समस्या दिन-पर-दिन अधिक कठिन होती जा रही है। इस संबंध में हम अपने पाठकों का ध्यान नीचे उल्लिखित कुछ तथ्यों की ओर खींचना चाहते हैं—

१—द्वितीय पंचवर्षीय योजना की मूल्यांकन रिपोर्ट में, जो मई १९५८ में प्रकाशित हुई है, विदेशी साधनों की समस्या को अत्यंत कठिन बताते हुए कहा गया है कि अप्रैल १९५६ से सितम्बर की अवधि तक ५९१ करोड़ रुपए भुगतान-संतुलन में हमें अधिक देने पड़े। अक्तूबर १९५७ से मार्च १९५८ तक यह कमी २३० करोड़ रुपए की हुई है। यदि विश्व-मुद्रा कोष के ९५ करोड़ रुपए को भी इसमें सम्मिलित कर लें तो पिछले दो वर्षों में करीब पौने छः अरब रुपए का ह्रास विदेशी मुद्रा में हुआ है।

२—१९५८-५९ के बजट में विदेशों से ३२५ करोड़ रुपए की सहायता का अनुमान लगाया गया है, किन्तु उपर्युक्त रिपोर्ट के अनुसार ३०० करोड़ रुपए से अधिक सहायता प्राप्त होने की आशा नहीं है।

३—१९५८-५९ के आर्थिक वर्ष के पहले दो महीनों में भी हमारी विदेशी मुद्रा में निरन्तर कमी हुई है। इन साठ दिनों में हम अपनी विदेशी परिसम्पतमें से ४२ करोड़ रुपए निकाल चुके हैं। ३० मई १९५८ को हमारी विदेशी परिसम्पत् २४२.४२ करोड़ रुपए रह गई थी, जबकि ४ अप्रैल को समाप्त होने वाले सप्ताह में यह २८४.४१ करोड़ रुपए थी। जून के अन्तिम सप्ताह में यह राशि २१७.६० करोड़ रु० तक रह गई थी। इस वर्ष की दूसरी तिमाही में ७०.६६ करोड़ रु० की मुद्रा कम हो गई। यदि ब्रिटेन की दी हुई अगाऊ किश्त २१.३३ करोड़ करोड़ रु० को शामिल न किया जाय, तो २०० करोड़ रु० से भी यह मुद्रा कम हो जाती। यदि यही रफ्तार जारी रही तो अप्रैल १९५९ तक हमारी विदेशी परिसम्पत् शून्य रह जाएगी। सरकार ने निश्चय किया है कि विदेशी परिसम्पत् में २०० करोड़ रु० की न्यूनतम मात्रा रखनी चाहिए। इस का अर्थ यह है कि हमारे पास केवल १९ करोड़ रु० व्यय के लिए बच जायगी, जबकि हमारा मासिक घाटा २१ करोड़ रु० से भी अधिक है। यह अवस्था तब है जबकि भारत-सरकार आयात पर निरन्तर प्रतिबंध लगा रही है और निर्यात को तरह-तरह से प्रोत्साहन दे रही है।

४—विदेशी मुद्रा की पहले ही भारी कमी थी, किन्तु इन्द्र भगवान ने अनावृष्टि का प्रकोप दिखाकर भारत को विपुल मात्रा में विदेशों से अन्न मंगाने के लिए बाधित कर दिया है। इस तरह से एक नया भारी बोझ हमारे ऊपर आ गया है। १९५७-५८ की पैदावार पिछले वर्ष की अपेक्षा २० लाख टन कम हुई है। इस कारण विदेशों से आयात कम करने के प्रयत्न के बावजूद आयात बहुत बढ़ गया है।

५—हमने इस वर्ष के प्रथम दो महीनों में विदेशी परिसम्पत् में ४२ करोड़ रुपए की कमी का उल्लेख किया है। किन्तु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि जून महीने से अक्तूबर १९५८ तक हमने बहुत बड़ी मात्रा में पूंजीगत मशीनों के लिए विदेशों को आर्डर दे रखे हैं।

६—जनवरी से अक्तूबर १९५६ तक हमने ६६८ करोड़ रुपए का सामान विदेशों से मंगवाया था, किन्तु १९५७ के इन १० महीनों में ८३४ करोड़ रुपए का सामान विदेशों से आया है।

७—प्रति वर्ष हम १००० करोड़ रुपये का सामान विदेशों से मंगाते हैं, जबकि ६५० करोड़ रुपये का सामान बाहर भेजते हैं।

८—स्वाधीनता प्राप्ति के वर्ष १९४७ में हमारी स्टर्लिंग निधि ७००० लाख पौण्ड थी, अब वह १७५० लाख पौण्ड रह गई है।

९—हमने पिछले वर्षों में जो ऋण लिये हैं, उनको भी इस वर्ष से चुकाना शुरू कर देना है। इस वर्ष २३ करोड़ रुपया हम देंगे, तो आगामी ४ वर्षों में क्रमशः ३५, ९२, १२३ और १०७ करोड़ रुपया देना पड़ेगा।

व्याज की राशि भी २५ करोड़ रुपये से कम नहीं होगी ।

१०—पिछले दिनों बम्बई, कलकत्ता, मद्रास आदि बन्दरगाहों में गोदी कर्मचारियों ने १० दिन तक जो हड़ताल की, उससे करीब ४० करोड़ रुपये की क्षति हो गई । विदेशी जहाजों से जितने दिन तक माल नहीं उतारा गया, उसकी क्षतिपूर्ति स्वरूप (डिमरेज) विदेशी जहाजी कम्पनियों को बहुत राशि देनी पड़ेगी । यह भी विदेशी मुद्रा पर एक और बोझ पड़ गया है ।

ये सब अंक और तथ्य इस बात पर प्रकाश डालने के लिए काफी हैं कि विदेशों में हमारी जो जमा-पूंजी थी, वह तेजी से कम होती जा रही है । हमने जब अपनी पंचवर्षीय योजना बनाई थी, तब इंग्लैंड में संचित स्टर्लिंग-निधि पर बहुत भरोसा किया था । वह निधि कितने कष्ट-सहन और बलिदान के बाद एकत्र हुई थी, यह कौन नहीं जानता; किन्तु उस समय हमने यह कल्पना भी नहीं की थी कि हमारी आवश्यकताएं इतनी तेजी से बढ़ती जाएंगी कि हम अपनी अतुल राशि कुछ ही वर्षों में हड़प कर जाएंगे ।

विदेशी व्यापार

विदेशी परिसम्पत् के उपार्जन का सर्वोत्तम उपाय अपने विदेशी व्यापार को और विशेषकर निर्यात-व्यापार को बढ़ाना है । आयात को कम करना भी इसके लिए अनिवार्य उपाय है । इसमें संदेह नहीं कि सरकार ने पिछले वर्ष से आयात-नियंत्रण कठोर कर दिया है । बहुत-सी वस्तुओं के विदेशों से आने पर प्रतिबंध लगा दिया गया है । तम्बाकू से बनी चीजें, ऊनी कपड़े, साइकिलें, घड़ियां. फाउण्टेन पेन, चीनी और कांच के बर्तनों आदि बहुत-सी वस्तुओं के आयात पर रोक लग गई है, किन्तु आयात कम नहीं हो रहे हैं । पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत जो भारी कारखाने हमें खोलने हैं, उनके लिये हमें अरबों रुपया विदेशों को देना पड़ेगा । पंचवर्षीय योजना में भारी कारखाने पहले खोलने चाहिए थे या भोग्य-वस्तुओं के, इसमें मतभेद की गुंजाइश होते हुए भी आज यह विवादास्पद प्रश्न नहीं रहा । अब तो यह निश्चित हो गया है कि भारी उद्योग खुलेंगे । उनकी स्थापना की प्रारंभिक कार्रवाइयों में देश की भारी राशि खर्च हो चुकी है । अब इनको रोकने या स्थगित करनेसे और भी भारी क्षति की आशंका है ।

विदेशी मुद्रा में इस तरह कठिनाइयां बढ़ रही हैं, उसकी ओर सरकार का विशेष रूप से ध्यान जा रहा है। किन्तु हमारी कठिनता यह है कि हमें अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों और विशेष कर पाकिस्तान के कारण सैनिक व्यय बेतहाशा बढ़ाना पड़ रहा है और सैनिक कार्यों के लिए बहुत कीमती मशीनें मंगानी पड़ रही हैं । केवल वायु सेना के लिए ही ५० करोड़ रुपये का सामान विदेशों से मंगाना पड़ा है ।

इसी तरह उद्योग के लिए भी हमें भारी मात्रा में विदेशी मुद्रा खर्च करनी पड़ रही है । निजी उद्योगों में पहले ३०६ करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा चाहिये थी किन्तु नये अनुमान के अनुसार अब ४०६ करोड़ रुपये की विदेशी मशीनें मंगानी पडेंगी । रूरकेला, भिलाई और दुर्गापुर में क्रमशः ८९.०, ६७.५ और ७२.० करोड़ रुपये की विदेशी राशि का अनुमान किया गया था । किन्तु संशोधित अनुमान के अनुसार ये तीनों राशियां क्रमशः १२०.०, ८५.६ और ९५.९ करोड़ हो गई हैं । इन संख्याओं से यह स्पष्ट है कि विदेशी मुद्रा किस तरह कठिन होती जा रही है ।

विदेशों को निर्यात

यदि आयात कम नहीं किए जा सकते तो निर्यात बढ़ाकर हम विदेशी परिसम्पत् कमा सकते हैं । इसमें संदेह नहीं कि हमारे सौभाग्य से भारतवर्ष पटसन, चाय, तिलहन और कुछ वर्षों से कपड़ा तथा इंजीनियरिंग की वस्तुओं का निर्यात करके काफी विदेशी मुद्रा अर्जित करता रहा है । नीचे के कुछ अंकों से यह स्पष्ट हो जाएगा कि कुछ वस्तुओं के निर्यात से हम कितनी अधिक विदेशी मुद्रा उपार्जित कर रहे हैं ।

विदेशों को निर्यात (जनवरी से नवम्बर तक)

	१९५६	१९५७
	करोड़ रुपयों में	
चाय	१२४.१७	११३.७६
पटसन	१०३.००	९६.०३

कच्चा लोहा व लौह खनिज	२०.०३	४६.७८
रुई व रद्दी सूत	२२.६६	१८.०२
तेल	२२.६१	१८.६७
तम्बाकू	१२.६६	१२.३८

इन पदार्थों की बिक्री से केवल मूल्य के रूप में ही नहीं, बल्कि निर्यात-करों से भी काफी राशि एकत्र करते हैं। किन्तु उक्त तालिका से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि चाय, पटसन और मसाले आदि के निर्यात में अब कमी हो रही है। अब सभी देश यह प्रयत्न कर रहे हैं कि भारत और अन्य देशों से अपने आयात कम करें। ब्रिटेन भारतीय वस्त्र का बहुत बड़ा ग्राहक है, किन्तु वहां के उद्योगपति सरकार पर भारी दबाव डाल रहे हैं कि भारतीय वस्त्र के आयात की मात्रा सीमित कर दी जाए। दक्षिण-पूर्वी एशिया के देशों को चीन और जापान कपड़ा पहुँचाने लगे हैं। सूडान में भारतीय कपड़े को खुला लाइसेंस देने से इनकार कर दिया गया है। कनाडा वस्त्र आयात-नीति को कठोर कर रहा है। पूर्वी अफ्रीका के अनेक देशों में कपड़े पर आयात-कर बहुत बढ़ा दिए गए हैं। इन सब का परिणाम यह हुआ है कि १९५७ के पहले चार महीनों में जबकि ३२१० लाख गज कपड़े का निर्यात हुआ था, तब १९५८ के पहले चार महीनों में केवल २१६० लाख गज कपड़े का निर्यात हुआ।

भारतीय वस्त्र के निर्यात में पहले ही कम बाधाएँ नहीं थीं। अब हमारा मित्र साम्यवादी चीन भी पूर्वी एशिया में भारतीय वस्त्र का मुकाबला करने के लिए आ कूदा है। चीनी वस्त्र-उद्योग ने पिछले कुछ वर्षों में बहुत प्रगति की है। १९५७ के अन्त में चीन की सूती मिलों में ७५ लाख तकुए चल रहे थे। १२ सूती मिलें इस वर्ष और बन रही हैं। १२ लाख तकुए तो पिछले ४ वर्षों में ही लगाये गये थे। नवम्बर १९५६ तक समाप्त होने वाले चतुर्वर्षी काल में करीब ५० सूती और तत् सम्बन्धी मिलें बनाई गईं। १९५६ में २१,०७० लाख पौण्ड सूत चीन की मिलों ने तैयार किया था, जबकि युद्ध से पूर्व १०,००० लाख पौण्ड भी नहीं होता था। प्रथम पंचवर्षीय योजना में औद्योगिक उन्नति पर किये गये व्यय का ३८ प्रतिशत केवल वस्त्र उद्योग पर लगाया गया। दूसरी पंचवर्षीय योजना के अनुसार १९६२ तक उत्पादन लक्ष्य ७७,५०० लाख पौण्ड सूत और ७८,८०० लाख गज कपड़ा बनाने का है। सरकारी योजना के अनुसार चीन का उद्देश्य अपनी घरेलू खपत के अलावा पूर्वी एशिया के बाजारों में भी कपड़ा भेजना है। सूती मिलों की मशीनरी तैयार करने में भी चीन प्रगति कर रहा है। यह अवस्था है जब भारत को गम्भीरता से सोचना होगा कि वह विदेशी मुद्रा के अर्जन के लिए अपने वस्त्र निर्यात पर कहाँ तक निर्भर रह सकता है।

चायका निर्यात भी घटकर १९५७ में ४४७० लाख पौंड रह गया, जबकि १९५६ में ५३२६ लाख पौंड चाय का निर्यात हुआ था। हमारी चाय का सबसे बड़ा ग्राहक इंग्लैंड है। उसने प्रथम वर्ष में ३०८२ लाख पौंड चाय मंगाई थी, किन्तु इस वर्ष केवल २४७२ लाख पौंड चाय मंगवाई है। अमरीका, कनाडा और मिस्र ने भी चाय का आयात कम कर दिया है। रूस चाय का उत्पादन स्वयं बढ़ाने लगा है। अब यहां ७४३०० हैक्टर (एक हैक्टर ढाई एकड़ के बराबर) में चाय बोई जाती है और गत वर्ष वहां १,१२,३०० टन चाय पैदा हुई। श्रीलंका भी चाय-व्यापार में आगे आ रहा है।

पटसन भारत के लिए विदेशी मुद्रा अर्जन का बहुत बड़ा साधन है, किन्तु उसके वैकल्पिक पदार्थ निकल आने के कारण अब उसका निर्यात कम हो गया है। १९५७ के पहले नौ महीनों में कनाडा ने केवल ६७१ लाख रुपए का पटसन का सामान मंगाया, जबकि उससे पहले वर्ष में ७८९ लाख रुपए का मंगाया था। जो हाल कनाडा का है, वही अन्य देशों का भी है। पाकिस्तान भी पटसन निर्यात में हमारा प्रतिस्पर्धी है। यह कम खेद की बात नहीं है कि जूट, चाय आदि के निर्यात के लिए हर प्रकार का प्रोत्साहन दिया गया, बहुत से निर्यात-कर हटा दिए गए, फिर भी इन पदार्थों का निर्यात बढ़ नहीं रहा है। जापान कच्चे लोहे और मैंगनीज का बड़ा भारी ग्राहक है। अब उसने यह मांग की है कि इनके दाम कम कर दिए जाएं। भारत सरकार ने इस समस्या पर विचार करने के लिए एक प्रतिनिधि मंडल जापान भेजा है। सारांश यह है कि हम अपने निर्यात व्यापार में जितनी विदेशी मुद्रा कमाने की

(शेष पृष्ठ ३८३ पर)

उत्पादन तथा उत्पादक साधनों का नियुक्तीकरण

प्रो० विश्वम्भरनाथ पाण्डेय एम० ए०

हम जानते हैं कि पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में राष्ट्रीय आय का असमान वितरण तथा तज्जनित अवसर की असमानता तथा ऐसी ही अनेक बातें उपस्थित रहती हैं जिनका मेल सामाजिक न्याय से नहीं बैठता। हम समाज में एक ऐसी व्यवस्था चाहते हैं जो अधिक न्यायपूर्ण हो, जिसमें वर्गभेद न हो, वर्ग-संघर्ष न हो और न वर्ग शोषण हो। किन्तु जैसा कि सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री श्री क्राउथर ने एक स्थान पर कहा है, सामाजिक न्याय ही एक मात्र किसी आर्थिक व्यवस्था की योग्यता की जांच करने की कसौटी नहीं है। सामाजिक न्याय के साथ हमें उत्पादन की क्षमता अर्थात् वस्तुओं के गुण और मूल्य आदि पर भी विचार करना चाहिए। अतः समाजवाद और पूंजीवाद की तुलनात्मक उपयुक्तता किंवा श्रेष्ठता पर विचार करते समय हमें यह भी देखना होगा कि उत्पादन की दृष्टि से कौन सी व्यवस्था अधिक योग्य और सक्षम है।

इस बात की चर्चा हम कर चुके हैं कि चूंकि पूंजीवाद का उत्पादन-यंत्र बाजार की मांग के आधार पर चलता है, इसलिए अनेक अर्थशास्त्रियों के मत में उत्पादन के अल्प साधनों का अधिकांश उन उद्योगों में नियुक्त हो जाता है जो धनी वर्ग की मांग (विलासिता और आराम) की वस्तुओं का निर्माण करते हैं और चूंकि गरीब वर्ग अपनी सभी आवश्यकताओं को क्रय शक्ति के अभाव में मांग में नहीं बदल सकता, उसकी आवश्यकता की सूचना उत्पादकों को मिलती ही नहीं और गरीबों की आवश्यकता की वस्तुओं (जो अधिकांश जीवनोपयोगी 'आवश्यकता' ही होती हैं) का उत्पादन यथेष्ट रूप से नहीं होता। इस तरह समाज में जहां पूंजीपतियों के छोटे वर्ग को अपने विलासिता और आराम की वस्तुओं का प्राचुर्य प्राप्त होता है, वहां समाज के बृहत्तर अकिंचन वर्ग को नितान्त जीवनोपयोगी आवश्यकता की वस्तुओं के भी अभाव की प्रताड़ना सहनी पड़ती है। दूसरे शब्दों में हम यह कहें कि पूंजीवाद में उत्पादन विक्रय और लाभ के लिये होता है, समाज के उपभोग और उपयोगिता की दृष्टि से नहीं होता।

किन्तु उत्पादनके साधनों के 'आदर्श वितरण' का अर्थ क्या है? निस्संदेह उत्पादन के साधनों का वह वितरण आदर्श कहा जायगा, जिसकी उत्पादित वस्तुओं की समाजगत उपयोगिता सर्वाधिक हो। प्रतिस्थापन के सिद्धान्त के अनुसार यह आदर्श वितरण तभी प्राप्त होगा, जबकि सभी उद्योगों की सीमान्त वस्तुओं की उपयोगिता समाज के लिये प्रायः बराबर हो। चूंकि मूल्य सीमान्त उपयोगिता के बराबर होता है, हम यह भी कह सकते हैं कि 'आदर्श वितरण' की अवस्था में विभिन्न उद्योगों की सीमान्त वस्तुओं का मूल्य लगभग बराबर होगा। किन्तु इस प्रकार की 'आदर्श वितरण' की स्थिति केवल उसी समाज में सम्भव है जहां व्यक्ति की आमदनी, पसन्द, रुचि, आवश्यकता आदि एक समान हैं, तथा द्वितीयतः मुद्रा की सीमान्त उपयोगिता भी सबके लिए बराबर है। इस प्रकार की सामाजिक स्थिति कोरी कल्पना है, अतः अर्थशास्त्रियों की यह मान्यता है कि उपर्युक्त अर्थ में सच्चे 'आदर्श वितरण' की अवस्था प्रायः अप्राप्य है। प्रो० पीगू जैसे अर्थ शास्त्री का मत है कि यदि पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में दो स्थितियाँ उपस्थित रहें, तो उसके अन्तर्गत व्यवसायियों के 'आत्म लाभ की स्वतन्त्र क्रिया पद्धति' (Free play of the self interest) द्वारा इस आदर्श वितरण की स्थिति का स्वतः प्राप्त हो जाना बहुत दूर तक सम्भव है। ये दो स्थितियां हैं:—

(१) प्रथम, कि कोई भी उद्योग अपने व्यवसाय के बाहर किसी प्रकार का खर्च न उठाये अथवा समाज को कोई सेवा न दे जिसका आनुपातिक पुरस्कार इसे न मिले। अर्थात्, पारिभाषिक शब्दावली में, सीमान्त व्यक्तिगत लागत और सीमान्त समाजगत लागत बराबर हों।

(२) द्वितीय यह कि बाजार में पूर्ण प्रतियोगिता की स्थिति हो। अर्थात् कोई भी उत्पादक 'एकाधिकार' का

प्रयोग करने की स्थिति में न हो और न प्रतिस्पर्धात्मक विज्ञापनों की माध्यम से लाभ ही उठाया जा सके। किन्तु देखना यह है कि वास्तविक जीवन में पूंजीवाद में ये स्थितियां उपस्थित होती हैं या नहीं। इससे यह नहीं सोचना चाहिये कि 'आदर्श वितरण' के लिए पूंजीवाद का एक मात्र विकल्प समाजवाद ही है, क्योंकि—

(क) 'आदर्श वितरण' के लिए 'सीमान्त व्यक्तिगत लागत' और 'सीमान्त समाजगत लागत' की जिस समानता की आवश्यकता होती है, पूंजीवाद में भी उसकी स्थापना कर (Tax) तथा आर्थिक सहायता (Bounties) के द्वारा कर सकते हैं यदि उनकी विषमता का ठीक पता चल जाय। किन्तु वास्तव में इन दो लागतों की मात्रा का पता लगाना इतना कठिन और अधिक व्ययसाध्य है कि इनकी विषमता दूर करना प्रायः अव्यावहारिक है। यह पूंजीवाद की दिवालिया की स्थिति का द्योतक हो सकता है, किन्तु इस मामले में समाजवाद के सामने भी वही कठिनाइयां होंगी और इसमें सन्देह है कि समाजवाद इन दो लागतों के अंतर को दूर कर सकेगा। अतः समाजवाद और पूंजीवाद में चुनाव हम इस आधार पर नहीं कर सकते।

(ख) द्वितीयतः यह सत्य है कि एकाधिकार प्रधान और जनहित प्रधान उद्योगों जैसे पानी, गैस, बिजली आदि के क्षेत्र से प्रतिस्पर्द्धा हटाकर समाजवाद 'आदर्श वितरण' के लिए अधिक उपयुक्त वातावरण तैयार कर सकेगा, किन्तु इससे तो केवल 'सीमित समाज' के हक को बल मिलता है न कि पूंजीवाद के स्थान पर सर्वांगीण समाजवाद को।

सुप्रसिद्ध अर्थ शास्त्री श्री राबर्ट्सन् के अनुसार ·Octopoid' और राष्ट्रीय सुरक्षा प्रधान उद्योगों के क्षेत्र में समाजवादका पक्ष सबसे अधिक समर्थनीय है। अक्टोपाऊड या एकाधिकार प्रधान उद्योगों (जैसे पानी, गैस, बिजली, यातायात) की तीन विशेषताएं होती हैं। प्रथमतः, इनके प्रबन्ध और संचालन के लिए एक विस्तृत तथा

[शेष पृष्ठ ३८७ पर]

हिन्दू श्रम सिद्धान्त

श्री दत्तोपन्त बी० थेनगाड़ी

भारतीय पारिपाटी के अनुसार कौटिल्य ने अपने अर्थ-शास्त्र के प्रारम्भ में शुक्र तथा बृहस्पति को श्रद्धांजलि अर्पित की है तथा अपने ग्रन्थ को प्राचीन आचार्यों के सभी अर्थ-शास्त्रों का सार बताया है। इससे स्पष्ट होता है कि कौटिल्य से बहुत समय पहले ही सब प्रकार के ज्ञानों का विकास हुआ था तथा तत्कालीन साहित्य तर्कसंगत एवं कला कौशल पूर्ण था।

शुक्र नीति का महत्व

शुक्रनीति के काल का निर्णय करना कठिन है। फिर भी भारतीय जीवन में शुक्रनीति का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। यह सर्व विदित सत्य है कि छत्रपति शिवाजीने अपने विभिन्न राजनीतिक मामलों में शुक्रनीति का सहारा लिया था। दुर्ग-निर्माण, सैनिक-संगठन, (दुर्ग प्रकल्पनं चैव सैन्य प्रकरणं तथा), मंत्रिमण्डल की नियुक्ति (प्रकृत्यादि लक्षणं। अष्ट प्रकृतिभियुक्तो नृपः), सैनिक व्यूह रचना (व्यूह प्रकल्पनम्), चढ़ाई करना (यात्रा प्रकल्पनम्), युद्ध सम्बन्धी कूटनीति (कूट युद्धम्), संकट कालीन स्थिति (आपद्धर्म), छल कपट (कापव्य करणम्), आदि सभी मामलों में शिवाजी ने शुक्र नीति का सहारा लिया था।

शुक्रनीति का क्षेत्र अतीव विस्तृत है। लोक जीवनके सभी पक्षों पर इसमें प्रकाश डाला गया है तथा सरकारी शासन पद्धति के सिद्धान्तों का निरूपण किया गया है। जीवन का कोई भी पहलू शुक्राचार्य की दृष्टि से रह नहीं पाया है। अगर औद्योगिक सम्बन्धों की प्रमुख समस्याओं पर इसमें प्रकाश न डाला गया होता तो यह बड़ी आश्चर्य की बात होती; (भृत्यानां भृति कल्पनम्) आदि। इस सम्बन्ध में शुक्रनीति में विस्तार पूर्वक वर्णन है। ये सिद्धान्त इतने अधिक व्यापक, उदार, एवं तर्क संगत हैं कि आज के श्रमिक नेताओंको भी उनसे संतोष हो सकता है।

कुछ सावधानी

शुक्रनीति का अध्ययन करने से पहले कुछ सावधानी बरतनी होगी। पहली बात, जो लोग प्राचीन भार[तीय] सामाजिक परम्परा को बीसवीं शताब्दी के पश्चिमी स्त[र से] तुलना करना चाहते हैं, वे भारी भूल करते हैं। रामाय[ण] युद्ध से मार्क्स के वर्ग संघर्ष के साथ सम्बन्ध जोड़ना [तथा] पं० नेहरू की पंचवर्षीय योजना की आलोचना को वै[दिक] साहित्य से जोड़ना निरामूर्खता है।

दूसरी, बात संस्कृत के शब्दों के पूर्णतः समानार्थक श[ब्द] हिन्दी या अंग्रेजी में नहीं मिलते। 'धर्म' शब्द का [अर्थ] 'रिलिजन' में नहीं आ सकता। प्राचीन 'स्वामी' शब्द त[था] आधुनिक मालिक या एम्प्लायर तथा प्राचीन 'भृत्य' ए[वं] आधुनिक 'कर्मचारी' में महान् अंतर है। हिन्दी शब्द इ[स] लेख में सुविधा के लिये प्रयुक्त हैं। संस्कृत एवं हिन्दी शब्दों के आंतरिक भाव को जरूर समझना चाहिए।

समाज का प्रबन्ध

पहले एक गण या 'गिल्ड' के सदस्यों का पारस्परि[क] संबन्ध आज का औद्योगिक सम्बन्ध नहीं था। कौटिल्य के अनुसार समाज की कुल आमदनी समाज [के] सभी सदस्यों की है तथा इस आमदनी का विभाजन [या] तो पहले ही निश्चित शर्तों के अनुसार या ऐसा सम[झौता] न होने पर सभी सदस्यों में समानतः होना चाहि[ए] (संधभृताः संभूय समुत्थातारो वा यथा संभाषितं वेतनं स[मं] वा विभजेरन्)। 'शुक्र' समाज की सर्वतंत्र स्वतंत्रता प[र] अधिक बल देते हैं। समाज के सदस्य अपने संविधान [के] अनुसार आप ही सभी आंतरिक मामलों का फैसला कर[ने] वाले होंगे। कोई भी बाह्य शक्ति या व्यक्ति हस्तक्षेप [में] असमर्थ हैं—

'कीनशाः कारुकाः शिल्पि-
कुसीदि श्रेणि नर्तकाः।
लिंगिनस्तस्कराः कुर्युः
स्वेन धर्मेण निर्णयम्॥
अशक्यो निर्णयोह्यन्यै-
स्तज्जैरेव तु कारयेत्॥'

[सम्प

इस प्रकार गण या गिल्ड के आंतरिक प्रबन्धों पर सरकार का हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए।

आदर्श सम्बन्ध

शुक्र के अनुसार एक आदर्श (भृत्य) कर्मचारी वह है जो अपने (स्वामी) मालिक को मुसीबत में फंसने पर नहीं छोड़ता, तथा एक आदर्श मालिक वह है जो अपने भृत्य की रक्षा के लिए मृत्यु का स्वागत करने के लिये भी तैयार रहे। इस संबंध में शुक्रने आदर्श राजा रामचन्द्र तथा आदर्श भृत्य वानरों का विशेष रूप से उल्लेख किया है।

'भृत्यः स एव सुश्लोको-
नापत्तौ स्वामिनं त्यजेत्।
स्वामी स एव विज्ञेयो-
भृत्यार्थे जीवितं त्यजेत्॥
न राम सदृशो राजा-
पृथिव्यां नीतिमानभूत्।
सुभृत्यता तु यन्नीत्या-
वारैरपि स्वीकृता॥

इस उदाहरण को प्रस्तुत करके शुक्र ने एक विचित्र समस्या भी हमारे सामने रखी है कि अगर विद्रोही राज्य को गिराने के लिये संगठित हो सकते हैं तो यह क्यों न संभव हो कि राष्ट्र तथा राष्ट्रके कार्यकर्ता संगठित होकर शत्रु का विनाश करें?

'अपि राष्ट्र विनाशाय, चोराणामेकचित्तता।
शक्ता भवेन्न किं शत्रुनाशाय नृप भृत्ययोः॥'

संभवतः यह प्रश्न आधुनिक समय पर भी ठीक लागू हो सकता है।

विविध प्रकार के वेतन

वेतन कार्य के अनुसार अथवा समय के अनुसार या कार्य एवं समय दोनों के अनुसार निर्दिष्ट वचन के मुताबिक देने होंगे।

कार्यमाना कालमाना कार्य कालमितिस्त्रिधा।
भृतिरुक्ता तु तद्विज्ञैः सा देया भाषिता यथा॥

कार्यमाना भृति का अर्थ है काम के अनुसार और कालमान का अर्थ है दैनिक या मासिक वेतन। इसे अगामी श्लोकों में स्पष्ट किया है।

'अयं भारस्त्वया तत्र स्थाप्यस्त्वेतावतीं भृतिम्।
दास्यामि कार्यमाना सा कीर्तिता तद् विदेशकैः॥
वत्सरे वत्सरे वापि मासि मासि दिने दिने।
एतावतीं भृतिंतेऽहं दास्यामिति च कालिका॥'

समय तथा कार्यानुसार वेतन की संयुक्त पद्धति को निम्न श्लोक बताता है।

'एतावता कार्यमिदं कालेनापि त्वया कृतम्।
भृतिमेतावतीं दास्ये कार्यकालमिता च सा॥

वेतन भुगतान का नियत काल

समय की तीन पद्धतियां हैं। (१) सौरमास (२) चन्द्रमास (३) सावन। मासिक वेतनभुगतान के लिए सौरमास, ब्याज जोड़ने के लिए चन्द्रमास तथा दैनिक वेतन भुगतान के लिए सावन का अनुसरण करना होगा।

'कालमानं त्रिधाज्ञेयं चान्द्रं सौरं च सावनम्॥
भृतिदाने सदा सौरं चान्द्रं कौसीद वृद्धिषु।
कल्पयेत् सावनं नित्यं दिन भृत्येऽवधौ सदा॥'

विभिन्न प्रकार के कर्मचारी

कर्मचारी तीन प्रकार के होते हैं। (१) पक्के ईमानदार, (२) सिर्फ वेतन वृद्धि के लिये लालायित रहने वाले (३) पर्याप्त वेतन मिलने पर भी मालिक के साथ विश्वासघात करने वाले।

'त्रिविधो भृतकास्तादवदुत्तमो मध्यमोऽधमः।'

कर्मचारियों के भेद

भृत्य तीन प्रकार के होते हैं। (१) अदक्ष, (२) सामान्य अनुभव युक्त (३) पूर्णानुभव युक्त या दक्ष। वेतन योग्यता के अनुसार निश्चित करने होंगे।

'मन्दो मध्यस्तथा शीघ्रस्त्रिविधो भृत्य उच्यते।
समा मध्या च श्रेष्ठा च भृतिस्तेषां क्रमात् स्मृता॥''

उचित वेतन

अवश्यपोष्यवर्गस्य भरणं वै भृताद् भवेत्।
तथा भृतिस्तु संयोज्या तद्योग्या भृतकाय वै॥

जीवनोपयोगी आवश्यकता की पूर्ति वेतन से करनी होती है। इसलिए एक कारीगर का वेतन इतना होना चाहिए, जिससे आवश्यकताओंकी पूर्ति हो सके।

सैनिकों का वेतन

उन सैनिकों को जिन्होंने शिक्षा प्राप्त कर ली है, पूरे वेतन देने होंगे। अगर शिक्षा प्राप्त कर रहे हों तो आधा वेतन देना होगा।

सैनिकाः शिक्षिताः ये तु तेषु पूर्णा भृतिः स्मृता।
व्यूहाभ्यासे नियुक्ता ये तेष्वर्धां भृतिमावहेत्॥

युद्ध काल में सैनिकों के वेतन २५ प्रतिशत अधिक बढ़ाने चाहिए।

'याने सपादभृत्यातु स्वभृत्या वर्धयन् नृपः॥'

युद्ध में विशेष चतुरता एवं दक्षता दिखाने वालों को अतिरिक्त पुरस्कार, पदवृद्धि तथा प्रतिफल देना चाहिए।

'प्रत्यग्रे कर्मणि कृते योद्धे दद्याद् धनं च तान्।
पारितोष्यं वाऽधिकारं क्रमतोर्हं नृपः सदा॥'

वेतन भुगतान

'न कुर्याद् भृति लोपं तु तथा भृति विलम्बनम्।'

वेतन कभी जप्त न होने चाहिएं। वेतन देने में कभी विलम्ब न होना चाहिए। यथा समय पर वेतन मिल जाना चाहिए।

वेतन रजिस्टर

'जात्याकृति वयोदेशग्रामवासान्विमृश्य च।
कालं भृत्यवधि देयं दत्तं भृत्यस्य लेखयेत्॥'

वेतन रजिस्टर नियमपूर्वक रखने चाहिए। इसमें कर्मचारी की जाति, आयु, प्रांत, ग्राम, सेवा की अवधि, तारीख, वेतन, एवं ऋण सम्बन्धी पूर्ण विवरण लेखबद्ध होना चाहिए।

'कति दत्तं हि भृत्येभ्यो वेतने पारितोषिकम्।
तत्प्राप्तिपत्रं गृह्णीयाद् दद्याद् वेतन पत्रकम्॥'

वेतन तथा पारितोषिक देने की रसीद कर्मचारी से लेनी होगी तथा कर्मचारी को वेतन सम्बन्धी विवरण देना चाहिए।

औद्योगिक विवाद

'ये भृत्या हीनभृतिकाः शत्रवस्ते स्वयं कृताः।
परस्य साधकास्तेतु छिद्र-कोश-प्रजाहराः॥
वाक्पारुष्यात् न्यूनभृत्या स्वामी प्रबल दण्डतः।
भृत्यं प्रशिक्षयेन्नित्यं शत्रुत्वं त्वपमानतः।''

कम वेतन, सख्त बर्ताव, अपमान, फटकार, कड़ी सजा, अधिक दण्ड,—ये सभी औद्योगिक अशांति के कारण हैं।

'भृति दानेन संतुष्टा मानेन परिवर्धिताः।
सान्त्विता मृदु वाचा वै न त्यजंत्यधिपं हि ते॥'

यथा योग्य वेतन देने, गौरवसहित पदवृद्धि देने, तथा सौम्य वचनों से सन्तुष्ट रखने से कोई भी कर्मचारी अपने मालिक को नहीं छोड़ता।

औद्योगिक विवादों को पत्र प्रमाण, तथा अन्य वास्तविक स्थिति को दृष्टि में रखकर, दूर करना चाहिए।

किसी एक विषय या शाखा का विशेषज्ञ किसी विवाद को सुलझा नहीं सकता। यह काम एक ऐसे आदमी को सौंपा जाना चाहिये, जो विभिन्न विषयों एवं स्थिति गतियों के बारे में खास जानकारी रखता हो।

'एकं शास्त्रमधीयानो न विद्यात् कार्यनिर्णयम्।
तस्माद्, बह्वागमः कार्यो विवादेषूत्तमो नृपः॥'

किसी भी विवाद के फैसले में अगर पक्षपात हुआ तो उसके लिए पांच कारण हो सकते हैं। (१) तरफदारी, (२) लालच, (३) भय, (४) दुश्मनी, (५) गुप्त रूप से जांच करना।

'पक्षपाताधिरोपस्य कारणानि च पंच वै।
राग लोभ भय द्वेषाः वादिनोश्च रहः श्रुतिः॥'

अवकाश के नियम

'भृत्यानां गृहकृत्यार्थं दिवा यामं समुत्सृजेत्।
निशियामत्रयं नित्यं दिनभृत्येश्च यामकम्॥
तेभ्यः कार्यं कारयति ह्युत्सवाद्यैर्विना नृपः।
अत्यावश्यकस्तूत्सवेऽपि हित्वा श्राद्ध दिनं सदा॥

दिन तथा रात्रि की अवधि में काफी अवकाश की सुविधा देनी चाहिए। कुछ, आपत्कालीन परिस्थितियों को छोड़कर शेष सभी पर्वों के अवसर पर तथा श्राद्ध के दिन भी वेतन के साथ छुट्टी देनी चाहिए।

साधिकार वार्षिक सहायता

मालिक को चाहिये कि वह अपने कर्मचारियों को वेतन के साथ वर्ष में १५ दिन की छुट्टी दे।

[शेष पृष्ठ ३८२ पर]

छोटे और मध्यम उद्योग

श्री मुरारजी जे. वैद्य
भूतपूर्व अध्यक्ष, आल इंडिया मनुफैक्चर्स आर्गनाइजेशन

आज छोटे और मध्यम उद्योग की परिभाषा के संबंध में अनिश्चितता और गड़बड़ी है। सरकारी परिभाषा के अन्दर छोटे उद्योग वे हैं जहां "पावर" रहते हुये ५० कारीगर काम करते हैं और यदि "पावर" नहीं है, वहां १०० कारीगर काम करते हों। जहां तक पूंजी का प्रश्न है छोटे उद्योग वे हैं, जहां पर ज्यादा से ज्यादा पांच लाख रुपये की पूंजी लगाई जाती है। मध्यम उद्योगों के लिये कोई निश्चित परिभाषा निर्धारित नहीं की गयी है। समय समय पर इस सम्बन्ध में कई आंकड़े दिये गये हैं। मेरे विचार से जिस उद्योग के अन्दर ५० लाख रुपये की पूंजी लगाई गयी है, उसे मध्यम उद्योग कहा जा सकता है। फिर भी भारत सरकार ने मध्यम उद्योगों के लिए कोई निश्चित परिभाषा निर्धारित नहीं की है।

सन् १९५६ के अप्रैल मास में, आल इंडिया मैनुफेक्चरर्स आरगनीजेशन के वार्षिक सम्मेलन में अपने अध्यक्षीय भाषण में हमने इस सम्बन्ध में चर्चा की थी। देश के प्रधान मंत्री, जिन्होंने इस सम्मेलन का उद्घाटन किया था, स्वीकार किया था कि "यह सत्य है कि मध्यम उद्योगों की ओर भारत सरकार का ध्यान उतना नहीं गया है, जितना चाहिये था। सरकार के लिये यह शायद संभव नहीं है कि वह विविध श्रेणी के सभी उद्योगों पर ध्यान दे, लेकिन सरकार जिस उद्योग को ज्यादा सहायता की आवश्यकता है, उसे ज्यादा से ज्यादा मदद करने की कोशिश कर रही है।"

देश के आर्थिक विकास में इन उद्योगों का महत्व बहुत अधिक है। छोटे और मध्यम उद्योगों से वर्तमान तथा भविष्यमें ज्यादा लोगों को काम मिल रहा है और मिल सकेगा। देश के अन्दर जितने व्यवस्थित उद्योग हैं, उनमें कुल २७ लाख आदमी काम करते हैं। इसमें से मध्यम और छोटे उद्योगों के अन्दर १२ लाख से ज्यादा लोग हैं। इसका अर्थ यह है कि व्यवस्थित उद्योग के अन्दर जितने मजदूर कार्य करते हैं, उनकी कुल संख्या ४५ प्रतिशत मजदूर छोटे और माध्यम उद्योगमें कार्य करते हैं। साथ लगभग आठ अथवा दस लाख मजदूर वैसे हैं जो अव्यवस्थित छोटे उद्योगों में कार्य करते हैं।

लोगों को आजीविका की सुविधा देने के अतिरिक्त, जहां तक राष्ट्रीय आय का प्रश्न है, खेती, वाणिज्य और यातायात के बाद दूसरा नम्बर छोटे और मध्यम उद्योगों का ही आता है। फिर इन उद्योगों में कार्य करने की क्षमता बड़े उद्योगोंकी अपेक्षा ज्यादा है। इसका कारण यह है कि ये उद्योग उन लोगों के द्वारा चालू किये जाते हैं, जिन्हें इसकी कारीगरी का पूरा ज्ञान है और जो पूंजी भी इकट्ठी कर सकते हैं। वे अपने मित्र और सम्बन्धियों से उद्योग के लिये पूंजी लाते हैं। इस विशेष कारण से ही छोटे और मध्यम उद्योगों में बड़े उद्योगों की अपेक्षा व्यवस्था-व्यय कम लगता है। व्यक्तिगत संपर्क के कारण मालिक और कामगर का सम्बन्ध भी छोटे और मध्यम उद्योगों में बड़े उद्योगों से ज्यादा घनिष्ट है। इन कारणों से छोटे और मध्यम उद्योगों का देश के विकास में महत्वपूर्ण भाग है। लेकिन दुर्भाग्यवश योजना-समिति (प्लेनिंग कमीशन) के द्वारा इनके महत्व को उचित मान्यता नहीं दी गयी है। इन उद्योगों के सम्बन्ध में योजना समिति का अध्ययन शून्य के बराबर है। इसका परिणाम यह हुआ है कि इन उद्योगों के आर्थिक महत्व को देखते हुये इन्हें सरकार द्वारा वह सहयोग और प्रोत्साहन नहीं मिला है, जितना उन्हें मिलना चाहिये था।

इन उद्योगों के चलाने वाले व्यक्तियों को विविध प्रकार का कार्य करना पड़ता है। श्री एम० विश्वेश्वरय्या ने एक बार इनका उल्लेख "यथार्थवादी उद्योगी" कह कर किया था, चूंकि वे उत्पादन की कला को स्वयं ही जानते हैं और तत्सम्बन्धी समस्या की देखभाल स्वयं ही करते हैं। इस सम्बन्ध में सबसे ज्यादा महत्व की बात यह है कि इस उद्योग को चलाने वाले व्यक्ति मध्यम और पढ़े लिखे वर्ग के होते हैं, जिन्हें हम निश्चय ही किसी देश के जनवादी समाज की रीढ़ कह सकते हैं।

विविध कर

इन उद्योगों को जो विविध प्रकार का कर देना पड़ता है, उसमें सबसे पहला और मुख्य कर उत्पादन-शुल्क

(एक्साइज ड्यूटी) है । इसका विस्तार आधुनिक वर्ष में बहुत बढ़ गया है । सन् १९३९ में इससे प्राप्त आय केवल ५.६ करोड़ रु० ही था । सन् १९५७-५८ के अन्तर्गत यह २५२ करोड़ रु० हो गया । इस कर का भार केवल उद्योगों को ही सहना नहीं पड़ता है । अन्त में इसे उपभोक्ता ही सहन करता है, हालांकि इन उद्योगों की कार्य पूंजी प्रारम्भ में बहुत तंगीमें फंस जाती है । कभी कभी उपभोक्ता इस कर के बोझसे बच जाते हैं । आज हमारे देश की जो हालत है, उसके अन्दर छोटे और मध्यम उद्योग पूर्ण रूप से व्यवस्थित नहीं है । इनको बिक्री के लिये भी व्यवस्थित व्यवस्था भो नहीं है । कभो कभी इन उद्योगों को ऐसे विक्रेता और व्यापारी के चंगुल में रहना पड़ता है जो माल को ज्यादा दिन तक जमा रख सकते हैं । इसलिये वे उत्पादन शुल्क (एक्साइज ड्यूटी) उपभोक्ता पर नहीं डाल सकते । आज दिन बहुत से मध्यम उद्योगों ने एक्साइज ड्यूटी के अनुपात में मूल्य नहीं बढ़ाया है । कई जगह घरेलू स्पर्धा ज्यादा दिन तक माल एकत्रित रखने को क्षमता में कमी के कारण है, अत: इनके मूल्य में गिरावट हुई है ।

इसके बाद दूसरा महत्व आयकर, निगम कर, और सम्पत्ति कर का है । कई छोटे और मध्यम उद्योगों में ये कर लाभ का ६० प्रतिशत हैं । छोटे और मध्यम उद्योगों में बहुत से भागीदारी संस्थाएं अथवा प्राईवेट लिमिटेड हैं । जहां तक प्राइवेट लिमिटेड कम्पनी का प्रश्न है, इण्डियन इन्कमटैक्स सैक्शन २३ ए के अनुसार उन्हें अपने नफे का ६० प्रतिशत अनिवार्यतः बांटना पड़ता है । चूंकि इनकी पूंजी बहुत ही छोटी है, इनके द्वारा जो विनियोग घोषित किये जाते हैं, उसका प्रतिशत उतना होता है जिस पर फाइनेन्स एक्ट के अन्दर दण्ड विनियोग कर (पेनल डिवीडेन्ड टैक्स) लगाये जाते हैं । इस प्रकार सब मिलाकर छोटे और मध्यम उद्योगों की कम्पनी पर कर राशि ६५ प्रतिशत से ७० प्रतिशत तक जा पहुँचती है ।

दूसरा बिक्री कर है, जो कि एक स्थान पर नहीं लगाया जाकर विविध स्थानों पर लगाये जाते हैं । विभिन्न प्रान्तोंमें विभिन्न प्रकारके बिक्री कर लगाये गये हैं । फिर इसके अतिरिक्त एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त में होने वाले व्यापार पर केन्द्रीय बिक्री कर १ प्रतिशत है ।

इसके बाद कुछ ऐसे भी कर लगाये जाते हैं, जिन्हें हम कर नहीं कह सकते, लेकिन निश्चय रूप से उन्हें ड्यूटी तो कहा जा सकता है । उदाहरणार्थ, प्राविडेण्ट फंड में हिस्सा देना, इम्प्लाईज स्टेट इन्शुरेन्स, स्थानीय म्युनिसिपल कर इत्यादि । प्रावीडेण्ट फंड और कर्मचारी बीमा फंड मिलकर छोटे और मध्यम वर्ग के नफा का १० प्रतिशत से लेकर १२ प्रतिशत है । इसके अतिरिक्त म्युनिसिपल टैक्स ६ प्रतिशत से लेकर १२ प्रतिशत तक देना पड़ता है।

यदि उपयुक्त लगाये गये सभी करों को ध्यान से देखें तो पता चलेगा कि सब मिलाकर इस प्रकार कम्पनी के नफे का ९० प्रतिशत से ९४ प्रतिशत भाग सरकार या सरकारी संस्थाओं के हाथ चला जाता है । यदि गरीब कर दाता इन संस्थाओं का शेयर होल्डर अथवा भागीदार है, तो उसे केवल ६ प्रतिशत से १० प्रतिशत ही मिल पाता है ।

पूंजी के स्रोत

सरकार को वर्तमान कर निर्धारण नीति का एक मुख्य प्रभाव यह हुआ है कि छोटे और मध्यम उद्योगोंके लिये जो धन और पूंजी के स्रोत थे वे सब सूखते चले जा रहे हैं । निश्चय ही भारत सरकार स्टेट फाइनेन्स कारपोरेशन को स्थापित कर इन्हें मदद करना चाहती है, लेकिन उद्योगों की आवश्यकता असीम है और स्टेट फाइनेन्स कारपोरेशनोंके साधन बहुत ही सीमित हैं ।

इसलिये यह अत्यधिक आवश्यक है कि छोटे और मध्यम उद्योग के धन के साधन, जो वस्तुतः जन-साधारण की बचत ही है, सूख नहीं पावें । लेकिन जन-साधारण पर जो कर के भार डाले गये हैं, उसे देखते हुये उत्साह नष्ट हो जाता है । सन् १९५५-५६ के अन्दर उन लोगों की पूर्ण संख्या, जिन पर इन्कम टेक्स लगाया जाता है, ५¼ लाख से ज्यादा थी । इसमें से ऐसे व्यक्ति जिनकी आय २५,००० रु० की थी, उनकी संख्या ४¾ लाख थी । उन लोगों ने २३ करोड़ रु० इन्कम टैक्स दिया । अभी हम उस इन्कम टैक्स और कारपोरेशन टैक्स को ध्यान में नहीं लेते हैं, जहां पर इन लोगों के शेयर हैं और अप्रत्यक्ष कर सेल्स टैक्स को भी ध्यान में नहीं देते हैं । सन् १९५५-५६ के बाद से कर का बोझ इतना बढ़ गया है कि वह असहनीय हो गया है । इसलिये आज यह प्रश्न उठता है कि क्या

भारत में आधुनिक उद्योगों का विकास—३

श्री चतुर्भुज मामोरिया

द्वितीय योजना के अन्तर्गत

द्वितीय पंच वर्षीय योजना में उद्योगों तथा खानों के विकासके लिये सम्पूर्ण धनराशि का १८.५ प्र०श० रखा गया है, जब कि प्रथम योजना काल में यह भाग केवल ७.६ प्र० श० ही था। द्वितीय योजना काल में उद्योगों के विकास को निम्न रूप से प्राथमिकता दी गई है :—

(१) लोहा व इस्पात और भारी रासायनिक पदार्थों के उत्पादन में वृद्धि, (रासायनिक पदार्थों में नेत्रजनीय खाद भी शामिल हैं), भारी इंजिनियरिंग सामान तथा मशीनें बनाने वाले उद्योगों का विकास किया जायगा।

(२) अल्यूमीनियम, सीमेंट, रासायनिक लुब्दी, रंग, फास्फोटीय खाद और आवश्यक दवायें आदि पदार्थों के उत्पादन करने वाली सामग्री के निर्माण की क्षमता में विकास किया जायगा।

(३) राष्ट्र के वर्तमान महत्त्वपूर्ण उद्योगों का आधुनिकीकरण और नवीनीकरण—अर्थात जूट, सूती कपड़ा और चीनी के कारखानों में नई मशीनें लगाना।

(४) उद्योगों की वर्तमान क्षमता का पूरा सदुपयोग किया जायगा, जहां कि प्रस्थापित शक्ति के अनुसार पूरा उत्पादन नहीं होता है।

(५) साधारण उत्पादन के कार्यक्रमों और उद्योगों के विकेन्द्रीकरण की दृष्टि से स्थिर किये गये उत्पादन ध्येयों को सम्मुख रखते हुए उपभोग्य पदार्थों की उत्पादन शक्ति का विकास करना।

सार्वजनिक क्षेत्र के कार्यक्रम

सार्वजनिक क्षेत्र में लोहे और इस्पात के उद्योग को प्राथमिकता दी गई है। इसके अनुसार इस्पात के तीन नये कारखाने ५०० करोड़ रुपये की लागत से और खोले जा रहे हैं। ये कारखाने क्रमशः भिलाई, रूरकेला और दुर्गापुर में होंगे। इनमें से प्रत्येक १० लाख टन इंगोट उत्पन्न करेगा। इनमें से एक में ३½ लाख टन ढलवें लोहे का उत्पादन भी किया जायगा। इन कारखानों की अन्ततः उत्पादन क्षमता में भी वृद्धि की जा सकेगी। भिलाई के कारखाने का उत्पादन २५ लाख टन तक और रूरकेला तथा दुर्गापुर के कारखानों का उत्पादन १२½ लाख टन सिल्ली तक बढ़ सकेगा। मैसूर के लोहे और इस्पात के कारखाने का उत्पादन भी बढ़ाया जायगा। इन सभी प्रयत्नों के फलस्वरूप १९६०-६१ तक १२० करोड़ रुपये के मूल्य का लोहा (लगभग २०लाख टन) सार्वजनिक क्षेत्र में तैयार होने लगेगा।

इसके अतिरिक्त चितरंजन के कारखाने में इंजिनों का उत्पादन १२० से बढ़कर ३०० इंजिन प्रति वर्ष तक होगा। सार्वजनिक क्षेत्र में बिजली का भारी सामान तथा भारी औद्योगिक मशीनें और उनके पुर्जे भी निर्माण किये जायेंगे। दक्षिण भारत में आरकाट जिले की नेवैली लिग्नाईट योजना के अन्तर्गत प्रति वर्ष ३५ लाख टन लिग्नाईट की खुदाई की जायगी जिससे (i) २.१ लाख किलोवाट बिजली पैदा की जायगी; (ii) प्रति वर्ष ३.८ लाख टन कार्बोनाइज्ड ब्रिकेट तैयार किये जायेंगे;(iii) यूरिया और सल्फेट नाईट्रेट के रूप में ७०,००० टन निश्चित नत्रजन पैदा किया जायगा।

नत्रजन के उत्पादन में ४७,००० टन की वृद्धि करने के लिए सिन्द्री खाद फैक्ट्री का विस्तार किया जायगा तथा दो नये कारखाने एक नांगल और दूसरा रूरकेला में

यह नीति उचित है, जिससे उन्हीं लोगों को कष्ट होता है, जो उद्योगी शिक्षित हैं और जिनके पास धन लगाने के लिये पैसा है। यदि उद्योगों के विकास के लिये बचत बढ़ायी जावे, तो देश के अन्दर लाखों को रोजगार मिल सकेगा और हमारा भारत विश्व का एक महान औद्योगिक देश हो जावेगा। जितनी शीघ्र सरकार इस सम्बन्ध में जनता के विचार को जान लेगी, अपनी कर-निर्धारण नीति में परिवर्तन करके मध्यम वर्ग के लोगों पर लादे गये कर भार को कम करेगी और छोटे और मध्यम उद्योगों को सभी प्रकार का प्रोत्साहन देगी, उतनी ही शीघ्र हम कल्याणकारी राज्य स्थापित कर सकेंगे।

—

स्थापित किये जायंगे। इन में क्रमशः प्रति वर्ष ७०,००० टन और ८०,००० टन नत्रजन का उत्पादन होगा।

हिन्दुस्तान शिपयार्ड में प्रति वर्ष ६ जहाज बनाये जाने की योजना है। पेराम्बूर में जुड़वां डिब्बे बनाने के कारखाने को पूरा किया जायगा। छोटी लाइन के डिब्बों के निर्माण के लिए एक नया कारखाना तथा फालतू पुर्जे बनाने के लिए दो छोटे इंजिनियरिंग कारखाने भी खोले जायेंगे। इनके अतिरिक्त वर्तमान डी. डी. टी. और एन्टी-बायोटिक कारखानों का विस्तार, केरल में डी. डी. टी. का नया कारखाना, तथा हिन्दुस्तान केबिल्स लिमिटेड, नेशनल इन्स्ट्रूमेंट्स फैक्ट्री और इन्डियन टेलिफोन उद्योग का विस्तार भी किया जायगा।

राज्य सरकारों द्वारा स्थापित उद्योगों का विस्तार किया जायगा। इनमें मुख्य ये है :—मैसूर के लोहे और इस्पात के कारखाने का विस्तार; दुर्गापुर में कोक भट्टी का निर्माण; हैदराबाद की प्राग-टूल कारखानों का पुनर्गठन और उत्तर प्रदेश की सीमेंट फैक्ट्री और बिहार के सुपरफास्फेट फेक्टरी का विस्तार।

वैयक्तिक क्षेत्र में विकास

निजी क्षेत्र में भी लोहे और इस्पात के उद्योग को प्राथमिकता दी गई है। इसके लिए ११५ करोड़ रुपयों की व्यवस्था की गई है। इससे निजी क्षेत्र में इस्पात का वर्तमान उत्पादन १२½ लाख टन से बढ़कर २३ लाख टन तक हो जाने का अनुमान है। अल्यूमीनियम और फैरो-मैंगनीज के उत्पादन का लक्ष्य क्रमशः ३०,००० टन और १.७२ लाख टन स्थिर किये गये हैं। सीमेंट तथा रिफ्रैक्टरी उद्योगों के वार्षिक उत्पादन का लक्ष्य क्रमशः १६० लाख टन और १० लाख टन रखा गया है। ढांचे के निर्माण, मोटर गाड़ियां, रेल के इंजिन व डिब्बे, ढलाई व पिटाई का काम, औद्योगिक मशीनें, बाईसिकल, सीने की मशीनें, मोटर और ट्रान्सफर्मर आदि का उत्पादन भी बढ़ाया जायगा। औद्योगिक मशीनों के उत्पादन, सूती कपड़ा, मिल मशीनों, जूट मिल मशीनों, चीनी, कागज, सीमेंट बनाने की बिजली की मशीनों आदि का विस्तार किया जायगा।

सोडा एश, कास्टिक सोडा, फास्फोटिक खाद, औद्योगिक विस्फोटक पदार्थ, रंग और तत्सम्बन्धी पदार्थों आदि के रासायनिक उद्योगों के विकास को निजी क्षेत्र के कार्यक्रम में विशेष महत्व दिया गया है। प्लास्टिक उद्योग के अन्तर्गत मौल्डिंग पाऊडर का उत्पादन ११८० टन से बढ़कर ११,४०० टन हो जायगा।

उपभोग्य पदार्थों में उत्पादन शत प्रतिशत बढ़ाने का अनुमान किया गया है जैसे कागज और पट्टे के उत्पादन में। चीनी के उत्पादन में ४० प्र० श०; बनस्पति तैलों में ४८ प्र० श०; कपड़े और सूत के उत्पादन में २० और २६ प्र० श०; बाईसिकल में ८२ प्र० श०; साबुन में ४० प्र० श०; तथा रैयोन और स्टेपल के उत्पादन में २४६ प्र० श० की वृद्धि होने का अनुमान है।

नीचे की तालिकामें मुख्य उद्योगों की उत्पादन क्षमता और वास्तविक उत्पादन में जो वृद्धि की जायगी, वह बताया गया है।

मुख्य उद्योगों के राष्ट्रीय ध्येय

उद्योग	इकाई	१९५५-५६ अनुमानित सामर्थ्य	अनुमानित उत्पादन	१९६०-६१ सामर्थ्य	उत्पादन
१. लोहा और इस्पात					
(अ) शुद्ध इस्पात (मुख्य उत्पादक)	००० टन	१,३००	१,३००	४,६००	४,३००
(आ) लोहे की छड़ (फाउण्ड्रियों के लिए)	,,	३८०	३८०	६८०	७५०
२. विशेष ढांचों की बनावट	टन	२,२६,०००	१,८०,०००	५,००,०००	५,००,०००
३. बड़ी फाउन्ड्रीयां और पिटाई के कारखाने					
(अ) इस्पात फाउन्ड्री	,,	—	—	१५,०००	१५,०००

(आ) पिटाई कारखानें	,,	—	—	१२,०००	१२,०००
(इ) लोहा ढालने वाली फाउन्ड्री	,,	—	—	१०,०००	१०,०००
४. फैरो मैंगनीज	,,	२८,०००	अप्राप्य	१,७१,८००	१,६०,०००
५. अलुमिनियम	,,	७,५००	७,५००	३०,०००	२५,०००
६. रेल इंजिन	संख्या	१७०	१७५	४००	४००
७. ओटोमोबाइल (मोटरें आदि)	,,	३,८०००	२५,०००		
८. भारी रासायनिक पदार्थ :—					
(अ) सल्फरिक एसिड	००० टन	२४२	१७०	५००	४७०
(आ) सोडा एश	टन	६०,०००	८०,०००	२,५३,०००	२,३०,०००❁
(इ) कास्टिक सोडा	,,	४४,३००	३६,०००	१,५०,४००	१,३५,४००
९. उर्वरक					
(अ) नत्रजनीय	,,	८५,०००	७७,०००	३,८२,०००	२,६०,०००
(आ) फास्फोटिक पी २ ओ ५	,,	३५,०००	२०,०००	१,२०,०००	१,२०,०००
१०. जहाज निर्माण	G.R.T.	५०,०००	—	—	६०,०००
		(१९५१-५६)			(१९५६-६१)
११. सीमैंट	००० टन	४,६३०	४,२८०	१६,०००	१३,०००
१२. रिफैक्टरीज़	टन	४,४४,०००	२,८०,०००	१०,००,०००	८,००,०००
१३. पेट्रोल का शोधन	लाख टन	३६.२५	३६	४३.१	४३
१४. कागज और कागज के पुट्ठे	००० टन	२१०	२००	४५०	३५०
१५. अखबारी कागज	टन	३०,०००	४,२००	६०,०००	६०,०००
१६. नकली रेशम :—					
(अ) नकली रेशम फिलासेंट (धागा)	लाख पौंड	२२०	१५०	६८०	६८०
(आ) पक्का धागा (स्पेशल फ़ाइबर	,,	१६०	१३२	३२०	३२०
(इ) रासायनिक लुब्दी (केमिकल पल्प)	००० टन	—	—	३०.०	३०.०
१७. डिजल एंजिन (५० अश्व शक्ति से कम)	अश्व शक्ति	२,००,०००	१,००,०००	२,२०,०००	२,०५,०००
१८. बाईसिकल	००० संख्या	१७६०	५५०	★	★
१९. इलेक्ट्रिक मोटर (२०० अश्व शक्तिसे कम)	अ. शक्ति	२,६२,०००	२,४०,०००	६,००,०००	६,००,०००
२०. ए. सी. एस. आर. कन्डक्टर	टन	१५,३७०	६,०००	२०,४००	१८,०००

इस तालिका के अध्ययन से निम्न निष्कर्ष निकलते हैं :—

(१) हाथ कर्घे और शक्ति कर्घे द्वारा उत्पादित कपड़े; खाद; लोहा और स्पात; इंजीनियरिंग सामान; कोयला तथा अल्युमिनियम के उत्पादनमें सबसे अधिक वृद्धि होगी। (२) बाईसिकलों, सीनें की मशीनों, बिजली आदि के उत्पादन में वृद्धि मध्यम रूप से होगी। (३) मीलों द्वारा उत्पादित सूती कपड़े, चीनी, जूते, वनस्पति तेल और साबुन के उत्पादन में अपेक्षाकृत कम वृद्धि होगी।

❁ पूरे उत्पादन का सूचक। उत्पादन की बहुत सी मात्रा दूसरे पदार्थों के उत्पादन में खप जायगी, इस कारण बिक्री के लिए केवल १,८५,००० सोडा एश और १,०६,६०० टन कास्टिक सोडा प्राप्त हो सकेगा।

★ २,५०,००० साइकिलों का उत्पादन विकेन्द्रित क्षेत्रमें होगा, ताकि कुल उत्पादन १२,५०,००० हो सके !

यात्रा के शिष्टाचार

- ईश्वर भक्ति के बाद सफाई का स्थान पहला है। हमें सफाई की आदत पैदा करनी चाहिए। गाड़ियों में प्लेटफार्म पर भोजन के टुकड़े या फलों के छिलके न फेंककर हम दूसरों की सहायता कर सकते हैं। इन चीजों को कूड़े करकट के डब्बों में डालना चाहिए।

- प्लेटफार्म पर जहां तहां थूकना अस्वास्थ्यकारक है। यह अशिष्ट व्यवहार भी है। हमें थूकदानी का प्रयोग करना चाहिए।

- हमें शीतल और छाना हुआ पीने का पानी दूसरे कार्यों के लिए नहीं बरतना चाहिए।

- सीट पर पैर रख कर नहीं बैठना चाहिए। डब्बे में बैठे हुए दूसरे लोगों को इससे तकलीफ होती है। यह शिष्टाचार भी नहीं है।

- अपने भारी सामान को ब्रेक वैन में बुक करने से हमें तथा और सह-यात्रियों को डब्बे में अधिक स्थान मिल जायगा।

- अपने सहयात्रियों के कहने पर भी गाड़ी में तमाखू पीना एक अपराध है। दूसरों के कहने पर अथवा भीड़ और दरवाजे या खिड़कियां बन्द होने पर हमें तमाखू नहीं पीना चाहिए।

- रेलवे राष्ट्र की सम्पत्ति है। हम रेलवे सम्पत्ति को नुकसान पहुंचाने या उसे उड़ाने वालों को पकड़वा कर इसके बचाने में सहायक हो सकते हैं। ऐसे आदमियों को वर्दी वाले रेलवे कर्मचारियों के हवाले कर देना चाहिए या उन्हें उनका पता बता देना चाहिए। खतरे की जंजीर को बिना आवश्यकता के खींचने वाले अ-सामाजिक तत्वों के साथ भी यही व्यवहार करना चाहिए।

पश्चिमी रेलवे द्वारा प्रचारित

एक दूसरा पहलू—

भारत में कृषि-सुधारों का औचित्य ?

श्री सुमन्त एस० वंकेश्वर

भारत जैसे कृषि प्रधान देश में ग्राम-विकास की जो योजनाएं चल रही हैं, वे हमें पागल तुगलक की याद दिलाती हैं। तुगलक की तरह हमारे शासक बिना परिणाम की चिन्ता किये प्रत्येक पुरानी चीज को समाप्त करके नई चीज खड़ी करना चाहते हैं।

भूमि सुधार की बीमारी

कम्यूनिज़्म की आंधी से बचने के लिये कांग्रेस सरकार एक के बाद एक भूमि-सुधार की योजनाएं बनाती हुई जमीन आसमान एक कर रही है। सरकार को न कृषि तथा कृषकों के कल्याण की रत्ती भर चिन्ता है और न इस सम्बन्ध में कुछ व्यावहारिक ज्ञान है। उसे तो कम्यूनिस्ट हव्वे से बचाने के लिए कुछ न कुछ करना चाहिए, भले ही उसके परिणाम कुछ भी हों।

किसी भी भूमि सुधार के परिणाम नीचे लिखे होने चाहिए—

(१) प्रति एकड़ उत्पादन में वृद्धि हो।
(२) सामाजिक न्याय की प्राप्ति हो।
(३) आसामियों को भूमि पर पट्टे की स्थिरता तथा तथा कुछ शर्तों पर अधिकार प्राप्त हो।
(४) भूमि के स्वामित्व-क्षेत्र की अधिकतम सीमा नियत हो।
(५) लगान उचित से अधिक न हो।
(६) सरकार जो जमीन जमींदार से अपने हाथ में ले उसका नियत मूल्य उसे दिया जाय।

लेकिन सरकार द्वारा आधे दिल से किये गये भूमि-सुधारों, उनमें निरन्तर होने वाले परिवर्तनों, परिणामों की अनिश्चितता तथा पुराने कृषि सम्बन्धों की समाप्ति आदि के कारण गत दो वर्षों से कृषि-उत्पादन को काफी नुक्सान पहुँचा है। भूमि सुधार के परिणाम खटाई में पड़ गये हैं और सभी को यह संदेह हो गया है कि सरकार कुछ करना भी चाहती है या नहीं और करना चाहती है तो उसके निश्चित अर्थ क्या है, कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए न जमींदार ध्यान दे रहे हैं और न काश्तकार। भूमिहीन मजदूरों की आशाएं तो बढ़ा दी गई हैं, लेकिन वे पूर्ण नहीं हो पा रही हैं।

मुआवजा या छल ?

आज के अधिकांश जमीदारों ने या तो भारी कीमतें देकर जमीन खरीदी हैं या अपनी सारी कमाई लगाकर अथवा ऋण लेकर परिश्रम करके अपनी जमीन को उपजाऊ बनाया है। ऐसी अवस्था में एक साथ नगद पैसे के रूप में उचित मुआवजा या दूसरी आजीविका दिये बिना उनसे जमीन छीनकर उन्हें उजाड़ देना अन्याय है।

उचित तथा न्यायपूर्ण मुआवजा देना हो तो जमीन के उपजाऊपन तथा जमीदारों की मेहनत को देखकर बाजार के दर पर उसका स्थिरीकरण होना चाहिए। ऐसे लोगों से, जिन्होंने मुफ्त ही जागीर तथा इनाम के रूप में भूमि प्राप्त की है, साधारण मुआवजा देकर जमीन ले लेना उचित ही है। लेकिन जिन्होंने बड़ी २ रकमें देकर जमीन खरीदी है, उन्हें साधारण मुआवजा देकर जमीन छीन लेना अन्याय है। जमीन छीनकर अगर सरकार बाजार के दर पर मुआवजा देने से इनकार करती है तो उसे ऐसा करने का कोई अधिकार नहीं है। सरकार के पास अगर पूंजी नहीं है, तो ऐसी भूमि सुधार-सम्बन्धी योजनाएँ बनाये क्यों ? ऐसे समय, जबकि द्वितीय योजना की पूर्ति के लिये ही सरकार के पास पैसा नहीं है—भूमि सुधार तथा उद्योगों के राष्ट्रीयकरण सम्बन्धी महंगे मामलों को छोड़ना क्या संगत है ? पाठक यह भली भांति जानते हैं कि बीमा कम्पनियों के शेयर होल्डरों से बाजार मूल्य पर उनके शेयर खरीदे गये और इम्पीरियल बैंक को भी बाजार दर से पूरा मुआवजा (५०० रु० के शेयर का १७५० रु०) दिया गया। जमीदारी उन्मूलन के लिए मुआवजे के रूप में दिये जाने वाले करोड़ों रुपये अगर बंजर जमीनों को कृषि योग्य बनाने तथा

द्वितीय योजना की पूर्ति के लिये आवश्यक उद्योगों के लिये खर्च किये जाते तो बहुत कुछ फायदा हो सकता था।

आकाश से गिरा खजूर पर अटका

सरकार को चाहिये कि प्रति एकड़ उत्पादन बढ़ाकर खाद्य की कमी को पूरा करे। लाखों एकड़ बंजर भूमि को कृषि योग्य बनाने तथा उसको भूमिहीनों में बांटने के बजाय सरकार ऐसी जमीन को छीनकर बांटने की कोशिश कर रही है, जो पहले से ही कृषि योग्य एवं उपजाऊ है। इससे भूमि हीनों की समस्या सुलझाने की बात तो दूर रही भूमि सुधार की चेष्टाओं से नई समस्याएं उत्पन्न होंगी, तथा बेरोजगारी और अधिक बढ़ जायगी।

लाखों भूमिहीनों को नई जमीन अलाट करने के बाद उन्हें कृषि बीज, बैल, तथा अन्य कृषि साधन खरीदने के लिये पैसा भी देना होगा, जो समृद्ध साधन-सम्पन्न सरकार की शक्ति से भी बाहर है।

भारत में यह परिपाटी है कि लोग रिटायर होने के बाद अपनी सारी कमाई जमीन पर लगा देते हैं। अगर बद-किस्मती से भूमि-सुधार अमल में आ जायंगे तो कोई भी आदमी जमीन या कृषि पर पैसा लगाने की चेष्टा नहीं करेगा, क्योंकि पैसा लगाना ही है तो शहरों में उद्योग-धंधों पर भी लगा सकते हैं। परिणाम क्या होगा? जमीन के छोटे-छोटे हिस्से ऐसे किसानों के हाथ में आ जावेंगे, जिनका परिवार बड़ा है, परन्तु जो अनुभव एवं साधन शून्य हैं। इस कारण कृषि-उत्पादन और भी गिर जायगा।

सरकार की कृषि नीति से समाज का प्रत्येक वर्ग नुक्सान में रहेगा, तथा गरीब एवं मध्य वर्ग के भूमिधर जो अपना निर्वाह जमीन से ही करते हैं या तो जीविका से वंचित हो जायंगे या विवश होकर शहरों में जाकर जीविका के कोई अन्य साधन ढूंढेंगे। ऐसी अवस्था में कृषि ऐसे लोगों के हाथ में रहेगी, जो अनपढ, अनुभव शून्य, गरीब तथा साधन रहित हैं। संगठित कृषि पद्धति को छोटे-छोटे पैमाने पर बांट देने से न केवल कृषि भूमि बरबाद हो जायगी, बल्कि उत्पादन में भी भारी कमी हो जायगी।

कम्यूनिस्ट जर्मनी में २५० एकड़

धनी तथा गरीबों के मध्य आर्थिक असमानता को दूर करना है तो यह सिद्धान्त समाज के सभी वर्गों पर लागू होना चाहिए। अपनी जमीन अपने परिवार के सं[illegible] अथवा सम्बन्धियों में बांटने पर तो प्रतिबन्ध है, [illegible] उद्योगपतियों पर ऐसा कोई प्रतिबन्ध नहीं है। यह [illegible] विचित्र बात है।

भूमिहीनों की जमीन की भूख मात्र को मिटाने के लि[illegible] जमीन की अधिकतम सीमा पर प्रतिबन्ध लगाना उतना [illegible] तर्कहीन है, जितना पैसे के लिए दौड़ धूप करने वालों [illegible] बांटने के लिए सब पैसे वालों से पैसा छीन लेना।

अगर प्रत्येक किसान अपनी आवश्यक चीजों को [illegible] पैदा करता है, तो शहरी जनता भूखों मरेगी। जमीन [illegible] न्यूनतम मात्रा निश्चित करने से उत्पादन में कमी [illegible] जायगी, जिससे द्वितीय योजना की सफलता असम्भव [illegible] जायगी। जमीन को टुकड़े करके भूमिहीनों में बाँट[illegible] मात्र से समस्या हल नहीं होगी। इससे उनकी तृष्णा [illegible] बढ़ेगी, जिसकी पूर्ति कभी नहीं हो सकेगी। कम्युनिस्[illegible] द्वारा शासित पूर्वी जर्मनी तक में न्यूनतम सीमा २[illegible] एकड़ नियत की गई।

उचित लगान तथा पट्टों की स्थिरता

लगान की मात्रा जमीन पर लगाई पूंजी [illegible] ब्याज की दर बाजार दर के अनुसार निश्चित हो[illegible] चाहिए। लगान की कम दर नियत करने से लोग काश्त-कारों को पट्टे पर जमीन देने में संकोच करेंगे [illegible] बेदखली की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिलेगा।

ऐसे समय, जबकि सरकार बेरोजगारी दूर करने, ब[illegible] हुए मूल्यों को रोकने तथा खाद्य समस्या को सुलझाने [illegible] व्यस्त है, समर्थ एवं साधन-सम्पन्न भूमिधरों से उन[illegible] छीनकर भूमिहीनों में बांटने की चेष्टा करना अव्यावहारिक है। सरकार का प्रधान कर्तव्य तो यह है कि वह जमीन [illegible] लगान निश्चित करे तथा पट्टे की स्थिरता का आश्वा[illegible] दे। मुआवजे पर खर्च करने की बजाय बंजर भूमि [illegible] कृषि योग्य बनाने में करोड़ों रुपया खर्च किया जाय [illegible] सबका कल्याण होगा।

वैयक्तिक कृषि पद्धति के लिये मशीन आदि का [illegible]योग मिलना चाहिये ताकि किसान थोड़े से कर्मचारियों [illegible] सहायता से अच्छी आमदनी प्राप्त कर सके। सहकारि[illegible]

(शेष पृष्ठ ३८६ पर)

ग्रामोद्योगों के विकास की पांच अंगुलियाँ

— विनोबा

ग्रामोद्योग में करण प्रधान

दुनिया में जितने उत्पादन के काम होते हैं, पांच अंगुलियों से होते हैं और ग्रामोद्योग के काम में तो पांच अंगुलियां ही प्रधान होती हैं। उनकी मदद के लिए कुछ-न-कुछ उपकरण आते हैं, लेकिन वे उपकरण के नाते हैं। करण और उपकरण का यही विवेक ग्रामोद्योग और यंत्रोद्योग का विवेक है। ग्रामोद्योग में करण प्रधान होते हैं और उपकरण गौण ; आंख प्रधान होती है और चश्मा गौण ! हाथ प्रधान होते हैं और औजार गौण ! पांव प्रधान होते हैं और साइकिल गौण। जब उपकरण प्रधान हो जाता है, तो वह यंत्र कहलाता है। इन दिनों, खासकर इस वैज्ञानिक युग में, कुछ काम यांत्रिक तौर पर होना अनिवार्य है। उपकरण प्रधान हो जायं, तो भी करण के बिना नहीं चलेगा। जहां दूर के नक्षत्र देखने होते हैं, वहां दूरबीन प्रधान होती है। लेकिन फिर भी आंखोंसे अधिक योग्यता उसकी नहीं हो सकती है। आंख न हो, तो दूरबीन काम नहीं कर सकती है। इसलिए यद्यपि उपकरणका महत्त्व है, फिर भी वे करणों की मदद ही करते हैं।

सर्वोदय की विशेषता

इतने बड़े विशाल देश में हम यह आग्रह नहीं कर सकते हैं कि हर एक काम ग्रामोद्योगसे हो या यंत्रोद्योगसे ही हो। इस देशमें कुछ काम ग्रामोद्योग से होना लाजिमी है, पर कुछ काम यंत्रों द्वारा भी करने होंगे। व्यवहारमें इस प्रकार का विवेक करना होगा। ग्रामोद्योग और यंत्रोद्योग दोनों को अलग-अलग प्रदेश बांट दे सकते हैं। इतना क्षेत्र ग्रामोद्योगके लिए खुला रहे और इतना क्षेत्र यंत्रोद्योग के लिए खुला हो और कुछ क्षेत्र दोनों में चलें, परन्तु स्पर्द्धा न हो। इस प्रकार क्षेत्रों का विभाजन करना हिन्दुस्तान जैसे देश में आवश्यक है। इसके बिना इस विज्ञान युग में न तो हम आगे बढ़ सकते हैं और न अच्छा उत्पादन और वितरण ही कर सकते हैं। उसके बिना बेकारी भी नहीं हटा सकते हैं। सर्वोदय-विचार की यह बहुत बड़ी जीत है कि यह विचार भिन्न-भिन्न अर्थशास्त्रज्ञों को नजदीक लाया और सबको एक प्लैटफार्म पर लाकर खड़ा कर दिया। अब इस देश में आर्थिक मामलों पर बहुत ज्यादा विवाद नहीं रहा। कांग्रेस, पी. एस. पी. और कम्युनिस्ट पार्टी समाजवाद की बात कहती है। देश में ये ही तीन पार्टियां हैं, जो अर्थशास्त्र के बारे में चिंतन करती हैं। सर्वोदय-विचार जीवन विचार होने के नाते अर्थशास्त्र और समाजशास्त्र पर सोचता है; विशेषतया लोक-जीवन की दृष्टि से सोचता है।

शोधक वर्ग

ग्रामोद्योगों में पांच अंगुलियों का महत्व है। इसमें पहली अंगुली है शोधक वर्ग। अगर शोधक वर्ग खड़ा न हो, ग्रामोद्योग नहीं बढ़ सकते हैं। चरखा, तुनाई धुनाई, अम्बर-चरखा आदि के अनेक शोध हुए। शोध की यह प्रक्रिया चल रही है। इनसे देशको एक बड़ी चेतना मिली; जिसके कारण शोधक वर्ग बरसोंसे ग्रामोद्योगों में बारीकी से शोध-कार्य कर रहा है। यह शोधक वर्ग बढ़ना चाहिये, उसकी बुद्धि में तेजस्विता आनी चाहिये और परिस्थिति देख कर कौन-से शोध करने चाहिये, इसके बारे में उसे सोचना होगा।

सेवक वर्ग

दूसरी अंगुली है सेवक वर्ग। अपने देश में ४० साल से सेवक वर्ग कुछ-न-कुछ सेवा करता आया है, परन्तु यह सेवा अपर्याप्त है। ४० करोड़ लोगों के लिए मुट्ठी भर सेवक पर्याप्त नहीं हैं, कम-से-कम हर ४००० व्यक्तियों के पीछे १ सेवक चाहिये याने देश से एक लाख सेवकों की मांग मैंने की है। यह छोटी सी मांग है।

देश में एक ऐसा सेवक वर्ग हो, जिसके हृदय में करुणा भरी हो। उन सेवकों को अपने जीवन-निर्वाह के

लिए थोड़ा-सा मिलेगा। जब तक हम देश की जनता का जीवन-स्तर ऊंचा उठाने में सफल नहीं होते हैं, तब तक हमारे सेवकों को एकादशी और द्वादशी के बीच में रहना होगा।

विचार-प्रचारक

तीसरी अंगुली है विचार-प्रचारक। खादी और ग्रामोद्योगों में एक विचार है। खादी कोई ऐसी चीज नहीं है कि वह देशमें लिप्टन की चाय या बीड़ी की तरह तेजी से बढ़े। अगर उसके पीछे विचार-प्रचार हो, तो खादी उससे भी अधिक तीव्र गति से फैल सकती है। खादीके मूल में अहिंसा है। अगर देश यह महसूस करे कि देश को 'मिलिटरी' (सैनिक) ढंग से बनाना है, तो युद्ध वाले धंधे बढ़ेंगे और ग्रामोद्योग यह बात नहीं है। उसमें शांति है। अगर देश और दुनिया युद्ध से ज्यादा शांति की योग्यता महसूस करें, तो वे खादी और ग्रामोद्योगों को पसंद करेगी। मैंने उसे 'डिफेन्स मेजर' (सुरक्षा का साधन) भी कहा। हिन्दुस्तान को युद्धों से बचाना और युद्धों की हालत में भी गांवों को बचाना हो, तो ग्रामोद्योग अत्यन्त आवश्यक हैं, अन्यथा देश बच नहीं सकता है। इसलिए हमें विचार-प्रचारकों की एक बड़ी सेना चाहिये।

शासन-सत्ता

चौथी अंगुली है शासन-सत्ता या सरकार। खादी-ग्रामोद्योग के काम में यह अंगुली ठीकसे काम करे, यह हम चाहते हैं। हिन्दुस्तान के आयोजन में पहले खादी-ग्रामोद्योग के बारे में जो हिचकिचाहट थी, वह अब कम हो रही है, यह कहने में मुझे खुशी हो रही है। यद्यपि विचारों की पूरी सफाई नहीं हुई है, फिर भी कुछ सफाई हुई है। इसलिए यह अंगुली कुछ-न-कुछ काम कर रही है, कुछ-न-कुछ मदद दे रही है।

जनता और उसका कर्तव्य

पाँचवी अँगुली है जनता। यह सबसे अधिक महत्व की अँगुली है। जनता को इस काम के लिए तैयार करना होगा। सात साल से हमारा यही काम चल रहा है। यह ठीक नहीं है कि खादी गाँव में बने और बम्बई-कलकत्ता जैसे शहरों में बिके। इसमें कोई शक नहीं कि शहरों का कर्तव्य है कि वे खादी खरीदें, क्योंकि उन्होंने गाँव से जो भर-भर कर पाया है, उसमें से कुछ तो वे लौटा सकें, परन्तु उतना काफी नहीं है। खादी जहाँ बनती है, वहीं खपनी चाहिये। खादी को जनता के संकल्प का संरक्षण मिलना चाहिये, कोई भी उद्योग बिना संरक्षण के दुनिया में कहीं भी नहीं बढ़ा है। या तो वह कानूनी संरक्षण होता है या उसके पीछे लोक-सम्मति होती है। दोनों हों तो अच्छा ही है। लेकिन खादी-ग्रामोद्योग के पीछे लोक-सम्मति होनी ही चाहिये। इसीका नाम है ग्रामदान, जो कि बुनियादी काम है।

ग्रामीणेतर माल का बहिष्कार

ग्रामदान में ग्राम-संकल्प होता है कि अपने गाँव का ज्यादा से ज्यादा आयोजन और नियोजन हम ही करने वाले हैं। फिर सरकार को जो मदद देनी हो, वह दे सकती है। इस तरह संकल्पपूर्वक काम होगा, तब ग्राम-स्वराज्य स्थापित हो सकेगा। इसलिए खादी-ग्रामोद्योग को ग्राम-स्वराज्य का अंग मान कर ही काम करना होगा।

जिस तरह देश के स्वराज्य के लिए हमने विदेशी माल का बहिष्कार किया था और स्वदेशी को उत्तेजन दिया था, उसी तरह ग्राम-स्वराज्य के लिए यह आवश्यकहै कि गाँव में जो कच्चा माल पैदा होता है और जिसका पक्का माल गाँव में बन सकता है, वह गाँव में ही बने। गाँववाले बाहर का माल अपने देश का होने पर भी न खरीदें और ग्रामीणेतर माल का बहिष्कार करें। गाँव के आयात और निर्यात का पूरा नियंत्रण करने का अधिकार गाँव को होना चाहिये, कम से कम ग्रामदानी गाँवों को तो होना ही चाहिये।

ये पाँच अँगुलिया मिलकर काम करेंगी, तो हिन्दुस्तान का उद्धार होगा।

सम्पत्ति दान

बम्बई और मद्रास इन दोनों महानगरों में सम्पत्ति दान का कुछ काम हुआ है। ३०-४० लाख की आबादी में ३०-४० नवयुवक पागल बने घूम रहे हैं। न उनके सोने का कोई ठिकाना है, न भोजन का। फिर भी वे जी जान से काम में जुटे हैं। शहर में ग्राम-परिवार का भी प्रयोग चल रहा है। बम्बई के १४० परिवारों ने, जिसमें हिन्दू, मुसलिम,

सिख, पारसी सभी हैं, दरिद्र भी हैं, धनवान भी, मिल कर एक संयुक्त परिवार बना लिया है। उनका संकल्प है कि हमारे इस परिवार का एक भी बच्चा बिना पढ़े न रहेगा, सबके आरोग्य की भी हमारी संयुक्त जिम्मेदारी रहेगी। मद्रास के गोपालभाई और महेश कोठारी, बंगलोर में ग्रूम साहब सम्पत्तिदान का अच्छा काम कर रहे हैं। विचार-प्रचार की दृष्टि से उत्तर प्रदेश में बहुत अच्छा काम हुआ है। वहाँ का कोई भी कालेज ऐसा नहीं है, जिसमें सर्वोदय का विचार न पहुँचा हो। शहरों में दो प्रकार से काम चलता है—विचार-प्रचार और सम्पत्तिदान। मजदूरों का संगठन भी इसका एक पहलू है। बम्बई में इस दिशा में कुछ काम हुआ है। शहरों में आंशिक समय दान देने वाले कार्यकर्ता हमें मिल जाते हैं। दादा कहते हैं कि 'फुर्सत का पूरा समय लोग दे दें, तो भी क्रान्ति हो सकती है।' सम्पत्तिदान के आंकड़े कम भले ही लगें, पर हम सबका अनुभव है कि जनता भूरि-भूरि दान देने को तत्पर है, हमारे ही हाथ छोटे पड़ गये हैं।

सर्वोदयपात्र

यह पात्र तो द्रौपदी का अक्षय पात्र बन जाना चाहिए। हर माता के हृदय तक पहुँचने का, हिंसा से डगमगाती दुनिया को बचाने का, यह एक स्नेह का अहिंसक साधन हमारे हाथ लगा है। देश में सर्वत्र उसका स्वीकार हो रहा है। कर्नाटक की बहनें इसे अत्यन्त पवित्र मान कर इसको पूजा करती हैं और तब भोजन करती हैं। एक बार एक बच्ची रूठी और साम-दान-दंड भेद सभी अस्त्र बेकार हुए, तो माँ ने कहा—'जा, आज 'आजोबा पात्र' में तू अपने हाथ से मुट्ठी न डालने पायेगी!' बच्ची तुरन्त आयी और आँखों में आँसू भर कर बोली—'माफ करो माँ! तुम जैसा कहोगी, करूँगी।' इस अन्न का दाना-दाना घर-घर में क्रान्ति की ध्वनि पहुँचायेगा।

—राजम्मा

धान-कुटाई का उद्योग

भारत सरकार देश के स्वतन्त्र होने के बाद दस वर्ष और पंचवर्षीय योजना के निर्माणके बाद ७ वर्ष तक भी अपनी आर्थिक नीति का स्पष्ट रूप से निर्धारण नहीं कर पाई है। इसका मुख्य कारण सरकारी अधिकारियों की अस्थिरता है। अधिकांश बड़े अफसर अंग्रेजी वातावरण और शिक्षा से दीक्षित हैं। उनकी दृष्टि विदेशी संस्कृति और विचारधारा से प्रभावित होती है। म० गान्धी के चर्खा और सर्वोदय अर्थ-शास्त्रने उनके हृदय पर अधिकार नहीं किया। यद्यपि आज भी वे गान्धी जी के नाम पर नारा लगाते हैं और सर्वोदय और ग्रामोद्योग की चर्चा बहुत करते हैं किन्तु वस्तुतः उनका हृदय बड़ी मशीनरी और बड़े उद्योगोंका पक्षपात करता है और इसलिए बहुत से सर्वोदयवादी विचारक शासकों की ग्रामोद्योग-प्रोत्साहन की बातोंको अवास्तविक और प्रदर्शन मात्र समझते हैं। वे एक मुंह से ग्रामोद्योग की योजनाएं बनाते हैं, परन्तु उनकी वास्तविक सहानुभूति मिलोंके साथ रहती है।

इसका एक अच्छा उदाहरण श्री न० रा० मलकानी ने एक लेख में दिया है। बेकारी को दूर करने के लिए प्रथम पंचवर्षीय योजना में यह विचार किया गया था कि धान कुटाई का उद्योग आगे से ग्रामोद्योगके लिए सुरक्षित कर दिया जाय।

यह उद्योग रोजगार की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है। सन् १९५५-५६ में देश में २५ लाख टन धान पैदा हुआ था, जिसका दो तिहाई भाग ३० लाख आदमियों ने हाथ से कूटा है। हम इस लेखमें हाथ कूटे चावल की श्रेष्ठताकी चर्चा नहीं करना चाहते, यद्यपि स्वास्थ्य की दृष्टि से इसकी उपयोगिता कम नहीं है। परन्तु रोजगार देने की क्षमता और हाथ कूटने में चावल की कम बरबादी की दृष्टि से यह उद्योग विशेष महत्व रखता है। प्रथम पंच-वर्षीय योजना की रिपोर्ट के अनुसार एक कमेटी नियत की गई, जिसने १९५५ में अपनी रिपोर्ट दे दी। किन्तु तीन

(शेष पृष्ठ ३८६ पर)

राज्यों के लिए नए ऋण

१४ में से १० राज्यों की सरकारों ने बाजार से हाल ही में ऋण लिया है। जिन राज्यों ने ऋण नहीं लिया, वे आसाम, बिहार, पंजाब और काश्मीर हैं। सब राज्यों का ऋण ४७.५० करोड़ रुपया है। ८.५० करोड़ रुपया पुराने ऋण को तबदील करने में लगाया जायेगा, इसलिए बाजार से ३६ करोड़ रुपया निकलेगा। यह प्रायः निश्चित सा है कि सरकार को यह ऋण प्राप्त करने में विशेष कठिनता नहीं होगी। सभी राज्यों के ऋणों की अवधि १२ वर्ष की है। ब्याज दर भी सभी की ४.५ प्रतिशत है। ख्याल यह है कि स्टेट बैंक और जीवन बीमा निगम काफी मात्रा में ऋण देंगे। प्रावीडण्ट फण्ड निधियां भी इस ऋण में अपना रुपया लगायेंगी। भारत के परिगणित बैंक भी बहुत सम्भवतः इस काम में अपना रुपया लगायेंगे और इस तरह यह ऋण पूरे होने कठिन नहीं हैं।

यह ऋण प्रायः विकास-योजनाओं के लिए लिये गये हैं। इसका प्रयोग राज्य की सिंचाई, विद्युत उत्पादन, उद्योग तथा विकास की अन्य प्रवृत्तियों में किया जायेगा। सभी राज्यों ने इस ऋण के साथ अपने राज्य की आर्थिक स्थिति को बहुत दृढ़ बताने का प्रयत्न किया है।

राज्यों के नये ऋण

राशि	राज्य
१० करोड़	बम्बई
७ करोड़	उत्तर प्रदेश
५ करोड़	आन्ध्र, मद्रास और पश्चिमी बंगाल
३ करोड़	केरल और उड़ीसा
२.५ करोड़	राजस्थान
२ करोड़	मध्य प्रदेश

कुछ अन्तर्राष्ट्रीय तुलनाएं

नीचे की तालिका से ज्ञात होता है कि भारत सरकार की ऋण स्थिति अन्य देशों की तुलना में खराब है।

सन् १९५४ में चुने हुए देशोंका सार्वजनिक ऋण
(दस खरब राष्ट्रीय मुद्राओं में)

	ब्रिटेन	सं० रा० अमेरिका	जापान	भार
सार्वजनिक ऋण	२७	२७१	७७०	३०
राष्ट्रीय आय	१६	३००	६१३२	१
राष्ट्रीय आय के प्रतिशत के रूप में ऋण	१६९	९०	१३	३०
राजस्व	५	६५	३०७६	१
राजस्व के प्रतिशत के रूप में ऋण	५४०	४१७	२५	१०

जापान, ब्रिटेन और संयुक्त राष्ट्र अमेरिका संसार के बहुत ही विकसित देश हैं। किन्तु ऊपर दी गई तालिका से स्पष्ट है कि जापान ने अपना विकास बिना सार्वजनिक ऋण का बोझ बढ़ाये हुए किया है। दूसरी ओर भारत पर सार्वजनिक ऋण का बोझ लगभग ब्रिटेन के बराबर ही है, यद्यपि भौतिक सम्पन्नता में भारत उससे काफी पिछड़ा हुआ देश है। इस तरह इस बात का अंदाज भी लगाया जा सकता है कि यदि भारत को इसी तरह कर्ज के आधार पर ब्रिटेन और जापान के बराबर सम्पन्न बनाया जाय तो उस पर कितना बड़ा बोझ आ पड़ेगा।

भारत सरकार के ऋण

ऋण को मुख्यतः तीन बड़े वर्गों में विभक्त किया जा सकता है :—

(१) सैन्ट्रल बैंक से लिया जाने वाला ऋण।

(२) बैंक प्रणाली से लिया जाने वाला ऋण।

(३) दूसरी संस्थाओं व व्यक्तियों से लिया जाने वाला ऋण।

सैंट्रल बैंक से ऋण लेने का परिणाम मुद्रा-स्फीति होता है। बैंक प्रणाली इस मुद्रास्फीति को संग्रह करते हुए आगे बढ़ती है। बैंक-प्रणाली से ऋण लेने से मुद्रा

संकोच होता है। स्वेच्छा से दिये गये सार्वजनिक ऋण से न मुद्रा स्फीति का भय है और न मुद्रा-संकोच का। वह देश की अर्थ व्यवस्था में एक नई बचत का प्रादुर्भाव भले ही न करे, लेकिन बचत के मौजूदा प्रवाह के रुख को बदल सकता है।

भारत सरकार के रुपया ऋण के सम्बन्ध में कुछ महत्वपूर्ण अंक नीचे दिये जा रहे हैं :—

(करोड़ रुपये)

अवधि	रुपया ऋण	रिजर्व बैंक से ऋण	बैंक प्रणाली से ऋण	दूसरी संस्थाओं व व्यक्तियों ऋण
१९५१-५२	२४६०	५६७	३०३	१५९०
१९५६-५७	३५०५	१००६	३५९	२१४०
प्रतिशत वृद्धि	४२	७७	१८	३५

इन आंकड़ों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि सन् १९५१-५७ की अवधि में जहां रुपया ऋण ४२ प्र० श० बढ़ा, वहां रिजर्व बैंक के पास सरकारी सिक्योरिटियों में ७७ प्र० श० की वृद्धि भी हुई है। आंकड़ों से यह भी मालूम होता है कि इस अवधि में बैंक प्रणाली में मुश्किल से १८ प्रतिशत अतिरिक्त सरकारी सिक्योरिटियों की खपत हुई है। दूसरी संस्थाओं और व्यक्तियों द्वारा दिया गया ऋण भी सरकार के रुपया ऋण की वृद्धि के अनुपात से नहीं बढ़ सका। इसलिए योजना को वित्तीय सहायता देने का मुख्य भार भारतीय रिजर्व बैंक पर आ पड़ा है। लेकिन इस तरीके पर बड़े पैमाने पर भरोसा करना उचित नहीं है, क्योंकि इससे अवांछनीय ढंग की मुद्रास्फीति पैदा होती है। इसी तरह लम्बे पैमाने पर जनता से ऋण लेना भी अनुचित हो सकता है बशर्ते कि उससे निजी क्षेत्र के उस वित्त में कमी आती हो, जो उस क्षेत्र के विकास कार्यों की आर्थिक सहायता के लिए उपलब्ध हो सकता है।

— आ० समीक्षा से।

जीवन बीमा निगम की नई योजना

जीवन बीमा निगम की स्थापना के बाद निगम ने जिन प्रमुख कामों को अपने अधीन लिया, उनमें कर्मचारियों को काम-काज में पूर्ण शिक्षित बनाने की सुविधाएं प्रदान करना भी था। कर्मचारियों को फिर से विशेष शिक्षा देने के दो कारण हैं। प्रथम, काफी मात्रा में कर्मचारी २०० विभिन्न संस्थाओं से विभिन्न प्रकार के अनुभव प्राप्त कर आये थे। इन सबको एक अनुशासनपूर्ण वर्ग के रूप में एक सूत्र में लाना था। द्वितीय, कर्मचारियों को जीवन बीमा निगम की सेवा करने तथा विविध कामकाजों को चलाने के लिये सब प्रकार के साधनों से युक्त करना था।

निगम की प्रेस विज्ञप्ति के अनुसार शिक्षण कार्यक्रम ४०० ब्रांच अधिकारियों ६,००० फील्ड अधिकारियों एवं १,००,००० एजेन्टों के लिये निश्चित किया गया है।

निगम की विशेष समिति ने कर्मचारियों को (जिसमें ब्रांच मैनेजर व उप ब्रांच मैनेजर भी शामिल हैं) शिक्षा देने के लिये एक नियमावली तथा सूची तैयार की है, जिसका प्रकाशन जुलाई १९५८ तक हो जायेगा। कुछ समय के बाद एजेंटों के लिये शिक्षण सम्बन्धी सूची भी प्रकाशित होगी।

इसी प्रकार स्थायी केन्द्रों को बम्बई, कलकत्ता, मद्रास नई दिल्ली तथा कानपुर में रखने के सम्बन्ध में भी प्रयत्न किये जा रहे हैं।

अब से जीवन बीमा निगम की जितनी भी नियुक्तियां होंगी, इन केन्द्रों में नियमित शिक्षण पूरा करने के बाद ही होंगी। वर्तमान कर्मचारियों के लिये समय-समय पर नई-नई शिक्षा भी दी जायगी। धीरे-धीरे शिक्षण सुविधाएं केन्द्र तथा शाखाओं के आधार पर फैला दी जायंगी।

★

केरल में समुद्र के कटाव से गम्भीर स्तिति

केरल के विधि और व्यवस्था मन्त्री श्री वी० आर० कृष्ण अय्यर ने बताया है कि विपिन द्वीप में नराकाल से लेकर पालपुरम् तक के ६ मील लम्बे समुद्री किनारे के समुद्र द्वारा कटाव से एक गंभीर संकट उत्पन्न हो गया है। यह द्वीप कोचिन बन्दरगाह के उत्तरी मुहाने पर है और कटाव गत सप्ताह हुई गहरी वर्षा का परिणाम है। कई स्थानों में कटावों के द्वारा समुद्र का पानी टकराने से धान की खेती के योग्य बहुत दूर के क्षेत्रों में भूमि कट गयी है। लगभग ४०० फुट तक समुद्री किनारा कटकर समुद्र की निचली सतह तक पानी में चला गया है। एक सौ मछुआ परिवारों की झोपड़ियां समुद्र के पानी में डूब गयी है और बहुत से नारियल के वृक्ष बालू के नीचे दब गये हैं। विपिनका किनारा और कोचिन बन्दरगाह का दक्षिणी मुहाना समुद्र के कटाव से तभी रोका जा सकता है, जब वहां ग्रेनाइट के ढोकों से दीवार बनायी जाय। सम्प्रति बालू से भरे बोरों से कटाव को भरने की राय दी गई।

चाय का निर्यात

विदेशी मुद्रा के अर्जन की दृष्टिसे चाय हमारे लिए अत्यन्त मूल्यवान पदार्थ है, परन्तु १९५६-५७ में चाय का निर्यात ५१ करोड़ ६ लाख पौण्ड हुआ। यद्यपि यह मात्रा १९५४-५५ के निर्यातसे ५ करोड़ पौण्ड अधिक थी, तथापि इसके मूल्यके रूपमें हमें केवल १४५ करोड़ रुपया मिला। जो कि १९५४-५५ के मूल्यसे कुछ कम है। इसका मुख्य कारण विदेशोंमें चाय की कीमत का कम हो जाना है। १९५७-५८ के पहले ८ महीनों में जितनी चाय गई, उसे आधार मानते हुए, इस वर्ष में चाय से ११५.७ करोड़ रुपया मिलेगा। इस बात की कोई सम्भावना नहीं है निकट भविष्य में चाय का निर्यात बहुत बढ़ जायगा।

नया संघर्ष

विभिन्न देशोंके आर्थिक क्षेत्रों में एक नयी घटना हुई हैं। 'सम्पदा' के पाठकों को स्मरण होगा कि मिश्र को आस्वान बाँध बनानेके लिए अमेरिका और ब्रिटेन ने एक विपुल राशि ऋण के रूप में देनेका वचन दिया था। परन्तु ठीक समय पर उन्होंने इन्कार कर दिया। इसी घटना की पुनरावृत्ति पूर्वी यूरोप में हुई है। रूस ने यूगोस्लेविया को उसके विकास योजना के लिए एक राशि देने का वचन दिया था। अब यूगोस्लेविया से राजनैतिक मतभेद हो जाने के कारण रूस ने यह सहायता देने से इन्कार कर दिया है। यूगोस्लेविया ने इसके परिणामस्वरूप होने वाली क्षति पूर्ति के लिए रूस को ही उत्तरदायी मानने की घोषणा की है। देखें, इन दोनों देशों का यह आर्थिक संघर्ष क्या रूप धारण करता है।

विदेशी यात्री : आय का नया स्रोत

आजकल भारतवर्ष को विदेशी मुद्रा की बहुत कठिनाई हो रही है। इसको हल करने का एक साधन विदेशी यात्रियों को निमंत्रण देना है। १९५६ में अनुमान लगाया गया है कि विदेशी यात्रियों से भारत को १५.५४ करोड़ रुपये की आमदनी हुई। इस दिशा में यदि कुछ विशेष प्रयत्न किया जाय तो काफी राशि विदेशियों से कमाई जा सकती है।

६ करोड़ मन दूध की प्रति वर्ष कमी

सरकार ने गत पाँच छः वर्षों में मांस का उत्पादन बढ़ाने के लिए मांस बाजार रिपोर्ट प्रकाशित की है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में बारह करोड़ रुपये मछली और

राज्यों में सम्पदा स्वीकृत

सम्पदा को निम्नलिखित राज्यों के शिक्षा-विभागों ने अपने अपने राज्य के स्कूलों, कालेजों तथा सार्वजनिक वाचनालयों के लिए स्वीकृत किया है—

राज्य	परिपत्रक संख्या	दिनांक
(१) उत्तरप्रदेश	पुस्तक ५२५७	१२-१-५४
(२) बिहार	७३३/२पी/१/५३	२७-११-५३
(३) पंजाब	३२०६/५/२५/बी-५३-२६१४३	२३-७-५३
(४) मध्यप्रदेश		
(स्कूलों के लिए)	२ जी/वी	२-८-५२
(कालेजों के लिए)	३४२८ ३XVIII	२४-८-५२
(५) राजस्थान	३६८०/Edu II/५२	६-१२-५२
(६) मध्यभारत	३ : १५ : २ : ५२वी/२५६५	२४-३-५२

करोड़ रुपये मुर्गी के लिये रखे हैं। दिल्ली, बम्बई इत्यादि में बड़े-बड़े कसाईखाने खोलने के लिये करोड़ों रुपयों की योजना बनाई गई है। पर सरकारी अंकों के अनुसार इन्हीं वर्षों में ३२,४३,४६,८६४ मन दूध की कमी हुई, जिसका मूल्य होता है ६,४८,६६,९७,८८० रुपये।

सरकारी दूध बाजार रिपोर्ट के अनुसार १९५१ में वार्षिक प्रति गाय ४१३ पौंड, प्रति भैंस ११०१ पौंड और प्रति बकरी १३४ पौंड दूध होता था। १९५६ में सरकारी अंकोंके अनुसार वार्षिक प्रति गाय ३६१ पौंड, प्रति भैंस ९७० पौंड प्रति बकरी १२७ पौंड दूध रह गया। १९५१ और १९५६ में अंकों का हिसाब निम्नलिखित हैः—

सन्	नाम पशु	संख्या	कुल दूध पौंडों में	कुल दूध मनों में
१९५१	गाय	४६३३९०००× ४१३	=१९१३८००७०००	=२३२७०।५।।
	भैंस	२०९९२०००×११०१	=२३११२१९२०००	=२८०८७७३।।
	बकरी	९४१५४००× १३४	= १२६१६६३६००	= १५३३२७।।
				५२८९११६।।
१९५६	गाय	४६८४४०००×३६१	=१६९१०६८४०००	=२०५५११८।।
	भैंस	२१५४९०००×९७०	=२०९०२५३००००	=२५४०२२३।।
	बकरी	११३२५६००×१२७	= १४३८३५१२००	= १७४८११८।।
				४७७०१५६३२ मन

कुल कमी दूध—५१८९५९८३ मन×६$\frac{1}{4}$=३२४३४९८६४ मन ×२०) रु० =६४८६९७८८० रुपये।
१ जनवरी १९५२ से ३१ मार्च १९५८ तक ६$\frac{1}{4}$ वर्ष होते हैं। दूध की कीमत २०) रुपये प्रति मन है।

गोहत्या जारी रहने, गोचर भूमियों के टूटने, चारे, दाने की व्यवस्था ठीक न रखने के कारण दूध में कमी आई। दूध की कमी के कारण साधारण लोग विशेषकर लाखों बीमार बूढ़े, बच्चे दूध जैसी आवश्यक वस्तु से वंचित रह गये। दूध की कमी पर गम्भीरता से विचार करना चाहिए। दूध के मामले में संसार की किसी भी सरकार ने अपनी जनता के साथ इतनी बड़ी खेलवाड़ नहीं की, जितनी भारत सरकार ने की है।

—हरदेव सहाय

—

भारत और अमेरिका में सहयोग

पं० जवाहरलाल नेहरू ने हाल ही में एक वक्तव्य में विदेशों से भारी ऋण लेने की नीति का समर्थन किया है। अमेरिका इस दिशामें बहुत सहायता दे रहा है।

दोनों देशों में पांच नये करारों पर हस्ताक्षर किये गये हैं, जिनके अनुसार भारत को १०,८७,... डालर की सहायता मिलेगी। यह सहायता कृषि, शिक्षा और अनुसंधान के तथा कलकत्ते में उड़ान की सुविधाएं बढ़ाने, शिल्पिक शिक्षा का प्रबन्ध बढ़ाने तथा मध्य प्रदेश में खेती की मशीनों से काम लेने की शिक्षा देने के और भारत भूगर्भ विभाग के काम आयेगी।

कृषि शिक्षा और अनुसंधान के लिए जो सहायता मिलेगी, उसमें से ४ लाख ३० हजार डालर, अमेरिका के इलिनोय विश्वविद्यालय को कुछ अतिरिक्त सुविधाएं देने के लिए और ५ अन्य अमेरिकी विश्वविद्यालयों को ११ ... और कारीगरों को भारत भेजने के लिए तथा ११ भारतीयों को इन विश्वविद्यालयों में शिक्षा देने के लिए खर्च किया जाएगा। ३ लाख ६५ हजार डालर की पुस्तकें और प्रयोग-शालाओं तथा अनुसंधान में काम आने वाली सामग्री भारत के ४० कृषि तथा पशु-चिकित्सा कालेजों के लिए ...

जाएगा। १ लाख ८० हजार डालर, कलकत्ते के दमदम हवाई-अड्डे पर रडार यन्त्र लगाने और उनको चलाने के लिए इंजीनियर आदि रखने पर खर्च होगा।

भारत में शिल्पिक शिक्षा की सुविधाएं बढ़ाने के लिए कानपुर में एक विद्यालय खोला जाएगा, जिसके लिए शिल्प सहयोग मण्डल ने ८८,८०० डालर दिया है। अन्य भी अनेक योजनाओं के लिए सहायता दी गई है।

अमेरिका के बैंक से १५ करोड़ रु० का ऋण

भारत की विकास योजनाओं के लिए मशीनें आदि खरीदने के लिए १५ करोड़ डालर का ऋण देने के संबंध में १२ जून को भारत और अमेरिका की निर्यात-आयात बैंक के प्रतिनिधियों ने एक करार पर हस्ताक्षर किये। यह ऋण के प्रतिशत ब्याज की दर से १५ वर्ष के लिए दिया गया है। मूलधन की अदायगी १५ जनवरी, १९६४ से शुरू होगी। सभी माल अमेरिका से ही खरीदा जाएगा और वह अमेरिका के जहाजों में ही जाएगा। इस ऋण से जो भी मशीन आदि खरीदी जाएंगी, उनके लिए आर्डर अगले १२ महीनों में दे दिया जाएगा।

एक नये समझौते के अनुसार भारत को अमेरिकन राष्ट्रपति की एशियाई आर्थिक विकास निधि से २ करोड़ डालर मिलेंगे। यह रकम बहुमुखी योजना के लिये है, जिसके अंतर्गत राउरकेला क्षेत्र में लोहे की खानों को खुदाई की व्यवस्था होगी। सम्बलपुर से टीटलागढ़ तक रेलवे लाइन बनाई जायगी और जापान को कच्चे लोहे का निर्यात बढ़ाने के लिये विशाखपट्टनम् बन्दरगाह का परिवर्धन भी किया जाएगा।

इस बहुमुखी योजना पर अनुमानित व्यय करीब ६ करोड़ ६० लाख डालर होगा। भारत सरकार यह सब खर्च रुपये में ही करेगी। जापान सरकार भी अपने यहां से आवश्यक मशीनों की खरीद के लिए ८० लाख डालर तक की रकम की साख देने को तैयार हो गयी है। अमेरिकी सरकार ने भी इस योजना को सहायता के योग्य मान लिया है और विदेशी मुद्रा में खर्च करने के लिए राष्ट्रपति की एशियाई आर्थिक विकास निधि से २ करोड़ डालर देना स्वीकार किया है।

यह रकम ३॥ प्रतिशत वार्षिक सूद पर ऋण के रूप में मिलेगी और मिलने के ३ वर्ष बाद किश्तों में इस को चुकाना शुरू किया जायगा।

दिल्ली और वाशिंगटन में भारत और अमेरिका के विकास ऋण कोष में दो करार हुए हैं, जिन के अंतर्गत भारत को ७ करोड़ ५० लाख डालर ऋण मिलेगा। इस में से २ करोड़ ५० लाख डालर सड़क परिवहन की योजनाओं, ५० लाख डालर सीमेंट उद्योग और ५० लाख डालर पटसन उद्योग को बढ़ाने पर खर्च होगा। भारतीय रेलों के लिए ४ करोड़ डालर के ऋण के लिए करार हो गया है।

१२ जून १९५८ को आयात निर्यात बैंक से जो करार हुआ था उसके और इन दो करारों को मिला कर, १९५८ में अमेरिका से भारत को २२ करोड़ ५० लाख डालर मिलने की व्यवस्था हो गयी है।

पी० एल ४८० कार्यक्रम के अन्तर्गत, अमेरिका से भारत को ५ करोड़ ७० लाख डालर का अन्न आदि चीजें दिये जाने के बारे में भी एक करार हुआ है। इस प्रकार इस कार्यक्रम के अंतर्गत भारत को मिलने वाली सहायता ४२ करोड़ डालर तक पहुँच गई है। इसके अलावा भारत को ७ लाख टन गेहूँ मिला और मक्का भी मिलेगा। इन जिंसों की बिक्री से जो रुपया मिलेगा, उस में से ३ करोड़ ५० लाख डालर के बराबर तक रुपया भारत सरकार को उधार दिया जायगा, जिसे दोनों सरकारों की मर्जी से खर्च किया जाएगा। बाकी २ करोड़ २० लाख डालर अमेरिकी सरकार विभिन्न कामों पर खर्च करेगी, लेकिन इस बारे में भी भारत सरकार की सलाह ली जायगी।

—

खेती की उपासना

खेती के धंधे में मनुष्य का गुण विकास जितना होगा, उतना और किसी में भी नहीं होगा। यहां साक्षात् परमेश्वर का गुण सम्पर्क होता है। "नामदेव कीर्तन करी तिथि रे बा नाचे पाडुरंग" नामदेव के कीर्तन की यह विशेषता थी कि वहां—पाण्डुरंग (भगवान) नाचता था! परन्तु किसान के खेत में परमेश्वर सदा सर्वदा नाचता ही रहता है। इसलिए नामदेव के कीर्तन में गुण विकास की जैसी शक्ति थी, वह खेती में है। उसका लाभ हर एक को होना चाहिए।

—विनोबा

हम इस स्तम्भ में विभिन्न प्रश्नों पर पाठकों के दृष्टिकोण और सुझाव देना चाहते हैं। इससे पाठकों को देश के सामने उपस्थित होने वाले प्रश्नों पर तरह तरह के विचार पढ़ने को मिलेंगे। हमें आशा है कि 'सम्पदा' के पाठक इस स्तम्भ का उपयोग करेंगे।

—सम्पादक

हमारे नये बाट

एक व्यावहारिक सुझाव

भारत सरकार ने घोषणा कर दी है कि आगामी अक्तूबर से देश के प्रायः सब बड़े नगरों में माशा, तोला और सेर। मन आदि पुराने बाटों के अतिरिक्त, किलोग्राम आदि के नये बाट भी चलने लगेंगे। जून की 'सम्पदा' में श्री परमानन्द दोषी ने एक लेख लिख कर इन नये बाटों का विस्तृत परिचय दिया था। उस लेख में उन्होंने बतलाया था कि इन बाटों को किलोग्राम की वैज्ञानिक इकाई के आधार पर बनाया गया है और इनकी गणना दाशमिक प्रणाली के द्वारा की गई है।

परन्तु उनके लेखमें एक बड़ा दोष यह रह गया है कि उन्होंने इन नये बाटों का सम्बन्ध अपने देश में प्रचलित पुराने बाटों के साथ जोड़ कर नहीं दिखलाया। वह ऐसा बतला देते तो उनका लेख अधिक सुबोध हो जाता। वस्तुतः यह दोष श्री दोषी का इतना नहीं जितना हमारे शासकों का और हमारे संसद सदस्यों का है। उन सबने नए बाटों का कानून बनाते हुए अपने देश की परिस्थितियों का ध्यान कम रखा और पश्चिमी देशों का उन्होंने अनुकरण किया है। अच्छा होता यदि वे नये बाटों का कानून बनाते हुए भी अपनी भारतीय जनता की आवश्यकताओं का उसी प्रकार ध्यान रखते जिस प्रकार कि उन्होंने रुपये को १०० नये पैसों में बांटने का कानून बनाते समय रखा था। रुपए के सौवें भाग का नाम नया पैसा केवल इस कारण रखा गया था कि रुपये को ६४ भागों अर्थात ६४ पैसों में बांटकर अपना समस्त व्यवहार करने वाली जनता सुगमता से समझ सकेगी और अपना सकेगी।

नये बाटों का कानून बनाते हुए भी सरकार सु[illegible] से ऐसा कर सकती थी। उसे चाहिए था कि वह नये के किलोग्राम और सेण्टीग्राम आदि के पश्चिमी नाम रखकर, नये पैसे की भांति, उनके नाम नया सेर, पाव, नया छटांक आदि रखती। ऐसा करना विशेष [illegible] भी नहीं था। यहां हम अपने सुझाव को कुछ स्प[illegible] दिखलाते हैं।

नये बाटों की प्रधान इकाई किलोग्राम है, जि[illegible] शब्दार्थ एक हजार ग्राम होता है। यह किलोग्राम एक सेर के प्रायः बराबर होता है। हम अपने सेर को ८० तोलों अथवा ९६० माशों में विभक्त करते हैं। अब हमारी सरकार और हमारे संसद-सदस्य, नये सेर का वजन पूरे एक किलोग्राम के समान नियत करके, उसके ९६० के स्थान पर १००० कर देते और उसका नाम [illegible] के स्थान पर नया माशा रख देते तो नये और पुराने के वजन में तो अधिक अन्तर पड़ता नहीं और हमारे [illegible] की जनता उन्हें अधिक सुगमता से समझ सकती [illegible] अपना लेती। निम्न तालिका में हम पुराने बाटों के साथ 'नया' विशेषण जोड़कर उनकी तुलना [illegible] पुराने भारतीय और पश्चिमी दाशमिक बाटों के साथ दिखलाते हैं।

१ नया माशा = १ ग्राम

१० नये माशे = १ नया तोला = १ डेका ग्राम (१ पुराना तोला = १२ पुराने माशे)

१० नये तोले = १ नया छटांक = १ हेक्टोग्राम (१ पुराना छटांक = ५ पुराने तोले)

१० नये छटांक = १ नया सेर = १ किलोग्राम (१ पुराना सेर = १६ छटांक = ८० तोले = ९६० माशे)

इस तालिका के अनुसार पुराने मन और नये मन के वजन में तथा पुराने सेर और नये सेर के वजन में विशेष अन्तर नहीं पड़ेगा। नया तोला भी पुराने तोले से थोड़ा ही हल्का होगा। हां नया छटांक का वजन पुराने छटांक से अवश्य बहुत अधिक हो जायगा। इसका एक हल यह हो सकता है कि नये बाटों में छटांक का बाट रखा ही न जाय। नये सेर के बाद नया पाव रखा जाय और वह २५ नए तोलों अथवा २५० नये माशों का हो। ऐसा करने पर नया छटांक ५ नये तोलों का बन सकता है, परन्तु उसका आधार पूर्ण दाशमिक प्रणाली नहीं रहेगा।

सोना चांदी आदि के सूक्ष्म तोल के लिए, नये माशे को एक ग्राम के समान रखकर उसके खण्ड निम्न प्रकार किये जा सकते हैं।

१ नया माशा = १ ग्राम = १० नयी रत्तियां

१ नयी रत्ती = १ देसी ग्राम = १० नये चावल

१ नया चावल = १ सेण्टीग्राम = १० नये खस खस

इसी प्रकार भारी वजन करने में नये मन को ४० पुराने सेर के स्थान पर ५० नये सेर का माना जा सकता है, जो कि ५० किलोग्राम के ठीक बराबर होगा।

भारत सरकार चाहे तो हमारे सुझाए हुए नामों को अब भी एक आर्डीनैन्स निकालकर प्रचलित कर सकती है और नये बाटों पर इन नामों की छाप लगवा सकती है। इस सुझाव को अपनाने से हमारे नये बाटों का आधार तो दाशमिक प्रणाली हो जायगी और उनका वजन वैज्ञानिक बाटों के सर्वथा समान हो जायगा। भारतीय जनता उन्हें सुगमता से अपना भी सकेगी। आगे चलकर नाप और लम्बाई के लिए भी कुछ ऐसे ही नाप अपनाये जा सकेंगे।

— रामगोपाल

★

वस्त्रोद्योग और मिल मालिक

आपने 'सम्पदा' में वस्त्रोद्योग के सम्बन्ध में समय-समय पर विचार प्रकट किये हैं और सूती मिलोंमें जमा हो जाने वाले भारी गोदामों की चर्चा की है। किन्तु क्या आप जानते हैं कि इसमें सूती मिलों का भी कम कसूर नहीं है। मिलों ने उत्पादन-कर से बचने के लिए फाइन और सुपर-फाइन कपड़ा कम तैयार करना शुरू किया है और मोटा कपड़ा ज्यादा से ज्यादा तैयार करना शुरू कर दिया है, क्योंकि इस कपड़े पर कम चुंगी देनी पड़ती है। निम्नलिखित तालिका से यह स्पष्ट हो जायगा कि १९५६ की बजाय १९५७ में मोटे कपड़े की पैदावार १५० प्रतिशत हो गई, जब कि दूसरे कपड़े काफी कम पैदा हुए।

विभिन्न कपड़ों का उत्पादन

वर्ष	मोटा	मध्यम	फाइन	सुपर फाइन	कुल
१९५६	५९८८७	३१६३८४	३७००३	२८९४७	४४२२१५
१९५७	९६९७६	२९१९०९	३१४२३	२२३१०	४४३११८

यदि मिल-मालिक मोटे कपड़े की बजाय महीन कपड़ा अधिक बनाते तो उसका निर्यात भी ज्यादा होता और मोटे कपड़ों से मिलों के गोदाम भी भरे न रहते।

—देवदत्त

हिन्दू श्रम सिद्धान्त

[पृष्ठ ३६२ का शेष]

'सेवां बिना नृपः पत्रं दद्याद् भृत्याय वत्सरे ।'

रोगकालीन सहायता

'पादहीनां भृतिं त्वार्ते दद्यात् त्रैमासिकीं ततः ।
पंचवत्सर भृत्ये तु न्यूनाधिक्यं यथा तथा ॥
षाण्मासिकी तु दीर्घार्ते तदूर्ध्वं न च कल्पयेत् ।
नैव पक्षार्धमार्तस्य हातव्याल्पापि वै भृतिः ॥
शश्वत्सदोषितस्यापि ग्राह्यः प्रतिनिश्चितस्ततः ।
सुमहद्गुणिनं त्वार्तं भृत्यर्धं ? कल्पयेत् सदा ॥'

दीर्घकालीन बीमारी के अवसर पर, अगर कर्मचारी ५ साल से अधिक समय से काम कर रहा हो तो उसे तीन महीने तक अपने वेतन से तीन चौथाई हिस्सा लेने का पूर्ण अधिकार है । लेकिन छः महीने की अवधि बीत जाने पर रोगकालीन सहायता देने की कोई आवश्यकता नहीं है ।

अगर कर्मचारी सिर्फ एक हफ्ते के लिए बीमार पड़ता है तो उसके वेतन में किसी प्रकार की कटौती नहीं होनी चाहिए । जो कर्मचारी हमेशा ही बीमार रहता है उसके स्थान पर उसी के मनोनीत व्यक्ति को नियुक्त करना चाहिये । निपुण एवं चतुर कर्मचारियों को बीमारी की अवस्था में आधा वेतन मिलना चाहिए ।

भविष्य निधि नियम

(Provident fund in principle)

'षष्ठांशं वा चतुर्थांशं भृतेर्भृत्यस्य पालयेत् ।
दद्यात्तदर्धं भृत्याय द्वि त्रि वर्षेऽखिलं तु वा ॥

कर्मचारी के वेतन में से छठा अथवा चौथा हिस्सा कटौती करके दो या तीन साल के बाद आधी या पूरी रकम लौटा देनी चाहिए ।

सेवा वृत्ति तथा परिवार भत्ता

'चत्वारिंशत् समा नीताः सेवया येन वै नृपः ।
ततः सेवां बिना तस्मै भृत्यर्धं कल्पयेत् सदा ॥'

जिस कर्मचारी का ४० वर्ष सेवा काल बीत गया है, जीवन भर उसके वेतन का आधा भाग पेन्शन के रूप में उसे मिलना चाहिए ।

'(यावज्जीवंतु) तत्पुत्रेऽक्षमे बाले तदर्धकम् ।
भार्यायां वा सुशीलायां कन्यायां वा स्वश्रेयसे ॥'

उसकी मृत्युके बाद उसके पेन्शन में से आधा हिस्सा अथवा उसके मौलिक वेतन में से चौथा हिस्सा परिवार भत्ते के रूप में उसकी पत्नी अथवा लड़की को तब तक मिलना चाहिए जब तक उसका लड़का युक्त वयस्क नहीं होता ।

सेवा में प्राथमिकता

'स्वामि कार्ये विनष्टो यस्तत्पुत्रो तद् भृतिं वहेत् ।
यावद् बालोऽन्यथा पुत्र गुणान् दृष्ट्वा भृतिं वहेत् ॥'

जो कर्मचारी मालिक के काम काजों में मर जाता है उसके पुत्र को वही तनखा मिलनी चाहिए । जब उसका पुत्र युक्त वयस्क होता है तो उसके वेतनका निर्णय उसकी योग्यता एवं गुणोंके अनुसार होना चाहिए ।

पारितोषिक तथा कार्यपटुता पुरस्कार

'अष्टमांशं परितोष्यं दद्याद् भृत्याय वत्सरे ।
कार्याष्टमांशं वा दद्यात् कार्यं द्रागधिकं कृतम् ।'

प्रति वर्ष कर्मचारी को उसके वेतन में से आठवां भाग पारितोषिकके रूपमें मिलना चाहिए । अथवा, अगर कर्मचारी अपने काम में अधिक दक्षता दिखाता है तो उसे उसके वेतन में से आठवां भाग कार्यपटुता पुरस्कार के रूप में मिलना चाहिए ।

सामान्य सिद्धान्त ज्ञातव्य है

शुक्रनीति की असामान्य कल्पनाओं एवं संकेतों के प्रति अधिक जिक्र करना अनावश्यक है । इसी प्रकार की कई असंख्य रोचक बातें शुक्रनीति में है । इसमें सामान्य सिद्धान्त ज्ञातव्य है । किसानों के विषय में शुक्र ने कहा है कि उनसे जमीन का कर उतना लेना चाहिये जिससे उनको कृषि सम्बन्धी कठिनाइयां न हो ।

('हरेच्च कर्षकाद् भागं यथा नष्टो भवेन्न सः ।')

सूखे के समय किसानों को धन सहायता भी सरकार की तरफ से मिलनी चाहिए ।

('''व्यवहारे हता यदि । राजा समुद्धरेत्तान् तथा न्यांश्च कृषीवलान्' ॥)

विदेशी मुद्रा

(पृष्ठ ३२७ का शेष)

आशा करते थे, अब नई परिस्थितियों में नहीं कर सकते। इसलिए हमारी विदेशी मुद्रा की समस्या निरन्तर कठिन होती जा रही है।

आशा की किरण

इस निराशाजनक स्थिति में आशा की दो ही किरणें हैं। एक तो यह कि अमरीका, ब्रिटेन और रूस आदि अनेक देश अनेक प्रकार से भारत-सरकार की सहायता करने को तैयार हैं। संधियों व समझौतों के कारण अनेक देशों ने हमारी आर्थिक योजनाओं में सहायता देने का वचन दिया है। ब्रिटेन, रूस और जर्मनी की सहायता से लोहे के बड़े-बड़े कारखाने बनाए जा रहे हैं। बिजली और रासायनिक कारखानों के लिए भी विदेशों से सहायता प्राप्त हो रही है। अमरीका ने विभिन्न कार्यों के लिए जो सहायता दी है, वह प्रशंसनीय है। पूर्वी यूरोप के अनेक देशों से सहायता प्राप्त हो रही है। सरकार ने अनेक देशों से विलम्बित भुगतान के समझौते किए हैं। इससे फिलहाल कुछ वर्षों तक विदेशी मुद्रा की समस्या हल हो जाएगी, भले ही कुछ समय बाद यह समस्या बहुत ही विकट रूप में उपस्थित हो।

अखिल भारतीय उद्योग व्यापार मंडल ने एक 'वृत्तपत्र' प्रकाशित किया है, जिसमें अंतर्राष्ट्रीय वित्त निगम, अंतर्राष्ट्रीय पुनर्निर्माण बैंक आदि अनेक संस्थाओं का परिचय दिया, है जिनसे निजी उद्योगों को विशेष सहायता मिल सकती है। दूसरी संस्था ने १९५७ के अंत तक भारत के निजी उद्योगों को १९.४ करोड़ डालर के ऋण दिए हैं। सरकारी योजनाओं के लिए भी उसने २० करोड़ डालर के ऋण दिए हैं। अमरीका का निर्यात-आयात बैंक अमरीकी व्यवसायियों को इस काम के लिए सहायता देता है कि वे भारत को अपना माल भेजें। लंदन में राष्ट्रमंडल विकास वित्त कम्पनी निजी उद्योगों को सहायता देने के लिए बनाई गई है। इन संस्थाओं के द्वारा भारतीय उद्योगों को जो सहायता मिल सकती है, उसके संबंध में कोई निश्चित अनुमान करना तो कठिन है, किन्तु उनसे कुछ सहायता अवश्य मिलेगी।

विदेशी मुद्रा को बचाने के लिए सरकार ने जिन बहुत-से पदार्थों का आयात रोक दिया था, उनमें से कुछ के आयात पर प्रतिबंध के कारण अनेक उद्योगों का काम ठप्प होने लगा, क्योंकि कच्चा माल और औजार नहीं आ रहे थे। अब फिर उनके आयात पर प्रतिबंध शिथिल करने पड़े हैं। 'इधर कुआं उधर खाई' वाली बात है। सरकार को और जनता को यह प्रयत्न करना होगा कि हम जिस विदेशी वस्तु के बगैर भी काम चला सकते हैं, चलाएं। एक-एक पैसे की बचत करनी होगी। जब हम विदेशी शराब, विदेशी तम्बाकू, स्टेशनरी और विदेशों में छपी पत्र-पत्रिकाएं, उपन्यास आदि सभी का यथासंभव पूर्ण बहिष्कार करेंगे, तभी इस समस्या के समाधान में अपना योगदान दे सकेंगे।

यह ठीक है कि जमाना बदल गया है, लेकिन मानवीय प्रकृति यथापूर्व है। कोई भी विचारशील भारतीय इस बात पर हठ नहीं करता कि प्राचीन ग्रन्थों का अन्धानुकरण होना चाहिए। हिन्दू धर्म में शास्त्रों को ही अन्तिम प्रामाणिक ग्रन्थ नहीं माना जाता।

(नैको मुनिर्यस्य वचः प्रमाणम्।)

अब जबकि परिस्थितियां बदल गई हैं, जीवन पद्धति में भी आवश्यक परिवर्तन की आवश्यकता है।

शुक्रनीति के पथ प्रदर्शक सिद्धान्त आज भी उतने ही सहायकारी हैं. जितने इसकी रचना के समय थे। वर्तमान भारत में विविध औद्योगिक संस्थाएं अगर शुक्रनीति के सिद्धान्तों को समझने की कोशिश करें तथा उनको आचरण में लायें तो सबका कल्याण हो सकता है।

अनुवादकः—रघुराम

डाक-गोदी हड़ताल

जमशेदपुर की हड़ताल के असफल होने के बाद यह आशा की जाती थी कि मजदूर नेता यह प्रयत्न करेंगे कि देश का औद्योगिक संकट न बढ़े, किन्तु ऐसा हुआ नहीं। सरकार गोदी कर्मचारियों की मांगों पर विचार कर रही है और आगामी १७ जुलाई से चौधरी समिति की सिफारिशों पर विचार करने का वचन दे दिया था; किन्तु एक महीने की भी प्रतीक्षा न करके, और श्रीगुलजारी नन्दा की सलाह को ठुकरा करके, गोदी कर्मचारियों ने १० दिन तक की हड़ताल—मद्रास, बम्बई, कलकत्ता आदि में देश-व्यापी हड़ताल कर दी, इससे देशको ५ करोड़ रुपया दैनिक हानि हुई। विदेशी जहाज कम्पनियों को डैमरेज के रूप में काफी रकम देनी पड़ी। यह ठीक है कि पं० नेहरू के आश्वासन के परिणाम स्वरूप यह हड़ताल समाप्त कर दी गई है पर जहां हम हड़ताल समाप्ति का स्वागत करते हैं, वहां यह अवश्य कहना चाहते हैं कि इस तरह जल्दबाजी में की गई हड़तालों के सम्बन्ध में सरकार को अपनी नीति निश्चित कर लेनी चाहिये, अन्यथा इस प्रकार की हड़तालों की पुनरावृत्ति को रोकना अत्यन्त कठिन हो जायेगा। मजदूरों के साथ किसी तरह का अन्याय न हो, यह दृष्टि अत्यन्त आवश्यक है। किन्तु इसके साथ ही यह देखना भी उतना ही आवश्यक है कि मजदूर नेताओं को बिना विवेक के जल्दबाज़ी में हड़तालें कराने और देश को भयंकर क्षति पहुँचाने का अधिकार नहीं मिलना चाहिये।

★

नया कदम

मध्यप्रदेश शासन ने औद्योगिक समस्या का समाधान करने के लिए एक नया कदम उठाने का निश्चय किया है। उज्जैन की नज़रअली मिल के प्रबन्धकर्ताओं को नोटिस दिया है कि मिल की तमाम सम्पत्ति जब्त कर ली गई है। यह मिल २५ अप्रैल से आर्थिक स्थिति के कारण विवश होकर बन्द कर दी गई थी। सरकार को यह शिकायत मिली कि मिल ने मजदूरों का प्रावीडेन्ट फंड या दूसरी देय राशियां नहीं दीं। उन्हें चुकाने के लिए मिल की सम्पत्ति जब्त की गई है। नज़रपुर और उज्जैनियां गांवों में उस मिल की करीब एक हजार बीघा ज़मीन और बाग भी ज़ब्त कर लिये गये हैं। मध्यप्रदेश शासन का यह दृढ़ कदम यदि कानूनी तौर पर ठीक सिद्ध हुआ तो सरकार के हाथ में एक बहुत बड़ी शक्ति आ जायेगी और उद्योग को वह अपने काबू में रख सकेगी।

★

कारखानों में अधिक मजदूरों को काम

सन् १९५७ के पूर्वार्ध में देश के कारखानों में ४४,२७४ अधिक व्यक्तियों को काम मिला। श्रम कार्यालय ने बताया है कि इस अवधि में ३४,१९० कारखाने काम कर रहे थे, जिनमें २८,०९,७०८ मजदूर लगे हुए थे। इसकी पिछली छमाही में ३३,२७४ कारखानों में २७,६५,४३४ मजदूर काम कर रहे थे। दो छमाहियों में १८ प्र० श० कारखानों ने अपने बारे में जानकारी नहीं दी।

सबसे अधिक १० लाख (एक तिहाई) मजदूर बम्बई के कारखानों में काम कर रहे थे। दूसरा स्थान प० बंगाल का है, जहां देश भर के मजदूरों के ५ वें हिस्से से अधिक काम रहे थे। इसके बाद मद्रास, उत्तरप्रदेश, बिहार और आन्ध्र आते हैं। पिछली छमाही के मुकाबले बम्बई में ४०,३७१ आन्ध्र में २१,८३६, उत्तरप्रदेश में, १६,१०१ और मद्रास में ६,४७१ अधिक लोगों को कारखानों में काम मिला। कुछ राज्यों में जैसे मध्यप्रदेश में २०,५७१ और प० बंगाल में १८,९६४ मजदूरों को काम मिला।

इस छमाही में सबसे अधिक मजदूर वस्त्र-उद्योग में लगे हुए थे। इस उद्योग से ११ लाख से भी ऊपर यानी करीब ३७ प्र० श० मजदूरों को रोजी मिल रही थी। इसके बाद खाने की चीजों (पीने की चीजों को छोड़कर) परिवहन, खेती बाड़ी-सम्बन्धी, तम्बाकू, मशीनरी और फुटकर उद्योगों का स्थान है।

★

—कपड़ा उद्योग के कर्मचारियों के वेतन आदि की जांच करने के लिए सरकार ने जो जांच कमेटी बिठाई थी उसने अपना कार्य तेजी से आरम्भ कर दिया है और आशा की जाती है कि उसकी रिपोर्ट निकट भविष्य में

लीपजिग का शरत्कालीन मेला

लिपजीग का शरत कालीन मेला, जिस में ३० विभिन्न व्यापार वर्ग भाग लेने वाले हैं, ७ से १४ सितंबर १९५८ तक होने वाला है। मेले का क्षेत्रफल इस बार दस लाख वर्ग फुट से भी अधिक विशाल होगा। इस मेले में भाग लेने के लिए असंख्य प्रदर्शक अभी तय्यारियां कर रहे हैं।

लिपजीग का शरद कालीन मेला १,२००,००० वर्ग फुट के विशाल मैदान में लगेगा, जिस में लघु उद्योग तथा सांकेतिक मशीनरी सम्बन्धी विविध वस्तुओं का प्रदर्शन प्रतिवर्ष की तरह इस बार भी होगा। सांकेतिक वस्तु प्रदर्शन क्षेत्र में, ३० व्यापार वर्गों में से प्रत्येक वर्ग को १६ से अधिक भवन तथा कई बरामदे प्रदर्शन के लिये सौंप दिये गए हैं, जिन में विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का अंतर्राष्ट्रीय प्रदर्शन होगा।

'जर्मन फेडरल रिपब्लिक' के प्रदर्शन कक्ष में लघु उद्योग सम्बन्धी वे सभी चीजें रहेंगी, जो पहले वसन्त मेले में प्रदर्शित की गई थीं।

वस्त्र तथा वस्त्रोत्पादक मशीन, पुस्तक तथा अन्य प्रकाशन, खाद्य पदार्थ एवं दवा दारू सम्बन्धी विभाग में अंतर्राष्ट्रीय तौर पर विशाल प्रदर्शन होगा। यूरप की संस्थाओं के अलावा अनेक समुद्र पार देशों से भी लोग अकेले या सामूहिक तौर पर भी प्रदर्शनी में भाग लेने वाले हैं। कोरिया लोक गणतंत्र भी प्रथम बार इस अंतर्राष्ट्रीय मेले में सामूहिक रूप से ३००० वर्ग फुट के मैदान में भाग ले रहा है। रूमानिया तथा बल्गेरिया के राष्ट्रीय प्रदर्शन कक्ष भी मेले में रहेंगे, जब कि चेकोस्लोवाकिया' पोलैण्ड, हंगरी, रूस, चीन, तथा युगोस्लेविया की विदेश व्यापार कम्पनियां भिन्न २ व्यापार वर्गों के रूप में भाग ले रही हैं। भारत इस बार भी सामूहिक रूप से भाग ले रही है।

ब्रिटिश फर्में, फ्रांस के खाद्य पदार्थों के उत्पादक, इटली, नेदरलैण्ड तथा डेनमार्क के फल विशेषज्ञ, आस्ट्रिया की कपड़े तथा जूते की कम्पनियां एवं स्विटजरलैण्ड की घड़ियों की कम्पनियां भी काफी मात्रा में यूरप की उपभोग्य वस्तुओं का प्रदर्शन करेंगी।

देश के सामने आ जायगी। आज के वस्त्रोद्योग का संकट देखते हुए यह निर्णय शीघ्र कर लेना अत्यन्त आवश्यक है कि मजदूरों के वेतनों का स्तर क्या हो। इसके बाद फिर वेतन सम्बन्धी संघर्ष समाप्त हो जाने चाहिए।

—मध्यप्रदेश में मालवा मिल की कुछ कार्यवाहियों को मजदूर विरोधी बताकर उनके विरोध में श्री रामसिंह वर्मा ने अनशन करने का निश्चय किया है।

गांव अपने पैरों पर खड़े हों।

"सारी बातें सरकार को सौंपना ठीक नहीं। कारण देश पर ही बड़ा संकट आयेगा, तो अनाज के भाव बढ़ेंगे, भुखमरी फैलेगी और उस समय सरकारी योजना देश को बचा नहीं सकेगी। कल अगर महायुद्ध छिड़ जाय तो, उसका परिणाम हम लोगों के सारे व्यापार पर पड़ेगा। स्वेज नहर का उदाहरण हमारे सामने ही है अतः वैसी ही स्थिति में पंचवर्षीय योजना ताश के महल की तरह ढह जायगी और तब राजनीतिक दल एक होंगे। लेकिन क्या देश फिर बच पायगा? पहले बंगाल में ३० लाख व्यक्ति भुखमरी से मर गए। उन दिनों हम लोग जेल में तीन बार खाते रहे और बुराई का घड़ा अंगरेजों के सिर पर फोड़ते रहे। लेकिन अब वह बुराई हम पर ही मढ़ी जायगी। स्वराज्य में लोग भूखों मरेंगे तो हमारे मुंह में कौंर नहीं जा सकता। इसलिए हमें अपने पैरों पर खड़े होना चाहिए।"

—विनोबा

●

"विस्तार योजना, कम्यूनिटी प्रोजेक्ट, राज्य सरकार या केन्द्रीय सरकार ये कोई भी गांव को बचा नहीं सकते। गांव को खुद अपने पैरों पर खड़ा होना चाहिए।"

—पं० नेहरू

धान कुटाई का उद्योग

[पृष्ठ ३७३ का शेष]

साल की दीर्घकालीन देरी के बाद धान कुटाई उद्योग सम्बन्धी एक बिल पेश किया गया। सरकारी काम काज में असाधारण देर लगाने का रोग बहुत पुराना है और वर्तमान लोकप्रिय सरकार भी इस रोग को दूर नहीं कर पाई। किन्तु इससे भी आश्चर्य की बात यह है कि विधेयक में उस का मूल उद्देश्य ही नष्ट कर दिया गया है। कमेटी ने यह सिफारिश की थी कि नई चावल मिलों की स्थापना बन्द कर दी जाय और मौजूदा मिलों को विस्तार की आज्ञा न दी जाय। कमेटी ने यह भी कहा था कि आगामी पांच वर्षों तक सब चावल मिलोंको अपने काम काज को बन्द करने के लिए कहा जाय। चावल मिलों द्वारा कूटे गये धान पर उसी तरह कर लगाने की सिफारिश की गई, जिस तरह सूती मिलों के कपड़े पर। यह कर हाथ कुटाई के उद्योग के प्रोत्साहन के लिए खर्च किया जाना था, परन्तु प्रस्तुत विधेयक में एक भी सिफारिश को स्थान नहीं दिया गया। यद्यपि दूसरी पंचवर्षीय योजनाके अन्तर्गत योजना कमीशन द्वारा नियत कर्वे समिति ने भी इसी प्रकार की सिफारिश की थी और यहां तक सुझाव दिया था कि दूसरी पंचवर्षीय योजना के बाद जितना अतिरिक्त धान उत्पन्न होगा, वह सारा का सारा हाथ कुटाई उद्योग के लिए सुरक्षित रखा जाय। किन्तु नये विधेयक में केन्द्रीय सरकार को नई मिलें स्थापित करने का अधिकार दिया गया है। शर्त यह रखी गई है कि यथोचित पूर्ति की सुरक्षा के लिए सरकार उसे आवश्यक समझे। वस्तुतः यह शर्त इतनी कमजोर है कि इसके आधार पर नई मिलें खोलने की इजाजत आसानी से दी जा सकती है। चावल की पर्याप्त पूर्ति हाथ कुटाई के द्वारा पूर्णतया संभव है, क्योंकि देश की अधिकांश देहाती बहनें अपने खाली समय में यह कार्य कर सकती है, और इससे उन्हें खासा रोजगार मिल सकता है।

पहली योजना कमेटी की रिपोर्ट में कुटाई मिलों को धीरे धीरे समाप्त करने की सलाह दी गई है। धान मिल कमेटी ने भी यही सलाह दी है। किन्तु १९५८ के कानून में कुटाई और भूसी साफ करने वाली दोनों प्रकार की मिलों को खोलने की इजाजत दी गई है। हाथ की चक्की ८ घंटे के दिन में १ मन धान की दराई करती है। परन्तु [illegible] मिल ३० से ३५ मन दर लेती है। भूसी साफ करने वाली मिलें शहरों में लगाई जाती हैं और कुछ थोड़े से शहरी मजदूरों को काम देती है। इससे गांव के हजारों मजदूर बेकार हो जाते हैं। हाथ का उद्योग बहुत असंगठित है [illegible] यह कानून श्री मलकानी के शब्दों में समस्या के पहलुओं की उपेक्षा करके मिलों के हित के प्रति उदार हैं। [illegible] निश्चय ही राष्ट्रीय हितों के विपरीत है।

नये कानून की एक धारा में यह कहा गया है कि एक नई मिल को परमिट देते समय स्थानीय बेरोजगारी न फैलने का ख्याल जरूर रखा जायगा। किन्तु बड़ी मिलें शहरों में ही खुलती हैं और इनका असर उस स्थान के रोजगार पर नहीं, व्यापक और विस्तृत देहाती क्षेत्र के रोजगार पर ही पड़ेगा। एक कुटाई मिल ३५ से ४० मन धान एक दिन में साफ करती है, जबकि एक ढेंकी पर डेढ़ मन से ज्यादा धान नहीं कूटा जा सकता। इस तरह एक कुटाई मिल २० आदमियों को बेरोजगार कर देती है।

इस संक्षिप्त विवेचन से हमने देखा कि सरकार ग्रामोद्योगों का नारा लगाते हुए भी उनके प्रति पूर्ण निष्ठा से काम नहीं कर रही है।

—

[पृष्ठ ३७० का शेष]

पद्धति के लिये व्यापार धंधों, भारी मशीनरी तथा बैंक के लेन-देन आदि में प्रोत्साहन मिलना चाहिए, न कि कृषि क्षेत्र में। रूस तथा चीन की सामूहिक कृषि पद्धति का अन्धानुकरण करने की बजाय स्विस, स्वीडिश तथा डैनिश पद्धति का पूर्ण अध्ययन करके, उचित हो तो भारत में भी लागू करना चाहिए।

कृषि उत्पादन की वृद्धि के लिये भारत का कल्याण इसी में है कि वर्तमान कृषि नीति में पुनः सुधार किया जाय। हमें चाहिए कि वर्तमान भूमि सुधार सम्बन्धी उत्साह मात्र छोड़कर विभिन्न पहलुओं पर ध्यानपूर्वक यथोचित दूरवर्ती कदम उठाने चाहिए।

—

उत्पादन तथा उत्पादक साधन........

[पृष्ठ ३२९ का शेष]

बहुशाखामय व्यवस्था की आवश्यकता होती है। द्वितीयतः, इन उद्योगों के क्षेत्र में प्रतिस्पर्द्धा से उत्पादक साधनों की बर्बादी होती है। उदाहरणार्थ, किन्हीं दो स्टेशनों वा नगरों के बीच यदि दो रेलवे कम्पनियाँ काम करें तो दोनों को अपना पृथक् पृथक् रेल-पथ, स्टेशन घर, और कर्मचारी दल की आवश्यकता होगी जो समाज की व्यापक दृष्टि से लोहे, पत्थर, सीमेंट और मानवीय श्रम आदि की पुनरावृत्ति (Duplication) और अपव्यय होगा। अस्तु। इन उद्योगों की प्रकृति अन्ततोगत्वा एकाधिकारियों के हाथ में पड़ने की रहती है। तृतीयतः, उन उद्योगों का व्यक्तिगत या समाजगत सम्पत्ति के साथ प्रायः ही आघातपूर्ण संघर्ष होता है। जैसे रेल की लाइन वा पानी कम्पनी के पीपे कभी कभी जनता तथा म्युनिसिपैलिटी व डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की जमीन से होकर जाते हैं। अतः इन तीनों विशेषताओं के द्वारा इन उद्योगों का प्रबन्ध राष्ट्रीय स्तर से होना अधिक अपेक्षित है। क्योंकि इन उद्योगों के लिये अधिक पूंजी की आवश्यकता होती है, जो कभी कभी निजी अंचल के उद्योगपतियों के लिये दुस्साध्य हो सकती है तथा समाज एकाधिकारियों के लोभपूर्ण कुचक्रों से भी बच जायेगा और राष्ट्रीय उद्योगों के कारण अपनी सम्पत्ति पर आघात होते समय व्यक्ति भी कम चिढ़ेंगे एवं इन उद्योगों के मार्ग में कम बाधायें उपस्थित होंगी।

इन एकाधिकार-प्रधान उद्योगों के अतिरिक्त सुरक्षात्मक उद्योगों को भी व्यक्तिगत अंचल में नहीं छोड़ा जा सकता है, क्योंकि इन उद्योगों से देश की समस्त स्वतन्त्रता का सम्बन्ध है। अन्यथा, युद्धकालीन स्थिति में राष्ट्र के समक्ष ये व्यक्तिगत लाभ की इच्छा रखने वाले पूंजीपति भारी संकट उपस्थित कर सकते हैं।

इस प्रकार कुछ विशेष क्षेत्रों में समाजवादी उत्पादन की श्रेष्ठता अस्वीकार नहीं की जा सकती। किन्तु आदर्शात्मक दृष्टि से पूर्ण न होते हुये भी पूंजीवाद की महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इसका यंत्र स्वतः संचालित होता है और इसे किसी केन्द्रीय संस्था की सहायता की आवश्यकता नहीं होती। दूसरी ओर आदर्शात्मक दृष्टिकोण से श्रेष्ठ होते हुये भी समाजवाद की त्रुटि यह है कि इसका आर्थिक यंत्र दुर्बल होता है तथा इसके संचालन के लिये एक केन्द्रीय योजना समिति की सतत सहायता व योग्यतम निरीक्षण की आवश्यकता होती है। जिस अर्थ में हमने आदर्श वितरण की व्याख्या की है, उस अर्थ में उत्पादन के साधनों का औद्योगिक वितरण पूंजीवाद और समाजवाद दोनों ही में कठिन है, (तब क्या होगा? पूंजीवाद में तो उत्पादक साधनों के वितरण की समस्या किसी 'अदृष्ट शक्ति' (उत्पादकों की लाभ हानि की स्वतः चेतना, बाजार मूल्य तथा मांग और पूर्ति के कठोर नियम आदि) के द्वारा स्वतः हल हो जाती है किन्तु समाजवाद में इसका अथवा ऐसी ही अन्य औद्योगिक संगठन सम्बन्धी समस्याओं का समाधान किस सूत्र के आधार पर होगा? या, जैसे भी होगा, क्या वह इतना योग्य हो सकेगा, जितना पूंजीवाद में होता है? इन प्रश्नों पर विचार करना आवश्यक है।

मुख्यतः हमारे सामने दो समस्याएं हैं। प्रथम यह है कि विभिन्न वस्तुओं के उत्पादन के लिये विभिन्न उद्योगों में सीमित उत्पादन के साधनों का वितरण किस प्रकार और किसी मात्रा में होगा? द्वितीय यह है कि विविध उद्योगों द्वारा उत्पादन हो चुकने के बाद विभिन्न वस्तुओं की कुल राशि को असंख्य उपभोक्ताओं में किस प्रकार वितरित किया जायेगा?

पहले हम दूसरे प्रश्न का उत्तर देंगे और प्रथम प्रश्न की समस्या को हल हो गई मान लेते हैं। निस्संदेह योजना समिति विभिन्न उपभोक्ताओं की विविध आवश्यकताओं की गणना के आधार पर ही असंख्य वस्तुओं का उत्पादन करेगी जैसे बिस्कुट, जूते, कपड़ा, कलम, मोजे, साइकिल, मोटर, चश्मा, घड़ी आदि। यह जब हो चुकेगा, तब वस्तुओं का 'वितरण निर्धारित मात्रा' (Quota) के आधार पर होगा। किन्तु ऐसा करते समय प्रत्येक व्यक्ति और उसके परिवार के सदस्यों की संख्या का हमेशा ख्याल करना होगा। इस प्रणाली में सरलता तो है किन्तु इसमें संदेह नहीं कि यह एक बहुत पिछड़े समाज के लिये ही उपयुक्त हो सकती है क्योंकि एक 'निर्धारित मात्रा' के अनुपात में यदि प्रत्येक व्यक्ति और परिवार की वस्तुयें प्रदान की जायंगी तो हो

सकता है, उपभोगीय रुचि की विभिन्नता के कारण कोई परिवार या व्यक्ति कुछ ही दिनों में कपड़ों या जूतों का आधिक्य अनुभव करने लगे और रोटी तथा मक्खन की कमी; जबकि कोई अन्य परिवार ठीक इसके विपरीत रोटी और मक्खन का आधिक्य तथा कपड़ों और जूतों की कमी अनुभव करे। इस विषमता को वस्तुओं की प्रत्यक्ष तथा पारस्परिक विनिमय प्रणाली द्वारा कुछ अंश तक दूर कर सकते हैं, किन्तु वस्तु विनिमय प्रणाली की नानाविध कठिनाइयों के कारण इससे अधिक सफलता नहीं मिल सकती, यह निश्चित है।

समाजवादी समाज में वस्तुओं के वितरण की एक दूसरी प्रणाली सम्भव है, जो पहली से अधिक निर्दोष है। योजना-समिति यदि वस्तुओं का वितरण न करके उनके मूल्य का 'कूपन' बांटा करे तो उपर्युक्त कठिनाई दूर हो जायेगी। किन्तु शर्त यह है कि कूपन बांटते समय योजना-समिति यह प्रतिबन्ध लगा दे कि कूपनों की क्रयशक्ति का कोई अंश संग्रहीत न हो सकेगा और उन्हें एक निश्चित अवधि के भीतर ही खर्च कर लेना होगा। इस व्यवस्था से यह लाभ होगा कि प्रत्येक परिवार व व्यक्ति अब अपनी रुचि और आवश्यकता के अनुपात में विभिन्न वस्तुओं का क्रय कर सकेगा और अनचाहे भाव से किसी के पास किसी भी पदार्थ का संग्रह (Accumulation) न हो सकेगा। अर्थात् कोई व्यक्ति या परिवार यदि रोटी से अधिक कपड़ों को पसन्द करता है तो 'कूपन' का अधिकांश कपड़ों पर खर्च करेगा और रोटी पर कम। इस प्रकार इस कूपन प्रणाली के द्वारा समाजवाद में प्रत्येक परिवार अथवा व्यक्ति को व्यक्तिगत रुचि के अनुसार संतोष प्राप्त करने का अधिक अवसर और उपयुक्त क्षेत्र प्रदान किया जा सकता है। किन्तु इस प्रणाली का अनुसरण करते समय योजना समिति को इस बात का ध्यान रखना होगा कि उत्पादित विभिन्न वस्तुओं के कुल मूल्य से अधिक के कूपन न बांटे जायं। अर्थात् कुल उत्पादित वस्तुओं और उनके मूल्य का गुणनफल कुल कूपनों के बराबर ही हो, इसका ध्यान रखना होगा। यदि ५ सौ करोड़ रुपये कुल उत्पादित वस्तुओं का सम्मिलित मूल्य है, तो पांच सौ करोड़ रुपये के कूपन भी वितरित होने चाहिये, न कम, न अधिक।

लेकिन इस व्यवस्था में इस बात का क्या निश्‍[चय] है कि एक अमुक वस्तु की मांग ठीक उसकी पूर्ति के अनुपात में होगी? हो सकता है किसी वस्तु की मांग [उस] वस्तु की पूर्ति से अधिक हो। ऐसी स्थिति में यो[जना] समिति को उस वस्तु की कीमत बढ़ा देनी होगी और [अन्य] वस्तुओं की कीमत में कमी करनी होगी। इसका परि[णाम] यह होगा कि अधिक मांग वाली वस्तु की मांग [घट] जायेगी (मांग के नियम के अनुसार) तथा अन्य पदार्थों [की] मांग बढ़ जायेगी। किन्तु वस्तुओं की कीमत में इस [प्रकार] हेर-फेर करते समय योजना समिति को उपर्युक्त मूल्य-[यंत्र] का हमेशा ध्यान रखना होगा, अर्थात्—

कुल वस्तुयें × उनके मूल्य = वितरित कूपनों का मू[ल्य]

इस प्रकार मूल्य-यंत्र की सहायता से समाजवादी स[माज] प्रत्येक वस्तुओं की मांग और पूर्ति में सामंजस्य स्था[पित] कर सकती है। किन्तु इस सामंजस्य के स्थापन में का[फी] समय लगेगा, यह स्पष्ट है, जबकि रुचि और समाज [की] अन्य परिवर्तनशील परिस्थितियों के कारण मांग में प[रि]वर्तन आकस्मिक रूप से सदा ही बाजार में होता रहता [है।]

(क्रमशः)

भारत का विदेशी व्यापार

(गत वर्ष का सिंहावलोकन)

१९५७ में भारत के विदेशी व्यापार में गत वर्ष की अपेक्षा बहुत अधिक अर्थात् २० प्रतिशत वृद्धि हुई। यह वृद्धि अधिकांश में पूंजीगत वस्तुओं और आवश्यक कच्चे माल के आयात में वृद्धि हो जाने के कारण हुई है। वर्ष के पहले १० महीनों अर्थात् जनवरी से अक्तूबर १९५७ तक आयात अपने चरम स्तर ८३४ करोड़ रुपये पर पहुँच गया, जबकि जनवरी से अक्तूबर १९५६ की अवधि में यह ६६८ करोड़ रु० का हुआ था। जनवरी से अक्तूबर १९५७ की अवधि में निर्यात भी अच्छा हुआ, जिसका योग ५११ करोड़ रुपये (उधार-पट्टा प्रणाली के अन्तर्गत अमरीका को निर्यात की गई चांदी को छोड़कर) रहा, जबकि १९५६ की इसी अवधि में वह ४८४ करोड़ रुपये रहा था। इतने पर भी व्यापार-संतुलन १९५७ में भारत के बहुत अधिक प्रतिकूल रहा।

भारत का व्यापार-संतुलन

(मूल्य लाख रु० में)

	जनवरी अक्तूबर १९५७	जनवरी-अक्तूबर १९५६	वर्ष में हुआ परिवर्तन
आयात	८३३,९८	६६८,०५	१६५,९३
निर्यात	५११,२५+	४८४,३४	२६,९१
पुनः निर्यात	४,४६	७,७५	३,२९
व्यापार-संतुलन	३२२,७३	१७६,१६	१४६,५७

१९५७ से आयात में जो वृद्धि हुई है, उसका एक कारण यह है कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना को अमल में लाने के लिए आवश्यक संयन्त्र और मशीनें तथा परिवहन उपकरण अधिक संख्या में मंगाये गये। हमारी बढ़ती जाने वाली आर्थिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए बाहर से अधिक परिमाण में कच्चे माल का भी आयात करना पड़ा। जनवरी से अक्तूबर १९५७ की अवधि में गत वर्ष की इसी अवधि की अपेक्षा १६६ करोड़ रुपये का जो अधिक आयात हुआ है, उसमें धातुएं तथा मशीनें प्रत्येक ४८ करोड़ रुपये की, पैट्रोलियम तथा पैट्रोलियम-उत्पादन ३२ करोड़ रुपयेका, अनाज २२ करोड़ रुपये का और रासायनिक पदार्थ ७ करोड़ रुपये के अधिक मंगाये गये। उपभोग की वस्तुओं और अनेक प्रकार के कच्चे मालों के आयात के कारण कुल आयात में जो कमी हुई थी, वह अन्य वस्तुओं के आयात बढ़ जाने के कारण पूरी हो गई। जिन कच्चे मालों का आयात घटा है, वह प्रायः अधिक परिमाण में देश में ही तैयार होने लगे हैं। पाठक इसी लेख के अन्त में आयात की गई बड़ी-बड़ी वस्तुओं की जानकारी पढ़ेंगे, जो जनवरी से दिसम्बर १९५७ तक की अवधि के विषय में है। इसके साथ ही तुलना के लिए जनवरी से दिसम्बर १९५६ की अवधि तक तक की जानकारी भी दे दी गई है।

+इसमें उधार-पट्टा प्रणाली के अन्तर्गत अमरीका को निर्यात की गई २६४१ लाख रुपये की चांदी सम्मिलित नहीं है।

१९५७ के आयात में हुई वृद्धि की अपेक्षा निर्यात में थोड़ी ही वृद्धि हुई है। परन्तु यह थोड़ी सी वृद्धि भी इस बात का प्रमाण है कि देश की अर्थ-व्यवस्था सुधरती जा रही है और हमारी भुगतान-सम्बन्धी स्थितिके आशा-जनक हो जाने का यह एक लक्षण है। कोरिया-युद्ध के बाद आई मन्दी के कारण भारत के निर्यात में भी सामान्यतः कुछ मन्दी आ गई और समस्त संसार के निर्यात में उसका अनुपात घट गया। परन्तु १९५७ में निर्यात की स्थिति कुछ अनुकूल परिस्थितियों तथा निर्यात संवर्द्धन के लिये किये गये कुछ उपायों के फलस्वरूप अच्छी हो गई है। जनवरी से अक्तूबर १९५७ की अवधि में चीनी के निर्यात में १२ करोड़ रु० और खनिज मैंगनीजके निर्यात में १० करोड़ रुपये की वृद्धि हो गई है। यह वृद्धि गत वर्ष की इसी अवधि की तुलना में हुई है। इसी अवधि में कपड़े के निर्यात में ९ करोड़ रुपये की और जूट की सुतली तथा अन्य वस्तुओं के निर्यात में ७ करोड़ रुपये की वृद्धि हुई है। जिन मुख्य वस्तुओं के निर्यात से

हमें विदेशी विनिमय प्राप्त होता है उनमें चाय, कच्ची रुई और वनस्पति तेलों का निर्यात १९५७ में घट गया। चाय का निर्यात वर्ष के शुरू में बहुत होने के बावजूद घट गया। पहले से निर्यात होती आने वाली वस्तुओं में से तम्बाकू, काजू की गिरी और मसालों का निर्यात सामान्यतः स्थिर रहा।

विदेशों से व्यापार

१९५७ में भी ब्रिटेन के साथ ही हमारा व्यापार मुख्य रूप से हुआ। परन्तु अन्य देशों के साथ जिनमें कि अमरीका और पश्चिमी जर्मनी उल्लेखनीय हैं, हमारा व्यापार असाधारण रूप से बढ़ा है। जनवरी से सितम्बर १९५६ की अवधि में ब्रिटेन से जहां १५८ करोड़ रुपये का माल आयात किया गया था, वहां १९५७ की इसी अवधि में १७८ करोड़ रुपये का आयात किया गया। भारत से ब्रिटेन को हुआ निर्यात इन अवधियों में १३१ करोड़ रु० से घटकर ११९ करोड़ रुपये रह गया। इस प्रकार जहां भारत के कुल निर्यात में १९५७ की अवधि में वृद्धि हुई है वहां भारत के पुराने खरीदार ब्रिटेन को हुआ निर्यात घट गया है। दूसरी ओर भारत से अमरीका को हुआ निर्यात जनवरी से सितम्बर १९५६ की अवधि में ६३ करोड़ रुपये से बढ़कर १९५७ की इसी अवधि में ७४ करोड़ रुपये (चांदी छोड़ कर) हो गया। इन्हीं अवधियों में अमरीका से भारत को हुआ आयात ६८ करोड़ रुपये से बढ़ कर ११३ करोड़ रुपये और पश्चिमी जर्मनी से भारत को हुआ आयात ५७ करोड़ रुपये से बढ़ कर ८६ करोड़ रुपये हो गया। जिन देशों के साथ व्यापार करार हुआ है उनके साथ भी भारत का व्यापार बढ़ा है, परन्तु यह वृद्धि, कुल व्यापार में हुई वृद्धि के अनुपात में ही हुई है। रूस को १९५६ में जहां कुल ३ करोड़ रुपये का माल भेजा गया था, वहां १९५६ में साढ़े बारह करोड़ रुपये भेजा गया और १९५७ में पहले ९ महीनों में १३ करोड़ रुपये से अधिक भेजा गया। इस हिसाब से वार्षिक निर्यात की गति लगभग १७½ करोड़ रुपये आती है। चीन, चेकोस्लोवाकिया, पोलैंड, रूमानिया और यूगोस्लाविया को हुए निर्यात में भी थोड़ी वृद्धि हुई है।

१९५७ में आयात

	मूल्य करोड़ रुपयों	
	१९५६	१९…
धातु तथा ढलाई की चीजें	१५९.७९	२२१.…
मशीनरी	१२५.६४	१७१.…
खनिज तैल	७५.८१	१०७.…
गाड़ियाँ	६८.९०	७५.…
बिजली की मशीनरी	४५.१३	६१.…
दाल तथा आटा	४.३९	५५.…
रासायनिक पदार्थ तथा दवा दारू	४१.९१	४१.…
कच्ची रुई	५३५.९	३१.…
फल तथा सब्जियाँ	१५.०९	२१.…
कागज तथा स्टेशनरी सामान	१६.००	१९.…
सुगन्ध द्रव्य	२७.३३	१९.…
रासायनिक पदार्थ	१४.८१	१९.…
कच्चा ऊन	९.९४	१२.…
कच्चा पटसन	१३.८२	७.…
मसाले	८.१२	२.…
कुल	८१५.०३	१०२५.…

१९५७ में निर्यात

	मूल्य करोड़ रुपयों में	
	१९५६	१९५…
चाय	१४३.१६	१२३.…
जूट सुतली तथा अन्य सामान	११२.४९	११३.…
रुई की फुटकर चीजें	५७.३२	६५.…
मैंगनीज	२१.८२	३१.…
खाल तथा चमड़े की चीजें	२३.०६	२१.…
कच्ची रुई आदि	२५.२१	१८.…
खनिज धातु	१५.२७	१४.…
कच्चा ऊन	१०.६५	१२.…
चीनी	०,८०	१२.…
तम्बाकू	१५.५१	१२.…
लोहा	९.१९	११.…

	१९५६	१९५७
	२०.८०	११.४२
खाद्य तेल	९.६१	९.७८
सुगन्ध द्रव्य	८.७८	९.६९
अभ्रक	९.५६	८.४३
मसाले	५.३४	७.७३
काफी	९.७३	७.०५
लाख	६.०७	६.९९
खाल तथा कच्चा चमड़ा	०.९६	६.६२
पैट्रोलियम उत्पादन		

विभिन्न देशों से व्यापार

विभिन्न देशों से आयात निर्यात के सन्तुलन की स्थिति निम्नलिखित अंकों से स्पष्ट हो जायगी।

	संख्या करोड़ रुपयों में		
	आयात	निर्यात	व्यापार का सन्तुलन
इंग्लैण्ड	२३८.५०	१६१.०२	—७७.४८
अमेरिका	१७०.३२	१४२.६८	—२७.३४
पश्चिम जर्मनी	१२२.८२	१६.२२	—१०६.६०
जापान	५४.४२	२८.३४	—२७.०८
ईरान	५५.४०	६.१५	—४९.२५
आस्ट्रेलिया	१६.४१	२४.७३	+८.३२
रूस	२२.६८	१७.४८	—५.२०
फ्रान्स	२८.६९	१०.२०	—१८.४९
इटली	३० ३९	७.३०	—२३.०९
बेल्जियम	२१.९४	६.५७	—१५.३७
कनाडा	१३.५८	१३.९२	+०.३४
बर्मा	१३.१९	१३.३०	+०.११

हमारा नमक उद्योग

भारत में नमक के उत्पादन में काफी वृद्धि हुई है। पिछले तीन साल में जितना नमक विदेशों को भेजा गया, उससे काफी विदेशी मुद्रा की आय हुई। १९५७ में सबसे अधिक निर्यात हुआ और १ करोड़ २० लाख मन नमक विदेशों को भेजा गया। १९५१-५२ से भारत में अपनी जरूरत भर का नमक तैयार होने लगा और फालतू नमक विदेशों को भी जाने लगा।

भारत में नमक का कुल उत्पादन १९५६ में ८ करोड़ ८९ लाख मन था, किन्तु १९५७ में यह बढ़कर ९ करोड़ ८३ लाख मन हो गया।

सरकार ने नमक उद्योग को बढ़ाने के लिए नमक जांच समिति भी नियुक्त की है। यह समिति नमक के उत्पादन, नमक पर कर, छोटे उत्पादकों को छूट, अच्छी किस्म के नमक, नमक सहकारी समितियों के संगठन तथा मजदूरों की भलाई आदि के सम्बन्ध में जांच और विचार कर रही है। पिछले अप्रैल में हिन्दुस्तान नमक कम्पनी नामक एक कारपोरेशन की स्थापना की गई है। यह कम्पनी सांभर, डीडवाना तथा खरघोडा में नमक के सरकारी कारखानों को अपने हाथ में लेगी। यह नमक तथा उसके उप-पदार्थों को बनाने और उनके उपयोग का प्रबन्ध करेगी। क्षेत्रीय नमक मंडल इस बात पर विचार कर रहे हैं कि नमक-कर का उपयोग इस उद्योग को बढ़ाने में किस प्रकार किया जाए।

भारत में अधिकांश नमक बम्बई, राजस्थान, मद्रास तथा आन्ध्र में तैयार किया जाता है। इन राज्यों में १९५७ में क्रमशः ५ करोड़ २० लाख मन, ९३ लाख मन, १ करोड़ ७२ लाख मन तथा ५५ लाख मन नमक तैयार किया गया।

सेंधा नमक केवल हिमाचल प्रदेश में मण्डी में होता है। यहां प्रति वर्ष लगभग एक लाख मन बिना साफ किया हुआ नमक दस साल तक मिल सकता है।

छोटे उत्पादकों तथा सहकारी समितियों को बढ़ावा देने के लिए सन् १९५६ से शुल्क की दर इस प्रकार निर्धारित की गयी है कि बड़े उत्पादकों को अधिक और छोटे उत्पादकों को कम कर देना पड़े। दस एकड़ से कम क्षेत्र वालों से शुल्क बिलकुल नहीं लिया जाता। १० से १०० एकड़ क्षेत्र वाली सहकारी समितियों से १ आना प्रति मन की दर से लिया जाता है। इस प्रकार छोटे उत्पादकों को सहकारी समितियां बनाने की प्रेरणा मिलती है।

——

हमारा सीमेंट उद्योग

[पृष्ठ ३६४ का शेष]

नये मूल्य

सीमेंट उद्योग के विस्तार के साथ मूल्य का प्रश्न बहुत महत्त्व रखता है। उसे अपने विस्तार और विकास तथा अभिनवीकरण के लिए रुपये की आवश्यकता है। इसलिए यह आवश्यक है कि उसे इतना प्रतिफल अवश्य मिले कि विकास के लिये रुपये का विनियोजन कर सके। इसीलिए तटकर आयोग ने उत्पादन व्यय पर खूब जांच पड़ताल की और विभिन्न कारखानों के लिए अलग-अलग मूल्य निर्धारित किये हैं। उसने जांच पड़ताल के बाद यह सिद्धांत स्थिर किया, क्योंकि कर, श्रम व्यय तथा पूंजी पर ब्याज आदि के बढ़ जाने के कारण यह आवश्यक है कि लगी हुई पूंजी पर १२ प्रतिशत लाभ होना चाहिये, इसलिए विभिन्न मिलों के अधिकतम मूल्य जो सरकार उनको देगी, अलग-अलग रखे गये हैं। जिन मिलों में उत्पादन व्यय कम होता है, उनके मूल्य कम रखे गये हैं। ★

मैसूर और उत्तर प्रदेश के सहकारी कारखानों को आयकर नहीं देना पड़ता, इसलिए उनको ६ प्रतिशत लाभ ही मिलेगा। यह कम आश्चर्य की बात नहीं है कि इतना होते हुए भी इन दोनों कारखानों के मूल्य दूसरे कारखानों की अपेक्षा अधिक रखे गये हैं। इसका अर्थ क्या यह नहीं है कि सरकारी कारखानों में उत्पादन व्यय ज्यादा होता है।

उपभोक्ता-मूल्य में बदल नहीं

उत्पादकों के लिए सीमेंट के भावों में वृद्धि के बावजूद उपभोक्ताओं को देश भर के सभी रेल-स्टेशनों पर वर्तमान मूल्यों पर यानी प्रति टन ११७.५० रु० के हिसाब से ही सीमेण्ट बेचा जायगा। इसके लिए अन्य शुल्कों तथा राज्य व्यापार निगम को दिए जाने वाले शुल्क में कमी की गयी है।

भारत सरकार ने आयोग की निम्न सिफारिशें भी मंजूर की हैं:—सीमेंट का नया कारखाना खुलने और उसमें उत्पादन आरम्भ होते ही उसके खर्च की जांच की जाय, कोयले के दाम बढ़ते ही आयोग से कहा जाय कि वह प्रत्येक कारखाने में सीमेंट का भाव कितना बढ़ाया जाय, इसकी जांच करे और जो कारखाने १९४९ के पहले खोले गए हैं, केवल उन्हीं को विस्तार के लिए सहायता दी जाय।

आयोग ने यह भी सुझाव दिया है कि सीमेण्ट के उत्पादक केन्द्रीय और राज्य सरकारों को सीमेंट के दामों में जो छूट देते हैं, वह बन्द कर दी जाय और यदि यह छूट दी जाती है, तो उसका भुगतान राज्य व्यापार निगम करे।

सीमेंट उद्योग का भविष्य बहुत उज्ज्वल है। यह दुःख की बात थी कि भारत सरकार ने इस उद्योग की अब तक उपेक्षा की थी। किसी समय उद्योग व्यापार मंत्री श्री कृष्णमाचारी ने जो अपने को निजी उद्योग का जेल दारोगा कहते थे, आयोग की सिफारिशों को स्वीकार नहीं किया था और सीमेन्ट उद्योग पर कई प्रतिबन्ध लगा दिये थे। किन्तु अब उद्योग मंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री ने आयोग की सिफ़ारिशों को स्वीकार करके यह प्रगट कर दिया है कि सरकार वास्तविक स्थिति की उपेक्षा नहीं करेगी। इसका एक परिणाम यह होगा कि देश के औद्योगिक क्षेत्र में सरकार को अपना विश्वास पुनः प्राप्त करने का अवसर मिल जायेगा।

———

★ आयोग ने विभिन्न कारखानों के लिए प्रति टन का भाव निर्धारित कर दिया है। यह इस प्रकार हैं: ए० सी० सी०–५८ रु०; आंध्र सीमेंट–६५ रु०; अशोक–६५ रु०; बागलकोट–६२.५० रु०; डालमिया भारत–५४.५० रु०; डालमिया दादरी–५६.५० रु०; दिग्विजय–५६.५० रु०; इण्डिया सीमेंटस–६०.५० रु०; जयपुर उद्योग–५७ रु०; कल्याणपुर ५९ रु०. मैसूर आइरन–५८.५० रु०; उड़ीसा सीमेंट–५५.५० रु०; रोहतास–५४.५० रु०; सोने वैली–५९ रु०; ट्रावनकोर सीमेण्टस ८०.५० रु० और यू० पी० गवर्नमेंट फैक्टरी–५७ रु०।

विशेषांक की सूचना आपने क्या पढ़ ली है ?
इसी अंक में अवश्य पढ़ लें

नदी नहरों में जल-परिवहन

भारतकी नदियोंमें १,६०० मील तक छोटे जहाज और ३,६०० मील तक बड़ी नावें आ-जा सकती हैं। अनुमान है कि यहां नदियोंमें बिजली से चलने वाली नावें ५,००० मील तक आ-जा सकेंगी। यह बात निरन्तर अनुभवकी जा रही है कि देशकी नदी नहरोंमें नौ-परिवहनकी सुविधाएं बढ़ायी जानी चाहिए, ताकि लोगोंको आवागमनके लिए सड़क या रेल-परिवहन पर निर्भर नहीं रहना पड़ेगा। चित्रमें कोचीनकी बंद खाड़ीमें नावोंकी भीड़-भाड़ दिखायी दे रही है।
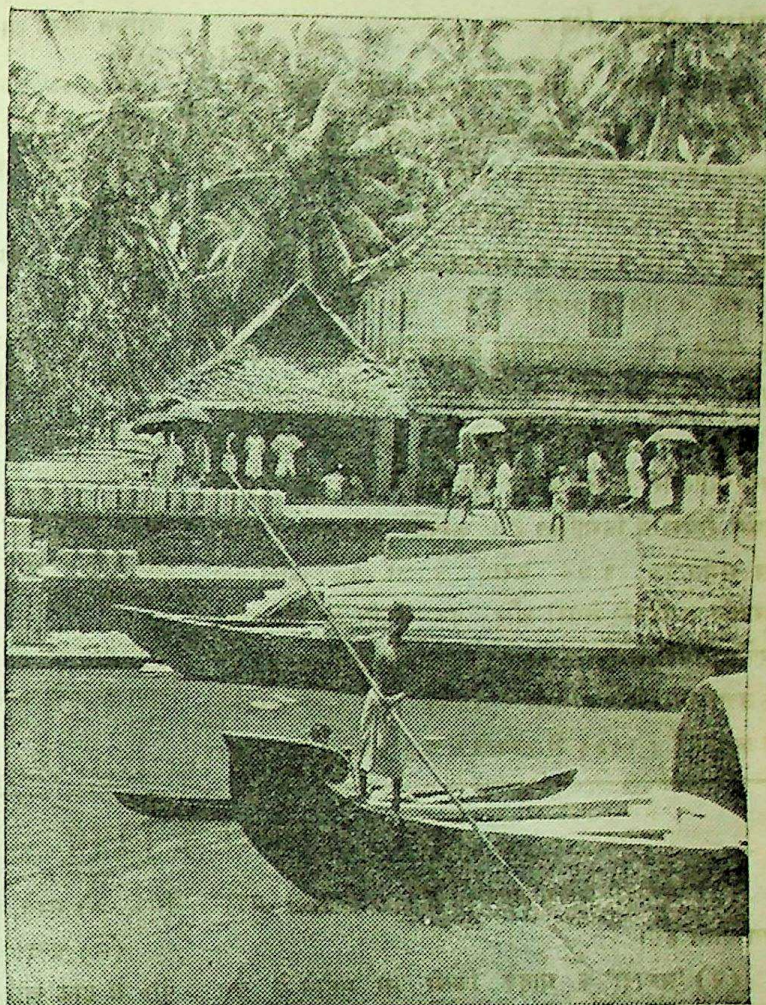
विश्व में रुई का उत्पादन

अन्तर्राष्ट्रीय काटन अड्वाइज़री कमेटी ने अनुमान लगाया है कि चालू वर्ष की अवधि (१९५७-५८) में विश्व का रुई उत्पादन (साम्यवादी देशों के साथ) ३९०.३० लाख गांठ रहेगा, जबकि १९५६-५७ में रुई का उत्पादन २० लाख गांठ अधिक था। कुछ प्रमुख रुई उत्पादन के देशों की संख्या निम्न प्रकार है :

गांठें हजार की संख्या में

	१९५६-५७	१९५७-५८ (अनुमानित)
अमेरिका	१३,०२९	१०,९००
चीन	६,०००	९,२००
रूस	६,०००	५,७००
भारत	४,१८०	४,२००
मेक्सिको	१,७७५	२,०८५
ईजिप्ट	१,४१८	१,३३५
पाकिस्तान	१,४००	१,४३५
ब्राजिल	१,३४०	१,३४०
कुल (अन्य देशों के साथ)	४१,२७१	३९,३३६

उड़ीसा सीमेंट लि०

उड़ीसा सीमेंट लिमिटेड दस-दस रुपये के मूल लागत के ४ लाख आर्डिनरी शेयर जारी कर रही है। कम्पनी ने निश्चय किया है कि वर्तमान शेयर होल्डरों को भी इन शेयरों की खरीद करने की सुविधा दी जाए। जिन शेयर होल्डरों के नाम कम्पनी के रजिस्टर में १५ अगस्त १९५८ को होंगे, वे प्रति दो शेयरों पर एक नए शेयर की खरीद कर सकेंगे। यह उल्लेखनीय है कि यह कम्पनी उड़ीसा सरकार के संरक्षण में है तथा इसकी अधिकृत पूंजी ५ करोड़ रु० है, जो दस दस रुपयों के ४० लाख आर्डिनरी शेयरों और सौ-सौ रुपयों के १ लाख प्रिफेंस शेयरों में विभाजित है। कम्पनी की चुकता पूंजी इस समय रु० १.४० करोड़ है, जो १० लाख पूर्ण भुगतान आर्डिनरी शेयरों और ४० हजार पूर्ण भुगतान प्रिफेंस शेयरों में विभाजित है। कम्पनी के कार्य में १९५४ से उत्तरोत्तर प्रगति हो रही है, जिसका पता उसके लाभांश से लगता है। १९५६ में कम्पनी ने ७.५ प्रतिशत का लाभांश घोषित किया था जो १९५७ में बढ़कर १२ प्रतिशत हो गया।

"सहकारी कृषि पद्धति से पहले सोच विचार।"

सहकारी कृषि पद्धति शासन के रूप में अमल में आने से—इसमें कोई सन्देह नहीं है कि ग्रामीण जनता के आर्थिक तथा सामाजिक जीवन पर महान् आघात होगा। वर्तमान शासक सहकारी कृषि-पद्धति के नाम पर गलत रास्ते को अपना रहे हैं। आधुनिक किसान देश की रीढ़ की हड्डी है। अगर किसान अपनी जमीन से वंचित हुआ तो ग्रामीण जीवन के साथ उसका सम्बन्ध छूट जायगा। ग्राम में रहना वह पसन्द नहीं करेगा। वह या तो दास बन जायगा, या समाज की सहानुभूति न पाकर आसपास के शहरों में भागने की कोशिश करेगा। शहर में वह ऐसे कामों में पैसा खर्च करेगा, जो लाभकारी सिद्ध न होंगे, इसलिये मैं चाहता हूँ कि सरकार सहकारी कृषि पद्धति लागू करने से पहले सौ बार सोच विचार करे।

—श्री एम० विश्वेश्वरय्या

सम्पदा के नियम

(१) 'सम्पदा' प्रत्येक मास की १० तारीख को प्रकाशित होती है।

(२) 'सम्पदा' के ग्राहक किसी भी महीने से बन सकते हैं, पर जनवरी और जुलाई से ग्राहक बनना सुविधाजनक है।

(३) महीने की १५ ता० तक 'सम्पदा' न मिलने पर १५ दिन के अन्दर इसकी सूचना पोस्ट आफिस के उत्तर सहित भेजनी चाहिए, अन्यथा दुबारा प्रति नहीं भेजी जा सकेगी।

(४) पत्र व्यवहार में अपना नाम पता व ग्राहक संख्या स्वच्छ अक्षरों में अवश्य लिखें। बिना ग्राहक संख्या के संतोषजनक उत्तर देना सम्भव नहीं है।

(५) समालोचनार्थ पुस्तकों की २ प्रतियां और विनिमयार्थ पत्र-पत्रिकाएं भेजनी होंगी।

(६) नमूने का अंक मांगने पर चालू वर्ष की प्रति का मूल्य ७५ नये पैसे होगा।

(७) वार्षिक मूल्य ८) रुपये हैं। शिक्षणालयों से सिर्फ ७) रुपये, जो अग्रिम भेजना चाहिए।

(८) चन्दा मनिआर्डर द्वारा भेजें, क्योंकि वी० पी० में डाक खर्च का १० आना अधिक लगेगा। चेक अथवा ड्राफ्ट "अशोक प्रकाशन मन्दिर" के नाम से भेजें।

(९) मनीआर्डर भेजते समय कूपन पर अपना नाम पता अवश्य लिखें। यदि पुराने ग्राहक हों तो ग्राहक नम्बर लिखें, अन्यथा 'नया ग्राहक' लिखें।

(१०) चन्दा समाप्त होने वाले अंक के निकलने के १५ दिन पहले रिमाइन्डर भेजा जाता है। यदि ३० ता० तक चन्दा नहीं आ जाता है, तो उन ग्राहकों को वी० पी० भेजी जाती है।

(११) एजेंसी के नियमों तथा विज्ञापन की दरों तथा अन्य विवरण के लिये पत्र व्यवहार इस पते पर करें:—

व्यवस्थापक 'सम्पदा'
अशोक प्रकाशन मन्दिर
२८/११ शक्तिनगर, दिल्ली—(

सम्पादक—कृष्णचन्द्र विद्यालंकार द्वारा अशोक प्रकाशन मन्दिर के लिए अर्जुन प्रेस, दिल्ली से मुद्रित व प्रकाशित

सम्पदा

राष्ट्र प्रगति अंक

अशोक प्रकाशन मन्दिर, शक्ति नगर, दिल्ली

ग्वालियर रेयन
अरिस्टोक्रैट
डिप्लोमैट
चैम्पियन
सूटिंग
GWALIOR
RAYON
FABRICS

समृद्धि की ओर

सन् १९४७ में राजनीतिक स्वतंत्रता के उद्भव के उपरान्त राष्ट्र में नव निर्माण का युग प्रारम्भ हुआ। केन्द्र एवं राज्यों में जनता की सरकारों ने जनता के सहयोग से सृजनात्मक शक्तियों को बढ़ावा दिया, जिसके फलस्वरूप प्रत्येक क्षेत्र में विकास और निर्माण की गतिविधियां परिलक्षित हुईं। सदियों की सुप्तावस्था के बाद देश के सहकर्मियों ने पहली बार श्रम का स्वर्णिम विहान देखा और अन्य राज्यों की तरह उत्तर प्रदेश में भी पंचवर्षीय योजनाओं का सूत्रपात इस का प्रतीक था। योजना के अन्तर्गत जनसमाज की चतुर्दिक प्रगति के लिए सुव्यवस्थित प्रयास किया गया, जिसके फलस्वरूप खाद्योत्पादन बढ़ा।

योजना के अनुसार प्रदेश में लगभग १० लाख टन अतिरिक्त खाद्योत्पादन का लक्ष्य रखा गया था, जो अवधि समाप्त होने से पहले ही पूरा हो गया।

सिंचन सुविधाएं बढ़ीं—

योजना से पूर्व प्रदेश में कुल सिंचित क्षेत्र ७८ लाख एकड़ ही था, जो योजना समाप्त होने तक बढ़ कर १ करोड़ ६ लाख एकड़ हो गया।

नये क्षेत्रों में बिजली सुलभ हुई—

सिंचाई की सुविधाओं के प्रसार के लिये जिन साधनों एवं प्रक्रियाओं का सहारा लिया गया, उनके फलस्वरूप विद्युत-उत्पादन में स्वभावतः वृद्धि हुई और २३ नये जिलों में प्रकाश एवं उद्योगों के संचालन के लिये "शक्ति" सुलभ हुई।

और इसके साथ ही
औद्योगिक विकास की नींव पड़ी

प्रदेश के इतिहास में सर्व प्रथम सरकार द्वारा दो बड़े उद्योगों की स्थापना की गई। इनमें से एक मिर्जापुर के पास चुर्क नामक स्थान पर सीमेंट का कारखाना है और दूसरा है लखनऊ-स्थित अणुवीक्षण यंत्र कारखाना। ज्ञातव्य है कि सीमेंट कारखाना की उत्पादन क्षमता ७०० टन सीमेंट प्रतिदिन है। लखनऊ के कारखाने में मार्च १९५६ तक लगभग ३३९६५ जलमापक यंत्र एवं २७२ अणुवीक्षण यंत्रों का निर्माण हुआ। द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत सीमेंटके कारखाने का विस्तार किया जायगा और अणुवीक्षण यंत्र कारखाने में डाक्टरी औजार जैसी नयी वस्तुएं बननी आरम्भ हो जायेंगी।

मेट्रिक प्रणाली

क्या है ?
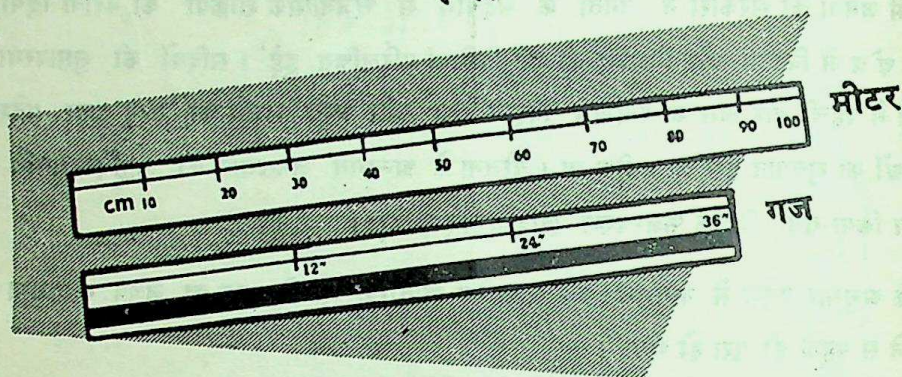
मेट्रिक प्रणाली का नामकरण मीटर से हुआ है जो कि लम्बाई नापने की आधारभूत इकाई है । सभी दाशमिक प्रणालियों की तरह ही इस प्रणाली में भी हिसाब-किताब का आधार १० होता है । लम्बाई, तौल या घनफल की किसी भी इकाई को १० से भाग दे देते हैं अथवा गुणा कर देते हैं ।

मेट्रिक प्रणाली में इकाई से बड़े पैमानों के नाम के पूर्व डेका (१० गुना), हेक्टो (१०×१०=१०० गुना), और किलो (१०×१०×१० =१,००० गुना) शब्द जोड़े जाते हैं तथा उप-इकाइयों के पहले डेसी (१/१०), सेंटी (१/१००) और मिली (१/१,०००) शब्द जोड़ देते हैं ।

अक्तूबर, १९५८ से मेट्रिक प्रणाली के प्रवर्तन का आरम्भ

लम्बाई नापने के मेट्रिक पैमानों को जानिये

लम्बाई नापने की आधारभूत इकाई
मीटर
=लगभग ४० इंच
१ किलोमीटर=५ फर्लांग

उप इकाइयां

१० मिलीमीटर =१ सेंटीमीटर
१० सेंटीमीटर =१ डेसीमीटर
१० डेसीमीटर =१ मीटर

बड़े पैमाने

१० मीटर =१ डेकामीटर
१० डेकामीटर =१ हैक्टोमीटर
१० हैक्टोमीटर =१ किलोमीटर

OA 58/109

2

भारत सरकार द्वारा प्रसारित

बिड़ला काटन स्पिनिंग एण्ड वीविंग मिल्स लि.

के

अधिकारी, कर्मचारी, व कारीगर देश
के औद्योगिक विकास में प्रयत्नशील हैं

देश के जन-जन के लिए

हर किस्म का कपड़ा मिल में तैयार होता है

पंजाब की श्रेष्ठ रुई से

साड़ी, धोती, छींट, लट्ठा,
शर्टिंग, मलमल, कोटिंग, वायलीन,
खादी, दुसूती, चादर आदि

कुशल कारीगरों द्वारा बनाये जाते हैं

बिड़ला काटन स्पिनिंग एण्ड वीविंग मिल्स
लिमिटिड दिल्ली ।

संचार और यातायात

राजस्थान में यातायात का विकास

★ १९४९ में ८४१७ मील सड़कें थीं

★ १९५६ में १३,३५८ मील सड़कें हो गईं, और

★ १९६१ तक ४,०६४ मील नई सड़कें

अर्थात्

१७,४२२ मील कुल सड़कें हो जाएंगी

नई सड़कें बनाने के लिए

१९५१ से ५६ तक ५ करोड़ रु० खर्च हुए।

१९६१ तक ९ करोड़ रु० खर्च किए जाएंगे।
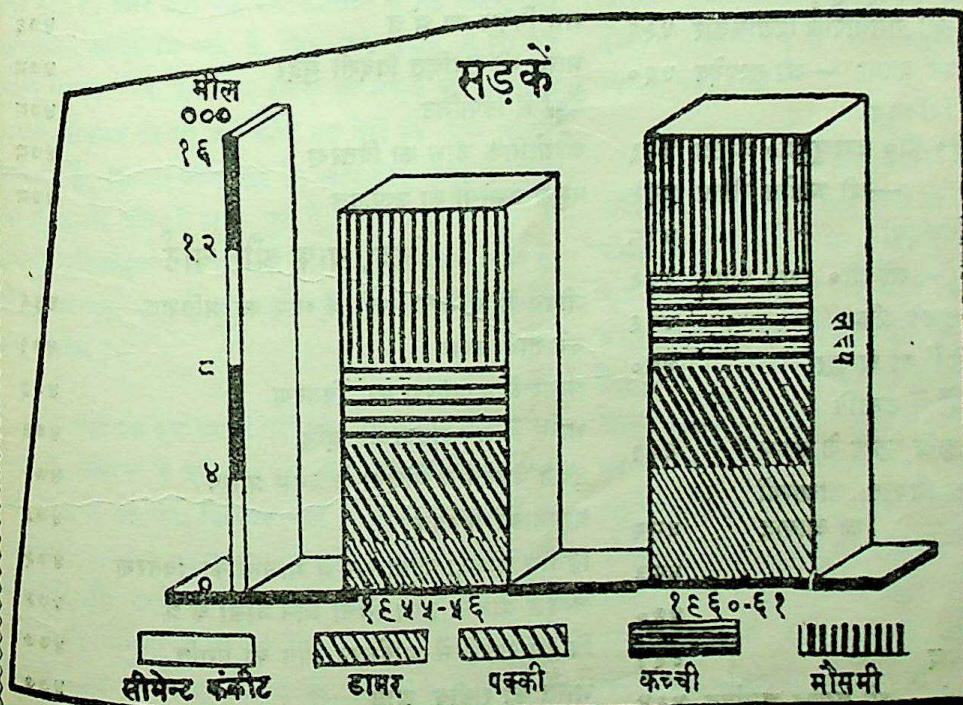
१९६१ तक राजस्थान की २१० तहसीलों को सभी जिलों के साथ सड़कों द्वारा सम्बन्धित कर दिया जाएगा।

विषय-सूची

विभिन्न प्रदेशों की प्रगति

तालिकाएं

चित्र, ग्राफ और चार्ट

वर्ष : ७] अगस्त-सितम्बर, १९५८ [अङ्क : ८-९

हमारी दूसरी योजना : सफलताएं व समस्याएं

आज, जब देश पंचवर्षीय योजना के तीसरे वर्ष में से गुजर रहा है, और उसे नई परिस्थितियों व नई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है, यह आवश्यक है कि हम अपनी स्थिति पर एक बार किसी भी प्रकार का आग्रह व पक्षपात छोड़कर विचार करें और यह देखें कि हम कितना आगे बढ़े हैं, कितना पीछा हटे हैं, और पीछे हटने के कारण क्या हैं, हमसे कौनसी भूलें हुई हैं, नई परिस्थितियों में कौनसी कठिनाइयां पैदा हो गई हैं, हमारा भविष्य क्या है, नई संभावनाएं क्या हैं और हमें किस नीति का आश्रय लेना चाहिए ?

यह नहीं कि इन प्रश्नों पर हम विचार नहीं करते। संसद में, कांग्रेस के अधिवेशनों में, विभिन्न राजनैतिक दलों के मंचों पर तथा विभिन्न पत्रों में और सम्मेलनों में, विशेषकर सरकार द्वारा आयोजित विविध विचारणीय सम्मेलनों और उद्योग व्यापार संस्थानों में पंचवर्षीय योजना और उसके विभिन्न अंगों पर विचार होता है और खूब होता है। इन स्थानों पर योजना की अत्युक्ति व चाटुकारिता-पूर्ण प्रशंसा भी की जाती है और कठोर आलोचना भी। शासन से सम्बद्ध नेता या अधिकारी प्रशंसा के पुल बांधते नहीं थकते और आलोचक धज्जियां उड़ाने में कसर नहीं छोड़ते। इनमें से अधिकांश प्रशंसाएं व आलोचनाएं एकांगी होती हैं, विशेष पक्ष के साथ सम्बद्ध होने के कारण वे निष्पक्ष नहीं होतीं।

\+ \+ \+

इसमें संदेह नहीं कि प्रथम पंचवर्षीय योजना की संतोषजनक सफलता के बाद जिस आशा व उत्साह से दूसरी योजना प्रारम्भ की गई थी, गत दो तीन वर्षों तक उसे पूर्ण करने के प्रयत्नों के बाद आज हमारी वह आशा, वह उमंग और वह आशामय वातावरण कुछ शिथिल पड़ गया है। हमने जिन कठिनाइयों की कल्पना भी न की थी, वे हमारे सामने आ गईं। इनमें से कुछ कठिनाइयां ऐसी भी हैं, जिन पर हमारा कोई वश न था। गत दो वर्षों से इन्द्र भगवान् की कृपा से हम वंचित हो गये। अनावृष्टि और अतिवृष्टि दोनों कारणों से हमारा अन्न-उत्पादन खतरे की सीमा तक गिर गया और हमें आज करोड़ों रुपयों का बोझ विदेशी मुद्रा पर डालकर अनाज मंगाना पड़ रहा है। प्रति दो वर्षों में जनसंख्या १ करोड़ बढ़ जाती है, अनाज की दुर्लभता ने जीवन निर्वाह की समस्त वस्तुओं को महंगा कर दिया है। देश में महंगाई बढ़ने का दूसरा कारण मुद्रा-

अनेक बाधाएं : लक्ष्य में कमी : औद्योगिक क्षेत्र में प्रगति

प्रसार भी है, जो इस योजना के लिए अनिवार्य था। बढ़ती हुई महंगाई ने योजना को और भी अधिक व्ययसाध्य बना दिया। विदेशों में भारतीय माल की प्रतिस्पर्धा बढ़ गई है। अन्य देश नयी वैज्ञानिक मशीनरी का उपयोग करके माल सस्ता पैदा करने लगे हैं और बेकारी बढ़ने के भय से यहां रेशनलाइजेशन का विरोध किया जाता है। इस योजना में भारी उद्योगों पर विशेष बल दिया गया, और पूंजीगत माल विपुल मात्रा में मंगाना पड़ा। फलतः विदेशी मुद्रा तेजी से कम होती होती भयजनक स्थिति तक पहुँच गई। अन्य देशों और विशेषकर अमरीका की आर्थिक स्थिति में शिथिलता का प्रभाव निर्यात व्यापार पर प्रतिकूल पड़ा। स्वेज नहर के अन्तर्राष्ट्रीय संकट ने भी विदेशी वस्तुओं के मूल्य कुछ सीमा तक बढ़ा दिये, यद्यपि उतने नहीं, जितने अधिकारी योजना की सफलता बखानने के लिए पेश करते हैं। इन सबका परिणाम यह हुआ कि योजना पूर्ति के मार्ग में भारी कठिनाइयां आईं। उद्योग को यथेष्ट विकास न मिल सकने के कारण बेकारी की समस्या, जो सर्वप्रथम और महत्वपूर्ण थी, हल होने में नहीं आ रही। प्रति वर्ष लाखों युवक यूनिवर्सिटियों से निकलते हैं, किन्तु उन्हें आजीविका नहीं मिल पाती। भले ही हमारे आत्म-विश्वास और आत्माभिमान को धक्का न लगे, इसलिए बार-बार अपनी पूर्ण लक्ष्य प्राप्ति के दावों के बावजूद हम अपनी योजना के ४८ अरब रु० के लक्ष्य, जो बढ़कर ५५-६० अरब रु० तक जा पहुँचे थे, योजना के तत्व के नाम से ४५ अरब रु० तक गिरा देने पड़े। संभावना तो यह है कि यदि परिस्थितियां शीघ्र अनुकूल न हुईं, तो और भी कम करने पड़ेंगे। आज की कठोर परिस्थितियों से इन्कार करके ४८ अरब रुपये के मूल लक्ष्य पर डटे रहने का दावा करना वस्तुतः एक प्रकार की आत्म प्रवंचना ही है। हमें खुले दिल से वास्तविक स्थिति को स्वीकार कर लेना चाहिए।

× × ×

इन न्यूनताओं व त्रुटियों के बावजूद यदि कोई यह कहना चाहे कि देश ने प्रगति नहीं की है या संतोषजनक प्रगति नहीं की है तो वह यथार्थ और सत्य से विपरीत होगा। प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि पर बल दिया गया था, तो इस योजना में उद्योग को अधिक महत्वपूर्ण स्थान मिला है। इसके परिणामस्वरूप दो महत्त्वपूर्ण सफलताएं प्राप्त हुई हैं। देश में सैकड़ों ऐसी वस्तुएं तथा मशीनरी बनने लगी हैं, जिनकी कुछ वर्ष पूर्व कल्पना भी न की जाती थी। अनेक नये उद्योग, जिनका प्रारम्भ प्रथम पंचवर्षीय योजना में हो चुका था, अधिक उन्नत हुए हैं, उनका उत्पादन बढ़ा है। इस विशेषांक के आगामी पृष्ठों में पाठक औद्योगिक उन्नति के सम्बन्ध में अनेक लेख, ग्राफ व तालिकाएं पावेंगे, जिनसे इसकी पुष्टि होती है। इस दिशा में दूसरी सफलता यह हुई है कि लोहे व इस्पात के तीन विशालकाय कारखानों का निर्माण प्रारम्भ हो चुका है। इन कारखानों के एक एक भाग के आगामी वर्ष तक पूर्ण होकर उत्पादन प्रारम्भ हो जाने की आशा है। सरकार ने अत्यन्त बुद्धिमत्तापूर्वक ब्रिटेन, रूस व जर्मनी को इनके निर्माण का उत्तरदायित्व सौंप कर इनमें सफलता व शीघ्रता के लिए प्रतिस्पर्धा उत्पन्न कर दी है। इन विशालकाय योजनाओं के निर्माण में समय तो लगता ही है। काम सुचारू रूप से चल रहा है, तो मानना चाहिए कि प्रगति हो रही है। इन तीन विशाल कारखानों के अतिरिक्त बिजली की मशीनें व रासायनिक पदार्थ तैयार करने के भारी कारखानों का सूत्रपात हो चुका है। प्रारम्भ में तो सरकारी उद्योगों को निजी उद्योगों ने मात दे दी थी, पर गत दो वर्षों में वे भी आगे बढ़े हैं। उन्होंने अनुभवों से प्राप्त अपनी न्यूनताओं को दूर किया है। खाद के दो नये कारखाने खोलने की तैयारी समाप्त प्राय है। रेलगाड़ी के डिब्बे, इंजिन, टेलीफोन, केबल आदि प्रायः सभी उद्योगों का विकास हुआ है। लिगनाइट कोयले की खानों का अनुसंधान व उनका कार्य प्रारम्भ करने की योजना बड़ी भारी सफलता है। यातायात के साधनों का बहुत विकास हुआ है, यद्यपि आवश्यकता जिस तेजी से बढ़ी है, उतना नहीं कर पाये। कहां हम चीनी व सीमेंट का आयात करने लगे थे, अब इन दोनों का निर्यात करने लगे हैं। बिजली का विस्तार इन तीन वर्षों में जितना हुआ है, वह भी संतोषजनक है। हजारों नगरों व गांवों तक बिजली मिलने लगी है। प्रत्येक राज्य के विभिन्न नगरों

की औद्योगिक बस्तियां एक भारी चहल-पहल से मुखरित हो उठी हैं और तरह-तरह के लघु उद्योगों के २०० कारखाने करोड़ों रुपयों की विविध सामग्री तैयार करने लगे हैं। यह सब सफलताएं हैं, जिन पर हम संतोष प्रकट कर सकते हैं। प्रारम्भ किये हुए अनेक उद्योगों की आगामी दो वर्षों में पूर्णतः हमें बतायगी कि देश औद्योगिक विकास की दृष्टि से इन पांच वर्षों में बीस वर्ष आगे निकल गया है।

\+ + +

औद्योगिक विकास के अनन्तर सिंचाई की नई योजनाओं के सम्बन्ध में भी हम निश्चित गति से आगे बढ़े हैं। विशालकाय योजनाओं में तो समय लगेगा, फिर भी भाकरा नांगल, हीराकुड व अन्य अनेक नदी-घाटी योजनाओं में आंशिक सफलता प्राप्त कर ली गई है और लाखों एकड़ नई भूमि में सिंचाई होने लगी है। सत्य तो यह है कि जितना पानी अब इन योजनाओं से उपलब्ध होने लगा है उसका उपयोग हम नहीं कर पा रहे। विशालकाय योजनाएं अनेक खण्डों में पूर्ण होंगी। इनमें से कुछ खण्ड पूर्ण हो गये हैं और बाकी खण्डों पर द्रुतगति से काम जारी है। पं० नेहरू के शब्दों में ये वस्तुतः देश के नये तीर्थ बन गये हैं, जिन्हें भारतीय श्रद्धा के साथ तथा विदेशी पर्यटक आश्चर्य के साथ देखते हैं। इन बड़ी योजनाओं के निर्माण कार्य की पूर्णता में समय तो लगेगा, इसलिए अब छोटी सिंचाई योजनाओं पर विशेष बल दिया जाने लगा है। इनपर व्यय भी कम होता है और सिंचाई शीघ्र होने लगती है। ऐसी योजनाएं प्रायः प्रत्येक राज्य में तैयार हो रही हैं और बहुत सी समाप्त प्राय हैं। छोटे-छोटे बांध, जलाशय, नलकूप या कुएं हजारों की संख्या में बनाये जा रहे हैं। विभिन्न राज्यों की विकास योजनाओं के प्रकरण में पाठक देखेंगे कि ये योजनाएं किस तरह कृषि को लाभ पहुँचा रही हैं।

\+ + +

सामुदायिक योजनाएं अपने-अपने क्षेत्र में जो काम कर रही हैं, वह अनेक त्रुटियों व शिथिलताओं के बावजूद प्रशंसनीय है। सब जगह एक सा काम नहीं हो रहा। कार्यकर्ताओं की योग्यता और लगन के अनुसार कहीं काम अच्छा हो रहा है और कहीं कम, पर फिर भी जो काम हुआ है, उससे अधिक मूल्यवान अनुभव प्राप्त किये गये हैं। इनमें अफसरीपन के दोष देखकर उन्हें देहातियों की अपनी योजना बनाने का विचार किया गया है। ग्रामों की जनता में एक नई चेतना उत्पन्न हो रही है। किसानों व मजदूरों की उन्नति के सम्बन्ध में गत वर्षों में जो कुछ हुआ है, वह यद्यपि पूर्ण आदर्श की स्थिति तक नहीं पहुँचा, तथापि वह ऐसा नहीं है कि उसके लिए शासन की प्रशंसा न की जा सके। पाठक श्री गुलजारीलाल नन्दा के लेख में पढ़ेंगे कि जमींदारी उन्मूलन, किसानों के अधिकार, चकबन्दी, भू-स्वामित्व की सीमा आदि सभी दिशाओं में प्रगति हुई है। अनेक विवादग्रस्त प्रश्नों पर सभी राज्य अन्तिम निश्चय नहीं कर पाये, किन्तु यह स्वाभाविक है और इसलिए इन कमियों को बहुत महत्व नहीं देना चाहिए।

\+ + +

अन्न का संकट निःसन्देह बढ़ गया है। देश की खाद्य-व्यवस्था छिन्न-भिन्न होती सी प्रतीत हो रही है, वस्त्र उद्योग का निर्यात भी कुछ कम होने लगा है, बेकारी के कम होने के आसार नजर नहीं आ रहे हैं, विदेशी मुद्रा इस स्थिति में पहुँच गई है कि राष्ट्र के दिवालियेपन का खतरा दीखने लगा है। इन सब कारणों से कुछ लोग कहने लगे हैं कि राष्ट्र प्रगति नहीं कर रहा, किन्तु स्वाधीन भारत के शैशवकाल में यह स्वाभाविक है। एक शिशु दांत, दस्त, बुखार आदि अनेक संकटों में से गुजर कर बड़ा होता है। इससे घबराना नहीं चाहिए। हम अपने राजनैतिक व आर्थिक स्वार्थों से प्रेरित होकर भले ही कुछ आलोचना करें (हमारा यह अभिप्राय नहीं है कि देश में कोई आलोचक निष्पक्ष नहीं है) किन्तु विदेशी अर्थशास्त्रियों और अनुभवी शासकों की दृष्टि में हम जो प्रयत्न कर रहे हैं, वे सही दिशा में किये जा रहे हैं। अमरीका, इंगलैंड और अन्य देश भारत की तटस्थता को भली भांति जानते हैं, इसलिए वे जब सहायता देते हैं या विश्व बैंक कोई ऋण देता है, तो हमारी योजनाओं की प्रगति, सफलता की संभावना तथा

विदेशों से सहायता : सुदृढ़ आर्थिक स्थिति : हमारे नये अनुभव

देश की आर्थिक स्थिति की सुदृढ़ता आदि की भली भांति परीक्षा करके अपनी जेब से रुपया निकालता है। सम्पदा के पाठकों को मालूम होगा कि पिछले दिनों वाशिंगटन में अमेरिका, इंगलैंड, जापान, जर्मनी और कनाडा आदि देशों तथा विश्व बैंक के अधिकारियों की एक कांफ्रेंस हुई थी। इसमें भारत की पंचवर्षीय योजनाओं के लिए सहायता देने का निश्चय किया गया। कुछ सूत्रों के अनुसार ब्रिटेन व पश्चिमी-जर्मनी क्रमशः २१.१० करोड़ तथा १० करोड़ डालर देंगे। अमेरिका का सहयोग तो है ही, जापान लोह-उद्योग में सहायता करने जा रहा है। सम्भवतः भारत ही ऐसा देश है, जो रूस से भी सहायता प्राप्त कर रहा है और लोकतंत्री देशों से भी। रूमानिया व जैकोस्लावेकिया आदि साम्यवादी देशों से भी ऐसे समझौते हो रहे हैं। रूमानिया यदि तेल-संशोधन के उद्योग में सहायता देगा, तो जैकोस्लोवाकिया एक फाउण्ड्री फोर्जके लिए १० करोड़ रु० दे रहा है। यही हाल अन्य देशों का है, विश्व बैंक से भी विपुल राशि में भारत को ऋण मिला है। भारतीय उद्योगों में विदेशी पूंजी का स्वागत किसी राजनैतिक दल की दृष्टि में आक्षेप योग्य हो, किन्तु विदेशी पूंजी की देश में वृद्धि इस बात का तो द्योतक है ही कि देश की अर्थ-व्यवस्था सुदृढ़ तथा विश्वसनीय है। दिसम्बर १९५५ में विभिन्न उद्योगों में करीब ५ अरब रु० विदेशी पूंजी लगी थी। इन वर्षों में भी इसमें कोई कमी नहीं हुई। बिना किसी राजनैतिक गुट में शामिल हुए, विभिन्न देशों से सहायता ले लेना योजनाओं की प्रगति और दूरदर्शितापूर्ण नीति का द्योतक है। हाल ही में भारत के वित्तमन्त्री श्री मोरारजी देसाई विदेशों में गये हैं आशा है कि वे पर्याप्त सफलता प्राप्त करेंगे।

+ + +

किन्तु उक्त स्थूल सफलताओं से भी अधिक महत्व हम उन अनुभवों को देते हैं, जो इन वर्षों में हमने प्राप्त किये हैं। हमें यह न भूल जाना चाहिए कि समस्त विश्व में भारत ही एक देश है, जो लोकतन्त्र पद्धति को अपनाते हुए एक सुनियोजित अर्थ व्यवस्था पर चल रहा है। फिर भारत की नई अर्थ-नीति है, नई समस्याएं रोज पैदा होती हैं, नये शासक व अर्थशास्त्री हैं, जिन्हें एक सुनियोजित विकास योजना को चलाना है। बहुत सी ऐसी समस्याएं आ जाती हैं, जिन पर मानव का कोई नियंत्रण नहीं। अनावृष्टि या अतिवृष्टि, विदेशी उत्पादकों की प्रतिस्पर्धा या स्वावलम्बन की प्रवृत्ति आदि को हम कैसे वश में कर सकते हैं। प्रथम योजना के प्रारम्भ से अब तक करीब चार करोड़ जनसंख्या बढ़ गई है।

हमने गत तीन वर्षों में जो अनुभव प्राप्त किये हैं, वे किसी भी देश के आर्थिक इतिहास में महत्वपूर्ण हैं। यह हमारी विशेषता है कि हम किसी वाद विशेष से बहुत चिपके नहीं रहे, कुछ आग्रह अवश्य किया है, किन्तु कुछ समय देख सुनकर हमने उसमें परिवर्तन स्वीकार कर लिया है। योजना के लक्ष्यों को ४८ अरब से रु० से ४५ अरब रु० करना, निजी उद्योगों के प्रति कुछ अधिक सहानुभूति, आयात व निर्यात नीति में नये परिवर्तन इन्हीं नये अनुभवों की प्रमाण हैं। आयातों की उदार नीति नियंत्रणों व प्रतिबंधों द्वारा जकड़ी जा रही हैं। बड़ी सिंचाई योजनाओं के परिणामों की दूर वर्तिता देखकर छोटी सिंचाई योजनाओं के प्रति अधिक उत्सुक हो उठे हैं। उत्तरप्रदेश में नल-कूपों की अपेक्षा फिर कुओं को प्राथमिकता दी जाने लगी है। किसानों के व्यापारिक फसलों के मोह को दूर करने की ओर भी ध्यान गया है। हमने एक बड़ा अनुभव यह प्राप्त किया है कि भारी उद्योगों के प्रलोभन में कृषि की उपेक्षा खतरनाक होगी। मानसून के सहारे कब तक बैठा जा सकेगा, इसलिए द्वितीय पंचवर्षीय योजना में कृषि फिर अपनी प्रथम स्थिति पर आसीन हो गई है। प्रधानमंत्री पं० नेहरू के शब्दों में भारत सरकार और योजना आयोग ने कृषि की ओर पर्याप्त ध्यान न देकर एक कड़वा सबक सीख लिया है। वे कहते हैं कि "औद्योगिक प्रगति की अपेक्षा कृषि-उत्पादन बढ़ाने की समस्या "बहुत उलझनपूर्ण" और मुश्किल है, क्योंकि इसका संबंध विशाल जन-समूह से है। यदि साधन हों तो तीन-चार इस्पात के कारखाने खड़े कर लेना मुश्किल नहीं है। लेकिन पुराने रीति-रिवाजों और काम के पुराने ढंगों से बनी विशाल कृषि-जनसंख्या से निपटना कहीं

भारत की आर्थिक समृद्धि के उत्तरदायी अधिकारी
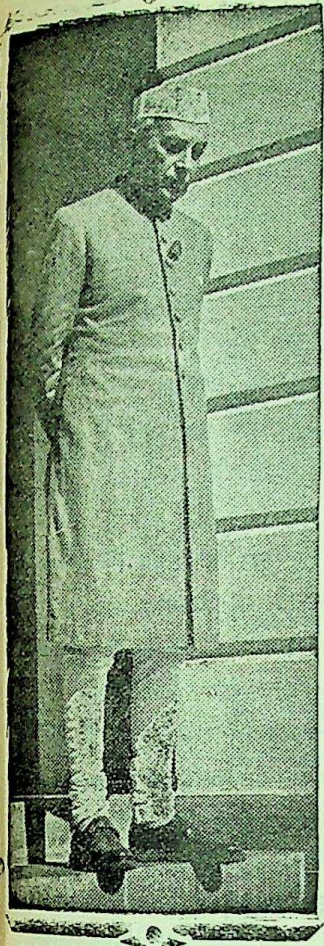
वित्त मंत्री श्री मुरारजी देसाई

उद्योग मंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री

प्रधान मंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू
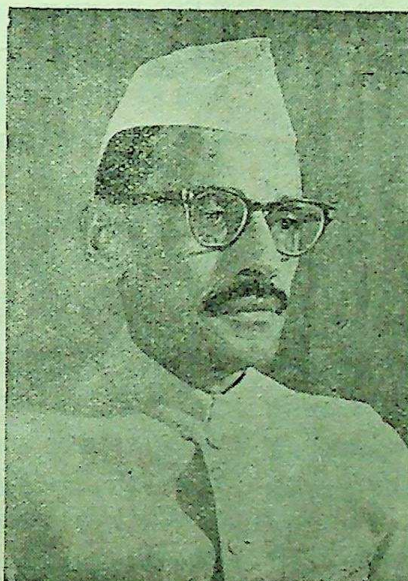
खाद्य मंत्री श्री अजित प्रसाद जैन

योजना मंत्री श्री गुलजारी लाल नन्दा

भारी उद्योग मंत्री श्री स्वर्णसिंह

बहुत मुश्किल है।" भावुकतापूर्ण भूमि-सुधारों के मोह में उत्पादन वृद्धि की मूल समस्या की उपेक्षा हो रही थी, उस ओर भी हमारा ध्यान गया है। जिस भावुकता के वश में तेजी से नये कानून बन रहे थे, अब उस भावुकता का स्थान विवेक लेने लगा है। केरल की कम्युनिस्ट सरकार उद्योग विकास के लिए उद्योगपतियों से वास्तविक आधारों पर समझौते करने लगी है। ये अमूल्य अनुभव हैं, जो इन वर्षों की प्रमुख प्रगति हैं, जिनका हम विशेष स्वागत करेंगे।

\+ \+ \+

किन्तु एक ओर जहां हम यह कहना चाहते हैं कि देश उचित दिशा में उन्नति कर रहा है, इस खेदजनक सत्य से भी इन्कार नहीं किया जा सकता कि देश के हम नागरिकों ने अपने कर्तव्य-पालन में सतर्कता और उत्साह का प्रदर्शन नहीं किया। आखिर, आज समस्त देश में क्या हो रहा है? जगह-जगह हड़तालें हो रही हैं, मजदूर नेता अपने राजनैतिक स्वार्थों के साधन के लिए—कभी जमशेदपुर, कभी गोदी कर्मचारी, कभी अध्यापक, कभी बीमा या बैंक कर्मचारी—हड़तालों का आयोजन कर रहे हैं, अन्न के दैवी संकट को हल करने में सहायक न होकर हम इसी को अपनी शक्ति-प्रदर्शन का महान् स्वर्णीय अवसर समझ रहे हैं, जगह-जगह भूख हड़तालें, अन्न गोदामों पर अनुत्तरदायित्वपूर्ण हमले, विद्यार्थियों की हड़तालें, जयपुर में वकीलों का अवांछनीय आन्दोलन, महागुजरात व संयुक्त महाराष्ट्र के एकत्ववाती दुराग्रह, न जाने क्या-क्या समस्त देश में हो रहा है। इन सब आन्दोलनों ने जनता और देश का ध्यान आर्थिक रचनात्मक कार्यक्रम से हटा दिया है। हमने यह मान लिया है कि देश की प्रगति का सारा भार सरकारी मंत्रियों व विधायकों पर है, जनता का उसमें कोई कर्तव्य नहीं। असंतोष व विक्षोभ के विराट् प्रदर्शन तक हमारे कर्तव्य की इति श्री हो जाती है। देश में यदि छोटी बचत आन्दोलन सफल हो तो क्या शासक दल का ही लाभ है? देश के सार्वजनिक हित के कामों में—अन्न संकट के निवारण और स्वदेशी प्रचार आदि में प्रत्येक नागरिक को अपना योगदान देना है। विक्षोभ और असन्तोष के समाचार पढ़ने लगें, विरोधी प्रदर्शन देखने लगें, तो ऐसा प्रतीत होगा कि देश पीछे जा रहा है किन्तु तथ्य इसके विपरीत हैं।

\+ \+ \+

यह प्रश्न भी कम विचारणीय नहीं है कि आखिर शासन जनता का सहयोग प्राप्त करने में सफल क्यों नहीं हो रहा? आखिर, हमारी नीति व कार्य-पद्धति में कुछ मौलिक त्रुटियां अवश्य हैं, जिनकी ओर ध्यान न देने से जनता योजनाओं की प्रगति की ओर आकृष्ट नहीं हो रही। भ्रष्टाचार, महंगाई व नफाखोरी अब तक नहीं रुक सके। लगातार होने वाले बांध योजनाओं के स्कैण्डल जनता में क्षोभ उत्पन्न कर देते हैं। जीवन-निर्वाह सुलभ होने की बजाय अधिक महंगा होता जा रहा है, सरकार व उसके अधिकारी आज भी आडम्बरों में विश्वास करते हैं। मितव्यय की अपेक्षा टैक्स बढ़ाने की नीति पर शासकों का अधिक विश्वास है। भिन्न मत रखने वाले अर्थशास्त्रियों के सुविचारित मतों की भी उपेक्षा होती है, किन्तु विदेशी विशेषज्ञों पर लाखों रुपया पानीकी तरह बहाया जाता है। बात-बात के लिए इङ्गलैंड, रूस या चीन आदि की नकल की जाती है। उन देशों में डेलीगेशन जाते हैं, भारतीय प्रतिभा का मानो अस्तित्व ही न हो। समाजवाद साधन की बजाय साध्य बनता जा रहा है, राष्ट्रीय उत्पादन में वृद्धि का उद्देश्य सामने रखे बिना हम उद्योगों के राष्ट्रीयकरण की रट लगाने लगे हैं। पश्चिम की इसी नकल की ओर संकेत करते हुए पं० नेहरू ने ठीक ही कहा है कि पश्चिमी अर्थशास्त्र उपयोगी होने के बावजूद हमारी आज की समस्याओं की दृष्टि से बहुत कम महत्व रखता है। यही बात मार्क्सवादी साहित्य पर लागू होती है। यद्यपि उससे आर्थिक प्रवृत्तियों पर काफी रोशनी पड़ती है, तथापि आज के लिए वे पुराने हैं। हमें दूसरों की महानता से फायदा उठाते हुए अपने ही अपने तरीकों से सोचना है।" भूदान और सर्वोदय अर्थशास्त्र के प्रति हमारी सहानुभूति मौखिक वाणी से आगे नहीं बढ़ती। निर्यात बढ़ाने के आकर्षण में अन्न की कृषि उपेक्षित हो रही है। इन कमियों को दूर करके अपनी चाल, और भी तेज कर सकते हैं।

—
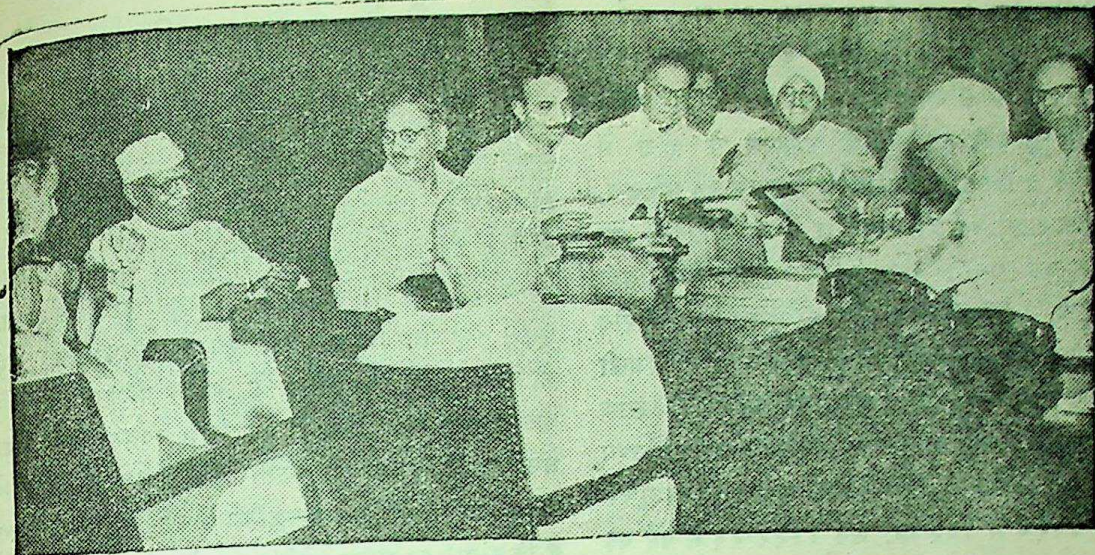
दूसरी पंचवर्षीय योजना पर आयोग के सदस्य हस्ताक्षर करते हुए।

पंचवर्षीय योजना के लक्ष्य और उनकी पूर्ति

श्री राजनारायण गुप्त

भारत का आर्थिक विकास और जनसाधारण का कल्याण योजनाबद्ध कार्यक्रम के द्वारा ही हो सकता है, इस संबंध में दो मत नहीं। आज सभी अर्थशास्त्री एवं राजनैतिक नेता इस विषय में एकमत हैं कि योजनाओं के द्वारा ही हम देश का द्रुत गतिसे विकास कर सकते हैं तथा आर्थिक लोकतंत्र की जड़ें मजबूत कर सकते हैं।

मतभेद इस बात पर है कि पंचवर्षीय योजनाओं का स्वरूप क्या हो? इन योजनाओं में कृषि पर अधिक बल दिया जाय, या उद्योगों पर? उद्योगों में आम खपत की वस्तुओं के उत्पादन पर अधिक बल दिया जाय या मूल और भारी उद्योगों पर? कुल मिला कर योजनाओं में कितना धन व्यय किया जाय? इस धन की प्राप्ति किन साधनों से हो? देश के आर्थिक विकास में निजी उद्योग एवं सरकारी उद्योगों का क्या स्थान हो?

प्रथम योजना की सफलताएं

इस बात पर भी सभी अर्थशास्त्री एकमत जान पड़ते हैं कि हमारी प्रथम पंचवर्षीय योजना अत्यन्त सफल सिद्ध हुई। इसका एक कारण तो यह था कि इस योजना काल में हमारे लक्ष्य अत्यन्त व्यावहारिक रक्खे गये तथा कुल योजना पर इतना धन व्यय करने का कार्यक्रम बनाया गया कि उससे देश की अर्थ व्यवस्था पर अनुचित दबाव नहीं पड़ा। साथ ही देश की तत्कालीन परिस्थितियों को देखते हुए, उस योजनाकाल में कृषि के अधिक उत्पादन पर जो बल दिया गया, वह अत्यन्त ही वांछनीय था। भगवान इन्द्र ने भी प्रसन्न होकर ठीक समय पर वर्षा की, और हमारे खाद्य उत्पादन के लक्ष्य पार हो गये। औद्योगिक क्षेत्र में भी इस योजनाकाल में जनसाधारण की प्रगति हुई, कारण वर्तमान कारखानों की उत्पादन क्षमता का पूरा लाभ उठाया गया, और उनमें दो-दो और तीन-तीन पारियों में काम करके, पांच वर्ष में उत्पादन को करीब ४० प्रतिशत से भी आगे बढ़ा दिया गया। मोटे तौर पर हमारी प्रथम पंचवर्षीय योजना की सफलताएं इस प्रकार थीं:

राष्ट्रीय आय में लगभग १८ प्रतिशत की वृद्धि हुई। सन् १९५०-५१ में हमारी राष्ट्रीय आय ९,११० करोड़

रु.या थी; सन् १९५५-५६ में वह बढ़कर १०,८०० करोड़ रुपया हो गई। इस अवधि में प्रति व्यक्ति आय २४८ रुपये से बढ़ कर २७४ रुपया हो गई; इस प्रकार उसमें ११ प्रतिशत की वृद्धि हुई। कृषि उत्पादन के क्षेत्र में आश्चर्यजनक प्रगति हुई। अनाज का उत्पादन २० प्रतिशत, कपास का उत्पादन ४५ प्रतिशत और मुख्य तिलहनों का ८ प्रतिशत बढ़ गया। सिंचाई की छोटी और बड़ी योजनाओं के परिणामस्वरूप सिंचित भूमि में १ करोड़ ६० लाख एकड़ से अधिक भूमि की वृद्धि हुई। बिजली का उत्पादन १९५०-५१ में ६ अरब ७७ करोड़ ५० लाख किलोवाट घंटे था; सन् १९५५-५६ में वह बढ़ कर ११ अरब किलोवाट घंटे हो गया। औद्योगिक उत्पादन का सूचक अंक सन् १९५० में १०५ था, सन् १९५५-५६ में वह बढ़ कर १६२ हो गया। इस प्रकार उसमें लगभग ५६ प्रतिशत की वृद्धि हुई।

जिस समय प्रथम पंचवर्षीय योजना तैयार की गई थी, देश युद्ध और बँटवारे की मार से त्रस्त था। कोरिया युद्ध के कारण महंगाई बढ़ी हुई थी; अन्न और कच्चे माल की भारी कमी थी। करोड़ों रुपयों का अन्न विदेशों से मंगा कर हमें अपनी पेट की क्षुधा शांत करनी पड़ती थी। ऐसे समय में प्रथम पंचवर्षीय योजना पर काम करने से सभी दिशाओं में सुधार हुआ। चीजों के बढ़ते हुये भाव रुके, और फिर कम हो गये। प्रथम पंचवर्षीय योजना की समाप्ति पर, सन् १९५२ के मुकाबले में मूल्यों में लगभग १३ प्रतिशत की कमी हो गई थी इस प्रकार मुद्रा प्रसार काफी हद तक रुक गया था, और बढ़ते हुए अन्न और कच्चे माल की पैदावार से जन साधारण की परेशानियां कुछ कम हो गई थीं। इस काल में विदेशी व्यापार में भी काफी उन्नति हुई; हमारे व्यापार की बाक़ी जो पिछले महायुद्ध के पश्चात् से हमारे विरुद्ध थी, अंतिम वर्ष में हमारे हक में हो गई। उस वर्ष आयात की अपेक्षा हमारे निर्यात का मूल्य १७ करोड़ रुपया अधिक था। इस प्रकार हमारा व्यापार संतुलन हमारे हक में हो गया। परिवहन और संचार के साधनों में भी काफी प्रगति हुई। स्वास्थ्य और शिक्षा की सुविधाओं का भी समुचित विस्तार हुआ। शिक्षा संस्थाओं की संख्या २ लाख से बढ़ कर २ लाख ८० हजार हो गई।

द्वितीय योजना का निर्माण

हमारी पहली योजना का कार्यकाल ३१ मार्च सन् १९५६ को समाप्त हो गया। इस योजना की असाधारण सफलता को देखते हुए योजना आयोग ने सोचा कि द्वितीय योजना बहुत बड़े पैमाने पर बनाई जानी चाहिए जिससे देश में फैली हुई बेकारी और गरीबी का अंत हो, और हम इस देश में समाजवादी व्यवस्था का मजबूत ढांचा खड़ा कर सकें। कहा गया कि आधुनिक युग में मूलधन की कमी की बात उठाना अर्थशास्त्र के नवीन सिद्धान्तों के प्रति अत्याचार करना है। घाटे की वित्त व्यवस्था द्वारा अपार धन राशि इकट्ठी की जा सकती है। भारत के पास तो अपार जन शक्ति है और प्राकृतिक साधनों की इतनी प्रचुरता है कि संसार का शायद कोई दूसरा देश उसका मुकाबला कर सके। अत: निश्चय किया गया कि सब राज्य सरकारों और स्वायत्त शासन संस्थाओं को लिखा जाय कि वह अपने अपने क्षेत्र के आर्थिक विकास के लिए बड़ी बड़ी योजनाएं बनाएं और ऐसा करते समय वह वित्तीय साधनों की परवाह न करें, वरन यह देखने का प्रयत्न करें कि अपनी जन शक्ति और प्राकृतिक साधनों के सहारे कहां तक बढ़ सकते हैं?

द्वितीय योजनाकाल के प्रारंभ से ही देश को जिस आर्थिक संकट का सामना करना पड़ रहा है, उसकी पृष्ठभूमि में बहुत कुछ यही मनोवृत्ति काम कर रही है। देश का प्रत्येक भाग यह चाहता है कि उसका तेजी से आर्थिक विकास हो। वह अपनी समस्याओं का निराकरण भौतिक दृष्टिकोण (Physical Planning) से चाहता है, वित्तीय दृष्टिकोण (Financial Planning) से नहीं। अपनी मांग पेश करते समय प्रत्येक क्षेत्र प्रधान मंत्री के उस भाषण का हवाला देता है जो उन्होंने कांग्रेस के अवाडी अधिवेशन के समय योजना से संबंधित भौतिक और वित्तीय दृष्टिकोण का अर्थ समझाने के लिए दिया था। उन्होंने कहा था, "योजना तैयार करने का मतलब यह नहीं होता कि सबसे पहले हम यह सोचें कि हमारे पास कितना धन है और फिर उसे विभिन्न कार्यों पर बांटें, और यह निश्चय करें कि किन कार्यों पर पहले तथा किन पर बाद में रुपया लगाया जाय, योजना का अर्थ यह है कि भारत के लोगों

की भौतिक जरूरतों का अंदाजा लगाया जाय कि उन्हें कितने स्कूल, कितने कौलिज, कितना कपड़ा, कितने मकान, कितनी स्वास्थ्य की सुविधाओं की दरकार हैं। इन जरूरतों का सही अनुमान लगाने के लिए केवल इतना ही आवश्यक नहीं कि देश की बढ़ती हुई आबादी का ध्यान रक्खा जाय, वरन् यह भी अनिवार्य है कि लोगों की बढ़ती हुई जरूरतों को भी सामने रक्खा जाय। योजना बनाते समय हम आरम्भ में ही आर्थिक पहलू की बात नहीं सोचते। निःसंदेह यह पहलू महत्त्वपूर्ण है, परन्तु इस पर बाद में ही विचार होना चाहिए।"

७२०० करोड़ रु० की योजना

कोई आश्चर्य की बात नहीं कि प्रधान मंत्री के इन शब्दों से प्रभावित होकर प्रायः प्रत्येक ही राज्य सरकार और केन्द्रीय मंत्रालय ने बढ़ा चढ़ा-कर योजनाएं बनाईं। जब इन सब योजनाओं पर व्यय होने वाली रकम का अनुमान लगाया गया, तो जोड़ लगभग २०,००० करोड़ रुपया बैठा। अच्छा हुआ कि हमारे योजना आयोग ने इतने व्यय को एकदम अव्यवहारिक माना और अंत में द्वितीय योजना पर ४८०० करोड़ रुपया सार्वजनिक क्षेत्र में, और २४०० करोड़ रुपया निजी क्षेत्र में व्यय करना निश्चित किया गया। प्रथम योजना पर लगभग २००० करोड़ रुपया सार्वजनिक क्षेत्र में और १००० करोड़ रुपया निजी क्षेत्र में व्यय हुआ। इसका यह अर्थ है कि प्रथम योजना के मुकाबले में इस योजना पर लगभग २½ गुना व्यय होगा।

आलोचकों का कहना है कि द्वितीय योजना के लिए ७२०० करोड़ रुपया प्राप्त करना भी असाध्य कार्य है। जनता की कमर पहले ही टैक्सों के बोझ से टूट चुकी है; और अधिक भार वहन करने की अब उसमें सामर्थ्य नहीं है। द्वितीय योजना में घाटे की वित्त व्यवस्था पर बहुत अधिक विश्वास किया गया है। योजना काल के प्रथम दो वर्षों में ही लगभग ९०० करोड़ रुपये के अतिरिक्त नोट छापे जा चुके हैं। इससे मुद्रास्फीति का दबाव बढ़ गया है और आम चीजों के मूल्य में भारी बढ़ोतरी हुई है। मार्च सन् १९५६ के मुकाबले में जुलाई सन् १९५८ में मूल्यों के सूचक अंक में लगभग १७ प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है।

आलोचकों का यह भी कहना है कि द्वितीय योजना

संशोधित विकास योजना : सामाजिक सेवाएं (करोड़ रु.)

	मूल योजना	संशोधित योजना
शिक्षा	३०७	२८५
स्वास्थ्य	२७४	२५५
गृह-निर्माण	१२०	१००
पिछड़ी जातियां	९१	८३
पुनर्वास	९०	९०
समाज कल्याण श्रम कल्याण और शिक्षित-बेकारी	६३	५०
कुल	९४५	८६३

के निर्माण में कुछ भारी भूलें हुई हैं। इस योजना के बनाने में इस बात का ठीक अनुमान नहीं लगाया गया कि विभिन्न कार्यों पर कितना रुपया व्यय होगा। सरकारी कारखानों पर लगने वाली रकम का अनुमान एकदम गलत था। लोहे के तीन कारखानों पर ही प्रारंभिक अनुमान की अपेक्षा लगभग १५० करोड़ रुपया अधिक व्यय होगा। दूसरे मदों में भी इसी प्रकार की गलती की गई है।

द्वितीय योजना की सबसे बड़ी आलोचना यह कह कर की जाती है कि उसमें विदेशी मुद्रा की लागत को जानबूझ कर नीचा बताया गया। कहा गया कि आने वाले पांच वर्षों में हमें केवल २०० करोड़ रुपया अपने संचित स्टर्लिंग कोष से लेना होगा। यह अनुमान कितना गलत था, यह इस बात से सिद्ध है कि योजना के प्रथम दो वर्षों में ही हमने २७० करोड़ रुपये से अधिक की रकम इस कोष से ले ली है। आजकल हमारे भुगतान संतुलन में प्रति सप्ताह लगभग ४ करोड़ रुपये की कमी रहती है। ऐसे समय यदि विदेशी सरकारें, विशेषकर अमरीका, हमारी सहायता को न आतीं तो पता नहीं हमारी इस इस योजना का क्या स्वरूप होता? योजना आयोग ने अनुमान लगाया था कि द्वितीय योजनाकाल में हमें लगभग ८०० करोड़ रुपये की विदेशी सहायता प्राप्त हो जायगी। अब तक इस मदके आधीन

[शेष पृष्ठ ५२४ पर]

विदेशी मुद्रा की समस्या और कुछ सुझाव

श्री ए० डी० श्राफ

ले ख क

देश के लब्धप्रतिष्ठित अर्थशास्त्री श्री ए० डी० श्राफ ने विदेशी मुद्रा की विकट समस्या की ओर ध्यान खींचते हुए मूल्यवान सुझाव प्रस्तुत किए हैं।

आज देश की प्रमुख समस्याओं में विदेशी मुद्रा की समस्या सबसे अधिक महत्वपूर्ण है, जिसकी ओर देश का तुरन्त ध्यान जाना चाहिए। यह केवल एक घरेलू समस्या नहीं है। इसके दूरवर्ती परिणाम न केवल हमारे देश की अर्थ-व्यवस्था पर पड़ेंगे, बल्कि संसार के साथ हमारे संबंधों पर भी इसका गहरा प्रभाव पड़ेगा। यह समस्या अचानक ही भयंकर रूप में नहीं आ गई। भूतपूर्व वित्तमंत्री श्री देशमुख ने एक लेख में बताया था कि अप्रैल, १९५६ से इसके आसार दीखने लगे थे और उसी समय से इसकी चिन्ता करनी चाहिए थी। अप्रैल १९५६ में जब हमने दूसरी पंचवर्षीय योजना प्रारंभ की थी हमारे पास स्टर्लिंग निधि ७४६ करोड़ रु. की थी। किन्तु जुलाई '५८ के तीसरे सप्ताह में रिजर्व बैंक की सूचना के अनुसार हमारी यह निधि २०० करोड़ रु० रह गई। हमें गत वर्ष के अन्त में अंतर्राष्ट्रीय मुद्राकोष से आगामी सहायता के लिए आवेदन करना पड़ा था। भारत इस कोष का सदस्य है, इसलिए हमें ९५ करोड़ रु० की राशि मिल गई। अपने मित्र देशों से भी हमें ८२६ करोड़ रु० की सहायता के वचन प्राप्त हुए हैं, यद्यपि हम इनका पूर्ण उपयोग अभी तक नहीं कर पाये हैं। जब दूसरी योजना प्रारम्भ की गई थी, तब पिछली योजना अवधि के भी १०८ करोड़ रु० हमारे पास शेष थे। इस तरह हमारे पास दूसरी योजना के प्रारम्भ के समय ९३४ करोड़ रु० थे, न कि ७४६ करोड़ रु०।

संकट के कारण

वस्तुतः इस संकट का कारण यह है कि योजना बनाते समय हम ठीक-ठीक यह अनुमान नहीं कर सके कि विदेशी-मुद्रा हमें कितनी चाहिए थी। हमारे अनुमान सर्वथा भ्रमपूर्ण थे। फिर स्वेज नहर के संकट ने विदेशों से आने वाली मशीनरी के दाम बहुत बढ़ा दिये। इससे हमारा संकट बहुत बढ़ गया।

शायद पाठकों को यह जानकर आश्चर्य हो कि १९५५ से अब तक उद्योग व्यापार मंत्रालय ने आयात-व्यापारियों को २००० करोड़ रु० के सामान मंगाने के लाइसेंस दे दिये। भविष्य की चिन्ता किये बिना अदूरदर्शितापूर्वक खुले हाथों से लाइसेंस दिये गये। इसका परिणाम आज हम भोग रहे हैं। आज हमारी स्थिति अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में दिवालिये की सी हो रही है। आज सरकार भी इसे अनुभव करने लगी है और आयात के लाइसेंसों पर कठोर प्रतिबन्ध लगाये जा रहे हैं। डेढ़ वर्ष पहले कुछ अर्थशास्त्रियों ने इस संकट की ओर ध्यान खींचा था, किन्तु उस समय उन्हें 'पैनिक मौंगर' (व्यर्थ ही भय पैदा करने वाले) कहा गया था। आज उनकी भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हो रही है।

आज की स्थिति बहुत संकटमय है। हमने अभी ५०० करोड़ रुपये के भुगतान के वायदे विदेशों से कर रखे हैं, जो हमें योजना के अंत तक पूरे करने हैं और हमारे पास केवल २०० करोड़ रु० बचे हैं। हमें आगामी दो वर्षों

के लिए ३५० करोड़ रु० की और व्यवस्था करनी होगी।

उपाय

कुछ क्षेत्रों में इस स्थिति का उपाय मुद्रा-अवमूल्यन बताया गया है, किन्तु आज ही इसकी आवश्यकता है, यह मैं नहीं मानता। परन्तु इसकी संभावना आगे भी नहीं आएगी, यह नहीं कहा जा सकता।

इस संकट से मुक्ति के दो उपाय और बताये गये हैं। एक तो आयात में कमी और दूसरा है निर्यात में वृद्धि। ये दोनों उपाय अनिवार्य हैं, किन्तु इन दोनों की अपनी समस्याएं भी हैं। आयात पर नियंत्रण दुधारी तलवार है। इसका देश की अर्थव्यवस्था पर भारी असर पड़ता है। उद्योग का उत्पादन पिछले वर्षों में बढ़ता जा रहा है। अब एक दम आयात पर रोक लगा देने से उन पर बुरा प्रभाव पड़ेगा और उद्योग की स्थापित कुल क्षमता का हम पूर्ण उपयोग नहीं कर पायेंगे। इससे बेकारी भी बढ़ेगी, क्योंकि कारखानों को विदेशी माल न मिलने से उत्पादन कम करना पड़ेगा।

निर्यात वृद्धि का उपाय बहुत अच्छा है, किन्तु प्यास लगने पर कुआं खोदने से आज तो प्यास नहीं बुझ पाएगी। भारत में श्रम-संबंधी कानूनों तथा नये-नये करों से उत्पादन-व्यय बहुत बढ़ गया है और विदेशी बाजारों में हम मुकाबला करते हुए टिक नहीं पा रहे। जरूरत इस बात की है कि हमारा उत्पादन-व्यय कम किया जाय। दुर्भाग्य से हमारे निर्यात भी पिछले छः मास से लगातार कम होते जा रहे हैं। चीनी, सीमेंट, या इन्जीनियरिंग के सामान किसी का भी निर्यात बढ़ाना हो तो अधिक उत्पादन के व्यय की समस्या हमारे सामने आ जाती है। हाल ही में भारत सरकार ने २०००० टन चीनी के निर्यात की घोषणा की है। पर अनुभवी चीनी-व्यापारियों ने बताया है कि भारतीय बाजार में २०००० टन चीनी की कीमत ५। करोड़ रु० है, किन्तु विदेशी बाजारों में उसकी कीमत ३॥ करोड़ रु० से अधिक नहीं उठेगी। यही हाल सिमेंट का है। उत्पादन-व्यय जब तक कम नहीं होंगे, तब तक निर्यात बहुत बढ़ने की सम्भावना नहीं की जा सकती।

तब हमारे पास शेष क्या रह जाता है? हमारे पास केवल एक आशा है कि मित्र देश हमारी सहायता के लिये आवेंगे और हमें काफी रुपया देंगे; किन्तु विदेशों से ऋण या पूंजी के रूप में हमें तभी रुपया मिलेगा, जबकि हम अपने आदर्शों और भावुकता के ऊंचे आस्मान से उतर कर व्यावहारिता का मार्ग अपनावेंगे। उन्हें इसका आश्वासन मिलना ही चाहिए कि उनका रुपया डूबने नहीं पायेगा।

दो सुझाव

इसलिए मेरी नम्र सम्मति में निम्नलिखित दो सुझावों पर विचार करना आवश्यक है। आज हमारे सामने मुख्य दो प्रश्न हैं—खाद्य समस्या और विदेशी मुद्रा। स्वाधीनता प्राप्ति के बाद से हम १३६० करोड़ रु० की खाद्य सामग्री विदेशों से मंगा चुके हैं। यह ठीक है कि इसमें से ३४० या ३५० करोड़ रु० की खाद्य सामग्री अमरीका व कोलम्बो योजना में सहायता रूप में मिल गई है, फिर भी १००० करोड़ रु० अन्न आदि पर व्यय करना पड़ा है। सरकार को कृषि उत्पादन पर अधिक ध्यान देना चाहिए, ताकि दुर्लभ विदेशी मुद्रा का इस कार्य के लिए बहुत उपयोग न करना पड़े।

दूसरा उपाय विवादास्पद है। आज यह स्थिति आ गई है कि देश के संकट को दूर करने के लिए कांग्रेसी सरकार को अधिक उदार बनना होगा। इस गंभीर संकट को दूर करने के लिए हमें सभी राजनैतिक दलों का सहयोग प्राप्त करना चाहिए। देश की सभी शक्तियों, साधनों और मुख्यरूप से प्रतिभा के साधनों को उपयोग में लेना चाहिए। इसलिए सरकार का संगठन अधिक उदार रूपेण होना चाहिए और उसमें सभी दलों का समावेश होना चाहिए।

स्वर्ण प्राप्ति

मेरा ख्याल है कि अब तक हमने देश में उपलब्ध साधनों का भी उपयोग नहीं किया। अभी तक भारत में सोना चांदी आदि बहुमूल्य धातुएं विपुल मात्रा में विद्यमान हैं। यह कहना बहुत अत्युक्ति न होगी कि देश में ३०-३५ अरब रु० का सोना मौजूद है, जिसका अधिकांश स्त्रियों के पास जेवरों के रूप में है। किन्तु विदेशी मुद्रा की स्थिति इतनी गंभीर है कि हमें विश्व को यह विश्वास दिलाना होगा कि हमने अपने साधनों का यथा संभव उपयोग किया है, परन्तु घरों से सोना प्राप्त करने के लिए केवल अपील

विदेशी मुद्रा और हमारी योजना

श्री मुरारजी देसाई, वित्त मंत्री भारत सरकार

लेखक

विदेशी मुद्रा की जो स्थिति आज है, उसमें हम ढिलाई से काम नहीं ले सकते। स्थिति को काबू में लाने के लिए सरकार ने उपाय किये हैं और उनका प्रभाव भी हुआ है, लेकिन स्थिति पर पूरा काबू अभी तक हम प्राप्त नहीं कर सके हैं।

गर्मी के महीनों में हमारा निर्यात हमेशा ही कम रहता है। इसके अतिरिक्त विदेशों की आर्थिक दशा कुछ गिरी है, जिससे हमारी चीजों के दाम कुछ कम हो गए हैं। इसके बावजूद भी १९५८ वर्ष के पहले ७ महीनों में पौंड खाते के खर्चे को घटाकर औसतन ४.०९ करोड़ रु० प्रति सप्ताह कर दिया है। पिछले वर्ष इतने समय में यह खर्च ७.२ करोड़ रु० था। अन्य भी अनेक उपायों के बावजूद स्थिति बिगड़ गई है।

मार्च १९५८ तक हमारे विदेशी मुद्रा कोष में १०८ करोड़ रु० मूल्य के सोने के अतिरिक्त २६७ करोड़ रु० की पौंड राशि जमा थी। जुलाई १९५८ में यह राशि केवल १९३ करोड़ रु० रह गई। इसमें २२ करोड़ रु० की वह पौंड राशि भी शामिल है, जो ब्रिटेन की सरकार ने फालतू पेंशन की वापसी सम्बन्धी समझौते की ३ पेशगी किश्तों के रूप में अप्रैल १९५८ में लौटायी। इस प्रकार अप्रैल से जुलाई तक के ४ महीनों में हमारे विदेशी मुद्रा कोष से ७४ करोड़ रु० की राशि कम हो गई है।

विदेशी मुद्रा की यह स्थिति देखते हुए हमारे सामने यह प्रश्न है कि इसका आयोजन पर क्या प्रभाव पड़ता है। योजना कोई जड़ व अपरिवर्तनीय वस्तु नहीं है। समय समय पर स्थिति व घटनाचक्र के निरीक्षण के बाद आवश्यक परिवर्तन करते रहना ही हमारी योजना है। जनवरी १९५७ से हमने जो प्रतिबन्ध लगाये हैं, उनसे सार्वजनिक और निजी अर्थ-व्यवस्था में कुछ कठिनाइयां पैदा हुई हैं, लेकिन बराबर यही प्रयत्न किया जा रहा है कि—

(१) हम अपने आयोजन के महत्वपूर्ण अङ्गों को पूरा करें।

(२) जो योजनाएं काफी आगे बढ़ चुकी हैं, उन्हें पूरा करें।

काफी नहीं होगी। कुछ वर्ष पूर्व एक अपील के परिणामस्वरूप कुछ कर्णाभूषणों व अंगूठियों से अधिक कुछ प्राप्त नहीं हुआ था। लोगों से सोना लेने के लिए आकर्षक शर्तें पेश करनी होंगी। फ्रैंच सरकार का उदाहरण हमारे सामने है। १५ से २० वर्ष की अवधि के लिए ऋण के रूप में सोना लिया जाय और यथोचित मूल्य दिया जाय, तो जनता से सोना प्राप्त किया जा सकता है, लेकिन इसके लिए भी जनता को यह आश्वासन देना होगा कि उनके बताये हुए स्वर्ण भंडार पर न इन्कमटैक्स लगेगा और न सम्पत्ति या उत्तराधिकार कर। यदि ऐसा आश्वासन दिया जा सके तो बहुत संभवतः अधिक सोना मिल सकेगा। यह काम तब अधिक आसानी से हो सकेगा, जब सरकार का संगठन अधिक उदार व व्यापक हो और सभी सार्वजनिक व राजनैतिक दल उसमें सम्मिलित होकर सहयोग दें।

(३) अर्थ व्यवस्था को मौजूदा उत्पादन स्तर पर कायम रखें।

आयात की कमी के कारण हमारे देश में चीजों के मूल्य कुछ बढ़े हैं, लेकिन उससे कोई विशेष परेशानी नहीं हुई। देशी उद्योगों को बढ़ावा दिया गया है, जिससे वे आयात होने वाली वस्तुओं की कमी पूरी कर सकें। ऐसी मशीनें आयात करने के लिए विशेष ध्यान दिया जा रहा है, जिनसे आयात की जाने वाली वस्तुएं देश में ही पैदा की जा सकें। यह आयात इस शर्त पर किया जा रहा है कि इसकी रकम की अदायगी मशीनों से पैदा होने वाली चीजों पर होने वाले लाभ से की जाएगी।

हमने अपनी योजनाओं के लिए जो मशीनें खरीदी थीं, उनकी रकम चालू वर्ष में अदा की जानी है। १ अप्रैल १९५८ तक सार्वजनिक और निजी दोनों ही क्षेत्रों की यह रकम लगभग ८८७ करोड़ रु० है। निर्यात में भी विदेशों की आर्थिक स्थिति के कारण कुछ कमी हुई है।

५६० करोड़ रु० विदेशी मुद्रा

आयोजन आयोग ने दूसरे आयोजन की प्रगति और भावी कार्यक्रम के सम्बन्ध में जो जानकारी प्रकाशित की है, उसके बाद अप्रैल १९५८ से मार्च, १९६१ तक हमारे विदेशी मुद्रा खाते में अनुमानतः ५०० करोड़ रु० का अन्तर होगा। निर्यात की मौजूदा प्रतिकूल स्थिति को ध्यान में रखते हुए नवीनतम अनुमान के अनुसार चालू आयोजना के शेष ३ वर्षों में हमें ५६० करोड़ रु० की विदेशी मुद्रा की आवश्यकता पड़ेगी। इसमें यह भी अनुमान किया गया है कि दूसरे आयोजन के अन्त में हमारे पौंड खाते में २०० करोड़ रु० की राशि जमा होगी। इसका यह अर्थ नहीं कि यह राशि कभी भी २०० करोड़ रु० से नीचे नहीं गिरेगी। यों देखा जाय तो इस समय भी यह राशि २०० करोड़ रु० से कम है। वास्तव में इसका अर्थ यह है कि जब हम अपना तीसरा आयोजन शुरू करें तो तब हमारे पौंड खाते में २०० करोड़ रु० से कम की राशि जमा नहीं होनी चाहिए। ऊपर १ अप्रैल १९५८ तक ५६० करोड़ रु० के घाटे का जो अनुमान लगाया गया है, उसमें यह बात पूरी तरह ध्यान में रखी गई है कि हमें आवश्यक अन्न अमेरिका की पी एल० ४८० की व्यवस्था के अन्तर्गत मिलेगा और ५१३ करोड़ रु० की विदेशी सहायता प्राप्त होगी। इसके बाद जुलाई १९५८ में पुनर्निर्माण और विकास की अन्तर्राष्ट्रीय बैंक से दामोदर घाटी निगम योजना को १२ करोड़ रु० का ऋण मिला है। जो अंतर बाकी रहा है, उसे हम पूरा करने के लिए निरन्तर प्रयत्न कर रहे हैं।

निर्यात को बढ़ावा देने के लिए सरकार द्वारा विभिन्न प्रयत्न किए जा रहे हैं। हमें विश्वास करना चाहिए कि इनसे देश के निर्यात को जरूर बढ़ावा मिलेगा।

अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं और मित्र देशों को हम बराबर अपनी स्थिति की जानकारी दे रहे हैं। सही तरीके से विदेशी सहायता प्राप्त करने का हम पूरा प्रयत्न करेंगे। पुनर्निर्माण और विकास के अन्तर्राष्ट्रीय बैंक ने अगस्त ५८ के अन्त में वाशिंगटन में अपने उन सदस्य देशों का एक सम्मेलन बुलाया था, जिनकी भारत में रुचि है। इस सम्मेलन ने विदेशी मुद्रा के सम्बन्ध में भारत की स्थिति तथा उसे सहायता देने के तरीकों पर विचार किया है। अमरीका, ब्रिटेन, पश्चिम जर्मनी तथा जापान की सरकारों के प्रतिनिधि सम्मेलन में शामिल हुए थे। सम्मेलन में अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के प्रतिनिधि भी शामिल हुए। इसने सहायता के आश्वासन दिये हैं।

७५० करोड़ रु० का कर्ज

१ अप्रैल १९५८ तक हमारे ऊपर ७५० करोड़ रु० का कर्जा हो चुका है। यह हमें विदेशी मुद्रा में चुकाना है। इसमें से ११० करोड़ रु० दूसरे आयोजन की शेष अवधि में, लगभग ३४० करोड़ रु० तीसरे आयोजन की अवधि में और शेष रकम उसके बाद चुकानी है। भविष्य में इन कर्जों की अदायगी हमारा पहला कर्त्तव्य होगा। यह वास्तव में कठिन काम है।

लेकिन अगर हम कर्जे से प्राप्त इस धन को तथा अपने अन्य साधनों को उत्पादन के कार्यों में लगायें तो यह काम असम्भव नहीं।

—

समाजवाद की परिभाषा और पंचवर्षीय योजना

श्री मन्मथनाथ गुप्त

हमारे देश में सभी राजनीतिक दलोंने समाजवाद को अपना ध्येय करार दिया है। इसमें साम्यवादी से लेकर वे दल भी शामिल हैं, जो खुल्लम-खुल्ला साम्प्रदायिक हैं और भारत को मुस्लिम पाकिस्तान के जवाब में हिन्दू पाकिस्तान बनाने का स्वप्न देखते हैं। इसलिए यह स्पष्ट है कि यद्यपि समाजवाद शब्द अपनाया गया है, पर उसके अर्थ को प्रत्येक दल अपने-अपने ढंग से लेता है, और चूंकि सारे ही दल समाजवाद की स्पष्ट परिभाषा करने से इन्कार करते हैं इसलिए यह कहना कठिन है कि कौन दल समाजवाद से क्या समझता है। हाँ, उनके रोजमर्रे के कार्यों पर विचार किया जाए तो उनकी नारेबाजी की असलियत खुल जाती है।

ऐसे समय में जबकि समाजवाद की इस तरह छीछालेदर हो रही है, समाजवाद क्या है इस विषय पर चिन्तन और मनन करना बहुत उपयोगी हो सकता है।

मनुष्य सामाजिक प्राणी के रूप में उत्पन्न

मनुष्य जिस दिन से मनुष्य हुआ, उसी दिन से वह सामाजिक है। सच बात तो यह है कि आज मनुष्य का जीवन जितना सामूहिक है, आदिम युगमें मनुष्य का जीवन कई मानों में इससे कहीं अधिक सामूहिक था। न केवल आदिम मनुष्य सामाजिक रूप में सृष्टि के रंगमंच पर आया था, बल्कि उसके ये आदिम पूर्व पुरुष भी सामूहिक रूप से रहने के आदी थे। इस प्रकार मनुष्य-मनुष्य होने के क्षण से ही नहीं, बल्कि उसके पहले से ही सामूहिक प्राणी रहा है। जी० डी० एच० कोल ने यह ठीक ही कहा है कि 'मनुष्य समाज को नहीं बनाता, बल्कि मनुष्य समाज में पैदा होता है, और उसी में पलता है—जन्म से ही मनुष्य सामाजिक परिस्थितियों में डाल दिया जाता है।' जिस समय मनुष्य-जाति को हम विकसित रूप में देखते हैं, उस समय मनुष्य अपने चारों ओर के प्राणियों के मुकाबिले में इतना दुर्बल और अक्षम था कि सामाजिकता के बगैर वह जी ही नहीं सकता था। फिर मनुष्य-समाज प्रारम्भ से ही जानवरों के यूथ से गुणगत रूप से भिन्न इस अर्थ में था कि किसी और प्राणी के बनिस्बत मनुष्य अर्थात् सामाजिक मनुष्य प्रकृति को बदलता रहा, और इस दौरान में वह स्वयं बदलता गया। मनुष्य शब्द का अर्थ ही सामाजिक मनुष्य है। जो लोग मनुष्य की इस सामाजिकता को न समझकर यह पूछ बैठते हैं कि मनुष्य पहले का है या समाज, वे एक ऐसा प्रश्न करते हैं जिसका भले ही आध्यात्मिक तत्वज्ञान में कोई स्थान हो, परन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से यह प्रश्न बिल्कुल ऊलजलूल है, और उठना ही नहीं चाहिए। मनुष्य यदि सामाजिक न होता तो वह होता ही नहीं। अपनी सामाजिकता के कारण ही मनुष्य ने मैस्टोडोन, मैमथ, शेर आदि विपुल शक्तिशाली जन्तुओं के मुकाबिले में अपनी प्राणि-जाति को कायम रखा है।

आदिम मनुष्य के जीवन का मूलमन्त्र सामूहिकता

प्रारम्भ में मनुष्य केवल इस अर्थ में सामाजिक नहीं था कि वह झुण्डों में रहता था, बल्कि इस अर्थ में भी वह सामाजिक था कि उसका उत्पादन, वितरण यहां तक कि विवाह-पद्धति भी सामूहिक थी। वैयक्तिक सम्पत्ति का उस युग में कोई अस्तित्व नहीं था। सभी सम्पत्ति सामाजिक थी। यूरोप, एशिया, अमेरिका, अफ्रीका जहां भी नवप्रस्तर युग के या उसके पहले मनुष्य का पता मिला है, यह ज्ञात होता है कि मनुष्य सामाजिक रूप से रहता था। आदिम मनुष्य के लिए शिकार एक बहुत महत्त्वपूर्ण साधन था। जहां भी हमें प्राचीनतम शिकार के प्रमाण मिले हैं, वहीं हम उसे एक सामूहिक रूप में पाते हैं। पूर्व और मध्य यूरोप के डेमोरिटियन तथा फ्रांस के औरगनेशियन और मैगडेलियनों में हम शिकार को सामूहिक रूप में ही पाते हैं। जितने भी शिल्प थे सब सामूहिक थे। समाज इन शिल्पों का मालिक होता था, तथा ये शिल्प सामूहिक रूप से किये जाते थे। नवप्रस्तर युग की आर्थिक पद्धति के [सम्बन्ध]

सम्बन्ध में जो कुछ मालूम है, उससे ज्ञात होता है कि सामूहिक सहयोग ही उस आर्थिक पद्धति का मूल मंत्र था। जंगलों को साफ करने का या पलदल के पानी को उलीच कर उसे सुदाने का काम सामूहिक ही हो सकता था। नालियों का खोदना, बाढ़ और जंगली जानवरों से रक्षा—ये सामाजिक जिम्मेदारियां ही हो सकती थीं। मिस्र और पश्चिमीय यूरोप में नवप्रस्तर युग के जिन गांवों का पता मिला है, उनके सम्बन्ध में यह प्रमाणित हो चुका है कि वे व्यवस्थित तरीके से बसे हुए थे न कि विश्रृंखल तरीके से। हमें मनुष्य के आदिमतम इतिहास के सम्बन्ध में जितना ही अधिक ज्ञात होता जा रहा है, उतना ही हम दृढ़ रूप से इस नतीजे पर पहुँचते जाते हैं कि आदिम मनुष्य समाज में रहता था, तथा उसकी उत्पादन और वितरण की पद्धतियां सामूहिक थीं। जितनी भी प्राचीन जातियां हैं, उन सबके इतिहास के अनुशीलन से भी यह बात पुष्ट होती है।

आदिम समाज की सुव्यवस्था

यह न समझा जाय कि आदिम समाज में किसी प्रकार की व्यवस्था ही नहीं थी। इतिहास इस बात का साक्षी है कि राजशक्ति के उद्‌गम से पहले यौथ समाज में भी नियम थे, व्यवस्था थी, और वह व्यवस्था उस समय के समाज को देखते हुए कुछ हीन नहीं थी। सभी काम सामाजिक अनुशासन से चलते थे। उस समाज में सभी स्वतन्त्र थे, किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि वे स्वेच्छाचारी थे। उस समाज में गुलामों के लिए जो स्थान नहीं था, उसका कारण यह न था कि लोगों में कोई बहुत उदात्त भावनायें थीं, बल्कि तथ्य तो यह था कि उत्पादन पद्धति इतनी अनुन्नत थी कि इसके लिए कोई गुंजाइश ही नहीं थी। जब एक व्यक्ति मुश्किल से अपने लायक खाद्य-पदार्थ उत्पन्न कर सकता था, तो उस हालत में उसे—गुलाम बनाने वाले को क्या फायदा हो सकता था? उस हालत में तो उसे रखना समाज के शिकारगाहों, मछली की जगहों आदि पर एक बोझा-मात्र बढ़ाना होता। इसलिए यौथ समाज के उस युग में जिसमें अपने अन्दर के वृद्ध और अपाहिजों को भक्तिभाव से मारकर खा जाने की प्रथा थी, लड़ाई के कैदियों को भी मारकर खा जाने की प्रथा थी। इसके बाद के युग में जब बुड्ढों को मार डाला जाता था, उस युग में गुलामों को भी मार डालने की प्रथा उत्पन्न हुई होगी। उत्पादन के पिछड़ेपन के कारण समाज के सब शिशु भी जीवित नहीं रखे जाते थे, शेष मार डाले जाते थे। अण्डमान टापू में नृतत्त्वविदों ने १९ वीं सदी तक इस प्रकार शिशुहत्या करने का पता पाया है। यह शिशुहत्या किसी प्रकार की निर्दयता के कारण नहीं, बल्कि एक सामाजिक आवश्यकता—आजकल की भाषा में बर्थकन्ट्रोल अर्थात् जन्म-नियंत्रण की जरूरत के कारण की जाती थी।

वैयक्तिक सम्पत्ति का उदय

उत्पादन पद्धति में अच्छी खासी उन्नति तभी हुई, जब उत्पादन के औजारों में उन्नति हुई। औजारों में उन्नति के साथ औजारों का यह परिणाम हुआ कि जो लोग उन्नत औजारों को बनाते हैं तथा जिन्होंने उसका आविष्कार किया है, उनको अन्य लोगों के बनिस्बत कुछ अधिक सुविधायें प्राप्त हुई। मुख्यतः इन उन्नत औजारों के आविष्कर्ता तथा प्रयोक्ता पुरुष ही थे, इसलिए अब इतिहास की सबसे बड़ी क्रांति होती है। अब पुरुष-स्त्री से प्रबल हो जाता है, मातृकुल मूलक समाज का अंत होकर अब समाज की गाड़ी पितृ-प्रधान समाज की ओर चल पड़ती है! यौथ सम्पत्ति-प्रथा के टूटने के साथ-साथ यौथ विवाह का सामाजिक आधार नष्ट हो जाता है। अब समाज में पहले की सामूहिक एकता दूर होकर वर्गों की सृष्टि होती है। पहले सारे समाज का हित एक था, किन्तु अब समाज में मुख्यतः दो हित, दो वर्ग और दो तरह की धारणायें उत्पन्न हो जाती हैं। जो वर्ग सम्पत्ति का मालिक है, उत्पादन के साधनों पर काबिज है, उनकी संगठित संस्था के रूप में राष्ट्र का उदय होता है, जो सम्पत्तिशाली वर्ग को दूसरे वर्ग से बचाता है। इसके लिए वह जेल, पुलिस, अदालत और धीरे-धीरे न मालूम किन-किन संस्थाओं को उत्पन्न करता है। पहले सारा समाज ही एक पुलिस या फौज के रूप में था, किन्तु अब सम्पत्तिशाली वर्ग अपने 'हितों' की रक्षा के लिए अपनी फौज, और पुलिस बनाता है जो समाज के दूसरे अंश का जबरदस्ती दमन करती है। यह एक अकथ कहानी है, हम यहां केवल उसका दिग्दर्शन भर कराकर आगे बढ़ जाने के लिए बाध्य हैं।

इतिहास में श्रम-सम्बन्ध की प्रगति तथा उसकी संख्या

वृद्धिशील समाज में उत्पादन की शक्तियों तथा मनुष्यों के श्रम-सम्बन्धों में दृश्यमान और कामचलाऊ सामंजस्य रहता है (पूर्ण सामंजस्य तो समाजवादी समाज में ही हो सकता है)। किन्तु कुछ दिनों बाद जब यह उत्पादन की शक्तियाँ बढ़ जाती हैं तो श्रम-सम्बन्धों के साथ उनकी असंगति पैदा हो जाती है। इसके कारण पुराने श्रम-संबंध टूटने लगते हैं, और समाज का रथ आगे बढ़ निकलता है। अब तक के इतिहास में पांच तरह की समाज-पद्धति रही हैं, किन्तु श्रम-संबंध चार तरह के रहे हैं—

(१) आदिम साम्यवादी समाज—इसमें श्रम का संबंध यों था कि सब अपनी शक्ति के मुताबिक सामाजिक कार्यों में भाग लेते थे, और सबको, जितनी जिसको जरूरत है, उतनी चीजें मिलती थीं।

(२) गुलाममूलक समाज—इसमें गुलाम मुख्य उत्पादक था, और गुलाम का मालिक उसके श्रम का सम्पूर्ण रूप से उपभोक्ता था। गुलाम शारीरिक रूप से भी मालिक के अधीन होता था, उसकी जानोमाल पर मालिक का अधिकार होता था। जिस प्रकार उत्पादन पद्धति में उन्नति होने के कारण लड़ाई के कैदियों को जीवित रखकर उनसे काम करवाकर, उनके अपने खर्च से कुछ अधिक उत्पन्न करवाकर, गुलामी-प्रथा का उदय हुआ, यह हम पहले ही बता चुके हैं। गुलाम पद्धति पहले की भूनकर खा डालने या मार डालने की पद्धति के मुकाबिले में एक बहुत बड़ी उन्नति थी।

(३) सामन्तवादी समाज-इसमें अर्द्धगुलाम या किसान गुलाम मुख्य उत्पादक था, और सामन्तवादी प्रभु उसके श्रम का उपभोक्ता था। अब मालिक को अर्द्धगुलाम पर पूर्ण अधिकार नहीं था। वह केवल उसके श्रम तथा समय के एक बृहत् हिस्से पर ही मांग कर सकता था। इस प्रकार यह पद्धति भी पिछली पद्धति के मुकाबिले में अगला कदम थी। उत्पादन पद्धति में उन्नति के कारण ही इस बात की जरूरत हुई थी कि गुलामों से काम लेकर अर्द्धगुलामों से काम लिया जाय, क्योंकि वे गुलामों के मुकाबिले में काम में अधिक दिलचस्पी लेते थे।

(४) पूंजीवादी समाज—इसमें मजदूर मुख्य उत्पादक है, और पूंजीपति उसके श्रम का उपभोक्ता है। मजदूर के शरीर या गतिविधि पर पूंजीपति को उस प्रकार का नियन्त्रण कानूनी रूप से प्राप्त नहीं है, जैसा पिछली समाज-पद्धति के शोषणों को प्राप्त था। वह कानूनी रूप से स्वतन्त्र है। देखने में वह स्वतन्त्र ठहराव पर काम करता है। इस प्रकार यह पद्धति पिछली पद्धतियों के मुकाबिले में अधिक उन्नत है। इसकी उन्नति का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि इस पद्धति में उत्पादन की शक्तियां पहले सब पद्धतियों से कहीं बढ़कर उन्नत हुई हैं। सच बात तो यह है कि इसी उन्नति के तकाजे के कारण पहले की पद्धति को जगह छोड़ देनी पड़ी, यहां तक कि उसका उच्छेद हुआ और उसकी जगह पर इस पद्धति की स्थापना हुई।

(५) समाजवादी समाज—फिर एक बार इस पद्धति में आकर उत्पादक ही अपने श्रम के फल का भोक्ता हो जाता है। इस अर्थ में हमारी बनाई हुई प्रथम अर्थात् आदिम साम्यवाद की समाज पद्धति में जो श्रम-सम्बन्ध था, वही फिर से आता है, किन्तु वह एक उन्नततर, उत्कृष्टतर रूप में आता है। अब यंत्र और विज्ञान की बहुत उन्नति हो चुकी है। इस प्रभेद तथा पिछले सामाजिक तजुर्बों के कारण यह पद्धति आदिम साम्यवादी पद्धति के मुकाबिले में कहीं अधिक उन्नत है।

समाजवाद की परिभाषा

थोड़े में इस प्रकार मनुष्य समाज के इतिहास को देख लेने के बाद हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि समाजवाद की परिभाषा इस रूप में होनी चाहिए—

समाजवाद वह पद्धति है, जिसमें मनुष्य के द्वारा मनुष्य का आर्थिक बौद्धिक या किसी अन्य प्रकार का शोषण न होता हो। इसी से हम दूसरा सूत्र यह निकाल सकते हैं कि समाजवाद में प्रत्येक व्यक्ति को समान सुविधा प्राप्त होगी, चाहे वह उसका उपयोग करे या न करे, यह उसकी निजी इच्छा पर निर्भर है। दूसरे शब्दों में पढ़ने लिखने की स्वास्थ्य उन्नत करने तथा सर्व प्रकार उन्नति करने की

(शेष पृष्ठ ५२६ पर)

भूमि-सुधार : एक दृष्टि में

श्री गुलजारीलाल नन्दा, श्रम, रोजगार व योजना मंत्री भारत सरकार

भूमि-सुधार की खास-खास बातें निम्नलिखित हैं :

१. मध्यस्थों का उन्मूलन।

२. किसान और जमींदारों के सम्बन्धों को नियमित करना।

३. भविष्य में हासिल की गई भूमि और मौजूदा मालकियत की सीमा निर्धारित करके भूमि का पुनर्वितरण करना। सीमा से बढ़ी हुई अराजियों को हासिल करके उन्हें भूमिहीन खेतिहर मजदूरों में बांटना और अलाभकर अराजियों के आकार में वृद्धि करना।

४. बिखरी हुई अराजियों को संगठित खंड के रूप में चकबन्दी, अराजियों को लाभकर आकार से नीचे बिखरने या टुकड़े टुकड़े होने से बचाना।

५. सहकारी कृषि का विकास।

लेखक

मध्यस्थों का उन्मूलन

मध्यस्थों के उन्मूलन का काम लगभग देश भर में पूरा किया जा चुका है। कुछ अपवाद अवश्य शेष हैं। राजस्थान में जागीर प्रथा, जिसके अन्तर्गत वहां के ज्यादातर मध्यस्थ आ जाते हैं, समाप्त की जा चुकी है। जमींदारी और बिस्वेदारी के उन्मूलन का कानून विचाराधीन है। उड़ीसा में मध्यस्थों के उन्मूलन का कानून पूरी तरह लागू नहीं किया जा सका है। राज्य सरकारों के सामने मुख्य समस्या मुआवजे का अनुमान लगाने और उनका भुगतान करने की है। अनुमानतः मुआवजे की कुल रकम लगभग ६२५ करोड़ रुपया है :

मुआवजे की रकम	२८९ करोड़ रुपया
पुनर्वास अनुदान	८६ करोड़ रुपया
ब्याज	१५० करोड़ रुपया
जोड़	६२५ करोड़ रुपया

अब तक ६ करोड़ रुपया मुआवजा दिया जा चुका है। यह रकम मुआवजे की कुल रकम का एक छोटा सा हिस्सा है। लाखों मध्यस्थ ऐसे हैं, जो छोटी-छोटी अराजियों के मालिक थे और उन अराजियों के अलावा उनके पास आय का दूसरा जरिया नहीं था। मुआवजे के अनुमान और भुगतान में राज्य सरकारों की दिक्कतों को ध्यान में रखते हुए, इस बात पर तुरन्त ध्यान देने की आवश्यकता है कि छोटे आय-गुटों के मध्यस्थों, विधवाओं और नाबालिगों को शीघ्रातिशीघ्र मुआवजा दिया जाय।

लगान में सुधार

विभिन्न राज्यों में निर्धारित लगान की दरों में काफी अन्तर है। आसाम, पहले के बम्बई क्षेत्र, मैसूर के भागों, उड़ीसा, राजस्थान, पहले के हैदराबाद राज्य और केन्द्र प्रशासित दिल्ली व हिमाचल प्रदेश के क्षेत्रों में लगान की दर ज्यादा से ज्यादा कुल फसल का $\frac{1}{4}$ या उससे कम है। इनमें से दो राज्यों में $\frac{1}{6}$ हिस्सा निर्धारित किया गया है। केरल के कृषि सुधार सम्बन्धों बिल में, लगान की अधिकतम दर धान के खेतों के मामले में कुल फसल का $\frac{1}{4}$ और $\frac{1}{6}$ के बीच में और दूसरे खेतों के मामले में कुल फसल का $\frac{1}{3}$ से $\frac{1}{20}$ के बीच रखी गई है। दूसरे राज्यों में लगान की अधिकतम दर कुल फसल का

$\frac{1}{3}$ या उससे अधिक रखी गई है। पश्चिमी बंगाल, पहले के आंध्र और जम्मू-कश्मीर में अधिकतम उत्पादन लगान की दर कुछ मामलों में कुछ फसल का ५० फी सदी भी है।

लगान फसल के किसी एक हिस्से पर लगाये जाने के स्थान पर मालगुजारी के कुछ गुने के रूप में लगाना अधिक सुविधाजनक है।

काश्तकारी की सुरक्षा

कुछ राज्यों में इस सम्बन्ध में व्यापक कानून बन चुके हैं। कुछ राज्यों में अस्थायी कानून द्वारा बेदखली को रोक दिया गया है। जिन राज्यों में व्यापक कानून बनाये जा चुके हैं, वहां काश्तकारी अवधि की सुरक्षा के तीन स्वरूप अपनाए गए हैं।

१. सभी किसानों के लिये काश्तकारी अवधि की पूर्ण सुरक्षा कर दी गई। जमींदारों को खुद काश्त के लिये भी किसी प्रकार की बेदखली का हक नहीं दिया गया।

२. जमींदारों को खुद काश्त के लिए सीमित क्षेत्र तक बेदखली का अधिकार दिया गया। साथ ही यह शर्त भी लगाई गई कि भूमि का न्यूनतम क्षेत्र या हिस्सा किसानों के पास ही छोड़ दिया जाय।

३. जमींदार के लिये भूमि की एक मात्रा निर्धारित कर दी गयी। उस मात्रा तक उन्हें भूमि बेदखल करने का हक दे दिया गया, लेकिन काश्तकारों को न्यूनतम आराजी को रखने का जैसा कोई अधिकार नहीं दिया गया।

उत्तरप्रदेश और दिल्ली में पहला स्वरूप अपनाया गया है। इन राज्यों में सभी काश्तकारों से सरकार का सीधा सम्पर्क स्थापित कर दिया गया है और उनकी काश्तकारी-अवधि की पूर्ण सुरक्षा कर दी गई है।

दूसरे नम्बर का स्वरूप आसाम, बम्बई, पंजाब, राजस्थान और हिमाचल प्रदेश में अपनाया गया है।

आसाम में जमींदार अपने उन रैयतों जिन्होंने भूमि-धारी हक प्राप्त नहीं किए हैं, और अधियारों से खुद काश्त के लिये ज्यादा से ज्यादा ३३$\frac{1}{3}$ एकड़ भूमि बेदखल कर सकता है, बशर्ते प्रत्येक रैयत या अधियार के पास बेदखली के बाद कम से कम $\frac{1}{3}$ एकड़ भूमि शेष बच रहे।

पहले के बम्बई राज्य क्षेत्र में जमींदार ३ लाभप्रद आराजियों (१२ से ४८ एकड़ तक) से ज्यादा बेदखल नहीं कर सकता है, बशर्ते प्रत्येक काश्तकार के पास दी गई जमीन का आधा हिस्सा शेष रहे।

पंजाब में (पेप्सू को शामिल करके) बेदखली की सीमा ३० पक्के एकड़ तक है। (विस्थापित व्यक्तियों के लिए पंजाब में यह सीमा ५० पक्के एकड़ तक और पेप्सू में ५० पक्के एकड़ तक है) हर एक काश्तकार को कम से कम ५ पक्के एकड़ तक भूमि रोक रखने का तब तक हक है, जब तक सरकार उसके एवज में दूसरी भूमि प्रदान न कर दे। पेप्सू में एक और व्यवस्था भी की गई है कि यदि काश्तकार किसी आराजी पर लगातार १२ वर्षों से काबिज है, तो उससे १५ पक्के एकड़ से अधिक भूमि बेदखल नहीं की जा सकती।

राजस्थान के एक काश्तकार को कम से कम १२०० रुपए की आमदनी वाली आराजी रखने का हक प्राप्त है। उससे अधिक की आराजी बेदखल की जा सकती है।

हिमाचल प्रदेश में बेदखली की सीमा ५ एकड़ रखी गई है और प्रत्येक काश्तकार को अपनी मौजूदा आराजी का तीन चौथाई कायम रखने का हक है।

जम्मू और काश्मीर, पश्चिमी बंगाल और पहले का हैदराबाद राज्य ऊपर बताई गई तीसरी श्रेणी में आता है।

हैदराबाद में जमींदार अपनी पारिवारिक आराजी से तिगुनी मात्रा तक भूमि बेदखल कर सकता है। पारिवारिक आराजियां ४ से ६० एकड़ तक है। काश्तकार को बुनियादी आराजी (जो पारिवारिक आराजी के $\frac{1}{3}$ हिस्से के बराबर होती है।) के बराबर या अपनी मौजूदा आराजी के आधे अंश तक, जो भी कम हो भूमि पर काबिज रहने का हक है। जो व्यक्ति बुनियादी आराजी या उससे कम जमीन का मालिक है, वह अपनी सारी जमीन बेदखल कर सकता है।

जम्मू कश्मीर में, बेदखली की अधिकतम सीमा काश्मीर के सिंचित क्षेत्र में २ एकड़ और सूखे क्षेत्र में ४ एकड़ तक तथा जम्मू के सिंचित क्षेत्र में ४ एकड़ और सूखे

(शेष पृष्ठ ५०७ पर)

करोड़ों के लिए योजना

डा० रघुवीर, संसद सदस्य

मुझे पूर्वी और पश्चिमी यूरोप के देशों का आतिथ्य ग्रहण करने का अवसर मिला है। अतिथि होने के नाते मुझे वह सब कुछ देखने का अवसर मिला है, जो मैं देखना चाहता था। मैंने समाजवादी और निजी उद्योगवादी दोनों प्रकार के लोगों की अर्थव्यवस्था का अध्ययन भी किया है। दोनों अर्थ-व्यवस्थाओं के सिद्धान्त और व्यवहार देखकर योजना-निर्माण के संबंध में जो नये विचार मेरे हृदय में आये हैं, उन्हीं का निर्देश इस लेख में करना चाहता हूँ।

चीन में किसानों के पास आधे एकड़ से कम भूमि है और वे बहुत परिश्रमपूर्वक काम करते हैं। वे इस छोटे से खेत पर जितना श्रम करते हैं और जितनी फसल पाते हैं, वह बहुत रोचक है। परन्तु मेरे हृदय में यह प्रश्न हुआ कि क्या वह इस तरह बहुत छोटे से खेत पर बिना यांत्रिक साधनों के जितना परिश्रम करता है, उससे कभी गरीबी से मुक्ति पा सकेगा? यह प्रश्न हमारे लिए बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यहां भी 'भूमिहीन किसान को भूमि' का नारा जोरों से लगाया जाने लगा है। इस नारे से लाखों किसानों के दिल उमंग से भर जाते हैं। भारत की ३६ करोड़ जनसंख्या में से ७० प्रतिशत खेती पर निर्भर करती है। करीब ३६ करोड़ एकड़ भूमि में खेती होती है। यदि सबमें भूमि का वितरण किया जाय तो प्रति व्यक्ति एक एकड़ अथवा प्रति परिवार ५ एकड़ भूमि मिलेगी। इस तरह अन-आर्थिक खण्डों में खेती को बांटने से उपज कम हो जायगी। जितने अधिक आदमी खेती पर निर्भर करेंगे, उतना ही देश कम समृद्ध होगा। कृषि पर निर्भर रहने वालों की संख्या से किसी देश के जीवन-स्तर का अनुमान किया जाता है। इसलिए सुदृढ़ अर्थ-व्यवस्था का नारा होना चाहिए कि "भूमि पर यथासम्भव कम व्यक्ति!"।

सोवियत रूस की आर्थिक सफलताएं निश्चित रूप से बहुत प्रभावकारी हैं। उन्होंने शस्त्र तथा भारी मशीनरी के उद्योग में इतनी प्रगति की है कि समस्त यूरोप व एशिया का कोई देश उसका मुकाबला नहीं कर सकता। किन्तु जब हम जीवन-स्तर का मुकाबला करते हैं, तब रूस पिछड़ जाता है। मैंने रूस के अर्थशास्त्रियों से विचार-विमर्श किया और वे इस बात से सहमत थे कि देश का सामान्य औद्योगिक विकास जनता के जीवन-स्तर को बढ़ा दे, यह आवश्यक नहीं है। एक ओर मैंने रूस में भारी उद्योगों के महत्व को समझा, दूसरी ओर यह भी अनुभव किया कि जनता की दृष्टि से उसके महत्व का अत्युक्तिपूर्ण वर्णन भी ठीक नहीं है।

भारत में हम अपनी योजना को किस दिशा में ले चलें? हमारा प्रथम उद्देश्य भारी उद्योगों का विकास करके देश को प्रमुख शक्ति बनाना नहीं होना चाहिए। भारी उद्योगों का महत्व है, परन्तु उन्हें ऐसी योजना के रूप में 'फिट' होना चाहिए, जिसका मुख्य और महत्वपूर्ण उद्देश्य जनता के जीवन-स्तर को उन्नत करता है। प्रधान उद्योग बड़ी योजनाएं, लोहे के कारखाने एक चीज हैं, एक-एक परिवार और एक-एक व्यक्ति, एक-एक गांव और एक-एक राज्य के जीवन-स्तर को ऊंचा करना दूसरी चीज हैं। इन दोनों को क्रमशः अंग्रेजी में 'मैक्रो प्लैनिंग' और 'माइक्रो प्लैनिंग' कहते हैं। सामुदायिक योजनाएं और राष्ट्रीय विस्तार खण्ड दूसरी प्रकार की योजना के अंतर्गत आते हैं, यद्यपि देश में उनकी सफलता और कोशिशें नगण्य सी हैं।

योजना, किसी भी आधार पर हो, बहुत विशाल विषय है। वित्त की प्राथमिकताओं की और सामाजिक व मनोवैज्ञानिक मान्यताओं आदि बहुत सी बातों की चिन्ता करनी पड़ती है। इन सब समस्याओं को हल कर सकें, ऐसी सर्वांगपूर्ण योजना एक या दस-बीस विद्वानों के लिए भी कठिन है। योजना का जो स्वरूप मैं समझता हूं, उसमें सभ्य जीवन का आधार एक 'घर' होता है। हमारे ३० करोड़ भाई देहातों में रहते हैं। उनमें से अधिकांश की दशा अत्यन्त दयनीय है, उनकी झोंपड़ियां पशुओं के रहने

(शेष पृष्ठ ४३८ पर)
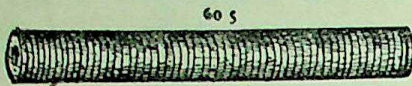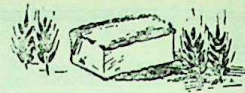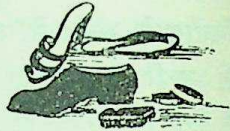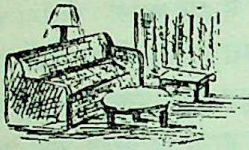
जीवन के विभिन्न मदों में व्यय का प्रतिशत
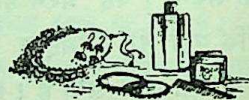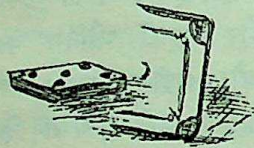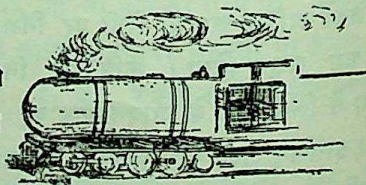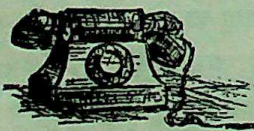
राजनैतिक ही नहीं, आर्थिक लोकतन्त्र भी

श्री मुरारजी जे० वैद्य

राजनैतिक लोकतंत्र के साथ-साथ आर्थिक लोकतंत्र भी अनिवार्य है और उसी से देश का पूर्ण आर्थिक विकास और नागरिक के व्यक्तित्व का विकास संभव है, यह स्थापना विद्वान् लेखक ने अत्यन्त योग्यतापूर्वक उपस्थित की है।

राजनैतिक स्वाधीनता को प्राप्त हुए ११ वर्ष हो चुके हैं, तथापि हमने अब तक आर्थिक स्वाधीनता नहीं पाई है। यह कहना भी उतना ही सत्य है कि यद्यपि हमने संविधान में राजनैतिक लोकतन्त्र को पा लिया है, फिर भी आर्थिक लोकतंत्र की स्थिति तक अभी तक पूर्णतः नहीं पहुँचे हैं। आर्थिक लोकतंत्र समाज की एक ऐसी पद्धति है, जिसमें प्रत्येक नागरिक, चाहे वह व्यापारी हो, मजदूर हो या नियोजक आदि कोई भी क्यों न हो, देश के आर्थिक विकास में स्वतन्त्र नागरिक या व्यक्ति के रूप में अपना भाग अदा कर सके। दूसरे शब्दों में आर्थिक लोकतंत्र का आधार व्यक्तिगत स्वतन्त्रता होना चाहिए।

जिन देशों ने आर्थिक विकास को बहुत तेजी से किया है, उनका अनुभव यह है कि उन्होंने व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के तत्व को नष्ट कर दिया है। मैं तो यह कहने में भी संकोच नहीं करता कि व्यक्तिगत स्वाधीनता की बलि देकर कुछ समय पूर्व उस लक्ष्य तक पहुँचने की अपेक्षा आर्थिक लोकतंत्र की आधारभूत व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की रक्षा करते हुए अपने आर्थिक विकास के उद्देश्य तक शनैः शनैः चलकर कुछ देर से पहुँचना अच्छा है।

रूस व चीन में

जिन आर्थिक लोकतंत्र की कल्पना मैं करता हूँ, वह आयोजित अर्थव्यवस्था से असंगति नहीं खाती। इस देश के सब अर्थशास्त्री आयोजित अर्थव्यवस्था से सहमत हैं। हमारा देश विश्व में पहला देश है, जहां राजनैतिक लोकतंत्र के साथ-साथ आयोजित अर्थव्यवस्था का परीक्षण किया जा रहा है। रूस जैसे देशों ने आर्थिक विकास योजना पर चलते हुए राजनीतिक लोकतंत्र की बलि दे दी है। चीन में भी, जो केन्द्रीय आर्थिक योजना के क्षेत्र में प्रविष्ट हुआ है, व्यक्तिगत स्वाधीनता की रक्षा नहीं की जा रही है। इसलिए व्यक्तिगत स्वाधीनता की रक्षा करते हुए अपने विकास-लक्ष्यों को जल्दी से जल्दी प्राप्त करने का हमारा आर्थिक विकास का परीक्षण जहां देश के भविष्य के लिए महत्वपूर्ण है, वहां उन अविकसित देशों के लिए भी मार्ग दर्शन का काम देगा, जिन्होंने साम्यवाद को अपनाया नहीं है। इसलिए सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या आयोजित अर्थव्यवस्था और पार्लमेण्टरी लोकतंत्र दोनों उद्देश्यों को एक साथ प्राप्त कर सकते हैं?

देश का आर्थिक विकास करने की चिन्ता व उत्सुकता में देश की सरकार, योजना आयोग तथा अन्य राजनैतिक नेता ऐसे उपायों की ओर आकृष्ट हुए हैं, जो देश को आर्थिक लोकतंत्र के लक्ष्य से दूर ले जा रहे हैं। समय-समय पर अपनी सफलताओं और त्रुटियों का निरीक्षण करते रहना आवश्यक है।

राष्ट्रीयकरण समाजवाद नहीं है

एक समाजवादी पद्धति के समाज में उद्योगों का राष्ट्रीयकरण आवश्यक है, यह भ्रान्त धारणा आज भारत में फैलती जा रही है। पश्चिम के राजनीतिक व आर्थिक विचारक उद्योगों के राष्ट्रीयकरण के परीक्षण के बाद अब इस मन्तव्य पर आ गये हैं कि राष्ट्रीयकरण समाजवाद का अनिवार्य और आवश्यक तत्त्व नहीं हैं। ब्रिटिश मजदूर दल के एक प्रमुख नेता मि० ह्यू ज गैटस्किल ने एक भाषण में कहा था कि सचमुच राष्ट्रीयकरण को समाजवाद कहा जा सकता है? केवल ब्रिटेन ही नहीं, पश्चिमी यूरोप के अन्य देशों में भी, जिनका रूझान समाजवाद की ओर है, इस दिशा में विचार करने लगे हैं। हमारे जैसे तरुण लोकतंत्री देशों के लिए यह

महत्वपूर्ण विचारणीय प्रश्न है कि क्या राष्ट्रीयकरण से हम समाजवादी लक्ष्य की ओर पहुँच भी सकते हैं ? जीवन बीमा निगम और विदेशी व्यापार के पूर्ण या आंशिक राष्ट्रीयकरण के परीक्षणों के बाद हम यह देख चुके हैं कि राष्ट्रीयकरण से आशाजनक व संभावित परिणामों पर हम नहीं पहुँच पाये हैं। बीमा व्यवसाय के राष्ट्रीयकरण के बाद न राज्य के कोश को कोई लाभ हुआ है और न पालिसी होल्डरों को। उनके तो प्रतिनिधियों को भी संचालक बोर्ड से हटा दिया गया है। स्टेट ट्रेडिंग कारपोरेशन का परीक्षण भी सफल नहीं हो रहा है। निर्यात का लाइसेंस इसकी अनुमति के बिना किसी को न मिले, यह कम से कम लोकतंत्र नहीं है।

नई विचारधारा

पश्चिमी देशों में एक विचारधारा जन्म ले रही है, जो न केवल उद्योगपतियों के लिए, बल्कि देश के सभी वर्गों के लिए रोचक व उपयोगी है। इङ्गलैण्ड में अब लोग यह सोचने लगे हैं कि क्या कम्पनी कानून आज उस उद्देश्य को पूर्ण भी करते हैं, जिन्हें सामने रखकर पहले कम्पनी कानून बनाये गये थे। जब इङ्गलैंड में स्टाक कम्पनियों का ज्वारभाटा प्रारम्भ हुआ था, कम्पनियों में बहुत थोड़े लोग सम्मिलित होते थे। उनकी जिम्मेवारियां असीम होती थीं, पर उसमें खतरा देखकर पीछे से सीमित जिम्मेवारियों (लिमिटिड) का रूप दिया गया। इसका उद्देश्य कम्पनी व शेयर होल्डरों में परस्पर सम्बन्ध स्थापित करना था। अब यह अनुभव किया जा रहा है कि बड़े-बड़े विराट् उद्योगों में चार तत्त्व अपना भाग अदा करते हैं— हिस्सेदार और प्रबन्धकर्ता सम्मिलित रूप से (क्योंकि उनके हित एक होते हैं) मजदूर, खरीदार और समस्त समाज। अर्थशास्त्री व राजनीतिज्ञ यह सुझाव देने लगे हैं कि मिल के प्रबन्धकर्ता अब केवल हिस्सेदारों के सामने जिम्मेदार नहीं है, मजदूर, खरीदार और देश की सामान्य जनता के सामने भी उत्तरदायी हैं। इसलिए सारे कम्पनी-कानून के मूल आधार को ही बदलने की जरूरत है।

दोनों का अस्तित्व

मौलिक विचार में यह परिवर्तित दिशा इस बात का स्पष्ट द्योतक है कि इन देशों में उत्पादन की वृद्धि टैकनिकल उन्नति, जीवन-स्तर के ऊंचा होने और शिक्षा-प्रसार आदि के कारण समस्त समाज-व्यवस्था भी बदल रही है। समाज-व्यवस्था में होने वाले परिवर्तनों के साथ-साथ आर्थिक विचार धारा को बदलना होगा। राजनैतिक व आर्थिक दोनों लोकतन्त्रों की साथ-साथ प्रतिष्ठा में ही यह सम्भव है कि आर्थिक विकास भी हो और नागरिकों के स्वातन्त्र्य की भी रक्षा हो। आर्थिक लोकतन्त्र ही उन्नतिशील अर्थ-व्यवस्था को ला सकता है और एक स्वतन्त्र देश के राजनीतिक लोकतन्त्र की रक्षा कर सकता है।

—

(पृष्ठ ४३५ का शेष)

लायक भी नहीं है। उनकी स्थिति में एकदम सुधार होना चाहिए। इसलिए प्रथम योजना की प्रथम आवश्यकता बड़ी-बड़ी नालियों, स्कूलों तथा अन्य आवश्यक सुविधाओं के साथ घरों का निर्माण भी है। यह काम बहुत कठिन है, क्योंकि ५ लाख गांव दूर-दूर बिखरे हुए हैं। भारत के प्रत्येक गांव में बिजली पहुँचाना सम्भव नहीं है। इस तरह से सब गांवों में बिजली नहीं पहुँचाई जा सकी। फिर खर्चे का भी सवाल है। छोटे छोटे देहातों को कस्बों में संगठित करने, स्कूलों, गोदामों, हस्पतालों, सिनेमाघरों तथा छोटे-छोटे उद्योगो को एक साथ संचालित करने से समस्या का हल कुछ सरल हो जायगा।

दो मुख्य विचारणीय विषय और हैं। पहला काम आवश्यक मशीनरी का निर्माण है। दूसरा विषय खाद्य समस्या को हल करना है। छोटी सिंचाई योजनाएं अधिक अच्छे परिणाम पैदा करेंगी और अधिक सहायक होंगी।

भारत में योजना-निर्माण असाधारण समस्या है। अन्य देशों के योजना-निर्माण से यह भिन्न है। हम किसी अन्य देश की योजना-पद्धति की नकल नहीं कर सकते। हमें अपनी पद्धति का स्वयं विकास करना होगा। हमारी पद्धति में व्यक्ति का हित प्रधान रहेगा। लोकतन्त्र देश में व्यक्तियों की प्रसन्नता और खुशहाली योजना का प्रथम और अंतिम उद्देश्य होना चाहिए।

—

समाजवाद, प्रजातन्त्र और भारत

समाजवाद और प्रजातंत्र दो ऐसे शक्तिशाली विचार हैं जिन पर आजके युग की सर्वाधिक आस्था है। आज इन दो शब्दों का प्रयोग जितना अधिक होता है, उतना किसी अन्य शब्द का नहीं। और इनके प्रयोग से जनता पर सर्वाधिक प्रभाव डाला जाता है। आज का कोई भी लोकनायक अपनी प्रसिद्धि को विपत्ति में डाले बिना इन दो शब्दों का विरोध नहीं कर सकता; क्योंकि जनता समाजवाद और प्रजातंत्र की भाषा आज सबसे अधिक समझती है। फिर भी साधारण जनता के ज्ञान पर यह व्यंग जैसा लगेगा

समाजवाद और प्रजातंत्र दो परस्पर विरोधी विचारधाराएं मानी जाती हैं और दोनों को भारत ने अपनाया है। दोनों के गुण-दोषों का विवेचन करता हुआ विद्वान लेखक मानता है कि इन दोनों में परस्पर समन्वय संभव है, परन्तु रूस के समाजवाद और अमेरिका के प्रजातन्त्र में नहीं, इन दोनों का समन्वय संभव है गांधीजी के सर्वोदयवाद में। कैसे, यह निम्न विद्वत्तापूर्ण लेख में पाठक पढ़ेंगे।

यदि यह कहा जाय कि वह जिन दो शब्दों के अर्थ से सबसे अधिक अनभिज्ञ हैं, वे यही दो शब्द हैं।

समाजवाद

समाजवाद मुख्यतः अर्थशास्त्रीय शब्दकोष का शब्द है और प्रजातन्त्र मुख्यतः राजनैतिक शब्द कोश का समाजवाद कुछ आर्थिक संकल्पों का नारा है और प्रजातंत्र सरकार के एक विशिष्ट संगठन का राजनैतिक नामकरण। समाजवाद एक प्रकार के जीवन-मूल्य, जीवन-दर्शन और समष्टिगत सभ्यता की, जिसे पूंजीवाद कहते हैं, प्रतिक्रिया है। यह प्रतिक्रिया कई रूपों में हुई, अतः समाजवाद की कोई परिभाषा नहीं और न कोई एक निश्चित रूप (पैटर्न) ही है। स्तालिन की मृत्यु के बाद साम्यवादी देशों के नायकों ने भी यह कहा कि 'समाजवाद के सौ मार्ग हैं।'

लेखक

प्रो० विश्वम्भर नाथ पाण्डेय, एम० ए०

तथा 'हजार (समाजवादी) पुष्पों को खिलने दो, हजार विचारों को जन्म लेने दो। वस्तुतः आज साम्यवादी भी मानने लगे हैं कि मार्क्सवाद (साम्यवाद) ही समाजवाद का एक मात्र रूप नहीं है।※ फिर भी व्यावहारिक दृष्टिकोण से समाजवाद का जो रूप अधिक प्रचलित और मान्य है, उसके अनुसार—

> समाजवाद वह दर्शन है, जो व्यक्ति के साथ समाज का भी व्यक्तित्व स्वीकार ही नहीं करता, अपितु दोनों के संघर्ष की स्थिति में उसे श्रेष्ठतर भी मानता है, उस समष्टिगत सभ्यता की नींव डालना चाहता है जो अवसर और आय की समता पर आधारित होती है तथा समाज के अभिभावक के रूप में राज्य के अस्तित्व को मान्यता प्रदान करता है।

※ समाजवाद पर अधिक जानकारी के लिये 'सम्पदा' का समाजवाद अंक देखें।

साधारणतः समाजवाद शब्द का प्रयोग जब हम करते हैं तो बहुत कुछ ऐसे ही सिद्धान्त-समूह का बोध होता है।

प्रजातंत्र

समाजवाद की तरह प्रजातन्त्र के भी कई अर्थ हैं। प्रजातन्त्र केवल सरकार का रूप ही नहीं है। अपितु समाज का रूप तथा जीवन की एक पद्धति भी है। 'प्रजातांत्रिक सरकार' की तरह 'प्रजातांत्रिक समाज' और 'प्रजातांत्रिक जीवन पद्धति' शब्दों का भी व्यवहार होता है। किन्तु इन सभी अर्थों के मूल में अविच्छिन्न भाव से जो भावना उपस्थित है, वह जनता की प्रभुसत्ता और जनता की परस्पर समता है। जनता परस्पर समान है, धर्म, जाति, रूप-रंग से निरपेक्ष हर व्यक्ति का व्यक्तित्व समान है और समष्टिगत रूप से जनता ही सबसे ऊपर है। विरोध स्पष्ट है। समाजवाद जो राज्य को समाज का अनिवार्य अभिभावक मानता है क्या उस प्रजातन्त्र का विरोधी नहीं है, जो जनता के ऊपर किसी की सत्ता नहीं मानता। प्रश्न क्लिष्ट अवश्य है, किन्तु उत्तर प्रारम्भ करने के पूर्व प्रजातन्त्र का स्वरूप कुछ अधिक स्पष्ट करना अपेक्षित है।

प्रजातंत्र सरकार के संघटन का राजनीतिक ढंग है और समाजवाद संघटित सरकार की आर्थिक क्रियाओं का एक विशिष्ट प्रोग्राम। सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से प्रजातन्त्रात्मक सरकार समाजवादी तथा समाजवादी सरकार प्रजातन्त्री होने में कोई बाधा नहीं दिखाई पड़ती। फिर भी सुप्रसिद्ध अमेरिकी लेखक श्री जे० ए० सुम्पीटर ने यह स्वीकार किया है कि आजकल इंगलैंड और अमेरिका जैसे पूंजीवादी देशों में ऐसे साहित्यों और लेखों का अभाव नहीं है, जो पूर्ण समाजवाद तो दूर, आयोजित अर्थतंत्र (Planned economy) को भी प्रजातन्त्र का विरोधी मानते हैं। इस पूंजीवादी दृष्टिकोण से सर्वथा विपरीत समाजवादियों का विचार यह है कि समाजवाद प्रजातन्त्र का अविरोधी ही नहीं, अपितु सच्चा प्रजातन्त्र केवल समाजवाद में ही सम्भव है। बोलशेविक पार्टी ने १८ वीं कान्फ्रेंस के अवसर पर यह प्रस्ताव स्वीकार किया था कि 'महान नेता स्तालिन की प्रतिभा के नेतृत्व में रूस की जनता विकास के नये युग में प्रवेश करती है और विश्वास करती है कि वह विश्व के सबसे पूर्ण प्रजातन्त्र का निर्माण कर सकेगी।' इतिहास साक्षी है कि रूस की जनता की यह महत्वाकांक्षा पूर्ण हुई है या नहीं। अभी हाल में भारत की साम्यवादी पार्टी ने भी अपने अमृतसर कान्फ्रेंन्स में प्रजातन्त्र में अपने विश्वास प्रकट किये हैं। प्रश्न यह है कि समाजवादियों ने प्रजातंत्र शब्द का पल्लू क्यों नहीं छोड़ा, जबकि सैद्धान्तिक उद्भव की ऐतिहासिक दृष्टि से सत्य यह है कि प्रजातंत्र व्यक्तिवादियों के उस दर्शन का स्वाभाविक राजनीतिक विकास था, जिसने अर्थतंत्र में पूंजीवाद को जन्म दिया।

प्रजातंत्र—सिद्धान्त का अंकुर जान स्टुअर्ट मिल के 'उपयोगितावाद (Utilitarianism)' में पाया जा सकता है जो आगे चलकर व्यक्तिवाद की शक्ति पाकर अनायास बढ़ने लगा। व्यक्तिवादियों ने यह दर्शन उपस्थित किया कि व्यक्ति स्वतन्त्र है और उसके व्यक्तित्व को स्वतन्त्र विकास का अवसर मिलना चाहिये। व्यक्ति स्वयं अपना प्रभु है, उस पर किसी बाहरी सत्ता का हस्तक्षेप और दबाव वांछनीय नहीं। यह सत्य है कि इस दर्शन की घोषणा आर्थिक क्षेत्र में ही अधिक हुई किन्तु राजनैतिक क्षेत्र में इस दर्शन का स्वाभाविक और तर्कसम्मत प्रक्षेपण यह हुआ कि व्यक्ति की तरह समाज भी अपना प्रभु माना जाने लगा। समाजतंत्र, प्रजातंत्र या जनतंत्र, जो कहें, पूंजीवाद का ही सह-जन्मा है। यह एक ऐतिहासिक सत्य है कि आधुनिक प्रजातन्त्र का जन्म उन्हीं देशों में हुआ, जिन्हें हम पूंजीवादी कहते हैं। १७ वीं शती के अन्त में यूरोप में इंगलैंड ही ऐसा देश था, जहां निरंकुशता का अन्त भलीभांति हो चुका था। अमेरिका की जनता पर इन सब का तथा जान लाक, रूसो, थामस, पेन आदि के साहित्य का विशेष प्रभाव पड़ा। १७७६-८१ ई० की अमेरिकी क्रान्ति ने ब्रिटिश शासन का अन्त कर दिया तथा अमेरिकी गणतंत्र की स्थापना की और घोषणा की कि 'ईश्वर ने सभी मनुष्यों की सृष्टि बराबर की है; तथा सबको विधाता से जीवन, स्वतंत्रता और आनन्द की खोज जैसे अनपहरणीय प्राकृतिक अधिकार मिले हैं।' १७८९ ई० में फ्रांस की क्रान्ति ने जन्म लिया जिसने स्वतन्त्रता, समता और बन्धुत्व का वह नारा दिया, जो आज भी प्रजातंत्र का गायत्री मंत्र है।

इतिहास विधाता की इस जनतांत्रिक इच्छा के विरुद्ध,

जिसका शिलालेख अमर धरती की छाती तथा जन मानस के चेतना-पट पर बड़े-बड़े अक्षरों में उत्कीर्ण हो रहा था, उस युग के कुछ दार्शनिक कागज और स्याही की लड़ाई कितनी लड़ते ? अतः अर्थतंत्र में 'जनता से शासन' का विरोध करते हुये भी राजतंत्र में उन्होंने सहज ही जनतंत्र के शासन का समर्थन किया।

इस १८ वीं शताब्दी के दर्शन के अनुसार प्रजातंत्र की परिभाषा श्री सुम्पीटर ने इस प्रकार दी है—"प्रजातंत्र राजनैतिक निर्णयों पर, जिनसे जनता की सामान्य इच्छा को प्रकट किया जाता है, पहुँचने की वह संस्थागत व्यवस्था है, जो इस इच्छा की पूर्ति के लिये एक स्थान पर एकत्रित होने वाले व्यक्तियों के चुनाव द्वारा जनता को स्वयं विभिन्न निर्णयों का अवसर देता है।' इस परिभाषा से तीन बातें स्पष्ट हैं। प्रथम यह कि प्रजातंत्र एक संस्थागत व्यवस्था है जिसमें राजनीतिक निर्णयों द्वारा जनता की सामान्य इच्छा को प्रकट किया जाता है। द्वितीय यह कि, इस इच्छा की पूर्ति निर्वाचित सदस्य एक स्थान पर (जिसे संसद या विधान-सभा कहते हैं) एकत्रित होकर करते हैं। और तृतीय यह कि, चुनाव के द्वारा जनता स्वयं उन विभिन्न राजनीतिक निर्णयों को सम्पादित करती है।

व्यवहार की दृष्टि से सत्य यही है कि जनता केवल प्रतिनिधियों का निर्वाचन करती है और फिर निर्वाचन करने के बाद एक निश्चित अवधि (सामान्यतः पांच वर्ष) के लिये निर्वीर्य और असमर्थ हो जाती है। निर्वाचन के बाद निर्वाचित व्यक्ति ही जनता के शासक हो जाते हैं और सामान्य इच्छा के निर्णय का एकमात्र अधिकार इन्हीं के मस्तिष्क में होता है।

यदि हम यह कहें कि प्रजातंत्र की उक्त परिभाषा का निचोड़ 'जन-शासन' है, तो भी यह ठीक नहीं—ऊपर से चाहे जितना भी कर्ण-सुभग (श्रुति मधुर) लगता हो। जनता का अर्थ क्या ? जनता शब्द का भी एक अर्थ नहीं है। संविधान की दृष्टि से 'जनता' शब्द मनुष्यों के ऐसे अनेक वर्गों को अपने वृत्त से बाहर रख सकता है, जिन्हें वैधानिक नागरिकता नहीं मिली है। प्राचीन काल में दासों को जनता की कोटि में नहीं रखते थे। वोल्टेयर ने भी 'जनता' का अर्थ सम्पूर्ण जनसमूह (Masses) न लगाकर मानव जाति का वह उद्बुद्ध, श्रेष्ठ और शिक्षित वर्ग लगाया था, जिसके लिये किसी देश का संविधान तैयार किया जाता है।+ और भी विचारणीय है कि प्राचीन भारत के अनेक राज्य जैसे लिच्छवी, कुरु, पान्चाल आदि अनेक ऐसे उदार और जन-प्रिय राज्य थे, जो अपनी सार्थकता में सभी प्रकार से प्रजातांत्रिक कहे जा सकते हैं फिर भी 'जन-शासन' नहीं थे। जनता अपना 'शासन' अनेक ढंग से कर कर सकती है। समझौते के द्वारा 'राजा' नियुक्त कर सकती है या 'प्रतिनिधि सभा' निर्वाचित कर सकती है। पर क्या जनता का यह शासन सचमुच जनता का शासन होता है ? आज के प्रजातांत्रिक देशों में जनता का अनुभव यह है कि जनता शासक नहीं, वस्तुतः शासित होती है।

तत्वतः इतना रंगहीन होने पर भी 'प्रजातंत्र' राजनीति में इतना रंगीन और आकर्षक क्यों लगता रहा है कि आज भी उसका प्रयोग कम नहीं हुआ है ? इसका प्रथम कारण यह है कि राजनीतिज्ञ स्वभावतः उन शब्दों को पसन्द करते हैं जो जनता को मीठे लगते हैं और जिनके जादू से जनता का निःसंकोच भाव से सहयोग प्राप्त किया जा सकता है। दूसरा कारण यह है कि समाजवाद आर्थिक क्रियाओं का प्रोग्राम था। यह सिद्धि था। प्रजातंत्र राज्य का रूप था—साधन था। साधन और सिद्धि में विरोध हो सकता है—किन्तु यहां ऐसा नहीं था, कम से कम सिद्धांत

(शेष पृष्ठ ४१७ पर)

+ द्रष्टव्य—पूंजीवाद, समाजवाद और प्रजातंत्र; लेखक—जे० ए० सुम्पीटर, पृष्ठ २४४।

आप देश के नागरिक हैं !

क्या आप निश्चय करते हैं कि—

आप किसी गैर जिम्मेदार हड़ताल या हड़ताली से सहानुभूति नहीं रखेंगे।

विभिन्न स्वार्थ और राजनीतिक दल हड़तालों द्वारा देश में अराजकता व अव्यवस्था लाना चाहते हैं। आपका इसमें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सहयोग नहीं रहेगा।

विकास योजना की पूर्ति में

समाजवाद का आदर्श बाधक है !

एक स्पष्ट वक्ता

कांग्रेस और शासन ने देश के जन जन के कल्याण और विकास योजनाओं की पूर्ति के लिए समाजवाद के आदर्श को अपनाया है। पर प्रश्न यह है कि क्या यह आदर्श विकास योजनाओं की पूर्ति में सहायक हो रहा है या बाधक ? शासकों व नेताओं के बहुप्रचारित विचार के विपरीत इस लेख के लेखक की मान्यता है कि यह आदर्श सहायक न होकर बाधा पहुंचा रहा है। लेखक का तर्कसंगत युक्तिक्रम पाठक को विचारणीय सामग्री अवश्य देता है।

कांग्रेस ने और भारत सरकार ने अपना लक्ष्य समाजवादी समाज की स्थापना बनाया है। हमारी नम्र सम्मति में यह हरेक को स्पष्ट हो जाना चाहिये कि समाजवाद, पूंजीवाद, सर्वोदयवाद आदि सब वाद चरम उद्देश्य नहीं हैं। हमारा चरम उद्देश्य है—नागरिक का हित। ये सब भिन्न-भिन्न पद्धतियां उस उद्देश्य तक पहुँचने की साधन हैं, स्वयं लक्ष्य नहीं हैं। जब हम इन भिन्न-भिन्न पद्धतियों को लक्ष्य मान लेते हैं, तब हम अपने मार्ग से भटक जाते हैं। समाजवाद भी एक मार्ग और एक साधन है। साध्य है भारत की जनता का आत्यन्तिक हित ! कोई प्रणाली उचित और ग्राह्य है या नहीं, इसकी कसौटी शास्त्रीय और आदर्शवादी सिद्धान्त नहीं, किन्तु चरम उद्देश्य की सफलता या असफलता है। इस दृष्टि से हम यहां विचार करना चाहते हैं कि समाजवादी समाज की स्थापना के उद्देश्य से देश की आर्थिक विकास-योजनाओं की पूर्ति में हम कहां तक आगे बढ़े हैं। इस संबंध में यदि हम देश के आदरणीय शासकों से सहमत न हो सकें, तो हमें पाठकों से एक नम्र निवेदन करना है कि वे किसी भी प्रकार के पूर्वाग्रह को छोड़कर प्रश्न के विविध पहलुओं पर निष्पक्ष दृष्टि से विचार करें।

समाजवाद के उद्देश्य

समाजवादी समाज की स्थापना के मूल उद्देश्य बताते हुए निम्नलिखित विशेष युक्तियां दी गई थीं—

(१) इससे जनता विकास-योजनाओं में विशेष रुचि लेगी और अधिक से अधिक उत्पादन करने की ओर प्रवृत्त होगी।

(२) उद्योगों के राष्ट्रीयकरण से देश में औद्योगिक उत्पादन अधिक हो सकेगा और देश की आर्थिक अवस्था सुधर जाएगी।

(३) जनता में परस्पर आर्थिक विषमता कम होगी तथा मजदूरों और किसानों को अधिक सन्तोष प्राप्त होगा।

(४) राष्ट्रीय विकास के लिये सरकार को अधिक वित्तीय साधन उपलब्ध होने लगेंगे।

विवेचना

हम निम्न पंक्तियों में संक्षेप में यह देखना चाहते हैं कि हमारे ये उद्देश्य कहां तक पूरे हुए।

समाजवादी उद्देश्य ने जनता को कोई विशेष प्रेरणा दी हो, इसके कोई प्रमाण नहीं मिलते। आज स्थिति यह है कि जनता सामूहिक हित की अपेक्षा अपने हित को ही अधिक महत्व देती है। हमारी सामुदायिक योजनाओं में अभी तक जनता का बहुत कम सहयोग मिला, यह पिछले दिनों सामुदायिक योजना सम्मेलन में प्रायः सभी अधिकारियों ने स्वीकार किया है। बहुत कम स्थानों पर सामुदायिक योजनाएं सचमुच जन सहयोग पा सकीं।

प्रथम पंचवर्षीय योजना के विवरण से जो दो-एक सत्य प्रकाशित हुए हैं, उनमें से एक यह है कि निजी उद्योग-क्षेत्र में अधिक सफलता प्राप्त हुई है और सरकारी उद्योगों में कम। यद्यपि भारत सरकार ने निजी उद्योग के साथ सौतेले बच्चे का व्यवहार किया है। प्रायः सभी निजी

[सम्पदा

उद्योगों ने अपने चरम लक्ष्य पूर्ण कर लिये हैं, जबकि सार्वजनिक उद्योग बहुत पीछे रह गये हैं।

यह एक स्वयं सिद्ध सत्य है कि सरकारी उद्योगों में उत्पादन-व्यय अधिक होता है। प्रबन्ध और व्यवस्था संबंधी खर्च अनाप-शनाप होते हैं। समय-समय पर आय व्यय निरीक्षण समितियों की जो रिपोर्टें प्रकाशित होती रहती हैं, उनसे प्रायः हरेक सरकारी महकमे में लाखों-करोड़ों रुपये के भ्रष्टाचार और अनियमितताओं के उदाहरण मिलते रहते हैं। निजी उद्योग में इस प्रकार की गड़बड़ियां न होती हों, यह हम नहीं कहते किन्तु उनका नुकसान सिर्फ शेयर-होल्डरों को होता है—सरकारी उद्योगों की तरह से जन-सामान्य पर उसका भार नहीं पड़ता।

जमींदारी उन्मूलन के समय यह कहा गया था कि इससे खेती की पैदावार बहुत बढ़ जाएगी। शायद सरकारी अंक इसे सिद्ध भी करें, किन्तु देश में आज जो अन्न-संकट है, वह यह विश्वास कराने में सहायक नहीं होता।

कुछ महत्वपूर्ण कदम

समाजवाद की दिशा में सरकार ने बीमा कम्पनियों का राष्ट्रीयकरण कर लिया, वायु यातायात कम्पनियों को अपने अधिकार में ले लिया है, इम्पीरियल बैंक को सरकारी बैंक के रूप में परिवर्तित कर दिया गया है। जगह-जगह बस-यातायात पर सरकार का स्वामित्व स्थापित हो गया है। जमीदारी उन्मूलन की दिशा में काफी कदम उठाये गये हैं। व्यापार के क्षेत्र में भी स्टेट ट्रेडिंग कार्पोरेशन की स्थापना करके बहुत-सा व्यापार जनता के हाथ से छीनकर सरकार ने अपने हाथों में ले लिया है। इसी तरह के कुछ और भी प्रयत्न किये गये हैं, जिनमें से एक महत्वपूर्ण निश्चय यह है कि अनेक औद्योगिक उत्पादनों पर सरकारी एकाधिकार कर लिया जाय; उनमें कोई निजी उद्योग दखल नहीं दे सकता। दूसरी श्रेणी कुछ ऐसे उद्योगों की है, जिनमें निजी या सरकारी दोनों संस्थाएं प्रवेश कर सकती हैं। हम संक्षेप से यह देखने का प्रयत्न करेंगे कि इन प्रयत्नों से देश को कितना लाभ हुआ है?

परन्तु !

बीमा कम्पनियों के राष्ट्रीयकरण से सरकार को विशेष लाभ हुआ हो—यह नहीं कहा जा सकता है। बीमा उद्योग को सरकारने अपने हाथ में लेते समय भारत बीमा कम्पनी की ढाई करोड़ की सिक्योरिटियों के गड़बड़ घोटाले की शिकायत की थी; किन्तु मुंदड़ा कांड ने यह सिद्ध कर दिया है कि भ्रष्टाचार पर केवल निजी उद्योग की 'मोनोपोली' नहीं है। बीमा उद्योग के राष्ट्रीयकरण के समय यह भी कहा गया था कि इससे सरकार को विकास कार्यों के लिये विपुल राशि मिल जाएगी; किन्तु बीमा निगम ने अपना कोष निजी उद्योगों को देने की नीति अपनाई है। इसका अर्थ यह है कि बीमा उद्योग के राष्ट्रीयकरण से कोई विशेष लाभ सरकार या सरकारी उद्योगों को नहीं हुआ है। १९५५ में जितना बीमा-व्यवसाय हुआ था, औद्योगिक वृद्धि के अनुपात से १९५६ में उससे कम हुआ है। इस वर्ष के पूर्वार्ध में सिर्फ ७४ करोड़ रु० का कारोबार हुआ है। राष्ट्रीयकरण से पूर्व १९५५ में २३८ करोड़ रु० का कारोबार निजी कम्पनियों ने किया था। इम्पीरियल बैंक ने स्टेट बैंक का रूप धारण करके कुछ थोड़े से स्थानों पर नई शाखाएं अवश्य खोली हैं और गांवों में कृषि के लिये ऋण देने की कुछ व्यवस्था भी हुई है; किन्तु जो कार्यक्रम बनाया गया था, उसका अभी चतुर्थांश भी पूरा नहीं हुआ है। सहकारी समितियों के सम्बन्ध में अभी तक भी सन्तोषजनक रिपोर्ट नहीं मिली है। यह आम शिकायत है कि गांवों के सम्पन्न और प्रभावशाली किसान इनसे फायदा उठा लेते हैं और जरूरत मन्द किसानों को इन समितियों के पेचीदा कागजात में से गुजर कर रुपया लेने का मौका नहीं मिलता।

यह एक आश्चर्य की बात है कि योजना आयोग ने

आप देश के नागरिक हैं !

आप क्या निश्चय करते हैं कि—

आप अपने परिवार में सीमित नियोजन का व्रत लेंगे ?

देश की जनसंख्या बहुत तेजी से (दो वर्षों में १ करोड़) बढ़ रही है और देश के अर्थशास्त्रियों व राजनीतिज्ञों को गंभीर चिन्ता में डाल रही है।

पिछले वर्षों में राज्य सरकारों को बार-बार यह सलाह दी थी कि वे राज्य के सीमित साधनों को यातायात उद्योग के राष्ट्रीयकरण में न लगावें। राज्य के साधन उन नये उद्योगों में लगने चाहियें, जिनकी ओर निजी क्षेत्र ध्यान नहीं दे पाता। पं० जवाहरलाल नेहरू ने अनेक बार यह स्पष्ट किया है कि हमारे साधन सीमित हैं और यह दूरदर्शिता की बात नहीं है कि उन साधनों को पहिले से ही चलने वाले उद्योगों में लगाकर नये महत्वपूर्ण उद्योगों की उपेक्षा की जाय, लेकिन राज्यों की सरकारों को एकाएक रुपया कमाने की लालसा हुई और नये उद्योगों के चलाने का साहस उनमें नहीं था। वस्तुतः हमारी नम्र सम्मति में जनता का रुपया ऐसे कार्यों में लगाना देश के हित में नहीं है, जो पहिले से ही चल रहे हैं।

किसान को क्या मिला?

हमने जमींदारी उन्मूलन करके एक महत्वपूर्ण कदम अवश्य उठाया है, किन्तु क्या इससे सचमुच देश और किसानों को लाभ भी हुआ है? क्या कृषि-उत्पादन की मात्रा बढ़ी है? और क्या किसानों का लगान, जो पहिले जमींदार खाता था, क्या कम हुआ है? यदि उसके लगान में कमी नहीं हुई तो जमींदारी उन्मूलन से किसान को क्या लाभ पहुँचा? जमींदार भूमि के विकास पर जितना रुपया लगा सकता था, साधनहीन किसान उतना रुपया नहीं लगा सकता। इस प्रकार उत्पादन-वृद्धि की मुख्य समस्या पर भू-स्वामित्व का प्रश्न हावी हो गया है और कुछ लोगों का ख्याल है कि इससे यथेष्ट उत्पादन नहीं हो पाया है। जमींदारी उन्मूलन का आदर्शवाद बहुत अच्छा है। इसमें कुछ सन्देह नहीं कि जमीदार के बन्धनों से किसान की मुक्ति की बड़ी भारी आवश्यकता थी; किन्तु हम यदि यथार्थ को मोहक शब्दावली में भूल जाएं तो क्या वह उचित होगा? फिर आज यह प्रश्न भी बना हुआ है कि क्या भोले-भाले किसान पहिले की अपेक्षा अधिक सुखी और अधिक सम्पन्न हैं?

स्टेट ट्रेडिंग कारपोरेशन

स्टेट ट्रेडिंग कार्पोरेशन समाजवाद की दिशा में एक बहुत बड़ा कदम बताया जाता है। इसमें सन्देह नहीं कि [illegible] समाजवादी देशों से समस्त व्यापार तथा सीमेंट के आयात और वितरण, लोहा तथा मैंगनीज के निर्यात आदि का एकाधिकार देकर इस कार्पोरेशन को पर्याप्त शक्तिशाली बना दिया गया है। 'सम्पदा' के पाठकों को शायद याद हो कि इस कार्पोरेशन ने सीमेंट के वितरण में, करोड़ रुपये का नफा कमाया था जो पूंजीपतियों के द्वारा किये जाने वाले शोषण से कम आक्षेप योग्य नहीं है। यह तो सरकार द्वारा जनता का स्पष्ट शोषण है।

जब स्टेट ट्रेडिंग कार्पोरेशन की स्थापना हुई थी, तब यह कहा गया था कि समाजवादी देशों की भिन्न आर्थिक व्यवस्था पद्धति के कारण व्यापारियों के लिये उनसे व्यापार करना कठिन होगा, इसलिये एक ऐसी सरकारी संस्था की आवश्यकता है, जो उन सरकारों से आयात निर्यात व्यापार कर सके; किन्तु इस कार्पोरेशन ने समाजवादी देशों के साथ व्यापार में हानि उठाई है, लाभ नहीं। पौलैंड ने ४४ हजार जूतों का आर्डर दिया था, जिसकी पूर्णता पर २ लाख जोड़ों का आर्डर और देना था, किन्तु नियत समय तक ११ हजार जोड़ों से अधिक नहीं भेजा जा सका, फलतः वह आर्डर रद्द कर दिया गया। रूस ने भी जूतों के जोड़ों का आर्डर बहुत कम कर दिया है। मैंगनीज के आर्डर बिना वसूल किये भारी कीमत पर बहुत सा सामान खरीद लिया गया। इससे भी करीब ५० लाख रुपये का नुकसान हुआ है। इस निगम का एक मात्र शेयर होल्डर भारत का राष्ट्रपति होता है और बाहर का कोई आदमी इस निगम के व्यवहार के सम्बन्ध में कोई प्रश्न नहीं कर सकता, जैसा कि साधारण तया कम्पनियों में किसी भी शेयर होल्डर को प्रश्न करने का अधिकार होता है। काली मिर्च भारत के निर्यात का एक महत्वपूर्ण पदार्थ होता है। अमेरिका ७० प्रतिशत काली मिर्च हमसे मंगाता है, किन्तु उक्त कार्पोरेशन ने रूस के हाथ बहुत भारी मात्रा में काली मिर्च बेच दी और उसके बदले में हमें ऐसी मशीनें दीं जो शायद हम न खरीदते। अपनी आवश्यकता के बाद की बची मिर्च बहुत कम कीमत पर रूस ने विदेशों को भेजकर हमारे इस उपार्जनशील व्यापार को बहुत नुकसान पहुँचाया है। अमेरीका हमसे बहुत कम मिर्च मंगाने लगा है। इस निगम का बहुत बड़ा

(शेष पृष्ठ ४६६ पर)

हमारी विकास योजना : कुछ विचार

लेखक

केरल के मुख्य मंत्री श्री नम्बूदरीपाद

योजना की त्रुटियां और कठिनाइयां— अब परिवर्तन कठिन — केरल की समस्याएं—जनसहयोग की अपेक्षा— करों की चरम सीमा।

कुछ समय पहले राष्ट्रीय विकास परिषद में पहली बार बाकायदा यह सवाल उठाया गया की योजना में कटौती की जाय। इसका कारण विदेश मुद्रा की कठिनाई नहीं, बल्कि अन्दरुनी साधनों का न मिलना बताया गया था। लेकिन आयोग की ओर से प्रकाशित समीक्षा से हमें यह नहीं पता लगता कि दूसरी योजना के पहले दो वर्षों में स्थूल लक्ष्यों की पूर्ति किस हद तक हुई और अन्तिम तीन वर्षों में कहाँ तक होगी। (दस्तावेज में आँकड़े दिये हुए हैं उनका सम्बन्ध केवल उन साधनों से है जो मौलिक योजना में निर्धारित किये गये थे और बाद में जिनके संशोधन का प्रस्ताव किया गया है।)

लेकिन हमें अच्छी तरह मालूम है कि अन्दर और बाहर दोनों क्षेत्रों में चूंकि कीमतें बढ़ी हैं इसलिए शुरू के मौलिक स्थूल लक्ष्यों को हासिल करने के अधिक वित्तीय पूंजी की जरूरत होगी। लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं कि अगर वित्तीय लागत ४८०० करोड़ रु० तक भी पहुँच जाय फिर भी स्थूल रूप से योजना की सफलता निर्धारित लक्ष्य की तुलना में १५ से २० फी सदी तक कम ही होगी। ऐसी स्थिति में यह असंभव हो गया कि वह ४,५०० करोड़ रु० से आगे भी जा सके। हालांकि इस ४,५०० करोड़ के लिए भी राज्यों को गहरी कोशिश करनी पड़ेगी—उन्हें अतिरिक्त साधन बढ़ाने के लिए अधिक टैक्स, कर्जे और अल्प बचत तथा खर्चे में कमी आदि से अधिक धन संग्रह करना पड़ेगा। यह सब मिलाकर मौलिक योजना से २४० करोड़ रु० अधिक हो जायगा।

अब यह देखना है कि इस दिशा में राज्यों की तरफ से कितनी अधिक कोशिश होती है। अगर कोई कोशिश न हुई तो वित्तीय धन में और भी कटौती करनी पड़ेगी।

जबकि यह निश्चित-सा है कि योजना की पूर्ति के वित्तीय साधन कम होंगे तो हम मौजूदा साधनों को लगाने से पहले आवश्यकताओं का क्रम बदलेंगे या नये टैक्स लगायेंगे, या खर्चे कम करेंगे, या अपने राज्य के साधनों की वृद्धि के लिए और कोई तरीका अपनायेंगे ? योजना के खर्चों के विभिन्न मदों में साधनों का लगाना बहुत महत्वपूर्ण है। साथ ही वह एक कठिन समस्या भी है।

एक तरफ मेरा विचार यह है कि, जहां तक केरल राज्य का सम्बन्ध है, योजना को अनुत्पादक क्षेत्रों की तरफ आवश्यकता से अधिक मोड़ दिया गया है। हमारी मुख्य समस्या खाद्यान्न की कमी और बेरोजगारी है। इसलिए सबसे अधिक महत्वपूर्ण काम हैं, खेती की उपज बढ़ाना, सहयोगिता के आधार पर कुटीर तथा

लघु उद्योगों के संगठन, मछली-व्यवसाय के विकास छोटे उद्योगों को आर्थिक व शैक्षणिक सहायता देना।

कोई उग्र परिवर्तन असंभव

लेकिन पहली और दूसरी पांचसाला योजनाएं इस दिशा के विपरीत अधिक सड़कें, अधिक पुल, टेकनिकल नहीं, आम शिक्षा के लिए अधिक स्कूल और कालेज आदि की तरफ भी मोड़ी गयी थीं। यह दिलचस्प बात है कि जहां तक काम पूरा होने की बात है, पहली पांचसाला योजना में सड़कों पर हुआ असली खर्च शुरू के निर्धारित मद से ५० फी सदी अधिक था, खेती और ग्राम विकास में वह ४५ फी सदी था, कुटीर उद्योग पूरे पांच साल में निर्धारित मद का केवल ३५ फी सदी तथा सहयोगिता के लिए ५० फी सदी से कुछ ऊपर खर्च हुआ।

दूसरी योजना में हमारे राज्य के यातायात और सामाजिक सेवाओं के लिए क्रमशः ५.५७ करोड़ और २३.६७ करोड़ तय हुआ है, जबकि उद्योग के लिए केवल ६.६३ करोड़ दिया गया है; और खेती की उपज के लिए जिसमें सिंचाई की छोटी-छोटी योजनाएं, पशु-पालन आदि हैं, केवल ६.३४ करोड़ दिया गया है।

एक तरफ जहां इससे यह पता चलता है कि योजना में आवश्यकता के अनुसार जो क्रम बनाया गया है उसमें उग्र परिवर्तन करना चाहिए, वहीं मौजूदा योजना में फिर से मदें निर्धारित करना बहुत मुश्किल होगा, क्योंकि हम प्रारम्भिक अवस्था से आगे निकल चुके हैं। जनता को यह आशा बंध चली है कि अमुक दिशा में अमुक विकास होने वाला है। अब उसे नयी दिशा की तरफ मोड़ना आसान नहीं। अब किया सिर्फ यह जा सकता है कि कुछ छोटे-बड़े संशोधन इधर-उधर किये जायं, जिनसे बुनियादी ढर्रे में कोई परिवर्तन न आवे। इसे हम यथा संभव करेंगे।

लेकिन मदों के फिर से निर्धारण का एक दूसरा भी पहलू है और वह यह कि बिना आर्थिक खर्चों को उसी अनुपात में बढ़ावे स्थूल लक्ष्यों में वृद्धि करके उत्पादन सम्बन्धी क्रियाशीलता बढ़ायी जा सकती है। मसलन, बिना कोई विशेष आर्थिक खर्चा बढ़ावे हम खेती की उपज में बहुत ही अधिक वृद्धि कर सकते हैं, अगर हम हरी खाद बनायें, कम्पोस्ट बनायें, छोटे-छोटे सिंचाई के साधनों को तैयार करने के लिए संगठन बनायें।

इसी प्रकार औद्योगिक और दूसरी सहयोगी समितियों में भी बहुत कुछ किया जा सकता है बशर्ते कि उसके लिए संगठन बनाये जायं, राजनैतिक पार्टियों, जन-संगठनों, और आम जनता को संगठित किया जाय।

सच बात यह है सि योजना के लागू होने में सबसे बड़ी और गम्भीर कमी यह है कि वह सरकारी कर्जों व अनुदानों की गुलाम हो गयी है, और जनता की जीवनी-शक्ति और जोश में उसे कोई विश्वास ही नहीं। अगर यह कमी पूरी हो जाय, तो वित्तीय कठिनाई के बावजूद हम योजना के स्थूल पहलू पूरा कर सकते हैं। कहना करने से बहुत आसान है क्योंकि जनता के साधनों को इतने बड़े पैमाने पर एकजुट कर पाने के लिए राजनैतिक पार्टियों तथा जन संगठनों में नयी दिशा की अपेक्षा होती है। हर काम के लिए सरकार का ही मुंह ताकने वाली प्रवृत्ति छोड़नी पड़ेगी, उसके स्थान पर जनता को स्वयं वह सब कुछ करना पड़ेगा, जो उसके सामर्थ्य में होगा, केवल उन बड़ी योजनाओं के लिए सरकार पर भरोसा करना पड़ेगा, जिनमें ऊपर से आर्थिक और टेकनिकल मदद की जरूरत हो।

यदि केरल में हम उस गम्भीर परिस्थिति का सामना करने के लिए अपने को योग्य सिद्ध करना चाहते हैं जो योजना की प्रगति की दिशा में उपस्थित हो गयी है कम्युनिस्ट पार्टी समेत जनता के तमाम प्रतिनिधियों और नेताओं में यह परिवर्तन लाना हमारी पार्टी और सरकार का कर्तव्य हो जाता है। अगर हम ऐसा कर सकें तो सीमित साधनों से भी हम बहुत कुछ कर दिखायेंगे।

नये टैक्सों की सीमा

जहां तक अतिरिक्त टैक्सों का प्रश्न है, उसकी भी सीमा है। जो टैक्स हमने पहले से लगा रखे हैं, उनसे अगले पांच साल में १२ करोड़ रु० आयेगा, जबकि हमारे लिए मौलिक निर्धारण ६ करोड़ था। फिर भी हम सोचें यदि कोई ऐसे तत्व बचे हों, जिनमें टैक्स देने की क्षमता हो, तो उन पर लगाया भी जा सकता है, लेकिन इसकी सम्भावनाएं बहुत ही सीमित हैं।

विगत १०० वर्षों में भारतीय कृषि

श्री ओमप्रकाश तोषनीवाल, एम० काम०

कृषि-सम्बन्धी यह अर्थशास्त्रीय लेखमाला पाठकों के लिए विशेषतः अर्थशास्त्र के विद्यार्थियों के लिए उपयोगी है। तीन लेखों में यह पूर्ण होगी। पाठक इसे और आगामी दो अङ्कों को संभाल कर रखें।

"जब खेती फलती फूलती है, तब सब धन्धे पनपते हैं, किन्तु जब भूमि को बंजर छोड़ दिया जाता है तब अन्य सभी धन्धे शीघ्र नष्ट हो जाते हैं।"
—महात्मा सुकरात

राष्ट्रीय सम्पत्ति की आधारशिला

भारतीय अर्थ व्यवस्था का आधार हमारा कृषि उद्योग है। अनादि काल से देश की जनसंख्या का एक बड़ा भाग इसी उद्योग से अपना जीविकोपार्जन करता चला आ रहा और आज भी, जैसा कि सन् १९५१ की जन-गणना के आंकड़े स्पष्ट करते हैं कृषि जीवियों की संख्या २४,९१,२२ ४४९ है। ये आंकड़े कुल जन-संख्या के ७० प्रतिशत के बराबर हैं। इससे स्वतः ही कृषि-उद्योग की महत्ता का आभास मिल जाता है। वस्तुतः कृषि भारतीय जीवन का एक प्रतीक बन गई है। औद्योगीकरण के इस बढ़ते हुए युग में भी भारतीय कृषि और भारतीय कृषक का महत्व पहले से कहीं अधिक बढ़ा है। कृषि, जहां एक ओर लोगों को भोजन उपलब्ध कराती है, वहां दूसरी ओर वह अनेक उद्योगों को कच्चा माल प्रदान करती है, जिनके द्वारा हमारी अनेक आवश्यकताओं की वस्तुएं निर्मित होती हैं। केन्द्रीय और राज्य सरकारों की आय का कृषि एक महान स्रोत है। हमारी कृषि विदेशी मुद्रा अर्जन करने का भी एक उत्तम साधन है।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि लोगों का जीवन, उनका जीवनस्तर, देश के उद्योग-धन्धे, व्यापार, यातायात, शासन का संचालन, सुरक्षा और सामाजिक कल्याण—

लेखक

सभी का सम्बन्ध कृषि की अवस्था से है। हमारी कृषि वस्तुतः राष्ट्रीय सम्पत्ति की आधारशिला है। इतना महत्व होते हुए भी विगत चार सौ वर्षों में भारतीय कृषि का जो इतिहास रहा है, वह अत्यन्त दयनीय, दुःखद और लज्जाजनक है। हमारे इस अन्नदाता कृपक की इन वर्षों की करुण कहानी, जो भारतीय कृषि का इतिहास ही है, आज भी शरीर में रोंगटे खड़े कर देती है। "भारतीय मानवता के इस प्रतीक ने शताब्दियों तक लगान, कर्ज़, नज़राने का कमर तोड़ देने वाला बोझ ढोया है। लेकिन इतने पर भी वह विचलित नहीं है। युगों-युगों की निराशा और क्लेश ने उसको भाग्यवादी बनाकर छोड़ दिया है। और उसने समझ लिया है कि यह सब किस्मत का खेल है।"

भारतीय कृषि—सन् १८५० ई० तक

प्राचीन काल, मुगल काल और ईस्ट इंडिया कम्पनी के शासनकाल में कृषि के ढांचे में कोई परिवर्तन नहीं हुआ।

कृषि करने के जिन तरीकों को कृषक लोग चिरकाल से अपनाते चले आ रहे थे, वे ही अंग्रेजी राज्य के प्रारम्भिक काल में चलते रहे। कृषकों की गरीबी और रूढ़िवादिता के फलस्वरूप पैदावार प्रति एकड़ कम अवश्य थी, लेकिन फिर भी कुल उत्पत्ति देश की जनता के लिए पर्याप्त थी। यह अवस्था १६ वीं शताब्दी के अन्त तक रही। इस समय तक देश में काफी क्षेत्र ऐसा पड़ा हुआ था, जिस पर कृषि नहीं की जाती थी। जहां देश में एक ओर जनता के लिए खाद्य पर्याप्त था, वहां दूसरी ओर देश में अकाल भी असाधारण नहीं थे। उन वर्षों में जबकि फसलें बाढ़ अथवा सूखे से नष्ट हो जाती थीं, अकाल का पड़ जाना उन क्षेत्रों में सामान्य था। इसका मुख्य कारण उन दिनों में यातायात के साधनों के अभाव का होना था। ईस्ट इंडिया कम्पनी के शासनकाल में कृषि की अवस्था काफी शोचनीय हो गई थी। सन् १८१२ में जब कम्पनी ने व्यापार का एकाधिकार छोड़कर देश का शासन अपने हाथ में लिया तो उसे शासन संचालन के लिए मालगुजारी पर अधिक निर्भर रहना पड़ा। फलस्वरूप मालगुजारी वसूल करने के लिए भूमि प्रबन्ध सम्बन्धी अनेक परिवर्तन किये गये। लेकिन इससे कृषकों को कोई विशेष लाभ नहीं मिल सके, क्योंकि कम्पनी की नीति का मूल मंत्र था भारत में ब्रिटिश राज्य की जड़ों को मजबूत करना तथा राज्य संचालन के लिये कृषकों का शोषण करके अधिक से अधिक मालगुजारी प्राप्त करना। अतः भूमि-व्यवस्था के नाम पर जो कुछ किया गया, उसमें कृषकों के हित का कोई ध्यान नहीं रक्खा गया। परिणामस्वरूप खेती के सुधार में उनकी कोई विशेष रुचि नहीं रही। साथ ही मध्यस्थों के बाहुल्य के कारण उनका आर्थिक शोषण हुआ, इससे उनकी उत्पादक कार्यक्षमता नष्ट हो गई और वे निराशावादी, हतोत्साहित हो किंकर्तव्य विमूढ़ हो बैठे। कृषि दिन प्रतिदिन अवनत होती गई। सन् १८५७ तक भारतीय कृषि पतन की सीमा पार कर चुकी थी और भारतीय कृषक पूर्णरूप से जर्जरित हो गया था।

सन् १८५७ ई० के बाद

सन् १८५८ ई० में जब राज्य सत्ता प्रत्यक्ष रूप से इंगलैंड की सरकार के हाथ में आ गई तो उनके सामने कई समस्यायें थीं। एक राज्य को सुसंगठित और समृद्ध कैसे किया जाय।

दूसरे, कृषकों की दशा जो कि अत्यन्त दयनीय हो गई है, उसमें किस प्रकार अल्प सुधार किये जायें?

तीसरे, इंग्लैंड के लिये भारतीय कृषि से किस प्रकार पर्याप्त कच्चा माल मिलता रहे, तथा—

चौथे, १६ वीं शताब्दी के अन्तिम तीन-दशकों में भारत में जो अनेक दुर्भिक्ष पड़े थे।

इन सभी कारणों ने सरकार को बाध्य किया कि वह भारतीय कृषि के प्रति कोई स्वास्थ्य कर नीति अपनाये। फलस्वरूप कुछ सुधार के कार्य किये गए। इनमें रेलों का निर्माण और कुछ कमीशन और कमेटियों की स्थापना उल्लेखनीय हैं। सन् १८६७ ई० और १८८० में दुर्भिक्ष कमीशन नियुक्त किये गये। १८७० में एक शाही कृषि विभाग स्थापित किया गया, परन्तु प्रान्तीय सरकारों के सहयोग न मिलने के कारण वह शीघ्र ही बन्द हो गया। सन् १८८०-८१ ई० में जो दुर्भिक्ष-आयोग स्थापित हुआ था, उसने सिफारिश की थी कि कृषि विभाग का पुनर्संगठन किया जाय। इसके बाद सरकार ने दो कानून पास किये- भूमि सुधार कानून और कृषक ऋण कानून। इन सुधारों से इतना अवश्य हुआ कि कृषि आवश्यकताओं के लिए किसानों को तकावी मिलने लगी, परन्तु भारतीय कृषि की आवश्यकताओं को देखते हुए यह आर्थिक सहायता किसी प्रकार भी पर्याप्त नहीं कही जा सकती थी। सन् १८८९ ई० में डा० वाइलकर की अध्यक्षता में कृषि सुधार समिति की स्थापना हुई। इसकी सिफारिशों से केवल इतना ही तय हो सका कि कृषि में वैज्ञानिक खोज होने लगी। सन् १८६२ ई० में एक कृषि रसायन-शास्त्री की नियुक्ति की गई, जिसका कार्य कृषि नीति के विषय में सलाह देना था। इसके बाद सन् १८६८ ई० में बजट पर बहस करते हुए सर निकोल्सन ने यह सुझाव पेश किया था कि सरकार को कृषि सुधार के लिये बजट में कुछ आयोजन अवश्य करना चाहिए। सन् १६०१ के अकाल आयोग ने यह सुझाव दिया था कि कृषि विभाग को अनुसंधान और प्रयोगों के ऊपर जोर देना चाहिए। खाद और काश्त के बारे में जांच करनी चाहिए। पौधों की बीमारी की चिकित्सा, नये प्रकार के पौधों का परिचयात्मक प्रयोग, पशुओं की नस्ल में

सुधार और उनको चिकित्सा का प्रबन्ध करना चाहिए।

कृषि सुधार के लिए और भी प्रयत्न किये गये जिनमें सन् १६०३ का सिंचाई आयोग, सन् १६०४ का सहकारिता कानून, सन् १६०५ में प्रान्तीय कृषि विभागों का विस्तार, इसी वर्ष एक अखिल भारतीय कृषि परिषद की स्थापना एवं सन् १६०६ ई० में भारतीय कृषि सेवा का आरम्भ आदि मुख्य हैं।

इन सभी प्रयत्नों से ऐसा आभास मिलता था कि सरकार कृषि क्षेत्र में कुछ करने के लिए इच्छुक है अतः १६वीं शताब्दी के इस काल में न केवल कृषि क्षेत्र में ही परिवर्तन के कुछ चिन्ह दृष्टिगोचर हुए अपितु राजनैतिक और सामाजिक व्यवस्था में भी परिवर्तन आये जिनका उल्लेख हम यहां नहीं कर रहे हैं। इस प्रकार १६वीं शताब्दी भारतीय इतिहास में संक्रान्तिकाल रहा है। संक्रान्ति का जितना प्रभाव व्यापार, यातायात, जनसंख्या, उद्योगधन्धों आदि पर पड़ा है उतना कृषि पर नहीं। भारतीय कृषि आज भी अपने उन्हीं रास्तों पर चली आ रही थी जिन पर वह शताब्दियों से चल रही थी। कृषकों का वही संकीर्ण दृष्टिकोण, उनकी गरीबी, उनका संगठन, उनके उत्पत्ति के तरीके तथा उनकी प्रति एकड़ पैदावार सभी पूर्ववत से थे। हां, अन्तर इतना अवश्य था कि भारतीय कृषक जहां पहले पहले खाद्य पदार्थों का ही उत्पादन करता था अब व्यापारिक फसलों की मांग के कारण उसकी आय में भी बढ़ोतरी हुई। तथापि कृषि और कृषकों का मूल ढांचा वैसे का वैसे ही बना रहा।

आय बढ़ जाने पर भी किसान ऋण के भार से मुक्त न हो सका बल्कि कुछ परिस्थितियों में तो उसके ऋण का भार और अधिक बढ़ गया। इसके अतिरिक्त अंग्रेजी राज्य में भारतीय कृषि की दशा देश की अर्थ व्यवस्था में असन्तुलित हो गई क्योंकि अंग्रेजों की भारतीय औद्योगीकरण का गला घोंटने की नीति के फलस्वरूप खेतों पर ही अधिकाधिक लोग निर्भर रहने लगे। कृषि अविकसित और हीन होती गई, पैदावार गिरती गई और अलाभकर अराजियों पर बहुत अधिक मानव श्रम नष्ट होने लगा। काश्त के योग्य ऊसर को खेती में लाना तो दरकिनार, काश्त की जाने वाली भूमि का बड़ा हिस्सा परती रहने लगा और कुल बोई जमीन का क्षेत्रफल गिर गया। भूमि अधिकाधिक निठल्ले, खेती न करने वाले मालिकों के हाथ में पहुँची जो केवल लगान वसूल करने में ही दिलचस्पी रखते थे। इस प्रकार जमींदारी और व्यापक हुई और लगान पर लगान दर उठाने का सिलसिला बढ़ता गया। जिस गरीब के पास जमीन बची भी वह कर्ज में डूबता गया और भारत के किसान पर कुल अरबों रुपयों का कर्ज चढ़ गया। इस कर्ज के बोझ के फलस्वरूप किसानों का शोषण और गहरा होने लगा। महाजनों के हाथ में जमीन आने लगी और भूमिहीन खेतीहरों की संख्या बेतरह बढ़ गई और इस प्रकार कोटि-कोटि गरीब लोग विदेशी सरकार, जमीदार और महाजन के तिगुड्ड द्वारा चूसे जाने लगे।

सन् १६१४ ई० से १६३६ ई० तक

प्रथम विश्वयुद्ध में जो सन् १६१४-१८ ई० तक रहा भारतीय कृषि को अवश्य कुछ प्रोत्साहन मिला। युद्ध जन्य परिस्थितियों और मंहगाई के कारण उनकी वस्तुओं के दाम अवश्य बढ़े लेकिन कृषि में कोई उल्लेखनीय प्रगति हुई हो, ऐसी बात नहीं थी। कृषि अब भी अव्यवस्थित और अविकसित ही थी। कृषक लोग अपनी उन्हीं पुरानी रूढ़ियों पर चलते हुए कमजोर पशुओं और साधारण बीज का ही प्रयोग करते थे। १६१८-१६ ई० के अकाल ने जो काफी विस्तृत और भयंकर था कृषकों और कृषि की दशा में काफी गिरावट ला दी। कृषक अपने को प्रकृति का दास कहकर असहाय समझते थे। परिणामस्वरूप सन् १६१६-१७ ई० से १६२३-२४ ई० के बीच में कुल बोई और जोती जाने वाली भूमि २२६.५ मि० एकड़ से घटकर २२२.५ मि० एकड़ रह गई। इसमें खाद्य उत्पादन करने वाली भूमि २०८.७५ मि० एकड़ से घटकर १६७ मि० एकड़ रह गई। इसी समय में सिंचाई योग्य क्षेत्र ४८ मि० एकड़ से घटकर ४५ मि० एकड़ रह गया। इस काल की कृषि क्षेत्र में दो मुख्य विशेषताएं थी। एक और जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ रही थी और दूसरी ओर युद्ध समाप्ति के के पश्चात् धीरे २ कीमतों का रुख गिरावट की ओर था। भारतीय कृषक पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ा और वह

(शेष पृष्ठ ५१४ पर)

भारत में विदेशी पूंजी को प्रोत्साहन

दूसरी पंचवर्षीय आयोजना में उद्योगों को बढ़ाने पर विशेष जोर दिया गया है। इसके लिए हमें काफी पूंजी चाहिए। इसलिए यदि देश के उद्योगपतियों के अलावा विदेशी उद्योगपति यहां पूंजी लगाते हैं, तो हमें उद्योग बढ़ाने में काफी सहायता मिलेगी।

सन् १९४८ में यहां विदेशी उद्योगपतियों की २ अरब ८७ करोड़ ७० लाख रु० की पूंजी लगी हुई थी। १९५५ में यह पूंजी बढ़कर ४ अरब ८७ करोड़ ७० लाख रु० हो गयी। १९५७ के सरकारी आंकड़े अभी प्राप्त नहीं हो सके, परन्तु गैर सरकारी आंकड़ों से पता चलता है कि इस वर्ष तक १ अरब ५० करोड़ रु० की विदेशी पूंजी और लगी।

पिछले क्रम को देखते हुए भारत सरकार का अनुमान है कि दूसरी आयोजना में १ अरब रु० की और विदेशी पूंजी लग सकती है। १९५६ में सरकार ने उद्योग नीति का जो प्रस्ताव पास किया है उसके अनुसार ऐसी कारवाई की गयी है, जिससे उद्योगपतियों को खासतौर पर विदेशी उद्योगपतियों को विश्वास हो कि यहां उद्योगों में पूंजी लगाने की कितनी गुंजाइश है और क्या लाभ है? आवश्यकतानुसार साधारण उद्योग नीति में हेरफेर भी किया जाता है। मसलन, सरकारी नीति तेल उद्योग को सरकारी क्षेत्र में रखने की है परंतु सरकार ने विदेशी पूंजीपतियों को सरकारी 'आयल इंडिया' कम्पनी में हिस्सेदार बनने को निमंत्रित किया है।

विदेशों से सहायता

देश की उन्नति के लिए जो उद्योग जरूरी हैं, उन्हें बढ़ाने में भारत सरकार विदेशी कम्पनियों को भारतीय उद्योगपतियों के साझे में पूंजी लगाने के हेतु प्रोत्साहन देती है। कारखाना लगाने के लिये जो मशीन और सामान विदेशों से खरीदना पड़ता है, उतनी पूंजी लगाने की मंजूरी तो दे ही दी जाती है। इस रकम को विदेशी कम्पनी का शेयर या हिस्सा और ऋण माना जाता है। भारत सरकार चाहती है कि उद्योग में अधिकांश हिस्से भारतीयों के ही रहें, परन्तु जरूरत होने पर विदेशियों को भी अधिकांश हिस्सा रखने की अनुमति दी जाती है क्योंकि भारतीयों को काम सीखने का मौका मिले और प्रबंध में भी उनकी राय से चले।

उन्हें कर आदि देने के बाद, अपने लाभ को अपने देश भेजने या अपनी पूंजी लौटा कर ले जाने का भी आश्वासन और सुविधा दी जाती है। अभी तक इस बारे में भारत सरकार से किसी विदेशी कंपनी को कोई शिकायत भी नहीं हुई है। पूंजी लौटाते समय इस बात का जरूर ध्यान रखा जाय कि बेइमानी से पूंजी बढ़ा-चढ़ा कर न बतायी जाय। यदि विदेशी और भारतीय कम्पनी मिलकर निर्णय करते हैं कि विदेशी पूंजी ऋण के रूप में दी जाए, तो सरकार उस पर उचित ब्याज दिलाती है। हाल में आयकर अधिनियम में जो संशोधन हुआ है उसके अनुसार अर्जी देने पर इस प्रकार के ऋण पर आयकर नहीं लिया जायगा।

यहां यह उल्लेखनीय है कि हाल में भारत सरकार ने अमेरिका सरकार से ऐसा समझौता किया है कि यदि कोई अमरीकी पूंजीपति भारत सरकार द्वारा स्वीकृत किसी उद्योग में पूंजी लगाता है तो, अमरीकी सरकार उसे गारंटी देती है कि उसे उसका लाभ और बाद में पूंजी भी डालरों में मिलेगी।

शिल्पिक सहायता

भारत सरकार को मालूम है कि विदेशियों से यहां के लोगों को बहुत शिल्पिक लाभ मिला है और इससे यहां नये नये उद्योग बढ़ेंगे। इसलिए सरकार कोलम्बो योजना आदि के मारफत यहां विदेशी विशेषज्ञों को बुलाने का प्रबन्ध करती है। भारतीय कम्पनियों को भी विदेशी विशेषज्ञ और सलाहकार को बुलाने की इजाजत खुशी से दी जाती है। वैज्ञानिक, आविष्कारों का इस्तेमाल करने और शिल्पिक

[समस्या

सलाह और विधि जानने के लिए विदेशियों को जो फीस देनी पड़ता है, उसकी सरकार बिना रोकटोक इजाजत देती है।

रायल्टी

विदेशी कम्पनियों को मिलने वाली रायल्टी दो प्रकार की मानी गयी है—एक सामान्य रायल्टी और दूसरी विदेशी साझेदार द्वारा उद्योग सहायता। दूसरे प्रकार की रायल्टी कर से मुक्त है। साधारणतः भारत सरकार ५ प्रतिशत तक रायल्टी स्वीकार करती है, पर विशेष स्थितियोंमें इससे अधिक भी स्वीकार की जा सकती है।

कर

भारत सरकार ने उद्योगों को कर सम्बन्धी अनेक रियायतें दी हैं, उनमें से मुख्य ये हैं :

(१) नए उद्योग के शुरू होने से ५ वर्ष तक, उससे होने वाले लाभ पर आय कर नहीं लगता।

(२) जिन नए उद्योगों के लाभ पर आयकर नहीं लगता, उनके हिस्सेदारों को जो लाभांश दिया जाता है, उस पर भी आयकर नहीं लगता।

(३) जो भारतीय कम्पनी ३१ मार्च १९५८ के बाद स्थापित हुई और जो सरकार द्वारा निर्धारित किसी महत्वके उद्योग में लगी हो, उससे यदि किसी कम्पनी को लाभांश मिलता है तो उस पर अधिकर (सुपर टैक्स) नहीं लगता।

(४) सभी उद्योगों में नए कारखाने की मशीनें लगाने पर पहले साल जो खर्च पड़ता है उसका २५ प्रतिशत (जहाजों के लिए ४० प्रतिशत) 'विकास छूट' दी जाती है। इस प्रकार कुछ वर्षों में मशीन का पूरा दाम निकल जाता है और साथ ही मूल्य के २५ प्रतिशत पर कर से छूट भी मिल जाती है।

(५) उद्योग से सम्बन्धित वैज्ञानिक, आंकिक या सामाजिक अनुसन्धान में जो खर्च होता है, उसे कर में से एक दम काटा जा सकता है, या पांच वर्ष तक बाद में दे दिया जाता है।,

(६) कोई भारतीय कम्पनी अपनी किसी सहायक कम्पनी से जो लाभांश पाती है, उस पर रियायती दर पर अधिक कर लगता है।

(७) नयी औद्योगिक कम्पनी पर पांच साल तक सम्पत्ति कर नहीं लगता।

(८) नयी औद्योगिक कम्पनियों के हिस्सेदारों की उस हिस्सा पूंजी पर पांच साल तक सम्पत्ति-कर नहीं लगता।

(९) कम्पनियों की जो पूंजी अन्य कम्पनियों में लगी है। उसे सम्पत्ति-कर लगाने के बाद दे दिया जाता है।

यहां यह उल्लेखनीय है कि ये रियायतें भारतीब और भारत में पूंजी लगाने वाले विदेशी दोनों ही प्रकार के उद्योगपपतियों को मिलती हैं। इसके अलावा विदेशियों को ये रियायतें भी मिलती हैं :

(शेष पृष्ठ ५१२ पर)

भारत में विदेशी पूंजी

१. गैर-सरकारी सूत्रों के अनुसार इस समय भारतीय उद्योगों में ६ अरब ५० करोड़ रु० की विदेशी पूंजी लगी है। १९५५ की अपेक्षा यह राशि १ अरब ७० करोड़ रु० से अधिक है।

२. सन् १९१४ में भारत में लगभग ४ अरब ५० करोड़ रु० की पूंजी लगी थी।

३. रिजर्व बैंक की एक जांच के अनुसार जून १९४८ में भारतीय उद्योगों में २ अरब ८८ करोड़ रु० की विदेशी पूंजी लगी थी। इसमें सरकारी क्षेत्रों की विदेशी देनदारी शामिल नहीं है।

४. दिसम्बर १९५५ में विभिन्न उद्योगों में विदेशी पूंजी का ब्यौरा इस प्रकार है :—विभिन्न किस्म का माल बनाने वाले उद्योगों में १ अरब ६३ करोड़ ३० लाख रु०, व्यापार में १ अरब २ करोड़ ३० लाख रु०, परिवहन आदि में ५३ करोड़ १० लाख रु०, खनन में ९ करोड़ ६० लाख रु०, बैंक उद्योग में २० करोड़ २० लाख रु०, अन्य वित्तीय कारबारों में १९ करोड़ १० लाख रु०, चाय-बागान में ८७ करोड़ २० लाख रु० और अन्य व्यवसायों में २५ करोड़ ९० लाख रु०।

उद्योग की सर्वांगीण उन्नति

श्री लालबहादुर शास्त्री

देश में नये तथा पुराने सभी उद्योग बढ़ाये जा रहे हैं और इसके बढ़ने की रफ्तार बहुत तेज है। इसका अन्दाज हम इसी से लगा सकते हैं कि कुछ समय पहले जहां देश में सीमेंट, लोहे और चीनी आदि की कमी पड़ जाती थी, वहां अब यह देश में काफी मात्रा में तैयार की जाने लगी है। केवल दो साल पहले हमें इन वस्तुओं के लिए अन्य देशों का मुंह ताकना पड़ता था और अब हम ऐसी स्थिति में हैं कि देश में खपत के अलावा इनका निर्यात भी कर सकते हैं।

दो तीन साल के भीतर देश में नई-नई वस्तुएं, जैसे— विभिन्न प्रकार के यंत्र, टाइपराइटर, पाइप और ट्यूब, पैनीसिलीन, डी० टी० टी०, कई प्रकार की दवाएं तथा अन्य कई वस्तुएं तैयार की जाने लगी हैं।

विदेशी मुद्रा

यह ठीक है कि हमने काफी उन्नति कर ली है, परन्तु अभी और आगे बढ़ने में हमारे लिए विदेशी-मुद्रा की कठिनाई सबसे बड़ी रुकावट हो रही है। अनेक योजनाओं के लिए हमें काफी संख्या में मशीनें तथा अन्य सामान विदेशों से मंगाना पड़ेगा। कुछ देशों ने हमें इनकी खरीद में काफी मदद की है। फिर भी हमें काफी विदेशी मुद्रा खर्च करनी पड़ती है। हमें यह खर्च कम करने का भरसक प्रयत्न करना चाहिए। सरकार इसके लिए प्रयत्नशील है। इस कठिनाई को दूर करने के लिए हमें निर्यात बढ़ाना चाहिए, जिससे हम अधिक विदेशी मुद्रा प्राप्त कर सकें। उत्पादन बढ़ाना चाहिए और और देश की आर्थिक स्थिति को सुव्यवस्थित करनी चाहिए। विदेशी-मुद्रा की कठिनाई शुरू होने के समय से हमने आयात पर काफी नियंत्रण रखा है, परन्तु इसके माने यह नहीं हैं कि इससे हमारी उन्नति रुक गई है।

विदेशों से हमें जो सहायता मिली है, उससे सरकारी तथा गैर सरकारी क्षेत्रों की छोटी और बड़ी सभी योजनाएं उन्नति करती जा रही हैं। हम तो चाहते हैं कि उद्योगों को और भी बढ़ाएं तथा उनका विकास करें, किन्तु इसमें विदेशी-मुद्रा की कमी बहुत बाधक है।

उद्योग व्यापार मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री

तथापि वृद्धि

इन सब दिक्कतों के बावजूद उद्योगों का उत्पादन अब तक घटा नहीं, बल्कि उसमें वृद्धि ही हुई हैं। किन्तु अब धीरे-धीरे इन उद्योगों, विशेषकर इन्जीनियरी उद्योगों के लिए कच्चे माल की कमी अनुभव की जाने लगी है। कोलम्बो योजना के अंतर्गत हमें कनाडा से अलौह धातु अधिक मिलने लगी है। किन्तु पहले की अपेक्षा अब इसकी मांग भी बहुत बढ़ गई है। इस्पात, विशेष इस्पात और अलौह धातु की कमी ने हमारे सामने बहुत बड़ी समस्या खड़ी कर दी है। अन्य कई उद्योगों को भी कच्चा माल कम मिल रहा है। इस कमी को दूर करना बहुत जरूरी है।

कच्चे माल का आयात

वर्तमान विदेशी-मुद्रा की कठिनाई और कच्चे माल की

कमी से वाणिज्य तथा उद्योग मंत्रालय की विकास शाखा का उत्तरदायित्व काफी बढ़ गया है। जो कुछ भी विदेशी-मुद्रा देश को प्राप्त है, उसे हमें विभिन्न उद्योगों को नियत मात्रा में देना है। मात्रा नियत करते समय हमें इस बात को ध्यान में रखना है कि किस उद्योग को प्राथमिकता दी जाय या कौन-सा उद्योग अधिक महत्वपूर्ण है। इसके लिए हरेक उद्योग की मांग की अच्छी तरह जांच करनी पड़ेगी।

नये उद्योगों के लिए विदेशों से शिल्पिक तथा आर्थिक सहायता ली जाती है। यह काम मंत्रालय की विकास शाखा की लाइसेंस समिति और पूंजीगत-वस्तु-समिति करती है। इन समितियों को अपना काम काफी सावधानी से करना पड़ता है, इसलिए कभी-कभी काम में देर भी हो जाती है। नये उद्योग खोलने, और पुराने उद्योग बढ़ाने के लिए हर महीने लगभग ढाई, तीन सौ आवेदन-पत्र आते हैं। इस समय शाखा में केवल ४४७ आवेदन-पत्र विचाराधीन हैं, बाकी सब पर कार्रवाई की जा चुकी है।

विदेशों से समझौते

विदेशों से शिल्पिक विशेषज्ञ बुलाने के लिए अनेक समझौते किये जा चुके हैं और इस समय १३४ समझौतों के लिए बातचीत चल रही है। इन समझौतों के लिए हम विदेशी करार समिति नियुक्त करने के बारे में विचार कर रहे हैं। यह समिति विदेशों से शिल्पिक विशेषज्ञ बुलाने के बारे में उचित कारवाई करेगी और इस प्रकार समझौता करने में देर कम लगेगी।

निर्यात को बढ़ावा

पिछले कुछ महीनों में सरकार ने निर्यात बढ़ाने पर काफी जोर दिया है। वस्तुतः विदेशी-मुद्रा का संकट तभी दूर हो सकता है जब हम स्वयं अपने पैरों पर खड़े हों और अपनी शक्ति का अधिक से अधिक उपयोग करें। निर्यात बढ़ाने से विदेशी मुद्रा का ही नहीं और भी बहुत से लाभ होते हैं। निर्यात को बढ़ावा देने से उत्पादन में वृद्धि होने लगती है। विदेशी बाजार में अपने माल की खपत बढ़ाने के लिये माल भी अच्छे किस्म का बनने लगता है। इन दो कारणों से उद्योगों के अन्दर एक जागरूकता आती है, जो उनको उन्नति में सहायक होती होती हैं।

जरूरत इस बात की है कि हर उद्योग के लिए निर्यात की एक योजना बना ली जाय और निश्चित अवधि के भीतर उसका लक्ष्य पूरा कर लिया जाय। सम्भवतः शीघ्र ही दिल्ली में प्रमुख उद्योगों के प्रतिनिधियों को बुलाया जायगा, जिससे वे विदेशी-व्यापार के महानिर्देशक और मंत्रालय से इस विषय में विचार-विमर्श कर सकें। इससे हम उनकी कठिनाइयों को समझ सकेंगे और निर्यात बढ़ाने के लिए हर उद्योग की उन्नति के लिए कदम भी उठाये जा सकेंगे।

हमें निर्यात बढ़ाने वाले उद्योगों को प्राथमिकता देते समय उन शाखाओं पर विशेष ध्यान देना चाहिए, जिनका निर्यात अधिक होता है। इसी तरह हमें उस निर्माता को विदेशी मुद्रा की अधिक सुविधा देनी चाहिए, जो निर्यात की वस्तु बनाता हो, बनिस्बत उसके जो यह नहीं कर पाता। यह भी कहा जाता है कि हम घर में ही अपनी मांग पूरी नहीं कर पाते विदेशों को कैसे भेजें ? यह ठीक भी हो सकता है, किन्तु क्या आज की इस परिस्थिति में हमें इस तरह सोचना चाहिये ?

युद्ध के बाद जापान और ब्रिटेन में यही स्थिति आई थी। उन्होंने अपने यहाँ घरेलू मांग की चीजों पर नियंत्रण लगा दिया। लोग लाइन लगाकर खड़े रहने लगे। किन्तु विदेशों को भरपूर माल भेजने की हर सम्भव कोशिश की गई। इससे वे अपना पुनर्निर्माण कर पाये। इसी तरह हम भी आज की स्थिति में अपने उपभोग से अतिरिक्त उत्पादन के निर्यात पर भी निर्भर नहीं रह सकते।

देशी कच्चे माल का अधिक उपयोग

भारतीय उद्योग को भी सदा यह प्रयत्न करना चाहिए कि वह देशी कच्चे माल का अपने कारखानों में अधिक से अधिक उपयोग करे। हो सकता है कि यह कच्चा माल कुछ घटिया होने के कारण उत्पादन पर कुप्रभाव डाले, किन्तु उत्पादन की वृद्धि के लिये तो यह जरूरी है ही।

निर्यात के लिए एक बात और भी आवश्यक है। किसी सामान के निर्यात के कोटे की घोषणा के बाद अथवा किसी कर आदि के उठा लिये जाने के बाद जब उसकी कीमतें देशी बाजारों में बढ़ने लगती हैं तो बड़ा दुख होता

है। इसे अकेले सरकार ही नहीं रोक सकती। इसका एक उपाय यह भी हो सकता है कि हर उद्योग से सम्बन्धित लोगों को चाहे वे उद्योगपति हों, चाहे थोक विक्रेता या फुटकर विक्रेता, अपना नैतिक स्तर उच्च बनाये रखना चाहिए। दिल्ली, हापुड़ और मुजफ्फरनगर के गुड़ विक्रेताओं ने इस दिशा में प्रशंसनीय कार्य किया है।

कच्चे माल को प्राथमिकता

विदेशी-मुद्रा की कठिनाइयों के कारण कुछ उद्योगों को चला पाना आज कठिन हो गया है। उसमें से कुछ को कच्चे माल दिये जा रहे हैं, जिससे वे अपना उत्पादन कम से कम १९५६ के बराबर कर सकें। बहुत सी कठिनाइयां सामने हैं, अतः अभी से आयात की मात्रा का निर्णय कर पाना कठिन है। फिर भी उद्योगों में काम आने वाले कच्चे माल को यथासमय प्राथमिकता दी ही जाएगी। उत्पादन की मात्रा न घटने देने के लिए हम सब कुछ करेंगे। मुझे विश्वास है, हमारी यह कठिनाइयां ज्यादा दिन तक नहीं रहेंगी।

मशीनों का अधिकतम निर्माण

मशीन बनाने की बहुत-सी योजनाएं हमने चालू कर रखी हैं जिनकी, प्रगति प्रशंसनीय है। आज सूती और चाय-उद्योगों के लिए यहीं मशीनें बन रही हैं और शीघ्र ही चीनी, चाय, जूट और सीमेंट उद्योगों को भी हम बहुत-सी मशीनें दे सकेंगे। हमारे यहां मशीनों के कल-पुर्जों का उत्पादन भी बढ़ रहा है।

निजी क्षेत्र में भी बौयलर, डीजल इन्जन, मोटर, ट्रांसफार्मर, क्रेन आदि दूसरी मशीनों के उत्पादन में वृद्धि हो रही है। सरकारी क्षेत्र की कुछ योजनाओं के समाप्त होते ही नये कारखानों को बनाने में विदेशी मुद्रा का खर्च निश्चित ही कम हो जाएगा।

और भी बहुत तरह की मशीनें बनाये जाने की सम्भावनाएं हैं। जैसे कागज बनाने की मशीनें, रासायनिक पदार्थ बनाने की मशीनें, वस्त्र-उद्योग में काम आने वाली मशीनें और विभिन्न प्रकार के कल-पुर्जे आदि।

लघु-उद्योग

बड़े उद्योगों की तरह लघु-उद्योगों की उन्नति को भी तरजीह देना चाहिए। इन उद्योगों और घरेलू-उद्योगों की उन्नति के लिए एक विशेष तरीका अपनाना चाहिए, जिससे सभी का उत्पादन बढ़ सके। हमें दूसरों का अंधानुकरण भी नहीं करना है, क्योंकि हमारी अपनी अलग समस्याएं हैं। हमें अपनी बढ़ती हुई जनसंख्या और रोजगार की हालत को भी ध्यान में रखना है। बेरोजगारी की समस्या तभी हल हो सकती है, जबकि छोटे उद्योगों और घरेलू उद्योगों का यथेष्ट विकास किया जाए। छोटे शहरों और गांवों की आर्थिक स्थिति सुधारने का केवल मात्र यही उपाय है। इसके लिए हमें आर्थिक दृष्टि से सोचना और विचारना होगा।

दस वर्षों में—

उद्योग-विकास पर एक दृष्टि

देश भर के २८ प्रमुख उद्योगों के रजिस्ट्रीदार कारखानों के उत्पादन में १९४६ से १९५५ तक के दस वर्षों में दो-गुनी से भी अधिक वृद्धि हुई है।

'भारतीय उत्पादन के दस वर्ष' नाम के प्रकाशित नये विवरण से उद्योगों की प्रगति पर प्रकाश डाला गया है। इसके अनुसार १९५५ में देश में १४ अरब ११ करोड़ रु० का माल बनाया गया, जबकि १९४६ में कुल ६ अरब १ करोड़ रु० का बनाया गया था। इस अवधि में उद्योगों में लगी पूंजी में भी वृद्धि हुई है। १९४६ में ३ अरब ६७ करोड़ रु० की पूंजी लगी थी, जो बढ़कर १९५५ में ८ अरब ६ करोड़ हो गयी थी। इसमें कारखानों की इमारतें, मशीनें आदि स्थिर और कच्चा, तैयार तथा अधतैयार माल जैसी कार्यकारी पूंजी भी शामिल है।

उक्त अवधि में रजिस्टर्ड कारखानों की संख्या ... प्रतिशत बढ़ी। १९४६ में यह ५०१३ थी, जो ...

[शेष पृष्ठ ५१० पर]

उद्योग की नई समस्याएं : मांग में कमी और उत्पादन-क्षमता के गलत अनुमान

मांग में भारी कमी

आज देश के उद्योग के सामने जो विकट समस्याएं आ रही हैं, उनमें से प्रमुखतम समस्या यह है कि वस्तुओं की मांग उस अनुपात में नहीं बढ़ रही, जिस अनुपात में हमने अपने ऊंचे लक्ष्य निर्धारित किये हैं। देश में आज लोहे की भारी कमी है, इसलिए यह सम्भव है कि लोहे के कारखाने अपना उत्पादन लगातार बढ़ाते जाएं, उन्हें मांग की कमी का खतरा महसूस न हो; किन्तु सब उद्योगों के लिए यह बात नहीं कही जा सकती। सूती मिलों की उत्पादन क्षमता में कोई कमी नहीं हुई है, वे अपना उत्पादन पहिले से भी अधिक बढ़ा सकती हैं, किन्तु देश और विदेश के बाजारों में कपड़े की मांग कम होती जा रही है, मिलों के गोदाम भरते जा रहे हैं। इसका परिणाम न केवल यह हो रहा है कि सूती मिलें अपना उत्पादन कम करें या बन्द हों, बल्कि यह भी हो रहा है कि जो उद्योग इन मिलों पर जीवित रहते थे—सूती मिलों की मशीनरी, स्टार्च, रंग, ब्लीचिंग पाउडर, मिलों में काम आने वाले छोटे-मोटे पुर्जे आदि, वे भी संकट को सामने देख रहे हैं, क्योंकि सूती मिलों ने अपने भिन्न-भिन्न सामान के आर्डर में कमी कर दी है। यह एक आश्चर्य की बात है कि मुद्रा-प्रसार की व्यवस्था के कारण देश में क्रय-शक्ति का जो विस्तार होना चाहिये था, वह दीख नहीं रहा है। और विभिन्न उद्योगों की मांग न केवल बढ़नी बन्द हो गई है, बल्कि घटती भी जा रही है। यदि इन उद्योगों के पास नियोजन के लिये अधिक पूंजी भी होती तो भी बाजार की वर्तमान अवस्था में जब कि मांग लगातार कम होती जा रही है, नई पूंजी न लगाई जाती। मुद्रा प्रसार हमारी क्रय-शक्ति को बहुत बढ़ा नहीं रहा, यह अपने आप में एक पहेली है।

उत्पादन में कमी

निजी क्षेत्र में मशीनरी का उद्योग भी बढ़ने के बजाय ह्रासोन्मुख हो रहा है। योजना में निर्धारित लक्ष्यों की अपेक्षा उत्पादन कम करने की प्रवृत्ति, जो विवशता का प्रमाण है, प्रत्यक्ष होने लगी है। रासायनिक पदार्थ तथा तत्सम्बंधी उद्योग अपनी उत्पादन-क्षमता को कम दिखाने का प्रयत्न कर रहे हैं, क्योंकि इनका प्रयोग करने वाले कारखाने अपनी मांग कम करते जा रहे हैं। सुपर-फास्फेट जिसकी उत्पादन क्षमता १ लाख २० हजार टन है। अपना उत्पादन ३३ प्र० श० कम कर सकती है। सल्फुरिक एसिड का उत्पादन ५ लाख से ४$\frac{1}{4}$ लाख टन कर दिया जायगा। कास्टिक सोडा की उत्पादन क्षमता १ लाख ५० हजार टन है किन्तु इसे भी २६ हजार टन घटाया जा रहा है। सीमेंट का उत्पादन लक्ष्य भी कम हो रहा है। रंग का उत्पादन भी २ करोड़ ७० लाख टन से १ करोड़ २० लाख टन किया जा रहा है। पैट्रोलियम सोडैश आदि के उत्पादन लक्ष्यों को भी कम किया जा रहा है; किन्तु ऐसे रासायनिक उद्योग बहुत कम हैं।

इंजिनियरिंग के उद्योग भी कुछ अपवादों को छोड़कर अपना उत्पादन कम कर रहे हैं। बाइसिकल, चीनी बनाने की मशीनें, रेलवे वैगन आदि ऐसे ही अपवाद हैं, जिनका उत्पादन बढ़ाया जा रहा है। मोटर उद्योग की ओर से यह आशा की जाती है वह ऐसी मोटरों का उत्पादन बढ़ाएगा, जिसमें ४० प्रतिशत सामग्री अपने देश की हो, परन्तु यह आशा पूर्ण हो जायगी, इसमें सन्देह है। सूती मिलों की मशीनरी का लक्ष्य १७ करोड़ रुपये से काफ़ी घटाकर १०

आप देश के नागरिक हैं!

आप देश के नागरिक हैं और देश के विकास में आपको अपना सहयोग देना है। क्या आप निश्चय करते हैं कि—

आप अपने जीवन में यथाशक्ति मितव्यय करेंगे, अनावश्यक और कम आवश्यक वस्तुओं को नहीं खरीदेंगे ?

आपकी बचत का एक पैसा, यदि वह बैंक, डाकखाने या बीमा कम्पनी में रखा जाता है, देश के उद्योग-विकास में काम आता है।

करोड़ रुपये किया जा रहा है। जूट मशीनरी का उत्पादन ढाई करोड़ तक बढ़ जाएगा, यह आशा बांधी जा रही थी, किन्तु अब एक करोड़ रुपये से अधिक की सम्भावना नहीं है। सीमेंट-मशीनरी का उत्पादन की २ करोड़ रुपये से घटकर ७५ लाख रुपये पर आ रहा है। कागज की मशीनरी का लक्ष्य इस योजना में ४ करोड़ रुपये नियत किया गया था किन्तु अब इस योजना में इस उद्योग की वृद्धि का विचार ही छोड़ दिया गया है।

बिजली की इंजिनियरिंग-सम्बन्धी उद्योगों का उत्पादन अवश्य बढ़ाया जा रहा है; यद्यपि कुछ अपवाद इसमें भी हैं।

इन उपर्युक्त अंकों से एक बात स्पष्ट है कि योजना आयोग ने उत्पादनों के जो लक्ष्य पहिले नियत किये थे, वे बहुत आशावादी दृष्टिकोण से नियत किये गये थे, वास्तविकता की उनमें कुछ उपेक्षा कर दी गयी थी। विदेशी मुद्रा की कठिनता की कल्पना पूरे रूप में नहीं की गई थी और न ही यह सोचा गया था कि देश और विदेशों में मांग कम होने लगेगी।

उत्पादन-क्षमता के लिए अनुमान

यहां यह बता देना भी अप्रासंगिक न होगा कि योजना आयोग ने विभिन्न वस्तुओं के उत्पादन के सम्बंध में जो अनुमान लगाये हैं, वे प्रायः उत्पादन क्षमता के आधार पर लगाये हैं, किन्तु उत्पादन-क्षमता और उत्पादन का पारस्परिक अनुपात हमें सत्य से बहुत अधिक दूर ले जाता है, नीचे दी गई तालिका से यह स्पष्ट हो जाता है।

इस तालिका से यह स्पष्ट है कि एक उद्योग सीमेंट के सिवाय उत्पादन क्षमता और उत्पादन में परस्पर बहुत अन्तर रहा है। सोडा ऐश में यदि ४०% उत्पादन कम हुआ है तो सीने की मशीनों में १००% अधिक उत्पादन हुआ है। १९५२ में सीने की मशीनें उत्पादन-क्षमता से २०% अधिक तैयार हुई और डीज़ल इंजन ३३% कम। कास्टिक सोडा उत्पादन क्षमता से ५०% कम हुआ। १९५५ में स्थिति बदल गई। कास्टिक सोडा के उत्पादन का अनुपात पहिले से बढ़ गया। सीने की मशीनें उत्पादन क्षमता से करीब ढाई गुना बढ़ गई और १९५७ में करीब दुगनी हुई। इससे यह स्पष्ट है कि उत्पादन के आधार पर उत्पादन का ठीक अनुमान नहीं किया जा सकता। एक और उदाहरण लीजिये—योजना आयोग के अनुसार वस्त्र निर्माण मशीनरी के उद्योग की क्षमता साढ़े-सात करोड़ रुपये है और १९६१ तक यह दस करोड़ रुपया हो जाएगी। विभिन्न मशीनों के उत्पादन की क्षमता ९ करोड़ रुपये है और यदि प्रयत्न किया जाय तो दस करोड़ रुपये

प्रमुख उद्योगों की उत्पादन-क्षमता और उत्पादन

उद्योग	१९५२ उत्पादन-क्षमता	१९५२ उत्पादन	१९५५ उत्पादन-क्षमता	१९५५ उत्पादन	१९५७ उत्पादन-क्षमता	१९५७ उत्पादन
चीनी (हजार टनों में)	अप्राप्य	१,४९४	१,३५७	१,५९५	१३५७.२	२,०३८.८
कास्टिक सोडा (हजार टनों में)	३६.९९	१७.०६	४२	३४	४५.४	४२.४८
सीमेंट (लाख टनों में)	३७.०९	३५.०४	४४	४४	६२	५५.०२
एल्यूमूनियम (टनों में)	३९९९.६	३,५६६.४	७,५००	७,२२५	७५००	७,७७१.२
डीज़ल एन्जिन (संख्या में)	६२२४	४२४८	१६,२७०	१०,०४९	२२,१००	१६,५१२
साइकिलें (हजारों में)	१२०	१९६.९	४९२	४९१	७००.८	८०१
रिफ्रेक्ट्रीज़ (हज़ार टनों में)	२९०.४	२४३.६	३३०	२७२	४७२.८	३६२.४
कच्चा लोहा (हज़ार टनों में)	अप्राप्य	१,६८४.८	२,२२१	१,७५४	२,२२१.२	१,७८९.२
बिजली के ट्रान्स फारमर (हजार K. V. A.)	३०३.६	२१४.८	३७८	५६५	९३३.६	१,२१९.२
सीने की मशीनें	४१,४९६	५०,०४०	४१,५००	१०१,४७०	०१४८०	१६६,६२०

क्या द्वितीय योजना सफल हो रही है ?

श्री रामगोपाल विद्यालंकार

आज, जब कि सरकारी प्रकाशन, रेडियो, मंत्री व सरकारी अधिकारी योजना की सफलता के गीत गा रहे हैं, तब यह दूसरा पक्ष और भी अधिक विचारणीय और चिन्तनीय हो जाता है ।

प्रथम पंचवर्षीय योजना के सम्बन्ध में सरकार को शिकायत रही थी कि उसका प्रचार पर्याप्त नहीं हुआ था, इसलिए द्वितीय योजना में केवल प्रचार के लिए १३ करोड़ रु० की विपुल राशि रक्खी गयी— ६ करोड़ रु० केन्द्रीय सरकार द्वारा और ७ करोड़ रु० राज्य सरकारों द्वारा व्यय करने के लिए । इस धन-राशि का उपयोग पत्र-पत्रिकाओं, पुस्तक-पुस्तिकाओं, भाषणों, फिल्मों, चलती-फिरती गाड़ियों, रेडियो-वार्ताओं, नाटकों और गीतों आदि उपायों द्वारा योजना की महत्ता, उपयोगिता और सफलता का प्रचार करने के लिए किया जा रहा है । इस भारी प्रचार के कारण लोग समझते हैं कि योजना खूब सफल हो रही है, परन्तु क्या यह सचमुच सफल हो रही है ?

सरकारी कागज़ों में वह भले ही सफल हो रही हो, जनता के जीवन में सफल नहीं हो रही । जन-साधारण में प्रत्येक औसत व्यक्ति को शिकायत है कि जीवन निरन्तर महंगा होता जा रहा है और अन्न वस्त्र आदि नित्य काम आने वाले पदार्थ दुर्लभ से दुर्लभतर होते जा रहे हैं। योजना के सरकारी वकीलों द्वारा इस शिकायत का उत्तर आंकड़ों के तीरों की बौछार करके दिया जाता है । और आंकड़े भी बहुधा, अमरीकनों के अनुकरण में, रुपयों के दिये जाते हैं कि अमुक कार्य पर इतने करोड़ रु० व्यय किये गये और अमुक पर इतने । इस प्रकार रुपयों की चका-चौंध में यह स्पष्ट दिखाई नहीं देता कि अन्न वस्त्र आदि उपभोज्य वस्तुओं के उत्पादन अथवा उपलब्धि में कितनी वृद्धि हुई।

वस्तुतः योजना की सफलता असफलता को प्रकट करने के लिए, उसके विभिन्न कार्यों पर व्यय किये गये या किये जाने वाले रुपयों की राशि का बखान न करके, उनसे प्राप्त फलों का विवरण देना चाहिए; और इस कसौटी पर कसने से द्वितीय योजना की असफलताएं जितनी सामने आती हैं, उतनी सफलताएं नहीं आती ।

अन्न-उत्पादन में असफलता

सबसे पहले अन्न को ले लीजिए ! द्वितीय योजना में अन्न की उपज बढ़ाने का लक्ष्य १०० लाख टन रक्खा गया था, अर्थात् १९५६ की समस्त उपज ६५० लाख टन मानकर १९६१ तक उसे ७५० लाख टन कर देने का निश्चय किया गया था। यह लक्ष्य द्वितीय योजना तैयार करते समय १९५४ में निर्धारित किया गया था । पीछे १९५६ में सब खाद्य-मंत्रियों ने मसूरी में एकत्र होकर निश्चय किया कि अन्न-उत्पादन में वृद्धि का लक्ष्य १०० लाख टन कम है, उसे बढ़ाकर १६५ लाख टन कर दिया जाय ।

परन्तु इस प्रकार लक्ष्य ऊंचा उभार देने मात्र से उसकी पूर्ति नहीं हो जाती । स्वयं योजना-आयोग की रिपोर्ट के अनुसार द्वितीय योजना के प्रथम दो वर्षों में पंजाब, उत्तर-प्रदेश और राजस्थान आदि अन्न-बहुल राज्यों का उत्पादन

का सामान भी उत्पन्न किया जा सकता है । अभी वस्त्रोद्योग के संकट के कारण इन कारखानों को पूरे आर्डर नहीं मिल रहे हैं । आज इस उद्योग में नई पूंजी लगाने की आवश्यकता नहीं; आवश्यकता है तो केवल यह है कि मशीनरी तैयार करने वाले कारखानों को सूती मिलों की ओर से मशीनों के आर्डर दिये जायं । आज तो ये कारखाने अपनी उत्पादन क्षमता का दो तिहाई भाग ही उपयोग में लाते हैं । आज इन उद्योगों में नई पूंजी लगाने की उतनी आवश्यकता नहीं है, जितनी वस्तुतः उद्योगों की मांग बढ़ाने की आवश्यकता है । (ई० इ०)

—

निर्धारित लक्ष्य से कहीं पीछे रह गया। निम्न तालिका को ध्यान से देखिए।

राज्य	वृद्धि का लक्ष्य (लाख टन)	वर्ष	अतिरिक्त उत्पादन (लाख टन)
पंजाब	१४.४०	५६-५८	२.८४
उत्तरप्रदेश	२४.००	५६-५८	५.३५
राजस्थान	८.०७	५६-५८	१.२७
मध्यप्रदेश	१४.६१	५६-५८	२.३०
कश्मीर	२.०६	५६-५८	०.२७

यह दशा तो हुई अन्न के उत्पादन की। अब उत्पादन में कमी रह जाने के कारण हुए दुष्परिणाम की बात सुनिए। १९४९-५० में जब हमें भारी मात्रा में अन्न विदेशों से मंगाना पड़ा था, तब उसका परिमाण लगभग ४०० लाख टन तक पहुँचा था। १९५२ में फसलें अच्छी हो जाने पर प्रधान मंत्री श्री नेहरू ने बड़ी दृढ़ता से घोषणा की थी कि अब अनाज की मंजिल हमने फतह कर ली है, हमने फैसला कर लिया है कि अब हम विदेशों से अनाज मंगाने पर एक पाई भी खर्च नहीं करेंगे। परन्तु अब केन्द्रीय खाद्य-मंत्री श्री अजितप्रसाद जैन बार-बार अभिमानपूर्वक घोषणा कर रहे हैं कि हमारा १२० लाख टन अनाज अमरीका से भारत पहुँच चुका है, ८० लाख टन जल्दी ही यहां पहुँचने वाला है, हम इस पर १२५ करोड़ रु० से ऊपर रकम खर्च कर रहे हैं, और आवश्यकता हुई तो हम और भी अन्न मंगाने को तैयार रहेंगे, परन्तु देश में अन्न की कमी किसी भी प्रकार नहीं पड़ने देंगे।

अन्न के आयात के इन आंकड़ों से स्पष्ट है कि हम अन्न-उत्पादन की वृद्धि का लक्ष्य पूरा करने की दिशा में तो अग्रसर हो ही नहीं रहे, उलटे हमारी दशा १९५० के समान परावलम्बिता की होती जा रही है।

वस्त्र-व्यवसाय का ह्रास

अन्न के पश्चात् उपयोगिता की दृष्टि से दूसरा स्थान वस्त्र का है। इसके व्यवसाय का गत दो वर्षों में ह्रास हुआ है, इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि केवल दो मास हुए कि सरकार को एक वस्त्र-व्यवसाय-जाँच-समिति नियुक्त करनी पड़ी थी। उसने जो सुझाव दिये हैं, वे ये पंक्तियां लिखी जाने के समय सरकार के विचाराधीन थे। हमारे प्रस्तुत विचार के लिए उक्त समिति के प्रतिवेदन की केवल दो तीन बातों की चर्चा कर देना पर्याप्त होगा।

समिति ने माना है कि वस्त्र के उत्पादन और बिक्री दोनों में कमी हो गयी है। कई कपड़ा-मिलें बन्द हो गयी हैं, कइयों की अवस्था खराब होने का एक कारण यह है कि वे अपनी घिसी-पिटी मशीनें और उनके पुर्जे बदलने में समर्थ नहीं हैं, हाथ-करघों को सहारा लगाने के लिए मिलों में कई प्रकार का वस्त्र बनाना बन्द कर देने की सरकारी नीति सफल नहीं हुई, मिलों को जनता की रुचि का वस्त्र बनाने देना चाहिए और हाथ-करघों द्वारा कई प्रकार का कपड़ा बनाना कम कर देना चाहिए, इत्यादि।

कपड़ा-मिलों के उत्पादन के सम्बन्ध में निम्न आंकड़े विचारणीय हैं।

	वस्त्र का परिमाण लाख गजों में		सूत का परिमाण लाख पौंड	
	जन०	फर०	जन०	फर०
१९५७	४८४०	४३५०	१५६०	[illegible]
१९५८	४३३०	३९२०	१४७०	[illegible]

इन आंकड़ों में विशेष द्रष्टव्य बात यह है कि १९५८ में जनवरी के पश्चात् अगले ही मास वस्त्र और सूत दोनों का उत्पादन एकदम बहुत गिर गया। इस वर्ष के पूर्वार्द्ध में मिलों के पास एकत्रित वस्त्र का स्टाक घटाने के लिए सरकार को दो बार उत्पादन-कर में हेर-फेर करना पड़ा। वस्त्र का स्टाक मिलों के पास ही नहीं, अ० भा० वस्त्र तथा ग्रामोद्योग-संघ के पास भी बहुत जमा हो गया था। उसे खपाने के लिए भी इस वर्ष सरकार अब तक दो बार मूल्य में दो आना रुपये की छूट दे चुकी है। यह छूट साधारणतया दी जाने वाली तीन आना रुपया छूट से अतिरिक्त थी।

अन्य औद्योगिक पदार्थों का उत्पादन

अन्न और वस्त्र के अतिरिक्त सीने की मशीनों, बाइसिकलों, बिजली की मोटरों आदि अन्य औद्योगिक पदार्थों के उत्पादन में यद्यपि कमी नहीं आयी, परन्तु उनकी भी बिक्री कम हो गयी है विशेषतः विदेशों में। इनकी

[सम्मेलन

आज देश राशन और कन्ट्रोल की भयजनक पद्धति की ओर द्रुतगति से भागा जा रहा है। चावल, गेहूं, चना आदि की बिक्री और यातायात पर तरह-तरह के प्रतिबन्ध लग रहे हैं। आटे की मिलें खुले बाजार से गेहूं नहीं ले सकतीं। चीनी के अधिकतम मूल्य निर्धारित कर दिये हैं, जिन पर सरकार किसी समय स्टाक खरीद सकती है। सरकार को स्थान स्थान पर सस्ते अन्न की दुकानें खोलनी पड़ रही हैं, फिर भी अन्न के मूल्य बढ़ते जा रहे हैं।

कारण स्वभावतः योजना के लिए पूंजी एकत्र करने की सरकार की चिन्ता बढ़ गयी।

१९५६-५७ की प्रथम दो तिमाहियों में भारत से निर्यात किये हुए माल का मूल्य २८८ करोड़ रु० रहा था। इसकी तुलना में, ५७-५८ की इन्हीं दो तिमाहियों में हुए निर्यात का मूल्य घटकर २६७ करोड़ रु० रह गया। निर्यात के मूल्य में कमी हो जाने के कारण हमारे देश का वैदेशिक व्यापार का सन्तुलन प्रतिकूल से प्रतिकूलतर होता जा रहा है। १९५६-५७ के सारे वर्ष में हमारा प्रतिकूल व्यापार-सन्तुलन २६३ करोड़ रु० तक रहा था, परन्तु १९५७-५८ के पूर्वार्ध में ही वह २६८ करोड़ रु० की सीमा लांघ चुका है।

सरकार निर्यात बढ़ाने का प्रयत्न कर रही है, परन्तु अन्तर्राष्ट्रीय बाजार की अनेक प्रतिकूल परिस्थितियों के अतिरिक्त, अन्न का आयात बड़ी मात्रा में करने के कारण, हमारे व्यापार-सन्तुलन में शीघ्र सुधार हो सकने के कोई लक्षण नहीं हैं।

विदेशों की देनदारी

दो वर्ष पूर्व हमारी सरकार को बड़ी चिन्ता यह थी कि द्वितीय योजना के जो काम पूरे करने के लिए विदेशी मुद्रा की आवश्यकता रहेगी वे उसके अभाव में पूरे कैसे किये जायंगे। अब उस चिन्ता का रूप बदल गया है। हमारी सरकार को अमरीका, रूस, पश्चिमी जर्मनी और जापान आदि अनेक देशों से नकद पूंजी और बड़े यन्त्रादि बड़ी मात्रा में उधार मिल गये हैं। इस लिए अब विदेशी मुद्रा मिलने की चिन्ता उतनी नहीं रही है। अब चिन्ता यह हो गयी है कि यदि विदेशों से पूंजी और यन्त्रादि उधार लेकर भी हम अपने देश की आन्तरिक अर्थ-व्यवस्था को सुधारने में सफल न हुए तो हम विदेशों का भारी ऋण चुकायेंगे कहां से !

इस चिन्ता से मुक्त होने का उपाय यदि अभी से न किया गया तो आगे चलकर हम भारी कठिनाई में फंस सकते हैं। इसके लिए हमारी सरकार को अपनी अर्थ और वित्त-नीतियों में मौलिक परिवर्तन करने की आवश्यकता है। अभी तक वह अपनी आय से अधिक व्यय करने और अपनी जमा पूंजी खाते जाने की अदूरदर्शी नीति पर चल रही है। १९५५-५६ में द्वितीय योजना आरम्भ होने के समय हमारा काग़ज़ी नोटों का चलन १३५६ करोड़ रु० से कुछ अधिक था। १९५८ के मार्च तक वह बढ़कर लगभग १६०० करोड़ रु० हो चुका था। इसके विपरीत, हमारी सरकार के पास उस समय इन काग़ज़ी नोटों की जमानत के रूप में ७०० करोड़ रु० से कुछ कम मूल्य के सोना, चांदी, सिक्के और विदेशी हुण्डियां आदि मौजूद थे। उसके बाद दो वर्षों में अपनी जमा पूंजी हमने इतनी जल्दी जल्दी व्यय कर डाली कि वह मार्च १९५८ के अन्त में घटकर केवल २८९ करोड़ रुपये की रह गयी थी। इस परिस्थिति को सुधारने में यदि हम शीघ्र ही सफल न हुए, तो हमें भय है कि द्वितीय योजना के अन्त तक हमारी आर्थिक अवस्था वैसी ही शोचनीय हो जायगी जैसी कि प्रथम पंच वर्षीय योजना आरम्भ होने के समय थी।

—

आप देश के नागरिक हैं!

क्या आप निश्चय करते हैं कि—

सरकारी दफ्तर हो या निजी कम्पनी, मिल हो या खेत हो, आप ईमानदारी से यथाशक्ति परिश्रम करेंगे।

हमारी सबसे बड़ी सम्पत्ति श्रम है, इसको व्यर्थ जाने देने से राष्ट्र की ही सम्पत्ति नष्ट होती है।

हमारी योजनाएं और ग्राम जनता

श्री सत्यदेव विद्यालंकार

कुछ वर्ष पहले की घटना है। महू (इन्दौर) की एक सार्वजनिक सभा में एक ऊँचे सरकारी अधिकारी पंचवर्षीय योजना के सम्बन्ध में जनता से अपील कर रहे थे। योजना के विरोधियों अथवा आलोचकों के सम्बन्ध में उन्होंने यह कहा कि उनमें अधिकांश वे लोग हैं, जिन्होंने कभी योजना के मसविदे को उठाकर देखा भी नहीं है। बिना पढ़े और जाने बूझे आलोचना करना कोई अर्थ नहीं रखता। उनके बाद मुझे बोलना था। मैं यह कहे बिना न रह सका कि योजना की प्रशंसा करने वालों में भी अधिकांश वे लोग हैं, जिन्होंने उसको देखने या पढ़ने का कभी कष्ट नहीं उठाया है। मेरा कहने का तात्पर्य यह था कि हमारी योजनाओं के पोथे इतने लम्बे, चौड़े और भारी भरकम हैं कि एक अच्छे सुशिक्षित में भी इतना धैर्य और योग्यता नहीं है कि वह उसको पढ़ने का साहस कर सके। वेदों और शास्त्रों की तरह योजना को भी सर्वसाधारण के लिए अगम्य और दुर्गम बना दिया गया है। इसलिये यह स्वाभाविक है कि उसको पढ़े लिखे बिना ही उसकी आलोचना करने का साहस लोग कर बैठते हैं। चीन तथा दूसरे देशों में योजनाएं और कानून बहुत सीधे, सरल और संक्षिप्त होते हैं। हमारे यहां का भूमि कानून एक दूसरा बड़ा पोथा है, जबकि चीन का भूमि कानून एक छोटीसी पुस्तिका (पैम्फलेट) है, जिसमें ऐसी कोई पेचीदियां भी नहीं है, जिनका वकील लोग बाल की खाल नोंचते हुए अर्थ का अनर्थ कर सकें। हमारे हिन्दू कोड के मुकाबले में चीन का विवाह कानून कहीं अधिक सरल और संक्षिप्त है। हमारे संविधान की भी यही स्थिति है। अन्य देशों के संविधान के मुकाबले में हमारा संविधान कहीं अधिक भारी भरकम है और सामान्य जन की बुद्धि और योग्यता की पहुँच से बाहर है।

किसानों में अज्ञान व असन्तोष

अभी उस दिन एक पत्रकार कोयना घाटी योजना के स्थल का निरीक्षण करके लौटे थे। अपने अनुभव के

पंचवर्षीय योजनाओं में जनता रुचि क्यों नहीं ले रही? यह अपराध जनता का है या सरकार का? योजनाओं के निर्माण में क्या-क्या मौलिक भूलें रही हैं? उनका सुधार कैसे किया जा सकता है? आदि मौलिक और महत्वपूर्ण सामयिक प्रश्नों का उत्तर लीजिये एक वयोवृद्ध यशास्वी और विचारक पत्रकार की लेखनी से।

आधार पर उन्होंने दो बातें बताईं। एक यह कि उस योजना के कारण जिन गांवों को खाली करवाना पड़ रहा है, उनके लोगों में संतोष की अपेक्षा रोष और सहानुभूति की अपेक्षा विरोध कहीं अधिक है। बाप-दादाओं की जमीन और घर के साथ उनको कुछ अधिक मोह है। वे किसान यह नहीं समझ पाते कि वे देश के लिए कुछ त्याग, बलिदान अथवा उत्सर्ग कर रहे हैं। कानून के सामने उन्हें झुकना पड़ता है और उसी कारण वे अपनी जमीनें और घर खाली करने को बाध्य होते हैं। दूसरी बात उन्होंने यह कही कि उस घाटी योजना से उनको और उनके आसपास के लोगों को जो लाभ सम्भव है, उसकी जानकारी उनको बिलकुल भी दी नहीं जाती। वे उसके बारे में एकदम अंधेरे में रहते हैं। समाचार पत्रों की दुनिया, सरकार के जन सम्पर्क विभाग और उसके प्रचार व प्रकाशन से वे बहुत दूर रहते हैं। आशय यह है कि जो योजना महीनों सरकारी दफ्तरों की फाइलों में पड़ी रहती है, उसका भी कोई प्रचार उनमें नहीं किया जाता। जब वे अपनी खाली की गई जमीनों पर और खाली किये गये घरों के स्थान पर सरकारी अफसरों के शानदार बंगले, उनकी सुख सुविधा के लिए अस्पताल आदि बनते देखते हैं, तब उनमें और भी अधिक रोष व असंतोष पैदा होता है। पत्रकार ने कहा कि यह है वह पृष्ठभूमि, जिस पर घाटी योजनाओं को शुरू किया जाता है। उन योजनाओं का उनको तुरन्त कोई

परिणाम न मिलने के कारण भी उनमें फैला हुआ असंतोष बढ़ता रहता है। उनकी स्थिति उनकी किसानी नष्ट हो जाने के कारण किसान की न रह कर उस योजना पूर काम करने वाले मजदूरों की रह जाती है और उस योजना के पूरी हो जाने पर उनके भाग्य में केवल बेकारी लिखी रह जाती है।

जनता की योजनाएं नहीं

सामुदायिक एवं राष्ट्रीय विकास योजनाओं के माध्यम से ग्राम जनता के साथ सम्पर्क कायम करने की कोशिश की जाती है और यह विश्वास किया जाता है कि जन सम्पर्क की दृष्टि से हमारी पंचवर्षीय योजनाएं बहुत सफल हो रही हैं। अपने देहातों का जैसा प्रत्यक्ष अनुभव आचार्य सन्त विनोबा को होना सम्भव है वैसा किसी और को होना कठिन है। आचार्य विनोबा सारे भारत का पैदल भ्रमण कर रहे हैं और उस भ्रमण में उनको देहातों और देहातियों की स्थिति तथा भावना को समझने का बहुत अच्छा अवसर प्राप्त होता है। आचार्य विनोबा का अनुभव इन सामुदायिक और राष्ट्रीय विकास योजनाओं के सम्बन्ध में वैसा उत्साहपूर्ण और आशाप्रद नहीं है। उनका यह भी विश्वास नहीं है कि इन योजनाओं से देहातों अथवा देहातियों को कोई विशेष लाभ मिला है। भारत सेवक समाज का यह दावा है कि वह योजना के कार्यक्रमों की पूर्ति के लिये सर्वसाधारण का स्वेच्छापूर्ण सहयोग प्राप्त करता है। परन्तु क्रियात्मक की अपेक्षा उसका भी कार्य अधिकतर दफ्तरी फाइलों और प्रचार तक सीमित है। वह सर्वांश में सरकारी संगठन है और अन्य सरकारी संस्थाओं की तरह ही उसका भी काम लालफीता शाही, फाइलों व वक्तव्यों पर निर्भर है।

कहने का तात्पर्य यह है कि हमारी योजनाएं जनता की योजनाएं नहीं हैं। यदि वे जनता की योजनाएं होतीं तो आचार्य विनोबा के कथन के अनुसार उनका प्रादुर्भाव जनता में से और देहातों में से ही होना चाहिए था। उनको सरकारी दफ्तरों में गढ़ कर देहातों पर थोपने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए थी। यही कारण है कि सर्वसाधारण जनता में उनके लिए आवश्यक जानकारी, विश्वास और उत्साह का प्रायः अभाव है। सरकारी माध्यम से उसको उन पर थोपा जाता है। इसी दृष्टि से एक बड़ी कमी यह भी है कि हमारी योजनाएं 'राष्ट्रीय' नहीं हैं। वे एक दल विशेष 'कांग्रेस' द्वारा तैयार की गई हैं। दूसरे राजनैतिक दलों में उनके लिए अपनेपन की कोई भावना नहीं है; अपितु वे उनका विरोध करना अपना कर्त्तव्य मानते हैं और रात दिन उनके छल छिद्र व कमियां खोजने में लगे रहते हैं। यह दोष हमारे सारे ही वर्तमान शासन में विद्यमान है। दलगत शासन की रीति-नीति को हमने जिन देशों की नकल में अपनाया है, उनसे हम राष्ट्रीय भावना का पाठ नहीं सीख सके, और किसी भी मुद्दे पर एक व संयुक्त होना हम नहीं जानते। परिणाम यह है कि दूसरे दलों का उनके लिए सहयोग नहीं मिलता। इस बुद्धि भेद का प्रभाव जनता पर बहुत बुरा पड़ता है और जनता में विरोधी भावना को प्रश्रय मिलता रहता है।

किसान की मनोवृत्ति

परन्तु दूसरी योजना के प्रारम्भ होते न होते अनाज का संतुलन बिगड़ गया और हमें फिर अनाज के लिए विदेशों की शरण जाना पड़ गया। इस वर्ष भी बीस लाख टन अनाज बाहर से मंगाने का कार्यक्रम है, जिस पर डेढ़ अरब रुपया खर्च होने की संभावना है। निस्संदेह हमारे देश में खेती की उपज प्रकृति पर निर्भर है और प्रकृति के प्रकोप का सामना करने की सामर्थ्य हमारे देश के किसान में नहीं है। बाढ़ और सूखे का अभिशाप उपज को ग्रस्तता रहता है, फिर भी यह नहीं माना जा सकता कि देश की जनता इन सब आपत्तियों का मुकाबला नहीं कर सकती और उन पर विजय नहीं पा सकती। पिछले ही दिनों में आन्ध्र के

खाद्यमंत्री ने यह दावा किया था कि उनका प्रदेश सारे देश की अन्न समस्या को हल करने की सामर्थ्य रखता है। परन्तु उनकी यह भी शिकायत है कि उनके यहां किसान ने इस वर्ष धान की उपज पूरी तरह न करके जमीन को खाली छोड़ दिया है, कारण उन्होंने इसका यह बताया कि गत वर्ष केन्द्रीय सरकार द्वारा गेहूँ और चावल के क्षेत्र निश्चित कर देने के कारण आन्ध्र का किसान अपने धान की मनमानी कीमत प्राप्त नहीं कर सका और उसको इस वर्ष भी वैसी कोई आशा नहीं थी। इसलिए उसने धान की उपज से ही हाथ खींच लिया। यह कैसी विचित्र मनोवृत्ति है। पिछले ही दिनों में पंजाब सरकार को यह चेतावनी देनेके लिए बाध्य होना पड़ा कि किसान सिंचाई वाली भूमि में वर्ष में दो खेती नहीं करेगा, उसकी जमीन जब्त कर ली जायगी। सिंचाई के साधन सुलभ होने पर भी लाभ न उठाना हमारे देश के किसान की मनोवृत्ति बन गई है। वह अपने जीवन के पुराने ढर्रे में कुछ भी परिवर्तन करना नहीं चाहता। अनेक राज्यों की सरकारों के सामने यह एक समस्या है कि किसानों को सिंचाई के साधनों से लाभ उठाने के लिए कैसे उत्साहित किया जाय? मद्रास, आन्ध्र तथा अन्य कुछ राज्यों में भी किसान सिंचाई के साधनों से पूरा लाभ नहीं उठा रहे और खेती की जमीनें बिना उपज के खाली पड़ी रह जाती हैं। सिंचाई के दरों की शिकायत समझ में आ सकती है, किन्तु सिंचाई से अधिक उत्पादन होने की स्थिति में यदि उसकी दर में वृद्धि की जाती है तो किसान को आपत्ति क्यों होनी चाहिए?

किसान में अभी यह भावना पैदा नहीं हुई है कि उसे देश को अनाज की दृष्टि से आत्म-निर्भर बनाने के लिए अपनी ऊपज को बढ़ाना है और योजना में इस उद्देश्य से निर्धारित किये गये लक्ष्यों को पूरा करना है। अधिकतर राज्य अन्न की उपज के निर्धारित लक्ष्य को पूरा करने में बुरी तरह पिछड़ गये हैं। दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में अन्न की अतिरिक्त उपज का लक्ष्य एक सौ पचास लाख टन निर्धारित किया गया है। औसतन प्रतिवर्ष तीस लाख टन हुआ। इस ब्यौरे में पहले दो वर्षों के अतिरिक्त उपज केवल छत्तीस लाख टन बताई गई है। यह दोनों वर्षों का औसत अट्ठारह लाख टन होता है। तीस लाख टन के लक्ष्य को पूरा करने के लिए उत्पादन किया गया, केवल अट्ठारह लाख टन। सूखे और बाढ़ आदि को इसके लिए दोषी ठहराया जा सकता है परन्तु देश का वह किसान भी इसके लिए कम दोषी नहीं है, जिसको योजना-सम्बन्धी उद्देश्य आदर्श अथवा लक्ष्य यथेच्छ रूप में अनुप्राणित नहीं कर सके और और उसमें नई भावना का संचार करने में सर्वथा असफल रहे। अनाज की ऊपज के मोर्चे की असफलता अथवा पराजय हमारी सारी ही अर्थ-व्यवस्था और औद्योगिक प्रगति के लिए घोर संकट पैदा करने वाली है।

विदेशी दासता की भावना

एक बड़ा दोष योजनाओं के सम्बन्ध में उस मनोवृत्ति का है जिससे उनको तैयार किया गया है। अपनी जनशक्ति और उपलब्ध साधनों पर निर्भर न रहकर बात बात के लिए विदेशों का मुँह देखना किसी भी देश को शोभा नहीं दे सकता। अंग्रेजी पढ़े लिखे उन दफ्तरी बाबुओं ने इन योजनाओं का ढाँचा तैयार किया है, जिनको भारतीय जीवन, विशेषतः देश के देहाती जीवन का कुछ भी अनुभव नहीं है। विदेशों से धन और अन्न की प्राप्ति के अतिरिक्त योजना सम्बन्धी कार्यक्रमों की पूर्ति, छोटी योजनाओं का निर्माण, कारखानों की स्थापना और आवश्यक मशीनों की प्राप्ति एवं विशेषज्ञोंकी सहायता के लिए भी हमें विदेशों का ही मुँह देखना पड़ रहा है। धान की खेती को उन्नत करने के लिए हमें जापान का ढंग अपनाना पड़ता है और सहकारी खेती के लिए हम चीन के उदाहरण को प्रस्तुत करने की बात करते हैं। इस प्रकार देश-वासियों में हीनता की भावना पैदा होती जा रही है। हीन भावना वाले व्यक्ति में आत्म विश्वास और स्वावलम्बन के लिए आवश्यक उत्साह पैदा हो ही नहीं सकता।

दूसरे महायुद्ध में कुचल दिये जाने तथा अणुबम का शिकार बना दिये जाने पर भी जापान फिर से उठ खड़ा हुआ है और चीन भी जिसकी स्थिति हम से कुछ अधिक बेहतर नहीं थी, नये आदर्शों को अपना कर नये रूप में संसार के सामने प्रगट हो रहा है। दोनों ने किसी भी रूप में परमुखापेक्षी वृत्ति को नहीं अपनाया और ऐसी विदेशी सहायता भी प्राप्त नहीं की। क्या हमारे लिए वैसा कर सकना सम्भव नहीं है?

[क्रमशः

खाद्य पदार्थ और विदेशी विनिमय

श्री ई० पी० डब्ल्यू डा कोस्टा. सम्पादक : ईस्टर्न इकोनोमिस्ट

भारत को विदेशी मुद्रा के गंभीर संकट को कम करने का एक महत्वपूर्ण साधन विदेशों से अन्न के आयात को कम करना है। दूसरी पंचवर्षीय योजना के पहिले दो वर्षों में ५० करोड़ रुपये के खाद्य पदार्थों का आयात किया गया है। इसलिए यह आवश्यक प्रतीत होता है कि देश के सब सम्भव साधनों को प्रयोग में लाकर हमें अधिक से अधिक खाद्य पदार्थों का उत्पादन करना चाहिये। दुर्भाग्य की बात है कि फूड ग्रेन इन्क्वारी कमेटी का दृष्टिकोण अधिक खाद्य पदार्थों के उत्पादन की दिशा में अनावश्यक रूप से निराशावादी रहा है। कमेटी के अनुमान के अनुसार आने वाले कुछ वर्षों में और कम से कम दूसरी योजना के शेष तीन वर्षों में हमें २० लाख से ३० लाख टन तक वार्षिक खाद्य पदार्थों का निर्यात करना पड़ेगा। इस वर्ष की सामयिक आवश्यकताओं को पूरी करने के लिये सरकार यूनाइटेड स्टेट्स अमेरीका से खाद्य पदार्थों के उधार निर्यात के लिये पी० एल० ४८० समझौता करने में व्यस्त है। यदि यह समझौता तीन वर्ष के लिये हो जाए, तो इससे निरन्तर निर्यात पर होने वाले विदेशी विनिमय का बहुत सा खर्च बचाया जा सकता है। कुछ भी हो, राष्ट्र का कल्याण इसमें ही निहित है कि हम अपनी खाद्य समस्या को स्वयं ही हल करें।

खाद्य समस्या को हल करने के लिये एक व्यवहार में आ सकने योग्य और किसी हद तक व्यावसायिक राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम की आवश्यकता है। समस्या के कई पक्ष हैं, इन सब पक्षों पर एक साथ कार्य किये जाने की आवश्यकता है। कार्यक्रम का एक मौलिक अंग यह है कि किसान को खेती करने के पुराने तरीके के स्थान पर नये तरीके सिखलाये जायं; और यह तभी संभव हो सकता है, जबकि किसान को यह विश्वास हो जाए कि उसे अपने उत्पादन का उचित मूल्य मिलेगा। नये तरीके से खेती करने के लिये किसान को अच्छे बीज, औजार, कीड़ों आदि को मारने वाले रसायन, खाद्य और पानी के प्रबन्ध आदि के लिये जो भारी व्यय करना पड़ेगा, उस पर उचित लाभ भी किसान को मिल सके, इसके लिये खेती के उत्पादनों के उचित मूल्यों का निर्धारण होना बहुत आवश्यक है। इसके साथ ही साथ किसान को उसके द्वारा किये जाने वाले उत्पादन के अनुपात में ऋण देने की व्यवस्था भी करनी होगी। यदि ऋण कृषक द्वारा पैदा की जाने वाली फसल के ऊपर न देकर, अब तक ऋण देने की व्यवस्था—उसकी सम्पत्ति की जमानत पर दिया जाता रहेगा तो १० प्रतिशत से अधिक किसान ऋण प्राप्त नहीं कर सकेंगे।

अभी तक वास्तव में ग्रामीण क्षेत्रों में किसानों तक उन्नत बीज, कीड़ों आदि को मारने वाले रसायन, खाद और खेती के औजारों को सही समय पर और पर्याप्त मात्रा में पहुँचाने की कोई सुन्दर व्यवस्था नहीं है। ऐसा प्रबन्ध करने की तुरन्त आवश्यकता है, जिससे कि नये ढंग की खेती करने के लिये उपर्युक्त सभी साधन किसान को अधिक से अधिक इतनी दूरी पर सुलभ हों, जहां से कि वह उन्हें अपनी बैलगाड़ी में ला सके। यह भी आवश्यक है कि ये सभी साधन फसल की बुआई के अवसर पर ठीक समय पर सुलभ हो सकें। एक दूसरा प्रश्न यह सामने आता है कि तरह-तरह के उन्नत बीज तैय्यार करने के लिये बीज तैय्यार करने वाले फार्म की व्यवस्था कैसे की जाए? और इन उन्नत बीजों को सुरक्षित रखने के लिये बीज-गोदामों का प्रबन्ध किस प्रकार किया जाए?

सिंचाई के साधन

एक अन्य दिशा जिसकी ओर हमारा ध्यान आकर्षित होना चाहिये, यह है कि सिंचाई के अब तक जो साधन सुलभ हैं, उनका पूरा-पूरा लाभ उठाया जाए। अभी तक जो प्रोजेक्ट तैय्यार हो चुके हैं उनसे भी सिंचाई करने के लिये न तो नहरें बनाई गई हैं और न ही खेत तैय्यार किये गये हैं। जहां-जहां सिंचाई के साधन सुलभ हैं, वहां भी आबपाशी की दरें बहुत अधिक होने के कारण किसान लोग उसका पूरा-पूरा फायदा नहीं उठा पाते हैं। इसके

अतिरिक्त किसान अभी सिंचाई द्वारा खेती (Wet farming) करने के अभ्यस्त भी नहीं हुए हैं। किसान वर्ष में मानसून की एक फसल के स्थान पर सिंचाई द्वारा दो फसलें तभी उत्पन्न कर सकता है जबकि उसे सिंचाई के पर्याप्त साधन और उचित दरों की सुविधा दी जाएं।

सामुदायिक विकास विभाग से अधिकारियों का यह कर्तव्य है कि वे किसानों को पुराने ढंग के कम उत्पादक तरीकों से खेती करने के बजाय नये ढंग से अधिक उत्पादन वाले तरीके की खेती करने को प्रेरित करें। कृषि-मंत्रालय और प्रान्तीय सरकारों के कृषि-विभागों का कर्तव्य है कि वे खेती की उन्नति के कार्यक्रमों के लिए तुरन्त आर्थिक सहायता देना आरम्भ करें।

छोटे-छोटे प्रयासों द्वारा उत्पादन-वृद्धि के लिए सिंचाई के छोटे साधनों और खाद बनाने को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये। सिंचाई की छोटी-छोटी योजनाएं, विशेषकर भूमि गर्भ के कुएं या ट्यूबवैल पानी द्वारा सिंचाई की योजनाएं अपना विशेष महत्त्व रखती हैं। किसान सिंचाई के महत्त्व को भली प्रकार समझते हैं, लेकिन साधनों के अभाव में सिंचाई-कार्य का जितना विस्तार होना चाहिये था, वह नहीं हो पाया है। अब समस्या यह है कि सरकार किस प्रकार एक बड़ी संख्या में अच्छे और सस्ते कुओं के निर्माण-कार्य में योग दे। ये कुएँ गांव वालों की इच्छानुसार और विभिन्न स्थानों की भौगोलिक परिस्थिति के अनुसार कच्चे या पक्के जैसे उपयुक्त हों, बनाये जा सकते हैं। साथ ही साथ समस्या को हल करने के लिये किसानों को इस बात के लिये प्रोत्साहित करने की आवश्यकता भी है कि वे चरस और रहट आदि कम खर्च साधनों की सिंचाई का उपयोग करें। अभी पिछले दिनों दिल्ली के निकटवर्ती गांव खानपुर में एक परीक्षण सफल हुआ है। यह परीक्षण फोर्ड फाउन्डेशन के निर्देशन में बैलों की शक्ति द्वारा सस्ती बिजली के उत्पादन के लिये और सिंचाई के ज़िये पर्याप्त पानी सुलभ करने के लिये किया गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि निकट भविष्य में ही इस परीक्षण के परिणाम बहुत लाभकारी सिद्ध होंगे।

सिंचाई के छोटे साधनों के अतिरिक्त हरी पत्तियों द्वारा खाद बनाने का काम भी बहुत महत्व का काम है। यदि ऐसे पौधे उगाये जायं जिनसे खाद तैयार होती है और दूसरी फसलों के चारों ओर भी किनारे किनारे ऐसे पौधे लगाये जायं तो यह कार्य दो वर्षों के अंतर्गत ही पर्याप्त विस्तृत हो सकता है। खाद तैयार करने का यह सबसे सस्ता तरीका है।

भूमि-सुधार बनाम उत्पादन

इस दिशा में स्मरणीय है कि खेती के उत्पादन में वृद्धि करने की आवश्यकता है, न कि भूमि-सुधार की अव्यावहारिक योजनाओं पर कार्य करने की। आजकल बड़े-बड़े भूस्वामियों को जमीन पर उनका स्वामित्व बने रहने का विश्वास नहीं रह गया है, इसलिये उन्होंने भूमि के सुधार और विकास के लिये खर्च करना बन्द कर दिया है। जबसे भूमि की कीमतें और भूमि से होने वाली आय लगान और काश्तकार कानूनों के कारण कम हो गई हैं, तब से बड़े-बड़े भूस्वामी अपनी भूमि को बेचकर दूसरी सम्पत्ति में परिणत कर रहे हैं और इस प्रकार बहुत अधिक भूमि पर एक ही व्यक्ति के कब्जे की समस्या स्वतः ही समाप्त हो रही है। जोत की सीमा निर्धारित कर देने से घाटे के जोत की समस्या हल नहीं होगी और इस समय भूमि पर बड़े-बड़े भू-स्वामियों के अधिकार को समाप्त कर देने से किसानों में विभक्त भूमि की समस्या और भी उलझ जाएगी। और यह सब निश्चय ही खाद्य पदार्थों के उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव डालेगा।

भारत में खाद्य-पदार्थों का आयात

(करोड़ रुपयों में)

	१९५५	१९५६	१९५७
अनाज, आटा और दालें	३५.१०	४.३९	५५.३१
फल और सब्जियां	१२.९९	१५.०९	२१.२०
मसाले	५.६३	८.१२	२.१३

राष्ट्रीय विकास का प्रमुख प्रश्न

खेती पहले या उद्योग ?

श्री अशोक मेहता

पिछले कुछ वर्षों में कम विकसित देशों में आर्थिक विकास की समस्याओं का अध्ययन तथा विश्लेषण किया गया है। पता लगा कि जितने कम विकसित देश हैं, उतनी ही उनकी समस्याएं हैं और कोई एक ऐसा स्पष्ट और सीधा माप-दण्ड नहीं है और न ही हो सकता है जिसके आधार पर विकास के निश्चित तरीके बताए जा सकें।

हां, दो ऐसे सीधे तरीके हैं जिन्हें विकास के नियम मानने में दो मत नहीं हैं। वे हैं :—

(१) विकास कार्यक्रम के अंतर्गत किसी समय भी प्रति व्यक्ति उपभोग की मात्रा प्रारम्भिक स्तर से कम नहीं होनी चाहिए। (यानी अधिकतर कम विकसित देशों में ज्यादातर लोगों के उपभोग का स्तर इतना कम है कि उसको और भी कम करना एक इतनी बड़ी कुर्बानी होगी, जिसका मुआवजा हम भविष्य में उपभोग की मात्रा बढ़ा कर भी नहीं चुका सकते।)

(२) बढ़ते हुए उत्पादन को अतिरिक्त पूंजी के रूप में लगाया जाए। (यानी कम विकसित देशों की आर्थिक स्थिति में अन्ततः सुधार तभी हो सकता है जबकि पूंजी में धीरे-धीरे इतनी बढ़ोतरी हो जाए जिससे पूंजी की सुरक्षा के लिए सरकार को विशेष कदम उठाने की जरूरत न पड़े।)

कम विकसित देशों में सकल राष्ट्रीय उत्पादन में सरकार का भाग १० और १६ प्रतिशत के बीच होता है। विकसित अर्थ-व्यवस्था वाले देशों में यह हिस्सा ३० प्रतिशत या उससे भी अधिक होता है। यह मान लिया जाए कि सरकार को सकल राष्ट्रीय आय का १२ प्रतिशत भाग मिलता है और कुल सरकारी व्यय का एक तिहाई आर्थिक विकास पर खर्च होता है, तब यदि सरकार की अतिरिक्त आय विकास कार्यों पर खर्च हो और सकल राष्ट्रीय आय में सरकार का हिस्सा १२ से १४ प्रतशित (लगभग १६ प्रतिशत वृद्धि) बढ़ जाए, तो इससे विकास-कार्यों पर होने वाला व्यय सकल राष्ट्रीय आय के ४ प्रतिशत से ६ प्रतिशत (५० प्रतिशत वृद्धि) हो जाएगा।

विकास के कारण होने वाली अतिरिक्त आय का ज्यादा से ज्यादा हिस्सा भावी विकास कार्यों पर लगाया जाए, ऐसा करने के लिए ऊंचे करों तथा नए-नए करों से प्राप्त राजस्व का इस्तेमाल विकास कार्यों के लिए करना होगा। जिस हद तक इन शर्तों को लागू नहीं किया जाता, उतनी ही विकास की गति धीमी पड़ जाती है। आमदनी बढ़ानी होगी और बढ़ी हुई आमदनी से बचत की मात्रा भी अधिक करनी होगी और उसका इस्तेमाल इस ढंग से करना होगा कि उससे आमदनी और बढ़े। यही विकास की नीति है।

इसके बाद समस्या है कि ऐसे कौनसे काम हैं जिनसे आर्थिक विकास को प्रोत्साहन मिलता है और कौन-से ऐसे काम हैं जिनसे उसमें रुकावट पैदा होती है? कौन-से विकास कार्यों से प्रगति "गहरी" होगी और किनसे "विस्तृत"? क्या विकास के लिए खेती और उपभोग्य वस्तुओं (यानि "विस्तृत' प्रगति) के प्रोत्साहन की आव-

आप देश के नागरिक हैं !

क्या आप निश्चय करते हैं कि—

आप बीड़ी या तमाखू का तब प्रयोग करेंगे, जबकि आपके पास परिवार के पालन पोषण, बच्चों के शिक्षण आदि के बाद रुपया बचता हो।

आप अपने बच्चों को निरक्षर रखके, उनका पेट काट करके और दूध-घी बन्द करके सिगरेट पियें, यह राष्ट्र के प्रति भी घोर अपराध है !

श्यकता है या उद्योगों और मशीनों आदि (यानी "गहरी" प्रगति) के प्रोत्साहन की ? इस सम्बन्ध में अर्थ-शास्त्रियों के अलग-अलग मत हैं। परन्तु अनुभव के आधार पर यह कहा जा सकता है कि "गहरी" प्रगति की आवश्यकता है।

खेती और घरेलू उद्योग धंधों में सुधार करना होगा। स्वाभाविक स्वामित्व की व्यवस्था में सुधार करके सहकारी कार्य पद्धति को अपना कर और नई-नई टैक्नीकों का प्रयोग करके उत्पादन बढ़ाने के लिए न केवल अधिक पूंजी विनियोग की जरूरत है बल्कि छोटे-छोटे और इधर-उधर बिखरे हुए उत्पादकों को इकट्ठा करने की भी जरूरत है। बढ़ीहुई आमदनी लाखों व्यक्तियों में बंट जाती है और उनसे विकास के लिए उतना ही रुपया इकट्ठा करना सम्भव नहीं हो सकता। लाभ इस बात से हो सकता है कि ऐसा वातावरण पैदा किया जाए, जिसमें छोटे-छोटे उत्पादक पूंजी का विनियोग स्वयं करें और उत्पादन बढ़ाने के कार्य करें।

उद्योगों में सरलता से धन बच सकता है। बड़े पैमाने पर पूंजी लगाकर विनियोग के पूर्व निर्धारित लक्ष्य प्राप्त करने के लिए इस बचत का उपयोग सरलता से किया जा सकता है।

दूसरे, एशिया और अफ्रीका के अधिकतर देशों में जमीन पर बहुत अधिक लोगों का भार है और उन खेतिहरों की आमदनी तभी बढ़ सकती है जबकि जमीन का भार कम हो। कम-से-कम नई-नई आबादी को उद्योगों में लगाया जाए ताकि जमीन का बोझ कुछ कम हो सके और खेती पर निर्भर करने वाले लोगों की अर्थ-व्यवस्था में कुछ सुधार हो सके। भारत जैसे देशों में औद्योगिक क्षेत्र को मुख्य उत्पादन क्षेत्र बनाना होगा विशेषकर उन उद्योगों को जिनकी सहायता से शीघ्र ही अर्थव्यवस्था के लिए एक नए औद्योगिक आधार का निर्माण हो सके।

विकास का अर्थ है मजदूरी और दूसरी लागत निकाल कर कुल अतिरेक उत्पादन का पुनर्विनियोग। अमेरिका के दो अर्थशास्त्रियों, वाल्टर गलेक्सन और हार्वो लिबेन्सटीन ने हाल ही में विभिन्न प्रकार के वस्त्र उत्पादन में रोजगार की स्थिति के संबंध में कई साल का ब्यौरा तैयार किया है। सिद्धान्तों के आधार पर जो आंकड़े इकट्ठे किए गए वे बहुत ही जटिल हैं। उनका वर्णन यहां सम्भव नहीं है, पर उनके आधार पर तैयार की गई तालिका नीचे दी [illegible] रही हैं :—

१२०० रुपए के प्रारम्भिक विनियोग से जितने लो[illegible] को रोजगार मिला (१९४३ की परिस्थितियों में)

वर्ष	आधुनिक मिलें (बड़े पैमाने की)	खड्डियां (छोटे पैमाने की)	हथकरघा कुटीर उद्यो[illegible]
५	५	१५	३५
१०	३४	८३	३५
१५	२४२	४४४	३५
२०	१,७१८	२,३९०	३५
२५	१२,२००	१२,८६०	३५

मजदूरी की दर जितनी ऊंची होगी, अधि[illegible] कीमती मशीनों के इस्तेमाल से भावी रोजगार की दृष्टि[illegible] उतना ही अधिक फायदा हो सकता है। क्योंकि इस त[illegible] से ही अतिरेक आय होती है जिसका यदि अक्लमंदी [illegible] पुनर्विनियोग किया जाए तो उत्पादन और रोजगार दोनों [illegible] सकते हैं। उत्पादन के घटिया तरीकों और ज्यादा वेतन [illegible] नीति के कारण अतिरेक आय का पुनर्विनियोग नहीं [illegible] सकेगा और उससे विकास के कार्यक्रमों को धक्का पहुँचेगा[illegible]

निकोलस स्पलबर के हाल ही के स्मारकों के आ[illegible] पर अध्ययन 'साम्यवादी योरुप का अर्थ शास्त्र' से भी [illegible] कथन की पुष्टि होती है। इस पुस्तक के पृष्ठ ४८२ पर [illegible] गई तालिका (सं० १३७) का सरल रूप इस प्रकार है:-

पहली योजना में विकास का मोटा विवरण

	चेकोस्लोवेकिया (१९४८=१००) १९५३	पोलैण्ड (१९४९=१००) १९५५	हंगरी (१९४९=१००) [illegible]
कुल शुद्ध माल का उत्पादन	१७०	२१२	[illegible]
योजना में वास्तविक उत्पादन	१५९	२१०	[illegible]
शुद्ध उत्पादन खेती	८०	१२०	[illegible]
जितना हुआ उद्योग	२००	२४६	[illegible]

१९ वीं शताब्दी में योरुप में या पूर्वी योरुप के साम्यवादी देशों में अपनाए गए विकास के तरीकों को चाहे हम अच्छा समझें या न समझें, चाहे हम विकास की तेज रफ्तार के हक में न हों, लेकिन विकास के ऐसे कार्यक्रम के लिए, जो निरन्तर बिना रुकावट के चलता रहे, हमें ऐसे क्षेत्र की ओर अधिक ध्यान देना होगा जिससे उत्पादन अधिकाधिक बढ़े। और वह है उद्योग। अर्थात् उद्योगों से ही उत्पादन में वृद्धि हो सकती है।

यहां एक बार फिर मैं दौहरा देना आवश्यक समझता हूं कि यदि कोई कम विकसित देश कामयाबी से विकसित होना चाहता है तो उसके लिए यह जरूरी है कि वह विकास कार्यक्रम के शुरू में ही अपना उत्पादन बढ़ाने के लिए अपनी सारी शक्ति केन्द्रित कर दे। यदि उसके आरम्भिक प्रयत्नों से उसका उत्पादन न्यूनतम आवश्यक स्तर तक न पहुँचा तो वह देश फिर पहले की अविकसित दशा को प्राप्त हो जाएगा।

और यदि इस प्रयत्न का मतलब है इस्पात कारखाने और विद्युत यन्त्र लगाना और परिवहन आदि का विकास करना तो न केवल कर बढ़ाने होंगे वरन् अधिक बचत की तुलना में उतना लाभ नहीं होगा, क्योंकि इन बुनियादी उद्योगों से उपभोग्य वस्तुएं तुरन्त नहीं मिलतीं। इसी तरह विकास की प्रारम्भिक स्थिति में बड़ी-बड़ी कीमती मशीनें लगाने पर जोर दिए जाने के कारण पूंजी विनियोग के मुकाबले में रोजगार थोड़े ही लोगों को मिलेगा। ऊंचे कर, कीमतों में बढ़ोतरी और रोजगार के अवसर सीमित होने से भविष्य में विकास की गति तीव्र हो जाएगी। पहले ही करों और कीमतों के झंझट में पड़ने से या रोजगार के बारे में अधिक चिन्ता करने के लिए बहुत-सी समस्याएं खड़ी हो जाएं।

स्वभावतः ही मैंने यहां बात को बहुत बढ़ा-चढ़ा कर कहा है और बहुत से ऐसे तरीकों का जिक्र नहीं किया है, जिनकी आवश्यकता उपर्युक्त नीति के प्रभाव को कम करने के लिए पड़ेगी। मैंने ऐसा इसलिए नहीं किया है क्योंकि मुझे डर है कि विकास के लिए हमें क्या करना है, यह बात केवल बातचीत में ही खत्म न हो जाए बल्कि हम इसे अच्छी तरह समझ लें।

विकास योजनाओं की कठिनाइयां

डा० यू० एन० घोष

साधारणतया कहा जाता है कि पंचवर्षीय योजनाओं की सबसे बड़ी कठिनता विदेशी मुद्रा है। किन्तु हमारी नम्र सम्मत्ति में यदि हम अपना निर्यात व्यापार बढ़ालें और विदेशों से विपुल मात्रा में ऋण ले लें, तो यह समस्या हल हो जाएगी। विदेशी मुद्रा के अतिरिक्त भी अन्य कुछ कठिनाइयां हैं जिन्हें हमें हल करना होगा।

प्रबन्ध, परस्पर समन्वय और अर्थ नियंत्रण भी तीनों काफी बड़ी कठिनाइयां हैं। इन तीनों के अतिरिक्त भी कुछ ऐसी कठिनाइयां हैं, जिनका हल हुए बिना योजना की सफलता अत्यन्त संदिग्ध है।

पहली कठिनता यह है कि ऐसी कोई आर्थिक पद्धति हमारे पास नहीं है, जिससे मांग की एकरूपता उत्पन्न हो सके। आज की सभ्यता और यातायात और संवाद-संवहन के आधुनिकतम साधनों के कारण यह बहुत स्वाभाविक हो गया है कि मानव की रुचि बदलती रहे और उसकी इच्छाओं में परिवर्तन होता रहे। इसे देखते हुए, योजना निर्माताओं के लिये यह बहुत कठिन होगा कि वे किसी पदार्थ की मांग के सम्बन्ध में कुछ निश्चित कर सकें। अनिश्चितता और अस्थिरता की स्थिति केवल इस हालत में दूर हो सकती है कि हम 'ले लो या छोड़ दो' के उसूल पर कोई चीज पैदा करें। रेलवे में ऐसा ही होता है। हम में से कोई एक गाड़ी में बैठे या न बैठे यह उसकी मर्जी पर है। रेल गाड़ी वाले किसी एक नागरिक की इच्छा पर टिकट का किराया कम नहीं करते। मांग में एक रूपता उत्पन्न करने का एक तरीका और भी है—वह यह कि बाजार से हरेक प्रकार की वैकल्पिक वस्तुओं और सेवाओं को, जो किसी—एक वस्तु की मांग को कम कर देती हैं, दूर कर दिया जाय, परन्तु क्या ऐसा होना सम्भव है? शायद नहीं।

> यदि सामाजिक और आर्थिक क्रान्ति के कार्यक्रम का लक्ष्य उपर्युक्त तरीकों से विकास के कार्यक्रम को चलाना है तो शुरू-शुरू में विकास के लिए जो कुछ करना है उसमें तथा रोजगार और खुशहाली की मांग में काफी जद्दोजहद रहेगी, लेकिन बाद में विकास हो जाने पर यह मांगें खुदबखुद पूरी हो जाएंगी। लोगों को रोजगार भी मिल जाएगा और देश खुशहाल भी हो जाएगा।

दूसरी कठिनता यह है कि यदि किसी तरह मांग की एकरूपता उत्पन्न कर दी जाए तो भी यह आवश्यक नहीं है कि उससे जनता का कल्याण हो। कल्याण पूर्ति के लिये नागरिक की अपनी इच्छा और आकांक्षा का ध्यान रखना आवश्यक है। केवल किसी वस्तु का उत्पादन बढ़ा देने से ही समाज का कल्याण नहीं हो सकता। यदि कुछ वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन निरन्तर और अनिश्चित काल के लिये बढ़ता भी जाए तो क्या उससे आर्थिक स्थिति अधिक अच्छी हो जाएगी? कुछ वस्तुओं के अधिक उत्पादन से अवस्था बिगड़ेगी। परिणामतः स्थिति में कोई विशेष सुधार नहीं होगा।

तीसरी कठिनता यह है कि आर्थिक स्थिति में होने वाले परिवर्तनों का कोई उचित मापदण्ड नहीं है। जहां तक उत्पादन का सम्बन्ध है, उत्पादन बढ़ाकर भी हम निश्चित रूप से यह नहीं कह सकते कि आर्थिक अवस्था में सुधार हो जाएगा।

किसी चीज का उत्पादन कितना अधिक बढ़ाया जाय या कितना कम किया जाय, इसके लिये कोई उचित मापदण्ड हमारे पास नहीं है। हमें कोई ऐसी पद्धति निकालनी होगी, जिससे हम यह मालूम कर सकें कि किसी चीज की बाजार में कितनी जरूरत है? जरूरत से ज्यादा उत्पादन पर हमें प्रतिबन्ध लगाना पड़ेगा।

चौथी कठिनाई वितरण की कठिनाई है। यदि हम यह मानलें कि जनता किसी चीज को अनिश्चित काल तक खरीद सकती है, तो मूल्य या व्यय की चिन्ता किये बिना उत्पादन बढ़ता चला जाएगा, परन्तु एक अर्थव्यवस्था में

(शेष पृष्ठ ४१४ पर)

राष्ट्र की आर्थिक उलझनें

श्री जी० एस० पथिक

पश्चिम एशिया का संकट

लेबनान और जोर्डन में अमेरिकन और ब्रिटिश फौजों के उतरने से शांति को तो खतरा नहीं पहुँचता है, किन्तु भारत की राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था को गहरा धक्का अवश्य लगता है। इस धक्के से हमारी दूसरी पंचवर्षीय योजना तक ठप्प हो सकती है। युद्ध के खतरे से भारत में निर्यात व्यापार को गहरी ठेस लगती है। यही स्थिति रही तो पूंजीगत सामान के आयात के लिए मशीनों का समय पर मिलना संभव न होगा और जहाज उपलब्ध न हो सकेंगे। दूसरे उनकी दरें बढ़ जाएंगी। बीमे की दरें भी बढेंगी। पश्चिमी एशिया के अशांति के समाचारों से हमारे देश में वस्तुओं के दाम बढ़ गए, चांदी और सोने में तेजी आ गयी। शेयर बाजारों में गहरी प्रतिक्रिया हुई। इधर यह दीखता है कि अब वह स्थिति नहीं रही, जो कुछ समय पहले थी। उस समय तो पश्चिम एशिया ऐसे कगार पर खड़ा हो गया था कि अब युद्ध शुरू होने ही वाला है। भारत शांतिके लिए प्रयत्नशील है, जिससे कि उसकी अर्थ-व्यवस्थाको धक्का न लगे।

नए विदेशी ऋण की वृद्धि

भारत में अब तक कितना विदेशी विनियोजन हुआ है, रिजर्व बैंक इस जांच को अगले दिसम्बर तक पूरी करेगा। पर अन्य स्रोतों से यह पता लगता है कि भारत में ६०० करोड़ रुपए की विदेशी मुद्रा का विनियोजन हुआ है। अर्थात् इस बर १९५५ के अंकों से १७० करोड़ रुपए की वृद्धि हुई। १९५५ में रिजर्व बैंक ने विदेशी विनियोजन की गणना की थी। यह कहा जाता है कि इस विनियोजन में वृद्धि भारत में स्थित विदेशी कम्पनियों के मुनाफे के पुनर्विनियोजन के कारण है। इससे यह प्रकट होता है कि इस थोड़े से समय में विदेशी कम्पनियों ने कितना ऋण का मुनाफा कमाया है। आए दिन विदेशी ऋण और विनियोजन के जो समझौते सरकारी और गैर सरकारी स्तर पर होते हैं, सरकार उनका विवरण प्रकाशित नहीं करती है, पर यह ठीक नहीं है। अपनी योजना को पूरी करने के लिए अगले तीन वर्षों के लिए भारत को १२,००० लाख डालर का ऋण अपेक्षित है। किन्तु ६००० लाख डालर इस वर्ष के अन्त तक चाहिए। हम ६०० करोड़ रुपए का विदेशी ऋण चाहते हैं और इतनी ही रकम देश में विदेशी विनियोजन की है। अभी हमें कितना ऋण लेना पड़ेगा— इसका भी कोई अनुमान नहीं है। पर प्रश्न यह है कि निर्यात व्यापार की वृद्धि के अभाव में इन भारी ऋण और विनियोजनों का मूलधन और व्याज कैसे चुकाएंगे?

विदेशी मुद्रा का भयावह संकट

यह कहना न होगा कि प्रथम पंचवर्षीय योजना के काल में भारत को अपने विदेशी मुद्रा के रक्षित कोष में से एक पाई भी नष्ट न करनी पड़ी, उल्टे १०७.१५ करोड़ रुपए की विदेशी मुद्राएं जमा हो गई है। किन्तु द्वितीय पंचवर्षीय योजना के काल में भारत के सामने विदेशी मुद्रा की कमी का भीषण संकट उपस्थित हुआ और यह संकट बढ़ता ही जाता है। दूसरी पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ में भारत के पास ७४६.१३ करोड़ रुपए की विदेशी मुद्रा जमा थीं। किन्तु २७ महीनों के उपरान्त जून १९५८ में भारत के पास २१७.७१ करोड़ रुपए की विदेशी मुद्राएं रह गयीं। इस प्रकार इन २७ महीनों में भारत ने ५२८.४२ करोड़ रुपए की विदेशी मुद्राएं खो दीं। जब सरकार को

आप देश के नागरिक हैं!

क्या आप निश्चय करते हैं कि—

आप अपने पड़ौस या मुहल्ले में किसी गरीब, किसी अशिक्षित या रोगी की सेवा करेंगे।

सामुदायिक योजना का यही उद्देश्य है कि मिलकर एक दूसरे की सहायता की जाय। संगठन में बल और सफलता है।

चेतना हुई, क्योंकि उसने देखा कि भिन्न-भिन्न विभाग के मंत्री बिना किसी नियंत्रण के व्यय कर रहे हैं, इसलिए विदेशी मुद्रा का बजट अलग से रखा गया, और कड़े नियंत्रण लगाए गये। बड़े परिमाण में आयात रोका गया और निर्यात वृद्धि के लिए प्रयत्न किए गए, किन्तु बावजूद इन सब बातों के विदेशी मुद्रा का ह्रास होता रहा—अर्थात् जनवरी से जून १९५७ के बीच में ३९.१९ करोड़ रुपए और जनवरी से जून १९५८ के बीच में ७० करोड़ रुपए की विदेशी मुद्राएं घट गयीं।

विदेशी व्यापार में अवरोध

पिछले कुछ समय से विदेशी व्यापार की गतिविधि बदल गई है। अमेरिका तथा योरोपीय देशों में मंदी आने और अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिद्वन्द्वता बढ़ने से भारत को अपना निर्यात व्यापार बढ़ाना कठिन हो गया है। भारत के निर्यात व्यापार में कपड़ा, चाय और जूट पदार्थ मुख्य वस्तुएं हैं। अन्य पदार्थों के निर्यात से आय दूसरे दर्जे की हैं। संसार के जिन देशों में भारत के कपड़े की खपत रही, उनमें राष्ट्रीयता के प्रसार से वस्त्र उत्पादन में आत्म निर्भरता का ख्याल पैदा हुआ। देश के विभाजन के समय यह ख्याल किया गया था कि पाकिस्तान में भारतीय वस्त्र की मांग सदा रहेगी, पर आज पाकिस्तान आत्म निर्भर ही नहीं; अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में हमारा प्रतिद्वन्द्वी भी बन गया है। पाकिस्तान अपना कपड़ा और सूत कनाडा, दक्षिण अफ्रीका, ग्रेट ब्रिटेन और हांग-कांग में निर्यात करने लगा है। अन्य देशों का भी यही हाल है। दूसरे संसार में कपड़े की खपत ६०८८० लाख गज से गिर कर ५०००० लाख गज रह गई है। लंका शायर का निर्यात ७०००० लाख गज से गिरकर ७००० लाख गज रह गया। जापान का निर्यात २७२५० लाख गज से १२००० लाख गज रह गया। १९५० के सिवा भारत का वस्त्र निर्यात कभी १०००० लाख गज के लक्ष्य तक नहीं पहुँचा। १९५५ में प्रमुख वस्तुओं का निर्यात इस प्रकार था:—

'करोड़ रुपए में'

१९५५	जूट-पदार्थ	चाय	कपड़ा	तेल
	१२६	११२	६३	३९

कपड़े की स्थिति हम देख चुके। जब जूट पदार्थों के दाम बढ़े, तब विदेशों ने पेकिंग के लिए दूसरी चीजों का उपयोग किया। कागज और कपड़े का उपयोग पेकिंग के लिए किया गया और उन्हें तैयार करने के लिए कीमती मशीनें लगायी गयीं। अब जूट पदार्थों के दाम गिर भी गए, तो भी वे देश जिन्होंने मशीनें खड़ी की हैं, उन्हें बंद नहीं कर सकते। दूसरे पाकिस्तान ने अपने यहां कारखाने खड़े कर लिए और भारत को चोट पहुँचाने के लिए उसने विदेशों को मौका दिया कि वे नयी जूट मिलें खड़ी करें।

चाय के निर्यात में सीलोन और इन्डोनेशिया प्रतिद्वन्द्वी थे। पर इधर लाल चीन ने भी प्रतिद्वन्द्विता शुरू कर दी है। सीलोन और चीन भारत के जबर्दस्त प्रतिद्वन्द्वी हैं। सीलोन ने निश्चय किया है कि ५००० एकड़ जमीन में चाय की खेती करे और प्रत्येक एकड़ में भारत की तुलना में अधिक उत्पादन करे। चीन की योजना है कि वह वर्तमान ३००० लाख पौण्ड चाय के उत्पादन को १९६१ तक ८८०० लाख पौण्ड तक पहुँचा दे। इस प्रकार ये देश भारत के प्रतिद्वन्द्वी बन गए हैं और उसकी विदेशी मुद्रा अर्जन के स्तर को गिरा रहे हैं।

हमारा निर्यात कैसे बढ़े?

देश में नए-नए उद्योगों का निर्माण होने पर भारत का विदेशी व्यापार नए रुख पर आ गया। आज यह देश अनेक प्रकार के तैयार माल का निर्यात करने वाला बन गया है, पर नए पदार्थों की खपत थोड़ी है। निर्यात वृद्धि के लिए कई व्यवस्थाओं का आश्रय लेना आवश्यक है। यह तो प्रकट है कि निर्यात वृद्धि कौंसिलों के प्रयत्नों से भारतीय निर्यात में कोई विशेष वृद्धि नहीं हुई। आज हम आयात पर प्रतिबंध पर प्रतिबंध लगाते हैं और निर्यात विस्तार के लिए प्रयत्न करते हैं। आयात रोकने से देश को हानि पहुँचती है। अनेक उपयोगी वस्तुओं का आयात नहीं हो पाता है। दूसरे हम जिन देशों को माल बेचना चाहते हैं, उनसे खरीदे बिना हम निर्यात नहीं बढ़ा सकते। इसलिए यदि स्पेशल आयात लाइसेंस खुले रूप में दिए जाएं, किन्तु केवल इस शर्त पर कि जो लोग जितने मूल्य का आयात करें उससे कम से कम ५ गुने मूल्य का निर्यात करें ...

(शेष पृष्ठ ५०३ पर)

"नये तीर्थ स्थान"
जवाहर सुरंग
भाखड़ा बांध
हरसी बांध
ग्वालियर
रिहन्द बांध
सिंदरी
चितरंजन
रेलवे इंजन
दा॰ घा॰ यो॰
कांडला बन्दरगाह
हीरा कुड बांध
भिलाई इस्पात योजना
अणु प्रतिक्रियावाहक ट्राम्बे
नेपा मिल
(अखबारी कागज)
मोटर-कार उद्योग
बम्बई
सीमेन्ट कारखाना
विशाखपटनम
जहाज निर्माण
बं गा ल की खा ड़ी
तुंगभद्रा बांध
हिन्दुस्तान विमान
मशीनी पुर्जे
बंगलोर
बंगलोर
पेराम्बूर रेल-डिब्बा कारखाना
भारतीय टेलीफोन कारखाना
कपास की मिलें
कोयम्बटूर
भारत-नार्वे मत्स्योद्योग योजना
१० करोड़ रुपये से अधिक खर्च वाली
नदी घाटी परियोजनाएं
प्रथम योजना की परियोजनाएं
१ नागार्जुन सागर पहली मंजिल
२ तुंगभद्रा
३ कोसी
४ दामोदर घाटी निगम
५ ककरापार
६ हीराकुड
७ महानदी डेल्टा
८ भाखड़ा नंगल
९ हरीके सेतुबंध
१० मयूराक्षी
११ चम्बल पहली मंजिल
१२ भद्रा
१३ माचकुंड
१४ कोयना
१५ परियार
१६ रिहन्द
दूसरी योजना की परियोजनाएं
१८ माही दूसरी मंजिल
१९ नर्मदा
२१ पश्चिम वर्ती नदियें
२२ तावा
२३ कंसावती
२४ चम्बल दूसरी मंजिल
२६ दुर्गापुर
२७ कोरबा
२८ कुंडा
२९ शरावती
३० यमुना

पुनर्गठित राज्यों का क्षेत्रफल और जनसंख्या

१९५१ की गणनानुसार	क्षेत्रफल १००० वर्ग मीलों में	जनसंख्या हजारों में
आन्ध्र प्रदेश	१०६	३१,२६०
आसाम	८५	९,०४४
बिहार	६६	३८,९२६
बम्बई	१९१	४८,२६५
केरल	१५	१३,५४९
मध्य प्रदेश	१७१	२६,०७२
मद्रास	५०	२९,९७५
मैसूर	७४	१९,४०१
उड़ीसा	६०	१४,६४६
पंजाब	४७	१६,१३५
राजस्थान	१३२	१५,९७१
उत्तर प्रदेश	११३	६३,२१६
पश्चिमी बंगाल	३५	२६,१६०
केन्द्रीय प्रशासन के क्षेत्र	२८	४,१२२
★ योग	१,१७४	३५६,७४२

★ इस योग में सिकिम सम्मिलित नहीं है।

जनसंख्या की घनता

	क्षेत्र फल (०००)	जनसंख्या (०००)	प्रति वर्ग मील
भारत	१२६९	३५६८२९	३१२
आस्ट्रेलिया	२९७४	८९९२	३
कैनाडा	३६९०	१२८८३	३
फ्रांस	५५०	४२७३४	१९२
स्विट्जरलैंड	४१	४२६५	२८८
ग्रेट ब्रिटेन	९४	४८९९८	७१३
सं. अ. अमेरिका	३५५७	१५४२३३	४१
साम्यवादी रूस	२२२७०	१९२०९४	२३

भारत की जनसंख्या प्रतिवर्ग मील कुछ विदेशों से बहुत कम है, तो कुछ देशों से बहुत अधिक। विभिन्न राज्यों में भी इसकी घनता में बहुत अन्तर है। दिल्ली में ३०१७ प्रति वर्ग मील है तो अण्डमान निकोबार द्वीपों में १०। ट्रावनकोर कोचीन में १०१५, मद्रास में ५९२ और बिहार में ५७२ है। इस तालिका से यह भी स्पष्ट होगा कि भिन्न-भिन्न देशों की आर्थिक समस्याएं अलग-अलग हैं अतः उनकी अर्थ-नीति भी पृथक्-पृथक् होगी।

जन-संख्या में वृद्धि

	जन संख्या लाखों में	वृद्धि लाखों में	प्रतिशत
१९०१	२३५.५	—	[illegible]
१९११	२४९.०	१३.५	[illegible]
१९२१	२४८.१	—०.९	[illegible]
१९३१	२७५.५	२७.४	[illegible]
१९४१	३१२.८	३७.३	[illegible]
१९५१	३५६.९	४४.१	[illegible]

जन संख्या जिस तेजी से बढ़ रही है, वह देश के नेताओं व अर्थ शास्त्रियों को भयभीत कर रही है। ... सात वर्षों में तो यह बढ़कर ३८ करोड़ जा पहुँची है। वस्त्र, दूध, अन्न का उत्पादन, मकानों की समस्या, बेकारी की भीषण समस्या आदि का हल करने के लिए कितना घोर परिश्रम करना पड़ेगा ?

विभिन्न वृत्तियों से आजीविका

	जनसंख्या (०००)	प्रतिशत
कृषि, पशु व मछली पालन तथा वन	१०३६४०	[illegible]
खाने	७८०	[illegible]
कारखानों से	२९९९	[illegible]
छोटे उद्योग	११५२१	[illegible]
डाक तार टेलीफोन	१९५	[illegible]
रेलवे	११७८	[illegible]
बैंक और बीमा	१४७	[illegible]
व्यापारिक यातायात	९५३३	[illegible]
डाक्टर वकील आदि विभिन्न पेशे व कला	६४२५	[illegible]
सरकारी नौकरी (प्रबंध)	३८८६	[illegible]
घरेलू नौकरी	२९४७	[illegible]
योग	१४,३२,२१	१००.०

कृषि पर सबसे अधिक भार है, इसे अन्य क्षेत्रों, विशेषतः उद्योग में लगाना देश की प्रमुख समस्या है।

विभिन्न देशों में औसत आयु

भारत	३२.४	मिश्र	३१
जापान	४३	ग्रेट ब्रिटेन	६५
सं. रा. अमेरिका	६८	न्यूजीलैंड	६०

[क्रमशः

संसार की जनसंख्या का वितरण

55 %
14 %
8 %
15 %
7 %
अमरीका
अफरीका
यूरोप
आस्ट्रेलिया
रूस
एशिया
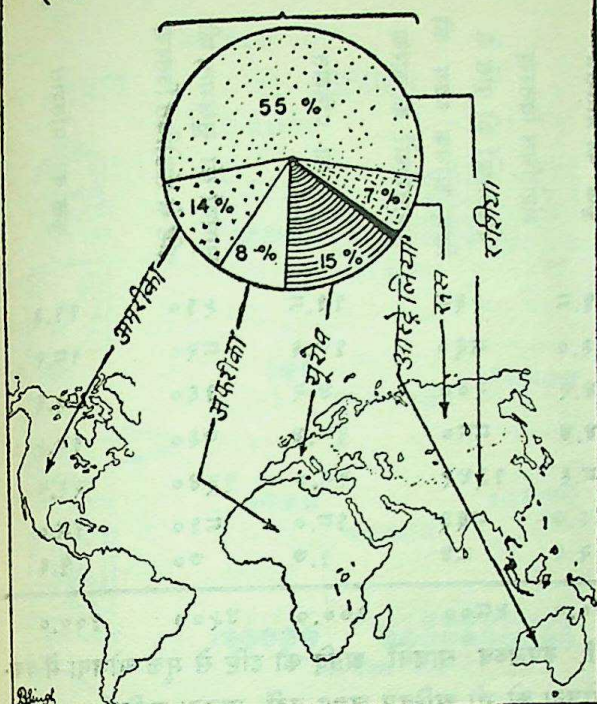
योजना एवं हमारा अर्थशास्त्र

ग्राफ़ों, चार्टों व तालिकाओं में

'सम्पदा' के इन कुछ पृष्ठों में ग्रॉफ, चार्ट और तालिकाएं दी गई हैं। अनेक तालिकाओं के नीचे कुछ फुटनोट भी दिये गये हैं, जिनसे अर्थशास्त्र में रुचि लेने वाले यह जान पाएंगे कि कैसे इन तालिकाओं का अध्ययन करके परिणाम निकाले जाते हैं। आशा है, 'सम्पदा' के पाठक इस सामग्री को उपयोगी पावेंगे तथा इसमें रस लेंगे।

— सम्पादक

इन पृष्ठों के विषय—

योजना के लक्ष्य व प्रगति—जन संख्या—उद्योग की उन्नति—कृषि व सिंचाई—विदेशी व्यापार राष्ट्रीय आय — विदेशी मुद्रा -- मंहगाई

द्वितीय विकास योजना के प्रमुख मदों में व्यय का क्रमिक वितरण

[करोड़ रुपयों में]

	वितरण जो मूल योजना में किया गया	कुल का प्रतिशत	संशोधित वितरण योजनाओं की पूर्ति के लिए अधिक व्यय की संभावनाओं के कारण	कुल का प्रतिशत	साधनों की सुलभता की दृष्टि से संशोधित वितरण	कुल का प्रतिशत
१. कृषि विकास	५६८	११.८	५६८	११.८	५१०	११.३
२. सिंचाई और बिजली	९१३	१९.०	८६०	१७.९	८२०	१८.२
३. गांव और लघु उद्योग	२००	४.२	२००	४.२	१६०	३.६
४. उद्योग और खानें	६९०	१४.४	८८०	१८.४	७९०	१७.५
५. यात्रा और आवागमन	१३८५	२८.९	१३४५	२८.०	१३४०	२९.८
६. सामाजिक सेवाएं	९४५	१९.७	८६३	१८.०	८१०	१८.०
७. विभिन्न	९९	२.०	८४	१.७	७०	१.६
योग	४८००	१००.०	४८००	१००.०	४५००	१००.०

इस तालिका से यह स्पष्ट है कि अपनी आकांक्षाओं, उपलब्ध साधनों आदि की दृष्टि से मूल योजना में क्या परिवर्तन किये गये, पर अभी ४५०० करोड़ रु० की योजना को भी अन्तिम लक्ष्य नहीं मानना चाहिए।

संशोधित योजना के कुछ मुख्य मद

(करोड़ रु०)

	मूल योजना	संशोधित योजना	तीन वर्षों में कुल व्यय १९५६-५९
रूरकेला, भिलाई, दुर्गापुर	३५०.००	५१०.००	३४३.६८
दक्षिणी लिगनाइट योजना	५२.००	६१.००	१६.२५
सिंदरी खाद	७.००	८.४०	६.१८
नांगल खाद	२२.००	२२.००	८.१०
हिन्दुस्तान शिप-यार्ड	९.८०	९.८०	४.००
भारी विद्युत संयंत्र	२०.००	१६.६५	२.४९
हिन्दुस्तान मशीन टूल	२.००	२.३६	२.३६
हिन्दुस्तान केबल	०.५०	०.६०	.५०
रूर केला खाद	८.००	१६.००	—
उद्योग वित्त निगम	१३.५०	२२.२५	१८.००
मैसुर अयरन वर्क्स	५९५	अप्राप्त	०.३८
उद्योग-निगम	५५.००	५३.००	[illegible]
राज्य उद्योग योजना	२१.०९	२१.०९	[illegible]
कुल (अन्य योजनाएं सम्मिलित)	५९१.४४	७५०.५० ❀	४२०.[illegible]

❀ अप्राप्त मदों के अंक सम्मिलित नहीं है।

मुख्य मदों में स्रोतोंका वितरण

	मूल योजना	प्रतिशत	संशोधित योजना	प्रतिशत
कृषि	५६८	११.८	५१०	
सिंचाई व बिजली	९१३	१९.०	८२०	
ग्राम व लघु उद्योग	२००	४.२	१६०	
उद्योग व खनिज	६९०	१४.४	७९०	
यातायात	१३५०	२८.९	१३.४०	
समाज कल्याण	९४५	१९.७	८१०	
विविध	९८	२.०	७०	
योग	४८००	१००	४५००	

प्रथम पंचवर्षीय योजना के प्रथम प्रारूप
उत्पादन के अनुमानित लक्ष्य
निजी क्षेत्र)
उद्योग
उत्पादन
१९५१-५२
डीजल इंजन
हजार में
सीमेंट
दस लाख टनों में
मिल के वस्त्र
अरब गजों में
सुपर फास्फेट
दस हजार टनों में
गंधक का तेजाब
दस हजार टनों में
कागज और गत्ता
दस हजार टनों में
तैयार इस्पात
लाख टनों में
शक्कर
लाख टनों में
४८ अरब रु०
१९५६ में संशोधित योजना का आनुमानिक व्यय
४३ अरब रु०
दूसरी योजना की पूर्वरेखा का आनुमानिक व्यय
प्रथम योजना का व्यय
द्वितीय योजना के प्रारंभ में साधनों का वितरण
८०० करोड़
४०० करोड़
४०० करोड़
१२०० करोड़
१२०० करोड़
८०० करोड़
वर्तमान करों से
रेलवे, प्राविडेण्ट फण्ड आदि से
अनिश्चित
बाजार से ऋण
घाटे की व्यवस्था
मध्य भारत में चम्बल-योजना द्वारा सींचा जाने वाले क्षेत्र
=२४ मील
कोटा
चम्बल की मुख्य नहरें
राजमार्ग
रेलवे मार्ग
नदियां
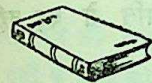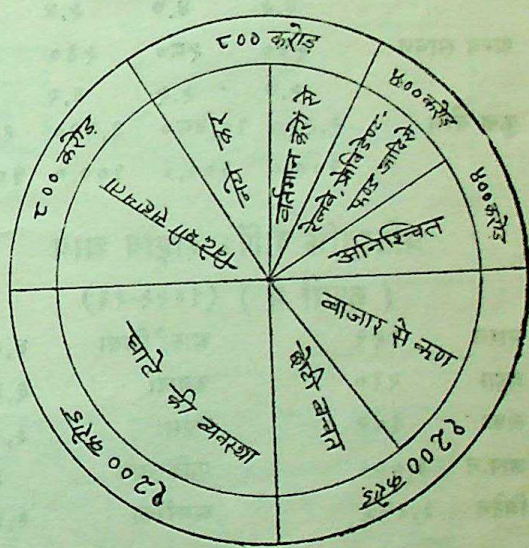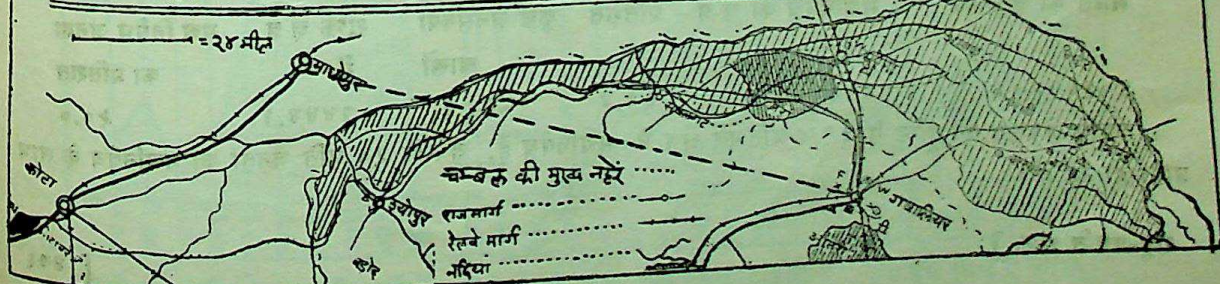
राष्ट्रीय आय के स्रोत (करोड़ रु०)

	१९५०-५१	५३-५४	५४-५५	५५-५६
कृषि	४,८९०	५,३१०	४,३५०	४,२२०
	५१.३	५०.७	४५.२	४३.७
बड़े उद्योग, खानें	६२०	७९०	८८०	९१०
	६.५	७.६	८.८	९.४
छोटे उद्योग	९१०	९८०	९९०	९६०
	९.६	९.३	१०.०	१०.०
रेलवे	२२०	२४०	२६०	२६०
	२.३	२.३	२.७	२.९
बैंक बीमा	७०	८०	८०	८०
	०.७	०.८	०.८	०.८
व्यापार यातायात	१,४००	१,४८०	१,४७०	१,४९०
	१४.७	१४.१	१५.३	१५.५
विभिन्न पेशे	४७०	५३०	५४०	५६०
	४ ९	५.०	५.६	५.८
सरकारी नौकरी	४३०	४९०	५२०	५६०
	४.५	४.७	५.४	५.८
अन्य साधन	५४०	५८०	५९०	५९०
	५.७	५.५	६.२	६.१
कुल योग	९,५५०	१०,४८०	९,६२०	९६५०
	१००.०	१००.०	१००.०	१००.०

राज्यों के योजना-लक्ष्य व्यय में कमी

(लाख रु० में)

	योजना में अनुमानित व्यय	प्रथम तीन वर्षों में व्यय
आन्ध्र	१७४,७७	८१,[illegible]
आसाम	५७,९४	३०,[illegible]
उड़ीसा	९९,९७	५१,[illegible]
उत्तरप्रदेश	२५३,१०	१३३,[illegible]
केरल	८७,००	४०,[illegible]
जम्मू काश्मीर	३३,४२	१४,[illegible]
पंजाब	११२,१८	६२,[illegible]
बंगाल पश्चिमी	१५७,२७	८३,[illegible]
बम्बई	३५०२२	१७५[illegible]
बिहार	१९०,२२	८३[illegible]
मद्रास	१५२२१	१०८[illegible]
मध्यप्रदेश	१९०,९	७५[illegible]
मैसूर	१४५,१३	५५,[illegible]
राजस्थान	१०५२७	५३[illegible]

इस तालिका से यह स्पष्ट है कि प्रथम तीन वर्षों में नियत लक्ष्यों का ६० प्रतिशत व्यय होना था, परन्तु उतना हो नहीं सका अर्थात् योजना नियत गति से बढ़ नहीं रही। कहीं शिथिलता अवश्य है।

प्रतिव्यक्ति वार्षिक राष्ट्रीय आय

(रुपयों में) (१९५५-५६)

भारत	२५२	आस्ट्रेलिया	४,९१३
ब्रह्मा	२१०	कनाडा	६,३५६
लंका	६०२	फ्रांस	३,९१०
जापान	१,००९	पाकिस्तान	३२५
ब्रिटेन	३,९८३	अमरीका	९,३३५

देहातों व शहरों के निवासी

	जनता का प्रतिशत देहात	शहर
१९२१	८८.६	११.४
१९३१	८७.९	१२.१
१९४१	८६.१	१३.९
१९५१	८२.७	१७.३

मद्यनिषेध का क्षेत्र (वर्ग मील)

भारत का क्षेत्रफल	मद्यनिषेध का क्षेत्र	प्रतिशत	कुल जनसंख्या लाखों में	शुष्क क्षेत्र में	मद्य निषेध जनता का प्रतिशत
१०५६४५७	४१६३०००	३९.४	२८८६.३	१४४४.१	५०.०

यद्यपि क्षेत्रफल की दृष्टि से ३९.४ प्रतिशत क्षेत्र में मद्यनिषेध है, तथापि ५० प्रति जनता को मद्यनिषेध के लाभ प्राप्त हो रहे हैं।
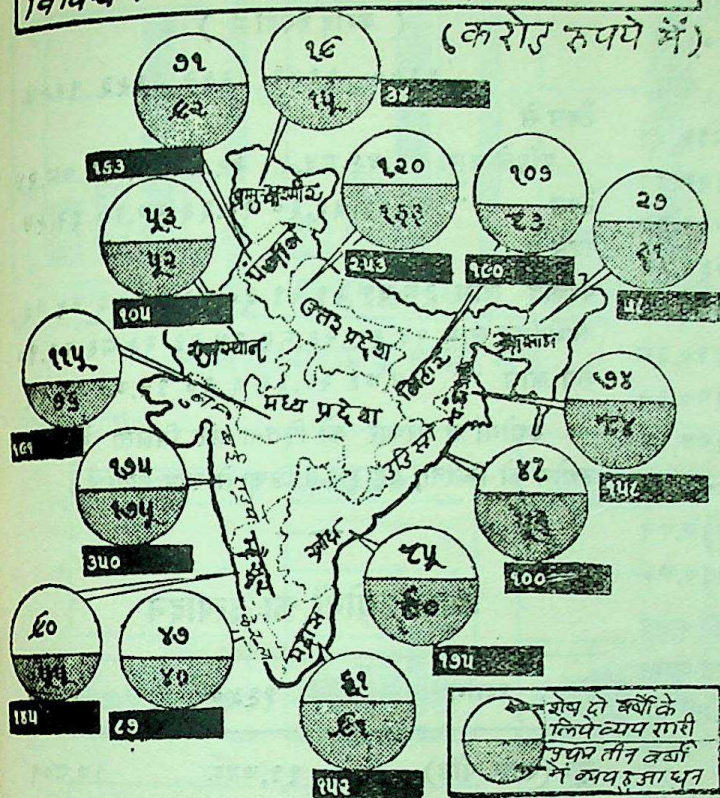
इस चित्र की तालिका पृष्ठ ४७६ में दी गई है। काले अंश तीन वर्षों के व्यय को प्रकट करते हैं, सफेद बाकी दो वर्षों के व्यय को।
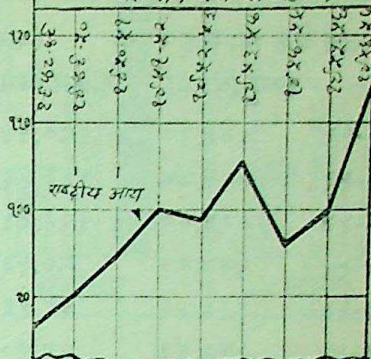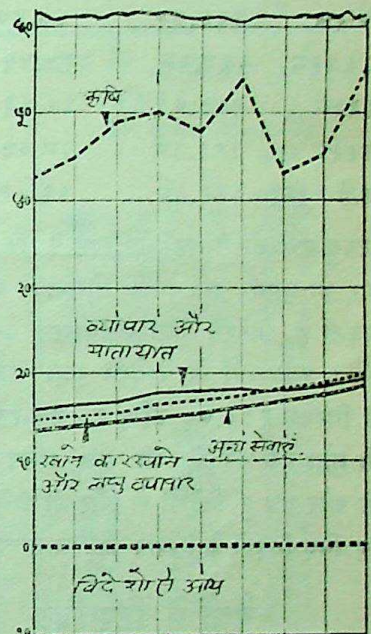
स्वाधीनता के बाद भारत की प्रगति
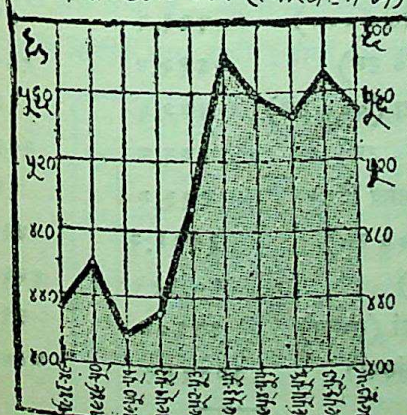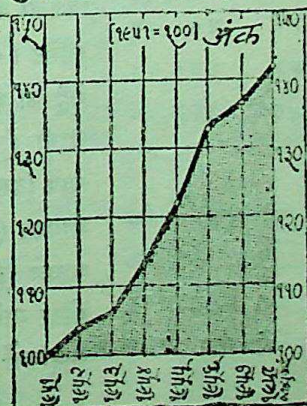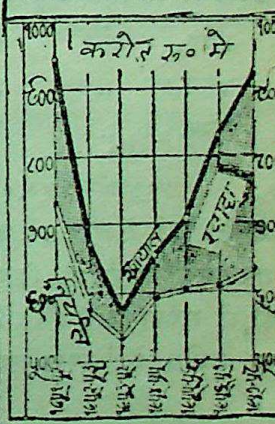
स्वाधीनता प्राप्ति के बाद के वर्षों में हम कहां बढ़े और कब कितना पीछे हटे, यह इस चित्र से स्पष्ट होगा। अन्न का उत्पादन बढ़कर गिर गया है, निर्यात गिरते जा रहे हैं।

भारत की सुरक्षित विदेशी मुद्रा

रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया (करोड़ रु०)

वर्ष	इश्यू विभाग	बैंकिंग विभाग	योग
१९५१-५२	६२५.२७	१८७.१४	८१२.४१
१९५२-५३	५६४.४०	१३३.५६	६९७.९६
१९५३-५४	५९४.०२	१२३.३१	७१७.३३
१९५४-५५	६४८.८१	८७.५३	७३६.३४
१९५५-५६	६५६.५२	६६.९६	७२३.४८
१९५६-५७	५४५.६१	६४.७७	६१०.३८
१९५७-५८	३२९.६५	४०.४७	३७०.१२
अप्रैल १९५८	२२४.५८	५०.४१	२७४,९९
मई १९५८	२०३.७१	४९.१३	२५२.८४
जून १९५८	१९९.६८	१८.०४	२१७.७२
४ जुलाई '५८	१९९.६८	११.०२	२१०.७०

उपर्युक्त अंकों से यह बात स्पष्ट है कि देश की मुख्य समस्या, जो हमारी सब भावी योजनाओं को अस्त-व्यस्त कर सकती है, विदेशी मुद्रा में निरन्तर वेग से होती हुई कमी है। आठ वर्षों में विदेशी मुद्रा ८३२.४० करोड़ रु० से गिरकर २१०.७० करोड़ रु० तक रह गई। यह विदेशी मुद्रा एक वर्ष से भी कम समय में समाप्त हो जायगी और तब ? विदेशों से और भी अधिक ऋण लेने के लिए गिड़-गिड़ाने के सिवाय कोई चारा नहीं रहेगा।

बैंकों में डिपाजिट

१९५७ के अन्त तक लोगों के निजी डिपाजिट बैंकों में ५४४.०२ करोड़ थे, जो निम्न क्रम से बढ़ते रहे हैं।

१९५१	३७७.३५ करोड़	१९५४	४००.०४
१९५२	३८२.५८ ,,	१९५५	४४०.६३
१९५३	३८७.३४ ,,	१९५६	४८८.००

१९५७—५५०.०२

बैंकों में डिपॉजिटों में वृद्धि इस बात की सूचक है कि जनता के पास रुपया बच रहा है, किन्तु अधिक डिपॉजिट इस बात की भी सूचना देते हैं कि लोग बैंक में डिपाजिट की अपेक्षा उद्योग में रुपया लगाने में कम लाभ समझते हैं।

औद्योगिक लाभ का वितरण

(करोड़ रुपयों में)

	१९५०	१९५१	१९५२	१९५३	१९५[illegible]
टैक्स से पहिले लाभ	६३.४५	८४.५१	५५.२२	६५.६६	७८.[illegible]
टैक्स ...	२५.०४	३३.३०	२४.३९	२७.10	३२.[illegible]
टैक्स के पश्चात् लाभ	३८.४१	५१.२१	३०.८३	३८.५९	४५.[illegible]
विभाजित लाभ	२३.६२	२६.८९	२४.२३	२५.८९	२९.[illegible]
शेष लाभ ...	१४.७९	२४.३२	६.६०	१२.७०	१६.[illegible]

उद्योगों से सरकार को कितना अंश मिलता है और उद्योग को कितना, यह इस तालिका से स्पष्ट होता है।

—

प्रमुख उद्योगों का उत्पादन

उद्योग	१९५०	१९५[illegible]
सूत (लाख पौंड)	११,७४८	१७,८०[illegible]
सूती कपड़ा (लाख गज)	३६,६४८	५३,१[illegible]
जूट का माल (००० टन)	८३५.२	१०२९.[illegible]
ऊन (००० पौंड)	१८०००	२७७[illegible]
कच्चा लोहा (००० टन)	१५६२.४	१७८९.[illegible]
इस्पात (००० टन)	१००४.४	१३४६.[illegible]
डीजल इंजन (संख्या)	४५९६	१६५१[illegible]
सोना (औंस)	१९६९२०	१७६१[illegible]
बिजली के पंखे (०००)	१९३.२	५२४.[illegible]
सीमेंट (००० टन)	२६१२.४	५६०१.[illegible]
गेहूं का आटा (००० टन)	४७७.६	६५५.[illegible]
चीनी (००० टन)	.९७६.८	२०३८.[illegible]
चाय (दस लाख पौंड)	६१३.२	६६६.[illegible]
कोयला (००० टन)	३१९९.२	४३५३[illegible]
कागज (टन)	७०,१५२	१२९९[illegible]
मोटर गाड़ियां (संख्या)	१४६०४	३१९[illegible]
साइकिलें (संख्या)	१०३१५२	८००८[illegible]

—

प्रमुख उद्योगों के उत्पादन के नये लक्ष्य

इस्पात | अलुमीनियम | कास्टिक सोडा | सीमेंट | चीनी
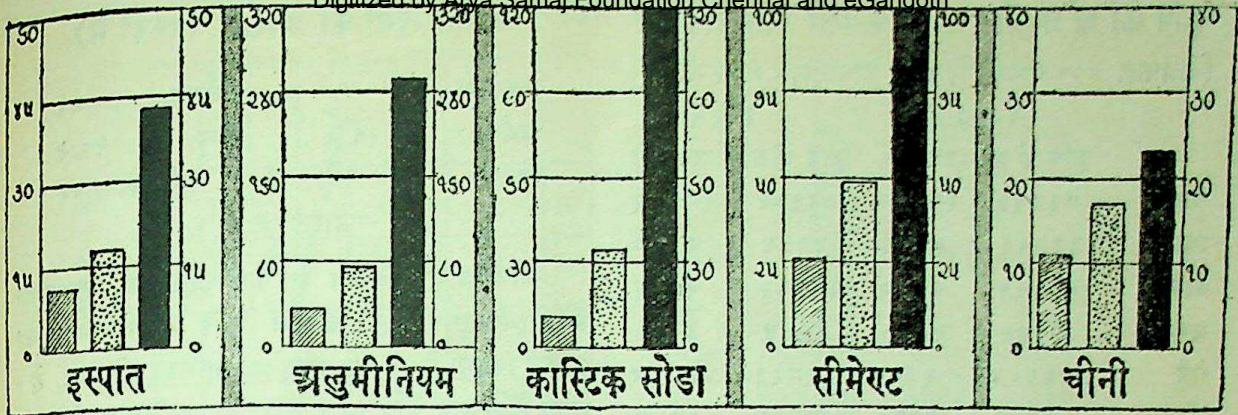
उद्योग-उत्पादन के सूचक अंक

वस्त्र के सिवाय प्रायः सभी उद्योगों का उत्पादन बढ़ा है ।
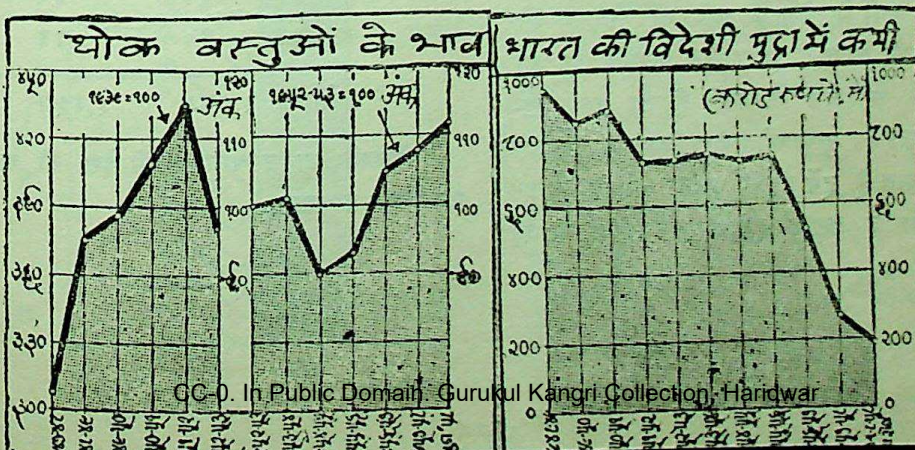
कृषि का क्षेत्र और प्रमुख फसलों का उत्पादन

(क्षेत्रफल ००० एकड़ों में और उत्पादन ००० टनों में)

	१९५१		१९५६-५७	
	कृषि क्षेत्र	उत्पादन	कृषि क्षेत्र	उत्पादन
चावल	७३७१३	२०९६४	७८१७४	२८१४२
ज्वार	३९३९९	५९८१	४१३४	७४२७
बाजरा	२३५२२	२३०९	२७५४२	२९२६
मक्का	८१७९	२०४३	९२४४	३०२०
गेहूँ	२३४०४	६०८५	३२८९१	९०६८
जौ	७८०७	२३३०	८५९४	२७४४
अन्य अनाज मिलाकर				
कुल अनाज	१९३२०५	४२८८८	२१५६४२	५७२५१
चना	१६८७६	३३३४	२३९९०	५९३०
तूर एवं दाल	२९५१८	४९५३	३००५४६	५५०५
कुल खाद्य पदार्थ	२३९५९९	५११७५	२७२९३७	६८६८६
आलू	६१७	१६८५	७०२	१६७४
गन्ना	४७९२	६०६६०	५०१९	६६८९०
काली मिर्च	२०२	२३	२३४	३२
लाल मिर्च	१३८५	३४२	१४५०	३५४
तमाखू	७१३	२०६	१०२२	३०६
मूंगफली	१२१५१	३१४२	१३१०१	४०८६
रूई	१६२०१	३१३३	१९८४३	४७२३
जूट	१९५१	४६७८	१८८३	४२२४
चाय	७८२	६४१	७७९×	६४९
रबर	१४८	३२	१७४❀	५०
नारियल	१५४५	३३३६	१५९७❀	४०९७

× १९५४-५५ ❀ १९५५-५६

पिछले पांच वर्षो में देश में कृषि का क्षेत्रफल और उत्पादन प्रायः सभी खाद्य व व्यापारिक फसलों का बढ़ा है, परन्तु जूट के उत्पादन में कमी चिन्ता का विषय है, वह विदेशी मुद्रा का मुख्य स्रोत है। जहां यह उत्पादन वृद्धि संतोष की बात है, हमें यह न भूलना चाहिए कि इन ६ वर्षों में २॥। या ३ करोड़ हमारी जनसंख्या भी बढ़ गई है।

औसत खेतों का आकार (एकड़ों में)

डेनमार्क	४०	हालैण्ड	२९
जर्मनी	२१.५	फ्रांस	२०.५
ब्रिटेन	२०	सं. रा. अमेरिका	१४५

भारत ७.५

आजकल एक किसान के पास जोत के आकार की समस्या विचाराधीन है। विभिन्न देशों में औसत खेतों का आकार कितना है, यह उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है। भारत में औसत क्षेत्र बहुत छोटे हैं, अधिकांश के पास ५ एकड़ से भी कम जोत के खेत हैं।

विभिन्न उद्योगों द्वारा बिजली का उपभोग

(दस लाख एकड़)

उद्योग	१९५०	१९५३	[illegible]
रुई और कपड़ा	१,०५४	१,४१२	[illegible]
लोहा और इस्पात	५४८	५६१	[illegible]
सीमेंट	२९८	४२५	[illegible]
जूट	३१२	३२६	[illegible]
कोयले की खानें	२६७	३०७	[illegible]
फर्टलाइज़र	३०	२७०	[illegible]
कागज	१८६	२४०	[illegible]
एल्यूमूनियम	११२	१०७	[illegible]
सोना	१०२	१०५	[illegible]
कैमिकल्स	५५	७७	[illegible]
चीनी	४३	५२	[illegible]
तांबा	३८	२९	[illegible]
ऊन	३०	३२	[illegible]
साबुन	१०	११	[illegible]
योग	३,०८५	३,९५४	[illegible]

बिजली का उपयोग किसी देश की आर्थिक प्रगति पर प्रकाश डालता है।
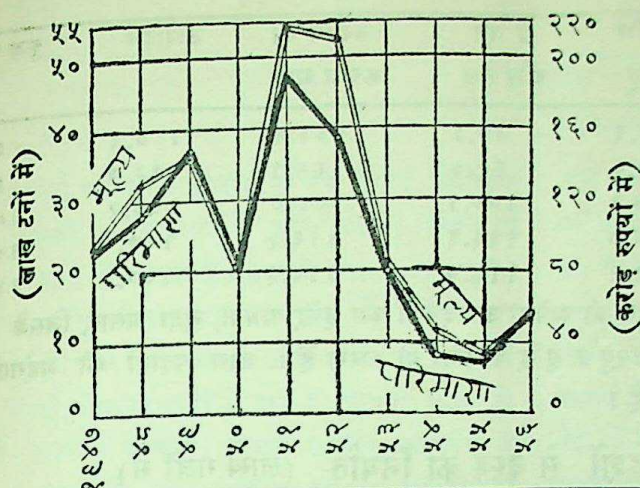
गत दस वर्षों में विदेशी अन्न का आयात
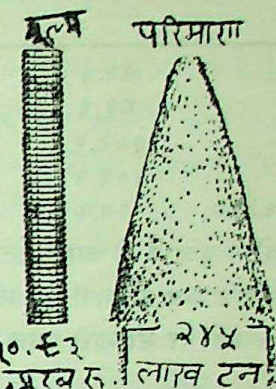
द्वितीय पंचवर्षीय योजना में कृषि उत्पादन के लक्ष्य—

वस्तुओं के थोक भावों में उतार-चढ़ाव (आधार १९५२-५३ = १००)
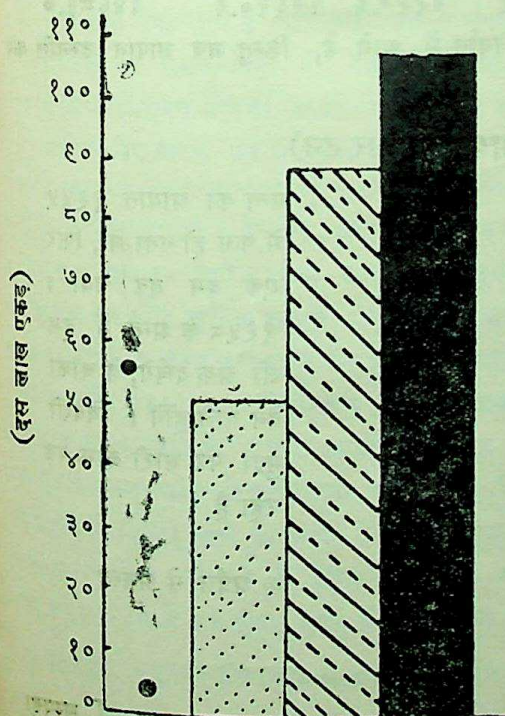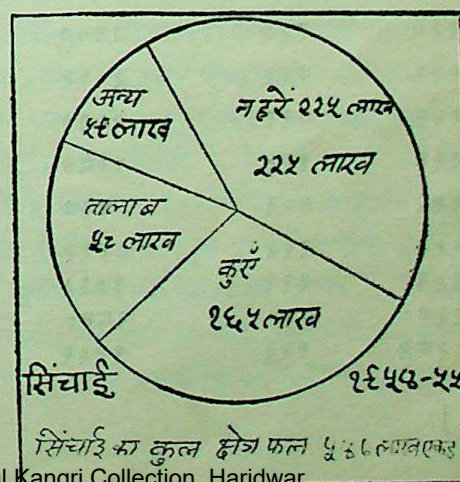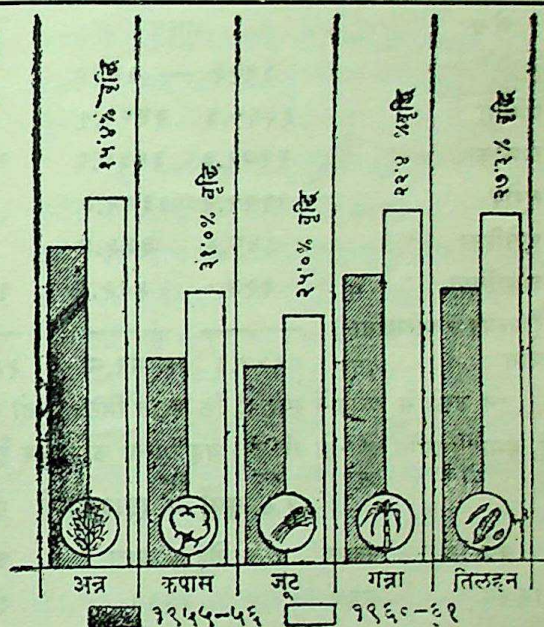
	खाद्य पदार्थ	मद्य और तम्बाखू	ईंधन और तेल	उद्योग का कच्चा माल	उत्पादन	कुल पदार्थ
१९५४-५५	९४.६	९०.६	९७.१	१०१.९	१००.६	९७.१
१९५५-५६	८६.६	८१.०	९५.०	९९.१	९९.७	९२.१
१९५६-५७	१०२.२	८४.३	१०४.१	१०६.०	१०६.२	१०५.१
१९५७-५८	१०६.४	९४.०	११३.६	११६.५	१०७.९	१०८.१
१२ जुलाई १९५८	११७.९	९२.२	११५.७	११६.५	१०७.५	११४.१

भावों में वृद्धि के दो कारण होते हैं—मांग की अपेक्षा उत्पादन में कम वृद्धि अथवा, मुद्रा प्रसार, जिसके कार मुद्रा की क्रय-शक्ति कम हो जाती है। भावों में उपर्युक्त वृद्धि के दोनों ही कारण हैं। खाद्य पदार्थों की महंगाई, वस्तुओं की कीमतों पर भी भारी प्रभाव डालती हैं।

विभिन्न वस्त्र-उत्पादक देशों से वस्त्र का निर्यात (लाख गजों में)

क्षेत्र	भारत		इंगलैंड		जापान	
	१९५५	१९५७	१९५५	१९५७	१९५५	१९५७
एशिया	३३६७.३	२४२२.१	५१५.२	३९६.९	७६५३.६	८०१३.४
अफ्रीका	२२७२.३	३१३७.६	२५९०.४	२१२२.३	८९७.४	१३२८.३
यूरोप	११२२.२	१३९२.५	५३५.८	५००.७	१३२६.३	२२५८.७
अमेरिका	३४८.९	३३५.४	३२९.५	२६२.४	२१७३.८	२०७७.१
ओशनिया	५५४.०	५९५.२	१३९०.७	१०६६.५	५६९.५	१००५.७
(अन्य भी सम्मिलित)	———	———	———	———	———	———
योग	८१५४.९	७८८२.८	५५४५.३	४५५७.६	१२६२०.६	१४६८३.७

इन अंकों से दो बातें स्पष्ट हैं कि भारत ब्रिटेन से तो बस्त्र-निर्यात में आगे है, किन्तु जब जापान उन्नति क रहा है, हमारे निर्यात कम हो रहे हैं। यह चिन्ता का विषय है।

१० वर्षों में खाद्यान्नों का आयात (हजार टन)

वर्ष	चावल	गेहूं व आटा	अन्य	कुल
१९४८	८६७	१३११	६६३	२८४१
१९४९	७६७	२२००	७३९	३७०६
१९५०	३५३	१४०७	४६५	२१२५
१९५१	७४९	३०१५	९६१	४७२५
१९५२	७२२	२५११	६३१	३८६४
१९५३	१७५	१६८४	१४४	२००३
१९५४	६०३	१९७	८	८०८
१९५५	२६५	४३५	—	७००
१९५६	३२५	१०९५	—	१४२०
१९५७	७४०	२८४०	—	३५६०
१९५८❀	२२३	१२९२	१२५	

अन्न का आयात १९५५ में कम हो गया था, फिर एक दम बढ़ गया। १९५८ के अन्त में हम जो अंक देखेंगे, वे चौंका देने वाले होंगे। विदेशी मुद्रा पर भारी बोझ पड़ रहा है!

❀ अप्रैल से अगस्त

विविध राज्यों में

अन्न-उत्पादन की प्रगति

आयोजन आयोग ने हाल ही में एक रिपोर्ट प्रकाशित की है, जिसमें विभिन्न राज्यों में योजनाओं की प्रगति का संक्षिप्त विवरण दिया गया है। इस में बताया गया है कि आयोजना के लिए कितना धन रखा गया है, प्रत्येक राज्य में कितना धन खर्च किया जाएगा और विभिन्न राज्यों में खेती, सिंचाई, बिजली आदि के बारे में कितना काम हो चुका है। राज्यों में योजनाएं चलाने के लिए आमदनी के क्या-क्या साधन हैं और केन्द्रीय सरकार उन्हें कितनी सहायता कर रही है।

आंध्र—आंध्र प्रदेश में दूसरी आयोजना की अवधि में १ अरब ७४ करोड़ ७७ लाख रु० खर्च किये जाएंगे। पहले तीन वर्षों में ८९ करोड़ ५७ लाख रु० से अधिक

दूसरी पंचवर्षीय योजना में अन्न का उत्पादन बहुत महत्वपूर्ण अंग है। इसी पर देश की कृषि-व्यवस्था निर्भर है। परन्तु विविध राज्य इसमें कहां तक सफल हुए हैं और कहां तक वे अपने प्रयत्नों में सफल नहीं हो सके हैं, इसका संक्षिप्त विवेचन योजना आयोग की रिपोर्ट के आधार पर पाठक इन पंक्तियों में पढ़ेंगे।

खर्च नहीं किया जाएगा। केन्द्रीय सरकार राज्य को ५५ करोड़ १० लाख रु० देगी। दूसरी आयोजना में १४ लाख ८६ हजार टन और अधिक अनाज पैदा किया जाएगा। १९५६-५७ में १ लाख ४८ हजार टन अधिक अनाज पैदा हुआ था और १९५७-५८ में २ लाख १७ हजार टन और पैदा होने का अनुमान है। दूसरी आयोजना में ४ लाख ८७ हजार एकड़ जमीन में दरमियानी और बड़ी सिंचाई योजनाओं से सिंचाई करने का लक्ष्य है। इसमें से ८,००० एकड़ जमीन में १९५६-५७ से सिंचाई शुरू हो गयी है और १९५७-५८ में ३९ हजार एकड़ में होने लगेगी।

आसाम—दूसरी आयोजना में आसाम में ५७ करोड़ ९४ लाख रु० खर्च किये जाएंगे। पहले तीन वर्षों में ३१ करोड़ ४८ लाख रु० खर्च किया जाएगा, जिसमें से १६ करोड़ ३० लाख रु० केन्द्रीय सरकार देगी। दूसरी आयोजना में वहां ३ लाख ७८ हजार टन और अनाज पैदा करने का लक्ष्य रखा गया है। १९५६-५७ में ३४ हजार टन अधिक अनाज पैदा हुआ और १९५७-५८ में ८७ हजार टन और पैदा होने का अनुमान है। छोटी सिंचाई योजनाओं से १२ लाख १२ हजार एकड़ अतिरिक्त जमीन में सिंचाई करने का लक्ष्य है। इसमें से पहले दो वर्षों में ३ लाख ९७ हजार एकड़ जमीन में सिंचाई की सुविधाएं पहुँचाई जा चुकी हैं।

बिहार—बिहार में दूसरी आयोजना में १ अरब ९० करोड़ २२ लाख रु० खर्च किया जायगा। इसमें से १९ करोड़ १५ लाख रु० कोसी (सिंचाई) और ७ करोड़ ८३ लाख रु० दामोदर घाटी निगम (बिहार के क्षेत्र में) की योजनाओं पर खर्च होगा। पहले तीन वर्षों में ८३ करोड़ रु० खर्च किया जाएगा, जिसमें से ४३ करोड़ ४० लाख रु० केन्द्रीय सरकार देगी। वहां दूसरी आयोजना में १५ लाख टन अतिरिक्त अनाज पैदा करने का लक्ष्य है। इसमें से ८४ हजार टन १९५६-५७ में पैदा किया गया और २ लाख ८५ हजार टन १९५७-५८ में पैदा होने का अनुमान है। १९५७-५८ तक बड़ी और दरमियानी सिंचाई योजनाओं द्वारा ३ लाख १० हजार एकड़ जमीन में सिंचाई होने लगी। इसमें नलकूप शामिल नहीं हैं। नलकूपों के द्वारा १ लाख १९ हजार एकड़ जमीन में सिंचाई होने लगी। दूसरी आयोजना में छोटी सिंचाई योजनाओं द्वारा ६७ लाख ४० हजार एकड़ जमीन में सिंचाई करने का लक्ष्य है। इसमें से १९५६ से १९५८ तक ६ लाख ५३ हजार एकड़ जमीन में सिंचाई करने का प्रबन्ध कर दिया गया है।

बम्बई—दूसरी आयोजना में बम्बई राज्य में ३ अरब ५० करोड़ २२ लाख रु० खर्च किया जाएगा। पहले तीन वर्षों में १ अरब ७५ करोड़ रु० खर्च किया जाएगा, जिसमें

से ७४ करोड़ २० लाख रु० केन्द्रीय सरकार देगी। दूसरी आयोजना में राज्य में १५ लाख १४ हजार टन अतिरिक्त अनाज पैदा करने का लक्ष्य है। इसमें से १९५६-५७ में १ लाख ५७ हजार टन अनाज पैदा किया गया और १९५७-५८ में १ लाख २८ हजार टन अनाज पैदा होने का अनुमान है। ६४ हजार एकड़ जमीन में सिंचाई करने का प्रबन्ध कर दिया गया है। इसमें से १९५७-५८ में २ हजार एकड़ जमीन में सिंचाई होने लगी। छोटी सिंचाई योजनाओं से १७ लाख ३० हजार एकड़ जमीन में सिंचाई करने का लक्ष्य है। इसमें से १९५६-५७ में ३२ हजार और १९५७-५८ में ८८ हजार एकड़ जमीन में सिंचाई होने लगी है।

केरल—दूसरी आयोजना में केरल राज्य की योजनाओं पर ८७ करोड़ रु० खर्च किये जाएंगे। पहले तीन वर्षों में योजनाओं पर ४० करोड़ रु० खर्च किया जाने वाला है, जिसमें से १७ करोड़ ५० हजार रु० केन्द्रीय सरकार देगी। दूसरी आयोजना में केरल के लिए अनाज के उत्पादन का लक्ष्य २ लाख ७६ हजार टन निर्धारित किया गया है। अनुमान है कि १९५७-५८ में ९ हजार टन अनाज पैदा किया जायगा।

१९५६-५७ में सिंचाई की बड़ी और मध्यम योजनाओं द्वारा ४५ हजार एकड़ जमीन की और सिंचाई की गयी। दूसरी आयोजना में सिंचाई की छोटी योजनाओं द्वारा २ लाख ९० हजार एकड़ जमीन की सिंचाई करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। १९५६-५७ में इन योजनाओं से २० हजार एकड़ जमीन की सिंचाई की गई और अनुमान है कि १९५७-५८ में २४ हजार एकड़ जमीन की सिंचाई होने लगी है। बिजली-योजनाओं के अन्तर्गत, दूसरी आयोजना में ८७ हजार किलोवाट बिजली तैयार करने का लक्ष्य है।

मध्यप्रदेश—पुनर्गठित मध्यप्रदेश पर, दूसरी आयोजना में १ अरब ९० करोड़ ८९ हजार रु० खर्च किया जाने वाला है। पहले तीन वर्षों में यानी १९५९ तक ७६ करोड़ १६ लाख रु० खर्च होगा, जिसमें से केन्द्रीय सरकार ने पहले दो वर्षों में ३१ करोड़ ७६ लाख रु० दिया है। आयोजना काल में मध्यप्रदेश को १४ लाख ६१ हजार अधिक टन अनाज पैदा करना है। इसमें से १९५६-५७ [illegible] ६१ हजार टन पैदा किया और १९५७-५८ में १ लाख ६९ हजार टन अनाज के पैदा होने का अनुमान है। दूसरी आयोजना में, मध्यप्रदेश में १० लाख ८५ हजार एकड़ जमीन की सिंचाई करने का लक्ष्य है। १९५७-५८ में ११ हजार एकड़ जमीन की सिंचाई की जा सकती थी, परन्तु कुल ७ हजार एकड़ जमीन की ही की गयी। सिंचाई की छोटी योजनाओं के अन्तर्गत, १९५६-५७ में [illegible] हजार एकड़ जमीन की सिंचाई की गयी और अनुमान है कि १९५७-५८ में १ लाख ५५ हजार एकड़ जमीन की सिंचाई की जाएगी। दूसरी आयोजना में इन योजनाओं द्वारा ७ लाख ७५ हजार एकड़ जमीन सींचने का लक्ष्य रखा गया है।

मद्रास—दूसरी आयोजना में, मद्रास की योजनाओं के लिए १ अरब ५२ करोड़ २६ लाख रु० की व्यवस्था है। इसमें से पहले तीन वर्षों में ९० करोड़ ८५ लाख रु० खर्च होंगे, जिसमें से ४५ करोड़ २० लाख रु० केन्द्रीय सरकार देगी। इस राज्य के लिए अनाज का निर्धारित लक्ष्य [illegible] लाख ३० हजार टन है। १९५६-५७ में २ लाख [illegible] हजार टन अधिक अनाज पैदा किया जा चुका है और अनुमान है कि १९५७-५८ में ३ लाख ६६ हजार टन अनाज पैदा किया जा सकेगा। सिंचाई योजनाओं द्वारा [illegible] लाख ६८ हजार एकड़ जमीनको लाभ पहुँचाने का लक्ष्य है। सिंचाईकी छोटी योजनाओं द्वारा ५ लाख ५ हजार एकड़ जमीन की सिंचाई की जाएगी, जिसमें से १९५६-५७ में २५ हजार एकड़ जमीन की और १९५७-५८ में [illegible] हजार एकड़ जमीन की सिंचाई की जाने का अनुमान है।

मैसूर—दूसरी आयोजना में, मैसूर राज्य के लिए १ अरब ४५ करोड़ १३ लाख रु० की व्यवस्था की गई है। इस में पहले तीन सालों में ५५ करोड़ रु० खर्च किए जाएगा, जिसमें से केन्द्रीय सरकार ३५ करोड़ ६० लाख रु० देगी। आयोजना की अवधि में मैसूर के लिए अनाज के अतिरिक्त उत्पादन का लक्ष्य ५ लाख ९१ हजार टन रखा गया है। इस राज्य ने १९५६-५७ में ५८ हजार टन अनाज अधिक पैदा किया। अनुमान है कि १९५७-५८ में ९१ हजार टन अनाज और पैदा होगा। आयोजना के पहले

[समस्या

दो सालों में १ लाख १७ हजार एकड़ जमीन की सिंचाई की छोटी योजनाओं के अन्तर्गत, ६६ हजार एकड़ जमीन की सिंचाई की गयी। इनके द्वारा ३ लाख १५ हजार एकड़ जमीन की सिंचाई करने का लक्ष्य है।

उड़ीसा—उड़ीसा राज्य की आयोजना पर ९९ करोड़ ९७ लाख रु० खर्च होना है, जिसमें से १६ करोड़ १२ लाख रु० हीराकुंड के पहले भाग पर ११ करोड़ ८८ लाख रु० चिपलीमा बिजली घर पर और १२ करोड़ ३५ लाख रु० महानदी डेल्टा की सिंचाई योजना पर खर्च होना है। पहले तीन सालों में ५१ करोड़ ५२ लाख रु० यानी करीब ५२ प्र० श० खर्च होगा। दूसरी आयोजना के पहले दो सालों में केन्द्र ने २६ करोड़ ६० लाख रु० दिया। राज्य ने दूसरी आयोजना में ७ लाख ५२ हजार टन अनाज अधिक पैदा करने का लक्ष्य रखा है। इसके अनुसार १९५६-५७ में ५८ हजार टन अनाज अधिक पैदा हुआ और १९५७-५८ में ६५ हजार टन (अनुमानित)। आयोजना की अवधि में कुल २ लाख ६८ हजार एकड़ में छोटे साधनों से सिंचाई का लक्ष्य रखा गया है। १९५६-५८ में इसमें से ३७ हजार एकड़ में सिंचाई हुई।

पंजाब—पुनर्गठन के बाद पंजाब राज्य की आयोजना का खर्च १ अरब ६२ करोड़ ६८ लाख रु० है। पहले तीन सालों में ९२ करोड़ रु० यानी करीब ५६ प्रतिशत खर्च होगा। आयोजना के पहले दो सालों में राज्य को केन्द्र से ३५ करोड़ ८० लाख रु० की सहायता मिली। राज्य ने १४ लाख ४० हजार टन अनाज अधिक पैदा करने का लक्ष्य रखा। इसमें से १९५६-५७ में १ लाख ३१ हजार टन अनाज अधिक पैदा हुआ और १९५७-५८ में १ लाख ५३ हजार टन अधिक होने का अनुमान है। पाँच वर्ष में राज्य में ४ लाख ८५ हजार एकड़ में छोटे साधनों से सिंचाई की जानी है। १९५६-५७ में ४ हजार एकड़ में और १९५७-५८ में १ लाख १९ हजार (अनुमानित) एकड़ में सिंचाई हुई। इसके अलावा, इन दो सालों में भाखड़ा-नंगल आदि अन्य योजनाओं से ४ लाख ४० हजार एकड़ अधिक क्षेत्र में सिंचाई हुई।

राजस्थान—पुनर्गठन के बाद राजस्थान की दूसरी पंचवर्षीय आयोजना का कुल खर्च १ करोड़ ५ लाख २७ हजार रु० रखा गया है। पहले तीन सालों में इसका करीब आधा यानी ५२ करोड़ १९ लाख रु० खर्च होना है। इस अवधि में केन्द्रीय सरकार से २८ करोड़ रु० मिला। यहां ८ लाख ७ हजार टन अनाज अधिक पैदा करने का लक्ष्य है। १९५६-५७ में ४८ हजार टन और १९५७-५८ में ७९ हजार टन (अनुमानित) अनाज अधिक पैदा हुआ। छोटे साधनों से, आयोजना के पाँच वर्षों में, राजस्थान में २ लाख ५ हजार एकड़ अतिरिक्त क्षेत्र में सिंचाई की जानी है। इसमें से १९५६-५७ में ५८ हजार एकड़ में और १९५७-५८ में ७० हजार एकड़ में सिंचाई की गयी। दूसरी आयोजना की अवधि में कुल ९ लाख ६३ हजार एकड़ अतिरिक्त क्षेत्र में सिंचाई की जानी है। पहले साल में २२ हजार एकड़ अधिक क्षेत्र में सिंचाई की गयी और दूसरे साल में ९४ हजार एकड़ में होने का अनुमान है।

उत्तर प्रदेश—उत्तर प्रदेश की दूसरी पंचवर्षीय आयोजना पर २ अरब ३३ करोड़ १० लाख रु० खर्च होना है। पहले तीन सालों में करीब १ अरब ३३ करोड़ रु० खर्च होगा। पहले दो सालों में केन्द्र ने उत्तर प्रदेश को ४५ करोड़ ८५ लाख रु० की सहायता दी। राज्य का लक्ष्य २४ लाख टन अधिक अनाज पैदा करने का है। इसमें से १९५६-५७ में १ लाख ८५ हजार टन अधिक अनाज पैदा हुआ और १९५७-५८ में ३॥ लाख टन होने

(शेष पृष्ठ ४९२ पर)

आप देश के नागरिक हैं!

क्या आप निश्चय करते हैं कि—

आप अन्न का एक एक दाना व्यर्थ नहीं जाने देंगे ?

शास्यशामला पुण्य भूमि में अन्न-संकट के कारण प्रतिवर्ष करोड़ों रु० का अनाज विदेशों से मंगाना पड़ रहा है। फिर भी देश में अन्न का दुर्भिक्ष बना हुआ है।

उत्तर प्रदेश औद्योगिक उन्नति के पथ पर

आर्थिक स्वतन्त्रता के अभावमें राजनीतिक स्वतन्त्रता महत्वहीन और अस्थिर होती है। देश के अन्य भागों की तरह उत्तर प्रदेश ने भी इस तथ्य की यथार्थता को समझा और यहां जनसाधारण की आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए संगठित प्रयत्न आरम्भ किये गये। इस राज्य की अर्थ-व्यवस्था कृषि प्रधान है, अतएव सर्वप्रथम और सबसे अधिक कृषि के विकास की ओर ध्यान दिया गया। किन्तु अनुभव से ज्ञात हुआ कि उत्तर प्रदेश जैसे घनी आबादी वाले तथा देश के सबसे बड़े राज्य की अर्थ-व्यवस्था एकमात्र कृषि पर आश्रित रहकर न तो सुदृढ़ और स्वावलम्बी बन सकती है और न उससे यहां की गरीबी और बेकारी की गंभीर समस्याएं ही हल हो सकती हैं। कारण यह कि एक तो वर्ष प्रतिवर्ष की भयंकर बाढ़, सूखा, ओला-पाला जैसी दैवी आपदाओं से यहां का किसान वर्ग त्रस्त और फटेहाल रहता है, दूसरे भूमि सीमित होने तथा कृषि में आवश्यकता से अधिक व्यक्तियों में लगे होने की वजह से इस उद्यम में विकास और रोजगार की अधिक गुंजाइश भी नहीं है। ऐसी स्थिति में अकेले कृषि के बल पर राज्य को अधिक समृद्ध और समुन्नत नहीं बनाया जा सकता।

स्वाधीनता प्राप्ति के समय उत्तर प्रदेश में उद्योगों की स्थिति भी संतोषजनक न थी। निजी उद्योगपतियों द्वारा यहां जो थोड़े बहुत उद्योग चलाये जा रहे थे, वे हमारी आवश्यकता के लिए पर्याप्त न थे। अतएव राज्य के प्रथम पंचवर्षीय आयोजन में ही कृषि की भरपूर उन्नति के साथ साथ उद्योगों के संतुलित एवं सुनियोजित विकास की भी समुचित व्यवस्था की गयी। औद्योगिक विकास के अन्तर्गत राज्य में कुटीर उद्योगों तथा बड़े उद्योगों—दोनों की स्थापना पर पूरा ध्यान दिया गया। कुटीर उद्योगों के विकास के लिए सरकार के उद्योग विभाग ने ४७ योजनाएं आरम्भ कीं और उनमें विभिन्न प्रकार की दस्तकारियों और छोटे-मोटे उद्योग-धंधों के विकास और प्रशिक्षण की व्यवस्था की गयी। मध्यमवर्ग के उद्योगों की स्थापना के लिए कानपुर रड़को मेंरुप ये की पूंजी से एक वित्तीय निगम स्थापित किया गया। ३१ मार्च १९५७ तक यह निगम विभि[न्न] उद्योगों के लिए ५४,४२,००० रु० के ऋण प्रदान [कर] चुका है। औद्योगिक एवं प्राविधिक शिक्षा के पुनसं[गठन] और व्यापक विस्तार से भी राज्य के औद्योगीकरण [में] सहायता मिली।

सार्वजनिक क्षेत्र

सार्वजनिक क्षेत्र में पहले यहां कोई उल्लेखनीय उद्योग नहीं थे। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद जहां देश में चि[त्त]रंजन में रेल के इंजनों का कारखाना, सिंदरी रासायनि[क] उर्वरक का कारखाना, अन्य स्थानों में अखबारी कागज [का] कारखाना, इस्पात के कारखाने आदि जैसे बड़े-बड़े उद्यो[ग] स्थापित किये गये, वहां इस राज्य में भी लखनऊ में ए[क] राजकीय सूक्ष्मयंत्र, निर्माणशाला तथा चुर्क (जिला मिर्जापुर) में एक राजकीय सीमेंट फैक्टरी की स्थापना कर[के] सार्वजनिक क्षेत्र में औद्योगीकरण आरम्भ किया गया।

> गंगा और यमुना, घाघरा और गोमती व सोन का शस्यश्यामल प्रदेश कल कारखानों से पूर्ण उद्योगप्रधान क्षेत्र भी बन रहा है, इसकी कथा इन पंक्तियों में पढ़िए।

राजकीय सूक्ष्मयंत्र निर्माणशाला लखनऊ में स[न्] १९५० में स्थापित की गयी थी, किन्तु अनेक कठिनाइयों के कारण उत्पादन कार्य सन् १९५२ में आरम्भ हो सका। इस फैक्टरी में जलमापक यंत्र, अणुवीक्षण यंत्र तथा अन्य सूक्ष्म यंत्र बनाने की व्यवस्था है। शुरू में इस फैक्टरी की आर्थिक स्थिति बड़ी डांवाडोल रही किन्तु अब यह एक स्वावलम्बी संस्था बन गयी है और अब इसके लाभ में बराबर वृद्धि हो रही है। १९५४-५५ तथा १९५५-५६ में इसे क्रमशः ४७,१३२ रु० और ५७,४०० रु० का लाभ हुआ। १९५६-५७ में इसमें और भी वृद्धि [हुई] है। १९५२ में प्रतिमास बनाये जाने वाले ३०० जल[मापक]

[सम्मे[लन]

मापक यंत्रों की तुलना में इस समय लगभग १,६०० जल-मापक यंत्र प्रतिमास बनाये जा रहे हैं। मार्च, १९५७ के अन्त तक फैक्टरी में विभिन्न आकार और प्रकार के ५३,०७० जलमापक यंत्र बनाये जा चुके हैं। अणुवीक्षण यंत्र भी बनाये जा रहे हैं।

जलमापक यंत्रों तथा अणुवीक्षण यंत्रों की बढ़ती हुई मांग को देखते हुए राज्य सरकार ने द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में इस फैक्टरी के व्यापक विस्तार की व्यवस्था की है। इस योजना पर १३ लाख रुपया व्यय होने का अनुमान है और इसके पूर्ण हो जाने पर फैक्टरी में प्रतिवर्ष ३६,००० जलमापक यंत्र तथा ३०० अनुवीक्षण यंत्र बनने लगेंगे।

चुर्क स्थित राजकीय सीमेंट फैक्टरी राज्य के सार्वजनिक क्षेत्र का दूसरा तथा सबसे महत्वपूर्ण उद्योग है। यह फैक्टरी साढ़े चार करोड़ रुपये की लागत से सन् १९५४ में स्थापित की गयी थी। फैक्टरी में लगभग ८०० श्रमिक काम करते हैं। पत्थर की खुदाई के कार्य में एक हजार श्रमिक और लगे हुए हैं। १९५६-५७ के वर्ष में इस फैक्टरी में १ लाख ९६ हजार टन सीमेंट तैयार हुआ और यह अब तक का सबसे अधिक उत्पादन है। यहां के सीमेंट की अधिकांश मात्रा विकास कार्यों के निर्माण में काम आ रही है। १९५६-५७ के वर्ष में रेण बांध के लिए लगभग ४०,००० टन सीमेंट दिया गया। इस फैक्टरी से भी विदेशी मुद्रा की बहुत बचत हो रही है। अक्तूबर, १९५९ से इस फैक्टरी में ७०० टन प्रतिदिन के स्थान पर १,४०० टन सीमेंट प्रतिदिन तैयार होने लगेगा।

निजी क्षेत्र

राज्य सरकार के प्रोत्साहन तथा वित्तीय सहायता के द्वारा स्वाधीनता के युग में निजी उद्योगों का तेजी से विकास हुआ और अब 'निजी क्षेत्र' अपेक्षाकृत अधिक व्यापक और सम्पन्न हैं, इस क्षेत्र में रजिस्टर्ड संगठित कारखानों की संख्या १,५५० है। इन कारखानों में लगभग दो लाख व्यक्ति काम करते हैं। निजी क्षेत्र के बड़े उद्योगों में चीनी, सूती तथा ऊनी वस्त्र, जूट, पावर अलकोहल, कांच, दियासलाई, तेल, वनस्पति घी, कागज, रेजिन, तारपीन के कारखाने सम्मिलित हैं।

प्रथम आयोजना के अन्तर्गत निजी उद्योगों के क्षेत्र में मोदीनगर और सहारनपुर में एक-एक कपड़ा मिल, पिपराइच (गोरखपुर) में एक कागज मिल तथा पिलखुवा (मेरठ) में दफ्ती का कारखाना खोला गया। नजीबाबाद, ज्वालापुर और सीतापुर में प्लाईवुड के कारखाने खोले गये। रानीखेत और कोटद्वार में रेजिन और टर्पेंटाइन बनाने के दो सहकारी कारखाने तथा इलाहाबाद और लखनऊ में दियासलाई के कारखाने खोले गये।

बिजली व बिक्रीकर की दरों में छूट, जमीन, पानी, कच्चे माल, औद्योगिक एवं प्रावैधिक शिक्षा आदि जैसी सुविधाएं प्रदान करके तथा ऋण और अनुदान देकर सरकार ने निजी उद्योगपतियों को जो प्रोत्साहन दिया उसके फलस्वरूप राज्य में अनेक अन्य नये उद्योग स्थापित हुए जिनमें लालटेन, सिलाई की मशीन, रेगमार, बटन, ब्रुश, छापेखाने की स्याही, लकड़ी के पेच, बैटरी, टार्च, शल्य चिकित्सा के यंत्र, अस्पताली सामान, अलमोनियम और स्टेनलैस स्टील के बर्तन, कार्बन पेपर, नलकूप का सामान, खेलकूद का सामान, रबड़ का सामान, कंड्यूट पाइप, रोगन और वार्निश, कृत्रिम सोने का तार तथा कुछ रासायनिक उद्योग सम्मिलित हैं। इनके अतिरिक्त २० चीनी मिलों को अपनी दैनिक उत्पादन क्षमतामें ५,७०० टन की वृद्धि करनेकी अनुमति दी गयी। चार कारखानों को प्रतिवर्ष ५०,००० साइकिलें और ५५ लाख साइकिल के पुर्जे तैयार करने के लाइसेंस दिये गये।

द्वितीय पंचवर्षीय आयोजन

औद्योगिक विकास की दृष्टि से उत्तर प्रदेश के लिए

द्वितीय आयोजन का विशेष महत्व है क्योंकि इस आयो-जन का प्रमुख लक्ष्य द्रुत औद्योगीकरण विशेषतः मूल एवं भारी उद्योगों का विकास तथा रोजगार के क्षेत्र में व्यापक विस्तार करना है। आयोजन बहुत नमनशील बनाया गया है और उसे आवश्यकताओं और साधनों की स्थिति के अनुसार घटाया या बढ़ाया जा सकता है।

राज्य की औद्योगिक उन्नति के लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा किये जाने वाले व्यय के अलावा राज्य सरकार ने बड़े तथा मध्यम उद्योगों की स्थापना पर द्वितीय आयोजन में चार करोड़ ६८ लाख रुपया व्यय करने का निश्चय किया है। इसमें से तीन करोड़ १६ लाख रुपया सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों तथा एक करोड़ ८२ लाख रुपया निजी क्षेत्र के उद्योगों की स्थापना के लिए नियत है। प्रारम्भिक सर्वेक्षण से पता चला है कि राज्य में तांबा, कोयला, चूना पत्थर, जिपसम तथा अन्य खनिज काफी मात्रा में मौजूद हैं। सर्वेक्षण अभी जारी है। इससे उद्योगों की स्थापना में महत्वपूर्ण सहायता मिल रही है।

भारत सरकार अभी तक इस राज्य में सार्वजनिक क्षेत्र के दो बड़े उद्योगों की स्थापना के लिए स्वीकृति प्रदान कर चुकी है। इसमें से एक है एलम्यूनियम स्मैल्टर फैक्टरी जो मिर्जापुर के निकट रेण बांध के क्षेत्र में स्थापित की जायेगी। इस फैक्टरी की वार्षिक उत्पादन क्षमता दस हजार टन होगी। दूसरा नकली रबड़ का कारखाना है। यह बरेली में खोला जायेगा। इस पर केन्द्रीय सरकार १० करोड़ रुपया व्यय करेगी। इनके अलावा बरेली में रेल के डिब्बे बनाने का कारखाना तथा वाराणसी के समीप मरुआडीह में रेल इंजन के कल-पुर्जे बनाने का कारखाना खोलने की योजनाएं बन चुकी हैं।

इस आयोजना में ऐसे उद्योगोंको भी विकसित करने की व्यवस्था की गई है जिनका कृषि से सीधा संबंध है और जो कृषि अर्थ-व्यवस्था को सबल बना सकें। ऐसे उद्योगों में चीनी मिलें सबसे पहले आती हैं। राज्य में गन्ने का वार्षिक उत्पादन बढ़ाकर ४ करोड़ टन कर देना है। इसका उपयोग करने के लिए अधिकांश चीनी मिलें निजी क्षेत्रों में खोली जायेंगी। सार्वजनिक क्षेत्र में राज्य सरकार ने १०० लाख रुपये की लागत से चार सहकारी [illegible] मिलें खोलने का निश्चय किया है।

निजी क्षेत्र में राज्य में वाराणसी के पास सोडा [illegible] और अमोनियम क्लोराइड की फैक्ट्री कानपुर में [illegible] फैक्ट्री, मालगाड़ी के डिब्बे की फैक्टरी तथा कपड़े [illegible] मशीनरी के कलपुर्जे का कारखाना, नैनी (इलाहाबाद) [illegible] बिजली के ट्रांसफारमर और स्विच गेयर का कारखाना खोला जा रहा है। इनके अतिरिक्त एक सीमेंट फैक्टरी, [illegible] कागज फैक्टरी तथा दो चीनी मिलों के लिए लाइसेंस स्वीकृत किये जा चुके हैं। इलाहाबाद में एक बड़ी [illegible] मिल लगाने का कार्य आरम्भ हो चुका है। इसमें लगभग २,००० व्यक्तियों को रोजगार मिलेगा। राज्य सरकार [illegible] कानपुर, गाजियाबाद तथा बरेली में 'स्टील रीलिंग' और रेल कोच बनाने तथा चीनी मिलों और सीमेंट फैक्टरी [illegible] मशीनों के निर्माण के लिए एक बड़ी मशीन फैक्टरी [illegible] योजना केन्द्रीय सरकार की स्वीकृति के लिए भेजी है।

निजी क्षेत्र के उद्योगों के विकास के संबंध में विस्तृत सुझाव देने के लिए राज्य सरकार ने श्री बिड़ला [illegible] अध्यक्षता में १५ व्यक्तियों की एक समिति भी नियुक्त [illegible] थी। इस समिति ने राज्य के विविध साधनों तथा आवश्यकताओं का ध्यान रखते हुए १०० करोड़ रुपये की [illegible] व्यापक योजना प्रस्तुत की है जो सरकार के विचाराधीन है। सरकार ने राज्य के हित में प्रस्तावित सभी उचित और व्यावहारिक सुझावों को मानने का आश्वासन दिया है।

राज्य सरकार द्वारा आगरा और कानपुर में स्थापित ५०-५० लाख रुपये की लागत के दो औद्योगिक आस्थानों तथा भारत सरकार सरकार के नैनी स्थित औद्योगिक आस्थान से भी उद्योगों के विकास में बड़ी सहायता मिल रही है। इन आस्थानों में सरकार द्वारा नये उद्योगों [illegible] स्थापना के लिए वित्तीय सहायता के अतिरिक्त विकसित स्थान, परिवहन एवं संचार की व्यवस्था, पर्याप्त मात्रा [illegible] बिजली गैस या अन्य ईंधन, पानी, कच्चे माल की उप-लब्धि जैसी अनेक सुविधाएं प्रदान की जाती हैं। प्रत्येक आस्थान में १२०-१५० उद्योगों के लिए व्यवस्था की गई है।

—

दिल्ली में ग्राम-विकास

श्री गोपीनाथ अमन

यों तो दिल्ली में ग्राम विकास स्वतन्त्रता के बाद ही से हो रहा है परन्तु दिल्ली विधान सभा के बनने और प्रथम पंचवर्षीय योजना के आरम्भ से उसकी गति और तीव्र हो गई। यदि कोई ऐसा मनुष्य जिसने अब से १०-१२ साल पहिले दिल्ली के गांवों को देखा हो और बीच में न देख हो, फिर से उन्हें देखे तो उसे बहुत-सा परिवर्तन दिखाई देगा। न इतने स्कूल थे, न इतने अस्पताल, न इतने पंचायत-घर न इतने अच्छे पशु, न बीज-घर और न इतने समाज-शिक्षा के केन्द्र—ये सभी इधर ही चन्द वर्षों में हुआ। परन्तु यह सब होते हुये भी गांव और शहर में जमीन आसमान का अन्तर दिखाई देता है। इसलिये शहर के सरकारी कर्मचारी गांव में तबादला पसन्द नहीं करते। शहर में जरा सी बात पर आंदोलन शुरू हो जाते हैं। कभी १०-१५ मिन्ट को बिजली फेल हो जाय तो हा-हाकार मच जायगा। यहां के रहने वालों को उन गांवों की कठिनाइयों का अन्दाजा ही नहीं है जहां बिजली नहीं है और जमीन भी इतनी ऊंची-नीची है कि सूरज छिपने के बाद चलना मुश्किल है, यह और बात है कि वह भूमि वहां के रहने वालों के पांवों की लगी हुई है और वह अटकल से चल लेते हैं। इसी प्रकार गांवों में अच्छे स्कूल हैं परन्तु शिक्षा की वे सुविधायें जो शहर वालों को मिलती हैं वहां उसका अंशमात्र भी नहीं। यहां पानी के नल हैं, वहां केवल कुएं। और कहीं तो गांवों में हरिजनों को पानी की इतनी कठिनाई है कि न उनके अपने कुएं हैं और न सवर्ण हिन्दु उन्हें भरने देते हैं। यही नहीं, बल्कि ऐसा भी देखा गया है कि चमारों का कुआं है तो भंगियों को अपने कुएं से पानी नहीं भरने देते। यहां हरिजनों में आपस में भी छूतछात पाई जाती है। सवर्ण हिन्दुओं से तो छूतछात हटाना चाहते हैं किन्तु आपस में भी इसको नहीं हटा सकते। मैंने दिल्ली के गांवों में हरिजनों की बस्तियां देखी हैं जिनकी दशा दिल्ली की घोषित गन्दी बस्तियों से कहीं बदतर है।

दिल्ली के ग्रामों में अशान्ति

जहां तक पैदावार का सम्बन्ध है दिल्ली अपनी आवश्यकता कभी पूरी नहीं कर सकती। यहां जितना अनाज पैदा होता है वह यहां के रहने वालों के एक महीने के खर्च के लिये भी पूरा नहीं और एक कठिनाई यह है कि गांव भी शहर का रूप धारण करते जाते हैं। बहुत-सी ऐसी भूमि जहां पर पहिले खेती होती थी, वहां अब इमारतें खड़ी हैं। शादीपुर, खामपुर और तिहाड़ आदि इसके उदाहरण हैं, और ऐसा हो भी क्यों नहीं? किसानों को जब खेती से इतनी आमदनी नहीं होती जितनी वह अपनी जमीन बेचकर पा सकते हैं तो उनको जमीन बेचने में ही सुविधा दिखाई देती है। बहुत से घराने जो पहिले खेती करके अपना पेट भी पूरी तरह पाल नहीं सकते थे अब जमीन बेचकर, मकान बनवा कर किराये से अपना जीवन अच्छी तरह व्यतीत कर रहे हैं। दिल्ली के गांवों में आस-पास के और प्रांतों के गांवों से अधिक जागृति है, इसलिये कि गांव राजधानी के पास हैं और यहां के रहने वाले बहुत-से तो ऐसे हैं कि राजधानी में आना उनकी दिनचर्या में ही शामिल है। इससे जहां उनके मस्तिष्क का विकास होता है वहां अशान्ति भी बढ़ गई है। जब वे शहरों की ऊंची-ऊंची अटारियों, बड़े-बड़े होटलों, चिकनी और चौड़ी सड़कों और सुन्दर पार्कों को देखते हैं तो उन्हें अपनी बस्ती में बहुत अन्तर दिखाई देता है। यह स्वाभाविक भी है और जब हमने समाजवादी ढांचा बनाने का वायदा किया है तो उनकी आशाओं का बढ़ जाना भी स्वाभाविक है इसलिये सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं और शासन को भी गांवों की ओर अधिक ध्यान देने की जरूरत है; परन्तु यहां मैं एक बात सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं से अवश्य कह देना चाहता हूं, चाहे वे किसी समाज से संबंधित हों या व्यक्तिगत रूप से काम करते हों, उन्हें पूरी जिम्मेदारी से अपनी राय देनी चाहिये—केवल ग्रामीण जनता की वाह-वाह लेने के लिये लम्बी चौड़ी योजनाएं पेश कर देने से काम नहीं चलेगा।

यह भी देखना होगा कि उनके लिये रुपया कहां से आयेगा और स्वयं गांव वालों को कितना सहयोग देना है—ये दोनों ही बातें आवश्यक हैं ।

काम की शुरूआत

प्रथम पंचवर्षीय योजना समाप्त हो चुकी है और दूसरी को भी दो वर्ष व्यतीत हो चुके हैं । इस समय गांव हमारी मुख्य समस्या हैं । कहीं तो पानी पहुँचता ही नहीं कहीं इतना अधिक जमा हो जाता है कि दोनों ही सूरतों में खेती को हानि होती है और गांव वालों की परेशानी बढ़ जाती है । दिल्ली प्रशासन के विकास महकमे की ओर से ३७ लाख रुपने की एक योजना भारत सरकार को गई हुई है । ११ महीने हुए जब यह योजना भेजी गई थी, इस पर विचार हो रहा है। नजफगढ़ नाले का काम कुछ हुआ है और कुछ बाकी है । इस वर्षा से यह अन्दाजा होगा कि जो कुछ काम किया गया उसका प्रभाव कैसा पड़ता है । महरौली, पल्ला और जौनती के बांध बांधने आवश्यक हैं । शाहदरे की ओर जो बांध बंधा है उससे शाहदरा तो सुरक्षित हो गया परन्तु उस पार के गांवों को हटाने की योजना अभी कार्यरूप में परिणत नहीं हुई । आशा थी कि वर्षा से पहिले ही गांव हटा दिये जाएंगे परन्तु ऐसा नहीं हो सका । इतनी आशा अवश्य है कि ये गांव सन् १६५८ के अन्त तक हटा दिये जाएंगे। जिन गांवों में आपस में थोकबन्दी है वहां काम अच्छा नहीं हो सकता और जहां अच्छा काम हो रहा था वहां भी थोकबन्दी होने से उनमें रुकावट आ गई । ग्राम-सेवकों, समाज-सेवियों और समाज-शिक्षा प्रसारकों की दिलचस्पी पर भी बहुत कुछ निर्भर है । आशा है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना के समाप्त होने तक दिल्ली के बहुत से गांवों में बिजली पहुँच जायगी जिससे ट्यूबवेल चलने लगेंगे और छोटे-छोटे उद्योग-धन्धों को बहुत सहायता मिलेगी । यह तो सर्व विदित ही है कि दिल्ली के गांव बहुत दिनों तक कृषि-प्रधान नहीं रह सकते । राजधानी फैलती जा रही है और बहुत से ग्रामवासियों को जिन्हें अपने गाँव से प्रेम है कुछ वर्षों के बाद उन्हीं भावनाओं से दो चार होना पड़ेगा जो अंग्रेजी के मशहूर कवि "गोल्ड स्मिथ" ने अपने महाकाव्य "डेजर्टेड विलेज" में प्रकट की हैं ।

—

समाजवाद की ओर ?

एक ओर देश के आर्थिक विकास तथा समाज कल्याण की योजनाओं के लिए रुपये की कमी बताई जा रही है, दूसरी ओर हम कितनी बेदर्दी से देश के कर-दाताओं का रुपया शान-शौकत में खर्च कर रहे हैं, इसमें उदाहरण समय-समय पर आते रहते हैं, इनमें एक उदाहरण नीचे जा रहा है ।

पिछले दिनों राजस्थान राजभवन के लिये २,५०,००० रुपये से भी अधिक कीमत का फर्निचर, दरियां, विभिन्न प्रकार के बरतन तथा अन्य सामान खरीदा गया था। यह सामान खरीदने से पहिले ज्यादातर चीजों के लिये टेंडर नहीं मांगे गये थे और वस्तुओं का जो मूल्य दिया गया, वह बाजार भाव को देखते हुए चौगुना था !

गवर्नर महोदय के मनोरंजन के लिये एक-दो नहीं पूरे सात रेडियो खरीदे गये ! इसके अतिरिक्त एक रेडियो-ग्राम और दो ग्रामोफोन भी वहां हैं । जो अन्य चीजें खरीदी गईं, उनमें—एक स्टूडी बेकर, एक न्यू हिन्दुस्तान लैंड मास्टर, एक डॉज किंग्स्वे डी-लक्स और ८०,००० रुपये के मूल्य की एक विलीज स्टेशन वैगन भी हैं।

आठ रूम ऐयर कण्डिशनर २६,८०८ रुपये में खरीदे गये हैं । खरीदे गये बाग के छातों की कीमत भी १,००० रुपये है । टाइमपीस और दीवार घड़ियों पर २,१०० रुपये खर्च किया गया है । चैंडलीयर्स की कीमत ३,५०० रुपये है । चीनी के और अन्य विभिन्न प्रकार के बरतनों पर २०,२०० रुपये खर्च किये गये हैं । व्यक्तिगत उपयोग में आने वाले कम्बलों पर २५०० रुपये खर्च कर दिये गये हैं। खेल सम्बन्धी सामानोंका व्यय २००० रुपये है । स्टेशनरी का बिल ३००० रुपये का है । बिजली के पंखों और बिजली के दूसरे सामानों पर २१,००० रुपये खर्च किये गये हैं। चांदी के बर्तनों और फर्निचर दोनों मदों पर अलग-अलग बीस-बीस हजार रुपये खर्च आए हैं ।

रोचक समाचार यह है कि इस खरीदारी का अधिकांश गवर्नर महोदय के तीन दामादों द्वारा किया गया है। इन तीनों के नाम—सरदार तरपेन्द्रसिंह, सरदार प्रीतमसिंह और श्री जी० सी० खन्ना हैं !

[समाज

आर्थिक समृद्धि से समाज-सुधार

समाज कल्याण मंडल की योजनाओं का उद्देश्य

इधर कुछ महीनों से केन्द्रीय समाज-कल्याण मण्डल गरीबों की आर्थिक दशा सुधारने और कमाने की इच्छा रखने वालों को काम-धंधा जुटाने पर अधिक जोर दे रहा है। यह बात नहीं कि उसने स्त्रियों, बच्चों या विकलांगों की सहायता करनी बन्द कर दी, बल्कि अभी तक मण्डल अधिक धन इसी तरह की योजनाओं पर खर्च करता है। फिर भी कोशिश यह की जा रही है कि भलाई के काम और लोगों की आय बढ़ाने के उपाय एक साथ किये जाएं। उदाहरण के लिए गांवों और शहरों की उन गरीब स्त्रियों को काम दिलाने में सहायता दी जाती है, जो कुछ दस्तकारी आदि सीख चुकी हैं और जो अपने आप कोई धन्धा नहीं चला सकतीं और न अपने हुनर का कोई खास लाभ उठा सकती हैं।

पतित स्त्रियों, अपराधी बालकों तथा पुरुषों को आश्रमों या जीवन सुधारने वाली संस्थाओं से निकलने के बाद, काम-धन्धे से लगाने का भी यही उद्देश्य रहा है कि ये लोग अपने पैरों पर खड़े हो जाएं। यही इनके लिए सबसे बड़ा उपकार है। मण्डल ने हाल में स्त्रियों के लिए दस्तकारियां आदि शुरू करने की योजनाएं बनायी हैं। इन योजनाओं को भारत सरकार के वाणिज्य तथा उद्योग मंत्रालय की ओर से मदद मिलेगी।

आर्थिक उन्नति के विविध विचारों को अप्रैल १९५८ में राज्यों के समाज-कल्याण मण्डलों के अध्यक्षों के सम्मेलन में बाकायदा योजना का रूप दिया गया। इस सम्मेलन में उद्योग मंत्री ने आश्वासन दिया था कि शहरों और गांवों में स्त्रियों को कुछ कमा सकने योग्य बनाने की योजनाओं के लिए मेरा मंत्रालय हर तरह का सहयोग देने को तैयार है। इन योजनाओं के अन्तर्गत कुछ पढ़ी-लिखी स्त्रियों को कल-कारखानों में काम और दस्तकारियां सिखाई जाएंगी और ये गांवों और शहरों में जाकर अन्य स्त्रियों को इन काम-धन्धों की शिक्षा देंगी। उद्योग मंत्री ने यह भी कहा कि मंत्रालय के छोटे उद्योगों के लिए नियत खर्च में से कुछ उन योजनाओं के लिए रखा जाएगा, जिन्हें केन्द्र तथा राज्यों के समाज-कल्याण मण्डल तैयार करेंगे। स्त्रियों की बनाई हुई चीजों की बिक्री आदि में भी मंत्रालय का मार्ग-दर्शन मिलेगा।

उद्योग मंत्रालय का सहयोग

सम्मेलन के कुछ सुझावों पर अमल किया गया है। एक खास बात यह हुई है कि वाणिज्य तथा उद्योग मंत्रालय में श्रीमती इन्दिरा गांधी की अध्यक्षता में, स्वयंसेवी संस्थाओं में छोटे-छोटे धन्धे शुरू करने के बारे में आने वाले प्रस्तावों की जांच के लिए जो मण्डली बनायी गयी थी, उसे राज्यों के समाज-कल्याण मण्डलों के आर्थिक कार्यक्रमों की जांच के लिए स्थायी समिति का रूप दे दिया गया है। इसी मंत्रालय के अधीन काम करने वाली संस्थाओं, अखिल भारतीय दस्तकारी मण्डल, हथकरघा मण्डल, खादी तथा ग्रामोद्योग आयोग ने इस साल के बजट में भी, केन्द्रीय समाज-कल्याण मण्डल की योजनाओं के लिए धन अलग रखने का निश्चय किया है।

रोजी देने या आमदनी बढ़ाने के उपाय करके समाज की भलाई करने के प्रयास में आरम्भ से ही सफलता मिली है। अभी तक अखिल भारतीय दस्तकारी मण्डल ने २०० केन्द्रों में दस्तकारी की चीजों को छांटने और उन्हें राज्यों के मण्डलों द्वारा खरीदवा कर ऐसे स्थानों पर रखवाने

आप देश के नागरिक हैं!

क्या आप निश्चय करते हैं कि—

आप यथासंभव बड़ी मिलों की अपेक्षा घरेलू ग्रामोद्योग को सहयोग देंगे।

ग्रामोद्योग-निर्मित वस्तुओं के प्रयोग से बेकारी अपेक्षाकृत जल्दी दूर होगी।

दरिद्रनारायण की सेवा देश की सेवा है।

के लिए, जहां उन्हें देखकर और लोग उनसे कुछ सीख सकें, ४०,००० रु० खर्च करना स्वीकार कर लिया है। दस्तकारी मण्डल १९५८-५९ में कल्याण विस्तार केन्द्रों में ४० उत्पादन केन्द्र खोलने के लिए साढ़े १२-१२ हजार रु० देगा।

अ० भा० दस्तकारी मण्डल ने चालू वर्ष में ३०-३० हथकरघों के १५ से २० केन्द्र खोलने की योजना बनायी है। इस तरह के हर केन्द्र में ६० स्त्रियों को काम मिलेगा। खादी तथा ग्रामोद्योग आयोग ने भी स्त्रियों को अम्बर चर्खे से कातना और हाथ से धान कूटना तथा खादी पर कढ़ाई करना आदि सिखाने की योजनाएं बनायी हैं।

बाद की देखभाल की योजनाएं

पतित जीवन से निकलकर आने वाले स्त्री-पुरुषों को काम देने के लिए हर राज्य में सरकारी आश्रम या ... में कुछ न कुछ उद्योग शुरू किये जाएंगे। अब तक ... सरकारी आश्रम खोलने की अनुमति दी जा चुकी है ... इनमें से २४ चालू भी हो गये हैं। उद्योग मंत्रालय ... काम देने की योजनाएं इससे अलग हैं। आशा है आगे ... तेजी से होगा, क्योंकि केन्द्रीय मण्डल में भी एक ... उद्योग विभाग स्थापित करने का विचार है। यह ... बाद की देखभाल के कार्यक्रम को हर प्रकार सफल ... की ओर ध्यान देगा।

आर्थिक लाभ पहुँचाकर स्त्रियों का उत्थान ... वास्तव में एक नया विचार है, लेकिन यह पंचवर्षीय ... जना के उद्देश्य के सर्वथा अनुरूप है। आयोजना का ... भी देशवासियों को सुखी और समृद्ध करना है।

अन्न-उत्पादन की प्रगति

(पृष्ठ ४८५ का शेष)

का अनुमान है। १९५६-५७ में राज्य में २॥ लाख एकड़ अधिक क्षेत्र में छोटे साधनों से सिंचाई हुई और १९५७-५८ में ३ लाख ८४ हजार एकड़ में। बड़ी और मध्यम सिंचाई योजनाओं से १९५६-५७ में २ लाख ५६ हजार एकड़ में और १९५७-५८ में ३ लाख ६८ हजार अधिक क्षेत्र में सिंचाई की गयी। आयोजना के पहले दो सालों में राज्य की बिजली पैदा करने की क्षमता ६६ हजार किलोवाट बढ़ी। पाँच सालों में यह क्षमता १ लाख ६३ हजार किलोवाट और बढ़ाने का लक्ष्य है।

पश्चिम बंगाल—राज्य की दूसरी आयोजना का कुल खर्च १ अरब ५७ करोड़ ६७ लाख रु० निश्चित किया गया है। पहले तीन सालों में ८३ करोड़ ६६ लाख रु० खर्च होगा। केन्द्र से पश्चिम बंगाल को शुरू के दो सालों में २८ करोड़ ३५ लाख रु० मिला। राज्य को आयोजना के पाँच सालों में ६ लाख ३२ हजार टन अनाज अधिक पैदा करना है। १९५६-५७ में ८४ हजार टन और १९५७-५८ में १ लाख २७ हजार टन अधिक अनाज पैदा हुआ। छोटे साधनों से ३ लाख ८५ हजार एकड़ अतिरिक्त क्षेत्र में सिंचाई करने की योजना है। इसमें से १९५६-... में ३५ हजार एकड़ में और १९५७-५८ में ४२ हजार ... (अनुमानित) में सिंचाई का प्रबन्ध हुआ। दामोदर ... मयूराक्षी और कंगसावती बड़ी और मध्यम योजनाएं ... गिनी जाती हैं। इस तरह की सिंचाई की योजनाओं ... दूसरी आयोजना की अवधि में १२ लाख ४८ हजार ... अतिरिक्त क्षेत्र में पानी पहुँचाने का विचार है, लेकिन ... लाख ७० हजार एकड़ में ही सिंचाई होने की आशा है।

जम्मू और कश्मीर—यहाँ की दूसरी आयोजना ... खर्च ३३ करोड़ ९२ लाख रु० रखा गया है। इसमें से ... करोड़ ७६ लाख रु० पहले तीन सालों में खर्च होगा। ... अवधि में केन्द्र से १२ करोड़ रु० मिलेगा। राज्य ... २ लाख ६ हजार टन अधिक अनाज पैदा करने का ... है। इसमें से १९५६-५७ में २५ हजार टन और १९५७-५८ में २ हजार टन (अनुमानित) अनाज अधिक पैदा हुआ। छोटे साधनों से १९५६-५७ में ५ हजार एकड़ ... क्षेत्र में और १९५७-५८ में १ हजार एकड़ में सिंचाई ... सुविधाएँ दी गयीं। पाँच सालों में छोटे साधनों से ... में १ लाख २५ हजार एकड़ अतिरिक्त क्षेत्र में सिंचाई ... जानी है।
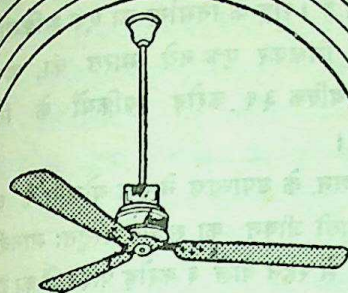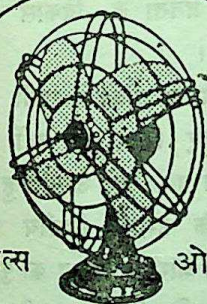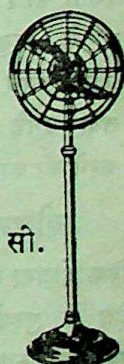
हमारी सामुदायिक विकास योजनाएं

श्री बसन्त धर्मावत

सामुदायिक विकास योजना का यदि सरल शब्दों में अर्थ किया जाए तो उसका तात्पर्य यही है कि किसी भी कार्य को आपस में मिलजुलकर करना, जिससे उनके स्वयं के विकास के साथ-साथ समुदाय का भी विकास हो। इसमें व्यक्ति को निजी लाभ के साथ-साथ राष्ट्र को भी लाभ होना चाहिए। दूसरे शब्दों में यह वह योजना है जो गांवों में बहुमुखी विकास की ओर संकेत करती है जैसे कृषि, शिक्षा, स्वास्थ्य, आरोग्य. पशुकल्याण, नौकरी आदि सभी दिशाओं में एक ही साथ विकास हो।

श्री लोशबोह के शब्दों में 'सामुदायिक योजना गहन विकास की ओर एक संगठित तथा आयोजित प्रयत्न है।' सामुदायिक विकास वास्तव में समुदाय के विकास की एक क्रिया है।

लॉयड कुक के अनुसार एक समुदाय "जन संख्या का एक ऐसा समृद्ध समूह है, जो एक मिले हुए प्रदेश में रहती हो, जिसका एक सामूहिक अनुभव द्वारा एकीकरण हुआ हो, जिसकी कुछ आधारभूत सेवा संस्थाएं हों, जिसको अपनी स्थानीय एकता का ज्ञान हो और जो सामुहिक रूप से कार्य कर सकती हो।

सैन्डरसन के अनुसार "सामुदायिक संगठन उन उद्देश्यों को प्राप्त करने जो सामूहिक कल्याण के लिए आवश्यक हैं तथा उनके प्राप्त करने के सर्वोत्तम उपाय दोनों को उपलब्ध करने की कार्य विधि है......।"

योजना के उद्देश्य

सामुदायिक योजना का उद्देश्य योजना के अन्तर्गत आने वाले क्षेत्र के पुरुषों, स्त्रियों व बच्चों के जीवित रहने के अधिकार की स्थापना करना और स्वयं ग्रामीणों में आत्म-विकास की प्रेरणा देना है।

सामुदायिक विकास राष्ट्र निर्माण का एक भाग है। लोक-सभा में नियोजन कमीशन की रिपोर्ट को पेश करते हुए प्रधान मंत्री ने कहा था—

"मामूली योजनाओं के बनिस्बत यह कुछ ज्यादा व्यापक और विस्तृत है। राष्ट्र के निर्माण का एक शक्तिशाली अस्त्र है। हम सब मिलकर एक नये भारत का, राष्ट्र के लिये नहीं, बल्कि ३६ करोड़ व्यक्तियों के लिये निर्माण कर रहे हैं।

नियोजन कमीशन के उपाध्यक्ष ने इस योजना के ... में कहा था—"देहाती जीवन का सुधार वस्तुतः मानवीय समस्या है। देहातों में रहने वाले ६ करोड़ परिवारों का दृष्टिकोण किस प्रकार बदला जाय? नया ज्ञान और जीवन का नया ढंग जानने के वास्ते उनमें उत्साह उत्पन्न करना है, और यह महत्वाकांक्षा है कि वे अधिक सुखपूर्ण और सुन्दर जीवन व्यतीत करें।"

भारत में आवश्यकता

भारत की कुल जनसंख्या का ८२ प्रतिशत भाग गांवों में निवास करता है, इसलिए जन-कल्याण के लिए बनाई जाने वाली किसी भी योजना में ग्रामों के विकास को प्राथमिकता देना अत्यन्त आवश्यक है। भारत १५ अगस्त सन् १९४७ से एक लोक-तन्त्रात्मक गण राज्य है और लोकतन्त्र बहुसंख्या पर निर्भर होता है। इसलिए सबसे पहले बहु-संख्यक ग्रामीण जनता के विकास के लिये योजना बनाई जानी चाहिये।

"देश की बहुसंख्यक जनता गांवों में रहती है और गांवों की हालत में सुधार हुए बिना यह नहीं कहा जा सकता है कि देश की सचमुच वास्तविक उन्नति हुई है।"

यह स्वाभाविक ही है कि हमारी द्वितीय पंचवर्षीय योजना का उद्देश्य यह है कि ग्रामीण भारत का पुनर्निर्माण किया जाय। औद्योगिक उन्नति की नींव डाली जाय और जनता के उस भाग को जो कमजोर है, अपेक्षाकृत अधिकारहीन है—अपने विकास का अधिक से अधिक अवसर दिया जाय। इसके लिए ग्राम विकास की ओर ध्यान देना सबसे अधिक आवश्यक है।

सामुदायिक योजना का प्रादुर्भाव

२ अक्टूबर सन् १९५२ को देश भर में सामुदायिक

विकास योजनाओं का उद्‌घाटन किया गया। इस दिन पूर्व परीक्षा के तौर पर ५५ योजनाओं को हमारे देश में आरम्भ किया गया। इस कार्यक्रम के क्षेत्र में २५,२६४ गांव आते थे, इन गांवों की कुल जनसंख्या १ करोड़ ६४ लाख थी। इसका सभी क्षेत्रों में स्वागत किया गया।

कार्यक्रम के आरम्भ होने पर खाद्य का उत्पादन बढ़ाने को प्राथमिकता दी गई क्योंकि सन् १९५१ में देश को अत्यधिक मात्रा में अनाज का आयात करना पड़ा था। इस योजना को कार्यान्वित करने के लिये संयुक्त राज्य अमेरिका और 'फोर्ड फाउण्डेशन' से भी सहायता मिली। समझौते के अन्तर्गत अमेरिका ने ५ करोड़ डालर 'भारतीय अमेरिका औद्योगिक सहयोग फंड' में जमा कराये हैं। 'फोर्ड फाउण्डेशन' कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण देने में सहायता दे रहा है। 'ग्राम सेवकों' के प्रशिक्षण में विशेष रूप से उसकी सहायता भारत को मिली है। देहात विकास की १५ अग्रिम परिकल्पनाओं को आरम्भ करने में भी 'फोर्ड फाउण्डेशन' ने सहायता दी है।

सामुदायिक योजनाओं की प्रगति

सामुदायिक योजनाओं तथा राष्ट्रीय विस्तार सेवा खंडों पर हुए सरकारी खर्च का ६० प्रतिशत जनता के योग के रूप में मिला है। अक्टूबर १९५२ से सितम्बर १९५६ तक के काल में सरकार ने विभिन्न सामुदायिक योजनाओं तथा राष्ट्रीय विस्तार सेवा खंडों पर ५६.३० करोड़ रु० खर्च किये। इस दौरान में जनता का योग ३२.६६ करोड़ रु० का रहा जो नकद सामग्री तथा श्रम के रूप में दिया गया।

सन् १९५७ से अब तक दो लाख ७५ हजार गांवों के व्यापक क्षेत्र में २००० ब्लाक बन चुके हैं। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि विकास योजनाएं काफी दूर तक फैल गई हैं। इसके अतिरिक्त इससें ठोस कार्य भी काफी हुआ है।

पिछले दो वर्षों में इन खंडों में कृषि उत्पादन में २० से २५ प्रतिशत तक वृद्धि हुई है। विकास योजना के क्षेत्रों में ३० जून सन् १९५६ तक लगभग ५६,५२००० मन उन्नत बीज बांटा गया और कृषि सम्बन्धी १६,३६,००० प्रदर्शन आयोजित किए गए। किसानों को १,१०,६४,००० मन से अधिक उर्वरक दिये गए। इस अवधि में लगभग २,८०० प्रमुख ग्राम केन्द्र प्रारम्भ किए गए और गांव वालों को अच्छी नसल के २,७५,००० पशु और पक्षी दिए गए। २५,०६,००० एकड़ अतिरिक्त भूमि में सिंचाई की व्यवस्था की गई और १४,२३,००० एकड़ भूमि का सुधार किया गया। लगभग ७० हजार लोगों को घरेलू उद्योगों और दस्तकारियों का प्रारम्भिक तथा पुनरभ्यास प्रशिक्षण दिया गया और ८८ हजार लोगों के आंशिक काम-काज की व्यवस्था की गई।

गांव वालों के लिये चिकित्सा, पशु-चिकित्सा, स्वास्थ्य और स्वच्छता तथा शिक्षा की सुविधाएँ भी बढ़ाई जा रही हैं। अब तक ८६० से अधिक ग्राम-केन्द्र और लगभग ७३० प्रसूति और शिशु-कल्याण केन्द्र स्थापित किये जा चुके हैं। गांवों में लगभग ५० हजार नए कुंए खोदे गए और ७६ हजार पुराने कुंओं को सुधारा गया। गांवों में संचार सुविधाएँ बढ़ाने के लिए ७,००० मील लम्बी पक्की और ४२,००० मील लम्बी कच्ची सड़कों का निर्माण किया गया। ३० हजार मील कच्ची सड़कों का सुधार किया गया। ६५ हजार नए मकान तथा ६,१५४ आदर्श मकान बनाए गए।

शिक्षा के क्षेत्र में २० हजार नए स्कूल खोले गए तथा ७,७६४ साधारण स्कूलों को बुनियादी स्कूल बनाया गया। इसके अलावा ५३ हजार वयस्क शिक्षा केन्द्र, तथा १.५५ लाख सामुदायिक केन्द्र खोले गए और १२.८४ लाख वयस्कों को साक्षर बनाया गया।

इस दौरान में ४१ हजार सहकारी सोसायटियां आरम्भ की गई जिससे नये सदस्यों की कुल संख्या २३.३ लाख हो गई है। इस काल में २८ हजार पंचायत परिषद् व विकास मंडलों जैसी ४६ हजार अन्य संस्थाएं आरम्भ की गई। सामुदायिक विकास योजना के अंतर्गत किए गए कुछ ठोस कार्यों की सूची इस प्रकार है—

अक्टूबर १९५२ से जून १९५६

बागों के रकबे में वृद्धि	१,६१,००० एकड़
सब्जी की खेती के रकबे में वृद्धि	४,७३,०००
नए स्कूल खोले गए	१,१७,०००

(शेष पृष्ट ५०० पर)

प्रगति में समाजवाद बाधक है

(पृष्ठ ४४४ का शेष)

दोष यह है कि यह थोड़े से अनुभव शून्य सरकारी नौकरों के हाथ का खिलौना बन गया है, जिससे देश के लाखों स्वतंत्र व्यापारी अपना स्वतन्त्र व्यक्तित्व खोकर सरकारी अधिकारियों के कृपा-सम्पादन के प्रयत्न में ही लगे रहते हैं।

२ अरब रुपये विदेशी मुद्रा की क्षति

अनेक उद्योगों को सरकार अपने हाथ में ले रही है। इसका परिणाम यह हो रहा है कि निजी उद्योगों में निजी क्षेत्र जो रुपया लगा सकता था, उससे वह वंचित हो गया और उन उद्योगों के लिये सार्वजनिक कोष पर बोझ पड़ रहा है। इस आदर्शवाद का हमें कितना बड़ा नुकसान हो रहा है—इसका हम एक ही प्रमाण देना चाहते हैं। आसाम में आयल कम्पनी के तेल का काम अपने हाथ में लेना चाहा था, परन्तु सरकार ने अपने आदर्शवाद के फेर में पड़कर इस कम्पनी से समझौता नहीं किया। खनिज और तेल विभाग की एस्टीमेट कमेटी ने लिखा है—"यह बड़े दुर्भाग्य की बात है कि एक समझौता करने में पांच वर्ष का विलम्ब हो जाने के कारण देश को लगभग ४०-५० करोड़ रुपये की कीमत के पेट्रोल के उत्पादनों का प्रतिवर्ष आयात करना पड़ेगा, जबकि पेट्रोलियम का यह सामान नाहोर-काटिया से प्राप्त होने वाले कच्चे तेल द्वारा बनाया जा सकता था।" एस्टीमेट कमेटी की गणनानुसार देश को विदेशी विनिमय में स्पष्टरूप से लगभग २०० करोड़ रुपये की हानि हुई है, क्योंकि सरकार एक विदेशी कम्पनी के साथ समझौता करने के सिद्धांत पर पांच साल से पहिले कोई निर्णय नहीं कर सकी। जबकि विदेशी मुद्रा इतनी जटिल समस्या बनी हुई है, तब २०० करोड़ रुपये की भीषण क्षति देश को केवल इसलिये हुई कि सरकार समाजवादी आदर्श के फेर में देश के मुख्य प्रश्न को भूल गई। और अन्त में विदेशी कम्पनी के साथ समझौता भी करना पड़ा।

विदेशी पूंजी को भय

समाचार पत्रों के पाठक जानते हैं कि गत वर्ष श्री घनश्यामदास बिड़ला के नेतृत्व में एक शिष्ट मंडल संयुक्त राष्ट्र अमेरीका गया था। उसने अपनी रिपोर्ट में लिखा था कि अमेरिकन उद्योगपति भारत में रुपया लगाने में इसलिये संकोच करते हैं, क्योंकि भारत सरकार की नीति निजी उद्योगों के सम्बन्ध में सहानुभूति पूर्ण नहीं है। बढ़ते हुए टैक्स और राष्ट्रीयकरण का भय उद्योगपतियों को भयभीत किये हुए हैं। स्थिति यह है कि सरकार की आर्थिक नीतियों ने देश में पूंजी-निर्माण को कठिन से कठिनतर बना दिया है। उत्पादन व्यय बहुत बढ़ गये हैं। उद्योग में लाभ या बचत की आशाएं धूमिल होती जा रही हैं और यह तलवार सदा सर पर लटकी रहती है कि न जाने कब सरकार उद्योग को अपने हाथ में ले ले। इन सब समाजवादी उपायों का प्रभाव देश की आर्थिक स्थिति पर प्रतिदिन पड़ता जा रहा है।

औद्योगिक संघर्ष

यदि उद्योगों के राष्ट्रीयकरण से औद्योगिक संघर्ष समाप्त हो जाता तो यह भी एक बहुत बड़ा लाभ होता, लेकिन आज स्थिति यह है कि जमशेदपुर के सूती कारखानों में मजदूर हड़ताल करते हैं तो उसी तरह बल्कि उससे भी अधिक जोश से सरकारी उद्योगों में भी हड़ताल करते हैं। मजदूरों के निकट सरकारी और निजी उद्योगों में कोई अन्तर नहीं है। रेलवे, डाक-तार, बन्दरगाह, वायु यातायात, जीवन-बीमा निगम आदि सबमें मजदूरों को असन्तोष है। पटवारी और प्राइमरी स्कूलों के अध्यापक और चपरासी तक हड़ताल करने में किसी से पीछे नहीं हैं। आचार्य विनोबा ने ठीक ही कहा है कि निजी उद्योग में यदि पूंजीपति मजदूरों का कोपभाजन था तो आज सरकारी मिलों में मैनेजर शाही मजदूरों में असंतोष का कारण बन रही है। राष्ट्रीयकरण से अमीर-गरीब की विषमता में कोई विशेष कमी आई हो, ऐसा भी नहीं कहा जा सकता। आज पूंजीपति का स्थान मैनेजरों, अफसरों, मंत्रियों और सार्वजनिक नेताओं ने ले लिया है।

पं० जवाहरलाल नेहरू ने ठीक ही कहा है कि आज देश की मुख्य समस्या—जहां उचित वितरण है, वहां उससे भी बड़ी समस्या उत्पादन वृद्धि की है। उत्पादन बढ़ाये बिना समाजवाद के आदर्श की चर्चा करना बहुत लाभकारी नहीं होगा। हमने उक्त पंक्तियों में संक्षेप से यह दिखलाने का प्रयत्न किया है कि समाजवाद की, आदर्श नीति कम से कम अब तक पंचवर्षीय योजनाओं के विकास में सहायक न होकर कुछ बाधक ही हुई है।

[सम्पदा

समाजवाद, प्रजातंत्र और भारत

(पृष्ठ ४४१ का शेष)

में। दोनों ही 'जनतावाद' के दर्शन थे। समाजवाद भी जनता के लिये नया सन्देश लेकर आया था और प्रजातंत्र भी, अस्तु, सिद्धांत में उसे मान लेने में समाजवाद को भी कोई आपत्ति नहीं रही।

समाजवादियों ने पूंजीवाद का तो विरोध किया पर एक ही सिद्धान्त के राजनीतिक परिणाम 'जनतंत्र' को अपना विश्वास मान लिया। समाजवादियों के अनेक वर्ग में यह केवल 'मजदूर संघवादी' (Syndicalist) ही थे जिन्होंने प्रजातंत्र का विरोध 'पूंजीवादी अन्धविश्वास' कहकर किया।* समष्टिवादी और शिल्प संघवादी (Guild Socialist) क्रियात्मक प्रजातंत्र के घोर समर्थक थे। बर्नार्ड शॉ ने कहा था कि कोई भी प्रजातांत्रिक राज्य सामाजिक-प्रजातांत्रिक राज्य तब तक नहीं हो सकता जब तक कि आबादी के प्रत्येक केन्द्र पर स्थानीय स्वायत्त संस्थायें उतनी ही प्रजातांत्रिक नहीं होती हैं जितनी केन्द्रीय संसद होती हैं। इसी प्रकार अराजकवाद (Anarchism) सभी क्रियाओं राजनैतिक और अर्थनीतिक के प्रजातंत्रात्मक विकेन्द्रीकरण का सिद्धान्त था। मार्क्स ने 'सर्वहारावर्ग के अधिनायकतंत्र' (Dictatorship of the Proletariat) की चर्चा की थी। क्या यह प्रजातंत्र की कल्पना थी ? श्री जोड ट्राटस्की के शब्दों में रूस के साम्यवादियों ने मार्क्सवाद को बिना उसके मूल तत्वों को आघात पहुँचाये अनेक मोड़ दिये हैं—उसकी अनेक व्याख्यायें की हैं। मार्क्सवाद की इसी नव्य व्याख्यात्मक प्रकृति के क्रम में साम्यवादी प्रजातंत्र पर विचार करते हैं। लेनिन और ट्राटस्की में जो विवाद हुवा था वह भी इस साम्यवाद और प्रजातंत्र के प्रश्न पर था। यह कोई नई बात नहीं है कि भारतीय साम्यवादियों ने अभी हाल में अपनी अमृतसर कान्फ्रेन्स में प्रजातंत्र में आस्था प्रकट की है। मार्क्सवाद और प्रजातंत्र के सम्बन्ध की जो व्याख्या साम्यवादी करते हैं उसके अनुसार साम्यवाद प्रजातंत्र का नहीं अपितु 'पूंजीवादी प्रजातंत्र' (Bourgeois Capitalism) का विरोधी है। जब तक समाजवाद स्थापित नहीं हो जाता प्रजातंत्र वास्तविक नहीं हो सकता। जब तक व्यक्ति गरीब और धनहीन है उसे अपने श्रम को बेचने के अतिरिक्त कोई चारा नहीं। उसका अपना व्यक्तित्व नहीं है। ऐसी स्थिति में प्रजातंत्र, व्यक्तिगत स्वातंत्र्य और समानता की चर्चा मिथ्या है। प्रजातंत्र के रूप के विषय में उन्होंने कहा कि प्रजातंत्र जैसे पूंजीवाद में अकर्मण्य है उसी प्रकार क्रान्ति के बाद स्थापित होने वाले 'सर्वहारा वर्ग के अधिनायकतंत्र' में भी असम्भव है क्योंकि अब तक के शोषक पूंजीपति वर्ग का कोई प्रतिनिधित्व इसमें नहीं होगा। वह सर्वहारा वर्ग का प्रजातंत्र होगा, किन्तु इस सीमित प्रजातंत्र पर भी इतिहास का प्रमाण अनुकूल नहीं हैं। साम्यवादियों ने प्रजातंत्र के रूप पर नहीं, गुण पर जोर दिया किन्तु अपने राज्य काल में जब प्रजातंत्र की बात आई तो उन्होंने प्रजातंत्र के गुण की नहीं अपितु सीमित अर्थ में प्रजातंत्र के रूप की बात की।

प्रजातंत्र की यह असंगति आज भी चल रही है। यूरोप के अनेक देशों में जहां सरकार का रूप प्रजातंत्रात्मक है, समाज सर्वथा अप्रजातंत्रात्मक है। इन देशों में प्रजातंत्र का रूप है, गुण नहीं। व्यक्ति स्वातंत्र्य है, व्यक्ति को अभिव्यक्ति, विचार, संघ और भ्रमण की स्वतंत्रता है; कम से कम सबको संविधान में धर्म, जाति, रूप-रंग से निरपेक्ष समता प्रदान की गई है; पर समाज वर्गों में बंटा है, आर्थिक विषमता है और शोषक-शोषित के हित में संघर्ष है। उधर रूस में, जहां समाजवाद का आधुनिक युग में सबसे पहले प्रयोग प्रारम्भ हुआ और आज भी हो रहा है वर्ग-संघर्ष, आर्थिक विषमता, अकिंचन वर्ग का शोषण मिट रहा है, सरकार का प्रजातंत्रात्मक संघटन नहीं है, व्यक्ति स्वातंत्र्य नहीं है, अभिव्यक्ति, विचार और संघ आदि के प्राकृतिक अधिकार नहीं हैं यह बात नहीं कि प्रजातंत्र का गुण रूप नहीं हो सकता और न रूप गुण। वस्तुतः गुण का ही मूर्तपक्ष रूप है और रूप की ही आन्तरिक सार्थकता गुण। व्यक्ति स्वातंत्र्य प्रजातंत्र का रूप और गुण दोनों ही हो सकता है। ऊपर हमने प्रजातंत्र के गुण को केवल प्रजातंत्रात्मक अर्थतंत्र के रूप में व्यवहार किया है। लिंकन ने

* द्रष्टव्य—माडर्न पोलिटिकल थाट्स—लेखक श्री सी० ई० एम० जोड पृ० ७०

प्रजातंत्र की परिभाषा की थी। 'प्रजातंत्र जनता की, जनता से और जनता के लिये सरकार है।' 'जनता की' और 'जनता से' तक तो बात सीधी है किन्तु 'जनता के लिये' पद में आर्थिक तत्त्वों का समावेश हैं। जो सरकार 'कुछ पूंजीपतियों के हित साधन की कार्यकारिणी समिति' मात्र है वह क्या जनता के लिये होगी ?

प्रजातंत्र की यह असंगति असह्य है। आज प्रजातंत्र के रूप और गुण दोनों में समन्वय की आवश्यकता है। आज हमें केवल प्रजातंत्रात्मक सरकार की ही आवश्यकता नहीं अपितु प्रजातंत्रात्मक समाज भी चाहिये। इसी प्रकार केवल उस समाज से हमारा काम नहीं चलेगा जो रोटी के मामले में सबको बराबर रखेगा, अपितु वह प्रजातंत्रात्मक सरकार भी चाहिये जिसका निर्माण जनता करेगी और जो हमें अभिव्यक्ति, विचार और संघ आदि के आधारभूत व्यक्तिगत-स्वातंत्र्य से वंचित नही करेगी।

समाजवाद और प्रजातंत्र के समन्वय की आवश्यकता धीरे-धीरे प्रकट और प्रबल हो रही है। आज व्यापक रूप से यह अनुभव किया जा रहा है कि समाजवाद और प्रजातंत्र दोनों में से कोई भी अपने आप में पूर्ण नहीं। तभी समाजवादी प्रजातंत्र (Socialist Democracy) तथा प्रजातंत्रात्मक समाजवाद (Democratic Socialism) जैसे शब्दों का प्रयोग प्रचलित हो उठा है। आज की प्रजातंत्रात्मक सरकारें समाजवाद की अपेक्षा युग के दबाव से मान रही हैं और केवल प्रजातंत्र के रूप से सन्तुष्ट न होकर प्रजातंत्र के गुण की स्थापना के लिये अपने ढंग से विकल हैं। उसी प्रकार समाजवादी सरकारें भी सामाजिक प्रजातंत्र के अतिरिक्त राजनीतिक प्रजातंत्र की भी घोषणा कर रही हैं। दूसरे शब्दों में ये समाजवादी सरकारें प्रजातंत्र के गुण के साथ रूप का योग स्थापित करने की बातें कर रहीं हैं। आधुनिक इतिहास का विद्यार्थी जानता है कि स्तालिन की मृत्यु के बाद अधिनायक तंत्र को रूस में गाली मिली और ख्रुश्चेव के नेतृत्व में सहिष्णुता तथा प्रजातंत्रीकरण की लहर दौड़ने लगी। यह युग की मांग का दबाव था। ऐसा लगता था कि प्रजातंत्रीकरण की यह लहर समस्त साम्यवादी देशों को अपने सुखद आक्रोड़ में सदा के लिये ले लेगी। किन्तु हाल में हंगरी के भूतपूर्व प्रधानमंत्री इमरे नज की हत्या ने विश्व के विवेक को धक्का दिया है और ऐसा लगने लगा है कि जिस उदार धारा को ख्रुश्चेव ने इतनी दूरदर्शिता पूर्वक चलाया था वह दूनी गति से साथ पीछे लौट गई है। हो सकता है प्रजातंत्रीकरण की इस हार का कारण साम्यवाद का वह सैद्धान्तिक दोष हो जो हिंसा में विश्वास करता है तथा सिद्धि के लिये साधन को निर्दोष मानता है। किन्तु ऐसा होगा नहीं। प्रजातंत्रीकरण की लहर फिर समय पाकर जिन्दी होगी।

समाजवाद और प्रजातन्त्र के इस विवाद में भारत को एक नया दर्शन देना है। यदि यह विश्व ने स्वीकार कर लिया तो आज के इन दो महान विचारों में समन्वय आप से आप स्थापित हो जाएगा। अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि के अलावे राष्ट्रीय हित के लिये भी यह आवश्यक है। यह सुविदित है कि भारत ने समाजवाद को अपना लक्ष्य घोषित किया है। साथ ही उसका विश्वास प्रजातंत्र में भी अडिग है। ऐसी हालत में भारत को प्रजातंत्रात्मक ढंग से ही देश में समाजवाद की स्थापना करनी है। ऐसा न हो कि पश्चिम के देशों की तरह यहां भी प्रजातंत्र के रूप और गुण में असंगति रह जाय। अर्थात् सरकार तो प्रजातंत्रात्मक हो जाय किन्तु समाज प्रजातंत्रात्मक न हो सके।

सर्वोदयवाद

यह दर्शन 'सर्वोदयवाद' का है– गांधीवाद जिसका व्यक्तिवाचक नाम है। सौभाग्य से गांधीवाद को महात्मा गांधी की मृत्यु के बाद सन्त विनोबा मिल गया जिसके व्यक्तित्व में एक साथ ही लेनिन और शंकराचार्य का व्यक्तित्व जाग उठा है। इस क्षीण-काय ऋषि के व्यक्तित्व में शंकराचार्य का दर्शन, तार्किकता और वाचाशक्ति है तो लेनिन की व्यवहारिकता और कर्मठता भी। यदि विनोबा न होता तो शायद सर्वोदयवाद को भी 'यूटोपियन' (स्वप्नदर्शी) कह कर एक ओर टाल दिया जाता। किन्तु सर्वोदयवाद की भौतिक सफलताओं और प्रसिद्धि ने इसे अन्तर्राष्ट्रीय चर्चा का विषय बना दिया है। भूदान और ग्रामदान में 'सर्वोदयवाद' को श्लाघनीय सफलताएं मिली हैं। सम्पत्तिदान और जीवनदान में भी सर्वोदय को उपेक्षणीय सफलता नहीं मिली है।

'सर्वोदय' जीवन के मूल्यों में आमूल परिवर्तन का सिद्धान्त है। आज तक समाजवाद के जितने सिद्धान्त हुए हैं सर्वोदय सब के भद्रतम तत्वों का योग है। इसलिए कहा जाता है कि सर्वोदय समाजवाद की भाषा का अन्तिम शब्द है। इतना ही, नहीं सर्वोदय प्रजातंत्र की भाषा का भी अन्तिम शब्द है। सर्वोदय का मूल-दर्शन अत्यन्त सूक्ष्म और छोटा है। यह 'ट्रस्टीशिप' का सिद्धान्त है जिसका विचार यह है कि सभी सम्पत्ति और मानवीय उपलब्धियां, प्रतिभा और गुण प्रकृति तथा सामाजिक जीवन की देन हैं। अतः जो कुछ मेरे पास है वह समाज की धरोहर है और समाज के लिए है। 'सर्वोदय' एक पूर्ण सिद्धान्त नहीं है। इसलिए यह स्थिर और शाश्वत सिद्धान्त है।

'ट्रस्टीशिप' की भावना के अनुसार व्यक्ति का कर्तव्य है कि उसके पास जो कुछ है समाज हित में प्रयोग करे। यह सर्वोदय का प्रथम सूत्र है। स्पष्ट है कि जो व्यक्ति इस सिद्धान्त में विश्वास करेगा उसके समस्त व्यक्तिगत आचरण की एक संहिता होगी जिसके प्रकाश में वह सर्वदा लोक-हित के अनुकूल आचरण करेगा। कुछ छिपायेगा नहीं, अनुचित रूप से कुछ संग्रह नहीं करेगा। इसलिये कहा जा सकता है—सर्वोदय व्यक्तिगत दृष्टि से आचरण की संहिता है।

सर्वोदय का द्वितीय सूत्र विकेन्द्रीकरण का है। देश या समाज में कहीं भी राजनैतिक अथवा आर्थिक शक्तियों का केन्द्रीकरण नहीं होना चाहिए। गाँव अपने आप में पूर्ण हों। उनका शासन दिल्ली से न हो। आर्थिक विकास की योजना भी बने तो वह ऊपर से नीचे न उतरे बल्कि नीचे से ऊपर जाये। अर्थात् ग्राम राज्य की स्थापना हो। सर्वोदय ग्रामतंत्र है। सर्वोदयवाद में ग्रामतंत्र का योग ही देशतंत्र का रूप निर्धारित करेगा। ज्ञातव्य है कि इसी प्रकार फेबियन समाजवादियों ने भी आबादी के हर केन्द्र पर प्रजातंत्रात्मक सामाजिक संगठनों की कल्पना की थी।

तृतीयतः सर्वोदयवाद साधन के रूप में हर सिद्धि के लिये सत्य और अहिंसा का समर्थक है। सत्य और अहिंसा सर्वोदय का तीसरा सूत्र है। वह साधन और सिद्धि दोनों की पवित्रता में विश्वास करता है। हिंसा नहीं है अपितु विचार और अभिव्यक्ति की हिंसा भी सर्वोदय में हिंसा है। सर्वोदय भारत के उस महान धार्मिक आन्दोलन जैन धर्म से प्रभावित है जिसने 'स्याद्वाद' को जन्म दिया था तथा विचारों और चिन्तन के क्षेत्र में सहिष्णुता पर जोर दिया था।

सर्वोदय के ये तीन सूत्र मानवता के कल्याण के मंत्र हैं। जब तक इनका सम्यक प्रचार नहीं होता समाजवाद प्रजातंत्र नहीं होगा और प्रजातंत्र समाजवाद नहीं होगा। रूस में नागरिक अधिकारों की मान्यता क्यों नहीं है? हंगरी में इमरे नेगी की राजनैतिक हत्या अपने विचारों की अभिव्यक्ति के लिए क्यों हुई? फ्रांस के तथाकथित प्रजातंत्र में देशी युद्ध (सिविल वार) की धमकी देकर दिगाले क्यों विजयी हुआ? तथा जनता की तथाकथित संसद एक व्यक्ति की इच्छा से क्यों भंग हुई? अमेरिका और इंग्लैण्ड में सरकारी कर्मचारियों की हड़तालें और औद्योगिक अशान्तियां किस की साक्षी हैं? समाजवाद की या प्रजातंत्र की? भारत में जो कभी डाक कर्मचारियों, कभी रेलवे कर्मचारियों, कभी बैंकों, तो कभी डाकघर के कर्मचारियों की हड़तालें होती हैं, वह क्या तथाकथित समाजवाद की विजय के सबूत हैं? क्या इन कार्यों से बराबर अड़ंगा पाकर सरकार इन कर्मचारियों के अधिकारों को छीनने की कोशिश नहीं करेगी?

ऐथेन्स के संबंध में एक प्राचीन चिन्तक ने कहा था कि यह ग्रीस की पाठशाला है। क्या भारत इस शताब्दी के सबसे महान पुरुष महात्मा गांधी के दर्शन की निधि पाकर तथा सर्वोदयवाद की सांस्कृतिक, राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक प्रयोग-भूमि बनकर सम्पूर्ण विश्व की पाठशाला नहीं बन सकता? पश्चिम की दृष्टि में अनेक अर्थों में एशिया की पाठशाला तो वह आज भी है।

—

हमारी सामुदायिक विकास योजनाएं

(पृष्ठ ४६५ का शेष)

प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र खोले गए	४७,०००
प्रौढ़ साक्षर बनाए गए	१२,६६,०००
सामुदायिक केन्द्र (जिनमें पुस्तकालय-आदि शामिल हैं)	१,१४,०००
नए मकानों का निर्माण	५५,०००
आदर्श मकानों का निर्माण	४,१५६
सहकारी समितियां स्थापित की गईं	३६,०००
सहकारी समितियों में नए सदस्य	२,०७,०००

विभिन्न योजनाओं पर हुए सरकारी व्यय में से ४२५ लाख रु० पशुपालन तथा कृषि विस्तार योजनाओं पर खर्च किए गए। सिंचाई तथा भूमि कृषि योग्य बनाने की योजनाओं पर ६२४ लाख तथा ६३ लाख रु० खर्च किए गए, स्वास्थ्य व ग्राम सफाई में ५१० लाख तथा शिक्षा पर ३६८ लाख रु० खर्च किए गए। सामाजिक शिक्षा पर २१३ लाख, संचार साधनों पर ६२३ लाख, ग्राम दस्तकारी तथा उद्योगों पर १८३ लाख, गृह-निर्माण पर १६८ लाख रुपये खर्च किए गए।

२० फरवरी सन् १६५७ को केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड की अध्यक्षा श्रीमती दुर्गाबाई देशमुख ने अपने वक्तव्य में कहा कि वर्तमान पंचवर्षीय योजना की अवधि समाप्त होने तक बोर्ड देश में ५॥ लाख गांवों में ५ लाख के लिए १ लाख कल्याण विस्तार केन्द्र खोल देगा। उन्होंने कहा कि दूसरी पंचवर्षीय योजना में व्यय के लिए २४ करोड़ रु० रक्खे गये हैं। इसमें से १०॥ करोड़ रुपया जेलों से मुक्त किये गये कैदियों, बेघर-बार लोगों एवं इसी तरह दूसरे व्यक्तियों की देखभाल और पुनर्वास की योजनाओं पर खर्च किये जायेंगे। हर राज्य में सात-सात लाख रु० की रकम से पाँच किस्मों के आश्रम खोले जाएंगे। इन आश्रमों में पांच-पांच सौ आदमियों को काम मिल सकेगा। बोर्ड ने १० आश्रम और २६ जिला केन्द्र खोलने की आज्ञा दी है। दो आश्रम खुल भी गये हैं। ये आश्रम उन गैर सरकारी आदमियों को सौंप दिये जावेंगे जिन्हें इस तरह के काम का अनुभव होगा।

बोर्ड की बम्बई योजना के अंतर्गत २.७ करोड़ रुपये बम्बई राज्य के हिस्से रक्खी गई हैं। बम्बई राज्य के हिस्से रक्खी गई हैं। बम्बई राज्य की विभिन्न किस्मों की ६६० संस्थाओं को २४ लाख रुपया अब तक दिया जा चुका है। उन्होंने यह भी बताया है कि बोर्ड ने कार्यकर्त्ता महिलाओं के लिए ३० होस्टल खोलने का निश्चय किया है। एक होस्टल मद्रास में खोल भी दिया गया है।

जिन दो सौ राष्ट्रीय विस्तार सेवा खंडों को १६५७-५८ में सामुदायिक विकास खंडों में परिवर्तित किया जाना है, उनमें से लगभग सौ खंड १ अप्रैल, १६५७ से सामुदायिक विकास खंडों में परिवर्तित कर दिये गये हैं।

इन खंडों में से ६ आंध्र में, ७ असम में, १० बिहार में, १७ बम्बई में, ७ उड़ीसा में, २२ मध्यप्रदेश में, १ केरल में, ६ मद्रास में, २ पंजाब में, ५ उत्तर प्रदेश में, ३ पश्चिमी बंगाल में, ३ मैसूर में, २ जम्मू और काश्मीर में, २ राजस्थान में, १ मणिपुर में और १ त्रिपुरा में हैं। बाकी सौ खंडों का परिवर्तन २ अक्टूबर सन् १६५७ को होगा।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्त तक सारे देश में राष्ट्रीय विस्तार सेवा खंडो का जाल बिछा देने का विचार है। इन खंडो के अन्तर्गत जितना क्षेत्र आता है, उसके ४० प्रतिशत का सामुदायिक योजनाओं द्वारा और अधिक विकास किया जाएगा। कुल मिलाकर अगले पांच सालों में ३,८०० राष्ट्रीय विस्तार सेवा खंड खोले जाएंगे। इनमें से १,१२० खंडों को सामुदायिक विकास खंडों में बदल दिया जायगा। इस काम के लिये योजना में दो अरब रुपये की व्यवस्था की गई है।

लेकिन जहां सामुदायिक योजनाओं में इतनी उन्नति हो रही है, वहां इसकी एक बड़ी त्रुटि की ओर भी हम ध्यान खींचना चाहेंगे और इसके लिए इसी विभाग के प्रमुख पत्र 'कुरुक्षेत्र' के कुछ वाक्य उधृत करना काफी होगा—

'सामुदायिक योजना क्षेत्रों के गैर सरकारी निरीक्षकों का यह अभिमत है कि वहां हुकूमत की बू अधिक है और जन-सेवा कम। इसके व्यतिक्रम भी हैं और जहां हैं, वहां काम भी अच्छा होता है। सामुदायिक योजना के कार्य का

[समाप्त

सर्वोदय पृष्ठ—

हमारी प्रगति धीमी नहीं

बहुतों के मस्तिष्क में यह प्रश्न खड़ा हो जाता है कि गत सात वर्षों में हमारे कथनानुसार पांच करोड़ एकड़ जमीन नहीं मिली। इस तरह कैसे चलेगा? मैं कहता हूं कि यह काम शांति से चल रहा है और शांति से ही चलना चाहिए। अगर ऐसा न हो, तो मैं यही समझूंगा कि समाज में कहीं कुछ बिगड़ रहा है। इसलिए मुझे आज की स्थिति से बिलकुल निराशा नहीं। मेरी यात्रा शुरू होकर सिर्फ सात ही वर्ष हुए हैं, लेकिन मैं जिस स्वामी का सेवक हूं, वह चौदह साल तक घूमा, तब कहीं रावण-मुक्ति हो पायी। इसलिए उसके इस तुच्छ सेवक से इतनी कम अवधि में क्रांति की आशा करना दुराशा करना ही कही जायगी। —विनोबा

जमीन पर सबका हक है

एक भाई ने प्रश्न किया है कि "आप कहते हैं कि सबको जमीन मिलनी चाहिए। लेकिन सभी लोग जमीन पर कैसे जियेंगे?"

तो हुआ है कि जहां गांवों में पहले अधिकारियों की संख्या बहुत कम थी, वहां अब काफी संख्यक अधिकारी पहुँच गये हैं, परन्तु उनके कारण गांवों की उन्नति हो रही है, इसका कोई ठोस प्रमाण हमें नहीं मिलता। बल्कि उन्होंने गांवों की स्वायत्त शासन संस्था को भी छा लिया है। ...कहने के लिये तो दो हजार से ऊपर ब्लाक बन चुके हैं, जिनका प्रसार २ लाख ७५ हजार गांवों में और १५ करोड़ जनता के अन्दर है परन्तु इसकी वास्तविकता क्या है? योजना के उपयुक्त हों या न हों, अफसरों की संख्या तो काफी है लेकिन जिन ग्राम सेवकों पर योजना का दारोमदार है उनकी संख्या कितनी है?—हर गांव के पीछे एक ग्राम सेवक! उद्यम, अध्यवसाय, उत्साह, देश सेवा और ग्राम सेवा सब उसी ग्राम सेवक के लिये है। ताज्जुब क्या कि वह भी खानापूरी में लग जाता है और वह भी छोटा अफसर बन जाता है।'

धन बहता रहे!

"धन को धारण कर रखने पर वह निधन का ही कारण बन जाता है। इसलिए धन को द्रव्य बनाना चाहिए। जब वह बहने लगता है तभी द्रव्य (Money in cerculation) बनता है। द्रव्य बनाने पर धन धन्य बन जाता है।

"जिस तरह धन द्रव्य बनकर बाप से बेटे की ओर ओर इससे पोते की ओर बहता है, इसी तरह वह पड़ौसी की ओर भी बहना चाहिये। धन को सच्चे अर्थों में द्रव्यत्व प्राप्त होना चाहिये। उसे दौड़ते रहना चाहिये। अगर हमारे शरीर में रक्त एक ही जगह जम जाय, तो आपरेशन की नौबत आ जाती है इसलिए रक्त सतत शरीर बहता रहना चाहिये। इसी तरह धन भी सतत समाज में बहता रहना चाहिये। — विनोबा

"येलवाल के नेताओं की परिषद् में मैंने दो परस्पर प्रमेय रखे थे। पहला प्रमेय यह कि खेती पर कम-से-कम लोगों का बोझ हो, याने खेती कम-से-कम लोगों का धंधा हो और दूसरा प्रमेय यह कि हर एक का खेती के साथ सम्बन्ध होना चाहिए। दूसरे प्रमेय में मानव-जीवन के विकास और आनन्द का प्रश्न है। हर परिवार को कम-से-कम आधी एकड़ जमीन मिलनी चाहिए और उसमें वह शाक-सब्जी उगाये। हरएक का जमीन से संबंध हो, यह मानव धर्म है। जिस राष्ट्र का निसर्ग से सम्बन्ध नहीं रहेगा, वह राष्ट्र अवनत होगा, लेकिन जमीन पर सारे समाज का जीना संभव नहीं। इसलिए अधिकाधिक लोगों को दूसरे धंधे देना, यह दिन-ब-दिन अधिक आवश्यक लग रहा है। बिलकुल आधुनिक साधन लाकर विज्ञान का पूरा उपयोग कर, चाहे तो अतुल शक्ति भी लाकर देहातों को विकसित करना चाहिए। सिर्फ कौनसे साधन का प्रयोग हो, यह परिस्थिति देख कर विवेक के साथ तय करना चाहिए। जमीन सबकी होनी चाहिए, इसका अर्थ सबको जोतनी चाहिए, लेकिन हरएक को ऐसा विश्वास होना चाहिए कि मेरा जमीन पर हक है और जमीन मुझे मिल सकती है।"

एक भाई ने प्रश्न किया है कि ग्रामदान और सहकारी खेती, दोनों के बीच क्या फर्क है ? अगर ग्रामदान में समान वितरण हुआ, तो कठिन परिश्रम के लिए अभिक्रम क्या होगा ?

सहकारी खेती और ग्रामदान, दोनों के बीच गदहे और घोड़े जितना अन्तर है । गदहा भारवाही पशु है और घोड़ा तेजी से यात्रा करने वाला पशु । सहकारी खेती में जो जितनी जमीन का मालिक है, उतनी ही उसे प्राप्ति होगी । प्रश्नकर्त्ता को संदेह है कि कदाचित ग्रामदान ही गदहा साबित होगा । लेकिन मैं पूछता हूँ कि आखिर आपके घर में कौनसा अभिक्रम होता है ? हम लोग माँ, बाप और बच्चों को उनकी कमाई या हिस्से के अनुसार खाने को नहीं देते, क्यों कि घर का प्रेम का कानून चलता है । घर में सबसे अधिक अभिक्रम माँ को रहता है । पति मर जाय, तो वह बच्चे की शिक्षा के लिए अपार कष्ट उठाती है । कभी वह नहीं कहती कि 'बेटे, तेरा गुजारा करने वाला बाप मर गया । अब तेरी सुविधा देखने वाली मैं हूँ, इसलिए पहले मेरी व्यवस्था हो जाय । मैं रहूँगी, तभी तू रह सकता है । इसलिए पौष्टिक आहार पहले मैं खा लेती हूँ । तू जब कमायेगा, तब खायेगा ।' सारांश, इस तरह जब घर में प्रेम का सिद्धान्त चलता है, तो वह गांव में क्यों न चले ? वहां स्पर्धा क्यों ?

स्पर्धा से ही सारा घोटाला

आजकल लोगों के दिमाग में ऐडम स्मिथ का शास्त्र घुस गया है और उसी ने सारा घोटाला कर दिया है । उनकी यही भावना है कि स्पर्धा करके जो कमायेगा, उसी के श्रम का मूल्य होगा । वे हर बात का मूल्य पैसे में आंकना चाहते हैं, इसीलिए प्रेम का मूल्य पहचान नहीं पाते । फिर दंड-शक्ति पर श्रद्धा बैठती है । स्पर्धा से ही सारे काम होंगे, ऐसा विश्वास हो जाता है ।

सामुदायिक विकास और भूदान में सम्बन्ध ?

सामुदायिक विकास और भूदान, दोनों आन्दोलनों में सरकार समन्वय नहीं करना चाहती ।

ग्रामदान के विषय में उदासीनता सरकार के लिए शोभनीय नहीं । उदासीनता का अर्थ है दार्शनिक उदासीनता

विकेन्द्रीकरण अपेक्षित

गांधीजी चाहते थे कि देश के गांव आत्मपूरित हो जायं । इसके साथ ही केन्द्रीकरण और विकेन्द्रीकरण का सवाल पैदा होता है । इसे यों समझा जाता है कि कुछ लोग यह कहते हैं कि हर एक मकान में एक कुआं होना चाहिए । दूसरे यह चाहते हैं कि एक बड़ा भारी जलागार होना चाहिए और उसी से एक विशाल क्षेत्र की जल की आवश्यकता पूरी की जानी चाहिए ।

मैं तो इस पक्ष का हूं कि जलागार की अपेक्षा घर-घर में कुएं का होना अच्छा है । यदि जलागार टूट जाय अथवा केन्द्रीकरण के होते हुए सत्ता भंग हो जाय, तो ऐसी दुर्दशा नहीं होगी ।

—राजेन्द्रप्रसाद

आखिर ऐसी दार्शनिक तटस्था क्यों रखी जाय कि ग्रामदान हो जाने के बाद ही हम कुछ करेंगे ? कहा जाता है कि अगर हम ग्रामदान प्राप्त करने में मदद देंगे, तो सरकारी आदमी होने के कारण उससे दबाव पड़ेगा । दबाव न पड़े, यह ठीक है । लेकिन सरकार यह सोचे कि दबाव न पड़े, इसलिए हम नैतिक कार्य भी न करेंगे, तो लोकतन्त्र में उन्हें कभी अवसर ही न मिलेगा । अगर वे नीति के काम न करें, तो अनीति के काम करें ?

—विनोबा

दियासलाई उद्योग पर विदेशी एकाधिपत्य

जहां तक दियासलाई-उद्योग का प्रश्न है, आज संसार के बहुत बड़े भाग पर 'विमको' नामक विदेशी कम्पनी का एकाधिपत्य स्थापित है । यह कम्पनी संसार के विभिन्न देशों में भिन्न-भिन्न नामों से दियासलाई बनाकर बेचती है और संसार के व्यावसायिक मंच पर अपने अनैतिक तरीकों और झूठे हथकण्डों से अन्य किसी प्रतिद्वन्द्वी को नहीं टिकने देती । स्वीडिश कम्पनी द्वारा बनाई जाने वाली दियासलाइयों के थोड़े से क्षेत्र को छोड़कर आज संसार भर में इसी कम्पनी ने अपना जाल फैला रखा है और समस्त देशों का धन अकेली बटोर रही है । कुछ देशों ने इस दिशा में कि वे दियासलाई ऊद्योग से उक्त कम्पनी का एकाधिपत्य समाप्त कर दें, व्यक्तिगत रूप से इस उद्योग को

प्रारम्भ भी किया, किन्तु वे सभी असफल रहे और उक्त कम्पनी के सामने उनको अपना सिर झुकाना पड़ा, ऐसी विषम परिस्थितियों में मैंने देशी दियासलाई-उद्योग का उत्तरदायित्व अपने सिर पर लिया है और इसमें मुझे आशातीत सफलता भी प्राप्त हुई है।

दियासलाई-उद्योग गांव-गांव चले

हमने दियासलाई की सलाइयों से लगाकर उसकी डिब्बी तक सभी चीजें बांस से बनाई है, जबकि ये कम्पनियां लकड़ी का उपयोग करती हैं। जहां तक इन सलाइयों के मूल्यों का प्रश्न है, हाथबनी व मशीनबनी दियासलाइयों के मूल्यों में बिलकुल फर्क नहीं है, हम भी अपनी दियासलाई बाजारों में उसी भाव में बेच सकते हैं, जिस भाव में ये कारखाने वाले बेचते हैं।

मेरी यह हार्दिक कामना एवं अटल विश्वास है कि इस देशी दियासलाई उद्योग को अपनाकर देश के गरीबों और बेकारों को रोजगार देंगे और उन्हें स्वावलम्बी बनायेंगे। इस उद्योग में इतनी क्षमता अवश्य है कि यह साधारण आदमी को डेढ़ आना प्रतिघण्टा मजदूरी दिला सकता है। मैं चाहता हूं कि यह उद्योग देश के गांव गांव और घर घर में पहुँच जाये और हमारे देश की अपार सम्पत्ति विदेशों में जाने से बच सके।

—सतीशचन्द्र दास गुप्त

(पृष्ठ ४७० का शेष)

उसका पूरा भुगतान प्राप्त करें। आयातक व्यापारियों को निर्यात के लाइसेंस दिए जाएं। भारतीय पदार्थ विदेशों में सस्ते नहीं पड़ते, इसका कारण है कि हमारे पास अपने व्यापारिक जहाज नहीं हैं। जापान, जर्मनी इंग्लैण्ड और अमेरिका आदि देशों के अपने-अपने जहाज हैं और वे सस्ते भाड़े में दूसरे देशों को माल पहुँचाकर अपने निर्यात पदार्थों का मूल्य बढ़ने नहीं देते पर भारत सरकार तटकर में कमी किए बिना ही समुद्री किराए में राहत दे, तो निर्यात पदार्थों के दाम गिर सकते हैं। भारत सरकार कलकत्ता, बम्बई और मद्रास के बन्दरगाहों से अपनी व्यवस्था में टाइम चार्टर जहाज चलाए और उनसे माल लागत व्यय में ले जाए। इससे समुद्री किराए में ६० प्रतिशत राहत मिलेगी और इतने ही दाम निर्यात पदार्थों के गिर जाएंगे। हमारे अर्जन की जो विदेशी मुद्राएं इस स्तर तक जहाजी भाड़े में अदृश्य रूप में चली जाती हैं, उनकी बचत होगी और सरकार को भी कोई क्षति न होगी। सरकार जहाजों का जो किराया जहाजों के मालिकों को दे उसी किराए को निर्यातक व्यापारियों से वसूल करे। तीसरा उपाय यह है कि रिजर्व बैंक कुल काल के लिए १ शि० ६ पेंस के बजाय विशेष बट्टे की दर १ शिलिंग में एक्सपोर्ट बिल खरीदे। इससे निर्यातक व्यापारियों को सुविधा मिलेगी कि वे निर्यात पदार्थों के १० प्रतिशत दाम गिरा दें। इन—सब सुविधाओं से विदेशी खरीदार और निर्यात दोनों प्रोत्साहन पाकर आगे बढ़ेंगे। विदेशी मुद्रा अधिक अर्जन करने पर बट्टे की क्षति महसूस न होगी। तटकर की आय में वृद्धि होने से राजस्व में अधिक आय होगी। बिना निर्यात बढ़ाए हम विदेशी ऋण किस प्रकार चुका सकेंगे? आगे चलकर हमें प्रति वर्ष १०० करोड़ रुपए की विदेशी मुद्राएं ऋण के मद में चुकानी पड़ेंगी।

विदेशी प्रतिष्ठानों को रियायतें

भारत में विदेशी प्रतिष्ठानों को जो विशेष रियायतें प्राप्त हैं और जिनका वे उपभोग करते हैं, वे दूसरे किन्हीं स्वतन्त्र देशों में प्राप्त नहीं हैं, उन्हें अपने देशों की सरकारों से ये रियायतें प्राप्त नहीं हैं। विदेशी प्रतिष्ठानों ने आय करों में राहत की मांगें कीं। सरकार ने उन्हें पूरी कीं। इधर सरकार जब फिर नई विदेशी पूंजी के विनियोजन की मांग में बढ़ी, तब विदेशी प्रतिष्ठानों ने यह मांग की कि व्यवस्था का अन्त कर दिया जाए, जिसे आय कर में वे दोहरे कर की पद्धति कहते हैं। कहा जाता है कि भारत सरकार ने यह रियायत देना मंजूर कर लिया है। भारत और पश्चिम जर्मनी के बीच में निजी विदेशी पूंजी के सम्बन्ध में नया समझौता हो रहा है। अमेरिका से भी समझौते की बात चल रही है। देश के निजी क्षेत्र के प्रतिष्ठानों को ये रियायतें नहीं दी गयीं। यह भेदभाव मूलक व्यवहार है। राष्ट्रीय सरकार संसद की स्वीकृति के अभाव में कैसे ये पग बढ़ा रही है।

जूट-उद्योग की स्थिति और समस्याएं

श्री हेमचन्द्र

स्वर्णिम रेशा (जूट) का वास्तव में भारत के लिये स्वर्ण के समान विदेशी विनिमय—डालर अर्जन की दृष्टि से महत्व है। जूट भारत की एक महत्वपूर्ण कृषि सम्पत्ति है। जूट उत्पादन के लिये भारत में प्रकृति प्रदत्त सुविधाए उपलब्ध हैं। मानव श्रम, पूंजी प्राप्ति एवं विनियोजन की दृष्टि से नियोजन काल में मशीनें निर्मित करने वाली पूंजीगत मशीनें प्राप्ति की दृष्टि से इस उद्योग की महत्ता निर्विवाद है। सर्वप्रथम सन् १८५५ में जार्ज आक्लैंड नामक अंग्रेज महानुभाव ने बंगाल के हुगली जिले के रिशरा नामक स्थान में ८ टन प्रतिदिन उत्पादन क्षमता वाली एक कताई मिल की स्थापना करके भारतीय औद्योगिक इतिहास में एक नवीन उद्योग की स्थापना का सूत्रपात किया। इसके अन्नतर इस उद्योग ने कभी द्रुत कभी अवरुद्ध गति से प्रगति की - विशेषकर पश्चिमी बंगाल में उत्पादन इकाइयों की स्थापना का प्रयत्न हुआ। भारतीय जूटोद्योग की विकास परम्परा का इतिहास निसंदेह मानवीय साहस, अन्वेषण और आश्चर्य का परियाचक है। भारत में आज लगभग जूट की ११२ मिलें हैं, इनमें से पश्चिमी बंगाल में १०१, मद्रास में ४, बिहार में ३, उत्तरप्रदेश ३, तथा मध्यप्रदेश में १ स्थित है। एक समय था जब भारत २६० रुपया का १८ टन जूट का निर्यात करता था। आज वही कुल विदेशी विनिमय अर्जन की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान रखता है। निम्न तालिका के द्वारा विदेशी विनिमय की दृष्टि से महत्व स्पष्ट होता है। होती है।

(करोड़ रुपयों में)

सन्	कुल विदेशी व्यापार	जूट निर्यात के द्वारा	चाय निर्यात के द्वारा	सूती वस्त्र निर्यात के द्वारा
१९५१-५२	६८३	२६६	७३	५४
१९५२-५३	५३७	१२६	८०	६५
१९५३-५४	५१४		११४	१०२
१९५४-५५	५६८		१२४	१४६
१९५५-५६	६०९		१२०	१११
१९५६-५७	६००		१२६	१४९

इस उद्योग में कुल ३० लाख के लगभग औद्यो[गिक] श्रमिकों का १० प्रतिशत अर्थात ३ लाख के लग[भग] कामकर अपनी रोजी प्राप्त करते हैं। वस्त्र उद्योग [के] उपरान्त जूटोद्योग में सबसे अधिक औद्योगिक श्र[मिक] कार्यरत हैं—

कपड़ा उद्योग	शक्कर उद्योग	जूट उद्यो[ग]
८०६,७०२	८८,६६०	२६१,[illegible]

भारत के समस्त जूट उत्पादक क्षेत्रों में कुल मिला[कर] २० लाख कृषक परिवार इस उद्योग के कारण अ[पनी] आजीविका प्राप्त करते हैं। ये जूट उत्पादक कृषक [...] की एक बहुत बड़ी धन राशि जूट उत्पादन को बढ़ा[ने में] संचित करने में सहायक हैं। इस उद्योग की कार्यरत पूं[जी] ७० से ७५ करोड़ रुपया के लगभग है। इस उद्योग [के] औद्योगिक श्रमिकों को ३० से ४० करोड़ रुपया वे[तन] (पारिश्रमिक) के रूप में प्रतिवर्ष वितरित होता है अ[तः] इस उद्योग पर परोक्ष रूप से आश्रित उद्योगों को दृष्टि[गत] रखते हुए विनियोजित पूंजी, श्रम मूल्य, कुल उत्पा[दन] एवं आय की मात्रा देखकर स्पष्ट हो जाता है कि यह उद्यो[ग] भारतीय अर्थतंत्र के मूलाधारों में प्रमुखता रखता है।

जिस प्रकार बम्बई राज्य वस्त्रोद्योग का केन्द्रस्थल [है] उसी प्रकार बंगाल का पाट उद्योग भारत में प्रथम स्था[न] रखता है। जूट का सामान जो कि "विश्व का केरियर" कहलाता है पश्चिमी बंगाल की अर्थव्यवस्था में प्रमु[ख स्थान] रखता है। भौगोलिक परिस्थितियों—आदर्श तापमान, [...] वर्षा की सुविधाओंकी उपलब्धि के कारण जूट उत्पाद[न के] लिए बंगाल एक आदर्श राज्य है। पश्चिमी बंगाल में [प्रति] एकड़ कच्चे जूट का उत्पादन २. ६ गांठ है तथा संभा[...]

[समा[...]

है कि यथेष्ट प्रयत्न करने पर द्वितीय योजना के अंत तक प्रति एकड़ में जूट का उत्पादन ३.०० गांठ तक पहुँच जाएगा। स्वतंत्रता के उपरान्त समस्त भारत के जूट उत्पादन का लगभग ४० से ५० प्रतिशत भाग इसी राज्य में उत्पादित होता है। प्रारंभ में पश्चिमी बंगाल में २.६६ लाख एकड़ क्षेत्र में लगभग ६.४८ लाख गांठ जूट की उत्पत्ति होती थी वह विकिसित होकर ७. ११ लाख एकड़ क्षेत्र में १७.२ लाख गांठ हो गई है। सन् ५२-५३ में पश्चिमी बंगाल में २४.१ लाख गांठ जूट का उत्पादन हुआ। पश्चिमी बंगाल में विस्तृत खेती के लिए भूक्षेत्र के विकास के लिये प्रयत्न किये गये परन्तु उत्पादन क्षेत्र

निम्न तालिका के द्वारा पश्चिमी बंगाल तथा अन्य राज्यों के जूट उत्पादन क्षेत्र का स्पष्ट चित्र दृष्टिगत होता है :—

सन् १९५६ में १ हजार एकड़ में से जूट उत्पादक क्षेत्र।

पश्चिमी बंगाल	५३४.७
बिहार	३३.५
आसाम	२५६.७
उड़ीसा	५८.७
उत्तरप्रदेश	२७.१
त्रिपुरा	१५.०

जूट उद्योग एक दृष्टि में

(१) संसार भर के जूट कारखानों में कुल जितने करघे हैं, उसके ५३ प्रतिशत यानी ७२.३६५ करघे भारत के इस उद्योग में हैं।

(२) यहां जूट की कुल १३२ मिलें हैं, जिनमें से ५० बंगाल में १०१, आंध्र में चार, बिहार में तीन, उत्तरप्रदेश में तीन और उत्तरप्रदेश में तीन और मध्यप्रदेश में एक है। ५० बंगाल की मिलें कलकत्ते के आसपास हुगली नदी के दोनों किनारों पर हैं। देश की ११२ मिलों का प्रबन्ध ८२ कम्पनियां देखती हैं।

(३) इन मिलों में एक पारी में प्रति सप्ताह ४८ घंटे काम होता है और इस प्रकार इनमें हर महीने १,००,००० टन पटसन का माल बनाया जाता है।

(४) देश में हर साल लगभग १ अरब ३० करोड़ रु० की कीमत की जूट की वस्तुएं तैयार होती हैं।

(५) जूट की चीजोंके उत्पादन या वितरण पर सरकार का नियंत्रण नहीं है। इण्डियन जूट मिल्स असोसिएशन इस उद्योग पर इस विचार से नियंत्रण रखता है कि मांग के अनुसार होता रहे।

(६) १९५७ में देश में जूट का १०,९६,२४८ टन उत्पादन हुआ और लगभग ८,४८,००० टन निर्यात हुआ, जिससे देश को १ अरब १४ करोड़ २० लाख रु० की विदेशी मुद्रा मिली।

(७) १९५५-५६ में भारत से ८,७१.५०० टन पटसन का निर्यात हुआ। आजकल विदेशी माल भी बाजारों में आ जाने के कारण स्पर्धा बढ़ रही है। इन सब बातों को ध्यान में रखकर दूसरी आयोजना में हर साल ९,००,००० टन पटसन के निर्यातका लक्ष्य रखा गया है।

९.१ लाख एकड़ अधिकतम सीमान्त पर पहुँच गया है। पश्चिमी बंगाल के कृषक—श्रमिक कच्चे जूट के उत्पादन से तो अपनी जीविका प्राप्त करते ही हैं परन्तु जूट मिलों में भी अधिकांश भारत के औद्योगिक श्रमिक कार्यरत रहकर भारत की बेरोजगारी की समस्या को उग्र होने से रोकते हैं। जलमार्ग की सुविधाओं के कारण आसाम से बंगाल के लिए कच्चा जूट और बंगाल बिहार उड़ीसा में सड़कों और रेलमार्ग के द्वारा मिल क्षेत्र में आता है।

भारत के विभाजन के परिणामस्वरूप भारत के पास कुल मांग की पूर्ति का ¼ भाग जूट क्षेत्र व उत्पादन शेष रहा तथा शेष पाकिस्तान के अंतर्गत चला गया, जिसके कारण भारत को ऊंचे दामों पर पाकिस्तान से कच्चे जूट का आयात करना पड़ता था। और पाकिस्तान भारतीय उद्योग को धक्का पहुँचाना चाहता था। आज के आर्थिक जगत का नारा है "अच्छा माल और सस्ती कीमत"। कागज और वस्त्र का प्रयोग स्थानापन्न

पदार्थ के रूप में पैकिंग के व्यवहार में आने लगा है। अतएव सरकार और उद्योग ने सहयोगपूर्वक इस राष्ट्रीय हित के उद्योग के विकास के लिये अनेक प्रयत्न किये। निम्नतालिका द्वारा स्पष्ट होता है कि किस प्रकार जूट उत्पादन, क्षेत्र और विदेशी विनिमय की बचत में नियोजन के कारण वृद्धि हुई।

सन्	कच्चे जूट के उत्पादन में वृद्धि (लाख गांठों में)	जूट उत्पादन क्षेत्र का विकास (लाख एकड़ में)	विदेशी विनिमय व्यय (करोड़ रुपयों में)
४७-४८	१६.५३	६.५२	६०
५३-५४	३०.६१	११.४६	१४.३२
५४-५५	४१.२६	१२.७३	१३.००
५६-५७	४२.२१	१८.८३	

भारत जो विभाजन से पूर्व ५३ लाख गांठ जूट का निर्यात करता था, वह आज ६५ लाख गांठ जूट का का निर्यात करता है। भारत के लिये प्रतिवर्ष ६३ लाख गांठ जूट की आवश्यकता पड़ती है। द्वितीय योजना में जूट उत्पादन लक्ष्य ५५ लाख गांठ निश्चत किया गया है भारत आज लगभग ४५ लाख गांठ जूट उत्पादन के लक्ष्य पर पहुँच गया है।

द्वितीय योजना में जूट के सामान का जो ६ लाख टन निर्धारित लक्ष्य है उसे उद्योग योजना समाप्ति के पूर्व ही प्राप्ति कर लेगा; भारत का जूटोद्योग कच्चे माल की प्राप्ति एवं उत्पादन की दृष्टि से आत्मनिर्भर हो गया है तथा विभाजन जन्य समस्या पर उसने अधिकार प्राप्त कर लिया है।

आज जूटोद्योग के सन्मुख स्थानापन्न पदार्थों और प्रतिस्पर्द्धा की समस्या उग्र रूप लेकर उठ खड़ी हुई है। प्राविधिक पद्धतियों के उत्तरोत्तर विकास के परिणाम-स्वरूप पश्चिमी राष्ट्रों ने जहां उत्पादन में आशातीत वृद्धि की है वहां उन्होंने पैकिंग सामान में नवीन प्रयोग करके नवीन पदार्थों का अन्वेषण कर दिया है। विश्व के राष्ट्र शक्कर को वस्त्र के थैलों में तथा खाद और सीमेंट को कागज की दुहरी परंत की बोरियों में पैक करने लगे हैं जिससे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जूट की खपत में ह्रास के लक्षण दृष्टिगोचर हो रहे हैं। पाकिस्तान भी अपने देश में जूट के मिलों की स्थापना करके विश्व प्रतिद्वन्द्वता के क्षेत्र में पदार्पण कर रहा है। अनेक मध्यपूर्व के मिश्र, बर्मा, थाईलैंड, फिलिपीन, चीन, जापान तथा दक्षिण अमेरिका में जूट या जूट के समान रेशे के उत्पादन प्रयत्न चल रहे हैं परन्तु उद्योग को इस पहलू से शंकित होने की आवश्यकता नहीं है। भारत आर्थिक नियोजन काल में से गुजर रहा है। भारत के शक्कर, खाद और सीमेंट उद्योग प्रगतिशील हैं। अतः जितनी वाह्य मांग में गिरावट आने की सम्भावना व्यक्त की जा रही है, उससे अधिक आंतरिक मांग में वृद्धि होगी।

कुछ हलकों में यह आशा की जा रही है कि द्वितीय योजना तक देश में ३००,००० टन जूट सामान की आन्तरिक खपत होने लगेगी।

सन्	वार्षिक आन्तरिक खपत
१९५४	११०,००० टन
१९५५	१७०,००० टन
१९५६	१९३,००० टन

इसके अतिरिक्त जूट क्षेत्र में एक विशाल उपभोग वस्तुओं के प्रयोग का अन्वेषण अछूता पड़ा हुआ है। नये-नये परीक्षणों से जूट के उपयोग निकल आएँगे, जिससे जूट की खपत बढ़ने लगेगी।

आज के प्रतिस्पर्धा के युग में यह जरूरी है कि जूट का उत्पादन व्यय कम हो। और इसके लिये आवश्यक है कि मिलों में नई से नई आधुनिकतम मशीनें लगें, भले ही स्थाई रूप से कुछ मजदूरों को बेकारी का भी सामना करना पड़े। श्रमिक उत्पादन की रीढ़ की हड्डी होते हैं। यदि मालिक मजदूर के सम्बन्ध पारस्परिक हित के आधार पर निर्भर नहीं है तो उत्पादन तो गिरता ही है साथ में राष्ट्रीय हित पर गहरा आघात पहुँचता है। अतः श्रमिकों को मालिकों की ओर से मानवीय सुविधाएं प्राप्त होनी चाहिये तथा मजदूरी का आधार रहन-सहन की आधार पद्धति होनी चाहिये। जूटोद्योग के मालिकों में शोषण की प्रवृत्ति न होकर सहयोग सहमति की प्रवृत्ति होनी चाहिये। श्रमिकों को भी राजनैतिक दलबल के आधार पर अपने आर्थिक हित को सुलझाने की चेष्टा नहीं करना चाहिये।

भूमि-सुधार : एक दृष्टि में

[पृष्ठ ४४४ का शेष]

क्षेत्र में ६ एकड़ तक रखी गई है । वे जमींदार, जिनकी आराजी काश्मीर के सिंचित क्षेत्र में ४ एकड़ और सूखे क्षेत्र में ६ एकड़ तथा जम्मू के सिंचित क्षेत्र में ६ एकड़ और सूखे क्षेत्र में ८ एकड़ से ज्यादा नहीं है, जमीन की इन मात्राओं तक आजादी के साथ बेदखली कर सकते हैं ।

पश्चिमी बंगाल में जो ७½ एकड़ से कम जमीन का मालिक है, उसे अपने पट्टीदार से पूरी जमीन बेदखल करने की इजाजत है । जो ७½ एकड़ से अधिक भूमि का मालिक है, उसे अपनी कुल उठाई गई जमीन का ⅓ भाग बेदखल करने का अधिकार है । बेदखली की कोई सीमा निर्धारित नहीं है । फिर भी कानून के मुताबिक कोई व्यक्ति २५ एकड़ से अधिक भूमि नहीं रख सकता । यह कानून बेदखली के लिये भी एक सीमा बन्दी का काम करता है ।

केरल में, विचाराधीन खेतिहर सम्बन्ध बिल, (१९५७) में धान के दो फसली खेतों के मामले में बेदखली की अधिकतम सीमा १५ एकड़ प्रस्तावित की गई है । इससे ज्यादा आराजी का मालिक किसी भी जमीन को बेदखल नहीं कर सकता ।

आंध्र प्रदेश (पहले वाला आंध्र क्षेत्र) बम्बई के विदर्भ प्रदेश, केरल, मध्यभारत, भोपाल, मध्य प्रदेश के विन्ध्य प्रदेश, मैसूर और मनीपुर में किसानों के हितों की रक्षा के लिए (बेदखली सम्बन्धी) अस्थायी प्रबन्ध किया जा चुका है । उड़ीसा और मद्रास में भी जमींदारों के बेदखली के सीमित अधिकार देकर किसानों के हितों की अस्थायी रक्षा की गई है । बिहार में जिन रैयतों को जबानी तौर पर जमीनें दी गई हैं, उन्हें बेदखल नहीं किया जा सकता ।

बेदखल किसानों को भूमि की वापसी

अनेक कारणों से किसानों को बड़े पैमाने पर बेदखल किया गया है । ये बेदखलियां आम तौर पर "आत्म समर्पण" के रूप में हुई हैं । बम्बई, हैदराबाद और दूसरे कई राज्यों में ऐसी बेदखलियां हुई हैं । इस के उपचार के लिए दूसरी पंचवर्षीय योजना में द्विपदी प्रणाली प्रस्तावित की गई है :

(१) पिछले ३ वर्ष में जो बेदखलियां या आत्म समर्पण हुए हैं, उनकी समीक्षा की जाय और उन्हें वापस दिलाया जाय ।

(२) बेजा दबाने के फलस्वरूप भूमि को स्वतः लौटाने की प्रवृत्ति को निरुत्साहित करने के लिए यह व्यवस्था की जाय कि किसानों द्वारा स्वतः भूमि लौटाना तब तक गैर-कानूनी माना जाय जब तक कि राजस्व अधिकारियों द्वारा उसकी लिखा पढ़ी न कराई जाय । यदि लिखा पढ़ी भी करा ली जाय, तो भी जमींदार उतनी ही भूमि बेदख कर सकेगा, जितनी भूमि प्राप्त करने का उसे अधिकार है ।

किसानों को भी भूमि की वापसी की व्यवस्था बिहार, मद्रास और भोपाल में की जा चुकी है । बिहार में कानून के अनुसार फरवरी १९५३ के बाद बेदखल की गई जमीन को किसान की प्रार्थना अथवा कलक्टर के हस्तक्षेप पर वापस किया जा सकता है । मद्रास में १ दिसम्बर १९५७ के बाद बेदखल किये गए किसानों को भूमि की वापसी की व्यवस्था की गई है । भोपाल में कानून बनने से तीन वर्ष पहले तक की बेदखलियों पर पुनर्विचार करने की व्यवस्था की गई है । बम्बई, (पहले का बम्बई क्षेत्र और मराठा-वाडा) में जमींदार स्वत: वापसी द्वारा उतनी ही भूमि पर कब्जा कर सकता है, जितनी को बेदखल करने का उसे हक है ।

किसानों के लिए मालकियत के हक़

पहली पंचवर्षीय योजना में आम तौर से यह नीति अपनाई गई थी कि किसानों को उस भूमि का मालिक बना दिया जाय, जिसे बेदखल नहीं किया जा सकता । इस दिशा में जो प्रगति की गई, वह बहुत धीमी थी । इसलिये दूसरी योजना में यह सिफारिश की गई कि जो जमीनें बेदखल करने योग्य नहीं है, उनके किसानों को राज्य के सीधे सम्पर्क में अविलम्ब लाया जाय और प्रत्येक राज्य इस बात का तुरन्त प्रबन्ध करे कि ज्यादा किसान भूमिधर अधिकार प्राप्त कर लें, जिससे किसान-जमींदार के परम्परागत सम्बन्धों का अंत किया जा सके । इस मामले में यह सोचा जाय कि लगान में कमी करने के काम को ऊंची प्राथमिकता दी जानी चाहिए ।

विभिन्न राज्यों द्वारा किसानों को भूमिधर बनाने के लिये जो कदम उठाए गए हैं वे तीन तरह के हैं :

(१) उत्तर प्रदेश और दिल्ली की भांति सभी किसान सरकार के सीधे सम्पर्क में ला दिए गये। उत्तर प्रदेश में सरकार किसानों से लगान वसूलती है और जमींदारों को मुआवजा देती है। दिल्ली में किसान अपनी भूमि के मालिक बन चुके हैं। उन्हें सरकार को लगान देने के साथ ही जमींदारों को मुआवजा भी देना पड़ता है। हैदराबाद के कानून के अनुसार भी सरकार को यह हक प्राप्त है कि वह किसी जमीन के स्वामित्व-अधिकार उसके किसान को दे दे। कुछ जिलों में इस अधिकार का उपयोग भी किया गया है। मराठवाड़ा में बम्बई सरकार ने यह व्यवस्था सभी जिलों में लागू कर दी है। पश्चिमी बंगाल के सभी गैररैयत सरकार के सीधे सम्पर्क में आ गए हैं और उन्हें रैयत के अधिकार प्रदान कर दिए गए हैं।

(२) किसानों से कहा गया है कि यदि वे निर्धारित तिथि तक नियत मूल्य जमा करके भूमिधरी अधिकार प्राप्त कर लेंगे तो उनके पास की भूमि बेदखल न की जा सकेगी। इस ढंग के कानूनों की व्यवस्था बम्बई में की गई है। केरल के प्रस्तावित कानूनों में भी एक नियत तिथि तक मूल्य देकर जमींन के मालिक बनाने की व्यवस्था है, लेकिन वहां यदि उस तिथि तक किसान मूल्य न जमा कर सके तो भी वह उस भूमि पर खेती करने का अधिकारी रहेगा।

दूसरी पंचवर्षीय योजना में सुझाव दिया गया है, संभव तरीका यही है कि लगान को योजना में बताई गई हदतक कायम करके किसानों को राज्य के सीधे सम्पर्क में लाया जाय। किसानों द्वारा प्रति वर्ष दिए जाने वाले लगान और मुआवजे की रकम का नियमन इस ढंग से किया जाय कि वह योजना में उल्लिखित वाजबी लगान से अधिक न हो। इस दृष्टि से विभिन्न राज्यों द्वारा नियत की गई अदायगी की शर्तें बहुत मंहगी हैं।

नीचे दिए गए राज्यों में जमीन की भावी बेदखली की निम्नलिखित सीमाएं निश्चित है :

(१) आंध्र प्रदेश तेलंगाना क्षेत्र में — १२ से १८० एकड़ भूमि
(२) आसाम : मैदानी इलाके में — ५० एकड़ भूमि
(३) बम्बई : पहले का बम्बई क्षेत्र में — १२ से ४८ ए[...]
सौराष्ट्र क्षेत्र में — ६० से १२० एकड़ [...]
मराठवाड़ा क्षेत्र — १२ से १८० एकड़ [...]
(४) जम्मू काश्मीर — २२¾ एकड़ [...]
(५) मध्यप्रदेश : मध्यभारत क्षेत्र — ५० एकड़ [...]
(६) मैसूर : कर्नाटक क्षेत्र — १२ से १८० एकड़ [...]
बम्बई क्षेत्र — ११ से ४८ एकड़ [...]
(७) पंजाब : पेप्सू क्षेत्र — ३० पक्का एकड़ [...]
(८) राजस्थान — ३० सिंचित एकड़ (६० सूखा ए[...]
(९) उत्तर प्रदेश — ३० एकड़ [...]
(१०) पश्चिमी बंगाल — २५ एकड़ [...]
(११) दिल्ली — ३० पक्का ए[...]

वैयक्तिक खेती की परिभाषा

दूसरी पंचवर्षीय योजना में अनेक राज्यों में की ज[...] वाली वैयक्तिक खेती की कमियों पर प्रकाश डाला है। योज[...] में यह प्रस्ताव रखा गया कि मौजूदा कानूनों की फि[...] परीक्षा करके उसमें वैयक्तिक खेती की परिभाषा जोड़ी ज[...]

(१) खेत के मालिक या उसके परिवार के किसी [...] व्यक्ति द्वारा खेती की देख रेख।

(२) खेती की देखरेख ठीक से हो सके, इसलि[...] मालिक या उसके परिवार का एक व्यक्ति उसी गांव में [...] निश्चित दूरी के स्थान में रहता हो, जहां आराजी है।

(३) खेती के सभी खतरों की जिम्मेदारी मालिक [...] जहां नौकरी या मजदूर के द्वारा खेती की जाती है [...] मजदूरी की अदायगी फसल के हिस्से के रूप में की ज[...] है, वहां उन नौकरों और मजदूरों को किसानी के [...] अधिकार दे दिए जाने चाहिये।

(४) जहां व्यक्तिगत खेती के लिए भूमि बेदखल [...] जाय, वहां यह देखना जरूरी है कि मालिक या उ[...] परिवार का व्यक्ति उस खेती में अपना वैयक्तिक श्रम ल[...] को तैयार है या नहीं।

केरल में, जहां का भूमि-सुधार बिल १९५७, [...] प्रवर समिति के समक्ष विचाराधीन है, १५ से ३० ए[...] भूमि की भावी बेदखली की व्यवस्था की गई है। [...] प्रदेशों में बेदखलियों के सीमा निर्धारण का काम [...] शेष है।

मौजूदा आराजियों का सीमा-निर्धारण

नीचे लिखे राज्यों में कानून बनाए जा चुके हैं—

(१) आन्ध्र प्रदेश : तेलंगाना क्षेत्र	१८ से २७० एकड़
(२) आसाम : मैदानी इलाका	५० एकड़
(३) बम्बई : मराठवाड़ा क्षेत्र	१८ से २७० एकड़
(४) जम्मू व कश्मीर	२२॥। एकड़
(५) मैसूर : कर्नाटक क्षेत्र	१२ से २७० एकड़
(६) पंजाब : पेप्सू क्षेत्र	३० पक्का बीघा (विस्थापित व्यक्तियों के मामले में ४० पक्का बीघा)
(७) पश्चिमी बंगाल	२५ एकड़
(८) हिमाचल प्रदेश	चम्बा जिले में ३० एकड़ और दूसरे क्षेत्रों में १२५ एकड़ रुपए के लगान वाले हिस्से तक

पहले के पेप्सू क्षेत्र के मामले में पंजाब की सरकार ने यह ताकत प्राप्त कर ली है कि यदि किसी मालिक के पास ३० पक्के एकड़ से अधिक जमीन हो (विस्थापितों के मामले में ५० पक्के एकड़ से ज्यादा) तो वह उनसे बेदखल किए गए किसानों को बसाने के लिये भूमि हस्तगत कर ले। केरल के कृषि-सुधार कानून में भी, जो अभी प्रवर समिति के पास विचाराधीन है, मौजूदा आराजियों की सीमा १५ से ३० एकड़ भूमि रखी गई है। आन्ध्र प्रदेश और राजस्थान की सरकारें भी मौजूदा आराजियों की सीमा निर्धारित करने के प्रस्तावों पर विचार कर रही हैं, जम्मू-काश्मीर में इससे सम्बन्धित कानून लागू किये जा चुके हैं। दूसरे राज्यों में इन कानूनों को लागू करने का काम अलग-अलग सीढ़ियों पर है ।

पहली योजना के दौरान में बम्बई में २१ लाख एकड़, मध्यप्रदेश में २६ लाख एकड़, पंजाब में ४८ लाख एकड़, पेप्सू में १३ लाख एकड़ और उत्तर प्रदेश में ४४ लाख एकड़ भूमि का गठन किया गया। उत्तर प्रदेश के २१ जिलों की एक-एक तहसील में यह कार्य अभी चल रहा है। राज्य की योजनानुसार दूसरी पंचवर्षीय योजना में ३८२ लाख एकड़ भूमि का गठन किया जायेगा। लक्ष्य (कुछ उन राज्यों को छोड़ कर जहां की संख्याएं प्राप्त नहीं हैं) ३८० एकड़ से अधिक है ।

बहुत से राज्यों में ऐसी व्यवस्थाएं भी की गई हैं, जिनके द्वारा खेतों को टुकड़े-टुकड़े होने से रोका जा सके । विभिन्न राज्यों में कुछ थोड़े बहुत अंतर जरूर हैं, लेकिन आम तौर से कानून यही है कि ऐसी किसी भी अराजी का हस्तान्तरण या बंटवारा नहीं हो सकता, जिसके फलस्वरूप आराजी के ऐसे टुकड़े होते हैं, जो खेती की दृष्टि से अलाभकर हैं । कुछ राज्यों के कानून किसान की कुल आराजी पर आधारित हैं और कुछ राज्यों में आराजी के प्रत्येक खेत की नाप के आधार पर ।

—

उद्योग विकास पर एक दृष्टि

[पृष्ठ ४५४ का शेष]

१६५५ में ७,४२४ हो गयी। इनमें काम करने वालों की संख्या भी १५ लाख १४ हजार से बढ़कर १७ लाख ८४ हजार हो गयी। उक्त अवधि में इन लोगों के वेतन में शत प्रतिशत की वृद्धि हुई। सन् १६५५ में इनको २ अरब ३१ करोड़ १४ लाख रु० वेतन दिया गया, जबकि १६४६ में १ अरब १ करोड़ ८० लाख रु० वेतन दिया गया था।

ऊपर दिये आंकड़े केवल उन रजिस्टर्ड कारखानों के बारे में हैं, जिनमें हर रोज २० से अधिक मजदूर काम करते हैं और जहां बिजली से मशीनें चलती हैं। फिलहाल केवल २८ प्रमुख उद्योगों के बारे में ही आंकड़े इकट्ठे किये गये हैं। इनमें सूती तथा ऊनी वस्त्र, पटसन, रासायनिक पदार्थ, लोहा और इस्पात, अलुमीनियम, ... और पीतल, साइकिल, सिलाई की मशीनें, बिजली के पंखे और लैम्प, इंजीनियरी और बिजली का सामान, शीशा और शीशे का सामान, सीमेंट, प्लाईवुड, ... दियासलाई, चमड़ा, रंग और वार्निश, डिस्टलरी, ... फल, बिस्कुट, चावल की मिल, आटे की मिल, ... वनस्पति तेल आदि के उद्योग शामिल हैं।

सीमेण्ट उद्योग

अधिकांश राज्यों में अब लोगों को बिना परमिट सीमेंट दिया जाने लगा है। अन्य राज्यों में भी सीमेंट पर जो नियंत्रण था, उसमें काफी ढिलाई कर दी गयी है।

उत्तर प्रदेश में कुल उपलब्ध सीमेंट का ८० प्रतिशत भाग बिना परमिट दिया जाता है। इसी प्रकार मध्य प्रदेश में ७५ प्रतिशत, मद्रास में ७५ प्र० श०, उड़ीसा में ... प्रतिशत और बम्बई के ६ जिलों में ७५ प्रतिशत दिया जाता है। आसाम और त्रिपुरा में अभी परमिट हैं, पर ... राज्यों में परमिट प्रणाली समाप्त कर दी गई है।

इस वर्ष विदेशों को २ लाख टन सीमेंट भेजने का निर्णय किया गया है। विदेशों से ६७,५५० टन के आर्डर आ चुके हैं और ६५,००० टन सीमेंट के आर्डर के बारे में बातचीत चल रही है।

देश में १६५७ में ५६ लाख टन तैयार हुआ, जबकि १६५६ में ४६ लाख टन तैयार हुआ था। इस समय देश में सीमेंट के २६ कारखाने हैं और उनकी सीमेंट तैयार करने की वार्षिक क्षमता कुल ६८ लाख ३० हजार टन है। दूसरी आयोजना में १ करोड़ ६० लाख टन सीमेंट तैयार करने का लक्ष्य है। इसके लिए २२ कारखाने खोलने व कुछ वर्तमान कारखानों की क्षमता बढ़ाने की स्वीकृति दी जा चुकी है। यदि सभी योजनाएं पूरी हो जाएं तो १६६... में देश में सीमेंट के कारखानों की कुल वार्षिक क्षमता ... करोड़ ४७ लाख टन हो जाएगी।

—भारत में कच्चे रेशम का उत्पादन बराबर बढ़ रहा है। १६५६ में कच्चे रेशम का उत्पादन ३४,१६,... पौंड तक पहुँच गया।

——

विदेशी पूंजी को प्रोत्साहन

[पृष्ठ ४५१ का शेष]

(१) इस ब्याज पर इन्हें आयकर नहीं देना पड़ता।

(क) जो भारत सरकार द्वारा स्वीकृत किसी विदेशी संस्था से भारत में किसी उद्योग को मिले ऋण से मिलता है।

(ख) यदि भारत के किसी उद्योग ने भारत सरकार की अनुमति से विदेश से कारखाना या मशीन उधार खरीदी है, या ऋण लेकर खरीदी है, तो इस रकम के ब्याज पर आयकर नहीं लगता।

(२) यदि कोई उद्योग किसी विदेशी विशेषज्ञ को नियुक्त करता है, तो उसे वेतन मिलता है, उस पर पहले ३६५ दिन तक आयकर नहीं लगता। यदि भारत सरकार की स्वीकृति के बाद वह कम्पनी में नियुक्त होता है, तो उसे चालू वित्त वर्ष और अगले दो वर्षों तक आयकर नहीं देना पड़ता।

दुहरा कर

विदेशी उद्योगपतियों को यहां पूंजी लगाने में एक बड़ी दिक्कत यह रही है कि उन्हें दोनों देशों में आय कर देना पड़ता है। हाल ही में भारत सरकार ने दोहरा कर बचाने के उद्देश्य से पश्चिमी जर्मनी व स्वीडन से समझौते किये हैं। अन्य देशों से भी समझौते की बातें चल रही हैं।

'सम्पदा' के नये आकर्षण

अपने जन्म से अब तक 'सम्पदा' ने जो लोकप्रियता पाई, उसका श्रेय 'सम्पदा' के पाठकों व ग्राहकों की उदारता और गुणग्राहकता को ही है। पाठकों ने जो मान-प्यार अपनी इस पत्रिका को दिया, उसी के आधार पर आज हम बिना किसी अहंकार के यह कहने की स्थिति में हैं कि 'सम्पदा' हिन्दी में अर्थशास्त्र की अपने स्तर की एकमात्र उत्कृष्ट पत्रिका है।

'सम्पदा' को और भी अधिक उपयोगी एवं रोचक बनाने के लिये हम कुछ नये स्तम्भ आरंभ करने जा रहे हैं। स्तम्भ इस प्रकार होंगे :—

- सरल अर्थ-शास्त्र—अर्थ शास्त्र के विषयों तथा आर्थिक प्रवृत्तियों का सरल सुबोध शैली में परिचय।
- आपका अर्थशास्त्र—एक नागरिक के दैनिक जीवन पर आर्थिक समस्याओं व सरकारी नीतियों का क्या प्रभाव पड़ता है, इस सम्बन्ध में रोचक चर्चा।
- इतिहास के पृष्ठों में आर्थिक षडयन्त्र—विभिन्न देशों की सरकारों और व्यक्तियों द्वारा समय-समय पर किये गये प्रभावकारी आर्थिक षडयंत्रो का मनोरंजक परिचय।
- प्रसिद्ध अर्थ शास्त्री—देश विदेश के प्रसिद्ध अर्थ शास्त्रियों व उनके कार्यों का परिचय।
- अध्यक्ष के पद से—विभिन्न-औद्योगिक संस्थाओं के अध्यक्षों के भाषणों से कुछ महत्त्वपूर्ण अंश।
- कम्पनियों के विवरण—विभिन्न कम्पनियों के वार्षिक या अर्ध-वार्षिक विवरण।
- सांख्यिकी—ज्ञातव्य संख्याओं का आकलन।

ये सभी स्तंभ हर अंक में देना तो संभव न होगा, किन्तु आगे पीछे प्रकाशित सब होते रहेंगे। आशा है, पाठक 'सम्पदा' को अब अधिक रोचक और उपादेय पाएंगे।

—सम्पादक

पाठकों का पृष्ठ

केरल यथार्थ की ओर

श्रीयुत् सम्पादक जी !

यह देखकर सचमुच आश्चर्य होता है कि बहुत से समझदार व्यक्ति भी केरल सरकार के बिरला ब्रदर्स के साथ किये गये समझौते की कठोर आलोचना कर रहे हैं। हम तो इसे केरल सरकार की यथार्थ दर्शन की ओर प्रगति मानते हैं। आदर्शवाद और भावुकता को छोड़कर केरल के वर्तमान शासकों ने यह अनुभव किया है कि यदि केरल में उद्योगों का विकास करना है और जनता में फैली हुई बेकारी को दूर करना है तो ऐसी व्यावहारिक नीति अपनानी पड़ेगी, जिससे पूंजी को प्रोत्साहन प्राप्त हो। यदि कम्युनिस्ट नेता इस सत्य को समझ जावें, जैसा कि केरल के मंत्रीमंडल ने समझा है, तो मजदूर-समस्या का समाधान कुछ सरल हो जायगा। यह एक सचाई है कि औद्योगिक विकास के लिये हमें प्रारम्भ में उद्योगपतियों को कुछ अतिरिक्त सुविधाएं भी देनी पड़ेंगी।

इलाहाबाद, —के. सी. चौधरी

—

लोकमत का अनादर या अयोग्यता

श्रीयुत् सम्पादक जी,

आप 'राष्ट्र प्रगति अंक' निकाल रहे हैं। मेरा ख्याल है कि आप उसमें बहुत गर्व से सरकार द्वारा चलाई जाने वाली योजनाओं की प्रशंसा करेंगे, किन्तु क्या मैं देश के वैज्ञानिकों से पूछ सकता हूं कि वे अब तक वनस्पति घी में मिलाये जाने वाले खाद्य रंग की तलाश क्यों नहीं कर पाये? यह सारे देश की मांग का वैज्ञानिकों द्वारा निरादर है अथवा अपनी अयोग्यता की सूचना? प्रगतिशील देश को उनसे बहुत आशा थी।

जयपुर, —राजेन्द्रकुमार

---

१०० वर्षों में भारतीय कृषि

[पृष्ठ ४४६ का शेष]

ऋणग्रस्त होता चला गया। यद्यपि बढ़ती हुई जनसंख्या को दृष्टि में रखकर कृषि योग्य भूमि में बढोतरी की गई, लेकिन यह अपर्याप्त थी। दोनों विश्व युद्धकाल के बीच में जबकि जनसंख्या २७ प्रतिशत बढ़ी थी, कृषि क्षेत्र में केवल २ प्रतिशत बढ़ोतरी हुई। अतः खाद्य अभाव के लक्षण स्पष्ट होने लगे। प्रथम विश्व युद्ध के पूर्व पर्याप्त चावल और सन् १९२४-२५ तक अन्य खाद्य पदार्थ विदेशों को भेजे जाते थे। लेकिन १९२५ के बाद तो परिस्थितियां बिल्कुल बदल गईं। यह काल विश्वव्यापी मंदी का था, अतः इसका प्रभाव भारत पर पड़ना स्वाभाविक था। भारत में इसका जितना भयंकर प्रभाव कृषि पर पड़ा, उतना अन्य किन्हीं पदार्थों पर नहीं था। सन् १९२९ ई० से १९३३ ई० तक के बीच में कृषि मूल्य सबसे नीचे थे। कृषक लोग अनाज को बेचना तक नहीं चाहते थे, क्योंकि उन्हें बेचने में लागत मूल्य तक नहीं मिल पाता था। अतः वे उत्पादन में कोई रुचि न लेकर केवल अपनी आवश्यकतानुसार पैदा करने लगे। इस आर्थिक मंदी ने कृषकों की कमर बिल्कुल ही तोड़ दी। तत्कालीन ब्रिटिश सरकार को विवश होकर किसानों की समस्या पर विचार करना पड़ा। इसके लिये सन् १९२८ ई० में लार्ड लिनलिथगो की अध्यक्षता में एक शाही कृषि आयोग की नियुक्ति की गई। भारत के कृषि-प्रश्न की इस प्रकार देशव्यापी जांच करने का यह सबसे पहला प्रयत्न था। आयोग में कृषि अनुसंधान, पशु सुधार और चिकित्सा, भूमि को टुकड़े २ होने से बचाना, सिंचाई, फसल की बिक्री, सहकारी आन्दोलन की प्रगति, कृषि के लिये वित्त आदि अनेक समस्याओं पर प्रकाश डालने का आडम्बर रचा गया। लेकिन खेद के साथ कहना होगा कि आयोग की जांच शर्तों व भूमि व्यवस्था जैसा मूल प्रश्न पृथक रक्खा रह गया। अतः आयोग ने सात लाख रुपये खर्च करके जो पोथा छापा, वह इससे आगे कुछ न कह सका कि किसानों को अच्छा बीज व खाद मिले तथा बैलों की नस्ल अच्छी की जाय। आयोग की सिफारिशों पर जो कुछ कार्य किया भी गया वह सब सरकारी तरीके से हुआ, जनता को उससे विशेष लाभ नहीं पहुँच सका। अक्तूबर १९२८ में शिमला में एक कृषि कान्फ्रेंस हुई, जिसमें कृषि मंत्री, कृषि संचालकों और सहकारी समितियों के रजिस्ट्रारों ने भाग लिया। इस सभा में शाही कृषि आयोग के सुझावों पर विचार किया गया। सन् १९२९ ई० में शाही कृषि अनुसंधान परिषद् की स्थापना की गई। इसका कार्य सारे देश के अन्दर कृषि अनुसंधान को प्रोत्साहन देना, समन्वय करना और सहायता देना था। सन् १९३५ ई० में जब प्रांतों में कांग्रेसी सरकार आई तो उन्होंने अनेक सुधारों का श्री गणेश किया। लेकिन उन्हें शीघ्र ही सन् १९३९ ई० में स्तीफे देने पड़े तथा द्वितीय विश्व युद्ध छिड़ जाने से, कृषि क्षेत्र में कुछ हो नहीं सका। (क्रमशः)

विकास योजना की कठिनाइयां

[पृष्ठ ४६८ का शेष]

मूल्य और उत्पादन-व्यय का महत्व जरूरी होता है और ग्राहक बता सकता है कि वह किस मूल्य तक कोई वस्तु खरीदेगा और किस सीमा के बाद खरीद बन्द कर देगा, यह संभव नहीं है कि पदार्थ मूल्य और उत्पादन-व्यय की चिन्ता किये बिना हम उत्पादन बढ़ाते चले जाएं। जहां तक मजदूरों की मजदूरी का सम्बन्ध है, वहां हमें जीवन-निर्वाह का व्यय भी देखना होगा।

योजना, विशेषकर दूसरी योजना एक ही समय विभिन्न क्षेत्रों में चलने वाली अनेक स्वतन्त्र योजनाओं का संग्रह है। पर इन सब में विशेष संगति नहीं है। न इनका एक साथ समय नियत है, न इनकी अवधि नियत है और न इन पर होने वाला व्यय। सरकारी और निजी उद्योगों का संघर्ष भी आज हमारे सामने एक समस्या बन कर आ गया है। देहातों और शहरों के कार्यक्रमों में भी समानता नहीं है। शहरी कार्यक्रम का बढ़ता हुआ खर्च देहाती कार्यक्रम पर महत्व-पूर्ण प्रभाव डालता है। इस तरह परस्पर असंगति स्पष्ट है। हमें एक ऐसा आर्थिक कार्यक्रम नियत करना चाहिये, जो सब तरह से आदर्श हो, जिसमें जनता की इच्छाओं और भावनाओं का आदर हो, जिसमें देहात और शहर के हितों में संघर्ष का अभाव हो, और आर्थिक आवश्यकताओं तथा समाज सेवाओं की योजनाओं में परस्पर संगति हो।

——

राजस्थान : सुदृढ़तर अर्थ-व्यवस्था की ओर

मुख्यमंत्री श्री मोहनलाल सुखाड़िया

राजस्थान-निर्माण के समय एकीकृत होने वाली इकाइयों की कुल आय १४,६०,५३००० रुपये (१९५०-५१) थी। आय के साधन इसको एक कल्याणकारी राज्य में परिवर्तित करने की आवश्यकताओं की तुलना में अति अल्प थे। प्रथम पंचवर्षीय योजना क्रियान्वित की जाने लगी और राजस्थान भी परिधि से बाहर नहीं रह सका। नियमित बजट और विकास की विशिष्ट परियोजनाओं, दोनों पर ही व्यय में असाधारण वृद्धि होगई।

आय के साधनों में वृद्धि करने के लिए राज्य निरन्तर प्रयत्नशील रहा और १९५६-५७ तक आय के खातों में १० करोड़ से भी अधिक की प्राप्ति बढाने में सफल होगया। १९५७-५८ की संशोधित एवं परिवर्द्धित आनुमानिक राशियों ने क्रमशः ३२२५.३२ लाख के व्यय की तुलना में ३०६९.४० लाख की राजस्व-प्राप्ति तथा राजस्व और पूंजी खाते में १५३६.६८ लाख रुपये दिखाये। व्यय की राशि में जागीरों के पुनर्ग्रहण के फलस्वरूप जागीरदारों को दी जानेवाली धन-राशि भी सम्मिलित हैं।

यह विश्लेषण इस लिए और भी दिलचस्प हो जाता है जब हमें यह मालूम हो कि अन्तर्राज्यीय यातायात कर (इन्टर स्टेट ट्रान्जिट ड्यूटीज) समाप्त कर दिये जाने के फलस्वरूप राजस्व के खाते में भारी कमी आगई थी। प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत, न केवल राजस्व की विभिन्न मदों में ही सामान्य सुधार हुआ, अपितु ५० लाख रुपये वार्षिक से कुछ ऊपर राजस्व के साधन, कृषि-आय-कर, बन्दोबस्त के फलस्वरूप भूमि-राजस्व में वृद्धि, स्टाम्प-ड्यूटी, मोटर वाहन अधिनियम, सिंचाई की दरें, तथा शहरी क्षेत्रों में जल की दरों आदि के द्वारा बढाये गये।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत नियोजित कार्यक्रम पर कुल १०५.२७ करोड़ रुपये की धनराशि निर्धारित है, जो कि प्रथम योजना के व्यय से लगभग दूनी है। कर-जांच-समिति की सिफारिशों के बाद, द्वितीय योजना में अतिरिक्त करों से ८ करोड़ रुपये बढ़ाये जाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया था इसके बाद लक्ष्य ११ करोड़ रुपये तक बढा दिया गया।

इस पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत राज्य की बहुमुखी समृद्धि की व्यवस्था की गई है। राजस्थान में, जहां गंगानगर जिले के अतिरिक्त नहरी सिंचाई से कोई वास्ता नहीं था, केवल १९५६-५७ में ७.९६ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई नहरों द्वारा की गई। कुओं के अतिरिक्त सिंचाई के अन्तर्गत आने वाला कुल क्षेत्र १९६१ तक २५ लाख एकड़ हो जायेगा।

बड़ी सिंचाई परियोजनायें

राज्य में भाखरा योजना का सिंचाई संबंधी लगभग सारा निर्माण कार्य समाप्त किया जा चुका है। केवल छोटी नहरें तथा सड़कों के पुल आगामी वर्ष पूरे किये जाने के लिए निर्धारित हैं। इनसे पशु-पालन पर आधारित अर्थव्यवस्था एवं अनिश्चित जीवन से युक्त लगभग ६,००,००० एकड़ के क्षेत्र को हराभरा बनाने के लिए इस परियोजना से पानी मिलने को है।

दूसरी ७ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई दक्षिणी पूर्वी राजस्थान में चम्बल परियोजना से की जा सकेगी जोकि १९६२-६३ तक पूरी होने को है। इस परियोजना पर कोटा बांध तथा नहरों का निर्माण कार्य पूर्ण प्रगति पर है और आशा की जाती है कि वह निश्चित समय पर पूरा हो जायेगा।

राजस्थान नहर परियोजना, जिस पर कि अभी हाल ही कार्य आरंभ किया गया है, राष्ट्रीय महत्व की है, क्योंकि यह एक ऐसे क्षेत्र को भारत के समृद्ध अन्न-भंडार में परिवर्तित करेगी, जो परम्परा से अकाल एवं अभाव से संबद्ध रहा है। ६६ करोड़ रुपये की लागत की इस परियोजना से २६ लाख एकड़ भूमि की वार्षिक सिंचाई करने की आशा की जाती है और यह विस्तृत क्षेत्र, जो इस समय व्यावहारिक रूप से किसी की भूमि नहीं है

राजस्थान की द्वितीय योजना का आनुमानिक व्यय

वह साधन कृषि और फलते फूलते व्यापार एवं उद्योग का भू-खन्ड बन जायेगा। आगामी दो वर्षों में इस परियोजना पर २२ करोड़ रुपये व्यय होंगे।

विभिन्न मध्यम एवं लघु सिंचाई योजनाओं से, जिनपर कि राज्य अपना ध्यान केन्द्रित करता रहा है, बडी योजनाओं के पूरा होने तक केवल १९५७-५८ में १.०४ लाख एकड़ अतिरिक्त क्षेत्र की सिंचाई की गई।

विद्युत शक्ति

थरमल-विद्युत पर होने वाले व्यय के लिए भी विदेशी-मुद्रा प्राप्त होगई है और इस योजना के अन्तर्गत मशीनें और अन्य सामग्री १९५८-५९ के समाप्त होने से पूर्व मिलने की आशा की जाती है। इसी वर्ष में भारत सरकार से प्राप्त डीजल के ५७ विद्युत-उत्पादक यन्त्रों के लगाने का कार्य भी ग्रामीण विद्युत-योजना के एक भाग के रूप में समाप्त हो जायेगा। राज्य में संस्थापित विद्युत-उत्पादन शक्ति १९६१ में ८८,००० किलोवाट की सुदृढ़ क्षमता के साथ १,१७,५०० किलोवाट तक बढ़ जायेगी। राज्य-स्वामित्व के अन्तर्गत चलनेवाले २१ बिजलीघरों की कुल क्षमता १९५५-५६ में ३२,००० किलोवाट से १९५६-५७ में ४३.६५ हजार किलोवाट तक बढ़ गई, जबकि इन बिजली घरों द्वारा उत्पादित कुल विद्युत भी ७१.४६३ गुणा १० यूनिट से १९५६-५७ में ८०,९६५ गुणा यूनिट तक बढ़ गई।

सड़कें

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत कुल मिला २,७०० मील नई सड़कें बनाई जायेंगी और मौजूदा सड़कों में से १८३० मील सड़कों को सुधारा जायेगा। इनमें से योजना के प्रथम दो वर्षों में ५०८ मील नई सड़कें बनाई जा चुकी हैं तथा मौजूदा सड़कों में से १११ मील सड़कों को सुधारा जा चुका है।

उद्योग

जल, सस्ती विद्युत तथा संचार-साधनों की उपलब्धि से राज्य में उद्योगों की वृद्धि का सुविधा जनक ... सुनिश्चित है। भारत सरकार ने राजस्थान में उर्वरकों के उत्पादन का कार्य निजी क्षेत्र को सौंपने का समर्थन किया है। हनुमानगढ़ में अमोनियम सल्फेट प्लान्ट की, ... में सोडा-एश तथा अमोनियम क्लोराइड कारखाने की संभावनाओं की जांच की जा चुकी है और उन्हें अनुकूल पाया गया है। १५,००० टन शक्ति वाले एक ... पिघलाने के कारखाने के लिए उदयपुर को लाइसेन्स दिया गया है और इस कारखाने की आवश्यकता ... लिए जावर की खानों का उत्पादन ३०० टन से १,... टन दैनिक करने के यन्त्र का आयात किये जाने को है।

औद्योगिक विकास-कार्यक्रम के अन्तर्गत, सवाई माधोपुर और लाखेरी स्थित सीमेन्ट के कारखानों का ... किया जा चुका है तथा गंगानगर और मेवाड़ सुगर मिल्स विस्तारान्तर्गत हैं। आबूरोड, चित्तौड़गढ़ और ... थाना में निकट भविष्य में ही एक एक सीमेन्ट का कारखाना खुलने के साथ आशा की जाती है कि राजस्थान देश में बिहार के बाद दूसरा सबसे बड़ा सीमेंट उत्पादक होगा। जयपुर और उदयपुर में एक एक टैक्सटाइल मिल ... जाने को है, जबकि राज्य में एक दूसरी बैगन-फैक्ट्री ... माधोपुर में आरंभ किये जाने को प्रस्तावित है। लघु उद्योग ... के रूप में साईकिल के पुर्जों का निर्माण-कार्य राज्य ... पहले ही बहुत सन्तोषजनक प्रगति कर चुका है और ... ऐसी इकाइयां स्थापित की जा चुकी हैं। जयपुर ...

[शेष ...

३०,००० बाईसिकलें प्रतिवर्ष तैयार करने की क्षमता वाले एक कारखाने के लिए लाइसेंस दे दिया गया है। इसके अतिरिक्त एक नकली रेशम का कारखाना, एक नाईलोन का कारखाना तथा एक लोहे का कारखाना खोलने की स्वीकृति शीघ्र ही प्राप्त होने की आशा की जाती है। अन्तिम कारखाना राज्य में प्राप्त लिग्नाइट, कच्चे लोहे तथा चूने के पत्थर के भण्डारों का उपयोग कर इन्जीनियरिंग उद्योगों के विकास का मार्ग प्रशस्त करेगा।

राज्य सरकार ने १९५६-५७ में २३९ लघु उद्योगों को ११.६८ लाख रुपये का ऋण उपलब्ध किया है और १९५७-५८ में ११.५२ लाख रुपये स्वीकृत किये हैं। जयपुर में अभी निर्माणाधीन प्रथम औद्योगिक संस्था में फिलहाल २४ दुकानें होंगी जो व्यवसायियों को दे दी गई हैं। इसी प्रकार अजमेर में मलपुरा, भीलवाडा, गंगानगर, कोटा तथा जोधपुर में भी यथाशीघ्र औद्योगिक संस्थान स्थापित किये जायेंगे। खादी का उत्पादन १९५४-५५ में ३३ लाख रुपये से बढकर १९५६-५७ में ८० लाख रुपये का हो गया है। खादी उद्योग का विस्तार जन-जाति क्षेत्रों में भी किया जा रहा है।

खनिज

राज्य में पिछले ५ वर्षों में खनिज उत्पादन में काफी वृद्धि हुई है और रायल्टी की आय लगभग ४० लाख रुपये से ५० लाख तक बढ़ गई है।

कच्चे लोहे का निर्यात सिर्फ ३ वर्ष पहले आरम्भ हुआ था किन्तु यह १ लाख टन प्रतिवर्ष से भी अधिक बढ़ चुका है। बीकानेर के समीप पलाना में लिगनाइट का उत्पादन भी प्रति मास २,००० टन से बढ़कर ४,००० टन होगया है। पलाना क्षेत्र में शाफ्टस के लग जाने से लिंगनाइट के उत्पादन में वृद्धि होने की आशा है।

राज्य में १,५०० खानें हैं जिनमें अभी काम हो रहा है। खनिज उद्योग के महत्व को इसी तथ्य से आंका जा सकता है कि लगभग १,५०,००० व्यक्ति विभिन्न खानों में काम कर रहे हैं। विकास प्रवृत्तियों की प्रगति के कारण इस उद्योग का राज्य के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योग है।

चालू वर्ष की जो द्वितीय योजना का तृतीय वर्ष है, आय का अनुमानित बजट ३३९३.९१ लाख रुपये है और व्यय का अनुमान ३३७४.४१ लाख रुपए का है। पूंजीगत कार्यक्रम का कुल योग १,६५५.६५ लाख रुपए है जिसमें जागीर मुआवजे के २६०.०० लाख रुपए भी सम्मिलित हैं। द्वितीय योजना के तृतीय सालके लिए २०.५० करोड़ रु० का प्रावधान है। इसके अतिरिक्त राज्य में केन्द्रीय सरकार द्वारा आरम्भ की गई योजनाओंका व्यय अलग है। पहले से आरम्भ की गई योजनाओं को पूरा करने में प्राथमिकता दी जा रही है और इन्हें शीघ्र पूरा करने के लिये इन पर होने वाले व्यय में वृद्धि की गई है।

२०.५० करोड़ रुपयों की कुल लागत में से, १२.१० करोड़ रुपये केन्द्रीय सरकार से ऋण एवं अनुदान के रूप में बतौर सहायता के प्राप्त होने की आशा की जाती है। शेष राज्य सरकार अपने स्वयं के साधनों से पूरा करेगी। उत्पादक पूंजी प्राप्यों के अतिरिक्त, जो नियमित रूप से आर्थिक आय के साधन हैं, राज्य सरकार के पास भवनों, संचार साधनों तथा मशीनों इत्यादि के रूप में भी विस्तृत एवं बहुमूल्य सम्पत्ति है।

इस प्रकार राजस्थान अब तक सुदृढ़तर अर्थव्यवस्था की ओर अग्रसर हो रहा है जो विश्व की वृहत्तम नहर प्रणाली की सहायता से अब तक मरूस्थल पुकारी जाने वाली कुआरी भूमि पर उगने वाली लहलहाती फसलों प्रचुर खाद्यानों, विस्तृत विद्युत कारखानों, राज्यव्यापी संचार-साधनों के जाल, प्रचुर नैसर्गिक स्रोतों तथा खनिज सम्पत्ति और सबसे ऊपर यहां के उन अथक और सुदृढ़ कृषकों की इच्छा शक्ति और संकल्प पर, जो प्रकृति का प्रलयंकारी स्वरूप प्रकट होने पर भी निराशा अथवा पराजय को नहीं जानते, तथा यहां के उन व्यापारियों और उद्योग-विशारदों के साहस स्व-वाणिज्य कौशल पर आधारित होगी। जिन्होंने इस विस्तृत प्रदेश के सुदूर कोनों में उद्योग व्यापार एवं वाणिज्य के विकास में इतना महत्वपूर्ण योगदान किया है।

—

राजस्थान की द्वितीय योजना का आनुमानिक व्यय

वह साधन कृषि और फलते फूलते व्यापार एवं उद्योग का भू-खन्ड बन जायेगा। आगामी दो वर्षों में इस परियोजना पर २२ करोड़ रुपये व्यय होंगे।

विभिन्न मध्यम एवं लघु सिंचाई योजनाओं से, जिनपर कि राज्य अपना ध्यान केन्द्रित करता रहा है, बडी योजनाओं के पूरा होने तक केवल १९५७-५८ में १.०४ लाख एकड़ अतिरिक्त क्षेत्र की सिंचाई की गई।

विद्युत शक्ति

थरमल-विद्युत पर होने वाले व्यय के लिए भी विदेशी-मुद्रा प्राप्त होगई है और इस योजना के अन्तर्गत मशीनें और अन्य सामग्री १९५८-५९ के समाप्त होने से पूर्व मिलने की आशा की जाती है। इसी वर्ष में भारत सरकार से प्राप्त डीजल के १७ विद्युत-उत्पादक यन्त्रों के लगाने का कार्य भी ग्रामीण विद्युत-योजना के एक भाग के रूप में समाप्त हो जायेगा। राज्य में संस्थापित विद्युत-उत्पादन शक्ति १९६१ में ८८,००० किलोवाट की सुदृढ़ क्षमता के साथ १,१७,५०० किलोवाट तक बढ़ जायेगी। राज्य-स्वामित्व के अन्तर्गत चलनेवाले २१ बिजलीघरों की कुल क्षमता १९५५-५६ में ३२,००० किलोवाट से १९५६-५७ में ४३.६५ हजार किलोवाट तक बढ़ गई, जबकि इन बिजली घरों द्वारा उत्पादित कुल विद्युत भी ७१.४६३ गुणा १० यूनिट से १९५६-५७ में ८०,९६५ गुणा यूनिट तक बढ़ गई।

सड़कें

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत कुल मिला २,७०० मील नई सड़कें बनाई जायेंगी और मौ सड़कों में से १८३० मील सड़कों को सुधारा जा इनमें से योजना के प्रथम दो वर्षों में ५०८ मील नई बनाई जा चुकी हैं तथा मौजूदा सड़कों में से १११ सड़कों को सुधारा जा चुका है।

उद्योग

जल, सस्ती विद्युत तथा संचार-साधनों की उप से राज्य में उद्योगों की वृद्धि का सुविधाजनक सुनिश्चित है। भारत सरकार ने राजस्थान में उर्व उत्पादन का कार्य निजी क्षेत्र को सौंपने का समर्थन है। हनुमानगढ़ में अमोनियम सल्फेट प्लान्ट की, में सोडा-एश तथा अमोनियम क्लोराइड कारखाने संभावनाओं की जांच की जा चुकी है और उन्हें पाया गया है। १५,००० टन शक्ति वाले एक पिघलाने के कारखाने के लिए उदयपुर को लाइसेंस दिया गया है और इस कारखाने की आवश्यकता लिए जावर की खानों का उत्पादन ३०० टन से १, टन दैनिक करने के यन्त्र का आयात किये जाने को है।

औद्योगिक विकास-कार्यक्रम के अन्तर्गत, सवाई माधो और लाखेरी स्थित सीमेन्ट के कारखानों का वि किया जा चुका है तथा गंगानगर और मेवाड़ शुगर मि विस्तारान्तर्गत हैं। आबूरोड, चित्तौड़गढ़ और नी थाना में निकट भविष्य में ही एक एक सीमेन्ट का कार खुलने के साथ आशा की जाती है कि राजस्थान देश बिहार के बाद दूसरा सबसे बड़ा सीमेंट उत्पादक होग जयपुर और उदयपुर में एक एक टैक्सटाइल मिल जाने को है, जबकि राज्य में एक दूसरी बैगन-फैक्ट्री माधोपुर में आरंभ किये जाने को प्रस्तावित है। लघु उ के रूप में साईकिल के पुर्जों का निर्माण-कार्य राज पहले ही बहुत सन्तोषजनक प्रगति कर चुका है और ऐसी इकाइयां स्थापित की जा चुकी हैं। जयपुर

[क्रम

२०,००० बाईसिकलें प्रतिवर्ष तैयार करने की क्षमता वाले एक कारखाने के लिए लाईसेंस दे दिया गया है। इसके अतिरिक्त एक नकली रेशम का कारखाना, एक नाईलोन का कारखाना तथा एक लोहे का कारखाना खोलने की स्वीकृति शीघ्र ही प्राप्त होने की आशा की जाती है। अन्तिम कारखाना राज्य में प्राप्त लिग्नाइट, कच्चे लोहे तथा चूने के पत्थर के भण्डारों का उपयोग कर इन्जीनियरिंग उद्योगों के विकास का मार्ग प्रशस्त करेगा।

राज्य सरकार ने १९५६-५७ में २३६ लघु उद्योगों को ११.६८ लाख रुपये का ऋण उपलब्ध किया है और १९५७-५८ में ११.५२ लाख रुपये स्वीकृत किये हैं। जयपुर में अभी निर्माणाधीन प्रथम औद्योगिक संस्था में फिलहाल २४ दुकानें होगी जो व्यवसायियों को दे दी गई हैं। इसी प्रकार अजमेर में मलपुरा, भीलवाडा, गंगानगर, कोटा तथा जोधपुर में भी यथाशीघ्र औद्योगिक संस्थान स्थापित किये जायेंगे। खादी का उत्पादन १९५४-५५ में ३३ लाख रुपये से बढकर १९५६-५७ में ८० लाख रुपये का हो गया है। खादी उद्योग का विस्तार जन-जाति क्षेत्रों में भी किया जा रहा है।

खनिज

राज्य में पिछले ५ वर्षों में खनिज उत्पादन में काफी वृद्धि हुई है और रायल्टी की आय लगभग ४० लाख रुपये से ५० लाख तक बढ़ गई है।

कच्चे लोहे का निर्यात सिर्फ ३ वर्ष पहले आरम्भ हुआ था किन्तु यह १ लाख टन प्रतिवर्ष से भी अधिक बढ़ चुका है। बीकानेर के समीप पलाना में लिगनाइट का उत्पादन भी प्रति मास २,००० टन से बढ़कर ४,००० टन होगया है। पलाना क्षेत्र में शाफ्टस के लग जाने से लिगनाइट के उत्पादन में वृद्धि होने की आशा है।

राज्य में १,५०० खानें हैं जिनमें अभी काम हो रहा है। खनिज उद्योग के महत्व को इसी तथ्य से आंका जा सकता है कि लगभग १,५०,००० व्यक्ति विभिन्न खानों में काम कर रहे हैं। विकास प्रवृत्तियों की प्रगति के कारण इस उद्योग का राज्य के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योग है।

चालू वर्ष की जो द्वितीय योजना का तृतीय वर्ष है, आय का अनुमानित बजट ३३९३.९१ लाख रुपये है और व्यय का अनुमान ३३७४.४१ लाख रुपए का है। पूंजीगत कार्यक्रम का कुल योग १,६५५.६५ लाख रुपए है जिसमें जागीर मुआवजे के २६०.०० लाख रुपए भी सम्मिलित हैं। द्वितीय योजना के तृतीय सालके लिए २०.५० करोड़ रु० का प्रावधान है। इसके अतिरिक्त राज्य में केन्द्रीय सरकार द्वारा आरम्भ की गई योजनाओंका व्यय अलग है। पहले से आरम्भ की गई योजनाओं को पूरा करने में प्राथमिकता दी जा रही है और इन्हें शीघ्र पूरा करने के लिये इन पर होने वाले व्यय में वृद्धि की गई है।

२०.५० करोड़ रुपयों की कुल लागत में से, १२.१० करोड़ रुपये केन्द्रीय सरकार से ऋण एवं अनुदान के रूप में बतौर सहायता के प्राप्त होने की आशा की जाती है। शेष राज्य सरकार अपने स्वयं के साधनों से पूरा करेगी। उत्पादक पूंजी प्राप्यों के अतिरिक्त, जो नियमित रूप से आर्थिक आय के साधन हैं, राज्य सरकार के पास भवनों, संचार साधनों तथा मशीनों इत्यादि के रूप में भी विस्तृत एवं बहुमूल्य सम्पत्ति है।

इस प्रकार राजस्थान अब तक सुदृढ़तर अर्थव्यवस्था की ओर अग्रसर हो रहा है जो विश्व की वृहतम नहर प्रणाली की सहायता से अब तक मरूस्थल पुकारी जाने वाली कुआरी भूमि पर उगने वाली लहलहाती फसलों प्रचुर खाद्यानों, विस्तृत विद्युत कारखानों, राज्यव्यापी संचार-साधनों के जाल, प्रचुर नैसर्गिक स्रोतों तथा खनिज सम्पत्ति और सबसे ऊपर यहां के उन अथक और सुदृढ़ कृषकों की इच्छा शक्ति और संकल्प पर, जो प्रकृति का प्रलयंकारी स्वरूप प्रकट होने पर भी निराशा अथवा पराजय को नहीं जानते, तथा यहां के उन व्यापारियों और उद्योग-विशारदों के साहस स्व-वाणिज्य कौशल पर आधारित होगी। जिन्होंने इस विस्तृत प्रदेश के सुदूर कोनों में उद्योग व्यापार एवं वाणिज्य के विकास में इतना महत्वपूर्ण योगदान किया है।

—

१९५७-५८ वर्ष एकीकृत राज्य की द्वितीय पंचवर्षीय योजना का दूसरा वर्ष था। इस योजना का १९०,९० करोड़ रुपयों का कुल प्रावधान विभिन्न क्षेत्रों में इस प्रकार वितरित किया गया। इस योजना के कुल प्रावधान के ७२ प्रतिशत का वास्तविक विनियोजन हुआ है और शेष २८ प्रतिशत राशि सामाजिक सेवाओं पर व्यय की जायगी जिनमें, गृह निर्माण व्यवस्था, शिक्षा स्वास्थ्य सुधार इत्यादि के कार्यक्रम सम्मिलित हैं, इसके अतिरिक्त, केन्द्रीय सरकार की योजनाएं भी हैं : यथा भिलाई में ११५ करोड़ रु० की लागत का इस्पात कारखाना, कोरबा कोयला खानों का उपयोग आरम्भ करने की योजना जिसमें राज्य सरकार भाग लेगी, तथा एसोसिएटेड इलेक्ट्रिकल इन्डस्ट्रीज लिमिटेड : इंग्लैंड : के सहयोग से एक भारी विद्युत उपकरण कारखाने का निर्माण। ७७.१५ करोड़ रु० लागत की चम्बल घाटी योजना के प्रथम आल्टरनेटर की आधार-शिला २ अक्टूबर १९५७ को रखी गई। इसी प्रकार कोरबा में १२.२९ करोड़ रु० लागत के ताज विद्युत केन्द्र का शिलान्यास मुख्य मन्त्री द्वारा किया गया।

इस समय राज्य में कुल २१२ विकास खंड कार्य कर
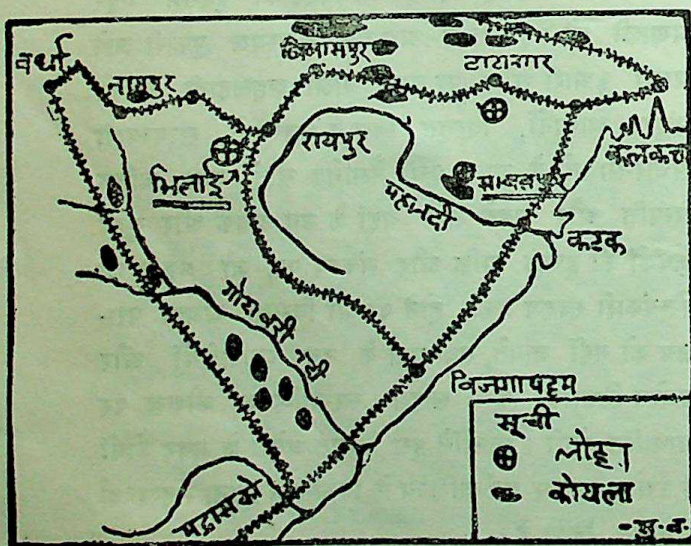
मध्यप्रदेश के मध्य में स्थित भिलाई का लोह उद्योग समस्त राज्य को समृद्ध बना देगा

रहे हैं। इन खंडों में ४०७२४ गांव आते हैं जिनकी जनसंख्या लगभग १२५ लाख है। इस प्रकार राज्य के ... प्रतिशत गांव विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत आ गये हैं।

कृषि

राज्य में खाद्य और कृषि के क्षेत्र में सराहनीय प्रगति हुई है। इसका एक कारण, विभिन्न 'अधिक अन्न उपजाओ' सम्बन्धी योजनायें थीं, तथा दूसरा कारण सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा योजनाओं द्वारा किसानों में उत्पन्न हुई जागृति थी। आयोजना काल में मध्यप्रदेश सरकार को १४ लाख ६१ हजार टन अधिक अनाज पैदा करना है। १९५७-५८ में १ लाख ६९ हजार टन अनाज पैदा होने का अनुमान है। १८५००० एकड़ में सिंचाई का लक्ष्य था। अनुमान है कि १९५७-५८ में १५५००० एकड़ जमीन की सिंचाई हुई है।

मध्यम और लम्बे रेशे का कपास उत्पन्न करने की दृष्टि से, कपास उत्पादन क्षेत्र में. विस्तार प्रणालियां अपनाई गईं। विशुद्ध बीज की पूर्ति के फलस्वरूप राज्य में कपास का उत्पादक क्षेत्र बढ़ाकर २,५०,००० एकड़ कर दिया गया है।

सहकारिता

१९५७-५८ वर्ष में कुल ६७.२६ लाख रु० का वास्तविक व्यय हुआ जिसमें योजना के अन्तर्गत स्वीकृत ६२.२६ लाख रु० तथा इसके अतिरिक्त स्वीकृत ५ लाख रु० भी सम्मिलित हैं। आय व्ययक में इसके लिये ७५.९... लाख रु० का प्रावधान था। यह व्यय आय व्ययक में निर्धारित राशि का ८८.५ प्रतिशत है। मध्य भारत सहकारी बैंक जिसका मुख्यालय ग्वालियर है तथा मध्य प्रदेश सहकारी बैंक जिसका मुख्यालय जबलपुर है, इन दो शीर्ष बैंकों को मिला दिया गया है तथा अब दिनांक १५-३-५८ से "मध्यप्रदेश सहकारी बैंक" नामक एक नये बैंक ने कार्य आरम्भ कर दिया है।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत सहकारी आंदोलन की विशेषता यह है कि बड़ी समितियों का संगठन

[क्रमशः

किया गया है । राज्य में १३८ [illegible] समितियों का गठन किया गया है ।

१९५७-५८ वर्ष में सरकार द्वारा डबरा को एक चावल मिल तथा धामनोद और व्योहारी की प्रोसेसिंग समितियां इस प्रकार तीन प्रोसेसिंग समितियों को वित्तीय सहायता दी गई ।

सिंचाई तथा बिजली

सिंचाई तथा बिजली की योजनाओं को योजना में सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई है और इनके लिये कुल प्रावधान की ३८ प्रतिशत रकम निश्चित कर दी गई है ।

योजना के प्रथम वर्ष में निम्नलिखित ६ बांध गोंदली, सापना, डुकुटीखेड़ा, मोला 'शिवगढ़' मेदली और आंशिक नहरों सहित कुंदानाला और दूसरे वर्ष में गांगुलपारा बांध का काम पूरा किया गया । दुधवा और सरोदा का कार्य जारी रहा और साटक, सेगवाल और मोरवन बांधों पर मिट्टी बिछाने का कार्य आरम्भ किया गया । अनेक स्थानों पर छोटे हैड वर्क्स पूरे किये गये । ४२ तालाब जिनमें १५ का मरम्मत कार्य, [illegible] सिंचाई योजनाओं के सिवाय ६०० से अधिक कुएं खोदे गये हैं और सिंचाई के लिए ५०० छोटे सिंचाई कार्य आरम्भ किये गये । इन निर्माण कार्यों पर १९५६-५७ में कुल २९२.० लाख रु० खर्च हुए हैं । १९५५-५६ के वर्ष यह खर्च १८५.४७ लाख रु० था । १९५५-५६ में जितने व्यक्तियों को काम दिया गया उनके अतिरिक्त इन योजनाओं द्वारा २५०० कारीगरों और १२,००० मजदूरों को रोजगार मिला ।

विद्युत योजनाएं

राज्य की कुछ महत्वपूर्ण विद्युत योजनाएं ये हैं: २,१६,००० किलोवाट क्षमता की चम्बल विद्युत योजना, ६०,००० किलोवाट क्षमता की कोरबा ताप विद्युत केन्द्र योजना, भोपाल विद्युत योजना, वीरसिंह विद्युत केन्द्र और सतना ताप विद्युत केन्द्र योजना । कोरबा विद्युत केन्द्र का शिलान्यास इस वर्ष मुख्यमंत्री डा० काटजू ने किया था ।

ग्राम विद्युतीकरण योजना के अन्तर्गत, ४१ गांवों का विद्युतीकरण किया गया था जिसमें भोपाल क्षेत्र के

२ गांव शामिल हैं। अनेक लाइनों पर खम्भे लगाने का काम प्रायः समाप्ति पर था। सागर, दमोह और कटनी निमाड़ प्रवहमान कर दी गयी। इटारसी बिजली घर में गत वर्ष से विद्युत वितरण का कार्य आरम्भ हो गया। इससे भोपाल नगर को भी बिजली मिल सकेगी। केवल छिन्दवाड़ा जिले में ही सिंचाई के लिए ३३ पम्पों को बिजली से चलाने का कार्य आरम्भ कर दिया गया है। भिलाई में तत्काल विद्युत पूर्ति के लिए एक स्थानीय डीजल केन्द्र बना दिया गया है और एक सेट से बिजली की पूर्ति की जाने लगी है। मध्यप्रदेश और बम्बई राज्य की सीमाओं पर स्थित पेंच नदी पर जल विद्युत केन्द्र स्थापित करने के लिए प्रारम्भिक जांच कार्य पूरा किया जा चुका है।

औद्योगिक विकास

नवीन राज्य में औद्योगिक राज्य बनने के सभी उत्पादन उपलब्ध हैं। राज्य के एक छोर से दूसरे छोर तक कोयले, हीरे से लेकर और दूसरे खनिज पदार्थ भी बहुतायत में पाये जाते हैं। यहां २०० खदानें हैं। देश का सबसे बड़ा सीमेन्ट कारखाना कैमूर में स्थित है। उसकी उत्पादन क्षमता प्रतिवर्ष ३.३ लाख टन है। सतना में १, दुर्ग में २ और बिलासपुर में १ इन चार नये कारखानों की स्थापना से सीमेंट उत्पादन की क्षमता में लगभग १५ लाख टन की वृद्धि हो जाएगी। देश में अखबारी कागज उत्पादन का पहला कारखाना राज्य के नेपा नगर में स्थित है जिसकी प्रतिदिन उत्पादन क्षमता १०० टन है। विदेशी विनिमय मुद्रा की बचत कर ये कारखाने देश की अर्थ व्यवस्था को सबल बनाने में योग दे रहें हैं।

लघु उद्योग

इन्दौर के औद्योगिक क्षेत्र के बाद ग्वालियर का भी उद्योग केन्द्र तैयार हो गया है। छोटे उद्योगों को १७.६ लाख रु० की वित्तीय सहायता दी गई।

हाथ करघा बुनाई उद्योग के प्रयोग तथा प्रशिक्षण केन्द्र इन्दौर ने १९५७-५८ वर्ष में ३२ नवीन डिजाइन तैयार किये हैं। बुनकरों के घरों में थ्रो शटल करघा के बदले ३५०० फ्लाइशॉटल करघों की स्थापना बुनकर सहकारी समिति का एक बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य है। फरवरी १९५८ में केन्द्रीय डायिंग, ब्लीचिंग और फिनिशिंग प्लान्ट के साथ से क्लफ़ लगाने वाले एक बड़े कारखाने ने उज्जैन में कार्यारम्भ किया है।

योजना के अन्तर्गत अनेक नई हस्त कला योजनायें भी कार्यान्वित की गई जिनमें से आलंकारिक जूता निर्माण बड़नगर, सोप स्टोन प्रशिक्षण केन्द्र भोपाल, खिलौना निर्माण प्रशिक्षण केन्द्र रीवा, और विभिन्न स्थानों पर दर्जिगिरी और कढाई के केन्द्र उल्लेखनीय हैं।

यातायात

१३६२ मील लम्बे जो उच्च मार्ग राज्य के क्षेत्र में से गुजर रहे हैं उनकी देखभाल मध्य प्रदेश सरकार केन्द्रीय सरकार की ओर से एजेंसी के आधार पर कर रही है।

शिक्षा

राज्य में दूरगामी महत्व के शैक्षणिक सुधार आरम्भ किये गये हैं। जबलपुर एवं विक्रम विश्वविद्यालय ने इस शैक्षणिक सत्र से कार्य आरम्भ कर दिया, तथा राज्य के समस्त स्नातक महाविद्यालयों को राज्य के विश्वविद्यालयों से सम्बद्ध कर दिया गया। अनेक कालेजों का स्तर ऊंचा कर दिया गया है। इस वर्ष ५६ स्नातक महाविद्यालय हो जायेंगे। इनमें ३२ शासकीय महाविद्यालय तथा २४ अशासकीय महाविद्यालय हैं। राज्य के उन सभी गांवों में जिनकी जनसंख्या ५०० से अधिक है प्राथमिक शालायें खोली गई हैं।

१६१ प्राथमिक शालाओं को बुनियादी पाठशालाओं में परिणित किया गया। इसके अतिरिक्त मध्य भारत क्षेत्र में ५६ नवीन बुनियादी शालायें १९५७-५८ वर्ष में आरम्भ की गई। भोपाल क्षेत्र की १०० प्राथमिक शालाओं को तथा मध्यभारत क्षेत्र की ८२०. प्राथमिक शालाओं को शिल्प सामग्री से सुसज्जित किया गया, जिससे पाठशालाओं में बुनियादी शिल्प आरम्भ किया जा सके।

२२ नवीन उच्च विद्यालय आरम्भ होने के पश्चात राज्य की प्रत्येक तहसील में एक उच्च विद्यालय की व्यवस्था की गई है।

चिकित्सा, लोक कल्याण, श्रम, आदिवासी-सुधार आदि दिशाओं में भी पर्याप्त प्रगति की गई।

——

केन्द्र-शासित राज्यों में

हिमाचल प्रदेश, दिल्ली, मणिपुर और त्रिपुरा का शासन केन्द्र के अधीन है। इनका कुल क्षेत्रफल २४,१४८ वर्ग मील है, जो श्रीलंका के बराबर है और इनकी कुल जनसंख्या ४५ लाख है, जो घाना की आबादी के बराबर है।

दिल्ली को छोड़कर बाकी तीन राज्यों की भूमि पहाड़ी है। इनकी जनता आर्थिक दृष्टि से पिछड़ी हुई है और इनकी कठिनाइयां भी एक सी हैं। इन राज्यों में विकास पर बहुत ही खर्च अपेक्षित है, किन्तु इनकी आमदनी बहुत ही कम है।

केन्द्र इन राज्यों को मुक्त हस्त से मदद देता है। उदाहरण के लिए हिमाचल प्रदेश, मणिपुर और त्रिपुरा को ही लीजिये। इनकी कुल आमदनी इनके कुल खर्च की ३५ प्रतिशत भी नहीं होती। केन्द्रीय सरकार हिमाचल प्रदेश के खर्च का ६५ प्रतिशत, मणिपुर का ८० प्रतिशत और त्रिपुरा का ९० प्रतिशत से भी अधिक देती है। पहली पंचवर्षीय योजना में इन राज्यों के विकास के लिए १ अरब ६३ करोड़ ३ लाख रु० रखा गया था, दूसरी योजना में यह तिगुना—अर्थात् ४ अरब ६४ करोड़ १७ लाख रु०— कर दिया गया है।

प्रति व्यक्ति खर्च का अनुपात भी बढ़ गया है। १९५६-५७ में हिमाचल प्रदेश में यह खर्च ३६ रु० प्रतिव्यक्ति था, जो १९५७-५८ में बढ़कर ५८ रु० हो गया और १९५८-५९ में और भी बढ़कर ६२ रु० हो जाने की आशंका है। इसी तरह मणिपुर में १९५६ में २९ रु० प्रति व्यक्ति खर्च का अनुपात था, किन्तु १९५८-५९ में इसके ४७ रु० से भी अधिक होनेकी आशा है। त्रिपुरा में १९५८-५९ तक यह खर्च ७० रु० प्रति व्यक्ति तक बैठेगा।

सड़कें

इन राज्यों में आवागमन की समस्या सबसे कठिन है। दूर-दूर के स्थानों को मिलाने और खनिज-व्यापार बढ़ाने के लिए सड़कें बनायी जा रही हैं। अकेले हिमाचल प्रदेश में ही पहली आयोजना में सड़क बनाने के लिए २ करोड़ रु० खर्च हुआ। दूसरी आयोजना में इन पर दुगुना खर्च होगा, जिसमें से अब तक दो वर्षों में १ करोड़ ५६ लाख रुपया खर्च हो चुका है।

त्रिपुरा जाने के लिए देश के किसी भी भाग से सीधा रास्ता नहीं है। इसे आसाम से मिलाने के लिए आसाम-अगरतल्ला सड़क बनायी जा रही है। इसमें ३ करोड़ रु० से भी अधिक खर्च होगा। मणिपुर में कछार सड़क का काम शुरू हो गया है और दूसरी आयोजना में सड़क बनाने और यातायात के दूसरे साधन बढ़ाने के लिए १ करोड़ ९० लाख रु० की व्यवस्था की गयी है।

शिक्षा

मणिपुर भारत के उन इनेगिने राज्यों में है, जहां ८० प्रतिशत बच्चे स्कूलोंमें पढ़ रहे हैं। पिछले साल १० हजार विद्यार्थियों ने स्कूलों में नाम लिखाया। त्रिपुरा में १९५४-५५में ५० प्रतिशत बच्चे स्कूल जाते थे, इस समय ६३ प्रतिशत बच्चे स्कूल जा रहे हैं। एक बहुशिल्प विद्यालय भी खोला गया है, जिसमें इंजीनियरी की पढ़ाई भी होगी।

दिल्ली में गत वर्ष ३४ नये माध्यमिक स्कूल और ४६ नये प्रारम्भिक स्कूल खोले गये। इस साल इस काम पर ७० लाख रु० खर्च होगा और अधिक स्कूल खोले जाएंगे। गत वर्ष तम्बुओं में लगने वाले १८ स्कूलों के भवन बनाये गये और इस साल २१ स्कूलों के भवन तैयार किए जाएंगे। हिमाचल प्रदेश १२१ छात्रों को इन्जीनियरी पढ़ने के लिए छात्र वृत्ति दे रहा है। मणिपुर १५६ और त्रिपुरा ४४ छात्रों को छात्रवृत्ति दे रहा है।

अस्पताल भी तेजी से बनाये जा रहे हैं। दिल्ली में इसी वर्ष एक नया मेडिकल कालेज चालू हो जाएगा। इन राज्यों में अस्पतालों में ४,१२९ रोगी-शैयाएं हैं। त्रिपुरा में ३० लाख रु० की लागत से एक अस्पताल बन रहा है।

खाद्यान्नों की कमी

भूमि पहाड़ी होने के कारण इन राज्यों में अनाज बहुत कम पैदा होता है। फिर भी उपज बढ़ाने के लिए सभी प्रयत्न किये जा रहे हैं। किसानों को अच्छे बीज, सुधरे

हुए हल और आर्थिक सहायता दी जा रही है। हिमाचल प्रदेश में खेती के लिए पहली आयोजना में २८ लाख रु० रखा गया था। दूसरी आयोजना में इस पर ७० लाख रु० रखा गया है। मणिपुर में ९० हजार की जगह १० लाख, त्रिपुरा में ४ लाख ६० हजार की जगह ३१ लाख रु० निर्धारित किया गया है।

दिल्ली और हिमाचल प्रदेश में सभी गांवों में सहकारी समितियां खोली गयी हैं। त्रिपुरा में एक सरकारी सहकारी बैंक और ५१ सहकारी ऋण समितियां भी संगठित कर ली गई हैं।

भूमि-सुधार

धीरे-धीरे भूमि सुधार भी किया जा रहा है। हिमाचल देश में एक योजना चालू हो गई है। त्रिपुरा और मणिपुर में भी ऐसी ही योजना बनाने पर विचार हो रहा है। त्रिपुरा में जमीन की पैमाइश और लगान निर्धारित करने के लिए १ करोड़ ३३ लाख ७० हजार रु० की योजना चालू कर दी गयी है। विस्थापितों को फिर से बसाने के लिए १ करोड़ रु० के खर्च पर २७ योजनाएं चालू की गयी हैं।

लोक-हितकारी कार्यों को चलाने में जनता स्वयं उत्साह दिखा रही है। सब बालिग लोगों के मत से पंचायतें और ग्राम-सभाएं कायम की गयी हैं। उदाहरण के लिए, दि[illegible] में कारपोरेशन स्थापित हुआ है, जिसे काफी अधिकार [illegible] और इसका क्षेत्र भी काफी विस्तृत है। हिमाचल प्र[illegible] मणिपुर और त्रिपुरा में क्षेत्रीय परिषदें बनायी गयी हैं, [illegible] शिक्षा, अस्पताल, कृषि कार्यों की देखरेख करती हैं। [illegible] में पंचायतें बन रही हैं। हिमाचल प्रदेश में ये बन चुकी हैं, मणिपुर और त्रिपुरामें भी बनने लग गयी हैं। दिल्ली [illegible] भी शीघ्र ही पंचायतें बन जाएंगी।

केन्द्र शासित द्वीप

इन चार केन्द्र शासित राज्यों के अतिरिक्त, अंडमा[illegible] निकोबार, लक्षद्वीप, अमीन द्वीप और मिनीकाय द्वीप [illegible] भारत के हैं। इनका शासन सीधे संसद करती है, इन्हें विका[illegible] के लिए पर्याप्त सहायता दी जाती है। अंडमान और नि[illegible] बार द्वीपसमूहों में केन्द्रीय सरकार २ हजार रु० प्रति व्यक्[illegible] खर्च कर रही है। लक्षद्वीप और मिनीकाय द्वीपों में विका[illegible] के लिए १९५१-५७ में ३ लाख ५५ हजार रु० खर्च हुआ था, जो १९५७-५८ में बढ़कर १० लाख १३ हजार [illegible] हो गया है।

केन्द्रीय सरकार चाहती है कि इन राज्यों और द्वी[illegible] की जनता भी अन्य राज्योंकी ही तरह तरक्की क[illegible] इसीलिए वह उनको इतनी सहायता देती है।
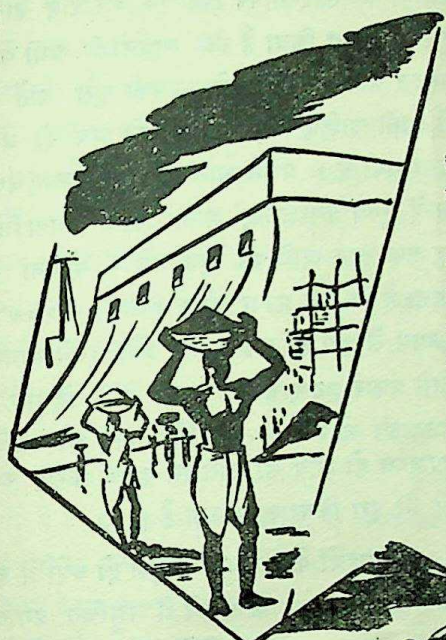
[पृष्ठ ४२५ का शेष]

योजना के लक्ष्य .....

हमें ६५० करोड़ रुपये से अधिक की सहायता मिल चुकी है। अब योजना आयोगका कहना है कि उसका पूर्व अनुमान गलत था, विदेशी मुद्रा का संकट कम करने के लिए ९०० करोड़ रुपये की और सहायता प्राप्त होनी चाहिए।

द्वितीय योजना के संबंध में यह भी कहा जाता है कि उसमें आम खपत की वस्तुओं के उत्पादन पर समुचित बल नहीं दिया गया। लघु और कुटीर उद्योगोंके द्वारा जनता की बढ़ती हुई आवश्यकताएं पूरी नहीं की जा सकती। आजकल मुद्रा-स्फीतिकी अवस्था का मूल कारण यही त्रुटिपूर्ण नीति है। आलोचकों का कहना है सरकारी क्षेत्र का विस्तार अवश्य होना चाहिए, परन्तु जब तक सरकारी नौकर ईमानदारी और दक्षता से काम करना नहीं सीखते, इस नीति से देश को भारी हानि पहुँच सकती है।

द्वितीय योजना के संबंधमें उपर्युक्त आलोचनाओं का यह अर्थ कदापि नहीं कि पिछले दो-ढाई वर्षोंमें देशने प्रगति नहीं की है। इन आलोचनाओं का केवल यह आशय है कि हम देख भाल कर काम करें। अव्यवहारिक सिद्धा के मोहमें हम देश की स्वाभाविक प्रगति को न रोकें आने वाले खतरों के प्रति सावधान रहें। अत्यन्त का विषय है कि इन सभी बातों की ओर ध्यान हमारे योजना आयोग ने, अप्रैल सन् १९५८ में, द्वि योजना की रुपरेखा पर फिर एक बार दृष्टि डाली है, उसने निश्चय किया है कि साधनोंकी कमी के कारण समस्त योजना पूरी न हो, उसकी मूल बातें अवश्य हो जानी चाहिए। इस योजना को अब दो भागों में दिया गया है। प्रथम भाग में वह योजनाएं रक्खी गई जिन्हें मुख्य प्रयोजनाएं माना गया है अथवा जिन पर हद तक काम आगे बढ़ चुका है। योजना आयोग कहना है कि इस प्रकार की योजनाएं ४५०० करोड़ के व्यय से पूरी हो सकती है, और इतने साधन किसी किसी प्रकार जुटाए ही जा सकते हैं। द्वितीय भागमें योजनाओं को रखा गया है और यदि और अधिक साध उपलब्ध हो जांय तो लगभग ३०० करोड़ रुपये से को भी पूरा किया जा सकता है।
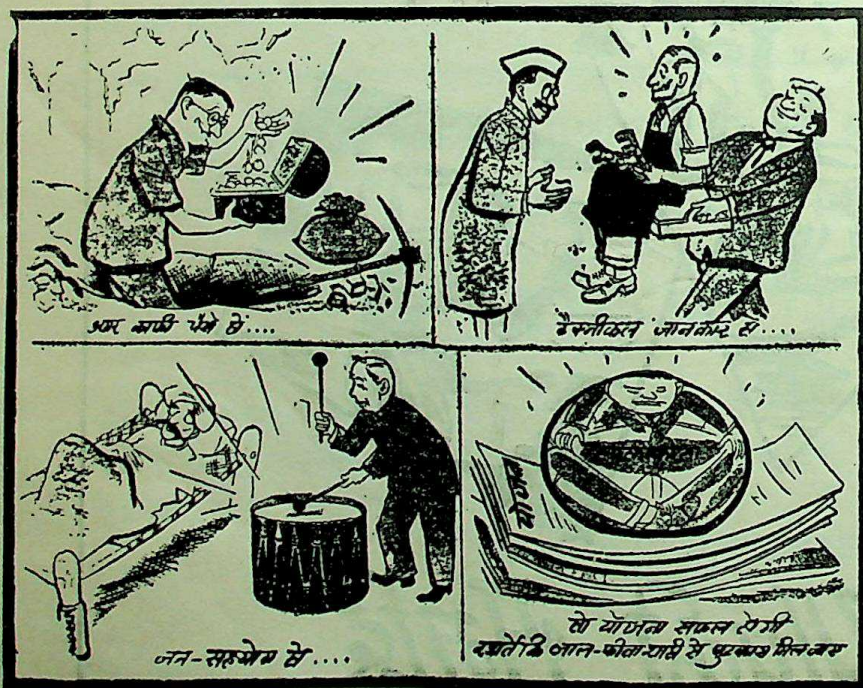
पंचवर्षीय योजना सफल होगी, बशर्तें कि......

कठिनाइयों के बावजूद, पिछले दो वर्षों में देश ने बहु से क्षेत्रों में समुचित प्रगति की है। २० लाख एकड़ नई भूमि में सिचाई की सुविधाएं उपलब्ध हो गई हैं; ७,०० ००० किलोवाट अतिरिक्त बिजली तैयार होने लगी है; कारखानों की उत्पत्ति लगभग १५ प्रतिशत बढ़ गई है, बहुत से नये कारखाने स्थापित किए गये हैं; रेल, तार डाक, टेलीफोन, जहाजरानी, बन्दरगाह, यातायात इत्यादि के साधनों में भी समुचित गति हुई है।

यदि आज सारा देश ईमानदारी और कठोर परिश्रम का मार्ग अपनाए तो कोई कारण नहीं कि कठिनाइयों के रहते हुए भी हम अपने निर्धारित लक्ष्योंको प्राप्त न कर सकें। यदि हमें धन से भी अधिक किसी अन्य चीज की आवश्यकता है तो वह है चरित्र-बल, निस्वार्थ सेवा, ईमानदारी, तथा देश के भविष्य में विश्वास।

—

[सम्पा

सम्पादकीय —

यह विशेषांक

'सम्पदा' का चिर प्रतीक्षित विशेषांक पाठकों की सेवा में समर्पित कर रहे हैं। हम जानते हैं कि 'सम्पदा' के प्रेमी पाठकों ने हमें सदा प्रोत्साहित किया है। वे सदा 'सम्पदा' के प्रत्येक अंक की और विशेषकर विशेषांकों की प्रतीक्षा करते रहते हैं। इस अंक की भी उन्हें विशेष प्रतीक्षा थी।

प्रस्तुत अंक में जो सामग्री गई है, उससे आज की देश की प्रगति, सफलता और असफलता तथा नई समस्याओं पर प्रकाश डालने की चेष्टा की गई है। इसमें हम कहां तक सफल हुए हैं, ये पाठक ही जानेंगे। 'सम्पदा' की नीति किसी पक्ष विशेष या 'इज़्म' के साथ जोड़ कर चलने की नहीं। वह एक ओर शासन द्वारा की जाने वाली प्रगतियों पर उसे धन्यवाद देती है, दूसरी ओर शासन की असफलताओं अथवा भ्रान्त मान्यताओं की ओर भी उसका ध्यान खींचती है। हमारी नम्र सम्मति में समाजवाद, निजी उद्योगवाद या सर्वोदयवाद अपने आप में साध्य नहीं हैं। हमारा साध्य केवल जन-हित है। ये सब 'वाद' उस लक्ष्य तक पहुँचने के लिए अलग अलग साधनमात्र हैं। इसलिए हमारी नीति यह रही है कि देश के सामने उपस्थित विवाद-ग्रस्त प्रश्नों के सब पहलू पाठकों के आगे परोसें। वे अपनी रुचि और आवश्यकता के साथ यथाभिलाषित अपनी सामग्री ले लें अथवा सब विचारों को पढ़कर स्वयं कोई मत स्थिर कर सकें। इसी दृष्टि से पाठक यह विशेषांक पढ़ेंगे।

हम इस विशेषांक में जो सामग्री देना चाहते थे, वह सब स्थानाभाव से नहीं दे पाये। अंक की कलेवर-वृद्धि का अर्थ होता मूल्य वृद्धि, जो हमें किसी तरह अभीष्ट नहीं था। आजकल कागज बहुत मंहगा और दुर्लभ हो रहा है, बहुत दिनों तक दिल्ली के बाजार में कागज का मिलना ही असंभव हो गया था।

इस अंक में पाठक अनेक लेखों के अतिरिक्त एक विशेष वस्तु पायेंगे। हमने नक्शे, ग्राफ, चार्ट और तालिकाएं विशेष रूप से इस अंक में एक साथ दी हैं। तालिकाओं के नीचे छोटे-छोटे नोट भी देने का प्रयत्न किया है। हमारा आशय इनसे यही है कि अर्थशास्त्र में रुचि रखने वाले पाठक इन तालिकाओं को किस तरह पढ़ना चाहिये और इनसे किस तरह परिणाम निकालने चाहियें, यह दिशा समझ लें। इस तरह के चार्ट और तालिकाएं देने की विशेष प्रथा हिन्दी में 'सम्पदा' ने चलाई है, क्योंकि हम यह समझते हैं कि आर्थिक प्रश्नों में रुचि और रस लेनेमें यह बहुत सहायक हैं।

हम पाठकों में केवल पढ़ने की रुचि ही नहीं, आर्थिक चैतन्य भी उत्पन्न करना चाहते हैं। हमारी यह हार्दिक अभिलाषा है कि हमारे पाठक आर्थिक प्रश्नों को न केवल समझें; किन्तु देश के आर्थिक विकास के प्रति अपने कर्त्तव्यों को भी अनुभव करें। इसी दृष्टि से कुछ पृष्ठों में देश के नागरिकों से नम्र अनुरोध भी किये गये हैं। हमें आशा है कि देश के प्रति उत्तर दायी पाठक अपने अपने कर्त्तव्यों को समझेंगे। हमें इस अंक की तैयारी में अपने कृपालु लेखकों का सहयोग सदा की भांति मिला है। इसके लिए हम उनके प्रति कृतज्ञ हैं। यह देखकर हमें कम खेद नहीं हुआ कि भिन्न भिन्न राज्यों के प्रकाशन व सूचना विभागों से हमें बहुत कम सामग्री प्राप्त हुई है। यह एक दुखद सत्य है कि उक्त विभागों के अधिकारी अभी तक हिन्दी पत्रों के साथ अपना कर्त्तव्य नहीं निभाते।

अन्त में एक अनुरोध अपने पाठकों से भी करना चाहते हैं। 'सम्पदा' उनकी हार्दिक मंगल कामनाओं का सम्बल पाकर अपने लगभग सात वर्ष पूरे कर चुकी है; किन्तु आज कल जब कि व्यय बहुत बढ़ गये हैं, फिर हम 'सम्पदा' में नये स्तम्भ भी खोलना चाहते हैं; जिन की सूचना पाठक इसी अंक में अन्यत्र पढ़ेंगे। हमें आशा है कि उन स्तम्भों के द्वारा हम 'सम्पदा' को और भी उपयोगी बना सकेंगे। परन्तु इस सब के लिए पाठकों का और अधिक सहयोग हमें चाहिए। हमें आशा करनी चाहिए कि एक दो महीने में प्रत्येक पाठक एक-एक नया ग्राहक तैयार कर देगा। यह अपेक्षा बहुत बड़ी नहीं है। हम 'सम्पदा' के द्वारा पाठकों की सेवा करना चाहते हैं। उनका सहयोग हमें अवश्य मिलेगा। इस आशा में आपका—

कृष्णचन्द्र विद्यालंकार
सम्पादक 'सम्पदा'

—

[पृष्ठ ४३२ का शेष]

सुविधा सबको प्राप्त रहेगी, तभी वह पद्धति समाजवादी पद्धति कहला सकेगी।

पंचवर्षीय योजना से समाजवाद

इसमें सन्देह नहीं कि पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा हमने समाजवाद की ओर एक बहुत बड़ा कदम उठाया है क्योंकि उत्पादन बढ़ाये और औद्योगिकरण बिना किए समाजवाद की स्थापना हो नहीं सकती। कुछ हो तभी तो उसका बटवारा हो सकता है। पंचवर्षीय योजना में यह भी स्पष्ट रूप से उद्देश्य रखा गया है कि योजना से देश की आय में जो वृद्धि हो उसका अधिकांश लाभ अब तक वंचित वर्गों को ही हो। यह निस्संदेह एक समाजवादी लक्ष्य है, पर व्यावहारिक रूप में कहां तक यह कार्य रूप में परिणत हो पाया है, इसका कोई सर्वेक्षण नहीं हुआ है। हमारे यहां प्रचलित पद्धति में यह मान लिया गया है कि पूंजीपति भी उत्पादन बढ़ाने में (केवल अपना मुनाफा नहीं) सहयोग देंगे। मुझे डर है कि पूंजीपति इस प्रकार का सहयोग नहीं दे रहे हैं। इसलिए अन्ततोगत्वा हमारी सरकार समाजवाद लाने के लिए उन्हें किस प्रकार सहयोग देने के लिए मजबूर करेगी? सम्भव है अपने तजर्बों के कारण उनका अस्तित्व मिटाने पर ही मजबूर हो, यह अभी देखना है। भारत में समाजवाद का भविष्य इन्हीं गुत्थियों के सुलझाने पर निर्भर है। वैसे समाजवाद की स्थापना बिलकुल अनिवार्य है।

—

डालमिया उत्पादन

आधुनिक गृहों तथा कार्यालयों के लिए

उत्तम कोटि की अग्निरोधक ईंटें, चीनी मिट्टी के सामान, विसंवाहक तथा क्षार-अवरोधक खर्परियां आदि

वज्रचूर्ण-अयस्संघा नाल (R. C. C. Spun pipes) सिंचाई, पुलियाओं (Culvert), जलप्रदाय और जलोत्सारण (Supply and drainage) के लिये सभी श्रेणियों और मापों में प्राप्य 1

ऊष्मसह (Refractories) अग्नीष्टकायें (Fire Bricks) संमृद (Mortars) तथा समस्त ताप-सीमाओं और आकृतियों में प्राप्य विसंवाहक ईष्टकायें (Insulating Blocks) सभी औद्योगिक आवश्यकताओं के लिये 2

पोर्टलैण्ड सिमेंट सामान्य निर्माण के लिये 3

काश्मनाल (Stoneware Pipes) पूर्णरूपेण लवण काचित (Salt Glazed) क्षार-रोधक (Acid Resistant) एवं प्रमाप विशिष्ट (Tested of standard specification) जलोत्सारण (Drainage) के लिये 4

मृत्सा-आरोग्यपात्र (Porcelain sanitary ware) भारतीय और योरोपीय शौच कुंड (Closets), धावन पात्री (Wash basins), मूत्रकुंड (Urinals), इत्यादि 5

विसंवाहक (Insulators) एवं क्षाररोधक खर्परी (Tiles) भी मिल सकती हैं। 6

डालमिया सिमेंट (भारत) लि०,

डाकघर—डालमियापुरम्

जिला—तिरुचिरापल्ली, दक्षिण भारत

R.I.H.B D.C.H.2-58.

सम्पादक—कृष्णचन्द्र विद्यालंकार द्वारा अशोक प्रकाशन मन्दिर के लिए अर्जुन प्रेस, दिल्ली से मुद्रित व प्रकाशित

सम्पदा

अक्टूबर, १९५८

उत्तर-प्रदेश के सम्बन्ध में कुछ अविस्मरणीय तथ्य

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद उत्तर प्रदेश की सरकार ने नव रचना के जो कार्य किये वे सर्व विदित हैं। प्रारम्भ से ही विभिन्न कठिनाइयों का सामना करते हुए भी सरकार ने विभिन्न क्षेत्रों में अनेक महत्वपूर्ण सफलताएं प्राप्त की हैं। हम में से प्रत्येक व्यक्ति अपने-अपने क्षेत्र में परिचालित योजनाएँ और उनकी प्रगति देखता है किन्तु सम्पूर्ण प्रदेश की प्रगति का ज्ञान इससे कहीं अधिक विश्वास का सृजन करने में समर्थ है। नीचे के कुछ तथ्य हमारे विश्वास को बल देंगे। अपने भविष्य के प्रति नयी आस्था से हमारे हृदय को परिपूर्ण करेंगे, इसमें सन्देह नहीं। कृषि सिंचाई और पशुपालन के क्षेत्र की यह प्रगति निश्चय ही उत्साह-वर्द्धक है।

	१९५०-५१ में	१९५६-५७ में
खाद्योत्पादन	१ करोड़ ७ लाख ९० हजार टन	१ करोड़ २० लाख ९० हजार टन
राजकीय साधनों से सिंचन सुविधाएं	७८ लाख एकड़ भूमि में	१ करोड़ ८ लाख एकड़ भूमि में
पशु चिकित्सालयों की संख्या	२२७	२८१

औद्योगिक विकास की दिशा में भी इस अवधि में महत्वपूर्ण काम हुआ। यद्यपि प्रथम पंचवर्षीय योजना मुख्य रूप से कृषि-विकास की योजना थी तथापि उद्योगों की उपेक्षा नहीं की गयी। निम्नांकित तथ्य इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय है।

प्रथम योजना की अवधि में

२ करोड़ ८९ लाख ५४ हजार रुपया कुटीर उद्योगों के विकास पर खर्च किया गया। इन उद्योगों को आर्थिक सहायता तो दी ही गयी, कच्चा माल सुलभ करने, समुन्नत हाट-व्यवस्था करने और वस्तुओं की उपयोगिता अधिकाधिक बढ़ाने में भी सहायता प्रदान की गयी। राजकीय क्षेत्र में दो बड़े उद्योग खोले गये, चुर्क सीमेंट का कारखाना एवं लखनऊ में अणुवीक्षणयन्त्र कारखाना। सीमेंट कारखाने में ७०० टन सीमेंट प्रतिदिन उत्पादित करने की क्षमता है।

१९५६-५७ में

इस वर्ष लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास के निमित्त ४७ कार्य-क्रम चलाये गये। १ करोड़ रु० की लागत से कानपुर एवं आगरा में औद्योगिक आस्थानों की स्थापना की गयी। सीमेंट एवं सूक्ष्म यन्त्र कारखाने का विस्तार किया गया। नैनी में सूत कातने का कारखाना खुला। कानपुर, वाराणसी में कारखाने खोलने के लिए अनुमति-पत्र दिये गये।

और गांवों में नये जीवन का संचार करने के उद्देश्य से सामुदायिक कल्याण योजनाओं का शुभारम्भ हुआ। सन् १९५२-५३ में उत्तर प्रदेश में इन योजनाओं का व्यापक क्षेत्र में आरम्भ हुआ। इस क्षेत्र में जो प्रगति हुई उसका परिचय निम्नलिखित आंकड़े देते हैं—

प्रथम योजनावधि में	१९५७ में
२६ सामुदायिक विकास खण्ड एवं १३५ राष्ट्रीय प्रसार सेवाखण्ड खोले गये।	विकास खण्डों की कुल संख्या ३३३ हो गयी।

सूचना विभाग उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा प्रसारित

प्रमुख अर्थशास्त्रियों और सहयोगियों की दृष्टि में—

'सम्पदा' का राष्ट्र प्रगति-अंक

मुझे 'सम्पदा' का विशेषांक (राष्ट्रप्रगति अंक) प्राप्त हुआ। विशेषांक प्रकाशित करके आपने जो सफलता प्राप्त की हैं इसके लिए मेरी बधाई स्वीकार करें। विशेषांक में राष्ट्रीय महत्त्व के विभिन्न विषयों पर महत्त्वपूर्ण लेख प्रकाशित किए गये हैं।

मुझे विश्वास है कि आप भविष्य में भी अपने पत्र को प्रकाशित करते रहकर अपने पाठकों की सेवा करते रहेंगे, जैसा कि आप पहिले भी करते रहे हैं।

— मुरारजी जैदेवजी वैद्य

'सम्पदा' हिन्दी में अर्थशास्त्र की सर्वश्रेष्ठ पत्रिका है। इसने अपना एक विशेष स्तर बना लिया है और यह हमारे देश में किसी भी भाषा में प्रकाशित होने वाले अर्थशास्त्रीय मासिक पत्र की तुलना में रखी जा सकती है। जो सूचनाएं दी गई हैं वे विषय को गहराई तक समझाती हैं। विभिन्न दृष्टिकोणों को अच्छी तरह प्रस्तुत किया गया है। पत्रिका का अगस्त-सितम्बर का संयुक्त विशेषांक इसकी उपलब्धियों में एक और मील का पत्थर है।

यह अंक रेफ्रेन्स के लिए संग्रहणीय है।

— एच० सी० हेडा, एम० पी०

मुझे अभी-अब आपका 'सम्पदा' का 'राष्ट्र प्रगति अंक' मिला। अनेक व्यस्तताओं के रहते भी आप एक शानदार काम कर रहे हैं।

— जी० एल० बन्सल

इस बार का 'सम्पदा' का अंक बहुत ही सराहनीय है। आप किस प्रकार इतनी सामग्री दे पाते हैं, यह देखकर आश्चर्य होता है। हिन्दी भाषा के पाठकों के लिए तो आपका प्रयत्न बहुत स्तुत्य है।

— चतुर्भुज डीडवानिया

'सम्पदा' ने सदा से ही अपना एक निष्पक्ष दृष्टिकोण अपनाया है। विशेषांक ने उस दृष्टिकोण को पूरी तरह निभाया है। जहां एक ओर सरकारी आंकड़ों के आधार पर आपने योजना की सफलता को आंका है, वहां जन साधारण की क्या धारणा है—योजना की सफलताओं के प्रति, उन विचारों को भी आपने निःसंकोच दिया है। बस, यही आपकी पत्रिका की प्रमुख विशेषता है। और इसीलिए यह पत्रिका मुझे सबसे अधिक प्रिय है। विद्यार्थी वर्ग इससे उचित लाभ उठाएगा ऐसी हमें पूर्ण आशा है।

— ओमप्रकाश तोषनीवाल एम० कॉम०

'सम्पदा' का राष्ट्र प्रगति अंक मिला। अंक आपकी पुरानी विशिष्ट परम्परा के अनुरूप ही नहीं, अपितु बढ़-चढ़ कर है। इस सफल संपादन एवं प्रकाशन के लिए हार्दिक शुभाभिनन्दन स्वीकार कीजिएगा।

— ब्रह्मदत्त

'सम्पदा' हिन्दी में अर्थशास्त्र की एक उत्कृष्ट पत्रिका है जिसमें विशुद्ध आर्थिक प्रश्नों, प्रगतियों और समस्याओं की चर्चा रहती है। इस अंक में दूसरी पंचवर्षीय योजना की सफलता और प्रगति के परिचय के साथ असफलताओं और उनके कारणों पर भी प्रकाश डाला गया है। विविध दृष्टिकोणों से, विविध पहलुओं पर दिए गए लेख पाठक को पर्याप्त विचार सामग्री देते हैं। विदेशी मुद्रा, समाजवादी उद्योग, कृषि, भूमि-सुधार आदि की वर्तमान समस्याओं पर अधिकारी लेखकों के सुन्दर विचार दिए गये हैं। 'समाजवाद का आदर्श योजनाओं की प्रगति में सहायक है या बाधक ?' यह लेख हमें बहुत विचारणीय जान पड़ता है।

—दैनिक हिन्दुस्तान, नई दिल्ली

प्रस्तुत 'राष्ट्र प्रगति अंक' में द्वितीय पंचवर्षीय योजना का परिचय, विभिन्न क्षेत्रों में प्रगति एवं असफलता, प्रथम पंचवर्षीय योजना के साथ उसका तुलनात्मक अध्ययन, देश के समक्ष प्रस्तुत नव-नव समस्याओं पर देश के अधिकारी विद्वानों के लेख तथा अन्य महत्त्वपूर्ण सामग्री देने का भरसक प्रयत्न किया गया है। विभिन्न लेखों से सम्बन्धित संख्याओं के चार्ट, ग्राफ और नक्शे तथा उनके नीचे कुछ स्पष्टीकरण देकर एक नया प्रयत्न आरम्भ किया है, जिसका अभाव प्रायः हिन्दी पाठकों को खटकता था। विशेषांक पठनीय एवं संग्रहणीय है।

—'विश्व ज्योति', मासिक होशियारपुर

व्यवस्थापकीय नियम

(१) **स्थायी ग्राहक पत्र-व्यवहार करते समय या चंदा भेजते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखें।** ग्राहक संख्या महीने के प्रत्येक अंक के रैपर पर लिखी होती है, देखकर नोट कर लें। ग्राहक संख्या न लिखे होने की दशा में पत्र का उत्तर दे सकना कठिन हो जाता है।

(२) हमारे यहां से 'सम्पदा' का प्रत्येक अंक महीने की १० तारीख को भेज दिया जाता है। अंक १० दिन तक न मिले तो कार्यालय को शीघ्र सूचित करें। इसके बाद आने वाले पत्रों का उत्तर देना कठिन होगा।

(३) नये ग्राहक बनने के इच्छुक चंदा भेजते समय इस बात का उल्लेख अवश्य करें कि वे नये ग्राहक बन रहे हैं तथा वर्ष के अमुक महीने से बनना चाहते हैं।

(४) नये ग्राहक बनने वालों को उनकी ग्राहक-संख्या की सूचना कार्यालय से पत्र द्वारा दे दी जाती है।

(५) कृपया वार्षिक चंदा मनीआर्डर द्वारा ही भेजें।

(६) कुछ संस्थाएं चैक द्वारा चंदा भेजती हैं। वे पोस्टल आर्डर से भेजें अथवा बैंक खर्च भी साथ भेजें।

(७) अपना पता बदलने पर नये पते की सूचना शीघ्र दें, अन्यथा अंक दुबारा नहीं भेजा जायगा।

(८) अगर आप अपनी प्रति स्थानीय एजेन्ट से लेना चाहते हैं, तो हमें लिखिए, प्रबन्ध हो जाएगा।

—मैनेजर, प्रसार विभाग

॥ असावधानी से मृत्यु हो जाती है ॥
कृपया रेलगाड़ी के डिब्बों के अंदर सिगरेट के जलते हुये टुकड़े न फेंकिये।
अपने डिब्बे के अंदर स्टोव न जलाइये।
विस्फोटक, खतरनाक और जल्दी आग पकड़नेवाली वस्तुओं को सामान (लगेज) के रूप में ले जाना मना है।
मार्च, १९५८ तक मध्य रेलवे पर ४६ बार आग लगी जिसमें अधिक आर्थिक हानि के अतिरिक्त जान भी गई।
मध्य रेलवे

विषय-सूची

सम्पादकीय परामर्श-मण्डल

१. श्री रामगोपाल विद्यालंकार

२. श्री जी० एस० पथिक

बम्बई में हमारे प्रतिनिधि

श्री टी० एन० वर्मा, नेशनल हाउस, २री मंजिल तुलकरोड, बम्बई- १

कानपुर में हमारे प्रतिनिधि

श्री महेन्द्रस्वरूप भटनागर १५/६१ सिविल लाइन्स

वर्ष : ७] अक्तूबर, १९५८ [अङ्क : १०

अन्न की समस्या

पिछले दिनों देश के अनेक भागों में अन्न की समस्या ने अति विकट रूप धारण कर लिया था। इस विकटता को विभिन्न राजनैतिक दलों की पारस्परिक प्रतिस्पर्धा ने और भी अधिक चिन्तनीय बना दिया था। उत्तर प्रदेश और पश्चमी बंगाल में तो कांग्रेस-विरोधी दलों ने अपनी लोक प्रियता बढ़ाने के उद्देश्य से सत्याग्रह तक का आश्रय ले लिया था, परन्तु घटनाचक्र से सिद्ध हो गया कि न तो इस समस्या का हल करने के लिए सत्याग्रह सरीखे चरम उपाय का अवलम्बन करने की आवश्यकता थी और न ही यह समस्या उतनी विकट थी जितनी कि यह केवल ऊपरी लक्षणों को देखने से प्रतीत होने लगी थी। जिन राजनीतिक दलों ने अन्न की समस्या हल करने के लिए सत्याग्रह किया था, उनकी लोक-प्रियता उससे बढ़ी नहीं। उसका फल केवल इतना हुआ कि शासकों की कठिनाइयां कुछ बढ गईं। इस फल को सत्याग्रह करने वाले राजनीतिक दल चाहें तो अभीष्ट भी मान सकते हैं, क्योंकि उनका एक लक्ष्य शासनारूढ दल—कांग्रेस—की कठिनाइयां बढ़ाना भी था। इसके विपरीत, शासनारूढ दल सत्याग्रह के फल की ओर संकेत करके यह दावा कर सकता है कि अन्न की परिस्थिति में जो सुधार हुआ, वह सत्याग्रहियों के किये नहीं हुआ, प्रत्युत अन्न के वितरण के लिए अधिक अच्छा नियंत्रण करने आदि के जो उपाय किये गये उनके कारण हुआ।

परन्तु शासनारूढ दल का यह दावा यथार्थ होते हुए भी उसे सर्वथा निरपराध सिद्ध नहीं कर सकता। यदि सरकार की ओर से अन्न के यातायात और नियंत्रण आदि की व्यवस्था पहिले से ही उचित रखी जाती तो शायद अन्न की समस्या उत्पन्न ही न होती। उदाहरणार्थ, उत्तर प्रदेश के देहरादून आदि जिलों से चावल का निर्यात बन्द करते ही चावल का भाव ७-८ रुपये मन तक गिर गया। इसी प्रकार पंजाब में जो उपाय किये गये उनसे पंजाब में अन्न का भाव एक दम नीचा हो गया। इन सबसे प्रकट होता है कि सरकार की नीति यथार्थ और दूरदर्शितापूर्ण नहीं थी।

कुछ सुझाव

वस्तुतः बात यह है कि सरकार और उसके सलाहकार विचार करने के समय जो कुछ विचार करते हैं, उस पर वे स्वयं ही अमल करने के समय अमल नहीं करते। गत वर्ष श्री अशोक मेहता की अध्यक्षता में जो समिति अन्न की समस्या पर विचार करने के लिए नियुक्त की गई थी

उसकी प्रायः एक भी सिफारिश पर सरकार ने अमल नहीं किया। इसी प्रकार संसद और विधान मण्डलों के विवादों में बार बार यह सुझाया जाने पर भी कि केन्द्र और राज्य-सरकारों की नीति में समन्वय रहना चाहिये इस सुझाव पर अमल प्रायः कभी नहीं किया गया।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना का निर्माण करते हुए तो कृषि की उपेक्षा की ही गई थी, कृषि का विकास करते हुए भी गन्ना तथा तम्बाकू सरीखी व्यापारिक फसलों और अन्न के उत्पादन में सन्तुलन का ध्यान नहीं रखा गया। यह एक चिन्तनीय तथ्य है कि हमारे देश के किसान की वृत्ति अन्न की खेती छोड़ कर गन्ना, तम्बाकू, कपास, तिलहन आदि अधिक लाभप्रद फसलें अधिकाधिक परिमाण में बोने की होती जा रही है। जब तक इन विभिन्न फसलों में सन्तुलन रखने पर ध्यान नहीं दिया जाएगा, तब तक हमारे देश में अन्न की समस्या बनी ही रहेगी।

अन्न की समस्या उपस्थिति होने पर यह शिकायत सदा ही की जाती है कि हमारे किसान का स्वभाव ही चातक के समान वर्षा के लिए आकाश की ओर देखते रहने का बन गया है। किसान के विरुद्ध यह शिकायत सत्य हो सकती है, परन्तु सरकार के विरुद्ध भी किसान की यह शिकायत कुछ कम सत्य नहीं है कि वह पूंजीपतियों और महाजनों के समान नफाखोर और लालची बन गई है। सरकार ने बड़ी-बड़ी नदियों को बांधकर, जो पानी एकत्र किया है, उसे वह समुद्र की ओर व्यर्थ बह जाने देती है, परन्तु उसे सस्ते मूल्य पर किसान को देकर अन्न का उत्पादन बढ़ाने में सहायक नहीं होती। नदियों को बांधने पर जो पूंजी लग चुकी है, वह तो अब खर्च हो गई, वह तो अब लौट नहीं सकती। तो फिर उनका उपयोग अन्न की वृद्धि के लिए क्यों न किया जाय? यदि सरकार को पानी सस्ता बेचने के कारण लाभ न्यून होगा या न भी होगा तो भी उसका उपयोग अन्न की उत्पत्ति के लिए तो हो ही जाएगा। सरकार को इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार करना चाहिये।

——

द्वितीय योजना की आलोचना

संसद के वर्षा-अधिवेशन में द्वितीय योजना की बहुत तीव्र आलोचना की गई। योजना मंत्री श्री गुलजारीलाल नन्दा को भी यह मानना पड़ा कि योजना-निर्माताओं से योजना के व्यय का अन्दाजा लगाते हुए भूलें हो गई थीं। उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि योजना में कृषि के विकास को जितना महत्त्व दिया गया है उससे अधिक दिया जाना चाहिये था। योजना के लिए आवश्यक विदेशी-पूंजी का अन्दाजा लगाने में की गई भूल को भी उन्होंने स्वीकार किया। योजना-निर्माताओं की इन भूलों के कारण सरकार की आलोचना अपने देश में तो हुई ही है, विदेशियों को भी उस पर अंगुली उठाने का अवसर मिल गया है।

राजधानी में विश्व-बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय-मुद्रा-कोष और अन्तर्राष्ट्रीय वित्त-निगम के सम्मेलन के लिए जो विदेशी अर्थशास्त्री एकत्र हुए, प्रायः उन सभी ने द्वितीय योजना की मूल-नीतियों की प्रतिकूल आलोचना की। उनकी आलोचनाओं का सार यह है:

१—भारत को अपने उद्योगों में निजी क्षेत्र की उपेक्षा न करके उसे अधिक प्रोत्साहन देना चाहिये।

२—योजना के व्ययों की पूर्ति के लिए घाटे का बजट बनाने का अधिक आश्रय नहीं लेना चाहिए अर्थात् सरकार को कागजी नोट छापकर अपनी आय से अधिक व्यय नहीं करना चाहिए और

३—विदेशों से जो ऋण लिया जाय वह सरकारी हिसाब की अपेक्षा निजी हिसाब में अधिक लेना चाहिए।

ये आलोचनाएं और सुझाव नये नहीं हैं। विदेशी महाजनों और अर्थ-शास्त्रियों के द्वारा यही विचार पहिले भी अनेक बार प्रकट किये जा चुके हैं, परन्तु तब हमारे योजना निर्माताओं ने इन आलोचनाओं को पसंद नहीं किया था। अब लगभग तीन वर्ष के अनुभव के पश्चात् उन्हें भी पुनर्विचार करने के लिए विवश होना पड़ गया है। लक्षणों से जान पड़ता है कि हमारे योजना निर्माता विदेशी आलोचकों की आलोचनाओं को अब शंका अथवा क्रोध की दृष्टि से नहीं देख रहे हैं। यह शुभ लक्षण है।

एक सावधानता की बात

हमारे योजना निर्माता विदेशी महाजनों, और अर्थ-

शास्त्रियों की भविष्य में उपेक्षा नहीं करेंगे, यह तो अच्छी बात है, परन्तु उन्हें एक बहुत बडी सावधानी भी रखने की आवश्यकता है । कई महीनों से पश्चिमी देशों का वातावरण भारत को ऋण देने के लिए अनुकूल बन रहा है। दिल्ली में एकत्र अन्तर्राष्ट्रीय महाजनों ने अविकसित देशों को ऋण देने के लिए अपने साधन बढ़ाने का भी निश्चय किया है। इससे आशा होती है कि भारत को अब अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विदेशी पूंजी की कमी नहीं रहेगी।

पश्चिमी देश तो भारत को ऋण देंगे ही, उनकी प्रतिस्पर्धा में साम्यवादी रूस भी भारत को ऋण देने में पीछे नहीं रहेगा। यह अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा जहां भारत की पूंजी की आवश्यकता पूरी कर देने में सहायक होगी वहां यह भारत को ऋणी भी बहुत अधिक बना देगी। इसका भारत को अभी से ध्यान रखने की आवश्यकता है।

इस समय जो अन्दाजा लगाया गया है उसके अनुसार सम्भावना यह है कि द्वितीय योजना के अंत और तृतीय योजना के आरम्भ के वर्षों में भारत को अथवा ऋण चुकाने के लिए प्रायः प्रतिवर्ष १०० करोड़ रुपया अपने विदेशी महाजनों को देना पड़ेगा। तब तक हमारे सरकारी उद्योग व्यवसाय अपनी कमाई में से इतना रुपया देने में समर्थ हो जाएंगे, इसमें हमें भारी सन्देह है। यदि हम अभी से सावधानतापूर्वक न चलेंगे तो हमारी यह ऋण ग्रस्तता। हमारे लिए बहुत बड़ी कठिनाई का कारण बन जाएगी।

विश्व बैंक की पूंजी वृद्धि

विश्व बैंक सम्मेलन की कार्यवाही जिन पाठकों ने पढ़ी है, वे शायद विश्व बैंक के अध्यक्ष श्री यूजैन आर० ब्लैक के इस आशय से सहमत हों कि राष्ट्रों के कलह व संघर्ष के कोलाहल से भी ऊपर उठकर एक नई आवाज जोर पकड़ रही है और वह है विकसित और अविकसित देशों के आर्थिक विकास की। आज की अशान्त शताब्दि में यदि मनुष्य को जीवित रहना है तो आर्थिक विकास की आशा को लगातार पोषण की आवश्यकता है। विश्व बैंक और तत्सम्बन्धी संस्थाएं आज विश्व बैंक के अविकसित देशों के आर्थिक अभ्युत्थान में जो योगदान दे रही हैं, उसका कुछ संक्षिप्त परिचय पाठक अन्यत्र पढ़ेंगे।

आज विश्व बैंक के राजनीतिज्ञ यह समझने लगे हैं कि जब तक कोई देश आर्थिक दृष्टि से अनुन्नत है तब तक विश्व की आर्थिक समृद्धि सम्भव ही नहीं। इसीलिए आज समस्त देशों की एक साथ आर्थिक उन्नति की दिशा में संसार के विचारक सोचने लगे हैं। विश्व बैंक की पूंजी बढ़ने का निर्णय भी, इसीलिए किया गया है ताकि अविकसित देशों को अधिक आर्थिक सहायता दी जा सके। हमें आशा करनी चाहिये कि यह बैंक और भी अधिक निष्पक्षतापूर्वक भारत तथा अन्य अविकसित देशों को और भी अधिक आर्थिक सहयोग देगा।

जल प्रलय का संकट

यह देश का दुर्भाग्य है कि एक संकट बीतने नहीं पाता कि दूसरा संकट आ उपस्थित होता है। २-३ महीने पहले सूखे और अनावृष्टि के संकट ने पूर्वी उत्तर प्रदेश को आक्रान्त कर रखा था तो अब पश्चिमी उत्तर प्रदेश, पंजाब, बिहार तथा अन्य अनेक भागों को अतिवृष्टि और जल-प्रलय ने तबाह कर दिया है। फसलों का कितना भारी नुकसान हुआ, इसका अनुमान आज नहीं किया जा सकता। इन दोनों दैवी संकटों ने अन्न संकट को और भी अधिक भीषण बना दिया है। किन्तु भारत और उसके किसान को इनसे हारकर नहीं बैठ जाना है। इन दैवी आपदाओं का डट कर समस्त राष्ट्र को मुकाबला करना है और भिन्न-भिन्न राज्यों में चलाये गये 'रबी-अभियान' को सफल करके दिखाना है। परन्तु यह काम अफसरशाही से न होकर भाई चारे से होगा। अफसर किसान बन कर किसानों के पास जायेंगे तो उनका कुछ लाभ होगा।

उत्पादन व श्रम का सम्बन्ध

भारत के उद्योगपति अनेक वर्षों से यह कह रहे हैं कि मजदूरों की वेतन वृद्धि से उन्हें कोई हानि नहीं है, बशर्ते कि वेतनों का उत्पादन के साथ सम्बन्ध जोड़ दिया जाये। इस दिशा में चित्तरंजन के इन्जिन कारखाने ने वहां काम के अनुसार वेतन देने की प्रणाली शुरू की है। इससे तेज और अच्छे कारीगर, ज्यादा अच्छा काम करके ज्यादा वेतन कमा लेते हैं और सुस्त कारीगरों को इससे प्रेरणा मिलती है।

अंतर्राष्ट्रीय मुद्राकोष : इतिहास और प्रगति

डा० बी० के० मदान : मुख्य सलाहकार, रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया

अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा-कोष, विश्व बैंक और अंतर्राष्ट्रीय निगम की बैठकें इस वर्ष नई दिल्ली में हो रही हैं। इस अवसर पर इन अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं का परिचय और क्रिया-कलाप की जानकारी देने वाला यह लेख प्रकाशित किया जा रहा है।

जुलाई १९४४ में संयुक्त राष्ट्र संघ के मातहत ब्रिटनवुड में वित्त और मुद्रा सम्बन्धी सम्मेलन हुआ था, जिसके फलस्वरूप १९४६ में अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष और विश्व बैंक की स्थापना हुई। अन्तर्राष्ट्रीय वित्त निगम, विश्व बैंक से सम्बद्ध संस्था के रूप में स्थापित किया गया।

भारत शुरू से ही इन संस्थाओं का सदस्य रहा है और उसने इनकी स्थापना में भी प्रमुख भाग लिया है। इन संस्थाओं ने भारत की काफी सहायता भी की है और विश्व बैंक ने तो भारत को सर्वाधिक मदद दी है। इन संस्थाओं का मुख्य उद्देश्य पिछड़े हुए देशों की सहायता करना और उनके शांतिपूर्ण विकास के लिए मार्ग प्रस्तुत करना है। इस दृष्टि से दिल्ली में होने वाली इनकी बैठकें काफी महत्व रखती हैं।

उद्देश्य

यद्यपि इन संस्थाओं के काम अलग-अलग हैं, पर उद्देश्य एक है। वह है अन्तर्राष्ट्रीय उत्पादन बढ़ाने के लिए हर सम्भव सहायता देना और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का संतुलित रूप से विकास करना, जिसमें सदस्य देशों में फैली बेकारी कम हो, उनकी वास्तविक आय और पैदावार बढ़ें। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए मुद्राकोष, सदस्य देशों को भुगतान का संतुलन बैठाने के लिए कम अवधि के ऋण देता है, जबकि विश्व बैंक आर्थिक विकास के लिए लम्बी अवधि के ऋण देता है। कहना चाहिए कि जहां मुद्राकोष अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में दृढ़ता लाने की कोशिश करता है, वहां विश्व बैंक खेती, यातायात, बिजली आदि के विका[स] के लिए ऋण देकर उसकी सहायता करता है।

अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष

प्रथम महायुद्ध से पहले अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार स्वर्णमा[न के] आधार पर किया जाता था। युद्ध के बाद इसे पुनः स्था[पित] करने की कोशिश की गई, जो असफल रही। १९३१ [में] विनिमय दरें कुछ इस तरह घटने लगीं कि इसका चल[ना] असम्भव हो गया। इसी बीच आर्थिक मंदी भी आई औ[र] बेरोजगारी बढ़ने लगी। युद्ध के बाद लोग सोचने लगे कि विदेशी-व्यापार पर लगे प्रतिबन्ध ढीले कर दिये जाएं औ[र] वित्तीय विकास के लिए मुद्रा की विनिमय दरें निश्चित क[र दी] जाएं। इस विचार से अंतर्राष्ट्रीय मुद्राकोष की स्थापना हुई।

मुद्राकोष प्रत्येक राष्ट्र द्वारा नियत और अन्तर्रा[ष्ट्रीय] रूप से स्वीकृत विनिमय दरों को स्थिर करने में सहाय[क] होता है। विनिमय दर स्थिर किये जाने पर भी [य]दि सदस्य देश चाहें तो वह दर घटाने या बढ़ाने के लिए कार[ण] सहित प्रस्ताव कर सकते हैं और उस पर अच्छी त[रह] विचार किया जाता है।

मुद्राकोष के सदस्य देश स्वर्ण, अमेरिकन डालर औ[र] अपनी मुद्रा के रूप में अपना कोटा जमा करते हैं औ[र] आवश्यकतानुसार अपने कोटे में से ऋण लेते रहते हैं। [वे] अपनी मुद्रा को पुनः खरीदकर इसका भुगतान भी क[रते] रहते हैं। इस समय मुद्राकोष के ६७ देश सदस्य हैं औ[र] इसकी कुल संचित निधि ९ अरब डालर है, जिसमें से [...] अरब डालर स्वर्ण और परिवर्तनशील मुद्रा के रूप में है।

इसके व्यवस्थापक मण्डल की सालाना बैठक सित[म्बर] या अक्टूबर में होती है। काम की व्यवस्था और रोज[मर्रा की] देखभाल के लिए १७ डाइरेक्टरों का एक बोर्ड होता [है], जिसकी अध्यक्षता एक मैनेजिंग डाइरेक्टर करता है। [...] १९४८-४९ और १९५२-५३ में सदस्य देशों के साम[ने] भुगतान के सन्तुलन की कठिन समस्या आ खड़ी हुई [...]

(शेष पृष्ठ ५५१ पर)

जनसंख्या वृद्धि : हमारी प्रमुख समस्या

डा० एस० चन्द्रशेखर

बढ़ती हुई जनसंख्या हमारे लिये एक बहुत बड़ी समस्या हो गई है। इसका प्रभाव मनुष्य और उसके परिवार पर ही नहीं, पूरे विश्व की भौतिक और सामाजिक उन्नति पर पड़ता है। यह अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षा को भी खतरे में डालती है। पुराने समय में इसके कारण कई युद्ध लड़े गये और आगे भी ऐसी सम्भावनाएं हो सकती हैं।

आबादी की इस समस्या के बहुत रूप हो सकते हैं। जिनमें शारीरिक, सांस्कृतिक, वैवाहिक और सन्तति निरोध मुख्य हैं। मूल प्रश्न यह है कि मनुष्य की कम-से कम आवश्यकताओं की पूर्ति प्रकृति द्वारा उपलब्ध समस्त साधनों से किस हद तक हो रही है, अर्थात् खाद्यान्नों के उत्पादन और बढ़ती हुई जनसंख्या के बीच सन्तुलन कैसे किया जाय ?

कुछ तथ्य

पिछले कुछ वर्षों से हमारी जनसंख्या हर साल १.२ प्रतिशत के हिसाब से बढ़ती जा रही है। देखने में यद्यपि यह अनुपात पश्चिमी देशों की तुलना में अधिक नहीं लगता फिर भी इस हिसाब से प्रतिवर्ष हमारे देश में ५० लाख व्यक्ति बढ़ रहे हैं। अर्थात् दस वर्ष में ५ करोड़ की वृद्धि जो ब्रिटेन या पश्चिमी जर्मनी की कुल जनसंख्या है।

इस समय हमारी जनसंख्या ३९ करोड़ ८० लाख के करीब है। यह संख्या इसी प्रकार से बढ़ती रही तो १९६१ की जन-गणना तक, जिसके अब केवल ३ वर्ष बाकी हैं, यह ४० करोड़ से भी आगे बढ़ जायेगी।

जन्म की गति

निश्चय ही जनसंख्या का बढ़ना और घटना जन्म और मृत्यु के अनुपात पर निर्भर करता है। जनसंख्या की वृद्धि को केवल जन्म के अनुपात से नहीं आंकना चाहिये। यहां पर हमें प्रजनन के अनुपात पर ध्यान देना चाहिये। प्रजनन के आंकड़े १५ से ४५ साल की उम्र वाली प्रति हजार स्त्रियों से उत्पन्न बालिकाओं से लिये जाते हैं। यद्यपि उम्र के हिसाब से वर्गीकरण करने से अलग-अलग परिणाम हो सकते हैं किन्तु विशेष रूप से तैयार किये गये प्रजनन के आंकड़े जनसंख्या की वृद्धि का यही रूप प्रस्तुत करते हैं। यद्यपि हमारे यहां विश्वसनीय आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं फिर भी जो आंकड़े हैं उनसे पता चलता है कि जन्म का अनुपात प्रति हजार ४० है। यह आवश्यकता से अधिक तो है ही, पिछले दस साल से इसमें कुछ भी कमी नहीं दिखाई पड़ी। जन्म के अनुपात में कमी लड़कियों की पैदाइश, विवाह करने वाली लड़कियों की संख्या और उस समय उनकी अवस्था, उनसे पैदा हुए बच्चों की संख्या आदि पर निर्भर करती है। जो भी हो अभी तक जन्म के अनुपात में कोई कमी नहीं आई है।

घटती हुई मृत्यु संख्या

मृत्यु संख्या के अनुपात को जानने के लिये हमें बच्चों की मृत्यु संख्या, प्रसव के समय माताओं की मृत्यु संख्या, आदि का उम्र के वर्गीकरण के हिसाब से ज्ञान होना चाहिये। प्रति हजार बच्चों की मृत्यु का अनुपात केवल उन बच्चों से नहीं लगाना चाहिये जो पैदा होने के कुछ दिन बाद मरते हैं। किन्तु इसमें उनको भी शामिल करना चाहिये जो गर्भ-पात के कारण अथवा जन्म से एक सप्ताह या एक मास पूर्व ही नष्ट हो जाते हैं। यहां भी यद्यपि हमारे पास सही आंकड़े नहीं हैं फिर भी हमारे यहां की मृत्यु संख्या प्रति हजार ३० है जो संसार में सबसे अधिक है। किन्तु अब यह घट रही है। यदि सरकारी आंकड़ों को ठीक माना जाय तो इस समय हमारे यहां प्रति हजार ११५ बच्चों की पैदाइश के बाद मृत्यु होती है। जबकि दूसरे प्रगतिशील देशों में यह संख्या केवल २० और ३० तक है।

दूसरी पंचवर्षीय आयोजना में रोगों को नष्ट करने के लिये अस्पतालों की वृद्धि के जो कार्य किये गये हैं वे प्रशंसनीय हैं। इससे मृत्यु संख्या घट रही है। किन्तु यदि जन्म संख्या पर रोक न लगाई जाय तो मृत्यु संख्या को

घटाना एक प्रकार से आबादी को और बढ़ाना हुआ। अर्थात् यदि हम ५० प्रतिशत बच्चों को प्रतिवर्ष मरने से बचा सकें तो इसका मतलब हुआ प्रतिवर्ष ५० लाख की जगह एक करोड़ की जनवृद्धि। तब क्या स्थिति होगी ?

रहन-सहन

हमारे रहन-सहन का स्तर-निम्नकोटि का है, यह एक निर्विवाद सत्य है। जनसंख्या को इस तरह से बढ़ने देने का मतलब है भूखों और भूख से मरने वालों की संख्या बढ़ाना, मूर्खता और निरक्षरता का प्रसार करना, अर्धनग्न होकर गली-कूचों की शरण लेना और भयावह संक्रामक रोगों के शिकार होना। इसका सीधा अर्थ यह होता है कि बहुत से लोग थोड़े से साधनों (खाद्यान्नों) पर जीने की कोशिश करें।

अब प्रश्न यह है कि रहन-सहन का स्तर कैसे बढ़ाया जाय। रहन-सहन को बढ़ाने का अर्थ है हर व्यक्ति के पास उसकी जरूरत से भी ज्यादा चीजें। इसी तरह मृत्यु संख्या को घटाने का मतलब है मरने वाले कुछ और लोगों को जीवित रहने देना। जबकि वर्तमान जनसंख्या को ही हम नहीं खिला पा रहे हैं और जनसंख्या की इस सम्भावित वृद्धि के लिये भी कुछ नहीं कर रहे हैं तो हमें रहन-सहन के स्तर को ऊंचा उठाने की बात तक नहीं सोचनी चाहिये। बल्कि इसे घटाना चाहिये और मृत्यु संख्या को बढ़ाना चाहिये। लेकिन यह कौन करेगा ? तब क्या रास्ता है ?

दुहरा उपाय

आबादी की इस समस्या को हल करने के दो तरीके हैं। एक तो यह कि हम अपना कृषि और उद्योग सम्बन्धी उत्पादन बढ़ाते जायं। देश की प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि होती रहे और दूसरे बढ़ती हुई जनसंख्या को कड़ाई से रोका जाय। क्योंकि यदि हम उत्पादन बढ़ाते हैं और उसके साथ जनसंख्या को भी बढ़ने देते हैं तो हमारी स्थिति ज्यों की त्यों रहेगी। रहन-सहन के स्तर को ऊंचा करने के केवल ये ही दो उपाय हैं जिन्हें हमें अपनाना चाहिये।

बढ़ता हुआ उत्पादन

उत्पादन बढ़ाने के लिये आज भरपूर प्रयास किया जा रहा है। हमारी दोनों योजनाओं का यही उद्देश्य रहा है। खेती के लिये नई भूमि जोती जा रही है, अच्छी फसलें उगाई जा रही हैं और नये-नये उद्योग धन्धों की वृद्धि हो रही हैं जिससे हम आत्मनिर्भर हो सकें और दुर्लभ विदेशी मुद्रा को बचा सकें। इसी तरह लोगों को रोजगार भी दिया जा रहा है। खेती में जनसंख्या के अधिक अनुपात को देखते हुए किसानों को शहरों के कारखानों में लगाया जा रहा है। बड़े उद्योगों का यह तीव्र विकास हमारी आबादी के प्रश्न को हल करने में सहायक होगा। इसके साथ ही यह उद्योगीकरण जन्म के अनुपात को भी घटायेगा।

परिवार आयोजन

दूसरा उपाय है परिवार आयोजन। सरकार और निजी संस्थाओं को इस ओर जागरूक होना चाहिये। समय की स्थिति को देखते हुए नव विवाहितों को चाहिये कि वे २ या ३ से अधिक संतान पैदा न करें। ऐसा न करना देश के साथ अन्याय होगा। गांवों में परिवार आयोजन के मार्ग में काफी कठिनाइयां आ सकती हैं पर उनका भी उपाय खोजा जा सकता है।

स्त्री शिक्षा

स्त्रियों को अधिक से अधिक शिक्षा देना विशेषतः इस विषय का ज्ञान करा देना बहुत सहायक होगा। जिस दिन हमारे देश में स्त्रियां यह समझने लग जायंगी कि बच्चे उनकी इच्छा से पैदा होते हैं न कि भाग्य से, आयोजन से पैदा होते हैं न कि अपने आप, उस दिन हम आधी लड़ाई जीत लेंगे।

हमारे उद्देश्य

आबादी की समस्या को हल करने का तात्पर्य है भारत की सुख समृद्धि को बढ़ाना और यहां के नागरिकों के रहन-सहन के स्तर को उन्नत करना। हम चाहते हैं कि हमारे यहां कोई भी भूख से न मरे और कोई भी बच्चा अन्न के लिये न तरसे। विज्ञान की आधुनिकतम साधनों का सभी उपयोग करें और एक ऐसे समाज का जन्म हो जिसमें जातिगत, भाषागत और वर्गगत विभिन्नता देखने को भी न मिले। हम सबके लिये और सब हमारे लिये हों।

——

मॉनिट्रियल सम्मेलन :

राष्ट्रमण्डलीय देशों के स्वार्थ-संघर्ष : उनमें समन्वय करने का नया प्रयत्न

श्री रामगोपाल विद्यालंकार

राष्ट्रमंडल के देशों में कई मास से मॉनिट्रियल सम्मेलन की चर्चा तो बहुत चल रही थी परन्तु वहां जो कुछ हुआ वह उस चर्चा के अनुरूप आशा और उत्साह-वर्धक नहीं हुआ। बात यह है कि जब से राष्ट्र मंडल के एशियाई और अफ्रीकी सदस्य-देश स्वतंत्र हुए हैं तब से राष्ट्र-मंडलीय सम्मेलनों का रूप विचारों के परस्पर आदान प्रदान मात्र का रह गया है, उनमें वैसे कोई अन्तिम निश्चय नहीं किये जाते जैसे कि इन देशों के स्वतंत्र होने से पहिले उस जमाने में किये जाया करते थे जबकि ब्रिटेन ही राष्ट्र-मण्डल का प्रधान नेता बना हुआ था और अधिकतर निर्णय प्रधानतया ब्रिटेन के लाभ को लक्ष्य में रखकर ही किये जाया करते थे।

मॉनिट्रियल (कनाडा) में राष्ट्र मण्डल के वित्तमंत्रियों और उनके अन्य सहायकों के एक सम्मेलन में एकत्र होने का एक उद्देश्य तो यह था कि वे राष्ट्र मण्डलीय देशों में व्यापारिक आदान-प्रदान बढ़ाने के उपायों का निश्चय करें, परन्तु वे उसमें अधिक सफल नहीं हुए। सम्मेलन में इन ग्यारह देशों के ३० मंत्री सम्मिलित हुए—ग्रेट ब्रिटेन, कनाडा, न्यूज़ीलैंड, आस्ट्रेलिया, मलय, श्रीलंका, भारत, पाकिस्तान, दक्षिण अफ्रीका, घाना और रोडेशिया-न्यासा लैंड। प्रायः इन सबने सम्मेलन में अपने-अपने देश की व्यापार-वृद्धि और व्यावसायिक उन्नति के मार्ग में पड़ने वाली कठिनाइयों की चर्चा की। इनमें से बहुत सी कठिनाइयां परस्पर विरोधी थीं; और इस कारण उनकी एक ही स्थान पर चर्चा का होना परस्पर कटुता उत्पन्न कर सकता था। परन्तु मॉनिट्रियल सम्मेलन में उपस्थित सब

मंत्रियों ने एक दूसरे के विचारों को सहयोग, सहायता और सहानुभूति की भावना से सुना, इस कारण किसी महत्त्वपूर्ण अन्तिम निश्चय पर न पहुँचने पर भी सम्मेलन की सारी कार्यवाही मित्रतापूर्ण वातावरण में हुई। वस्तुतः राष्ट्रमंडल की सबसे बड़ी विशेषता भी यही है कि उसके सदस्य-देश अपने स्वार्थों के परस्पर विरोधी होने पर भी मिलकर चलने का यत्न करते हैं।

मॉन्ट्रियल में विभिन्न सदस्य देशों ने जो विचार प्रगट किये उनका सारांश यह है :—

कनाडा ने बतलाया कि ब्रिटेन ने फ्रांस, जर्मनी, बेल्जियम और इटली आदि पश्चिमी यूरोप के देशों को मिलाकर एक बाजार बना देने की जो नीति अपनाई हुई है उसके कारण यूरोप के बाजार में उसका माल बिकने में अनेक कठिनाइयां उत्पन्न होती हैं। कनाडा नहीं चाहता कि उसकी अर्थ व्यवस्था अमेरिका की पिछलग्गू बन जाय इस लिए उसने निश्चय किया है कि वह ब्रिटेन का माल अब से अधिक मात्रा में खरीदेगा और साथ ही वह ब्रिटेन में और अन्य राष्ट्रमंडलीय देशों में अपनी पूंजी भी अब से अधिक मात्रा में लगाने का यत्न करेगा। इस उद्देश्य की सफलता के लिए उसने सुझाव दिया कि ब्रिटेन पश्चिमी यूरोप में कनाडा के माल को खपाने में सहायता दे और ऐसी सहूलियतें कर दे कि स्टर्लिंग पौंड (ब्रिटेन की मुद्रा) अन्य मुद्राओं में सुगमता पूर्वक बदली जा सके। कनाडा ने यह सुझाव भी दिया कि राष्ट्र मंडल के अविकसित देशों की सहायता के लिए एक राष्ट्र मंडलीय बैंक खोला जाय।

ब्रिटेन ने कनाडा की इच्छाओं और कठिनाइयों के साथ सहानुभूति प्रकट करते हुए कहा कि ब्रिटेन भी चाहता है कि संसार में व्यापारिक आदान-प्रदान को निर्बाध बनाने के लिए स्टर्लिंग पौंड की अन्य मुद्राओं में परिवर्तनीयता को सुगम कर दिया जाय, परन्तु ऐसा करने में अनेक व्यावहारिक कठिनाइयां हैं और ऐसा कब और किस प्रकार किया जा सकता है, इसका निर्णय ब्रिटेन पर ही छोड़ देना चाहिए। राष्ट्र मण्डलीय बैंक खोलने के विचार को ब्रिटेन ने पसन्द किया परन्तु इसे यह कह कर अभी अव्यवहारिक बतलाया कि इसमें पूंजी कनाडा और ब्रिटेन के सिवाय राष्ट्र मंडल का कोई अन्य सदस्य नहीं लगा सकता। ब्रिटेन ने यह भी घोषणा की कि भविष्य में कुछ विशेष प्रकार के यन्त्रों को छोड कर ब्रिटेन में डालर क्षेत्र के यन्त्रों के आयात पर कोई पाबन्दी नहीं रहेगी।

भारत और घाना आदि अविकसित देशों के प्रतिनिधियों ने राष्ट्रमंडलीय बैंक बनाने के विचार का समर्थन किया और कहा कि राष्ट्रमंडल के विकसित और समर्थ सदस्यों को अविकसित देशों की अधिकतम सहायता करनी चाहिए। जब तक कोई भी अविकसित देश अविकसित अवस्था में रहेगा, तब तक संसारमें व्यापारिक आदान-प्रदान में बाधाएं बनी ही रहेंगी।

न्यूजीलैंड ने शिकायत की कि कनाडा की सरकार अपने देश के दूध और मक्खन आदि के व्यावसाइयों को इतनी अधिक सहायता देती है कि उसके कारण अन्य देशों के इस लाइन के माल का अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में बिकना कठिन हो गया है; इसका उपाय किया जाना चाहिए।

आस्ट्रेलिया की ओर से कहा गया कि गेहूँ इत्यादि वस्तुओं के बाजार को स्थिर रखने के उपाय किए जाने चाहिएं, क्योंकि इसके बिना आस्ट्रेलिया को अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में अपना गेहूँ बेचने में कठिनाई होगी।

सम्मेलन में उपस्थित सब प्रतिनिधियों ने एक दूसरे के विचारों को सहानुभूति पूर्वक सुना और सम्मेलन में जो विचार किए गए थे उन्ही को अन्त में प्रस्तावों का रूप दे दिया गया।

एक प्रस्ताव द्वारा अमेरिका के प्रेजीडेंट आइजन हावर के इस विचार का समर्थन किया गया कि विश्व बैंक के साधन बढ़ाने का यत्न किया जाय। जिससे कि वह गरजमन्द देशों को अब से अधिक सहायता दे सके।

एक अन्य प्रस्ताव में ब्रिटेन की ओर से इस बात का आश्वासन दिया गया कि वह पश्चिमी यूरोप के बाजारों में कनाडा का माल अधिक खप सकने के अवसर खोलने का ध्यान रखे।

एक और प्रस्ताव द्वारा निश्चय किया गया कि रांगा, जस्त और गेहूँ आदि वस्तुओं के बाजारों का अध्ययन करके उनके मूल्यों में अधिक उतार चढ़ाव न होने दें

उत्पादन तथा उत्पादक साधनों का नियुक्तीकरण

श्री विश्वम्भरनाथ पाण्डेय, एम० ए०

'सम्पदा' के जुलाई अंक में इस लेख का पूर्वार्ध गया था, उत्तरार्ध इस अंक में पढ़ें।

अब हम प्रथम प्रश्न को लेते हैं। समाजवाद में सीमित उत्पादन के साधनों का वितरण विभिन्न उद्योगों में किस प्रकार होगा? यह हम जान चुके हैं कि अपने पूर्ण पारिभाषिक अर्थ में यह वितरण 'आदर्श वितरण' नहीं हो सकेगा क्योंकि पूंजीवाद को तरह समाजवाद में भी 'सीमांत व्यक्तिगत लागत' और 'सीमान्त समाजगत लागत' के अन्तर का न तो ठीक-ठीक पता लगाया जा सकता है और न उन्हें बराबर ही किया जा सकता है। अस्तु समाजवाद की योग्यता इस बात में होगी कि इसमें पूंजीवाद की पूर्ण प्रतियोगिता की अवस्था जैसा उत्पादन और उत्पादन के साधनों का औद्योगिक वितरण हो सकेगा अथवा नहीं? पूंजीवाद में पूर्ण प्रतियोगिता की अवस्था में वस्तुओं का मूल्य उनकी सीमान्त लागत के बराबर होता है। अस्तु उत्पादन (उत्पादक साधनों का नियोजन) पूंजीवाद में उस बिन्दु तक किया जाता से जहां सीमान्त लागत और औसत लागत बराबर होते हैं। इस प्रकार पूंजीवाद का पूर्ण प्रतियोगिता का स्थिति में प्रत्येक उद्योगों का 'कुल-विक्रय मूल्य' उनके 'कुल-लागत-व्यय' के बराबर होता है। समाजवाद की योजना समिति यह समीकरण किस प्रकार उपलब्ध करेगी?

समाजवादी योजना समिति की कार्य-पद्धति 'भूल-और-सुधार' (Trial and error) की कार्य पद्धति होगी। बहुत परिश्रम करने के बाद वह उद्योगों का कुल-विक्रय-मूल्य कुल-लागत-व्यय के बराबर कर सकेगी। प्रारम्भिक रूप में, मान लीजिये, योजना समिति ने उत्पादन के साधनों का वितरण एक अन्दाज के आधार पर विभिन्न उद्योगों में कर दिया है और उत्पादित वस्तुओं की मात्रा भी निश्चित कर दी है तथा उपरोक्त मूल्य-सूत्र (कुल वस्तुयें × उनके मूल्य = कुल वितरित मुद्रा (कूपन) के आधार पर उनका मूल्य भी निश्चित कर दिया है। अतः योजना समिति के पास आंकड़े उपलब्ध होंगे जिन पर गणित का उपयोग कर वह कुल-विक्रय-मूल्य को कुल उत्पादन लागत के बराबर कर सकेगी। अर्थात् विभिन्न उद्योगों में नियोजित उत्पादक साधनों का 'सर्वापेक्षित वितरण' जो पूंजीवाद की पूर्ण प्रतियोगिता की स्थिति में होता है, निश्चित कर सकेगी। क्योंकि वितरण यदि सर्वापेक्षित नहीं हुआ होगा तब या तो कुल-विक्रय-मूल्य कुल उत्पादन लागत से अधिक होगा या कम। मान लिया जाय यह कम है। कुल उत्पादन लागत से कुल विक्रय मूल्य का कम होना इस बात का संकेत होगा कि उत्पादन के साधनों पर अधिक व्यय किया जाता है जो वस्तुओं के विक्रय-मूल्य से पूरा नहीं होता। ऐसी स्थिति में योजना समिति उस उद्योग में नियुक्त साधनों की मात्रा घटा देगी और तब तक घटाती जायेगी जब तक उत्पादन व्यय और कुल विक्रय मूल्य बराबर नहीं हो जाते। उसी प्रकार यदि कुल विक्रय मूल्य कुल उत्पादन लागत से अधिक है तो योजना समिति उनकी मात्रा बढ़ा देगी और तब तक बढ़ाती जायेगी जब तक समीकरण प्राप्त नहीं हो जाएगा। इस समीकरण के ब्यौरे के रखने का भार उद्योगों के प्रबन्धकों (Managers) के ऊपर छोड़ दिया जा सकता है जो साधारण गणित के आधार पर उत्पादन में हेर-फेर करते हुए आसानी से यह समीकरण बनाये रख सकते हैं।

किन्तु जैसा कि हमने ऊपर लिखा है यह समीकरण

का यत्न किया जाय।

भारत की दृष्टिसे इस सम्मेलन का विशेष महत्व यह है कि ब्रिटेन और कनाडा आदि राष्ट्रमंडलके सम्पन्न सदस्यों ने पहले की अपेक्षा अब यह अधिक भली प्रकार अनुभव कर लिया दीखता है कि उनका अपना लाभ भी भारत आदि अविकसित देशों की अधिकाधिक सहायता करनेमें ही है। आशा है कि आगामी २-३ वर्षों में भारत इस नई प्रवृत्ति से कुछ प्रत्यक्ष लाभ उठा सकेगा।

—

एक ही बारे में उपलब्ध नहीं हो सकता क्योंकि किसी एक उद्योग में जहां हमने उत्पादन के साधनों की नियुक्ति की मात्रा (कुल-विक्रय-मूल्य के कम होने के कारण) घटायी है उसकी उत्पादित वस्तुओं की पूर्ति भी घटेगी और मांग तथा पूर्ति में सामंजस्य स्थापित करने के लिये योजना समिति को उसका मूल्य बढ़ाना पड़ेगा। (अस्तु—कुल वस्तुयें × उनके मूल्य = कुल वितरित कूपन के मूल्य के समीकरण की रक्षा के लिये अन्य वस्तुओं का मूल्य भी उसी अनुपात में घटाना पड़ेगा। इस प्रकार किसी एक उद्योग में हेर-फेर करने के कारण अन्य उद्योगों में भी हेर-फेर अनिवार्य हो जायेगा। यह एक उलझन पैदा करने वाली स्थिति है। किन्तु व्यवहार में चाहे जो भी कठिनाइयां उपस्थित हों सिद्धान्ततः यह कहने में कोई बाधा नहीं कि अनवरत प्रयत्न से समाजवाद की योजना समिति भी उत्पादक साधनों का पूंजीवादी 'सर्वापेक्षित वितरण' कर सकती है अर्थात् वह वितरण जो पूंजीवाद की पूर्ण प्रतियोगिता की स्थिति में प्राप्त होता है। इस बात के लिये प्रोफेसर पीगू के अनुसार केवल दो बातों की उपेक्षा होगीः—

(१) किसी भी उद्योग में उत्पादन का न तो आधिक्य हो और न अभाव।

(२) प्रत्येक उद्योग में कुल उत्पादन लागत कुल विक्रय मूल्य के बराबर हो।

एक आनुषंगिक प्रश्न

समाजवाद में पूंजीवाद की तरह उत्पादक साधनों के 'सर्वापेक्षित वितरण' की समस्या के सम्बन्ध में एक आनुषंगिक प्रश्न उठ खड़ा होता है। समाजवाद में कुल विक्रय-मूल्य यदि कुल उत्पादन व्यय (विभिन्न उत्पादक साधनों को दिया जाने वाला पुरस्कार) के बराबर कर भी दिया जाय तो इस बत की क्या गारंटी है कि उत्पादन न्यूनतम लागत पर हो रहा है? पूंजीवाद की पूर्ण प्रतियोगिता की स्थिति में उत्पादन इस ढंग से होता है कि उत्पादन व्यय न्यूनतम हो। इसके लिये सभी उत्पादन के साधनों को उनकी सीमान्त उत्पादकता के बराबर पुरस्कार दिया जाता है। जब तक उनकी उत्पादकता उनके पुरस्कार से अधिक होती है उत्पादक साधनों की नियुक्ति में वृद्धि की जाती है और जहां उत्पादिकता पुरस्कार से कम पड़ने लगती है उनकी आगे की नियुक्ति रोक दी जाती है। इस प्रकार पूंजीवाद की पूर्ण प्रतियोगिता में उत्पादन व्यय न्यूनतम होता है। किन्तु समाजवाद में क्या होगा जबकि सभी मजदूरों को उनकी कार्यक्षमता का ख्याल न रखकर आवश्यकतानुसार समान मजदूरी दी जायेगी और उत्पादन के साधनों पर राज्य का स्वामित्व होने से पूंजी और भूमि जैसे उत्पादक साधनों के झगड़े का मूल्य (पूर्ति-मूल्य) जाना नहीं जा सकेगा? ऐसी स्थिति में किस प्रकार उनका पुरस्कार उनकी सीमान्त उत्पादकता के बराबर किया जायेगा अथवा वस्तुओं का उत्पादन लागत निर्धारित होगा?

यहां भी वही भूल और सुधार का नियम लागू होगा। योजना समिति अन्दाज से सभी साधनों का उचित पुरस्कार (जैसे मजदूरी और लगान) निश्चित कर देगी और सभी उद्योगों के अधिकारियों से उत्पादन-लागत की गणना के लिये इन्हें प्रामाणिक मानने का आदेश देगी। किन्तु यह निश्चित मजदूरी और लगान क्या उचित मजदूरी और लगान होंगे? उचित लगान और मजदूरी वह कही जायेगी जिससे वस्तुओं का वह मूल्य निर्मित हो जिस पर किसी भी उद्योन में वस्तुओं का न आधिक्य हो, न अभाव। यदि वस्तुओं का आधिक्य हो जाता है तो यह इस बात का संकेत होगा कि उत्पादक साधनों को अधिक मजदूरी और लगान देने के कारण मूल्य अधिक हैं और मांग को बढ़ाने के लिये इसमें कमी की अपेक्षा है। उसी प्रकार यदि वस्तुओं का अभाव (उनकी कमी) है तो वह इस बात का संकेत होगा कि साधनों के पुरस्कार की न्यूनता के कारण मूल्य कम है और उनकी मांग पूर्ति से अधिक हो गई है। अस्तु उत्पादन के साधनों को अधिक पुरस्कार देने की गुंजाइश है। इस प्रकार समाजवाद में मांग और पूर्ति का अवस्थाओं पर ध्यान रखकर योजना समिति उचित मजदूरी तथा लगान भी निश्चित कर सकती है।

किन्तु इस कार्य में दो और कठिनाइयां योजना समिति के सामने आयेंगी। पहली कठिनाई—दक्ष व कुशल—श्रमिकों के सम्बन्ध में होगी। उत्पादन के कुछ साधन,

जैसे भूमि तो प्रकृति-प्रदत्त हैं और उसकी पूर्ति घटायी-बढ़ायी नहीं जा सकती। किन्तु दक्ष श्रमिकों जैसे डॉक्टर, इन्जिनियर, टेक्नीशियन आदि की पूर्ति मानव-निर्मित होती है। उनको विशेष शिक्षण या प्रशिक्षण के द्वारा तैयार किया जाता है। ऐसे साधनों की पूर्ति किस मात्रा में हो कि किसी निश्चित 'उचित' मजदूरी पर उनकी पूर्ति न तो अधिक हो न कम? कहना न होगा कि इस समस्या के हल के लिये भी योजना समिति के सामने भूल और सुधार की पद्धति के अतिरिक्त और कोई दैवी दृष्टि नहीं होगी जिसके आधार पर उनकी संख्या हर स्थिति और काल में ठीक-ठीक निश्चित कर डाली जाय।

योजना समिति की दूसरी कठिनाई डाक्टरी तथा इन्जिनियरिंग आदि शिक्षाओं के लिये योग्य पात्रों के सम्बन्ध में होगी। डाक्टरों और इन्जिनियरों की पूर्ति किसी प्रकार निश्चित कर लेने के बाद योग्य छात्रों की प्रतिभा और प्रकृति का पता कैसे लगाया जायेगा? पूंजीवाद में तो लोग अपनी व्यक्तिगत स्वतंत्रता के आधार पर डाक्टर और इन्जिनियर होते हैं। किन्तु समाजवाद में? किस छात्र को डाक्टर और किसे इन्जिनियर बनाया जाय यह समस्या तो राज्य के सामने होगी? यह समस्या क्या बहुत पेचीदी है? नहीं। समाजवाद में इस समस्या का समाधान एक 'विशेषज्ञ-मंडल' (Committee of experts) के द्वारा होगा। यह मंडल मनोवैज्ञानिक परीक्षा के आधार-छात्रों की रुचि का पता लगायेगा और प्रतियोगी परीक्षाओं के द्वारा अन्तिम रूप से उन्हें विभिन्न विशिष्ट शिक्षाओं जैसे डॉक्टरी, इन्जिनियरिंग आदि के लिये चुनेगा। इस सम्बन्ध में पूंजीवाद से समाजवाद में कमी केवल इस बात पर होगी कि पूंजीवाद में जहां यह कार्य स्वतः हो जाता है वहां समाजवाद में इसके लिये प्रयत्न और व्यय करना पड़ेगा जिसका बोझ जनता उठायेगी।

ये सब कठिनाइयां योजना समिति के समक्ष होंगी। किन्तु यह स्पष्ट कर देना उचित है कि समाजवादी योजना समिति के समक्ष ये सभी पेचीदी समस्याएं तभी उत्पन्न होंगी जब कि वह उत्पादन के साधनों का वितरण पूंजीवाद की पूर्ण प्रतियोगिता की स्थिति में होने वाले 'सर्वापेक्षित वितरण' की तरह करना चाहे। अर्थात् वस्तु का मूल्य उसके सीमान्त-उत्पादन-व्यय के बराबर रखे, विभिन्न उत्पादक साधनों को वह उचित पुरस्कार दे जिस पर उनकी मांग और पूर्ति बराबर हो जायं और ऐसे मूल्य का निर्माण हो जिस पर किसी भी उद्योग में उत्पादित वस्तुओं का न अभाव हो न अधिकता। किन्तु इस प्रकार की उत्पादन-पद्धति समाजवाद में आवश्यक नहीं भी होगी क्योंकि समाजवादी समाज में उपभोग और व्यक्तिगत आय पर समाज हित की दृष्टि से यथेष्ठ नियंत्रण होगा। अर्थतंत्र का प्रभुत्व उपभोक्ता के हाथ में उतना नहीं होगा जितना पूंजीवाद में। मांग और पूर्ति के कठोर नियम मूल्य को उतना प्रभावित नहीं करेंगे जितना योजना समिति की बुद्धि। इसके अतिरिक्त सबसे महत्वपूर्ण बात यह कि विभिन्न उद्योगों और कार्यों में नियोजन उत्पादन के साधनों की स्वेच्छा पर नहीं आधारित होगा अपितु राज्य के आदेश पर। अतः उनके उचित पुरस्कार की समस्या उतनी पेचीदी नहीं होगी जितनी ऊपर परिकल्पित है। थोड़े में समाजवाद की क्रिया-पद्धति पूंजीवाद की क्रिया पद्धति में बिल्कुल भिन्न होगी और समाजवादी उत्पादन को वे ही शक्तियां प्रभावित नहीं करेंगी जो पूंजीवादी उत्पादन को करती हैं? अतः पूंजीवाद तथा समाजवाद दोनों के उत्पादन-सूत्र एक ही हों यह आवश्यक नहीं है; इसीलिये प्रो० पीगू ने स्वीकार किया है कि 'पूंजीवादी उत्पादन के आदर्शों की प्राप्ति की कल्पना करके समाजवादी योजना समिति की कठिनाइयों की व्याख्या करना बहुत कुछ उतना ही व्यर्थ है जितना उस व्यक्ति के समक्ष चंद्रलोक की यात्रा की आपत्तियों का वर्णन जो चन्द्रलोक तक जाना ही नहीं चाहता।'

इसके अतिरिक्त कौन कह सकता है कि पूंजीवाद में उत्पादन के साधनों का वितरण सर्वापेक्षित होता है? पूंजीवाद की पूर्ण प्रतियोगिता की स्थिति कोरी कल्पना है। व्यवहार में पूंजीवाद में एकाधिकार अथवा अपूर्ण प्रतियोगिता ही पायी जाती है। वस्तुओं का उत्पादन लागत जान-बूझकर ऊंचा रखा जाता है क्योंकि उत्पादन के साधनों को आदर्श-बिन्दु (optimum point) तक नहीं नियुक्त किया जाता। भूल और सुधार के सूत्रों के द्वारा तो पूंजीवादी उद्योगों का भी संचालन होता है। यदि ऐसा नहीं होता तो क्या कारण है कि बहुत से औद्योगिक प्रतिष्ठान जन्म के

किसान अपना दायित्व समझें !

राष्ट्रपति, डा० राजेन्द्रप्रसाद

भारत कृषि प्रधान देश है और हमें यह शोभा नहीं देता कि अपने खाने के लिए भी हमें विदेशों से अन्न मंगाना पड़े। जिस देश के १०० में से ७० से अधिक लोग खेती के काम में लगे हों, जहां की जमीन अच्छी और उर्वरा हो और जहां का प्रधान व्यवसाय हजारों वर्षों से खेती ही रहा हो, उस देश के लोग अनाज के लिये यदि दूसरों का मुंह देखें तो यह लज्जा की बात है। यह कमी, मैं तो कहूंगा कि यह कलंक, किसान ही दूर कर सकता है और उसका कर्तव्य है कि वह इसे दूर करे।

अनाज की कमी के कारण जो स्थिति सामने आई है उसके निवारण के दो ही तरीके हैं। नयी जमीन को तोड़ा जाय, ऊसर और बंजर भूमि में खेती की जाय। दूसरा तरीका यह है कि हर बीघे या एकड़ में अधिक उत्पादन किया जाय।

और देशों के मुकाबले में हमारे यहां पैदावार बहुत कम है — आधी और चौथाई से भी कम। इस दिशा में यदि कोशिश की जाय तो उतनी ही जमीन में दुगुनी, तिगुनी, चौगुनी फसल उपजाई जा सकती है। हमारा प्रयत्न यही होना चाहिये। इसके लिए अच्छे बीज, खाद, सींचने के लिए पानी, कीड़ों से फसल को बचाने के उपाय आवश्यक हैं। सरकार की ओर से इस बात का प्रयत्न किया जा रहा है कि ये सब चीजें आवश्यकतानुसार समय पर किसानों [illegible] उपलब्ध कराई जायें। इसके लिए स्थान-स्थान पर [illegible] और अनुसंधान का काम किया जा रहा है, जिससे वि[illegible] लोग इन विषयों में उन्नति के तरीके निकाल सकें। [illegible] यह सब कुछ तभी लाभदायक हो सकता है, जब ह[illegible] किसान उत्साह के साथ इन खोजों को काम में लावें [illegible] नये तरीकों पर अमल करें।

इसी उद्देश्य को सामने रखकर सरकार ने निश्[illegible] किया है कि हाल ही में बोई जाने वाली रबी की फसल [illegible] ढंग से बोई जाए और उसकी देखरेख इस तरह की ज[illegible] कि अधिक अनाज पैदा हो। यह काम अधिकतर किसा[illegible] का है। उन्हीं के परिश्रम से, उन्हीं की मेहनत से [illegible] आन्दोलन में सफलता मिल सकती है। हां, इस काम [illegible] लिए उन्हें जो-जो सुविधायें चाहियें, उनका प्रबन्ध क[illegible] जरूरी है। केन्द्रीय सरकार ने ऐसा आन्दोलन या संग[illegible] प्रयत्न करने का फैसला किया है। इस काम में सभी रा[illegible] की सरकारें मदद करेंगी। सरकारी कर्मचारियों को हिदा[illegible] की गयी है कि लोगों की जरूरतों का पता लगायें और उन्हें पूरा करने का यत्न करें। इस सम्बन्ध में किसानों [illegible] अच्छे बीज, सुधरे हुए हल आदि खेती के औजार, [illegible] खाद और जहां तक हो सके सिंचाई के लिए पानी देने [illegible]

कुछ ही काल बाद या तो मर जाते हैं या जन्म-भर व्यावसायिक महासिन्धु में डूबते-उतराते रहते हैं। कम्पनियां पूंजीवाद में नहीं फेल होतीं क्या? व्यापारचक्र की अनिश्चितता तो पूंजीवाद का एक ऐसा घोर अभिशाप है कि जिसके मार्जन का मंत्र पूंजीवादी अर्थशास्त्र जानता ही नहीं। यह कौन कह सकता है कि पूंजीवाद में मांग और पूर्ति में असामंजस्य नहीं होता? और फिर क्या वही मांग वास्तविक मांग है जो अपनी पूर्ति के लिये पैसे चुका सके? गरीबों की वे आवश्यकताएं जो अपनी पूर्ति के लिये मूल्य नहीं चुका सकतीं, क्या मांग नहीं हैं? क्या किसी की भूख अन्न प्राप्त करने का अधिकार केवल इसलिये नहीं रखती कि वह गरीब की भूख है और उसके लिये वह पैसे न[illegible] दे सकता? अस्तु पूंजीवादी उत्पादन में मांग और पू[illegible] बराबर होती हैं यह मिथ्या और भ्रम है।

समाजवादी समाज में उत्पादन साधनों के वितर[illegible] और मूल्य निर्धारण के मार्ग में जो भी कठिनाइयां उपस्थि[illegible] हों, समाजवादी उत्पादन पूंजीवादी उत्पादन से कम के [illegible] इसलिये ही श्रेष्ठ होगा कि उसका आधार लोक-हित और सामाजिक उपयोगिता होगी, व्यक्तिगत लाभ नहीं। [illegible] कार्य में चाहे जो भी कठिनाइयां हों, समाजवादी उत्पाद[illegible] की श्रेष्ठता उनसे घट नहीं सकती।

—

[सम्पद[illegible]

अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष

(पृष्ठ ५४२ का शेष)

डालर का अभाव हो गया। अमेरिका ने इस कमी को दूर करने के लिए मार्शल योजना प्रस्तुत की। जो देश मार्शल योजना से लाभ नहीं उठा सके, उन्हें कोष ने सहायता दी। इसके साथ ही विश्व व्यापार में तेजी और मंदी के समय तथा स्वेज संकट के बाद भी मुद्राकोष ने उल्लेखनीय काम किया है। १९४९ में मुद्राकोष की बैठकें रात-रात भर होती रहीं। उस समय अवमूल्यन की लहर आई हुई थी और सदस्य देश विनिमय दर बदलना चाहते थे।

विश्व बैंक

युद्ध-जर्जर और पिछड़े हुए देशों के विकास में विश्व बैंक ने महत्वपूर्ण योग दिया है। बैंक में सदस्य देशों को अपने कोटे का २ प्रतिशत सोने या अमेरिकन डालर के रूप में और १८ प्रतिशत अपनी मुद्रा के रूप में जमा करना पड़ता है। बाकी ८० प्रतिशत बैंक तभी लेता है जब वह इसे आवश्यक समझता है। बैंक सदस्य देशों से उधार भी लेता है। बैंक ने १ अरब ७० करोड़ जिसका अधिकांश अमेरिकन डालरों में है, उधार लिया है। बैंक के बौंडों का बाजार विश्वव्यापी है, पर अमेरिका ही इन्हें सर्वाधिक खरीदता है। बैंक कनाडा के डालर, नीदरलैंड के गिल्डर, पौंड स्टर्लिंग, स्विटजरलैंड के फ्रैंक और ड्यूश मार्क भी उधार लेता है। बैंक विभिन्न मुद्राओं में उधार भी देता है। इस समय बैंक २४ देशों की मुद्राओं में लेनदेन कर रहा है।

शुरू में बैंक ने केवल यूरोप के देशों को पुनर्निर्माण के लिए ऋण दिया, पर इसके बाद अधिकतर विकास के लिए लिए ऋण दिये गये। बैंक ने स्थापना के पहले वर्ष में विकास के लिए ३ करोड़ डालर के करीब ऋण दिया। इसके बाद ७ वर्षों के भीतर बैंक ने विकास योजनाओं के लिए १० करोड़ से लेकर ३० करोड़ डालर तक का ऋण दिया। १९५४-५५, १९५५-५६ और १९५६-५७ में बैंक ने लगभग ४० करोड़ डालर प्रतिवर्ष के हिसाब से ऋण दिया। पिछले वित्तीय वर्ष में बैंक ने लगभग ७१ करोड़ डालर का ऋण दिया था।

जून १९५८ तक बैंक ने ३ अरब ७० करोड़ डालर का ऋण दिया था। यह अर्ध-विकसित तथा विकसित देशों को बराबर-बराबर दिया गया था। १९५७-५८ में कुल ४१ करोड़ डालर ऋण दिया गया था, जिसमें से अर्ध-विकसित देशों का भाग ४६ करोड़ ४० लाख डालर था। अभी तक १४ विकसित और ३३ अर्ध-विकसित देशों ने विश्व बैंक से ऋण लिया है।

विश्व बैंक ने भारत को सर्वाधिक ऋण दिया है। यही नहीं भारत की टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी को ७ करोड़ ५० लाख डालर का ऋण बैंक द्वारा किसी एक संस्था को दिया गया सबसे बड़ा ऋण है। विश्व बैंक ने इस कम्पनी को ३ करोड़ २५ लाख डालर का एक और ऋण भी दिया है। इसमें अमेरिका के निजी बैंकों ने १ करोड़ ५० लाख डालर का सहयोग दिया है। इतनी अधिक रकम अमेरिकन बैंकों ने और किसी ऋण में नहीं दी।

भारत-पाक नहर विवाद और स्वेज नहर के हिस्सेदारों को मुआवजा दिलाने के मामले में इसने जो काम किया है, वह प्रशंसनीय है।

अन्तर्राष्ट्रीय वित्त निगम

निजी क्षेत्र की योजनाओं को सहायता देने के लिए अंतर्राष्ट्रीय वित्त निगम की स्थापना की गयी। इसके ५४ सदस्य हैं, जो विश्व बैंक के भी सदस्य हैं। इसकी अधिकृत पूंजी १० करोड़ डालर है। यह तभी ऋण देता है, जबकि सम्बन्धित योजना को चलाने के लिए उपयुक्त शर्तों पर और कहीं से भी ऋण नहीं मिल पाता। निगम जो पूंजी लगाता है, उसे अपनी निधि बढ़ाने के लिए दूसरों के हाथ उपयुक्त शर्तों पर बेच भी देता है। यह जिस उद्योग में पूंजी लगाता है, उसके लाभ का भी साझीदार होता है तथा उसके खर्च का भी हिस्सा देता है।

सरकार प्रबन्ध करेगी।

किसानों को यह नहीं समझना चाहिए कि वे खेती के काम में अपने परिवारों का ही पेट भरने के लिए लगे हैं। सारे राष्ट्र के लोगों को भरपेट भोजन मिले और हमें अनाज के लिए विदेशों का मुंह न ताकना पड़े, इस बात की जिम्मेदारी हमारे किसानों पर है। उन्हें यह समझ लेना चाहिए कि खेती का काम उतना ही राष्ट्रीय महत्व का है जितना कोई भी और काम हो सकता है। उन्हें इस बात का गर्व होना चाहिए कि उन्हें इतनी बड़ी जिम्मेदारी का काम सौंपा गया है, और इस बात से उन्हें उत्साह और प्रेरणा मिलनी चाहिए।

भारत में आर्थिक शासन

प्रो० एम. रथनास्वामी

हमारे देश भारतवर्ष के लोगों के जीवन में सरकारी शासन एक मुख्य भाग रखता है। हाल के कई महीनों में, संसद के अन्दर और बाहर यह विवाद बढ़ता जा रहा है कि नागरिक व्यय में बहुत ही ज्यादा वृद्धि हो रही है। हमारे देश के लोगों की गरीबी इस कारण को और भी मजबूत करती है कि प्रशासकीय लागतमें और भी किफायतदारी करनी चाहिये। आलोचकों को बदनाम नहीं किया जा सकता यदि वे इस निर्णय पर पहुँचें कि प्रशासकीय लागत बेकार में बहुत ज्यादा है और वे अपने इस कथन की पुष्टि में सचिवालय की इमारतों की ओर संकेत करें।

देश का प्रत्येक नीतिज्ञ इस बात का विश्वास करता है कि किसी भी सरकार के लिये खर्च आर्थिक शासन का एक मुख्य भाग है। रीयेल्यू ने ठीक ही कहा है कि 'अर्थ ही देश की प्राण शक्ति है'। ऐडमन्ड वर्क ने कहा है कि आर्थिक शासन के लिये आर्थिक संविधान की आवश्यकता है। दुर्भाग्यवश हम यह दावा नहीं कर सकते कि हमारे देश का संविधान जो कि ३०० पृष्ठ में है, वह एक आर्थिक संविधान है। प्रान्तों को प्रान्तीय नीति बनाने की वैदेशिक सिद्धान्त (प्रिन्सीपल) की जो धारा है उससे उनको काफी प्रोत्साहन मिलता है जिससे वे फजूल खर्ची कर सकें। सौभाग्य से हमारे देश के संविधान का रूप प्रतितोलित (काउंन्टर बैलेंसिंग) है। शिक्षा, स्वास्थ्य, खेती और उद्योग की देखभाल राज्यों को दी गई है और केन्द्रीय सरकार की देखभाल में, रक्षा, विदेशीय व्यापार और वाणिज्य तथा राष्ट्रीय परिवहन दी गई हैं।

यद्यपि राष्ट्रों और प्रान्तों के बीच इन विषयों का बंटवारा हो गया है फिर भी हम पाते हैं कि केन्द्र में, शिक्षा-मंत्रालय, स्वास्थ्य मंत्रालय और एक कृषि-मंत्रालय है। शिक्षा मंत्रालय में क्षेत्र कर्मचारी (फील्ड सरविसेज) को छोड़कर लागत लगभग ६८.६२ लाख रुपये की है। चूंकि शिक्षा राज्यों का ही विषय है इसलिये केन्द्र के इस मंत्रालय में ज्यादातर व्यक्ति अपना समय बेकार ही व्यतीत करते हैं। इसलिये, विविध कर्मचारियों को कायम रखने के लिये, समिति नियुक्त कर विदेश भेजकर उन लोगों के लिये काम पैदा किया जाता है। इस दिशा में एक आश्चर्यजनक बात है कि इस कार्य के अंतर्गत सांस्कृतिक और अन्तर-राष्ट्रीय कार्रवाईयों के विकास में लगभग २६ लाख रुपये व्यय होते हैं। संस्कृति और अन्तरराष्ट्रीय संबंधों की वृद्धि एक आराम की वस्तु है जिसे केवल धनी सरकार ही निबाह सकती है। केन्द्र के स्वास्थ्य मंत्रालय पर १३.५४ लाख रुपया खर्च होता है। कृषि मंत्रालय ७३.५६ लाख रुपया खर्च करता है। कानून मंत्रालय में लगभग १६.३६ लाख रुपया खर्च होता है। यह कानून विभाग ब्रिटिश शासनकाल में लार्ड मेकाले द्वारा स्थापित किया गया था चूंकि उनको शासकीय पद्धति को कायम रखने के लिये कई कानून लागू करने की आवश्यकता थी। विविध केन्द्रीय मंत्रालय अपने-अपने कानूनी सलाहकार से अपने कानून की जरूरत पूरी करते हैं फिर भी केन्द्र में एक कानून मंत्रालय है।

सामुदायिक विकास योजना प्रान्तीय सरकारों के अन्दर है। अकस्मात सरकार ने यह सोचा कि सामुदायिक विकास एक इतनी आवश्यक चीज है कि उससे इसके लिये देश को २१ लाख रुपया खर्च करना पड़ता है जबकि वास्तविक कार्य प्रान्त में ही होती है।

जब हम केन्द्रीय मंत्रालय की ओर देखते हैं जिसमें केन्द्र को संविधान के द्वारा अधिकार दिया गया है तो हम पाते हैं कि शासकीय खर्च इसमें भी बहुत ज्यादा है। गृहमंत्रालय में २.७३ करोड़ रुपया और विदेशी मंत्रालय में ८ करोड़ रुपया खर्च होता है। केवल स्टेशनरी और छपाई में ही देश का ७.१६ करोड़ रुपया खर्च होता है। इसके बाद योजना समिति (प्लैनिंग कमीशन) है जिसमें ७० लाख रुपया प्रतिवर्ष खर्च होता है। प्राक्कलन समिति (एस्टीमेट्स कमिटी) के विवरण को देखकर एक रोज मुझे दुःख हुआ कि जिन व्यक्तियों के संबंध में मैं यह सोचता था कि वे केवल मानसेवी कार्य करते और भत्ता ही लेते हैं वे रु० २,५०० प्रतिमास लेते हैं और उनके तीन सलाहकार

प्रतिमास रु० ३,५०० लेते हैं।

अपने हाल के ही बजट में भारत सरकार ने अपने पूर्ण राजस्व का १ चौथाई भाग शासन के कर्मचारियों में मजदूरी और वेतन देने के लिये सुरक्षित किया है यह आश्चर्य की बात है। पूर्ण राजस्व रु० ७२५ करोड़ में से कुल रु० १६० करोड़ खर्च करने के लिये सुरक्षित किया गया है। इसमें से कुछ वार्षिक मदद रु० ८७ लाख की जो इण्डियन इस्टीट्यूट ऑफ स्टेटिक्स को दी जाती है उस पर हमें गम्भीरता से विचार करना चाहिये।

प्रान्तीय सरकारें भी शासकीय खर्च में कम नहीं है। शासन की बढ़ती हुई लागत के संबंध में कई उदाहरण उपस्थित किये जा सकते हैं। मद्रास राज्य में मोटर मैकेनिकल डिपार्टमेंट ३ करोड़ रुपया इकट्ठा करने के लिये ७६ लाख रुपया खर्च करता है। सामुदायिक विकास योजना के लिये जहां ५० लाख रुपये की आवश्यकता है उसमें से केवल ३७ लाख रुपया शासन के लिये चाहिये। नेशनल एक्सटेन्शन सरविस ६६ लाख रुपये की सेवा के लिये ४४ लाख रुपया खर्च करती है। इससे शंका होती है कि वास्तव में समुदाय का विकास जो कि गांव का विकास है न होकर केवल कर्मचारी समुदाय का ही विकास होता है।

फाइनेन्स कमीशन के विवरण पर ध्यान देने से पता चलता है कि भारतवर्ष में कर इकट्ठा करने के लिये औसत हिसाब से १० प्रतिशत खर्च होता है। यह बहुत ही ज्यादा है। साधारण शासन पर कुल व्यय के औसत से बहुत ही अंतर है। मैसूर में ४ प्रतिशत से लेकर उड़ीसा में १६ प्रतिशत तक है। इन सबसे यह नतीजा निकाला जा सकता है कि खर्च बढ़ गया है और दिनो-दिन बढ़ता ही जाता है और इसको कम करना चाहिये।

शासन में किफायतकारी लाने और योग्यता के लिये मैं निम्नलिखित सुझाव पेश करता हूँ :—

१. केन्द्र में जितने भी बेकार विभाग हैं उन्हें खत्म कर देना चाहिये। स्वास्थ्य, शिक्षा, कृषि और उद्योग मंत्रालय को हम 'राष्ट्रीय कल्याण' के नाम के एक मंत्रालय में रख सकते हैं। इसका काम होगा कि वह प्रान्त में, शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि और उद्योग के लिये पैसा दे जिसका देश भर का खर्च एक करोड़ रुपया से ज्यादा नहीं होना चाहिये।

२. अर्थ मंत्रालय को यह सोचना चाहिये कि वह कर-दाता के पैसे की सुरक्षा के लिये है। इङ्गलैंड के ट्रेजरी के समान अथवा रूस के राजकीय शासन के समान उसे सरकारी विभाग के खर्च को देखते रहना चाहिये।

३. किरानी का काम मशीन द्वारा कम कर देना चाहिये।

४. ऑडीटर तथा कम्पट्रोलर का अधिकारपूर्ण रूप से कायम रहने देना चाहिये इससे उनके अन्दर कम खर्च करने की भावना पैदा होगी।

५. योजना के अन्दर प्राथमिकता होनी चाहिये। कुछ ही वर्षों में हम सभी चीजों को प्राप्त नहीं कर सकते। हमें शीघ्रता को धीमा करना चाहिये। अर्थात् दूसरे शब्दों में, पहले यातायात, गांवों में आवागमन के साधन गांवों में मकान और औद्योगिक शिक्षा का विकास तथा दूसरी आवश्यकताएं जो देश के उत्थान और अर्थ के लिये जरूरी है उन्हें पहले पूरा करना चाहिये। वर्तमान व्यवस्था जिसमें एक ही साथ सब दिशाओं में योजना बनाई गई है, एक बेकार की चीज है।

६. अमेरिका में जो सन् १९४८ में हुमर कमीशन नियुक्त किया गया था उसके नमूने पर भारत में भी एक कमीशन नियुक्त करना चाहिये जो सरकारी व्यय की पूरी छानबीन करे। हुमर कमीशन की सिफारिश के अनुसार अमेरिका में ३ मीलियन डालर बचाया गया। केवल कागज में ही २८८ लाख डालर बचाया गया।

७. निजि उद्योग में जो कि भलीभांति चल रहे हैं सरकार को हस्तक्षेप नहीं करना चाहिये। इसके विपरीत सरकार को देश के शासन में व्यापारिक नीति अपनानी चाहिये। जरूरत इस बात की है कि ज्यादा सरकारी व्यापार न हो बल्कि सरकारी शासन में ज्यादा व्यापारी तरीके हों।

जब तक कि हम देश के अन्दर के सभी प्रस्तुत साधनों का पूर्ण इस्तेमाल नहीं करते और करदाताओं के एक-एक रुपये का उचित प्रयोग नहीं करते तब तक यह सरकार जनता की सरकार जनता के द्वारा भले ही हो लेकिन वह जनता के लिये नहीं कही जा सकती।

राष्ट्र का आर्थिक प्रवाह

श्री जी० एस० पथिक

भारत का विदेशी व्यापार

देश में पदार्थों के दाम चढ़ते जा रहे हैं, उन पर कोई नियन्त्रण नहीं है। सरकार भी हस्तक्षेप नहीं कर पाती है। दूसरी ओर भारत के विदेशी व्यापार में १२.६५ करोड़ का घाटा हुआ है। विदेशी व्यापार किस तरह बढ़े, इस सम्बन्ध में परामर्श देने के लिए भारत सरकार ने एक जर्मन विशेषज्ञ को आमंत्रित किया। श्री वेरनर स्टेलजर निर्यात व्यापार विकास के विशेषज्ञ हैं। चूंकि देश का व्यापार निजी क्षेत्र के अधिकार में है, इसलिए वे निर्यात वृद्धि के लिए व्यापारियों को परामर्श देंगे। वे चेम्बर आफ कामर्स तथा निर्यात व्यापार कौंसिलों से सम्पर्क कायम करेंगे। इसके उपरांत जर्मनी से प्रो० मेरिया भारत में आएंगे और वे यहां के व्यापारियों को बताएंगे कि किस तरह का कपड़ा जर्मनी के फैशन बाजार में खप सकता है। इन विशेषज्ञों के द्वारा भविष्य भले ही सुधरे, किन्तु वर्तमान समय में निर्यात व्यापार गिरता जा रहा है। व्यापार मंत्री श्री नित्यानन्द कानूनगो यह नहीं सोचते हैं कि कच्चे मेगनीज के बाजार विदेश में खो रहे हैं। पर उन्हें यह स्वीकार करना पड़ा कि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में गिरावट आने और स्पात उद्योग को धक्का लगने से विदेशी मांग घट गयी है। हकीकत यह है कि कच्चे मेगनीज का बाजार हमारे लिए चाय का स्पेशल प्याला नहीं रह गया है। कच्चे मेगनीज की खपत के लिए नए स्रोत प्राप्त किए गए हैं। मेगनीज के सिवाय अन्य पदार्थों का भी भारतीय निर्यात गिर रहा है। लाल चीन ने हमारे कपड़े के निर्यात को भारी धक्का पहुँचाया। जहां ग्रेट ब्रिटेन में केवल भारत का कपड़ा था, वहां अब पाकिस्तान, जापान और चीन का कपड़ा खपने लगा है।

खाद्य पदार्थों के दाम

उत्पादन वृद्धि एक दीर्घकालीन समस्या है, किन्तु पदार्थों के दामों का प्रश्न तात्कालिक है। भारत सरकार ने जो निर्देश दिया, उससे राज्य सरकारें खाद्य पदार्थों के दाम नियत कर रही हैं। मध्यप्रदेश, पंजाब, राजस्थान और उत्तर प्रदेश में चना, चने की दाल और जौ के दाम नियत किए गए हैं। यह इसलिए कि दिसम्बर में गड़बड़ न हो, जबकि फसल के आने पर खाद्यान्न में मंदी आएगी। सरकार ने ७६००० टन गेहूँ १४ रुपए प्रतिमन के भाव आटे के मिलों को दिया है, जिससे कि वे देसी गेहूं न खरीदें। इन मिलों से कहा गया है कि विदेशी गेहूँ के दामों में आटा बेचें। खाद्य पदार्थों के दाम ८ प्रतिशत बढ़ गए हैं।

राष्ट्र के औद्योगीकरण पर निगाह

आज भारत के लोग क्या यह सोच सकते हैं कि क्या हमारा पूंजीगत पदार्थों का निर्यात बड़े पूंजी वाले पश्चिमीय देशों को इतना समर्थ बनाएगा कि ये साम्यवादी अर्थ व्यवस्था से मुकाबला कर सकें अभी मॉनिट्रियल में राष्ट्रमंडल के देशों का जो सम्मेलन हुआ, उसमें इंग्लैण्ड के प्राइम मिनिस्टर ने इस तत्व को गोपनीय न रखा। उन्होंने स्पष्ट कहा कि अविकसित देशों में पश्चिमीय पूंजी के प्रभाव से कम्युनिस्टों के प्रसार को रोका जा सकेगा। पर एशियाई देशों में पश्चिम से कभी पूंजी का प्रवाह नहीं हुआ। १९३० से उसकी गति गिरती जा रही है। कारण पश्चिम ने यह देखा कि इस पूंजी के प्रवाह से एशियाई देश औद्योगीकरण में बढ रहे हैं। यदि आज पूंजी के प्रवाह की उत्साहजनक चर्चा की जाती है, तो पश्चिमीय देश अपने पूर्व निर्धारित बिंदु तक ही एशियाई देशों का औद्योगीकरण होने देना चाहते हैं। इस हद तक वे अपने लिए खतरा नहीं मानते, क्योंकि इससे एशिजाई देशों में रूसी प्रतियोगिता न बढ़ पाएगी। इससे यह भी निष्कर्ष निकलता है कि रूस इतनी शक्ति रखता है कि पश्चिम से नीचे दामों में अपना माल बेच सके। अमेरिका और इंग्लैण्ड की वर्तमान प्रवृत्ति एशियाई देशों के औद्योगीकरण की आशंका है। इंग्लैण्ड ने हम से यह नहीं कहा कि यदि हम रूस के औद्योगिक विस्तार के मुकाबले में खड़े हों, तो

हमारा औद्योगीकरण सुधरेगा।

आयात निर्यात योजना

गत दस वर्षों में हमारी अर्थ व्यवस्था में आयात निर्यात के क्षेत्र कठोर नियंत्रण में रहे। किन्तु इतने पर भी वे असंयोजित रहे। जब तक हमारे कोष में भारी तादाद में स्टर्लिंग जमा रहे, और विकास अधिक नहीं बढ़ा, तब तक आयात लाइसेंस उदारतापूर्वक दिए गए। तब यह न सोचा गया कि एक दिन हमारी झड़ती होगी। गत वर्ष हमें हकीकत का सामना करना पड़ा। विदेशी मुद्रा का कोष खाली हो जाने पर हमें विकास योजना को बदलने के लिए मजबूर होना पड़ा। नई दिल्ली में आयात निर्यात परामर्शदात्री कौंसिलों की सभाएं हुईं। विश्व बैंक, अमेरिका, इंग्लैण्ड, जर्मनी और जापान तथा कनाडा के तुरन्त सहायता देने के वचन से हमारे तुरन्त भुगतान देने का प्रश्न हल हुआ, किन्तु उससे हमारी खाई पूरी न हुई। हमारे विदेशी व्यापार और अनुदान की खाई के अनुमान का चित्र इस प्रकार है :

भारत डिफाल्टर होने से बचा

भारत में मार्ग पर चलने वाले व्यक्ति का यह सोचना बड़ा खतरनाक होगा कि केन्द्रीय वित्तमंत्री श्री मुरारजी देसाई की विदेश यात्रा किसी रूप में यह स्वीकारोक्ति है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना अव्यावहारिक है या यदि उसे पूरा करना है तो हमें विदेशी आकांक्षाओं के प्रति रियायतें करनी पड़ेंगी। किन्तु हकीकत यह है कि न तो योजना अव्यावहारिक है और न उसकी सफलता विदेशी दान पर निर्भर है। यह कथन इसलिए आवश्यक है कि कुछ लोगों का यह प्रचार जारी है कि दूसरी योजना तभी सफल हो सकती है, जबकि उसका रूप बदल दिया जाए, जिससे कि उसके प्रति विदेशियों की दिलचस्पी पैदा हो। पर यह नहीं कि दूसरी पंचवर्षीय योजना अधिक आकांक्षा वाली है या भारत की अर्थ व्यवस्था दुरस्त नहीं है, जिससे कि अर्थ मंत्री विदेशी मुद्रा की व्यवस्था के लिए विदेश गए। रुपया पहले की तरह मजबूत है, अन्तर्राष्ट्रीय विनिमय में उसका स्तर नहीं गिरा है। जिस दिन अर्थ मंत्री ने विदेश के लिए प्रस्थान

व्यापार की बाकी और भुगतान (करोड़ रुपए में)

	१९५२-५३,	१९५३-५४,	१९५४-५५,	१९५५-५६,	१९५६-५७,	१९५७-५८
निर्यात	६०२	५४०	५९७	६४०	९३५	६६९
आयात	६३३	५९२	६८४	७६१	१०६६	११७५
व्यापार की बाकी	—३१	—५२	—८७	—१२१	—४६१	—५०६

विदेशी व्यापार की यह नीति रही, कि जब व्यापार की बाकी अनुकूल रही, तब नियंत्रण ढीला रहा और उपभोक्ता पदार्थों के आयात पर भारी छूट दी गयी। किन्तु व्यापार की बाकी प्रतिकूल होने पर आयात नियंत्रित कर दिया गया। जब निर्यात माल की अधिक मांग थी, तब ऊंचे स्तर पर निर्यात कर लगाए, और जब निर्यात व्यापार झिलमिल हो गया, तब निर्यात कर गिरा दिए गए। इस प्रकार किसी को न तो प्राथमिकता दी गयी और न योजना तैयार की गयी। डेढ़ वर्ष में भारत सरकार ने करीब २००० करोड़ रुपए के आयात लाइसेंस जारी किए। अब उनका भुगतान चलतू अर्जन और विदेशी मुद्रा के कोष से पूरा करना दुस्तर हो गया।

किया, उस दिन सरकार में विश्वास पैदा करने के लिए ६० करोड़ रुपए के ऋण लिखे गए थे। भारत के विदेशी भुगतान की कठिनाइयां अस्थायी हैं। किसी विदेशी प्रयत्न में दिवालियापन नहीं सोचा जा सकता। दूसरी पंचवर्षीय योजना के लिए पूंजीगत सामान खरीदने के लिए हमें ८८० करोड़ रुपए का ऋण चाहिए। जून के अन्त में हमें करीब २८० करोड़ रुपए चुकाने थे। पर इस भुगतान के समय तक हमारे स्टर्लिंग जमा में कमी आ गयी। यह कमी योजना के बड़ी होने के कारण नहीं आ गयी। इसे हम नहीं, पश्चिम के सब लोग जानते हैं कि पश्चमीय देशों में मंदी आने के कारण हमारे निर्यात में विदेशी खरीदारों ने पदार्थों के दाम गिरा

दिये और वे तेजी में हमें पूंजीगत सामान भेजने लगे। इन दोनों गतिविधियों का हमारी स्टर्लिंग जमा पर विषम प्रभाव पड़ा।

भारत को किन्हें चुकाना है ?

ग्रेट ब्रिटेन के सिवा हमें निकट भविष्य में तुरन्त भुगतान कनाडा, दक्षिचम जर्मनी और जापान को देना है। जितना ग्रेट ब्रिटेन के लिए है, उतना इन सब देशों के लिए है, उनके भावी व्यापार के लिए भारत समृद्धिशाली बने। ग्रेट ब्रिटेन को १०० करोड़ रुपए और पश्चिम जर्मनी को ५० करोड़ रुपए चुकाने से हम डिफाल्टर होने से बच सकते हैं। इंग्लैण्ड और पश्चिम जर्मनी दोनों ने ऋण देकर हमारी कठिनाई को हल किया। अमेरिका में ग्रेट ब्रिटेन, कनाडा, पश्चिम जर्मनी और जापान के प्रतिनिधियों ने विश्व बैंक और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष से मिल कर यह कहा कि भारत को डिफाल्टर होने से बचाया जाए। इन देशों ने आगे कार्यक्रम में स्वतः ऋण देना स्वीकार किया। विश्व बैंक में अमेरिका सबसे बड़ा हिस्सेदार है, उसका यह प्रयत्न होगा कि साख कायम रखे, क्योंकि यदि भारत भुगतान देने में डिफाल्टर हुआ, तो विश्व बैंक भारत को आगे से ऋण न देगा, जबकि भारत विश्व से ऋण चाहता है किन्तु ऐसा अवसर नहीं आया। प्रत्येक संस्था और भारत सरकार, जिसने भारत को ऋण दिया, यह जानती है कि हम अपनी विकास योजनाओं के लिए विदेशी मुद्रा के उपयोग में ईमानदार रहे हैं। रेलवे विकास में कमी करके हमने ३४ करोड़ रुपए का व्यय बचाया है। इसी प्रकार १ करोड़ बिजली के औजार ६ करोड़ रुपए विद्युतकरण के प्रोग्राम में कम किए हैं। भारत के साहूकार देश ग्रेट ब्रिटेन, जर्मनी, जापान और कनाडा ने ऋण प्रदान किए। श्री देसाई को अमेरिका से भी ऋण मिला। वे यह सफलता प्राप्त कर देश लौटे।

विदेशी सहायता

भारत को निम्न स्तर पर विदेशी सहायता प्राप्त हुई है:—

स्रोत	योजना के लि	ब्याज की दर	ऋण की रकम (अब तक मिली हुई रकम-भुगतान कम कर)
विश्व बैंक	भारतीय रेलवे (पहला ऋण)	४ प्र० श०	८.६५
	,, ,, (दूसरा ऋण)	५$\frac{5}{8}$ प्र० श०	१४.६३
	डी० बी० सी० (पहला ऋण)	४ प्र० श०	६.७५
	,, ,, ,, (दूसरा ऋण)	४$\frac{7}{8}$ प्र० श०	४.३६
	एयर इंडिया इंटर नेशनल	५॥ प्र० श०	०.८१
	इंडियन आयरन स्टील कं०	४$\frac{3}{4}$ प्र० श०	६.४४
	,, ,, ,, ,,	५ प्र० श०	२.५४
	टाटा आयरन स्टील कं० (पहला ऋण)	४$\frac{3}{4}$ प्र० श०	२८.१०
	ट्राम्बे (पहला ऋण)	४$\frac{3}{4}$ प्र० श०	५.८६
	ट्राम्बे (दूसरा ऋण)	५$\frac{3}{8}$ प्र० श०	०.६०
		जोड़	८२.०४
ग्रेट ब्रिटेन	दुर्गापुर स्टील के लिए	इंग्लैण्ड से प्र० श०	०.६७
	स्टर्लिंग ऋण	अधिक ब्याज की दर	१.२९
		जोड़	१.९६

सोवियत रूस	भिलाई स्टील कारखाने के लिए	२॥ प्र० श० ब्याज	१२.८५
जर्मनी	रूरकेला स्टील कारखाना	६ प्र० श०	१३.१६
अमेरिका	अमेरिका का गेहूं ऋण १९५१	२॥ प्र० श०	८६.२१
	अमेरिकन ऋण १९५५	(डालर में ३ प्र० श० रुपए में ४ प्र० श० ब्याज)	१५.३३
	अमेरिकन ऋण १९५६	,,	३.३३
	अमेरिकन ऋण १९५७	,,	३.३४
		जोड़	१११.२१
		कुल जोड़	२२१.३२

केम्बे में तेल के स्रोत

१५० करोड़ रुपए प्रति वर्ष हम मध्यपूर्व तेल के साम्राज्य को पेट्रोल प्राप्त करने के लिए देते हैं। ईरान और ईराक के लिए सोने से भी ज्यादा तेल मूल्यवान है। अभी हाल में देश में जो नयी खोज हुई है, उससे शायद भारत के भाग्य भी चमकना चाहते हैं। केम्बे में तेल का जो स्रोत मिला है, उससे हम पेट्रोल के उत्पादन में साम्राज्य न कायम कर सकें, तो भी इतना तो होगा कि हम अपनी आवश्यकता के लिए आत्म निर्भर बन जाएं। रूमानिया के सहयोग से ज्वालामुखी में और रूसी इंजीनियरों के सहयोग से केम्बे में तेल के स्रोतों की खोज हुई। केम्बे में तेल निकलने के समाचार से देश में नयी आशा उत्पन्न हुई है। कहा जाता है कि बम्बई के अनेक व्यापारी बम्बई छोड़कर केम्बे में बसना चाहते हैं। केम्बे में जमीन के दाम चढ़ गए हैं। यदि केम्बे में बड़े परिमाण में तेल निकल आया, तो भारत की अर्थ व्यवस्था एक नया रूप ग्रहण करेगी। तब हमें विदेशी कच्चा मिट्टी का तेल आयात न करना पड़ेगा, इतना ही नहीं हम पेट्रोल निर्यात करने में भी समर्थ होंगे। भारत के भाग्य चमकना चाहते हैं।

——

द्वितीय योजना के लि

विदेशों की नई सहायता

श्री रामगोपाल विद्यालंकार

कुछ समय से द्वितीय पंचवर्षीय योजना के लिए विदेशी मुद्रा की न्यूनता के कारण असाधारण चिन्ता प्रगट की जा रही थी। इस कमी को पूरा करने के लिए देश में अनेक प्रयत्न करने के पश्चात् भी, विदेशों से सहायता लेना इतना अधिक आवश्यक जान पड़ा कि हमारे वित्त मंत्री श्री मोरारजी देसाई ने संसद का अधिवेशन छोड़कर भी विदेशों की यात्रा करना उचित समझा।

श्री मोरारजी देसाई ने इस समय विदेश जाना दो कारणों से आवश्यक समझा। एक तो इस कारण कि विश्व बैंक के नेतृत्व में अमेरिका और ब्रिटेन आदि कुछ देश इस समय स्वयं ही भारत को सहायता देने पर विचार कर रहे थे; और दूसरे इसलिए कि इन्हीं दिनों मॉनिट्रियल (कनाडा) में राष्ट्रमंडलके वित्त मंत्रियों का एक सम्मेलन राष्ट्र मंडल के देशों की वित्तीय, आर्थिक और व्यापारिक समस्याओं पर विचार करने के लिए होने वाला था। (मॉनिट्रियल सम्मेलन का हाल इसी अंक में एक पृथक लेख में प्रकाशित किया गया है—सम्पादक)

विश्व बैंक की प्रेरणा से पश्चिमी देशों ने और जापान ने भारत को सहायता देने के लिए जो वायदे किए हैं उनको यदि कसौटी मान जाय तो श्री मोरारजी देसाई की यह विदेश यात्रा (श्री देसाई की यह प्रथम विदेश यात्रा थी।) असाधारण सफल रही। सब मिलाकर इन देशों ने आगामी जून तक भारत को ३५ करोड़ २० लाख डॉलर अर्थात् लगभग १६८ करोड़ रुपये की सहायता देने के वायदे किये हैं।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के वित्तीय अन्दाजों की लोक-सभा और राज्य-सभा के वर्षाकालिक अधिवेशन में जो आलोचनाएं हुईं उनसे प्रकट हुआ कि योजना आयोग के ये अन्दाजे बहुत अधिक अशुद्ध और भ्रान्त थे। स्वयं योजना मंत्री श्री गुलजारीलाल नन्दा ने भी राज्य सभा में इन आलोचनाओं का उत्तर देते हुए योजना आयोग की
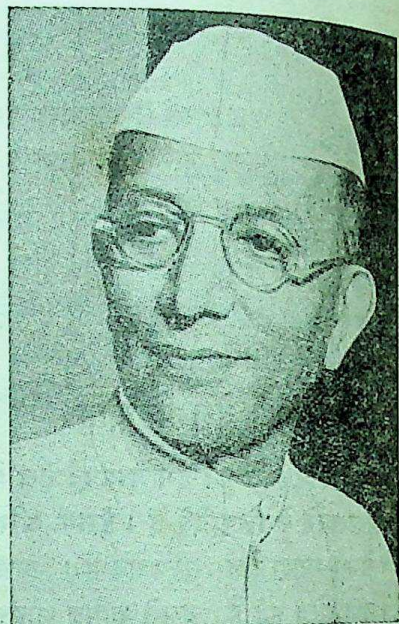
सफल यात्री, वित्त मंत्री, श्री मोरारजी देसाई

इस भूल को स्वीकार कर लिया; और माना कि द्वितीय योजना के शेष ढाई वर्ष में योजना की पूर्ति के लिए लगभग २००० करोड़ रुपये की मुद्रा की आवश्यकता पड़ेगी। परन्तु लगभग ४२० करोड़ रुपये की आवश्यकता तो मार्च १९५९ तक ही पड़ेगी। पश्चिमी देशों ने और जापान ने योजना की पूर्ति के लिए सहायता देने के जो वायदे किए हैं वे दो प्रकार के हैं—एक तो योजना की तात्कालिक अर्थात् मार्च १९५९ तक कि आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए और दूसरे उक्त अवधि के पश्चात् द्वितीय योजना के अन्त तक की आवश्यकताएं पूरी करने के लिए। इन दोनों में प्रथम प्रकार के वायदों की तो निश्चित राशियां भी प्रकट कर दी हैं, परन्तु दूसरे प्रकार के वायदों के सम्बन्ध में यह आशा मात्र दिलाई है कि वे भारत की यथा शक्ति सहायता करते रहेंगे।

इन देशों ने जो वायदे किये हैं उनका विवरण

[सम्पदा

निम्नलिखित है—

(राशियां करोड़ रुपयों में)

वायदा करने वाला	मार्च १९५९ तक देय सहायता	मार्च के पश्चात देय सहायता
१. विश्व बैंक	४७.५०	१०६.७५
२. पश्चिमी जरमनी	१९.२०	२८ ५०
३. कनाडा	८.००	१३.३०
४. जापान	४.७५	अनिश्चित
५. ब्रिटेन	५३.६०	,,
६. अमेरिका	१४.२५	,,

जापान और ब्रिटेन ने आगामी सहायताओं के लिए किन्हीं निश्चित संख्याओं के वायदे नहीं किए हैं, किन्तु यह निश्चित है कि वे दोनों भारत की भरसक सहायता करेंगे क्योंकि इन दोनों का लक्ष्य भारत के साथ अपने व्यापार बढ़ाने का है। ब्रिटेन के सम्बन्ध में विशेष रूप से स्मरणीय बात यह है कि लगभग १० वर्ष पूर्व तक ब्रिटेन भारत का खासा बड़ा कर्जदार था। वह भारत का लगभग १२७५ करोड़ रुपये का देनदार था। परन्तु पिछले कुछ वर्षों में भारत ने ब्रिटेन से अपना यह ऋण इतनी अधिक मात्रा में वसूल कर लिया कि अब ब्रिटेन लेनदार और भारत उसका देनदार हो जाएगा।

भारत की सबसे अधिक सहायता गत १० वर्षों में अमेरिका ने की है। १५ अगस्त १९४७ से लेकर अमेरिका द्वारा भारत को दी गई सहायताओं का योग लगभग ८०० करोड़ रुपये बैठता है। अमेरिका के टैक्निकल सहयोग मिशन और विश्व बैंक आदि अर्ध सरकारी संगठनों ने भारत की जो सहायता की है उसका हिसाब इस राशि में सम्मिलित नहीं है।

इस विवरण से प्रतीत होता है कि आगामी कुछ वर्षों में भारत को विदेशी मुद्रा की अधिक चिन्ता नहीं करनी पड़ेगी। इसके विपरीत अब भारत को ध्यान यह रखना होगा कि वह अपने गलत अन्दाजों और अदूरदर्शिता पूर्ण आय-व्ययों के कारण अपनी विदेशी मुद्रा की आवश्यकताओं को और अधिक न बढ़ाता चला जाए। इसके विपरीत भारत सरकार और उसके नेता यदि अभी सावधानतापूर्वक न चलेंगे तो सम्भव है कि कुछ ही वर्ष पश्चात् उन्हें विदेशी ऋणों के चुकाने की समस्या का भयंकर रूप में सामना करना पड़ जाए।

—

भारत की अर्थनीति

भारत के वित्तमंत्री श्री मुरारजी देसाई ने दूसरी पंचवर्षीय योजना के विकास के संबंध में न्यूयार्क में भारत की अर्थनीति संबंध में निम्नलिखित संकेत दिए :—

(१) भारत सरकार की यह निश्चित नीति है कि निजी उद्योग को प्रोत्साहन दिया जाए।

(२) सरकार भारत में विदेशी विनियोजकों के लिए प्रभावशाली वातावरण कायम रखना चाहती है।

(३) सरकारी क्षेत्र का विकास इन परिस्थितियों को पैदा करता है, जिससे अविकसित देश में निजी पूंजी प्रसार पाए।

(४) हमारे लिए उद्योगों का राष्ट्रीयकरण कोई लक्ष्य नहीं है। न राष्ट्रीयकरण हमारी नीतियों का आ[illegible] अंग है।

(५) कुछ उद्योगों का राज्य द्वारा विकास को [illegible] रखने में कोई कठोर नीति नहीं है।

हमारा चाय उद्योग

— भारत की अर्थ-व्यवस्था में चाय उद्योग का [illegible] महत्व है। इस में लगभग १० लाख लोग काम [illegible] और इससे यहां के प्लाईवुड और उर्वरक उद्योगों [illegible] विशेष सहायता मिलती है।

— सन् १९५४ में देश में कुल ७ करोड़ [illegible] लाख वर्गफुट प्लाईवुड बनाया गया, जिस में से चाय [illegible] पेटियां बनाने में ६ करोड़ ४० लाख वर्गफुट अर्थात् [illegible] प्रतिशत प्लाईवुड का उपयोग किया गया।

— उसी साल में चाय बगानों के लिए ८२ [illegible] टन उर्वरक खरीदा गया, जिसमें से २ करोड़ ५४ [illegible]

चीनी से प्राप्त आय का वितरण
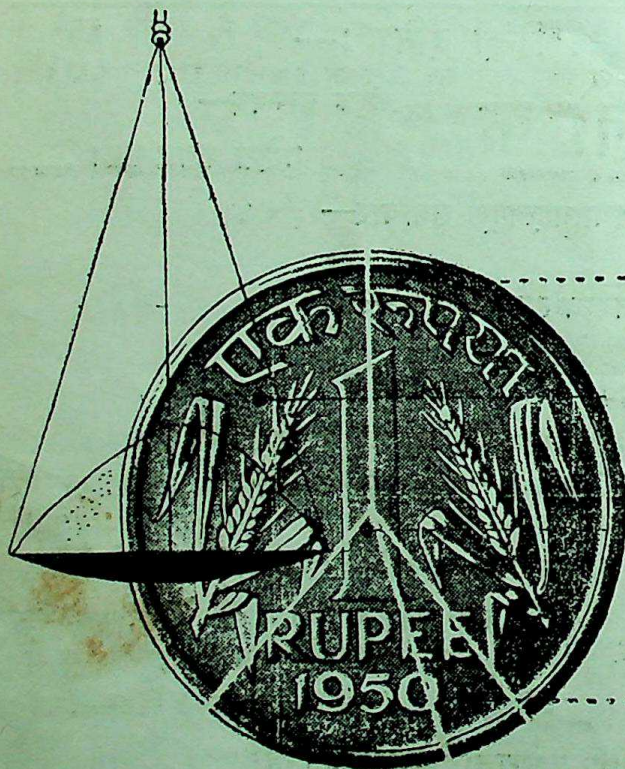
४० नये पैसे
गन्ने का मूल्य।

३८ नये पैसे
उत्पादन व अन्य कर सरकार को।

१६ नये पैसे
मजदूरी, वेतन, पैकिंग आदि उत्पादन व्यय।

६ नये पैसे
लाभ जिसमें टैक्स भी शामिल हैं।

रु० कीमत का ७३ हजार टन उर्वरक यहीं का बना हुआ था।

— सन् १९४५ में चाय की ढुलाई से रेलों आदि को ३ करोड़ ८६ लाख रु० मिला।

— चीन में होने वाली चाय की वहीं पर खपत हो जाती है, परन्तु भारत में बनी चाय का काफी हिस्सा निर्यात किया जाता है।

— सन् १९५०-५१ में कुल ८० करोड़ ४२ लाख रु० की चाय विदेशों में भेजी गयी। देश के कुल निर्यात का (५ अरब ९६ करोड़ ७६ लाख रु०) यह १३.५१ प्रतिशत था। १९५७ में १ अरब, २३ करोड़ ४६ लाख रु० की चाय बाहर भेजी गयी, जो कुल निर्यात (६ अरब ३७ करोड़ ७४ लाख रु०) का १९.३५ प्रतिशत है।

— सन् १९५१-५२ में देश में २० करोड़ १० लाख पौंड, १९५३-५४ में १७ करोड़ ६६ लाख पौंड और १९५४-५५ में अंदाजन १८ करोड़ पौंड चाय की खपत हुई।

— सन् १९६०-६१ में ७० करोड़ पौंड चाय पैदा करने का लक्ष्य है। आशा है, इसमें से ४७ से ५० करोड़ पौंड तक चाय निर्यात की जाएगी।

—

स्त्रियों से पुरुषों की संख्या अधिक

भारत में स्त्रियों से पुरुषों की संख्या अधिक है। किन्तु मांग और उपलब्धि के नियम लड़कियों पर लागू नहीं होते। संख्या में अधिक होते हुए भी कन्या को दहेज देना पड़ता है, और वर दुर्लभ ही रहते हैं। अविवाहितों में भी पुरुष स्त्रियों से अधिक हैं। किन्तु विधवाओं और तलाक पायी स्त्रियों की संख्या इस प्रकार के पुरुषों से दूनी है। ये लोग अधिकतर ४५ से लेकर ५४ तक की उम्र के हैं।

केरल में अविवाहित पुरुष ६०.२ प्रतिशत हैं और अविवाहित स्त्रियां ४८.२ प्रतिशत जो देश में सबसे अधिक हैं। बिहार में ३८ लाख लोगों के आंकड़े लिये गये थे, जिससे पता लगा कि बिहार में अविवाहित स्त्री-पुरुषोंकी संख्या १५ लाख होगी।

व्यवसाय में खेती करने वालों की संख्या सबसे अधिक है, २ करोड़ ५० लाख व्यक्ति इसमें लगे हैं। वाणिज्य करने वालों की संख्या २० लाख के करीब होगी और यातायातमें लगे लोगों की संख्या ५ लाख ५० हजार से कुछ अधिक होगी। खेती करने वालों में स्त्री-पुरुषों की संख्या करीब करीब बराबर है।

इन ३ करोड़ ५० लाख लोगों में, जिनके नमूने के आंकड़े लिये गये, २ करोड़ ९० लाख व्यक्ति गांव के और ६० लाख व्यक्ति शहर के रहने वाले हैं।

—

नया निर्माण

गांव करवट बदल रहे हैं

रघुनाथसिंह दिल्ली के निकटवर्ती गांव खानपुर का रहने वाला है और जामिया मिलिया के ग्राम-संस्थान का छात्र। अपने दूसरे हमउम्र साथियों की तरह उसका भी खून कुछ कर गुजरने को जोर मार रहा था। साथ ही ठण्डे दिल से सोच-विचार कर वह गांव का रूप सुधारने के लिए अपने साथियों को सैकड़ों छोटी-मोटी बातें बता सकता था। बहुमुखी सहकारी संस्था बनाने की उसे ही सूझी थी, जो हरिजनों के लिए बहुत फायदेमंद साबित हुई है। रघुनाथसिंह ने ही गांवों में स्वयंसेवकों का जत्था तैयार करके ईंटों का नया भट्टा बना डाला और सिंचाई के लिए बड़ा-सा तालाब खोद डाला।

दिल्ली, पश्चिमी उत्तरप्रदेश, पंजाब और हिमाचल प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों से अगस्त १९५६ में ५५ छात्रों का एक दल उच्च शिक्षा के लिए जमिया मिलिया स्थित ग्रामीण संस्थान में भर्ती किया गया था। उसी दल में रघुनाथसिंह भी था। यद्यपि उक्त संस्थान के नाम पर वहां केवल कुछ तम्बू खड़े थे और ग्रामीण शिक्षा का यह अद्भुत प्रयोग आरम्भ करने के लिए थोड़े से निःस्वार्थ शिक्षकों का एक दल इकट्ठा हो गया था।

छोटे से पैमाने पर शुरू किया गया यह संस्थान आज कहीं बढ़ चुका है। छात्रों की संख्या अब १२५ हो[...] है। इसके अतिरिक्त उच्च शिक्षा के नौ और ग्रा[...] संस्थान विभिन्न प्रदेशों में काम कर रहे हैं। श्रीनि[...] उदयपुर, दुदुरई, मुजफ्फरपुर, सानोसरा (सौ[...] कोयमुत्तूर, अमरावती और कोलापुर में स्थित ये सं[...] देश में विभिन्न भागों में फैले हुए हैं।

इन संस्थानों में छात्रों को गांवों के विकास के विभि[...] पहलुओं के बारे में प्रशिक्षित किया जाता है। ए[...] ग्रामीण सेवा का डिप्लोमा, जिसमें प्रगतिशील ग्रामवा[...] को गांवों के प्रबन्ध और विकास के लिए प्रशिक्षित कि[...] जाता है। कृषि इन्जीनियरी और विज्ञान का पाठ्यक्रम [...] वर्ष का है, जिसमें गांव की इंजीनियरी और विज्ञान सं[...] समस्याओं को हल करने का ढंग सिखाया जाता है। पा[...] क्रम में घरेलू उद्योग, बागवानी, पशुपालन आदि सि[...] जाते हैं। इन दुरूह वैज्ञानिक विषयों के अतिरिक्त इति[...] अर्थशास्त्र और ललित कलाओं की शिक्षा भी यहां [...] जाती हैं।

इन पाठ्यक्रमों को शहर की शिक्षा का गांवों [...] विस्तार मात्र समझना गलती होगी। देश के गांवों [...] आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर विशेषज्ञों की समिति [...] ये पाठ्यक्रम विशेष रूप से तैयार किये हैं। इन पाठ्यक्र[...] का उद्देश्य गांवों के युवकों को ऐसा कुशल प्रशिक्षण दे[...] है, जो उन्हें खानपुर ग्राम के रघुनाथसिंह की तरह, अ[...] अपने समुदाय का प्रभावशाली नेता बना दें।

सामुदायिक विकास आन्दोलन से गांवों में हुई जा[...] के फलस्वरूप शहरी और ग्रामीण जीवन का भेद मि[...] सा जा रहा है। गांवों का जीवन-स्तर ऊंचा करने के लि[...] यह आवश्यक हो गया है कि उच्च शिक्षा की सुविधा व[...] भी हो। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए ही १९५६ [...] ९ उच्च शिक्षा संस्थान खोले गए। इनकी स्थापना [...] प्रतिभाशाली ग्रामीण छात्रों का शिक्षा या धंधे के लि[...] शहर भागना बहुत कुछ रुक गया है। विकास आयो[...] के बारे में इन संस्थाओं में गवेषणा और प्रयोग कि[...] जाते हैं।

'सम्पदा' के प्रमुख एजेंट

१— पं. शोभनाथ एण्ड राम नाथ मिश्र
२११-२१६ फ्रीपर रोड, फोर्ट, बम्बई-१

२— अविनाशचन्द्र राय
७४०, नूर महल, भोपाल।

यह प्रण

अहमदाबाद के निकटवर्ती कस्बे सौरा के सब नागरिकों ने सम्मिलत रूप से चाय और तम्बाकू का सेवन न करने का व्रत लिया है। साथ ही सौरा के नागरिकों ने यह प्रण भी किया है कि इस प्रकार चाय-तम्बाकू का सेवन न करके जो धन बचेगा उसे राष्ट्र विकास के कार्यों में खर्च किया जायगा, यह प्रण केवल दिखावे का प्रण बनकर रह जाए, इसलिए ३० व्यक्तियों की एक समिति भी बनाई गई है जो यह देख-भाल करेगी कि कोई नागरिक इस व्रत को भंग तो नहीं करता। जो नागरिक व्रत को भंग करता पाया जाएगा उस पर १०) जुर्माना किया जाएगा।

सौरा के नागरिकों का यह प्रण उन्हें बधाई के अधिकारी तो बनाता ही है, देश के हर प्रबुद्ध नागरिक की आंखों में उंगली डाल कर उसे राष्ट्र-निर्माण के महान कार्य में अपना कर्त्तव्य पूरा करने की चेतावनी भी देता है।

बूढ़े बाप ने कहा था

एक किसान ने मरते समय अपने बेटे से कहा—"बेटा देखो। इस तरह रहना कि कभी तुम लोगों को सलाम न करना बल्कि लोग तुम्हें सलाम करें। और हमेशा शहद लगा कर रोटी खाना।"

यह कहकर बाप ने आंखें मूंद ली और मर गया। बेटा अपने बाप के बताये ढंग से जीवन व्यतीत करने लगा। एक साल बीता लड़के ने कभी किसी को सलाम नहीं किया। वह रोटी और शहद खाता था लेकिन उसने हजार अशरफियां खर्च कर दीं और कमायी दमड़ी भी नहीं। एक साल और बीता लड़के ने एक हजार अशरफियां और खर्च कर दी। जब तीसरा साल बीत गया और बेटे ने देखा कि तीन हजार अशरफियां उसके हाथों से पानी की तरह बह गयीं तो वह सोचने लगा—

अजीब बात है। मैं बिल्कुल अपने बाप के बताए हुए तरीके से जीवन व्यतीत कर रहा हूँ। लेकिन मेरा सारा पैसा तबाह होता जा रहा है। और इससे भी बुरी बात यह है कि कोई भी मुझे सलाम नहीं करता।

उसने अपने चाचा के पास जाकर यह सारा दुखड़ा रोया।

उसके चाचाने कहा—"तुमने अपने बाप की बात को ठीक से समझा नहीं है। उनके कहने का मतलब यह था कि अगर तुम बहुत सुबह काम पर चले जाओगे तो तुम्हें रास्ते में कोई मिलेगा ही नहीं जिसे तुम्हें सलाम करना पड़े। शाम को देर से घर लौटो और तब सूखी रोटी भी शहद जैसी मीठी लगेगी। तब तुम बहुत जल्दी धनवान हो जाओगे।"

भूमि की न्यूनतम जोत

योजना आयोग और राज्य सरकारों के बीच में भूमि की न्यूनतम जोत कायम करने के सवाल पर रस्साकशी चल रही है। उत्तर प्रदेश के राजस्व मंत्री श्री चरणसिंह और आंध्र के मुख्य मंत्री श्री संजीव रेड्डी नई दिल्ली आए। किन्तु ये मंत्रीगण अपने मत पर दृढ़ रहे। उन्होंने कहा कि वे योजना के निर्देशों पर नहीं चल सकते। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने दस वर्ष पूर्व भूमि की जोत न्यूनतम कायम करने का प्रश्न उठाया था। कांग्रेस के गौहाटी अधिवेशन में प्रति व्यक्ति के लिए न्यूनतम जोत १० एकड़ करार दी गयी थी। कम्युनिस्ट, प्रजा सोशलिस्ट और सोशलिस्ट सभी न्यूनतम जोत के समर्थक हैं। खेतिहर मजदूर और गरीब किसानों में अधिक अन्न पैदा करने की प्रवृत्ति पैदा करने के लक्ष्य से पहली पंचवर्षीय योजना में अधिक बल दिया गया था। दूसरी योजना में परिवार के तीन व्यक्तियों के आधार पर जोत कायम करने का सुझाव दिया गया। प्रो० महोलनोबिस ने हिसाब लगाकर यह बताया कि यदि २० एकड़ न्यूनतम जोत कायम की गयी, तो ६३० लाख एकड़ वितरण के लिए उपलब्ध होगी, जिससे भूमिहीन किसान और खेतिहर मजदूरों को कम से कम २ एकड़ प्रति व्यक्ति के अनुपात में मिल सकेगी। पर राज्य सरकारें जोत कायम करने के टेढे सवाल को हाथ में नहीं लेना चाहतीं। शासक दल को चुनाव का भय रहता है। बिहार, मध्यप्रदेश और हिमाचल प्रदेश को छोड़कर अन्य राज्यों ने वर्तमान स्तर को न्यूनतम जोत मान लिया है। यदि इस पर अमल हो तो भी काफी जमीन भूमिहीन किसान और खेतिहर मजदूरों को मिल सकेगी। काश्मीर राज्य ने २२.७५ एकड़ से अधिक जमीन रखने वाले जमींदारों से २२८३७१ एकड़

बीमा उद्योग की प्रगति के दो वर्ष

श्री पी० ए० गोपालकृष्णन : चेयरमैन लाइफ इन्श्योरेन्स कारपोरेशन

लाइफ इन्शोरेन्स कारपोरेशन को स्थापित हुए दो वर्ष हो जाते हैं। बीमा व्यवसाय का यह संगठन देश भर में बिखरी हुई छोटी बड़ी २४० जीवन बीमा कम्पनियों को एक-रूप करके बनाया गया था। देश के सब बड़े-बड़े नगरों में इन कम्पनियों के कार्यालय थे और इनमें भारी प्रतिस्पर्धा थी।

राष्ट्रीयकरण के कारण

बीमा उद्योग के राष्ट्रीय-करण के दो मुख्य कारण थे। पहला उद्देश्य तो यह कि बीमा व्यवसाय के राष्ट्रीयकरण के पूर्व बहुत सी स्वतन्त्र बीमा कम्पनियां पॉलिसी होल्डरों के क्लेमों का भुगतान नहीं कर पाती थीं और बहुत सी कम्पनियां असफल हो जाती थीं—इसका प्रभाव यह होता था कि बीमा व्यवसाय में से जनता का विश्वास क्षीण होता जा रहा था। राष्ट्रीयकरण हो जाने पर यह समस्या समाप्त हो गई है क्योंकि कारपोरेशन के पास ४७० करोड़ रुपये की पूंजी है। इस पूंजी का अधिकांश भाग पालिसियों के क्लेमों का भुगतान करने के लिये ही सुरक्षित है।

बीमा व्यवसाय के राष्ट्रीयकरण का दूसरा कारण यह था कि प्राइवेट कम्पनियों ने केवल नगरों को ही अपना कार्यक्षेत्र बनाया हुआ था, जबकि कारपोरेशन ने अपना क्षेत्र देश के गांवों तक भी फैला दिया है। गांवों तक बीमा न पहुँचने से जहां गांवों में रहने वाली जनता बीमे के लाभ से वंचित रह जाती थी वहां बीमा व्यवसाय के पालिसी होल्डरों की संख्या भी सीमित रह जाती थी। कारपोरेशन की प्रगति को देखने के लिये यूं तो दो वर्ष का समय बहुत अपर्याप्त है, फिर भी इन दो वर्षों में जो कार्य किया गया उससे निश्चित रूप से आशा की जा सकती है है कि बीमा व्यवसाय की जो प्रगति अब तक रही है, यही गति बनी रही तो पहिले वर्ष से भी अधिक शानदार परिणाम प्राप्त होंगे।

पालिसियों का भुगतान

एक ओर जहां नये बीमे करने के परिणाम अच्छे रहे हैं, वहां पुराने क्लेमों के भुगतान का कार्य ठीक समय पर नहीं हो पाया है। जब से मैं इस कारपोरेशन का चेयरमैन बना तभी से यह समस्या मेरा ध्यान अपनी ओर आकर्षित करती रही है। पुरानी पालिसियों के क्लेमों के कार्य में अवरोध उत्पन्न होने के कई कारण हैं, जिनमें से एक यह भी है कि व्यवसाय का राष्ट्रीयकरण हो जाने पर कर्मचारियों को नौकरी के स्थायी होने का विश्वास और वेतन का स्तर निश्चित हो गया। इसका प्रभाव कर्मचारियों की कार्यक्षमता पर पड़ा, और कुल मिलाकर काम का औसत घट गया। मैंने कर्मचारियों के इन दोषों को समाप्त करने और कर्मचारियों की कार्यक्षमता बढ़ाने के लिए कई कदम उठाए हैं। आशा है कुछ महीनों में यह सब अव्यवस्था समाप्त हो

जमीन हस्तगत कर १६३१४१ एकड़ जमीन खेतिहर मजदूरों को बांट दी। हैदराबाद राज्य ने १८ से २०० एकड़ जोत कायम की। पश्चिम बंगाल ने २५ एकड़ आसाम ने ५० एकड़ जमीन एक जोत की कायम की। केरल में कम्युनिस्ट सरकार ने १५ से ३० एकड़ जमीन का न्यूनतम जोत कायम किया। पंजाब, राजस्थान और उड़ीसा ने भी जोत कायम करने के विधान स्वीकृत किए हैं। उत्तर प्रदेश में खेतिहर किसान १६ प्र० श० हैं। इसलिए इस प्रदेश में ५० एकड़ के अनुपात में न्यूनतम जोत कायम की जा रही है। इतने पर भी ५७ लाख एकड़ जमीन उपलब्ध हो सकेगी, जिससे ८ लाख भूमिहीन खेतिहर मजदूरों का नया जीवन निर्माण होगा।

★

जाएगी।

पुरानी बीमा कम्पनियों की यूनिटें

पुरानी बीमा कम्पनियों की यूनिटों की पालिसियों को लाइफ इंश्योरेन्स कार्पोरेशन की पालिसियों में परिवर्तित करने का काम भी अभी हमारे सामने है। ३३ क्षेत्रीय कार्यालयों द्वारा यूनिटों के परिवर्तन का कार्य हो रहा है। अनुमान है कि इस कार्य के पूरा होने में अभी दो वर्ष और लग जाएंगे क्योंकि लगभग ५० लाख पालिसियों के परिवर्तन का कार्य हमारे सामने है और हजारों पालिसियों का परिवर्तन किया जा चुका है। विभिन्न यूनिटों की सभी विदेशी पालिसियां परिवर्तित की जा रही हैं।

कार्यालयों के लिए भवन

कार्पोरेशन के हरेक क्षेत्रीय कार्यालय को स्वतन्त्र कम्पनियों के हेड आफिस का कार्य करना पड़ता है। बहुत से स्थान ऐसे भी हैं जहां कम्पनियों के हेड आफिस नहीं थे और अब कार्पोरेशन के क्षेत्रीय कार्यालय हैं। ऐसे स्थानों पर कार्यालय भवनों की बहुत बड़ी कठिनाई उत्पन्न हो गई है। इस कठिनाई को दूर करने के लिए कार्पोरेशन ने कार्यालयों के लिए भवन बनाने की एक योजना बनाई है। जब तक इस योजना के अनुसार कार्यालयों के भवन नहीं बन जाते, तब तक यूनिटों की पालिसियों के परिवर्तन का कार्य भी वांछित गति से नहीं चल पाएगा।

संगठन की समस्याएं

पिछले एक वर्ष में कार्पोरेशन को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है। जनता की ओर से तरह-तरह की पूछताछ की गई। इसके लिए कार्पोरेशन ने पर्याप्त प्रचार किया और व्यवसाय के विषय में जानकारी जनता तक पहुँचाई। इसके अतिरिक्त कार्पोरेशन की उच्च सेवाओं पर विचार किया गया। हर्ष का विषय है कि उच्च सेवाओं का मामला लगभग ३ महीने पहिले अन्तिम रूप से निश्चित हो गया है।

कार्पोरेशन के कर्मचारियों द्वारा वर्ष में दो मास के वेतन के बराबर बोनस की मांग की गई थी। इस विषय में साधारणतया तो सरकार की नीति यह है कि जिन व्यवसायों का राष्ट्रीयकरण किया गया है, उनके कर्मचारियों को बोनस के रूप में कुछ नहीं दिया जाएगा, फिर भी कार्पोरेशन ने अपने कर्मचारियों के लिए निःशुल्क इंश्योरेन्स की एक योजना बनाई है और उन्हें प्रति वर्ष एक मुश्त कुछ देने का भी निश्चय किया है। इसके अतिरिक्त कर्मचारियों के रहने के मकानों के लिए लगभग १२ करोड़ रुपये की एक योजना बनाई है। आने वाले वर्षों में कार्पोरेशन की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होने पर कर्मचारियों की बोनस की मांग पर भी विचार किया जा सकेगा।

आर्थिक स्थिति

जहां तक आर्थिक स्थिति का प्रश्न है पहिले वर्ष में प्रीमियम द्वारा कार्पोरेशन की होने वाली आय ४.६ करोड़ थी, दूसरे वर्ष के पहिले ग्यारह महीनों में ही यह आय ५.४ करोड़ रुपया हो गई। प्रतिमास भुगताए जाने वाले क्लेमों की संख्या भी १.३ करोड़ के स्थान पर दूसरे वर्ष के ग्यारह महीनों में १.४ करोड़ रुपये हो गई। पहिले वर्ष में व्यवसाय में लगाने के लिये अतिरिक्त धन राशि ३०.२ करोड़ रु० हो गई है। कार्पोरेशन ने अपने कार्य के विकास लिए धन लगाने की एक निश्चित नीति अपनाई है और अपनी सिफारिशें सरकार के पास भेज दी हैं। इस समय कार्पोरेशन द्वारा व्यवसाय में लगाई गई धन राशि ३८३.३ करोड़ रुपये के आसपास है। इस प्रकार कार्पोरेशन की आर्थिक स्थिति दिन-प्रतिदिन सुदृढ़ होती जा रही है।

भविष्य की योजनायें

अब तक मैंने कार्पोरेशन की आज की समस्याओं और उनके समाधान के विषय में कहा। मैं अनुभव करता हूं कि जनता के विभिन्न वर्गों के लिए बीमे की सुविधाएं सुलभ करने के लिए अभी हमें और गम्भीरता पूर्वक योजना बनाकर काम करना होगा।

अभी पिछले दिनों हमने कार्पोरेशन के फील्ड आफिसरों और एजेंटों के लिए एक ट्रेनिंग आरम्भ की है, जिससे कि वे पालिसी होल्डरों को अधिक सुविधापूर्ण सेवाएं दे सकें। हम अपने इनवेस्टमेंट डिपार्टमेंट में खोज और सांख्यिकी उपविभाग भी आरम्भ करने जा रहे हैं। इस विभाग के लिए तैयारियां की जा रही हैं। आने वाले वर्षों में कार्पोरेशन के कुछ अधिकारी विश्राम प्राप्त करने वाले हैं

इसलिए हमें ऐसे कुशल अधिकारियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था करनी है, जो विश्राम पाने वाले अधिकारियों का काम अच्छी तरह सम्हाल सकें।

स्वर्णिम भविष्य की सम्भावनायें

भारत के बीमा व्यवसाय में १९२९ और १९४१ के वर्षों में बहुत निराशाजनक प्रगति हुई थी। १९४१ से व्यवसाय में वृद्धि होनी आरम्भ हुई और १९५० तक यह वृद्धि ३०० करोड़ रुपये से भी कम के स्थान पर लगभग ८०० करोड़ तक पहुँच गई। १९५० के बाद व्यवसाय में प्रगति का एक और मोड़ आता है और आशा करनी चाहिये कि भविष्य में व्यवसाय और भी द्रुतगति से प्रगति करेगा। हम प्रयत्न कर रहे हैं कि पालिसी होल्डरों को अधिक से अधिक सुविधाएं देने के लिए प्रचुर मात्रा में कुशल कार्यकर्ता रखें।

देश की जनसंख्या के विभिन्न वर्गों के लिए बीमे की भिन्न-भिन्न प्रकार की योजनाओं की आवश्यकता के विषय में मैंने पहिले भी संकेत किया है। इस विषय में कार्पोरेशन द्वारा गत वर्ष आरम्भ की गई 'जनता की योजना' बहुत लाभदायक सिद्ध हो रही है। यह योजना कारखानों में काम करने वाले कर्मचारियों के लिए विशेष रूप से उपयोगी सिद्ध हुई है।

विदेश में कार्पोरेशन का व्यवसाय

भारत के बाहर विभिन्न १० देशों में कार्पोरेशन ने अपना व्यवसाय फैलाया हुआ है और ६ करोड़ रुपये वार्षिक की आय विदेशी व्यवसाय से हो रही है। इन देशों में हमें दूसरी प्राइवेट बीमा कम्पनियों के साथ प्रतियोगी के रूप में कार्य करना होता है। निश्चय ही विदेशों में और भारत में व्यवसाय को आगे बढ़ाने की हमारी कार्य प्रणालियों में अन्तर है।

गत दिनों में पूर्वी अफ्रीका की यात्रा पर गया और वहां से लौटने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि हमें विदेशों में अपने व्यवसाय को दृढ़ करने के लिए एक केन्द्रीय विदेश कार्यालय की तुरन्त आवश्यकता है। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए प्रयत्न किये जा रहे हैं और आशा है कि शीघ्र ही कार्यालय स्थापित हो सकेगा।

——

विगत १०० वर्षों में भारतीय कृषि

श्री ओमप्रकाश तोषनीवाल, एम० काम०

सम्पदा के गतांक में श्री तोषनीवाल ने १८५० से पहिले के भारतीय कृषि के विकास को पृष्ठभूमि में रखकर १८५० से १९३९ तक के कृषि के विकास का क्रमिक अध्ययन प्रस्तुत किया था। इस अंक में १९३९ से प्रथम पंचवर्षीय योजनाकाल तक का अध्ययन लें।

सन् १९३९ से सन् १९४७ तक

सन् १९३९ में द्वितीय विश्व युद्ध छिड़ गया और सरकार की सारी शक्ति युद्ध संचालन में लग गई। इधर कांग्रेसी सरकारों ने स्तीफा दे दिया। अतः कृषि की समस्याओं पर से ध्यान हट गया। लेकिन युद्ध के कारण कृषि की कीमतों पर एक स्वस्थ्यकर प्रभाव पड़ा। युद्ध के प्रथम कुछ महीनों में ही ऐसा अनुभव किया जाने लगा कि आर्थिक मन्दी के बादल जो अनेक वर्षों से भारतीय कृषि पर छाये हुए थे, अब पूर्ण रूप से फट चुके हैं। कृषक प्रसन्न दिखाई देते थे क्योंकि उनके उत्पादन का उचित मूल्य उन्हें मिल जाता था। उनके हाथ में पैसा होने लगा। वे अपने ऋण भार को भी कम करने लगे। कृषि में उनका उत्साह बढ़ने लगा और वे व्यापारिक फसलों को प्राथमिकता देने लगे। परिणाम स्वरूप देश में खाद्यान्न का अभाव भयंकर स्वरूप लेकर उपस्थित हुआ। लेकिन कृषकों की आर्थिक स्थिति कुछ सुधरी-सी लगती थी। ये परिस्थितियां केवल बढ़े हुए मूल्यों के कारण थी। मूल्य अंक जो अगस्त १९३९ में १०० था वह १९४३-४४ में २६८.७ और १९४७-४८ में ३२६.९ पहुँच गया। कृषकों की स्थिति में ये तात्कालिक प्रभाव थे, कानूनी दृष्टि से भूमि पर उनके स्वामित्व की स्थिति सुधरी हो अथवा कृषि के संचालन, व्यवस्था, पैदावार आदि में कुछ अन्तर आया हो, ऐसी बात नहीं थी। सन् १९३९-४० में जो कृषि-क्षेत्र भूमि २३७ मि० एकड़ थी वह १९४८-४९ में बढ़कर २४४ मि० एकड़ हो गई, लेकिन फिर भी खाद्य पदार्थ और व्यापारिक फसलों दोनों में ही उत्पादन फी एकड़ कम हो रहा था।

इससे स्पष्ट हो जाता है कि कृषकों की आर्थिक दशा ऊंची कीमतों के कारण अच्छी थी, न कि किसी प्रकार की कृषि व्यवस्था की अच्छाईयों के कारण।

युद्ध समाप्त हुआ और जैसा कि स्वाभाविक ही था कीमतों ने मन्दी का रुख अपनाया। साथ ही युद्ध की आवश्यकताएं शिथिल पड़ गईं और परिणामस्वरूप कृषि में वही पूर्वगत ढिलाई दृष्टिगोचर होने लगी। सन् १९४५ ई० में आम चुनाव हुए और देश के प्रत्येक प्रान्त में (बंगाल, पंजाब और सिन्ध को छोड़कर) कांग्रेस मन्त्री-मंडल स्थापित हुए। अपने चुनाव घोषणा पत्र में दिये गये वचन "काश्तकार तथा सरकार के बीच मध्यस्थों की समाप्ति करना" के अनुसार लगभग सभी प्रान्तों की सरकारों ने इस दिशा में कदम उठाए। कांग्रेस की यह मान्यता थी कि जमींदार गाड़ी के पांचवें पहिये के समान है—अर्थात् वह केवल निरर्थक ही नहीं वरन् अड़ंगा लगाने वाला और जमीन पर एक अनावश्यक बोझा है, अतः इसकी समाप्ति सबसे पहले करनी है। इसके शीघ्र ही बाद देश स्वतन्त्र हुआ लेकिन साथ ही देश का विभाजन हुआ और इसके कारण देश के कर्णधारों के सामने अनेक राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक समस्यायें एक साथ मुंह बाये खड़ी हो गयीं।

देश-विभाजन का कृषि पर प्रभाव

सन् १९४७ ई० में विभाजन के फलस्वरूप देश को तीन बड़ी समस्याओं का सामना करना पड़ा जिनमें से एक खाद्य पदार्थ और उद्योगों के लिए कच्चे माल की कमी का

होना था। देश के बंटवारे में २३ प्रतिशत क्षेत्रफल और १६ प्रतिशत जनसंख्या पाकिस्तान में चली गयी। यह आंकड़े स्वतः इस बात को स्पष्ट कर रहे हैं कि पाकिस्तान में जितनी जनसंख्या गई उससे अधिक भूमि चली गयी। इतना ही नहीं पाकिस्तान में जाने वाली कृषि योग्य भूमि वह थी जो भारत की सबसे अधिक उपजाऊ भूमियोंमें मानी जाती थी। पंजाब का उत्तम उपजाऊ क्षेत्र पाकिस्तान में गया। इससे अन्न और कच्चे माल का अभाव और भी बढ़ गया। अविभाजित भारत में चावल, गेहूं, अन्न, दालें और चने की उत्पत्ति जो क्रमशः २८.४ मि० टन, ६.३ मि० टन, २०.४ मि० टन और ३.८ मि० टन थी, विभाजित भारत में घटकर क्रमशः २१.७ मि० टन, ४.६७ मि० टन, १५.६ मि० टन और ३.६ मि० टन रह गयी। इसका तात्पर्य यह था कि भारत को अपनी ८१ प्रतिशत जनसंख्या का भरण-पोषण इस घटे उत्पादन से करना था। दूसरी ओर देश में साम्प्रदायिक झगड़ों के कारण सभी क्षेत्रों में उत्पादन वैसे ही कम हो रहा था। ऐसी परिस्थितियों में राष्ट्र सरकार खाद्य समस्या के हल के लिए किन्हीं दीर्घकालीन योजनाओं को नहीं अपना सकती थी। अतः देश का खाद्य संकट विदेशों से अन्न मंगाकर दूर किया गया और विभाजन के बाद कुछ महीनों के अन्दर ही खाद्य संकट पर काबू पा लिया गया। सरकार भारतीय कृषि की व्यवस्था से पूर्णतया अवगत थी और सचेत थी कि जब तक कृषि की अवस्था में सुधार के लिए तत्कालीन योजनाओं के साथ-साथ दीर्घकालीन योजनाएं नहीं अपनायी जायेंगी तब तक शताब्दियों से जर्जरित भारतीय कृषि पनप नहीं सकेगी। अतः खाद्य समस्या के क्षणिक सुधार के बाद ही तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष ने नवम्बर १९४७ में पं० नेहरू की अध्यक्षता में एक आर्थिक कार्यक्रम कमेटी इन्हीं प्रश्नों पर विचार करने के लिए बनायी। कमेटी ने अपनी रिपोर्ट में कहा कि कांग्रेस की भूमि नीति के निम्न उद्देश्य होने चाहिए।

(१) राज्य और किसानों के बीच के मध्यस्थों का खात्मा।

(२) सहकारी संस्थाओं की स्थापना।

(३) कृषि उपज की अच्छी कीमतें और खेतीहर मजदूरों को अच्छी वेतन।

इसके बाद दिसम्बर १९४७ में कांग्रेस अध्यक्ष डा० राजेन्द्र प्रसाद ने कृषि समस्याओं पर विचार विमर्श के लिए दिल्ली में सभी प्रांतों के माल मंत्रियों का एक सम्मेलन बुलाया।

सम्मेलन में प्रांतों की जमींदारी उन्मूलन नीति की सूक्ष्म समीक्षा की गयी। सम्मेलन इस निर्णय पर आया कि चूंकि विभिन्न प्रांतों में जमींदारी-प्रथा की स्थापना विभिन्न प्रकार से और विभिन्न परिस्थितियों में हुई है, इसलिए जमींदारी उन्मूलन के लिये दिये जाने वाले मुआवजे की दर में समानता लाना कठिन है और उसके विषय में प्रत्येक प्रांत को अपनी स्वतन्त्र नीति कार्यान्वित करने का अधिकार होना चाहिए। इसके साथ ही सम्मेलन का यह भी सुझाव था कि जमींदारी उन्मूलन के बाद जो नवीन भूमि व्यवस्था स्थापित हो उसमें सारे भारत में समानता होना संभव एवं वांछनीय है। अतः सम्मेलन ने राष्ट्रपति से अनुरोध किया कि वे एक कमेटी बनाकर उसे जमींदारी उन्मूलन के बाद आवश्यक भूमि सुधारों पर रिपोर्ट देने का कार्य सौंपे। अतः सन् १९४८ में राष्ट्रपति ने डा० जोसेफ कार्नीलियस कुमारप्पा की अध्यक्षता में एक कृषि सुधार कमेटी नियुक्त की जिसने सन् १९५० ई० में एक प्रशंसनीय रिपोर्ट प्रकाशित की। कमेटी की यह पक्की राय थी कि कृषि में मध्यस्थों को कोई स्थान नहीं है। अतः कमेटी ने यह सिफारिश की कि भविष्य में भूमि का लगान पर उठाना समाप्त कर दिया जाय। विधवाओं, नाबालिगों और शरीर से अयोग्य लोगों को भूमि लगान पर उठाने का अधिकार रहे। कमेटी ने सहकारी खेती, अधिकतम भूमि की मर्यादा आदि अनेक महत्वपूर्ण बातों की भी सिफारिशें कीं। कृषि की दिशा में यह सर्वप्रथम, महत्वपूर्ण और सारगर्भित जांच थी। इसी के आधार पर कृषि समस्याओं के हल के हेतु और उसकी प्रगति के लिये राष्ट्रीय योजनाओं में कार्यक्रम निर्धारित किये जा रहे हैं।

पंचवर्षीय योजनायें

प्रथम पंचवर्षीय योजना ऐसे काल में बनी थी जब देश अन्न संकट से ग्रस्त था। देश में कच्चे माल की कमी थी। अतः योजना में कृषि को प्राथमिकता दी गयी थी। योजना

में खर्च होने वाली राशि का ४४.६ प्रतिशत खेती, सिंचाई आदि पर व्यय करने के लिए रखा गया था। इस क्षेत्र में योजना के मुख्य उद्देश्यों में विभाजन के कारण हुए दो करोड़ एकड़ जमीन के नुकसान का पूरा करना, जूट व सूती कारखानों के लिये कच्चे माल के आयात की आवश्यकताओं को कम करना और अनाज, दालों व अन्य सहायक खाद्य पदार्थों की कमी को पहले पूरा करना और फिर उनका उत्पादन इस हद तक बढ़ाना कि वह देश की बढ़ती आवश्यकता के साथ चल सकें। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए योजना में देश की प्रमुख कृषि समस्याओं पर एक व्यापक और बहुमुखी जिहाद बोलने का सुझाव दिया गया था। इसमें खेती के क्षेत्र में सामग्री व मानवीय साधन सम्पत्ति का एक साथ विकास करना शामिल था। इसके अन्तर्गत किसानों की सहकारी भावना को उभारना व प्रोत्साहन देना, जिससे वे अपनी उन्नति के लिये अपने साधनों को एकत्र और संचित कर सकें, भी था।

कृषि के पुनः संगठन के लिए ग्राम परिषदों के निर्देशन और निरीक्षण में निम्नलिखित प्रभावशाली और उपयुक्त सुझाव दिये गये थे :—

खेती के सहकारी तरीकों को अपनाना, सहकारी विक्रय व्यवस्था करना, अधिक अच्छा श्रेणीकरण व परिवहन, आसानी से और सस्ते ब्याज पर ऋण की व्यवस्था, पैदावार की अच्छी कीमत दिलाना, अधिक अच्छे बीजों की, खाद्य व यांत्रिक औजारों की खरीद, वितरण व उन्हें किराये पर दिलाने के लिए बहुउद्देश्यीय सहकारी संस्थाओं की स्थापना और कृषि की अधिकांश वित्तीय समस्याओं को हल करने के लिए सहकारी दृष्टिकोण को अपनाना आदि थे।

सौभाग्य से प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि सम्बन्धित निर्धारित लक्ष्य पूरे हो गये। योजना की सबसे प्रमुख समस्या हमारी खाद्य समस्या का निवारण रहा। सन् १९४९-५० में देश में खाद्यान्नों की कुल पैदावार ५ करोड़ ४० लाख टन थी।

पांच वर्षों में इस पैदावार में ७६ लाख टन की वृद्धि करने का लक्ष्य रखा गया था। सन् १९५३-५४ में ही यह पैदावार बढ़कर ६ करोड़ ८५ लाख टन हो गई थी। सिंचाई के क्षेत्र में पिछले पांच वर्षों में एक लाख ७० हजार एकड़ अतिरिक्त भूमि में सिंचाई होने लगी थी। अमोनियम सल्फेट की खपत दुगनी से अधिक हो गई, योजना के पहले इसकी खपत दो लाख ७५ हजार टन थी और योजना के प्रारम्भ के चार वर्ष बाद ६ लाख १० हजार टन हो गई। योजना से पूर्व ३२ करोड़ ६० लाख एकड़ भूमि में खेती होती थी जबकि १९५४-५५ में ३५ करोड़ २० लाख एकड़ भूमि में खेती होने लगी। अनाज की खेती का क्षेत्र २५ करोड़ ७० लाख एकड़ से २७ करोड़ २० लाख एकड़ हो गया और व्यवसायिक फसलों का क्षेत्र ४ करोड़ ९० लाख एकड़ से ६ करोड़ एकड़ हो गया। पहली योजना में कृषि उत्पादन में वृद्धि की जो परिकल्पना की गई थी और साथ ही कृषि उत्पादन की जो गति रही है वह निम्न तालिकाओं से देखी जा सकती है।

योजना में कृषि उत्पादन की जो परिकल्पना की गई थी वह निम्न प्रकार थी—

जिन्स	इकाई	आधार वर्ष	अतिरिक्त उत्पादन का लक्ष्य	प्रतिशत वृद्धि
खाद्यान्न	लाख टन	५४०	७६	१४
मुख्य तिलहन	लाख टन	५१	४	८
गन्ना (गुड़)	लाख टन	५६	७	१३
कपास	लाख गांठ	२९	१३	४५
पटसन	लाख गांठ	३३	२१	६४

योजना में कृषि उत्पादन की गति निम्नांकित रही है—

जिन्स	इकाई	१९५१-५२	१९५२-५३	१९५३-५४	१९५४-५५	१९५५-५६ अनुमान
अनाज	लाख २ टन	४२९	४९२	५८३	५५३	५५०
दालें	लाख ८ टन	८३	९१	१०४	१०५	१००
कुल खाद्यान्न	लाख टन	५१२	५८३	६८७	६५८	६५०
मुख्य तिलहत	लाख टन	४९	४७	५३	५९	५५
गन्ना (गुड़)	लाख टन	६१	५०	४४	५५	५८
कपास	लाख गांठ	३१	३२	३९	४३	४२
पटसन	लाख गांठ	४७	४६	३१	२९	४०

रेलों के यातायात में वृद्धि

श्री के० बी० माथुर, सदस्य, यातायात रेलवे मण्डल

देश के विकास में रेलों का महत्वपूर्ण योग रहा है। जैसे-जैसे राष्ट्र प्रगति कर रहा है, विभिन्न प्रकार से उत्पादन बढ़ रहे हैं और उत्पादनों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने के लिये यातायात के साधनों की आवश्यकता बढ़ रही है। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए रेलवे यातायात दिन प्रतिदिन वृद्धि पर है।

रेलों ने हमारे देश के विकास में जो हाथ बटाया है, वह किसी से छिपा नहीं है। बिना रेलों के औद्योगीकरण सम्भव न हो पाता और केवल खेती पर निर्भर रह कर हम अपने देश का विकास न कर पाते।

पंचवर्षीय योजनाओं में रेलों के विकास पर काफी ध्यान दिया गया है। दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक माल गाड़ियों की संख्या पहली योजना के अन्तिम वर्ष की संख्या से डेढ़गुनी कर देने का लक्ष्य है। पहली और दूसरी पंचवर्षीय योजनाओं में मालगाड़ियों की संख्या में लगभग ८४ प्रतिशत की वृद्धि का अनुमान है। इसी तरह यात्री गाड़ियों में भी हर साल ३ प्रतिशत की वृद्धि होने का अनुमान है। दूसरी योजना के पहले दो सालों में औसतन ५ प्रतिशत प्रतिवर्ष के हिसाब से यात्री गाड़ियों की संख्या बढ़ी।

बम्बई और कलकत्ता जैसे उद्योग-प्रधान नगरों में रेलों का काफी विस्तार हुआ है। कोयले और लोहे के कारखानों में कच्चा माल पहुँचाने के लिए नई-नई लाइनें बनाई गई हैं। इस्पात के नये कारखाने, बंगाल, बिहार और मध्यप्रदेश में खुल रहे हैं। पहली योजना में निजी क्षेत्र में इस्पात के तीन कारखाने खोले गये हैं और दूसरी योजना में तीन और कारखानों के खुलने की आशा है। इस तरह इस्पात का उत्पादन भी पहली योजना की अपेक्षा चौगुना बढ़ जाएगा। यह सब कच्चे माल जैसे कोयला चूना आदि की पहुँच पर निर्भर है। अतः इन क्षेत्रों में रेलों का विकास अनिवार्य है।

इस्पात और कोयले का उत्पादन बढ़ा

दस लाख टन इस्पात बनाने के लिए ५० लाख टन कच्चे माल को कारखाने तक लाना पड़ता है। साल भर तक इसे पहुँचाने के लिए प्रतिदिन १२५ वैगन माल कारखाने तक पहुँचाना होगा। इस तरह भिलाई, दुर्गापुर और राउरकेला के कारखानों के लिए हमें प्रतिदिन ६२५ माल के डिब्बों की जरूरत पड़ेगी। तीन और नये कारखानों के खुल जाने पर कच्चे और तैयार माल को ले जाने के लिए हमें तीन साढ़े तीन हजार माल गाड़ी के डिब्बों की हर रोज जरूरत पड़ेगी। यही स्थिति कोयले की भी है। दूसरे आयोजन में कोयले के उत्पादन का लक्ष्य ५ करोड़ ६० लाख टन रखा गया है। इसका अधिकांश बंगाल और बिहार की खानों से निकलेगा। रेलों को तीन-चार साल के भीतर ही इसके यातायात की व्यवस्था कर लेनी है। अब प्रश्न यह है कि हम इसे कैसे करें? न तो हम इतने डिब्बे ही खरीद सकते हैं और न इन्जन ही और न एकाएक आज से १० गुनी ज्यादा गाड़ियां ही चला सकते हैं। तब इस समस्या को हल करने का क्या उपाय है?

आठ पहियों वाले माल के डिब्बे

माल गाड़ियों में आज तक चार पहियों वाले खुले

[सम्पदा

योजना में जहां एक ओर हमारी खाद्य समस्या के हल को बल मिला है वहां दूसरी ओर कृषकों की अवस्था में भी पर्याप्त सुधार हुआ है। उनकी आर्थिक स्थिति पहले से सुदृढ़ है, भूमि पर अपने स्वामित्व पाने के कारण वे खेती में पूरी रुचि ले रहे हैं। बड़े-बूढ़े कृषक तक खेती की नई व्यवस्था को समझने के प्रयत्न में लगे दिखाई देते हैं। पशुओं की नस्ल को सुधारने के लिये यही कृषक कृत्रिम गर्भाधान के लिये जाते हैं। विलायतीखाद, जिसको कृषक पहले प्रयोग में लाना धर्म विरुद्ध समझते थे, अब प्रसन्नता से प्रयोग करते हैं। ये सभी चीजें इस बात की द्योतक हैं कि भारतीय कृषक के जीवन में काफी परिवर्तन हुआ है जिसका स्वास्थ्यकर प्रभाव कृषि पर पड़ा है।

——

और ढके हुए डिब्बे काम में लाये जाते रहे हैं। इनका वजन १० टन तक होता है और ये २० से २२ टन तक का बोझ ले जा सकते हैं। आज तक की बनी हुई रेल-लाइनें और पुल भी २० टन तक का ही भार सहन कर सकते हैं। बड़े डिब्बे बनाने के लिए इन्हें भी बदलना होगा, जो सरल काम नहीं है। अब ४ धुरे के ८ पहिये वाले डिब्बे बनाने का सुझाव दिया गया है। हमारे डिजाइनरों ने काफी जांच-पड़ताल के बाद यह बताया है कि २५ टन वजन का ऐसा डिब्बा बनाया जा सकता है। यह ९९ टन तक का बोझ उठा सकेगा। अमेरिका, कनाडा, रूस आदि देशों में इस तरह के डिब्बे बनाये गये हैं, और वे ठीक बोझ भी ढो रहे हैं।

बिजली से चलने वाली रेलगाड़ियां

भाप की अपेक्षा बिजली अथवा डिजल तेल से चलने वाली गाड़ियां कम खर्च की होती हैं, तेज चलती हैं और ज्यादा भार भी उठा सकती हैं। डिजल गाड़ियां तभी चलाई जा सकती हैं, जबकि अपने यहां डिजल तेल पर्याप्त हो।

जहां तक बिजली से चलने वाली गाड़ियों का सवाल है, निश्चय ही हम इस दिशा में प्रगति कर सकते हैं। हमारे यहां बिजली पैदा करने के बड़े-बड़े शक्तिशाली केन्द्र खोले जा रहे हैं। इसके साथ ही अणु-शक्ति का भी विकास हो रहा है। भविष्य में हम इससे भी काम ले सकेंगे।

अभी हमें अपनी रेल-लाइनों पर आने-जाने वाली गाड़ियों की संख्या बढ़ानी है। ऐसा करने के लिए हमें बहुत से नये स्टेशन बनाने होंगे, जहां गाड़ियां एक-दूसरे को पार कर सकें। स्टेशनों पर लाइनों की संख्या भी बढ़ानी होगी, जिससे रेलें अपनी-अपनी लाइन पर आसानी से जा सकें और सिगनल देने की वर्तमान प्रणाली में भी सुधार करना होगा।

अब हमने लाइनों को दोहरा करना भी शुरू कर दिया है। जबकि इकहरी लाइन पर औसतन ३२ से ३४ गाड़ियां ही प्रतिदिन आ जा सकती हैं। जगह-जगह दोहरा कर देने पर ४५ गाड़ियां और बाद में पूरी तरह दोहरा कर देने पर औसतन ८० गाड़ियां प्रतिदिन आ-जा सकती हैं। इस तरह हम तेज और धीमी गाड़ियों को आसानी से चला सकते हैं। बम्बई और कलकत्ता जैसे शहरों में भारी यातायात के लिए पांच-पांच छः-छः लाइनें बिछाई गई हैं। स्वचालित सिगनलों की व्यवस्था भी बहुत जरूरी है।

फिलहाल धनबाद से मुगलसराय तक और आसनसोल से राउरकेला, टाटा नगर और बड़ाजमदा के लिए डीजिल गाड़ियों की व्यवस्था की जा रही है। इसके लिए अमेरिका से १०० इन्जन मंगाये गये हैं, जिनमें से २० आ गये हैं और काम कर रहे हैं। बाद में इन इन्जनों को बिजली से चलाया जाएगा।

बिजली और डिजल से चलने वाली गाड़ियों के लिए हमें नये डिजाइन के डिब्बे बनाने होंगे। जिसमें एक डिब्बे को दूसरे से जोड़ने के लिए आदमी को कुण्डे न मिलाने पड़ेंगे, बल्कि स्वचालित व्यवस्था करनी होगी, जिससे एक डिब्बा दूसरे से मिलते ही जुड़ जाए। अन्य देशों में ऐसे डिब्बे बनाए गए हैं।

मशीनों का यातायात

मशीनों को लाने-लेजाने के लिए खुले डिब्बे बनाये जा रहे हैं। दूसरी योजना में जो नये डिब्बे बनाये जाएंगे, उनमें ७० प्रतिशत करीब ऐसे ही होंगे। बाद में ढक्कनदार डिब्बे बनाने का भी विचार है। मुगलसराय की तरह बड़े-बड़े रेलवे-यार्ड बनाने का भी विचार है, जहां से गाड़ियां जोड़ी जा सकें और औद्योगिक माल को लेकर बड़े-बड़े कारखानों को भेजी जा सकें।

डिब्बों को जोड़कर गाड़ी बनाने के लिए अभी डिब्बे जोर से ढकेले जाते हैं, इसे हैंपिंग कहते हैं। इससे कभी-कभी डिब्बे जोर से टकराते हैं तो कभी अटक जाते हैं। अब बिजली की मशीन से हैंपिंग की जाती है। मुगलसराय में बिजली का हम्प लगाया जा रहा है। विदेशी-मुद्रा मिलने पर और रेलवे यार्डों में भी यह लगाया जाएगा। इससे गाड़ियां पहले से दुगुनी तेजी से जोड़ी जा सकेंगी।

डिब्बों और इंजनों का निर्माण

डिब्बों और इन्जनों के निर्माण में भी हम आत्म-निर्भर होते जा रहे हैं। चित्तरंजन में रेलवे इन्जन बनानेका कारखाना १९५० में स्थापित किया गया। १९५७ के अंत

(शेष पृष्ठ ५७३ पर)
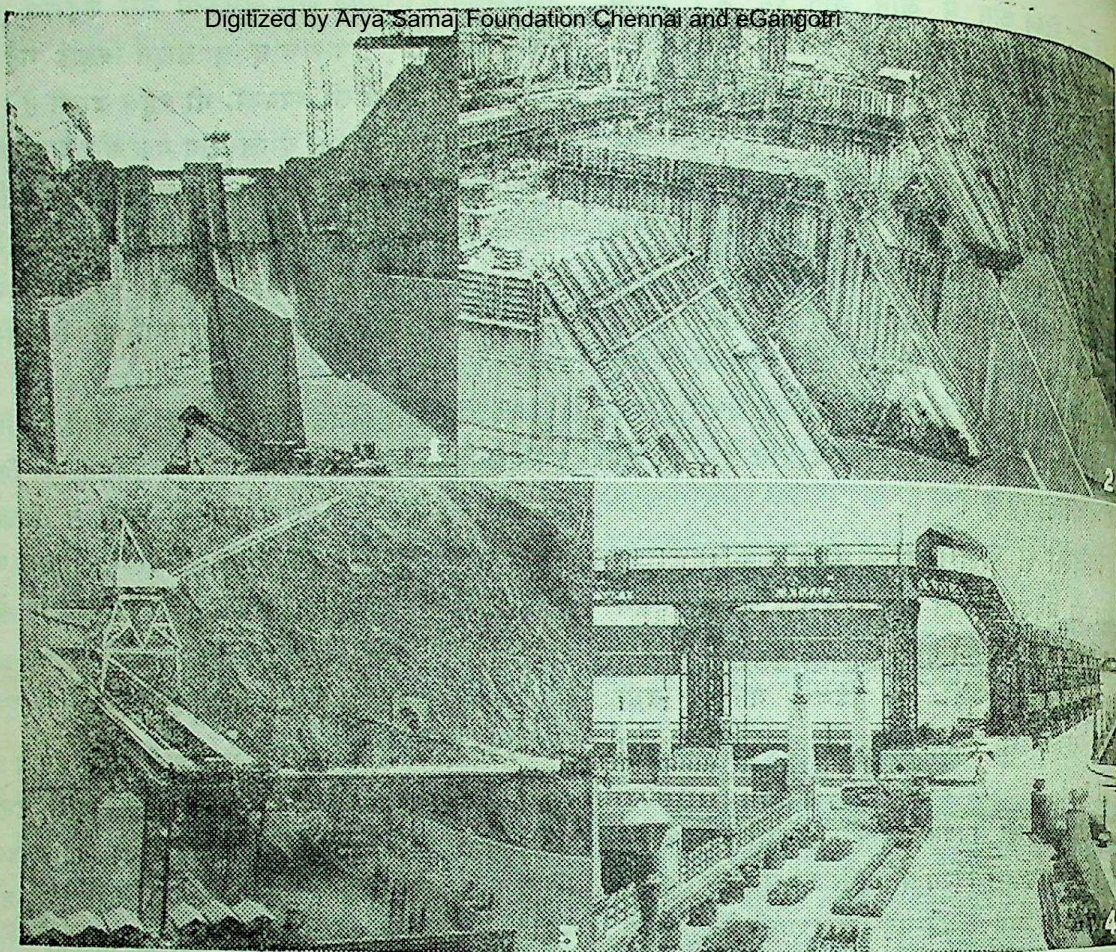
भारत के नये तीर्थों में प्रमुख : भाकड़ा नंगल

पंजाब की इस वर्ष की सबसे बड़ी योजना भाकड़ा नंगल है, पर वस्तुतः यह योजना पंजाब की ही नहीं समस्त देश की सबसे बड़ी बहुमुखी योजना है । इसके मुख्य अंग निम्नलिखित हैं :

(१) (क) भाकड़ा बांध, ७४० फुट ऊंचा
(ख) बांध के सामने दो बिजलीघर
(ग) पानी के लिए ५० फुट व्यास वाली कंकरीट की दो सुरंगें

(२) नंगल बांध, ९० फुट ऊंचा

(३) बिजली के लिए नंगल नहर, ४० मील लम्बी

(४) नहर पर गंगुवाल और कोटला में दो बिजलीघर

(५) भाकड़ा सिंचाई नहरें और उनसे निकाली गयी अन्य छोटी नहरें

(६) रोपड़ वर्क्स और सरहिंद नहर का पुनर्निर्माण

(७) बिष्ट दोआब नहर, और

(८) पारेषण प्रणाली (ट्रांसमिशन सिस्टम)

पहली पंचवर्षीय आयोजना में सुरंगें, नंगल बांध, नंगल बिजली नहर, भाकड़ा नहरों, गंगुवाल में नंगल

बिजलीघर, रोपड़ और सरहिंद का पुनर्निर्माण और बिष्ट दोआब नहरों का काम पूरा हो चुका है।

कोटला में नंगल बिजलीघर १९५६ में चालू हो गया। भाकड़ा बांध पर कंकरीट डालने का काम नवम्बर १९५६ में शुरू किया गया था। आशा है कि १९५७-५८ के अंत तक कंकरीट डालने का ५० प्रतिशत काम पूरा हो जाएगा। १९५८ के कार्यक्रम के अनुसार बांध पर १२,३९,००० घन गज कंकरीट डाला जाएगा। बांध की बायीं ओर का बिजलीघर का इन्जीनियरी संबंधी काम सितम्बर १९५८ के अन्त तक पूरा हो जाएगा।

पहली आयोजना में भाकड़ा-नंगल योजना के लिए ७७ करोड़ ५० लाख रु० रखे गये थे। १९५५-५६ के अन्त तक इस योजना पर १ अरब १३ करोड़ ६६ लाख रु० खर्च हुए। दूसरी आयोजना में इसके लिए ५३ करोड़ १२ लाख रु० रखे गये हैं। जुलाई १९५४ में खरीफ की फसल के समय सिंचाई शुरू हो गयी थी। १९५६-५७ में भाकड़ा नहरों से पंजाब और राजस्थान की १५ लाख ८ हजार २९१ एकड़ जमीन में सिंचाई हुई। ये नहरें ६६ लाख ७० हजार एकड़ जमीन में फैली हुई हैं। इसमें से ५८ लाख एकड़ जमीन खेती के योग्य है, परन्तु नहरों से वास्तव में केवल ३६ लाख एकड़ जमीन में सिंचाई की जाएगी। इसके अलावा ३७ लाख एकड़ जमीन में सिंचाई के पानी में वृद्धि की जाएगी। अनुमान है कि सिंचाई की योजना पूरी होने पर उस क्षेत्र में ८ लाख ५० हजार गांठ कपास, १ लाख ५० हजार टन चीनी और ३० हजार टन दाल तथा तेलहन अधिक पैदा होगा।

इस समय गंगुवाल और कोटला बिजलीघरों में बिजली तैयार करने वाले कारखानों की क्षमता ९६ हजार किलोवाट है। अब प्रत्येक बिजलीघर में २४-२४ हजार किलोवाट बिजली तैयार करने वाली और मशीनें लगाने का विचार है। भाकड़ा के बायीं ओर के बिजलीघर में ९०-९० हजार किलोवाट बिजली तैयार करने वाली ५ मशीनें लगेंगी। भाकड़ा बांध के दायीं ओर भी बिजलीघर बनाने की व्यवस्था है।

★

(पृष्ठ ५७१ का शेष)

तक यहां बड़ी लाइन के ६२५ इन्जन बने। इस समय हर महीने १४ इन्जन बन रहे हैं।

टाटा लोकोमोटिव एंड इन्जीएनयरिंग कम्पनी लि०, १९५५ से ही छोटी लाइन के इन्जन बना रही है। पहले यह कारखाना ५० इन्जन और ५० बायलर बनाता था, पर अब १०० पूरे इन्जन बनाने लगा है। डिजल और बिजली के इन्जनों को बनाने की भी बात चल रही है।

पैराम्बूर के कारखाने में १९५५ से डिब्बे बनने लगे। १९५९-६० तक ३५० डिब्बे हर साल बनाने का लक्ष्य रखा गया है। दूसरी पाली में काम करवाने पर विचार किया जा रहा है। इससे उत्पादन बढ़ जाएगा और ६०० डिब्बे हर साल बनने लगेंगे। डिब्बों की साज-सज्जा के लिए वहां एक अलग कारखाना खोला जा रहा है, जिससे रेलवे कारखानों का काम हलका हो जाएगा।

माल के डिब्बे बनाने का पूरा काम निजी कारखानों को सौंप दिया गया है। पहली योजना के आरम्भ में ही ३,७०७ डिब्बे हर साल बनने लगे थे। इस समय २० हजार डिब्बे बन रहे हैं, भविष्य में ३६,००० डिब्बे बनाने की व्यवस्था की जा रही है। मालूम होता है कि हम इनका निर्यात भी कर सकेंगे।

नये डिब्बे व इन्जन बनाने के साथ ही वर्तमान डिब्बों और इन्जनों से अधिक काम लेना भी जरूरी है। सन् १९३८-३९ के मुकाबले सन् १९५६-५७ में इन्जनों और डिब्बों दोनों को टन-मीलों का औसत ड्योढ़ा हो गया।

माल के यातायात में संगति बैठाना भी जरूरी है। लोग अपने पास की खानों से कोयला न लेकर देश के दूसरे भाग से मंगावें, तो यातायात व्यर्थ बढ़ता है। अतः माल की ढुलाई और एक क्षेत्र के अन्दर पास की खानों से कोयला और पास के बन्दरगाह से खाद्यान्न आदि ढोये जाएंगे। यद्यपि यह व्यवस्था मुक्त व्यापार या यातायात में बाधक है, फिर भी रेलों के बोझ को हलका करने के लिए जनहित को ध्यान में रखते हुए हमें इस पर ध्यान देना ही होगा।

——

नया साहित्य

निर्माण की कहानियां—(कहानियां और एकांकि नाटक), प्रकाशक—केन्द्रीय भारत सेवक समाज, नई दिल्ली। सोलह पेजी क्राउन आकार के १३४ पृष्ठ और मूल्य १.५०।

आज हमारा राष्ट्र संक्रांति काल से गुजर रहा रहा है। एक ओर निर्माण की बड़ी-बड़ी योजनाएँ हमारे सामने हैं, और दूसरी ओर जीवन के नैतिक मूल्यों और आस्थाओं में निरंतर ह्रास हो रहा है। ऐसे नाजुक समय में साहित्य और साहित्यकार की जिम्मेदारी बहुत बढ़ जाती है। प्रस्तुत पुस्तिका में जीवन को नव-निर्माण की ओर प्रेरित करने वाली २० रचनाएं संकलित की गई हैं। रचनाओं में १४ कहानियाँ हैं और 'नयागाँव' शीर्षक से श्री राजाराम शास्त्री के छः एकांकि। सभी रचनाएँ सदुद्देश्य को लेकर लिखी गई हैं। रचनाओं का उद्देश्य तो शुभ है किन्तु सभी रचनाओं में लेखक प्रचारक का लेबिल लगा कर सामने आते हैं। यदि प्रचारकता को पीछे हटा कर लेखक अपने मन्तव्य को सांकेतिक स्तर पर रखते तो यह प्रकाशन अधिक प्रभावशाली और इसीलिये अधिक उपयोगी बन पाता।

टेढी लकीर (उपन्यास) लेखिका—इस्मत चुग़ताई, प्रकाशक—अदबी पब्लिशर्स, ८ शेफर्ड रोड, बम्बई। क्राउन सोलह पेजी आकार के ४६४ पृष्ठ और मूल्य ६.५०।

श्रीमती चुग़ताई का यह उपन्यास मूल रूप से उर्दू में लिखा गया है और अपने मौलिक रूप में ही देवनागरी लिपि में प्रकाशित किया गया है। यह प्रयोग कुछ पाठकों को संभवतः विचित्र लगे; किन्तु हिन्दी-उर्दू के बीच की दूरी समाप्त करने के लिये यह सर्वश्रेष्ठ माध्यम है कि उर्दू की लिपी भी देवनागरी ही कर दी जाए। इस दृष्टि से यह प्रकाशन एक महत्त्वपूर्ण प्रकाशन है और प्रकाशक बधाई के पात्र हैं।

'टेढी लकीर' में एक ऐसी कम नसीब मुस्लिम लड़की का चरित्र चित्रण है जिसका जन्म ही परिवालों के लिये नाखुशी की गठरी बनकर होता है। उससे पहिले नौ [illegible] बच्चे परिवार में हैं। दूसरा अभिशाप यह कि [illegible] असुन्दर भी है। उपेक्षा और संघर्ष के बीच वह बी० ए० [illegible] करती है। बी० ए० के पश्चात् एक स्कूल में अध्याप[illegible] फिर टेलर नामक एक अँग्रेज से विवाह, विवाह [illegible] असफलता और फिर नये उत्साह से जीवन का आरंभ—[illegible] संक्षेप में 'टेढी लकीर' का कथानक है।

उपन्यास बड़ी आत्मीयता और टीस के साथ लि[खा] गया है। पाठक पात्रों के साथ अपनेपन का अनुभव कर[ता] है। जहाँ-तहाँ समाज पर व्यंग भी खूब किये गये हैं।

हमारे सहयोगी

साहित्य सन्देश—(सन्त साहित्य विशेषांक) सम्पादक—महेन्द्र, आकार २०×३०—८, पृष्ठ १२०। मूल्य १.५०।

हिन्दी आलोचना के क्षेत्र में 'साहित्य-सन्देश' [का] महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है; और 'साहित्य सन्देश' [के] विशेषांक तो जैसे साहित्य की इस विधा के प्रगति चि[ह्न] बनकर ही सामने आते रहे।

इस वर्ष का विशेषांक 'संत साहित्य विशेषांक' है। हिन्दी सन्त साहित्य के सभी पक्षों को स्पर्श करने का प्रयास इस अंक में है; किन्तु यह प्रयास, प्रयास बन कर ही रह गया है। डा० वासुदेव शरण अग्रवाल और बाबू गुलाबराय [के] १॥। पृष्ठ और १।। पृष्ठ के लेख (१) इस अंक में हैं। उनसे अधिक अध्ययन पूर्ण विस्तृत लेखों की आशा पाठक करते थे।

कई प्रान्तीय भाषाओं के सन्त साहित्य का परिचय [देने] वाले लेख भी इस विशेषांक में हैं। प्रान्तीय भाषाओं पर लिखे गये लेखों में—मराठी सन्त-साहित्य की पृष्ठभूमि—प्रभाकर माचवे और गुजराती का सन्त साहित्य—प्रो० नटवरलाल अम्बालाल व्यास दोनों भाषाओं के मराठी सन्त साहित्य का अच्छा परिचय देते हैं। पत्र का गेटअप छपाई आदि पहले की अपेक्षा बेहतर है लेकिन अभी सुधार की गुन्जायश है।

'साहित्य सन्देश' के सितम्बर ५८, के अंक में 'सन्त साहित्य विशेषांक' को पूर्णता देने वाली कई रचनाएं हैं। जिनमें 'पंजाबी सन्त साहित्य'—श्री हंसराज 'रहबर', 'सन्त लीला'—डा० श्याम परमार और 'बंगला सन्त साहित्य' श्री नन्दकिशोरसिंह—विशेष रूप से पठनीय रचनाएं हैं।

[सम्पादक

जागृति—(मासिक) सम्पादक : मदन मोहन गोस्वामी, प्रकाशक : लोक सम्पर्क विभाग, पंजाब, ६८, माडल टाउन अम्बाला। मूल्य : वार्षिक ३.५० एक प्रति .२१।

'जागृति' एक सफल सरकारी पत्रिका है। सरकारी पत्रिकाओं का उद्देश्य राष्ट्र की विभिन्न क्षेत्रीय प्रगति की सूचना जन साधारण तक पहुँचाना और लोकमानस की भावनाओं को प्रकाश में लाना होना चाहिए। आज की अधिकतर सरकारी पत्रिकाएं इस दृष्टि से असफल सिद्ध हो रही हैं, किन्तु जाग्रति एक ऐसी सरकारी पत्रिका है जो इस कसौटी पर पूरी तो उतरती ही है, दूसरी पत्रिकाओं के लिए आदर्श भी है। जागृति सही मायनों में पंजाब का प्रतिनिधित्व करती है। इसके हर पन्ने में पंजाब का दिल धड़कता है।

प्रस्तुत अंक (सितम्बर ५८') में श्री हरिकृष्ण प्रेमी का संगीत-नाटक—'सोहनी महीवाल', श्री सत्यदेव विद्यालंकार का लेख 'अग्रणी पंजाब' श्री मदन मोहन गोस्वामी का लेख 'पंजाब के गांवों में नया जीवन' और श्रीमती प्रभजीत कौर की पंजाबी कविता—'मैं पैरीं झाझरां पाइयां नीं' पठनीय रचनाएं हैं।

पत्रिका के श्रेष्ठ सम्पादन के लिए सम्पादक बधाई के अधिकारी हैं।

दिव्य ज्योति (विशेषांक)—सम्पादक—आचार्य दिवाकर दत्त शर्मा, कार्यालय—आनन्द लाज, जाखू, शिमला। इस अंक का मूल्य ५.००। वार्षिक शुल्क ६.००।

पिछले एक वर्ष से यह संस्कृत की पत्रिका शिमला से प्रकाशित हो रही है। इसके उद्देश्य सरल, सरस तथा सुबोध साधनों से विश्व में संस्कृत का प्रचार, साहित्य की चर्चा और संसार का हित बताये गये हैं। ये उद्देश्य कितने ही महान् और दुःसाध्य क्यों न हों, इसमें संदेह नहीं कि संस्कृत में यह प्रयत्न बहुत सुन्दर है। प्रस्तुत अंक के अनेक लेख—पाश्चात्य साहित्य में भारतीय साहित्य का प्रभाव, क्या छायावाद-रहस्यवाद पश्चिम से आये हैं, भारतीय ललनाओं में कविता निर्माण कौशल और संस्कृत कवियों का परिचय भी ज्ञान वर्द्धक है। अंक में हिन्दी परिशिष्ट भी है। जिसमें मूल तत्व में आस्था, उपनिषद् और रहस्यवाद, अध्यात्मवाद और कामायनी आदि विद्वतापूर्ण लेख हैं। आज कल संस्कृत साहित्य की ओर कुछ विचारकों का ध्यान जाने लगा है। वस्तुतः आज आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने प्राचीन साहित्य में रुचि लें। आशा है, संस्कृत प्रेमी इस पत्रिका से लाभ उठाएंगे।

समाज सेवक—सम्पादक : नन्दकिशोर जालान, प्रकाशक अखिल भारतीय मारवाड़ी समाज, १५२—बी० महात्मा गांधी रोड कलकत्ता, मूल्यः ४ रुपये वार्षिक।

सम्पादकीय घोषणा से ज्ञात होता है कि पत्र एक व्यवधान के पश्चात् पुनः प्रकाशित होना आरम्भ हुआ है। जुलाई-अगस्त के अंक सामने हैं। 'समाज सेवक' मारवाड़ी समाज का पत्र है, लेकिन यह उन सीमाओं में बंध कर नहीं चला जिनमें प्रायः इस कोटि के संगठनों द्वारा संचालित पत्र चलते हैं।

पत्र की भाषा-शैली और गेटअप में चुस्ती और इस चुस्ती में समाज की सुस्ती को पचा जाने की चेष्टा है। पहले और दूसरे अंक के स्तर को देखते लगता है : इस गति से यह 'समाज सेवक' शीघ्र ही हिन्दी के शीर्ष पत्रों में अपना स्थान ले लेगा।

जुलाई अंक में 'सामाजिक इकाइयां : संघर्ष नहीं, सहयोग'—शीर्षक से श्री सन्हैयालाल ओझा के विचार और रमेश बक्षी की कहानी—'निगाहों के फरक' तथा अगस्त अंक में ,देश के शिक्षा विकास के संदर्भ में लेख के उत्तरार्द्ध और 'युग पथ चरण' को छोड़कर शेष सभी रचनाएं पठनीय हैं। सहयोगी के पुनरारम्भ पर बधाई!

—भीमसेन त्यागी

प्राप्ति स्वीकार

डाइजेस्ट आफ इकानॉमिक एण्ड स्टैटिस्टिक्स (त्रैमासिक), प्रकाशक—अर्थ शास्त्रीय सांख्यिकी—कार्यालय, जयपुर।

राईस और ह्वीट—चावल और गेहूँ की खेती के लिए खाद पर उपयोगी पुस्तिकाएं।

अर्थशास्त्र की सरल रूपरेखा—ले० श्री सत्यदेव देराश्री। प्रकाशक—लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, हॉस्पिटल रोड, आगरा। आकार १८×२२।८, पृष्ठ संख्या ६६२। मूल्य ८) रु०।

हमारे नए बाट : पहली अक्टूबर से आरंभ

एक अक्टूबर, १९५८ से विभिन्न राज्यों में व्यापारिक कार्यों के लिए साधारणतः नाप-तौल की दशमिक प्रणाली का प्रयोग आरंभ हो गया है। नयी प्रणाली को लागू करने में दो-तीन साल लगेंगे। इस बीच वर्तमान और नयी, दोनों प्रणालियां चालू रहेंगी। इस प्रकार एक अक्टूबर, १९५८ से दशमिक प्रणाली के नये बाट और पैमाने इस्तेमाल करने के लिए किसी को बाध्य नहीं किया जाएगा। देश भर में यह प्रणाली धीरे-धीरे ही लागू की जाएगी और इस अवधि में व्यापारियों और जनता को नये बाटों से परिचित कराने की कोशिश की जाएगी। जन-साधारण के भली-भांति समझ लेने के बाद ही नयी प्रणाली लागू की जाएगी।

उन चुने हुए क्षेत्रों में, जहां दशमिक प्रणाली के बाट १ अक्टूबर से चालू किये जा रहे हैं, वर्तमान बाटों का चलन २ वर्ष अर्थात् ३० सितम्बर, १९६० तक होने दिया जाएगा। दशमिक धीरे-धीरे और क्षेत्रों में लागू होती जाएगी और वहां भी २ से ३ वर्ष तक दोनों प्रकार के बाट चलाने की सुविधा दी जाएगी।

पहली अक्टूबर से दशमिक प्रणाली कुछ मुख्य उद्योगों में भी लागू की गई है। जैसे सूती वस्त्र, लोहा और इस्पात, इन्जीनियरी, भारी रसायन, सीमेंट, नमक, कागज, तापसह भट्ठियां, अलौह धातु, रबड़ और काफी। इन उद्योगों में भी वर्तमान बाटों का उपयोग २ वर्ष तक होने दिया जाएगा। बाद में अन्य उद्योगों में भी नयी प्रणाली का प्रचलन होगा। मुख्य उद्योगों में कच्चे माल की खरीद और उत्पादित माल की बिक्री की गणना दशमिक ढंग से होगी। फुटकर व्यापार पहले ढंग से ही होता रहेगा। पटसन उद्योग की सुविधा के लिए, जिसकी वार्षिक गणना १ जुलाई को होती है, मालों के थोक लेन-देन के लिए नयी प्रणाली उसी दिन से लागू कर दी गयी है।

पहली अक्टूबर से सरकारी विभाग और औद्योगिक प्रतिष्ठान सामान खरीदने या दूसरे विभागों को देने के लिए दशमिक प्रणाली का उपयोग कर सकते हैं। इण्डियन एयर लाइन्स कारपोरेशन और एयर इण्डिया इन्टरनेशनल कारपोरेशन दशमिक बाट और पैमानों में ही सामान बुक करेंगे। भूमि और खानों के नये सर्वे दशमिक पैमानों के हिसाब से ही होंगे। सरकारी विभाग शिल्पिक, सांख्यिक, वैज्ञानिक और बाजार सम्बन्धी आंकड़े दशमिक पैमानों में ही संग्रह और प्रकाशित करेंगे।

एक अक्टूबर से निम्न क्षेत्रों में दशमिक बाट चालू होंगे :

आंध्र प्रदेश—विशाखपत्तनम, कृष्णा, गुंटूर, कर्नूल, हैदराबाद, वारंगल, निजामाबाद जिले।

आसाम—गोहाटी का म्युनिसिपल क्षेत्र और नौगांव जिला।

बिहार—भागलपुर और रांची डिवीजन तथा पटना, गया, आरा, छपरा, मुजफ्फरपुर, चम्पारन और दरभंगा जिलों के म्युनिसिपल और नोटिफाइड क्षेत्र।

बम्बई—बम्बई, पूना, अहमदाबाद, राजकोट, बड़ौदा, नागपुर, औरंगाबाद, शोलापुर, अकोला, अमरावती, वर्धा और योतमाल के म्युनिसिपल क्षेत्र।

केरल—कोजीकोडे, एरनाकुलम और क्वीलोंन जिले।

मध्य प्रदेश—भोपाल, इन्दौर, ग्वालियर और जबलपुर जिले।

मद्रास—मद्रास, चिंगलपुट, दक्षिण आरकोट और उत्तर आरकोट।

मैसूर—बंगलोर, रायचूर और धारवाड़ जिले।

उड़ीसा—बरहमपुर, कटक और सम्बलपुर के म्युनिसिपल क्षेत्र।

पंजाब—अमृतसर, जालंधर, लुधियाना, अम्बाला, पटियाला और गुड़गांव जिले।

राजस्थान—अजमेर, बीकानेर, जोधपुर, जयपुर, कोटा और उदयपुर जिले।

उत्तर प्रदेश—मेरठ, आगरा, लखनऊ, बरेली, मुरादाबाद, वाराणसी, कानपुर, झांसी, इलाहाबाद और गोरखपुर जिले।

[सम्पदा

पश्चिमी बंगाल—कलकत्ता और हावड़ा के म्युनिसिपल क्षेत्र।

इसके अतिरिक्त, आंध्र प्रदेश, बम्बई, मध्यप्रदेश, मद्रास, मैसूर और पंजाब राज्यों के नियंत्रित बाजारों में दशमिक प्रणाली का उपयोग किया जाएगा।

केन्द्रीय क्षेत्रों में १ अक्टूबर, १९५८ से दशमिक प्रणाली सम्पूर्ण दिल्ली, हिमाचल प्रदेश के दो जिले—मण्डी और सीरपुर, मणिपुर में इम्फाल का म्युनिसिपल क्षेत्र, त्रिपुरा में अगरतला के म्युनिसिपल क्षेत्र और अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह में पोर्ट ब्लेयर में लागू की जाएगी।

दशमिक बाटों की परिवर्तन तालिका

छटांक	ग्राम (निकटतम ग्राम तक)	छटांक	ग्राम (निकटतम ग्राम तक)
१	५८	९	५२५
२	११७	१०	५८३
३	१७५	११	६४२
४	२३३	१२	७००
५	२९२	१३	७५८
६	३५०	१४	८१६
७	४०८	१५	८७५
८	४६७		

सेर	किलोग्राम	ग्राम (निकटतम १० ग्राम तक)
१	—	९३०
२	१	८७०
३	२	८००
४	३	७३०
५	४	६७०
६	५	६००
७	६	५३०
८	७	४६०
९	८	४००
१०	९	३३०
११	१०	२६०
१२	११	२००
१३	१२	१३०
१४	१३	६०
१५	१४	-
१६	१४	९३०
१७	१५	८६०
१८	१६	८००
१९	१७	७३०
२०	१८	६६०
२१	१९	६००
२२	२०	५३०
२३	२१	४६०
२४	२२	३९०
२५	२३	३३०
२६	२४	२६०
२७	२५	१९०
२८	२६	१३०
२९	२७	६०
३०	२७	९९०
३१	२८	९३०
३२	२९	८६०
३३	३०	७९०
३४	३१	७३०
३५	३२	६६०
३६	३३	५९०
३७	३४	५२०
३८	३५	४६०
३९	३६	३९०

मन	किलोग्राम (निकटतम किलोग्राम तक)	मन	किलोग्राम (निकटतम किलोग्राम तक)
१	३७	११	४११
२	७५	१२	४४८
३	११२	१३	४८५
४	१४९	१४	५२३
५	१८७	१५	५६०
६	२२४	१६	५९७
७	२६१	१७	६३५
८	२९९	१८	६७२
९	३३६	१९	७०९
१०	३७३	२०	७४६

सर्वोदय पृष्ठ

यह अर्थ-व्यवस्था बदलनी होगी

आज की यह स्थिति बदलने के लिए हमें आज की अपनी सारी अर्थ-व्यवस्था बदलनी होगी। समाज का निर्माण पैसे पर न कर श्रम पर करना पड़ेगा। याने गांव में चोर चोरी करने आये, तो उसे पैसा ही न मिल पाये। दूध, शाक, फल, अनाज ही उसे हाथ लगे। दस हजार के नोट जेब में रख कर ले जाना आसान है, लेकिन १० हजार का अनाज ले जाने के लिए ५० गाड़ियों की जरूरत पड़ेगी। सारांश, गांव में लक्ष्मी काफी रहे, लेकिन पैसा कम हो। गांव में सहयोगी समाज रहे। सभी चीजें सबके काम आवें।

आपकी समस्या में या पंचवर्षीय योजना कोई भी हल नहीं कर सकता। जब आप अपना सब कुछ गांव को अर्पण कर देंगे, सभी एक-दूसरे के सुख-दुःख के हिस्सेदार बनेंगे, तभी समस्या हल होगी, जो मालकियत के कारण हो नहीं पाती। दूर शहर में रहने वाला व्यक्ति यहां की सौ एकड़ जमीन का मालिक है, तो वह कैसे वसूल करेगा? स्पष्ट है कि यहां का अनाज बेच कर ही वसूल कर सकता है। याने अनाज का मूल्य पैसे में आंकना पड़ता है। लेकिन अगर आप गांव को एक परिवार समझ कर अपनी मालकियत छोड़ उसे सारे गांव की कर देंगे, तो यह समस्या सहज ही हल हो जायगी।

सारांश, पैसे का स्थिर मूल्य नहीं और उससे अनाज का मूल्य आंकना गलत है। साथ ही पैसे के कारण ही असत्य व्यवहार चलता है। इसलिए पैसे का मूल्य स्थिर रखना पड़ता है। महायुद्ध के जमाने में सर्वत्र मुद्रास्फीति हुई, सिर्फ इंग्लैण्ड ही उससे बच पाया। जिस देश में पैसे का मूल्य स्थिर रहेगा वहीं के लोग लबारी न कर सकेंगे। लेकिन पैसे का मूल्य स्थिर रखना आसान नहीं। इसलिए हमें राष्ट्रीय योजनाओं की अपेक्षा गांव-गांव में योजना करनी होगी। अन्न, वस्त्र, तेल, गुड़ गांव में ही पैदा करना होगा और इस तरह ग्राम-स्वराज्य की पूरी योजना करनी होगी। वह दिल्ली से हो नहीं सकती। यह सच है कि उन्हें मदद करनी होगी, पर अपनी योजना गांव वाले ही बनायेंगे।

—विनोबा

नार्वे-प्रोफेसर की गांधीजी के प्रति दिलचस्पी

ओस्लो (नार्वे) में हमें मालूम हुआ कि ओस्लो विश्वविद्यालय के प्रोफेसर आर्नेनेस गांधीजी के विचारों के प्रति बहुत दिलचस्पी रखते हैं तथा उन्होंने एक अन्य सहयोगी के साथ नार्वे की भाषा में 'गांधीवादी नीतिशास्त्र और राजनीति' पर एक पुस्तक लिखी है। एक अन्य अनुसन्धान संस्थान ने आक्रमण के विरुद्ध प्रतिरोध के सम्बन्ध में अहिंसा पर अध्ययन-योजना बनायी है। नार्वे और स्वीडेन पिछले दोनों महायुद्धों से मुक्त रहे हैं तथा इन्होंने अद्भुत समृद्धि प्राप्त की है। दोनों देश बहुत वर्षों तक समाजवादी शासन के आधीन रहे हैं। भौगोलिक स्थिति एवं युद्ध में अलिप्त रहने के कारण निर्धनता, बेकारी तथा विभिन्न सामाजिक अयोग्यताएं और अन्याय, जिनका श्रमजीवी वर्ग शिकार रहा है, व्यवहारतः दूर किये जा चुके हैं। इस प्रकार समाजवाद इन देशों में अपने निर्धारित भौतिक उद्देश्य का अधिकांश प्राप्त कर चुका है। किन्तु भ्रातृत्व, समता और स्वातन्त्र्य के नैतिक एवं सामाजिक मूल्य आज भी यदि और अधिक नहीं तो उतने ही दूर प्रतीत होते हैं, जब आधुनिक समाजवाद ने अपनी यात्रा प्रारम्भ की थी। सचमुच, स्वीडेन में भी, जो आज समाजवादी देशों का सिरमौर है, जनता अपने जीवन में एक प्रकार की रिक्तता, उद्देश्यहीनता और अर्थहीनता का अनुभव कर रही है, यद्यपि उन्नत सामाजिक सेवाओं और बीमाओं आदि के कारण भौतिक संरक्षण प्राप्त हो चुका है। इस समय वर्तमान के प्रति सन्देह जारी है तथा पुनः उन पुराने नैतिक और सदाचार-संबंधी आधारों पर चलने की बात हो रही है जिन पर समाजवाद वस्तुतः प्रारम्भ हुआ और जिनके कारण इसने प्रगति और विश्वव्यापी सहानुभूति प्राप्त की।

जिस समय हम लोग नार्वे के समाजवादी दल के प्रधान मंत्री श्री हेकन लाई और श्रीमती हेकन लाई के साथ शिविर में पहुँचे, उस समय सन्ध्या की परछाईं पर

रही थी। वह हाल, जिसमें शिविरवासी एकत्र हुए थे, इसी और संगीत से गूंज रहा था। उन लोगों ने भ्रातृत्व के आदर्शों और सामाजिक न्याय के लिए अपना संघर्ष जारी रखने के अपने संकल्प को एक साथ गाया। जिस समय श्री हेकन लाई ने जे० पी० के परिचय में कहा कि "वे भारतीय स्वाधीनता के (जो अब मिल गयी है) प्रमुख योद्धाओं में ही नहीं है, बल्कि महात्मा गांधी द्वारा निर्धारित मार्ग से सभी प्रकार के सामाजिक अत्याचार और शोषण के भी विरुद्ध हैं," उस समय बहुत देर तक जोर की, हर्षध्वनि होती रही।

—सिद्धराज ढड्ढा

सुख कैसे प्राप्त हो ?

जब मनुष्य छोटे-छोटे समूहों में रहता था, तब भी वह एक-दूसरे के साथ रहने की कला ठीक से नहीं जानता था। वह आपस में लड़ता था, एक-दूसरे को दुख देता था। यह सही है कि वह आपस में प्रेम भी करता था, परन्तु कुल मिला कर कहना पड़ेगा कि एक-दूसरे के साथ उसका व्यवहार अच्छा नहीं था। इसके कारण मानव-जीवन में सुख और शांति का सदा अभाव रहा। मानव मात्र सुख और शांति का प्यासा रहा, परन्तु उसने यह जाना नहीं कि उन्हें प्राप्त कैसे किया जाय ? दूसरों को दुःखी बना कर अपने को सुखी बनाया जा सकता है, ऐसा वह सोचता रहा। परन्तु उसके पास इस बात का कोई उपाय नहीं था कि दूसरे भी उसके साथ वैसा ही करें। अपने सुख के लिए दूसरों को दुःखी बनाने के प्रयास का परिणाम यह हुआ कि मानव-जीवन से सुख का या तो लोप ही हो गया, या वह क्षणिक और अस्थायी बना रहा। क्षणिक सुख को कौन सुख कहेगा ? मैं यदि सुख से रहा और मेरे बच्चे दुःख में पड़ें, तो मेरे सुख का क्या मूल्य हुआ ? हम तो अपने बच्चों के लिए ही जीते हैं न ?

सुख-दुःख का विवेचन अनादि काल से तत्वद्रष्टा करते आ रहे हैं और अनेक प्रकार से उन्होंने इस पहेली को समझाया है। इस विषय में सबसे गहरी और ऊंची बात जो उन्होंने बतायी है, वह यह है कि दूसरों के दुःख को अपना दुःख और दूसरे के सुख को अपना सुख मानो, तो सदा सुखी रहोगे। अगर आज की भाषा में कहें, तो ऐसा कहेंगे कि हम सुखी तभी मिलेंगे, जब समाज में सभी लोग सुखी होंगे और, चूंकि वर्तमान मानव-समाज पृथ्वी-व्यापी बन चुका है, इसलिए जब सारा विश्व-मानव-समाज सुखी बनेगा, तभी हम भी सुखी होंगे। जब सर्वत्र सुख होगा, शान्ति होगी, तो कोई भी दुःखी नहीं रहेगा, कोई अशान्ति न होगी। सुख तब क्षणभंगुर नहीं, स्थिर और शाश्वत बनेगा। विश्वशान्ति की स्थापना होगी।

—जयप्रकाश नारायण

सर्वोदय-पात्र : शान्ति का नया साधन

हमारे यहां भोजन से पहले गांव में कोई अतिथि आया हो, तो उसे खिला कर ही खाने की प्रथा है। कोई भिक्षा मांगने आये, तो इसका विचार न करते हुए कि वह इस दान का कैसा उपयोग करेगा, उसे भिक्षा दी जाती है। इस तरह आज हिंदू-धर्म एक प्रतीक रूप में शेष है। सर्वोदय-पात्र का यही आधार है। यही कारण है कि यह कल्पना उपस्थित करने के साथ ही लोगों को गोग्रास, मधुकरी आदि का स्मरण हो आता है।

सर्वोदय-पात्र से मिलने वाले अनाज का उपयोग क्रांति के लिए याने नयी समाज-रचना निर्माण करने के लिए होगा। पुरानी समाज-रचना कायम रख कर थोड़ा-सा दुःख मिटाना, इसका उद्देश्य कदापि नहीं। सर्वोदय-पात्र के द्वारा गांव के दस-पांच भूखों को खिलाने की योजना की जाय, तो वह क्रांति न होगी। हमें सर्वोदय-पात्र द्वारा समाज-रचना बदलने का नया विचार घर-घर पहुँचाना है।

सर्वोदय-पात्र का काम स्त्रियों की प्रेरणा से भी होगा। प्रत्येक माता अपने बच्चे से कहेगी—'हम विश्व में शान्ति चाहते हैं, इसलिए तू सर्वोदय-पात्र में मुट्ठी भर अनाज डाल।' जब घर-घर ऐसा होगा, तभी अशान्ति के मूल पर प्रहार होगा।

सर्वोदय-पात्र के काम में हमारी कुल ताकत लगनी चाहिए। यह बुनियादी चीज है। इससे हमारे कार्यकर्तागण शारीरिक और मानसिक, दोनों अर्थ में परिपुष्ट बनेंगे; क्योंकि वे किसी एक शख्स का न खायेंगे, जनता का खायेंगे, रामजी का खायेंगे। इससे उनका जीवन पवित्र बनेगा।

घर-घर में सर्वोदय-पात्र हो। इसका अर्थ यह है कि हर व्यक्ति को यह समझना चाहिए कि मुझे सिर्फ अपने घर में सर्वोदय-पात्र रखना नहीं है, बल्कि मुझे सर्वोदय का पात्र बनना है। मैं शांति-सेना के लिए अपने घर में सर्वोदय-पात्र रखता हूं, तो मैं किसी प्रकार की अशांति का कारण नहीं बनता हूं। ऐसी मूक भावना वहां होनी चाहिए। मुट्ठी-भर अन्न बहुत बड़ी बात नहीं है, पर प्रेम बहुत बड़ी बात है।

लोग पूछते हैं कि सर्वोदय-पात्र का अनाज कौन ले जायगा? मैं कहता हूं कि सुरक्षित रूप में उसे आपको ही पहुँचाना पड़ेगा। फिर उस अनाज का पैसों में रूपांतर भी करना पड़ेगा। सारा अनाज खाया ही जाना चाहिए, ऐसी बात नहीं। कुछ लोग यह भी कर सकते हैं कि महीने भर तक पात्र में जो अनाज डाला जाय, उसे तौल कर उसके मूल्य का पैसा दे दें। जिस तरह सरकारी गोदाम में अनाज जमा होने पर उसमें से कुछ अनाज में घुन लग जाता है, वैसा यहां नहीं करना है। यह क्रांतिकारी योजना है। मैं लोगों से कहूँगा कि आप ही देखें कि तौल ठीक है या नहीं या भाव ठीक लगाया गया है या नहीं? यह बात दूसरा कोई भी न देखेगा। यह जन-शक्ति का काम है। इसमें कोई किसी पर निगरानी न करेगा। हर कोई अन्तरात्मा को साक्षी रख कर काम करेगा। आप जब तक खायेंगे, तब तक सर्वोदय-पात्र में अनाज डालते रहेंगे। समाज-रचना बदलने तक या इससे भी नयी चीज सामने आने तक यह काम चलता ही रहेगा। —विनोबा

खादी : मेरी दृष्टि में

मैं खुद भी खादी ही पहनता हूं। खादी के प्रति अपने लगाव का इससे बड़ा प्रमाण और क्या दूं? चरखे के द्वारा जब गांधीजी आजादी की बात कहते थे तो हम उनके इन विचारों का समर्थन नहीं करते थे। उस समय भी और आज भी खादी को मैं बेरोजगारी दूर करने की दिशा में किंचित राहत का कार्यक्रम मानता हूँ। खादी-ग्रामोद्योगों का देश के आर्थिक जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है इससे इंकार नहीं किया जा सकता। लेकिन केवल इन्हीं के द्वारा देश की आवश्यकताओं को पूरा किये जाने का स्वप्न देखना भारी धोखा है। वैज्ञानिक युग की उपलब्धियों का उपयोग न करना पहले सिरे की मूर्खता होगी। मुझे लगता है कि बड़ी रकमों के सहारे सरकारी नियंत्रण में आज खादी का अर्थ कुछ लोगों को सुविधायें मुहय्या करना मात्र रह गया है। शोषण, असमानता और अत्याचार के खिलाफ खड़े होने की भावना खादी पहनने वालों में पैदा की जा सकी तो मैं खादी का समर्थन करूंगा।

—डा० राममनोहर लोहिया

भारत में ग्रामदान

प्रदेश	संख्या ग्राम	प्रदेश	संख्याग्राम
पंजाब	१		
राजस्थान	४०	उत्कल	१९६०
उत्तरप्रदेश	४२	आन्ध्र	४८१
बिहार	१२४	मैसूर	६६
पं० बंगाल	२६	मद्रास	२६८
आसाम	१२७	केरल	२२३
बम्बई	६१२	मध्यप्रदेश	१४०
			४४४०

पाठकों का पृष्ठ

काम के अनुसार वेतन

श्री सम्पादक जी,

ब्रिटेनमें भी अन्य देशों की भांति मजदूरी के प्रश्न पर विचार हो रहा है। मजदूर वेतन वृद्धि की मांग करते हैं और मिल मालिक भारत की भांति वहां भी मजदूरी को उत्पादन के साथ सम्बद्ध करने की मांग करते हैं। पिछले दिनों ब्रिटेन के श्रम मंत्रालय ने इस प्रश्न की जांच की थी। इससे पता चलता है कि वहां प्रति तीन मजदूरों में से एक को कार्य के अनुपात से वेतन दिया जाता है। निर्माणकारी उद्योगों में ४५ प्रतिशत स्त्री मजदूरों को काम के हिसाब से वेतन दिया जाता है। पुरुष मजदूरों को भी पिछले २० वर्षों में काम के हिसाब से वेतन देने की प्रथा बढ़ रही है। हमारी नम्र सम्मति में भारतवर्ष में भी इस प्रथा को अधिकाधिक प्रोत्साहन मिलना चाहिए। वस्तुतः भारत में प्रति मजदूर कम उत्पादन की शिकायत भी इसी प्रथा से दूर हो सकती है। प्रत्येक मजदूर को बिना उसकी कार्यक्षमता का विचार किए एक समान वेतन देना उचित नहीं है। जो मजदूर अधिक काम करे, उसे अधिक वेतन मिलना चाहिए। यदि इस प्रथा को प्रोत्साहित नहीं किया गया तो मजदूरों में अधिक ईमानदारी से परिश्रम करने की भावना उत्पन्न नहीं होगी।

—रामगोपाल विद्यालंकार

राजनैतिक पार्टियां और आन्दोलन

श्री सम्पादक जी,

मुझे ऐसा स्मरण आ रहा है कि आपने मजदूर समस्या के समाधान के लिए यह सुझाव दिया था कि विभिन्न मजदूर संघों को एक एक औसत आकार की मिल प्रबन्ध के लिए परीक्षण के तौर पर सौंप देनी चाहिए, तभी पता चल सकेगा कि मिल की सब आवश्यकताएं पूर्ण करते हुए विभिन्न खातोंके मजदूरों को कितने वेतन, बोनस या मंहगाई भत्ते दिए जा सकते हैं। उत्तरप्रदेश में खाद्य-संकट के सम्बन्ध में जो राजनैतिक या आर्थिक आंदोलन चल रहा है, उसके सम्बन्धमें 'आज' के सम्पादक ने भी इसी तरह का एक सुझाव दिया है, सम्पदा के पाठकों की जानकारी के लिए आपके पास भेज रहा हूं—

"सभी राजनैतिक दल सस्ते गल्ले की दुकानों की वर्तमान व्यवस्था को दोषी बताते हैं। दोष दिखाना आसान है। यदि विरोधी दल वस्तुतः जनता का हित चाहते हैं तो किसी एक नगर में कोई एक दल सस्ते गल्ले की दुकानें सुव्यवस्थित ढंग से चलाने का दायित्व उठाने के लिए तैयार हो जाय तथा उसे समुचित रूप से चला कर दिखाये। यदि प्रजा-समाजवादी पार्टी आज़मगढ़ के सत्याग्रह के लिए ५०० सत्याग्रही जुटा सकती है, तो सस्ते गल्ले की दुकानें चलाने की व्यवस्था अवश्य कर सकती है। उसे यह बताना चाहिए कि प्रजा-समाजवादी पार्टी की किसी दूकान पर गड़बड़ी न होगी। निश्चय ही जो भी पार्टी यह व्यवस्था लेना चाहेगी उसे सरकारी नियमों का पालन करना ही होगा। यह दूसरी बात है कि वह इनमें आवश्यक संशोधन करा ले। विरोध पक्ष यदि विरोधी सभाएं, जुलूस, भूख मार्च, अविश्वास के प्रस्ताव आदि कार्यक्रम अपनाते हैं तो किसी को आपत्ति नहीं है; किन्तु गल्ला गोदामों के ताले तोड़ना, गल्ले पर कब्ज़ा करना आदि बातें असह्य हैं।"

— विश्वम्भरनाथ

समाजवाद और योजनाएँ

श्री सम्पादक जी,

'सम्पदा' द्वारा निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर देने की कृपा करेंगे।

(१) भारत में समाजवादी समाज का जो आदर्श स्वीकार किया गया है, उसका जनता की भावनाओं पर क्या प्रभाव पड़ा है? कृषि उद्योग या अन्य योजनाओं पर समाजवादी भावना ने कितना अनुकूल प्रभाव डाला है?

(२) निजी उद्योग पर समाजवाद की क्या प्रतिक्रिया हुई है? पूंजी-निर्माण पर इसका अनुकूल या प्रतिकूल क्या प्रभाव पड़ा है?

(३) समाजवादी आदर्श की घोषणा ने मजदूरों की कार्यक्षमता बढ़ाने में क्या सहयोग दिया है?

(४) समाजवाद की दशा में आगे कदम बढ़ाने के लिए क्या ठोस कदम उठाने चाहिएं?

—सुभाष

हाँ, पिताजी उसे ठीक बना देंगे !

बच्चों का अपने पिताजी पर पूरा भरोसा रहता है। समय आने पर पिताजी ही बढ़ई बनकर उनकी चीजें ठीक कर देते हैं। इतिहासकार भी बन जाते हैं और गणित को भी समझा देते हैं। इस तरह पिताजी ही उनकी सारी मुसीबतें दूर कर देते हैं। और संकट में उनके आश्रयदाता बनते हैं।

आपके बच्चे भी आपको इसी दृष्टि से देख रहे हैं। क्या उनके भविष्य की भलाई के लिए आपने कुछ किया है? अगर नहीं—तो थोड़ी-सी रक़म नियमित रूप से जीवन बीमे में लगाकर आप वह प्रबंध आज ही क्यों नहीं कर लेते? जीवन-बीमे में लगाये हुअे पैसे पूंजी बनकर ठीक समय पर उनके हाथ में आ सकते हैं। अतः आप अपने इस कर्तव्य को अभी अदा कर लीजिए।

लाइफ़ इन्श्योरन्स कॉर्पोरेशन ऑफ़ इन्डिया

ASP/LIC-32

सरकारी विज्ञापनों के लिए स्वीकृत
राजस्थान शिक्षा विभाग से मंजूरशुदा

सेनानी : साप्ताहिक

सम्पादक :—
सुप्रसिद्ध साहित्य सेवी श्री शंभुदयाल सक्सेना

कुछ *विशेषताएं* —

★ ठोस विचारों और विश्वस्त समाचारों से युक्त
★ प्रान्त का सजग प्रहरी
★ सर्वाधिक लोकप्रिय पत्र

ग्राहक बनिए, विज्ञापन दीजिए, रचनाएं भेजिए
नमूने की प्रति के लिए लिखिए—
व्यवस्थापक, साप्ताहिक सेनानी, बीकानेर

जागृति

जुलाई अंक के आकर्षण

उत्तर पश्चिमी भारत का प्राचीन भूगोल ; डाक्टर वासुदेवशरण अग्रवाल डी० लिट० । ऊंटोंवाला (कहानी) श्री राजेन्द्र हांडा, राष्ट्रपति के प्रैस अटैची । किसी हमदमे देरीना का मिलना (व्यंग्य) ; डाक्टर सत्यप्रकाश संगर-एम० ए०, पी० एच० डी० । आंख का वार्ड (कहानी) : श्री प्रतापनारायण टंडन एम० ए०, साहित्य रत्न, सम्पादक— 'युगचेतना' । मधुयामिनी (कविता) : श्री राजेन्द्र 'प्रिय दर्शन' । आदि आदि ।

इस के अतिरिक्त बाल संसार, साहित्य आगे बढ़ता है, आदि स्थाई स्तम्भ
सम्पूर्ण छपाई आर्ट पेपर पर : बहुरंगे चित्र
मूल्य एक प्रति २५ नए पैसे
वार्षिक ३ रुपए ५० नए पैसे

एजेन्सी की शर्तें

५ से १०० कापियां मंगवाने पर २५ प्रतिशत और १०१ या ज्यादा कापियां मंगवाने पर ३३$\frac{1}{3}$ प्रतिशत कमीशन दिया जाता है । डाक खर्च हमारे जिम्मे ।

व्यवस्थापक "जागृति" हिन्दी
६९ माडल टाउन, अम्बाला शहर

जीवन साहित्य

हिन्दी के उन मासिक पत्रों में से है, जो
१. लोकरुचि को नीचे नहीं, ऊपर ले जाते हैं,
२. मानव को मानव से लडाते नहीं, मिलाते हैं,
३. आर्थिक लाभ के आगे झुकते नहीं, सेवा के कोटर पर चलते हैं,

जीवन साहित्य की सात्विक सामग्री को छोटे-बड़े स्त्री-बच्चे सब निःसंकोच पढ़ सकते हैं । उसके विशेषांक एक से एक बढ़कर होते हैं ।

जीवन साहित्य विज्ञापन नहीं लेता । केवल ग्राहकों के भरोसे चलता है । ऐसे पत्र के ग्राहक बनाने का अर्थ होता है राष्ट्र की सेवा में योग देना ।

वार्षिक शुल्क के ४) भेज कर ग्राहक बन जाइए।
ग्राहक बनने पर मण्डल की पुस्तकों पर
आपको कमीशन पाने की भी सुविधा हो जायगी।

सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली।

आर्थिक समीक्षा

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के आर्थिक राजनीतिक
अनुसंधान विभाग का पाक्षिक पत्र

प्रधान सम्पादक : आचार्य श्री श्रीमन्नारायण
सम्पादक : श्री सुनील गुह

★ हिन्दी में अनूठा प्रयास
★ आर्थिक विषयों पर विचारपूर्ण लेख
★ आर्थिक सूचनाओं से ओतप्रोत

भारत के विकास में रुचि रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति के लिए अत्यावश्यक, पुस्तकालयों के लिए अनिवार्य रूप से आवश्यक ।

वार्षिक चन्दा : ५ रु०   एक प्रति : ३॥ आने

व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग
अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी,
७, जन्तर मन्तर रोड, नई दिल्ली

डालमिया उत्पादन
आधुनिक गृहों तथा कार्यालयों के लिए
उत्तम कोटि की अग्निरोधक ईंटें, चीनी मिट्टी के सामान, विसंवाहक तथा क्षार-अवरोधक खपरियां आदि
वज्रचूर्ण-अयस्संघा नाल (R. C. C. Spun pipes) सिंचाई, पुलियाओं (Culvert), जलप्रदाय और जलोत्सारण (Supply and drainage) के लिये सभी श्रेणियों और मापों में प्राप्य 1
ऊष्मसह (Refractories) अग्नीष्टकायें (Fire Bricks) संमृद (Mortars) तथा समस्त ताप-सीमाओं और आकृतियों में प्राप्य विसंवाहक ईष्टकायें (Insulating Blocks) सभी औद्योगिक आवश्यकताओं के लिये 2
पोर्टलैण्ड सिमेंट सामान्य निर्माण के लिये 3
काश्मनाल (Stoneware Pipes) पूर्णरूपेण लवण काचित (Salt Glazed) क्षार-रोधक (Acid Resistant) एवं प्रमाप विशिष्ट (Tested of standard specification) जलोत्सारण (Drainage) के लिये 4
मृत्सा-आरोग्यपात्र (Porcelain sanitary ware) भारतीय और योरोपीय शौच कुंड (Closets), धावन पात्री (Wash basins), मूत्रकुंड (Urinals), इत्यादि 5
विसंवाहक (Insulators) एवं क्षाररोधक खपरी (Tiles) भी मिल सकती हैं । 6
डालमिया सिमेंट (भारत) लि०,
डाकघर—डालमियापुरम्
जिला—तिरुचिरापल्ली, दक्षिण भारत
PORTLAND
DALMIA
CEMENT
MADE IN INDIA
1
2
3
4
5
6
D.C.H.2-58.

भारत को अपने रेशम के उत्पादन के लिए प्राचीन काल से ही वैभवता प्राप्त है और उसी परम्परा को आज के मानव निर्मित एसीटेट सूत से नवीन कलेवर प्राप्त हुआ है। सुन्दरता, कोमलता, रंगों की शानदार चमक-दमक, इन सारी दृष्टियों से सरिसिल्क एक ऐसा रेशम है जिसका कोई जोड़ नहीं। व्यवहार में उपयुक्त, टिकाऊ व आधुनिक फैशन का होते हुए भी मूल्य अधिक नहीं।

Sirsilk
QUALITY FABRICS

सुरुचि सम्पन्न महिलाओं के लिए
टफेटा, साटिन, क्रेप, जार्जेट इत्यादि।

फैशनेबुल पुरुषों के लिए
शार्कस्किन, फैन्सी शूटिंग, शाण्टुंग, शर्टिंग इत्यादि।

सरसिल्क लिमिटेड सरपुर-कागज़नगर, आन्ध्र प्रदेश

कलकत्ता कार्यालय : ८, इण्डिया एक्सचेंज प्लेस

सम्पादक—कृष्णचन्द्र विद्यालंकार द्वारा अशोक प्रकाशन मन्दिर के लिए अर्जुन प्रेस, दिल्ली से मुद्रित व प्रकाशित।

सम्पदा

नवम्बर, १९५८

Dipawali
इस पवित्र अवसर पर
अल्प बचत योजना का
ध्यान रखिये
और अपने परिवार के उज्ज्वल भविष्य को
निश्चित कीजिये।
आप अपने उपहारमें
POST OFFICE
GIFT COUPON
Rs. 5
No A 003853
FIVE RUPEES
With all good wishes
FROM
TO
on the auspicious occasion of
को शामिल कीजिये। ५), १०), ५०), १००) और
१००० रुपये की रकमों में पोस्ट ऑफिस उपहार कूपन
उपलब्ध होते हैं। आपका डाकखाना इसके बारे में
विस्तृत जानकारी देगा।
DIRECPUB

विषय-सूची

सम्पादकीय परामर्श-मण्डल

१. श्री रामगोपाल विद्यालंकार
२. श्री जी० एस० पथिक

बम्बई में हमारे प्रतिनिधि

श्री टी० एन० वर्मा, नेशनल हाउस, २री मंजिल तुलकरोड, बम्बई-१

कानपुर में हमारे प्रतिनिधि

श्री महेन्द्रस्वरूप भटनागर १५/९१ सिविल लाइन्स

वर्ष : ७
अङ्क : ११
नवम्बर १९५८

वस्त्र-उद्योग की समस्याएँ

यद्यपि भारतीय वस्त्रोद्योग में मजदूरी की दरें काफी कम हैं, तथापि जापान की तुलना में यहां उत्पादन व्यय १० प्रतिशत अधिक है। नये-नये कर, मजदूरी की बढ़ती हुई दरें, कच्चे माल के अधिक मूल्य आदि के कारण वस्त्र उद्योग को काफी क्षति पहुँच रही है। उत्पादन कर में कमी के बावजूद सूती मिलों की स्थिति अभी तक नहीं सम्हली है। चीन जैसा राष्ट्र भी वस्त्र निर्यात की प्रतिस्पर्धा में इतनी तेजी से आगे बढ़ा है कि जापान जैसा उन्नत देश भी तिलमिला उठा है। इसलिए आज भारतवर्ष को यह गंभीरता से सोचना है कि किस तरह वह अपने वस्त्रोद्योग की रक्षा करे? भारतीय सूती मिल संघ ने सरकार द्वारा नियत केन्द्रीय वेतन मंडल को यह आवेदन भेजा है कि मजदूरी की दर कम करने की जरूरत हो तो उसमें संकोच नहीं करना चाहिये। उसने यह भी मांग की है कि मजदूरी को कार्यवाहक और उत्पादन के साथ सम्बन्ध करने के प्रश्न पर गम्भीरता और सहानुभूति पूर्वक विचार करना चाहिये। कार्यभार और उत्पादन की मात्रा से सम्बन्ध किये बिना केवल आदर्शवाद के आधार पर मजदूरी की दर नियत करना अंततः उद्योग के लिए ही—जिस पर मजदूरों का हित निर्भर है—हितकर न होगा।

बम्बई के सूती मिल मालिकों ने एक ओर वेतन मंडल से उक्त अनुरोध किया हैं दूसरी ओर, उन्होंने औद्योगिक अदालत में भी एक पत्र देकर यह मांग की है कि मजदूरों का महंगाई भत्ता आज की अपेक्षा दो तिहाई कर दिया जाय। अपनी मांग प्रस्तुत करते हुए मिल मालिक संघ ने कहा है कि जब वर्तमान वेतन पद्धति जारी की गई थी तबसे अब स्थिति बिलकुल बदल गई है। सन् १९ ४ के बाद से उद्योग के मुनाफे घटते जा रहे हैं। करों के ढांचों में परिवर्तन से स्थिति इतनी बिगड़ गई है और लाभ इतना कम हो गया है कि उद्योग की घिसाई रिजर्व तथा डिविडेन्ड आदि की आवश्यकताएं भी पूरी नहीं की जा सकती। स्थिति यह है कि बहुत-सी मिलों को चलना भी कठिन हो गया है। मिल मालिक संघ ने अपने पक्ष की पुष्टि में एक और दलील दी है कि १९३७ में औसत वेतन २८ रुपये था और अब १३४ रुपये, अर्थात् साढ़े पांच गुणा हो गया, जबकि रहन-सहन के सूचक अंक चार गुणा भी नहीं बढ़े। वस्तुतः उद्योग मिल मालिकों की सम्मति में वे इतना बढ़ा हुआ वेतन भी देने की स्थिति में नहीं है। हमारी नम्र सम्मति में जब कि वेतन मण्डल में वेतनों का प्रश्न विचाराधीन है तब अदालत में इस प्रश्न को नहीं ले जाना चाहिए था। ऐसा करना वेतन मण्डल की योग्यता, निष्पक्षता और क्षमता पर अविश्वास प्रकट करना है।

जहां तक वस्त्र उद्योग की स्थिति का सम्बन्ध है सरकार स्वयं चिन्तित है। उद्योग मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री स्वयं वस्तुस्थिति की जानकारी का प्रयत्न करते हैं। पिछले दिनों उत्पादन कर में कमी तथा नयी आयात नीति इसका प्रमाण हैं। मशीनों व रंग आदि के आयात में विशेष सुविधाएं दी जा रही हैं। मशीनों के आधुनिकरण के लिए भी विदेशी मुद्रा की सुविधा दी जा रही है। कपड़ा जांच समिति की सभी प्रमुख शर्तें स्वीकार कर ली गई हैं। सरकारी प्रस्ताव में पुरानी मशीनों के बदलने, वैज्ञानिकन, आधुनिकीकरण, प्रबन्ध में कार्यकुशलता और मजदूरों की उत्पादन क्षमता बढ़ाने पर जोर दिया गया है। वस्त्र उद्योग के सम्बन्ध में परामर्श तथा सहयोग देने के लिए एक परामर्श समिति और एक वैज्ञानिकन समिति की स्थापना की जा रही है। यह आशा करनी चाहिए कि वस्त्र उद्योग की समस्याएं हल करने में सभी दलों का सहयोग प्राप्त होगा।

मद्य-निषेध जरूरी

हम इस बात का जोरदार समर्थन करते आए हैं कि देश की विकास योजना में मद्य-निषेध को मुख्यता दी जानी चाहिए। मद्य-निषेध जहां नैतिक दृष्टि से आवश्यक है, वहां व्यक्ति और देश की आर्थिक दृष्टि से भी आवश्यक है। यदि मद्यपान करने वाले लाखों नागरिक अपना अपव्यय बचा लें तो वह रुपया देश के आर्थिक विकास में प्रयुक्त हो सकता है। व्यक्ति की अपनी आर्थिक स्थिति का सुधार परिवार की मुख्य आवश्यकताओं को पूर्ण करने में लगाया जा सकता है। हमारे देश के नेता और सरकारें मद्य-निषेध की गति को तीव्र न करने का परामर्श दे रहे हैं। यदि कला और संस्कृति के नाम से संगीत और नृत्य तथा अभिनय के लिए एक भारी राशि खर्च की जा सकती है तो क्या देश को नैतिक पतन से बचाने के लिए शराब की कमाई को महात्मा गांधी के अनुयायी हम लोग छोड़ नहीं सकते? इन्हीं दिनों समाचार पत्रों में दो समाचार प्रकाशित हुए हैं, जिनकी ओर हम पाठकों का ध्यान खींचना चाहते हैं। रूस के महान नेता श्री ख्रुश्चेव ने स्वयं मद्यपान बन्द करने की घोषणा की है और विद्यार्थियों तथा डाक्टरों के लिए भी वहां शराबबन्दी जारी करदी गई है। फ्रांस के औषध-विज्ञान संस्था के अध्यक्ष श्री राबर्ट डी० बेर ने बताया है कि फ्रांस में गतवर्ष २० से ज्यादा आदमी शराब के नशे के कारण मर गये। रुपये पैसों में हिसाब लगाते हुए उन्होंने बताया है कि शराब के रोगों की चिकित्सा तथा खर्च किये गये समय की कीमत प्रतिवर्ष २० हजार करोड़ फ्रांक होती है। उन्होंने यह भी बताया है कि मद्यपान करने वालों की सन्तान पर भी इसका बुरा असर पड़ता है। इन सब बातों पर उन लोगों का ध्यान खींचा जाय जो स्वयं शराब की दूकानों पर सत्याग्रह करते थे—यह हमारे लिए कम खेद की बात नहीं है।

बस यातायात का राष्ट्रीयकरण

आजकल भिन्न-भिन्न उद्योगों और सेवाओं के राष्ट्रीयकरण की प्रवृत्ति बढ़ रही है तब भारत के सर्वोच्च न्यायालय का आन्ध्र राज्य के बस यातायात के राष्ट्रीयकरण के प्रस्ताव को अवैधानिक घोषित कर देना महत्वपूर्ण है। आन्ध्र राज्य के कृष्णा जिले में बस यातायात को निजी मालिकों से लेकर स्वयं सर्विस जारी करने का निश्चय किया था। वहां के बस मालिकों ने यह आपत्ति उठाई थी कि बिना उचित मुआवजा देने का निश्चय किये राज्य को समाप्ति का अधिकार देने का कानूनी हक नहीं है। यह निर्णय विस्तृत रूप में हमारे सामने अभी नहीं है। इस पर भारत सरकार या राज्य सरकारें क्या निश्चय करती हैं यह नहीं कहा जा सकता।

श्रम समस्या के दो पहलू

केन्द्रीय श्रम मंत्री श्री गुलजारीलाल नन्दा ने श्रमिकों को औद्योगिक क्षेत्रों के प्रबन्ध में भागीदारी बनाने का समर्थन करते हुए इस बात पर खेद प्रगट किया है कि ३० कारखानों में इस योजना को चालू करने का निश्चय किया था किन्तु अभी तक १० से अधिक कारखानों में यह योजना चालू नहीं हुई। बहुत संभवतः मिल मालिक इस व्यवस्था में हृदय से विश्वास नहीं करता परन्तु हमारी नम्र सम्मति में सरकारी उद्योगों को इस दिशा में पहल करनी चाहिये। सरकारी उद्योगों के प्रयत्नों में सफलता निजी उद्योगों को इस दिशा में आगे आने के लिए प्रेरित कर सकेगी। इसी अवसर पर श्री नन्दा ने एक और

[क्रमशः

महत्वपूर्ण बात सुझाई है कि श्रम विवादों के सम्बन्ध में सत्याग्रह या अनशन के तरीकों का ग्रहण अत्यन्त अनुचित है। उन्होंने ठीक ही कहा है कि यदि इस प्रकार के तरीके अपनाये जाते रहे तो औद्योगिक विवादों को शान्तिपूर्ण तरीकों से हल करने का जो यन्त्र है, वही छिन्न-भिन्न हो जाएगा। ये तरीके प्रत्यक्ष कार्यवाही और दबाव डालने के समान हैं जो अनुशासन संहिता के सर्वथा विपरीत है।

भूमि स्वामित्व की उच्चतम सीमा

हम वर्षों से इस नीति का प्रतिपादन करते रहे हैं कि आदर्शवाद की वेदी पर वस्तु-स्थिति का बलिदान नहीं होना चाहिए। अखिल भारतीय कांग्रेस महासमिति ने अपने हैदराबाद अधिवेशन में भूमि-सुधारों के सम्बन्ध में भावुकता की अपेक्षा वस्तुस्थिति के अध्ययन पर अधिक बल दिया है और समस्या के सब पहलुओं पर विचार करने के लिए १५ सदस्यों की एक समिति नियुक्त करने का विचार किया है। भू-स्वामित्व की सीमा तक बहुत विवादास्पद विषय है। जो लोग भूस्वामित्व की सीमा कम-से-कम करने का समर्थन करते हैं उनके हृदय में अधिकतम किसानों को भूमि देने और अमीर और गरीब की विषमता कम करने की भावना मुख्य रूप से विद्यमान रहती है। यही कारण है कि अनेक राज्यों की सरकारों ने इस सम्बन्ध में कानून बनाए हैं अथवा कानून बनाने की दिशा में प्रगति कर रही हैं। भू-स्वामित्व की सीमा निर्धारित करके वे यह विश्वास करते हैं कि इस प्रकार वे किसानों का सहयोग प्राप्त कर लेंगे। जो लोग इसका विरोध करते हैं उनका कहना यह है कि आज की मुख्य समस्या भू-स्वामित्व की सीमा का निर्धारण नहीं, अन्नोत्पादन की वृद्धि है। यदि बड़े खेतों के स्वामी अपने अधिक साधनों से उत्पादन अधिक बढ़ाते हैं तो हमें उसका स्वागत करना चाहिए और समाजवाद की दिशा में आमदनी में असमानता कम करनी हो तो कृषि आय पर कर आदि उपाय इस्तेमाल किये जा सकते हैं। मद्रास सरकार ने कृषि आयकर को भू-स्वामित्व की सीमा निर्धारण करने पर तरजीह दी है। उत्तरप्रदेश सरकार के कृषि-मंत्री ८० एकड़ की सीमाएं निर्धारित करने के विरुद्ध हैं। उनके कथनानुसार ८० एकड़ सीमा निर्धारित करने पर सरकार को केवल ५॥ लाख एकड़ भूमि उपलब्ध होगी। जब ८ लाख भूमिहीन कृषक हैं, और ६० लाख कृषकों के पास इतनी कम भूमि है कि उस पर लागत से आमदनी कम होती है। इस तरह भूमि वितरण की समस्या हल होने वाली नहीं है। इसलिए उत्तरप्रदेश सरकार भूमि के क्षेत्रफल के अनुसार क्रमशः टैक्स लगाने के सुझाव को पसन्द करती है। श्री महावीर त्यागी ने भी कांग्रेस महासमिति में सीमा निर्धारण का विरोध किया है। मद्रास के वित्तमंत्री श्री सुब्रह्मण्यम ने एक प्रश्न पूछा है कि जब ६० प्रतिशत भूमि छोटे किसानों के पास है तब भी कृषि का उत्पादन क्यों नहीं बढ़ रहा? उनकी सम्मति में छोटे खेतों में उत्पादन भी अपेक्षाकृत कम होता है। इन सब बातों पर विचार करके यदि कांग्रेस महासमिति ने इस प्रश्न पर अधिक विचार करने का निश्चय किया तो हमारी दृष्टि में यह निश्चय स्वागत योग्य होना चाहिए।

योजना के नये लक्ष्य

हमने कुछ समय पूर्व यह भय प्रकट किया था कि हमारे नेता पंचवर्षीय योजना के व्यय लक्ष्यों को पूरा नहीं कर सकेंगे। ४८ अरब रुपये के लक्ष्य हमारी उठती हुई भावनाओं और आकांक्षाओं का प्रतीक तो अवश्य थे किन्तु वे वास्तविकता के अनुरूप नहीं थे। उस समय अनेक अर्थशास्त्रियों की चेतावनी को भी निराशावादी प्रवृत्ति कहकर टाल दिया गया था; किन्तु पीछे विवश होकर दबे शब्दों में ४५ करोड़ तक लक्ष्य घटा दिये गये। उस समय भी हमने इन लक्ष्यों की पूर्ति में भी सन्देह प्रगट किया था। नये समाचारों से प्राप्त हुआ है कि विदेशी ऋणों की इतनी अधिक सुविधाएं मिलने के बाद भी पंचवर्षीय योजना के लक्ष्य ४२ अरब २० करोड़ रुपये से अधिक नहीं बढ़ेंगे। इसका अर्थ यह है कि हमारे लक्ष्य ५॥ अरब रुपये कम कर दिये गये हैं। पिछले दिनों विश्व बैंक सम्मेलन में भी विश्व के अर्थशास्त्रियों ने हमें अधिक व्यावहारिक होने तथा अपने साधनों की सीमा से बहुत अधिक बाहर न बढ़ने का परामर्श दिया था। वस्तुतः आज की जिन परिस्थितियों में हम गुजर रहे हैं वे बड़ी कठिन हैं। महंगाई निरन्तर बढ़ती जा रही है और कर्मचारियों की मांगें भी बढ़ती जा रही हैं। सम्भावना यह भी है कि कमीशन

की रिपोर्ट आने के बाद शासन-व्यय ५० करोड़ रुपये तक बढ़ जाय। कर इतने अधिक बढ़ चुके हैं कि नये करों की सम्भावना यद्यपि योजना आयोग आगामी वर्ष राज्यों से पच्चीस-तीस करोड़ रुपये तक नये कर लगाने की सलाह देगा तथापि राज्यों के वित्तमन्त्री यह भली-भांति जानते हैं कि जनता की कर देने की क्षमता अब अपनी सीमा पर आ चुकी है। उन्हें जन-प्रतिनिधियों के सामने नये कर प्रस्ताव रखने का साहस ही नहीं होता! इसलिए आज हमें यह स्वीकार कर लेना चाहिये कि अपनी बड़ी योजनाओं में तथा शासन व्यय में आवश्यक कमी किये बिना आज कोई दूसरा मार्ग हमारे सामने नहीं है।

निर्यात कम हो रहे हैं और विदेशी-मुद्रा की समस्या अब भी मुंह बाये खड़ी है। अनेक नये देश निर्यात व्यापार में हमारे प्रतिस्पर्धी बनकर आ रहे हैं। आज के विदेशी ऋण ब्याज और मूलधन की वापसी के समय जो परेशानी उत्पन्न करेंगे उन्हें अभी से पहचानने की जरूरत है। इसलिए यह आवश्यक है कि हम अपने आज के व्ययों में कमी करें। अपनी प्रतिष्ठा और शान का महत्त्व कितना भी क्यों न हो हमें वास्तविक स्थिति की अपेक्षा नहीं करनी चाहिये।

साहूकारी क्षेत्र में भी रूस की प्रतिस्पर्धा

रूस आज राजनैतिक और वैज्ञानिक क्षेत्र में ही नहीं, आर्थिक क्षेत्र में भी पश्चिमी राष्ट्रों को प्रतिस्पर्धा करने लगा है। पहले रूस के आर्थिक साधन बहुत कम थे किन्तु आज यह स्थिति नहीं है। हाल ही में रूस ने विश्व और अब यूनाइटेड अरब रिपब्लिक को नील नदी पर आस्वान बांध बनाने के लिए ४० करोड़ रूबल अर्थात् ४४ करोड़ रुपये ऋण देने का निश्चय किया है। अब तक रूस ने विदेशों में जितनी रकमें लगाई हैं, उनमें यह सबसे बड़ी है। इस राशि का उपयोग रूस से मशीनों तथा अन्य सामग्री के रूप में होगा। 'सम्पदा' के पाठकों को शायद यह स्मरण हो कि आज से करीब दो वर्ष पूर्व संयुक्त राष्ट्र अमेरिका और ब्रिटेन ने यह ऋण देने का आश्वासन दिया था किन्तु पीछे से मिश्र की नीति से मतभेद हो जाने के कारण ऋण देने से इन्कार कर दिया था। इसी के परिणामस्वरूप मिश्र के लौह शासक कर्नल नासिर ने स्वेज नहर कम्पनी का राष्ट्रीयकरण कर लिया था। उसके बाद ब्रिटेन और फ्रांस के सैनिक आक्रमण के कारण ब्रिटेन की प्रतिष्ठा को धक्का लगा था और अन्त में उसको झुकना भी पड़ा था। जो ऋण ब्रिटेन और अमेरिका उस समय नहीं दे सके थे वह आज रूस ने दे दिया है। इस तरह दूसरे देशों को आर्थिक सहायता देने के क्षेत्र में भी रूस इन सम्पन्न देशों का मुकाबला करने लगा है।

आज ब्रिटेन और अमेरिका के राजनीतिज्ञों के सामने यह प्रश्न उपस्थित हो गया है कि आर्थिक युद्ध में रूस ने उन्हें जो मात दे दी है उसका वे क्या जवाब देंगे? मिश्र की इस विराट योजना पर १८ वर्षों में ५० करोड़ पौंड व्यय होने का अनुमान है। प्रथम चरण में ही ६ करोड़ पौंड व्यय होना है। योजना निर्माताओं का ख्याल है कि इस योजना के पूर्ण होने पर मिश्र की १० लाख एकड़ भूमि सिंचित होने लगेगी। अब ब्रिटेन और अमेरिका के राजनीतिज्ञ तथा अर्थशास्त्री इस दुविधा में पड़े हैं कि वे भी इस विराट योजना के निर्माण में कुछ सुविधाजनक शर्तें पेश करके मिश्र की सहानुभूति प्राप्त कर सकते हैं अथवा नहीं। रूस का ऋण तो योजना के प्रथम चरण के लिए ही पर्याप्त होगा।

मिश्र के सामने एक विकट समस्या और भी है। इस विशाल बांध के निर्माण में मिश्र और सूडान देशों के बीसियों गांव समा जाएंगे। अभी तक सूडान और मिश्र के पारस्परिक सम्बन्ध बहुत कटुतापूर्ण हैं। देखना यह है कि वे इस समस्या को किस प्रकार हल करते हैं।

पाकिस्तान की क्रांति से शिक्षाएं

पिछले महीने में पाकिस्तान में जो बड़ी भारी क्रान्ति हुई है, वह राजनैतिक दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है, किन्तु उसका आर्थिक महत्त्व भी और विशेषकर आर्थिक क्षेत्र की अनेक शिक्षाओं की दृष्टि से वह कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। हम अपने पाठकों की जानकारी के लिए बम्बई के प्रसिद्ध पत्र 'कामर्स' से कुछ उद्धरण पाठकों की जानकारी के लिए देना चाहते हैं।

इस सम्बन्ध में हमें पहली शिक्षा यह लेनी चाहिए कि बहुत मुद्रा-प्रसार तथा महंगाई लोकतंत्र की शत्रु है और यह किसी भी सरकार के लिए चिन्ताजनक है और विशेषकर लोकतंत्रीय सरकार की स्थापना के लिए।

डिक्टेटरशिप भी अधिक समय तक बढ़ती हुई महंगाई के साथ नहीं टिक सकती। आर्थिक दृष्टि से समृद्ध देशों में इसकी भयंकरता कुछ कम हो सकती है परन्तु अनुन्नत देशों में केवल उधार की राशियां लेकर बहुत समय तक खतरे को टाला नहीं जा सकता क्योंकि उत्पादन क्षमता जल्दी नहीं बढ़ाई जा सकती। इसलिए आवश्यकता यह है कि मुद्रा-व्यवस्था को सुरक्षित आधार पर दृढ़ किया जाय। मुद्रा-प्रसार के दुष्परिणामों को रोकने का एक ही तरीका है कि उत्पादन को बढ़ाया जाय। कन्ट्रोल और नियन्त्रणों से अनेक नई समस्याएं पैदा हो जाती हैं। आज भले ही पाकिस्तान में गुप्त भंडार बाजार में आने के कारण चीजें सस्ती हो रही हों, किन्तु इन भंडारों के समाप्त हो जाने पर फिर महंगाई बढ़ सकती है। मुख्य समस्या उत्पादन में वृद्धि की है। पिछले महायुद्ध के बाद बेल्जियम और हालैंड ने अपने सैनिक व्यय कम करके उत्पादन बढ़ाने पर अपनी सारी शक्ति लगा दी थी।

वही प्रत्येक देश को करना होगा।

पाकिस्तान की घटनाओं से सामान्य नागरिक को भी शिक्षा लेनी चाहिए। प्रत्येक नागरिक को स्वयं शासन में रहकर स्वावलम्बन का पाठ सीखने का यत्न करना चाहिये। सफाई और मितव्यय हम सबको सीखने की आवश्यकता है। व्यापारियों को भी अपने ग्राहकों और नियुक्त कर्मचारियों के प्रति ट्रस्टी के उत्तरदायित्व को समझना चाहिए। समाज-विरोधी हलचलों से अपने को निष्कलंक रखते हुए जनहित को सदा अपने कार्य की कसौटी समझना चाहिये। उन्हें यह अनुभव करना चाहिये कि उनका भविष्य कुछ राजनीतिज्ञों पर नहीं, जनता पर निर्भर करता है। राजनीतिक नेताओं को भी पाकिस्तान की घटनाओं से शिक्षा लेनी चाहिये। उन्हें देश के सामने आने वाली आर्थिक समस्याओं पर ध्यान देना चाहिये और जनता का ध्यान भाषा, प्रान्त तथा वर्ग की क्षुद्र बातों की ओर नहीं खींचना चाहिये, क्योंकि सामान्य जन को भोजन वस्त्र और निवास की ही अधिक आवश्यकता है।

कृषि व खाद्य की स्थिति

भारत सरकार ने कुछ समय पहिले एक कृषि प्रशासन समिति नियत की थी उसने सात महीने तक देश की खाद्य स्थिति के सम्बन्ध में विचार करके जो रिपोर्ट दी है वह बहुत विचारणीय है। समिति ने भिन्न-भिन्न राज्यों में जाकर जो अनुभव किया है वह हमारे लिए बहुत महत्वपूर्ण है। उसका कहना है कि स्थिति ऐसी गम्भीर है कि वर्तमान खाद्य स्थिति को सुधारने के लिए ही नहीं वरन् अब तक गंवाए जा चुके समय की पूर्ति के लिए भी हमें तुरन्त क्रांतिकारी कदम उठाने आवश्यक हैं। वस्तुतः प्रायः प्रत्येक राज्य में कृषि-विभाग को उद्योग की अपेक्षा कम महत्व दिया जाता है। उसको तभी याद किया जाता है, जब देश में खाद्य की कमी राष्ट्रीय संकट के रूप में अनुभव की जाती है। कृषि विभाग के कर्मचारियों के लिए सेवा की स्थितियां भी बहुत ही आवश्यक नहीं है। इस समिति को हर जगह कृषि सेवाओं में निरुत्साह की भावना और निराशा मिली। वस्तुतः कृषि विभाग का सम्बन्ध देहातों से होता है इसलिए बहुत योग्य व्यक्ति उधर जाना नहीं चाहते। कृषि को उद्योग से अधिक महत्व दिये बिना देश की आर्थिक स्थिति का सुधार नहीं हो सकता।

विदेशों से ऋण में सतर्कता

श्री रामगोपाल विद्यालंकार

गत कुछ ही दिनों में विदेशों से पूंजी की सहायता मिलने के सम्बन्ध में भारत की स्थिति एकदम बदल गई है। कहां तो लगभग ३ मास पूर्व तक द्वितीय पंचवर्षीय योजना के निर्माताओं और शासकों को यह चिन्ता हो रही थी कि उनकी योजना पूरी करने के लिए आवश्यक पूंजी एकत्र किस प्रकार की जा सकेगी ? और कहां अब ऐसा सुना जा रहा है कि तृतीय पंचवर्षीय योजना तैयार करने से पहिले ही उसके लिए आवश्यक विदेशी पूंजी की व्यवस्था विदेशी महाजनों के साथ कर ली जाएगी।

यह बात चाहे सत्य हो या न हो इतना तो अब प्रायः निश्चित ही है कि द्वितीय योजना की पूर्ति के लिए आवश्यक पूंजी भारत को विदेशों से ऋण के रूप में मिल जाएगी। यद्यपि यह अभी सर्वथा स्पष्ट नहीं है कि हमें अभी तक विदेशों से कितना ऋण मिला है और द्वितीय योजना की पूर्ति के अन्त तक कितना ऋण और लेना पड़ेगा, तथापि मोटे हिसाब से उसके अंक निम्न प्रकार हैं।

	करोड़ रु०
योजना के प्रथम दो वर्षों में प्राप्त ऋण	५४७
१६५८ में प्राप्त ऋण	४२७
	११७४

इस प्रकार हम अभी तक विदेशों से लगभग पौने बारह सौ करोड़ रुपये का ऋण ले चुके हैं और हमारी योजना के संचालक नेताओं के अन्दाजे के अनुसार हमें द्वितीय योजना पूरी करने के लिए लगभग ३०० करोड़ रुपये का ऋण और लेना पड़ेगा। इसका अर्थ यह है कि हम १६६१ तक लगभग १५०० करोड़ रुपये के ऋणी हो चुकेंगे।

किन्तु इसका एक दूसरा पक्ष भी है, जिसकी ओर से हम आंखें नहीं मूंद सकते। आज के लक्ष्यों को देखकर हम यह विशाल विदेशी पूंजी लगा रहे हैं उनसे हमें शीघ्र ही इतना अधिक लाभ होने लगेगा कि हम इस ऋण को चुकाने में समर्थ हो जायं। गत १० वर्षों में हमारे देश में जितने सरकारी कारखाने खोले गये या अन्य सरकारी काम किये गये हैं वे सब या तो घाटे पर चल रहे हैं और उनसे लाभ अति स्वल्प मात्रा में मिल रहा है; इसलिए हमें ऋण लेते हुए इस बात का अत्यन्त ध्यान रखने की आवश्यकता है कि हम जो ऋण लें उसे हम अदा भी कर सकेंगे या नहीं ? कुछ विदेशी अर्थ-शास्त्रियों ने अन्दाज लगाया है कि भारत आज जिस हिसाब से ऋण ले रहा है इस हिसाब से उसे ऋण चुकाना आरम्भ करने पर १५ वर्ष तक लगभग १०० करोड़ रुपये चुकाते रहना पड़ेगा और यह अदायगी भी रुपयों में नहीं, डालरों में करनी पड़ेगी। इसका मतलब यह है कि यदि भारत तब तक विदेशों के हाथ प्रतिवर्ष लगभग १०० करोड़ रुपये का माल बेचने में समर्थ न होगा तो वह इस ऋण की अदायगी नहीं कर सकेगा।

अभी तक भारत सरकार की नीति अपनी पूंजी की आवश्यकताएं पूरी करने के लिए भी अधिकाधिक टैक्स लगाते चले जाने की रही है, परन्तु गत डेढ़ या दो वर्षों के अनुभव से प्रत्यक्ष हो चुका है कि भारत की जनता अब टैक्स का और अधिक भार उठाने में समर्थ नहीं है। यह भी एक विचारणीय बात है कि टैक्स बढ़ा देने मात्र से सरकार की समस्या का हल नहीं हो जाएगी। प्रत्युत टैक्स बनाने से अन्य अनेक समस्याओं का जंगल खड़ा हो जाता है। टैक्स बढ़ाने से उपभोग्य वस्तुएं महंगी मिलने लगती हैं, और जब उनके कारण जीवन-निर्वाह का व्यय बढ़ता है तब श्रमजीवी और वेतन जीवी लोग पारिश्रमिक वृद्धि और वेतन वृद्धि का आन्दोलन करने लगते हैं। इस प्रकार टैक्स बढ़ाने का दुष्परिणाम एक ऐसी भंवर अथवा भूल-भुलैयां के रूप में प्रकट होता है जिससे बाहर निकलना जनता और सरकार दोनों के लिए एक विषम समस्या बन जाती है। इसलिए यदि हमारे देश के शासक और अर्थशास्त्री अभी से सावधान न हुए तो उन्हें शीघ्र ही आज से कहीं अधिक विषम परिस्थितियों का सामना करना पड़ेगा।

[[illegible]

आर्थिक विकास में नई दृष्टि की आवश्यकता

श्री जवाहरलाल नेहरू

देश के आर्थिक विकास, योजना के स्वरूप, नीति तथा अर्थशास्त्र के अध्ययन आदि के सम्बन्ध में प्रकट किये गये श्री नेहरू के ये विचार देश को एक नई दृष्टि देते हैं, जिन पर गंभीरता से विचार करना आवश्यक है।
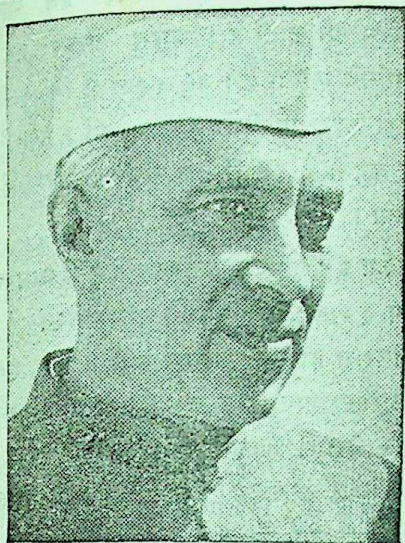
राष्ट्र नायक

कोई देश पूंजीवादी हो या समाजवादी, साम्यवादी हो अथवा गांधीवादी, एक चीज निश्चित है; और वह यह कि लोगों को कठोर श्रम करना चाहिए। कठोर श्रम किए बिना कोई भी देश उन्नति नहीं कर सकता, फिर चाहे कोई भी क्यों न हो। नीति निस्संदेह महत्वपूर्ण चीज है, लेकिन यह कितनी दिलचस्प बात है कि किस तरह रूस और पश्चिमी जर्मनी ने दूसरे युद्ध के बाद अपने लोगों का पुनर्वास कर लिया, यद्यपि दोनों की प्रणालियां एक दूसरे से भिन्न हैं। दोनों देशों में एक ही चीज देखने को मिली और वह यह कि वहां के लोगों ने कठोर श्रम किया।

हमारी समस्याएं अलग

कांग्रेस-जन अथवा दूसरे लोग समाजवाद व पूंजीवाद की बातें करते हैं। लेकिन हम समाजवादी समाज की बात कहते हैं। इसमें हमारा खास मतलब है। लेकिन सभी ऐसा नहीं सोचते। असली बात यह है कि हमारे राजनीतिक चिन्तन पर पश्चिम के राजनीतिक चिन्तन का प्रभाव है। मैं कोई शिकायत नहीं कर रहा। मैं तो एक तथ्य पेश कर रहा हूं। समाजवादी अथवा पूंजीवादी यूरोप में जितनी किताबें लिखी गईं, उनमें लेखकों के सामने केवल यूरोप के हालत रहे। हमने उनसे कुछ सीखा। लेकिन बुनियादी तथ्य तो यह है कि अन्य देशों की समस्याएं जरूरी नहीं, यूरोप की समस्याओं जैसी हों। हो सकता है कि उन्नत देशों की समस्याएं वैसी न हों, जैसी कि अनुन्नत देशों की हैं। मार्क्स ने आज से १०० साल पहिले आज से भिन्न परिस्थितियों के सम्बन्ध में कुछ लिखा। जाहिर है कि हम साम्यवादी और पूंजीवादी लेखकों द्वारा लिखी किताबों से काफी सीख रहे हैं। चीन में जो कुछ हो रहा है, उससे भी काफी कुछ सीख सकते हैं, इसलिए नहीं कि वह साम्यवादी है, बल्कि इसलिए कि उसे भी वैसी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है, जैसी कि हमें। हमारी उसमें दिलचस्पी स्वाभाविक है। यह कोई पूंजीवादी अथवा साम्यवादी समस्या नहीं। हमें अपने अर्थतन्त्र का स्वतन्त्र विकास करना है। हम दूसरों से सीख सकते हैं, लेकिन हमें अपना आधार अपनी जनता को बनाना होगा।

दूसरों की नकल नहीं

बड़ी विचित्र बात है कि भारत के लोग सामाजिक कार्यों की शिक्षा लेने के लिए पश्चिमी पूर्वी देशों को जाते हैं। हो सकता है कि यह मिसाल देना मूर्खतापूर्ण हो; किन्तु इससे जाहिर होता है कि हम में दूसरों की नकल करने की प्रवृत्ति है। मेरे कहने का यह अभिप्राय नहीं कि हम दूसरों से सीख नहीं सकते। लेकिन भारत की हालत दूसरे देशों से भिन्न है।

बुनियादी तौर से अर्थ-विशेषज्ञ आदि को भारत की

हालत मालूम होनी चाहिए और उनके आधार पर अपने सिद्धान्त खुद विकसित करने चाहिएं। उन्हें दूसरों से सीखना चाहिए, लेकिन वे जो कुछ सीखें, उसे भारत की हालतों के अनुसार ढाल लें। यदि हम पश्चिमी यूरोप अथवा साम्यवादी संसार की नकल करने लगें, तो हो सकता है कि हमें कुछ मदद मिल जाय; लेकिन उससे हम किसी और का पार्ट अदा करेंगे अपना नहीं।

अर्थ-शास्त्रियों से

भारत के अर्थशास्त्रियों ने भारत की स्थिति के अनुसार आर्थिक सिद्धान्तों का विकास करने में हमारी सहायता नहीं की। फिर हरेक व्यक्ति तो अर्थशास्त्री बन नहीं सकता। लेकिन अफसोस इस बात का है कि हमारे अर्थशास्त्रियों ने हमारी उस तरह की मदद नहीं की, जैसी कि उनसे अपेक्षा थी। अब वे कुछ मदद करने लगे हैं। उन्होंने भी कुछ ऐसी किताबें पढ़ रखी थीं, कि जिनके कारण उनकी गति अवरुद्ध हो गई थी।

हम लोग अमरीका, इंग्लैण्ड, रूस अथवा चीन की किताबों से सीख सकते हैं। लेकिन हमें भारत की हालत सदैव अपने सामने रखनी चाहिए। मान लीजिए कि एक भारतीय अमरीका जाकर इंजीनियर बन जाता है और भारत वापस आ जाता है। भारत आकर वह बड़ी-बड़ी मशीनें मांगने लगता है। वह कहता है कि अमरीका में तो उसे बड़ी-बड़ी मशीनें सुलभ थीं। उसे निराशा होती है और कहता है कि मैं इस अनुन्नत देश में काम नहीं कर सकता।

लेकिन हमें तो इस अनुन्नत देश में काम करना होगा। हम लोग ३७ करोड़ लोगों को उन्नत देशों में नहीं खदेड़ सकते। निराश होने की जरूरत नहीं। उस इन्जीनियर के लिए अमरीका जाना ठीक नहीं। उसे तो भारत के किसी स्कूल व कालेज में शिक्षा पानी चाहिए थी। हमें उन्हीं हालतों में काम करना है, जिनमें हम रहते हैं।*

---

* श्री नेहरू के एक भाषण से।

चीन का व्यापारिक युद्ध

कृष्णचन्द्र विद्यालंकार

भारत से ठीक उत्तर में और भारतवर्ष से भी अधिक बड़ा और अधिक अविकसित देश चीन है। भारत की स्वाधीनता प्राप्ती की अपेक्षा उसके पुनर्जन्म को—आन्तरिक क्रान्ति के बाद नवीन शासन को—स्थापित हुए दो वर्ष कम हुए हैं; किन्तु चीन जिस गति से अपनी औद्योगिक उन्नति कर रहा है, वह निःसन्देह प्रशंसा और ईर्ष्या की वस्तु है। चीन के दिल्ली स्थिति-सूचना विभाग की ओर से हाल ही में एक पुस्तिका— "चायनाज़ बिग लीप फार्वर्ड"— प्रकाशित हुई है। इसमें चीन की औद्योगिक उन्नति के सम्बन्ध में बहुत जानकारी दी गई है।

चीन की प्रथम पंचवर्षीय योजना के अनुसार ४२७० करोड़ युवान (चीन का सिक्का) व्यय के लक्ष्य नियत किये गये थे, किन्तु वास्तविक व्यय नियत लक्ष्य से भी बहुत अधिक बढ़ गया। वास्तविक व्यय ४९३० युवान अर्थात् नियत लक्ष्य से १५.४ युवान अधिक हुआ। यदि इस पूंजीगत व्यय में स्थानीय शासनों और उद्योगों के पूंजीगत व्यय भी सम्मिलत कर दिए जाएं तो वास्तविक व्यय ५५०० करोड़ युवान हो जाएगा। चीन की सरकार ने कुल जितना पूंजीगत व्यय किया है, उसका वर्गीकरण निम्नलिखित है:

विनियोजन का प्रतिशत

उद्योग	५६.०	प्रतिशत
कृषि, वन विकास और जल भंडार	८.२	प्रतिशत
यातायात और संवाद वहन	१८.७	प्रतिशत
विविध	१७.१	प्रतिशत

उद्योगों के निर्माण पर कुल जितना पूंजीगत व्यय हुआ, उसका ८५.६ प्रतिशत भारी उद्योगों पर किया गया है। समस्त चीन की जनता स्वेच्छा से या बलात् देश के औद्योगिक और आर्थिक विकास में जुट गई है, जिसका परिणाम यह हुआ है कि चीन का औद्योगिक विकास और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार दोनों ही बहुत बढ गये हैं। निम्नलिखित तालिका से यह प्रकट होगा कि १९५२ की अपेक्षा १९५७ में कितना अधिक उत्पादन हुआ है?

उत्पादन	इकाई	१९५२	१९५७
इस्पात	१००० टन	१३४९	५३४४
कोयला	१०,००,००० टन	६४	१२४
बिजली	१०,००,००० कि० वाट	७२६०	१९३२०
क्रूड आयल	१००० टन	४३६	१४५८
धातु काटने की मशीनें	हजार	१४	२६
रासायनिक खाद	१००० टन	१९४	८०४
सीमेंट	१००० टन	२८६१	६८५९
सूती कपड़ा	१०,००००० मीटर	३८३०	४९००
कागज	१००० टन	३७२	९२१

पिछले दिनों में १९५८ की पहली छमाही के जो अंक प्रकाशित हुए हैं वे भी उसकी औद्योगिक उन्नति के सूचक हैं।

इस वर्ष की पहली छमाही के सम्बंध में श्री वीसे के कथनानुसार उद्योग का उत्पादन गत वर्ष की अपेक्षा ३४ प्रतिशत बढ गया है। अर्थात इस वर्ष के लक्ष्य का ५८ प्रतिशत पहली छमाही में ही पूर्ण हो चुका है १९५५ की अपेक्षा १९५६ में २६ प्रतिशत उत्पादन बढा था और १९५८ में गत वर्ष की अपेक्षा ३४ प्रतिशत उत्पादन बढा है। यह वृद्धि निरंतर प्रतिमास बढती रही है — जनवरी में १४ प्रतिशत, फरवरी में १८ प्रतिशत, मार्च २९ प्रतिशत, अप्रेल में ४२ प्रतिशत, मई में ४६ प्रतिशत, जून में ५५ प्रतिशत वृद्धि हुई है। गत वर्ष की छमाही की अपेक्षा बिजली ३० प्रतिशत कोयला ४६ प्रतिशत इस्पात २६ प्रतिशत खाद ६५ प्रतिशत मशीनों के पुर्जे १०० प्रतिशत बढे हैं। यदि ये अंक ठीक हों तो निःसंदेह औद्योगिक प्रगति का यह अनुपात संसार के इतिहास में अभूतपूर्व है।

उपर्युक्त पुस्तिका से यह भी ज्ञात होता है कि चीन में सैकड़ों नये उद्योग स्थापित हो रहे हैं। रूस की भांति चीन भारी उद्योगों के विकास में बहुत तीव्रता से प्रयत्न कर

रहा है। उद्योग की कोई ऐसी दिशा नहीं है जिधर वह छलांगे मार कर आगे न बढ रहा हो। गत वर्ष की छमाही की अपेक्षा इस छमाही में पूंजीगत व्यय के रूप में ८८.१ प्रतिशत अधिक राशि लगाई गई है। वहां यह नारा जोरों से लगाया जा रहा है कि "प्रत्येक युवान (चीनी सिक्का) दो युवान का काम करे और निर्माण की गति दुगनी कर दी जाय।" तीन शान पर्वत माला से लेकर चीन की दक्षिणी सीमा तक कारखानों के निर्माण की चहल-पहल देखने को मिलती है।

चीन के लोह उद्योग सन्चालक श्री वू० ली० युंग के कथनानुसार चीन का इस वर्ष का लक्ष्य १०७ लाख टन इस्पात तैयार करने का है और १९५९ तक वह २०० लाख टन इस्पात उत्पादन करना चाहता है। ब्रिटेन में २७० लाख टन इस्पात आजकल तैयार होता है, किन्तु चीन का नारा यह है कि वह कुछ वर्षों में ब्रिटेन के लोह-उत्पादन को भी पछाड़ देगा। निःसंदेह एक नये उदीयमान राष्ट्र के लिए यह बहुत बड़ी महत्वाकांक्षा है।

चीन हमारा मित्र है उसकी आर्थिक व राजनैतिक पद्धति भारत से कितनी भी भिन्न क्यों न हो, आज दोनों एक दूसरे के परम मित्र हैं। भारत ने चीन के राष्ट्र-संघ में प्रवेश के प्रश्न पर अपने परम सहायक अमेरिका को नाराज करके भी जो नेतृत्व किया है, उसके कारण चीन व भारत में राजनैतिक सम्बन्ध बहुत अच्छे हैं, इसलिए यदि चीन आर्थिक व औद्योगिक उन्नति करता है तो हमारे लिए प्रसन्नता की बात होनी चाहिए। इस सम्बन्ध में किसी प्रकार के विरोधी भाव हमारे हृदय में नहीं होने चाहिएँ, किन्तु चीन की इस औद्योगिक प्रगति का एक दूसरा पक्ष भी है, जिसका हमारे देश के साथ सम्बन्ध है। इसलिए हम चीन की औद्योगिक प्रगति के आंकड़ों को केवल तटस्थ निरीक्षक की भांति नहीं देख सकते।

कुछ वर्ष पूर्व तक जापान ने अपनी असाधारण औद्योगिक और व्यापारिक कुशलता के द्वारा समस्त दक्षिण पूर्वी एशिया के बाजारों पर एकाधिकार कर रखा था। वह अत्यन्त सफलता पूर्वक ब्रिटिश पदार्थों को उन बाजारों से निकलाने में सफल हो गया था। जापान के युद्ध में व्यस्त और बाद में परास्त होजाने के कारण भारत ने दक्षिण पूर्वी एशिया के बाजारों में विशेष रूप से प्रवेश किया। भारत के कपड़े तथा इन्जिनियरिंग की मशीनें आदि वहां विपुल मात्रा में खपने लगी थी। जापान भी पिछले कुछ वर्षों से इन बाजारों में काफी आगे बढ चुका है। फिर भी दक्षिण पूर्वी एशिया को निर्यात से भारत को निःसंदेह काफी लाभ हो रहा है।

चिन्ता का कारण

चीन को करीब दो दशकों तक विदेशी और आन्तरिक युद्धों में लिप्त रहना पड़ा है। ब्रिटेन, जापान और अमेरिका आदि देशों ने उसका शोषण भी कम नहीं किया है। फलतः चीन में औद्योगिक विकास नहीं हो पाया और वहां का जीवन स्तर भी बहुत निम्न हो गया। इसलिए यदि चीन अपने उद्योगों का विस्तार करे और जनता का जीवन-स्तर ऊंचा करे तो इसमें सबको प्रसन्नता ही होनी चाहिए, किन्तु जब कोई देश अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में प्रवेश करता है तब यदि हम यह न देखें कि वह किन उपायों से उन बाजारों पर अपना अधिकार करने का प्रयत्न करता है, जिनमें पहिले भारत का प्रवेश है और इस अधिकार के लिए वह कौन से उचित या अनुचित उपाय बरत रहा है तो यह बुद्धिमत्ता और दूरदर्शिता नहीं होगी। हम इस लेख में यदि उन गतिविधियों का परिचय दें जो दक्षिण-पूर्वी एशिया के बाजारों में न केवल जापान और ब्रिटेन को हानि पहुँचा रही हैं, बल्कि हमारे देश को भी हानि पहुँचा रही है तो मुझे आशा है कि चीन के साथ मित्रतापूर्ण सम्बन्ध रखने तथा उसकी हरेक बात की प्रशंसा करने को उत्सुक भाई नाराज नहीं होंगे।

चीन का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार पिछले पांच वर्षों में बहुत तेजी से बढ़ा है। १९५० में यदि निर्यात व्यापार का सूचक अंक १०० था तो १९५८ में वह बढ़कर २५६ हो गया है। कारखानों में तैयार माल का निर्यात बहुत तेजी से बढ़ रहा है। १९५३ से १९५६ तक के चार वर्षों में निर्यात चार गुना बढ़ गए हैं। अपनी राजनैतिक आकांक्षाओं के कारण एशियन-अफ्रिकन देशों से अपना व्यापार विशेष रूप से बढ़ा रहा है। उसका व्यापार बढ़े तो हमें असंतोष नहीं होना चाहिये किन्तु जब वह अवांछनीय उपायों से अपना व्यापार बढ़ाता है और उनसे भारत के

निर्यात पर, जो आज हमारी सबसे प्रमुख आवश्यकता है, प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है तो हम चिन्ता किए बग़ैर नहीं रह सकते।

उच्चिंग का शस्त्र

हांगकांग से प्राप्त समाचारों के अनुसार चीन की मशीनें और औजार इतने सस्ते मूल्य पर वहां बिक रही हैं कि यदि हांगकांग का कोई व्यापारी वह माल खरीद कर चीन को निर्यात करे तो उसे अमित लाभ हो सकता है। कैन्टन की चीनी और सीमेंट इतने कम दामों पर वहां बिक रहे हैं कि ताइवान और जापान को मुकाबिला करना कठिन हो रहा है। अपने व्यापारियों के द्वारा पेकिंग इन बाजारों के अन्तर में प्रवेश कर रहा है। केवल २½% के नाममात्र सूद पर विलम्बित भुगतान की शर्तें और आंतरिक मूल्यों से बहुत कम मूल्यों पर विदेशों में बिक्री के कारण अन्य प्रतिस्पर्धी देशों को बहुत कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है।

चौंका देने वाले अंक

चीन ने थाईलैंड, इण्डोनेशिया और बर्मा में, जो भारतीय वस्त्र के बड़े बाजार हैं, यह प्रस्ताव रखा है कि वे किसी भी अन्य देश के मूल्यों से १०% कम मूल्य पर कपड़ा बेचेगा। इसका दुष्परिणाम प्रगट होने लगा है। मलाया में भारतीय वस्त्रों का निर्यात बहुत कम हो गया है। गतवर्ष की पहली तिमाही में वहां १८६ लाख गज भारतीय कपड़ा गया था. परन्तु इस वर्ष की पहली तिमाही में केवल ६२ लाख गज कपड़ा गया है। १९५४ में मलाया के वस्त्र व्यापार में भारत का ३०% भाग था जो इस वर्ष केवल १२% रह गया है। हांगकांग में ११५.९ लाख डालर (हांगकांग) का कपड़ा इस वर्ष के पहले चार मास में गया है जब कि गतवर्ष ३६४.६० लाख डालर का कपड़ा गया था। गतवर्ष मई में बर्मा को ३९.१ लाख गज कपड़ा गया था जबकि इस वर्ष मई में केवल २.९३ लाख गज कपड़ा गया। गत वर्ष के पहिले सात महीनों में दक्षिण पूर्वी एशिया के देशों को ५१०० लाख गज कपड़ा भेजा गया था, जबकि इस वर्ष के इन ७ महीनों में केवल ३२०० लाख गज अर्थात् ४० प्रतिशत कम कपड़ा भेजा गया है।

केवल कपड़े की ही बात नहीं है अन्य औद्योगिक पदार्थों के व्यापार में भी बहुत तेजी से बढ़ता हुआ चीन भारतीय व्यापार के लिए एक चिन्तनीय समस्या बन गया है।

वस्तुतः चीन ने 'माल उठाओ पैसा पीछे देना' इस नीति पर बहुत तेजी से चलना शुरू किया है। नीचे के कुछ अंकों से यह स्पष्ट हो जाएगा कि उसकी व्यापारिक प्रगति कितनी तेज है—

चीनी माल का आयात (लाख डालरों में)

	१९५५	१९५७
मलाया सिंगापुर	३७८	५२२
हांगकांग	१५७१	१९७९
इण्डोनेशिया	९९	२१३
बर्मा	२३	५१
पाकिस्तान	२	९३

इसी तरह उत्तरी वियतनाम, कम्बोडिया आदि-आदि देशों में भी चीनी माल का आयात बढ़ता जा रहा है। भारतवर्ष की अपेक्षा भी अधिक हानि जापान और ब्रिटेन को हो रही है। १९५६ में इण्डोनेशिया में जापान का ७२० लाख डालर का माल गया था जो १९५७ में ११८ लाख डालर रह गया। भारत इस वर्ष सीमेंट का निर्यात करने की सोच रहा है किन्तु चीन भी इस दिशा में प्रयत्नशील है। २ वर्षों में उसका सीमेंट निर्यात १० गुना बढ़ गया है। सिलाई की मशीन, बाइसिकल, थर्मस, पेन्सिल, बिजली के पंखे, टाइप राइटर, रेडियो, कास्टिक सोडा, कागज तथा अन्य वस्तुओं का निर्यात भी चीन करने लगा है। चाय का निर्यात भारत के लिए कामधेनु है, परन्तु अब चीन १९६२ तक विश्व का चाय का सबसे बड़ा उत्पादक होने की महत्वाकांक्षा रखता है।

हम भी सोचें

जापान व ब्रिटेन आदि देशों के उद्योगों को चीन के इस व्यापारिक युद्ध से जो हानि पहुँच रही है, उसके कारण इन देशों में क्षोभ होना स्वाभाविक है। अनेक क्षेत्रों में इस युद्ध को राजनैतिक युद्ध का एक अंग माना जा रहा है। व्यापारिक मार्ग द्वारा चीन इन देशों में प्रवेश कर साम्यवाद का प्रसार कर रहा है। इन देशों में अपना वर्चस्व स्थापित करना चाहता है और यह सिद्ध करना चाहता है कि

औद्योगिक क्षेत्र में साम्यवाद कितनी सफलता प्राप्त कर सकता है ? यही कारण है कि वह इस व्यापारिक युद्ध में डंपिंग तथा अपनी आर्थिक क्षमता से कहीं बढ़कर अन-आर्थिक उपायों पर उतर आया है । हम भारत वासियों को चीन के राजनैतिक उद्देश्यों पर शंका प्रकट नहीं करनी है, भले ही वे सच भी हों । हमें तो आज यह सोचना है कि चीन की औद्योगिक उन्नति के और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारिक क्षेत्र में बढ़ते हुए वर्चस्व के मूल कारण क्या हैं ? और हम एशिया के अपने इस नये प्रतिस्पर्धी देश की आक्रमण नीति से अपना बचाव कैसे कर सकते हैं ? यदि उसका बढ़ता हुआ उद्योग चीन के करोड़ों नागरिकों के जीवन स्तर को ऊंचा करे तो हमें कोई आपत्ति नहीं है । किन्तु यदि वह भारत के बाजारों पर अधिकार करले तो हमें गम्भीरतापूर्वक सोचना ही चाहिये कि हम उसके मुकाबले में कैसे ठहर सकते हैं ! चीन में उत्पादन-व्यय भारत की अपेक्षा कम होने का प्रधान कारण यह है कि वहां पदार्थों के मूल्य भारत की अपेक्षा बहुत कम—नहीं के बराबर—बढ़े हैं । १९५२ का सूचक अंक यदि १०० था तो ५ वर्ष बाद १९५७ में यह अंक केवल १००.७ ही था जबकि भारत में १०० से १४०.५ तक ये अंक पहुँच गये । भारत में कच्चे माल व मजदूरी आदि अधिक व्ययों के कारण भी उत्पादन व्यय अधिक हो रहा है । आर्थिक अनुसन्धान-समिति की रिपोर्ट से ज्ञात होता है कि चीन में भारत की अपेक्षा प्रति व्यक्ति कितना अधिक औद्योगिक उत्पादन हुआ है :—

उत्पादन	भारत	चीन
बिजली (के० डब्ल्यू० एच०)	२५	[illegible]
कोयला (के० जी०)	१०४	[illegible]
लोहा इन्गोट्स (के० जी०)	५	[illegible]
सीमेंट (के० जी०)	१३	[illegible]

इन अंकों से हमें अपनी औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि पर गम्भीरता से विचार करना चाहिये और यह भी सोचना चाहिये कि निर्यात व्यापार की रक्षा के लिए क्या कदम उठाने चाहिएं ? भारत की आर्थिक स्थिति का मेरुदण्ड कृषि और निर्यात व्यापार हैं । विदेशी मुद्रा की निरन्तर बढ़ती हुई विकट समस्या को दूर करने के लिए निर्यात व्यापार पर आंच नहीं आने देनी चाहिये । कपड़ा, चाय और इंजिनियरिंग उद्योग तीनों के ही भारतीय निर्यात पर चीन की नीति आक्रमण की है । राजनैतिक मित्रता की सद्भावना का अर्थ अपने बढ़ते हुए निर्यात की अपेक्षा नहीं करनी चाहिये । —

पंचवर्षीय योजना और सामुदायिक विकास आन्दोलन

श्री वी० टी० कृष्णमाचारी, उपाध्यक्ष, आयोजना आयोग

हमारी पंचवर्षीय योजनाओं में कृषिसंबंधी कार्यक्रमों को प्राथमिकता दी गई है। पहली पंचवर्षीय योजना में जो कुछ सफलता हमें अब तक इस दिशा में मिली है तथा इस योजना के अन्त तक जो कुछ भी लक्ष्य हमें सिद्ध करने हैं, उसे इस लेख में दर्शाया गया है।

भारत की ७० प्रतिशत जनता गांवों में रहती है। उसकी गरीबी दूर करने और रहन-सहन अच्छा करने के लिये खेती और उससे सम्बन्धित समस्याओं पर ध्यान देना जरूरी है। खेती की उन्नति तभी हो सकती है, जब किसानों में से अगुआ निकलें और सरकार भी उन्हें पूरी मदद दे। इसलिए पहली पंचवर्षीय योजना में सामुदायिक विकास आंदोलन पर ज्यादा जोर दिया गया। इसका उद्देश्य गांवों के लोगों को अपना रहन-सहन ऊंचा उठाने के लिये सब तरह की सरकारी, शिल्पिक तथा आर्थिक सहायता देने की व्यवस्था करना है।

सामुदायिक विकास आंदोलन में भूमिहीन और पुरानी व्यवस्था से पीड़ित किसानों पर खास ध्यान दिया जाता है। इस आन्दोलन में हर गांव के सामने यह कार्यक्रम रखा जाता है—

१. हर परिवार को अपनी खेती या उद्योग धंधे की उन्नति की एक योजना बनानी चाहिये और इस योजना पर काम करने के लिए उस परिवार को आवश्यक सहायता दी जानी चाहिये।

२. सहकारी आन्दोलन को खूब बढ़ाना चाहिये, ताकि हर परिवार कम से कम एक सहकारी समिति का सदस्य अवश्य हो।

३. हर परिवार को सामुदायिक हित के काम में कुछ न कुछ श्रमदान अथवा धन-दान अवश्य करना चाहिये।

४. सभी गांवों में स्त्रियों और युवकों का संगठन करना चाहिये।

— लेखक —

पहली योजना में ७६ लाख १० हजार टन और अन्न उपजाने का लक्ष्य था, जिसकी पूर्ति इस प्रकार होनी थी—

सिंचाई की बड़ी योजनाओं से	२० लाख १० हजार टन
सिंचाई की छोटी योजनाओं से	२३ लाख ८० हजार टन
नई जोत और भूमि के विकास से	१५ लाख १० हजार टन
उर्वरक और खादों से	११ लाख ५० हजार टन
उन्नत बीजों से	५ लाख ६० हजार टन
कुल	७६ लाख १० हजार टन

१९५५-५६ में १९४९-५० से अनुमानतः १ करोड़ ९ लाख टन अधिक अन्न हुआ। इसमें नहरों आदि की सिंचाई के फलस्वरूप ६० लाख टन अधिक खाद्यान्न उपजाया गया, जबकि लक्ष्य ७६ लाख टन था।

पहली योजना में गांवों के विकास के लिये ७ अरब ६० करोड़ रुपया निर्धारित था। इसमें गांवों में बिजली

और पानी के प्रबन्ध, छोटे उद्योगों और दस्तकारी, और थोड़ी मियाद पर ऋण देने का व्यय शामिल नहीं है।

पहली योजना में इस दिशा में जो काम हुआ, उस पर आयोजन आयोग का यह विचार था—

"यद्यपि खाद्यान्नों का उत्पादन बढ़ती पर है, पर यह तो मानना ही पड़ेगा कि मौसम की अनुकूलता का भी इसमें बहुत बड़ा हाथ रहा है। अतएव उत्पादन की बढ़ती को अस्थिर ही मानना चाहिये। इसलिये सभी राज्यों को पिछले काम की बारीकी से समीक्षा करनी चाहिये और आगे के लिये सीख लेनी चाहिये।"

फरवरी १९५५ में दूसरी पंचवर्षीय योजना का खाका तैयार हो रहा था। आयोजन आयोग ने अगले दस वर्षों में अन्न की उपज दुगुनी करने का लक्ष्य स्थिर किया और राज्य सरकारों को लिखा कि इस काम को पूरा करने के लिए गांव के हर परिवार को पूरी सहायता दी जानी चाहिये। अन्न की उपज बढ़ाने के अलावा हर गांव में पीने के पानी का इन्तजाम होना चाहिये और रेलवे स्टेशन तथा मुख्य सड़क से मिलाने वाली सड़कें बननी चाहिएं।

यह लक्ष्य असम्भव नहीं है। सन् १९५६ में विश्व बैंक मिशन ने यह विचार प्रकट किया था कि यदि सिंचाई का ठीक प्रबन्ध हो और ठीक तरीकों से काम लिया जाय तो भारत में खाद्यान्नों का उत्पादन चौगुना या पंचगुना हो सकता है।

राज्य सरकारों ने शुरू में जो लक्ष्य निर्धारित किये वे ठीक नहीं जंचे। अतः राज्य सरकारों, कृषि मंत्रालय, सामुदायिक विकास मंत्रालय तथा आयोजन आयोग ने इस विषय में सोच-विचार किया और फिर ये लक्ष्य निर्धारित किये गये—

वस्तु	१९५५-५६ (आधार वर्ष मानकर) की अनुमानित पैदावार (लाख टनों में)	पैदावार का लक्ष्य (लाख टनों में)
खाद्यान्न	६ करोड़ ५० लाख टन	८ करोड़ ४ लाख टन
तेलहन	५५ लाख टन	७६ लाख टन
गुड़	५८ लाख टन	७८ लाख टन
रुई	४२ लाख गांठें	६५ लाख गांठें
पटसन	४० लाख गांठें	५५ लाख गांठें

इस तरह कृषि की पूरी पैदावार २८ प्रतिशत [illegible] का लक्ष्य रखा गया, जिसमें अन्न उत्पादन में २५ प्रति[illegible] और व्यापारी फसलों के उत्पादन में ३४ प्रतिशत की [illegible] होगी।

गांवों के विकास के लिये दूसरी योजना में १०[illegible] २६ करोड़ रुपये निर्धारित हैं। गांवों से सम्बन्धित [illegible] दस्तकारी आदि की योजनाओं पर भी पहली योजना [illegible] अपेक्षा अधिक धन रखा गया है।

राज्यों की विकास योजनाओं में सिंचाई, उन्नत [illegible] अच्छे औजार, जापानी ढंग से धान की खेती, खादों [illegible] उर्वरकों के उपयोग पर ध्यान रखा गया है। दूसरी योजना की अवधि में अच्छे बीज उगाने के लिये ४१८५ [illegible] बनाये जायेंगे।

राज्यों में अन्न की पैदावार बढ़ाने के ये लक्ष्य हैं—

सिंचाई की बड़ी योजनाओं से	३० लाख २० हजार [illegible]
सिंचाई की छोटी योजनाओं से	१८ लाख १० हजार [illegible]
उर्वरकों से	३७ लाख ७० हजार [illegible]
उन्नत बीजों से	३४ लाख टन
भूमि के सुधार से	९ लाख ४० हजार [illegible]
अच्छे ढंग की खेती से	२४ लाख ७० हजार [illegible]
कुल :	१ करोड़ ५४ लाख ९० हजार [illegible]

आयोजन आयोग ने गांव पंचायतों तथा ग्राम सहकारी समितियों से कहा है कि आप हर परिवार से खेती की उन्नति की अपनी योजना बनाने को कहें। इसके आधार पर फिर गांव की योजना बने और उसी के आधार पर सामुदायिक विकास खण्ड, जिला और राज्य की योजनाएं बनायी जायें। आशा है, चालू वर्ष के अन्त तक लगभग ३ लाख गांवों में सामुदायिक विकास आंदोलन चल पड़ेगा और दूसरी योजना के अन्त तक अर्थात् १९६०-६१ में भारत का कोई भी गांव इससे अछूता न रहेगा।

योजना को सफल बनाने के लिये सिंचाई की बड़ी और मझोली योजनाओं की मद में २६ करोड़ रु० की वृद्धि कर दी गई है। आशा है कि मौसम खराब होने पर भी अन्न उत्पादन वृद्धि की योजना में निश्चित सफलता मिलेगी।

दक्षिण पूर्वी एशिया की आर्थिक संसद : कोलम्बो योजना

श्री विष्णुशरण

"संसार के किसी भी भाग की निर्धनता, उसकी सम्पन्नता के लिए खतरा है।" यह घोषणा १९४४ में अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के फिलेडेलफिया चार्टर ने की थी। कोलम्बो योजना इसी प्रकार के एक खतरे को दूर करने का प्रयास है।

दक्षिणी पूर्वी एशिया में संसार की कुछ तीव्र असमानतायें परिलक्षित होती हैं। यहां संसार के लगभग ६ प्रतिशत क्षेत्रफल में २४ प्रतिशत जनता का निवास है और वह जनता भी संसार की सर्वाधिक निर्धन व अशिक्षित जनता है। सदियों से विदेशी शासकों द्वारा शोषित इन देशों में स्वतंत्रता के नवप्रभात ने एक नई दिशा की ओर संकेत किया। जनता के हृदय में नवीन आशाओं व विश्वास का उदय हुआ और उसने अपने विकास के प्रयत्नों को योजनाबद्ध रूप में क्रियान्वित करने का निश्चय किया। अन्य देश भी सहायता देने के लिए आगे आये। इस क्षेत्र के आर्थिक पुनर्निर्माण व विकास की दिशा में इन सभी के समन्वित प्रयत्नों का नाम ही कोलम्बो योजना है।

स्थापना

जनवरी १९५० में विश्व समस्याओं तथा विशेष रूप से दक्षिणी व दक्षिणी पूर्वी एशिया के देशों की आवश्यकताओं पर विचार विनिमय करने के उद्देश्य से कोलम्बो में राष्ट्रमंडलीय विदेश मंत्रियों का सम्मेलन हुआ था। इसी सम्मेलन में कोलम्बो योजना के विचार का जन्म हुआ। इन मंत्रियों की सहमति से एक कोलम्बो योजना परामर्शदाता समिति स्थापित की गई, जिसके उद्देश्य थे—

इस क्षेत्र की आवश्यकताओं का सर्वेक्षण करना,
प्राप्त व अपेक्षित साधनों का अनुमान लगाना,
क्षेत्र की विकाससमस्याओं पर विश्व का ध्यान केन्द्रित करना और
एक ऐसे तंत्र का निर्माण करना जिसमें कि इन देशों के जीवनयापन के मान को उन्नत करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सहकारी प्रयत्नों को प्रोत्साहित किया जा सके।

योजना के प्रारम्भिक सदस्य थे— आस्ट्रेलिया, कनाडा, इंग्लैंड, न्यूजीलैंड, श्रीलंका, भारत, पाकिस्तान, मलाया व ब्रिटिश-बोर्नियो।

कोलम्बो योजना परामर्शदाता समिति का प्रथम अधिवेशन सिडनी में मई १९५० में हुआ था। यहां यह निश्चय किया गया था कि सदस्य राष्ट्र १ जुलाई १९५१ से ३० जून १९५६ के षट्वर्षीय काल के लिए विकास कार्यक्रम तैयार करें। यद्यपि इस बैठक में केवल राष्ट्रमंडलीय देशों के प्रतिनिधि ही सम्मिलित हुए थे, पर यह निश्चय किया गया था। कि प्रदेश के अन्य देशों को भी समानता के आधार पर इस योजना में भाग लेने के लिए निमंत्रित किया जाय। इस विचार से कि वर्तमान युग में औद्योगिक ज्ञान के बिना आर्थिक उन्नति सम्भव नहीं है, एक औद्योगिक सहयोग योजना का स्थापित करना भी एकमत से स्वीकृत हुआ। समिति का अगला सम्मेलन लंदन में सितम्बर १९५० में हुआ, जिसमें सदस्य देशों द्वारा तैयार किए गए विकास कार्यक्रमों पर विचार किया गया तथा वे एक रिपोर्ट के रूप में समाविष्ट कर दिये गये। यही रिपोर्ट 'दक्षिणी तथा दक्षिणी पूर्वी एशिया के सहकारी आर्थिक विकास के लिए कोलम्बो योजना' के नाम से विख्यात हुई। १९५३ में यह सम्मेलन दिल्ली में हुआ था और इस वर्ष सीटिल (यू. एस. ए.) में १०-१४ नवम्बर को हो रहा है। इस समय २० राष्ट्र इस योजना के सदस्य हैं।

१९५० से ही औद्योगिक सहयोग योजना, इस योजना का एक अविच्छिन्न अंग रही है। यह योजना सदस्य राष्ट्रों को औद्योगिक सहायता देने का माध्यम है। समन्वय का कार्य कोलम्बो स्थित एक 'परिषद' के द्वारा होता है। दिल्ली के सम्मेलन में एक सूचना केन्द्र स्थापित करना भी निश्चित किया गया था, जिसका कार्यालय कोलम्बो में है।

अन्तर्राष्ट्रीय पुनर्निर्माण व विकास बैंक ने 'योजना' की गतिविधि से निकट सम्पर्क रखा है। एशियाई व सुदूर

पूर्वीय आर्थिक आयोग के अध्ययन व कार्य भी इसी क्षेत्र के आर्थिक विकास से सम्बद्ध हैं। अतएव इन दोनों संस्थाओंके प्रतिनिधि 'योजना' के सम्मेलनों में पर्यवेक्षक के रूप में भाग लेते हैं। औद्योगिक सहयोग परिषद की बैठकों में संयुक्त राष्ट्र संघ के औद्योगिक सहायता बोर्ड व यू. एस. ए. के प्रतिनिधि सम्पर्क अधिकारियों के रूप में भाग लेते हैं।

कोलम्बो योजना जून १६५७ में समाप्त हो रही थी पर इसकी उपयोगिता को दृष्टिगत रखते हुए सिंगापुर सम्मेलन में यह निश्चित किया गया कि योजना का कार्य-काल ५ वर्ष के लिए जुलाई १६५७ से जून १६६१ तक बढ़ा दिया जाय तथा १६५६ के सम्मेलन में १६६२ से आगे कार्यकाल बढ़ाने के प्रश्न पर पुनः विचार किया जाय।

लाभ

इस योजना से होने वाले लाभों का कुछ अनुमान १६५५ की अपेक्षा १६५६ में हुई प्रतिशत उत्पादन वृद्धि से लगाया जा सकता है: — चीनी (५ प्रतिशत), कच्चा पैट्रोलियम (८ प्रतिशत), कोयला (३ प्रतिशत), सूत (३ प्रतिशत), सूती कपड़ा (२ प्रतिशत), जूट का पक्का माल (११ प्रतिशत), सीमेंट (११ प्रतिशत), इस्पात (२ प्रतिशत), विद्युत (१४ प्रतिशत)। इस प्रगति को हमें विश्व की आर्थिक व मुद्रा स्थिति की पार्श्व भूमि में देखना चाहिए। १६५६ में यद्यपि समस्त संसार में आर्थिक उन्नति हुई, पर १६५५ की अपेक्षा इस वर्ष की गति में शिथिलता थी। इनके अतिरिक्त भी सभी आर्थिक क्षेत्रों में सिंचन, नवीन औद्योगिक परियोजनाएं, सामुदायिक विकास व ग्रामीण स्वास्थ्य कार्यक्रम, यातायात व संवाद-वाहन साधनों में निरंतर प्रगति हुई है। उद्योगों को विशेष महत्व दिया गया है। कुछ देशों ने वैज्ञानिक गवेषणा कार्य भी प्रारम्भ किया है। उत्पादन में नवीन वैज्ञानिक प्रणालियों को अपनाया जा रहा है व मनुष्यों में एक नवीन औद्योगिक दृष्टिकोण का विकास हो रहा है।

निम्न तालिका आर्थिक विकास पर किये गये सार्वजनिक व्यय को बतलाती है—

कोलम्बो योजना—सार्वजनिक क्षेत्र में विकास व्यय
(१० लाख पौंड में)

	१६५३-५४	१६५४-५५	१६५५-५६	१६५६-५७	१६५७-५८
समस्त देश	५२०.५	६५०.२	७४२.६	८८४.०	१०५६.६

१६५३ की अपेक्षा १६५७ में विकास व्यय दुगने से भी अधिक हो गया। यह भी स्मरणीय है कि ये आंकड़े केवल सार्वजनिक व्यय को ही बतलाते हैं—निजी क्षेत्र के व्यय को नहीं।

१६५१ से १६५७ तक सदस्य दाता देशों ने अन्तर्शासकीय आधार पर लगभग ३५० करोड़ डालर की बाह्य सहायता दी। इसमें से लगभग ३०० करोड़ डालर की सहायता तो केवल यू० एस० ए० से ही प्राप्त हुई थी। १६४६ से अक्तूबर १६५७ तक इस क्षेत्र के देशों को अन्तर्राष्ट्रीय बैंक द्वारा दिए गए ऋणों की मात्रा ८८.१ करोड़ डालर थी।

प्रौद्योगिक सहयोग

कोलम्बो योजना के प्रौद्योगिक सहायता कार्यक्रम के अन्तर्गत विकसित देश अन्य देशों को अपने विशेषज्ञ भेजते हैं, उनके विद्यार्थियों को अपने देश में प्रशिक्षित करते हैं तथा उनके प्रयोग के लिए वैज्ञानिक उपकरण प्रदान करते हैं। इस कार्यक्रम के ७ वर्षों के जीवनकाल में सदस्य राष्ट्रों ने ६.१० करोड़ रुपये प्रौद्योगिक सहायता पर व्यय किए हैं। निम्न तालिका इस कार्यक्रम की प्रगति स्पष्ट करती है—

कोलम्बो योजना प्रौद्योगिक सहयोग
कार्यक्रम की प्रगति
(जुलाई १६५० जून १६५७)

	विशेषज्ञ (भेजे गए)	प्रशिक्षणार्थी (प्रशिक्षित किए गए)
भारत	१६	५११
क्षेत्र के अन्य देश	२	११८
यू० एस० ए०	१४४६	४८११
क्षेत्र के बाहर के अन्य सदस्य देश	७७१	४६४१

❀ श्री लंका तथा फिलीपाइन्स को छोड़कर।

राष्ट्र संघ व उसकी विशेष संस्थायें	३६८२	२४४०
	६,२२३	१२,८६५

उपर्युक्त तालिका से इस क्षेत्र में भारत की विशिष्ट स्थिति का स्पष्ट परिचय मिलता है। जून १६५७ के अन्त में इस क्षेत्र के १८५८ प्रशिक्षणार्थी संसार के विभिन्न भागों में अध्ययन कर रहे थे व २०७ विशेषज्ञ इस क्षेत्र के आर्थिक अभ्युत्थान में अपना योग दे रहे थे।

इस क्षेत्र की पूंजी व प्रौद्योगिक सहायता की आवश्यकताएँ बहुत विशाल हैं। यद्यपि प्राप्त सहायता आवश्यकता के अनुरूप नहीं है पर निश्चय ही उसने राष्ट्रीय प्रयत्नों को प्रोत्साहित किया है। अनेक दशाओं में वाह्य सहायता मिलने पर अपने देश के साधनों को नियोजित करना सम्भव हो जाता है। वह स्वतः तो विकास का एक साधन है ही पर उसके कारण अन्य साधनों का निर्माण भी होता है।

शिल्प सहयोग योजना के आरम्भ, १६५१ से जून १६५८ तक, इस क्षेत्र के देशों को १,००२ विशेषज्ञ दिये गये और ६,८८८ छात्रों को सदस्य देशों में ऊंची शिक्षा दिखाई गई। इसके अलावा, योजना के अंतर्गत काम सिखाने और विशेषज्ञों के प्रयोग के लिए २० लाख पौंड के विविध उपकरण और यंत्र दिये गये।

दिसम्बर १६५७ तक, इस योजना के अधीन सदस्य देशों ने ६८ लाख पौंड की दूसरे सदस्यों को सहायता दी। इसके पहले साल ६८ करोड़ पौंड की इस प्रकार की सहायता दी गई थी।

पिछले दो सालों में दूसरे देशों में जाकर शिक्षा पाने वालों की संख्या में कुछ कमी हुई है। इनकी संख्या १६५६ में सबसे अधिक रही थी। इसका मतलब यह नहीं कि शिल्पिक-सहायता में कुछ कमी हुई है, बल्कि यह है कि

(शेष पृष्ठ ६४५ पर)

विदेशी सहायता के भ्रामक आंकड़े

गत मास में भारत को विभिन्न देशों से आर्थिक सहायता दिये जाने के कई वायदे मिले हैं। विदेशों से कितनी सहायता भारत को मिल रही है?—इस विषय में अर्थशास्त्र के पाठक उत्सुक हैं। यह उत्सुकता इसलिए और भी बढ़ जाती है कि विदेशी सहायता के विषय में सरकार के विभिन्न सूत्रों से प्राप्त होने वाले आंकड़ों में आपस में बड़ा विरोध है। श्री टी० टी० कृष्णमाचारी, भूतपूर्व अर्थ मंत्री ने १९५७ के अन्तिम महीनों में संयुक्त राज्य अमेरिका में दिये गये अपने भाषणों में कहा था कि भारत को अपनी योजना पूरी करने के लिए ६०० करोड़ रुपये की विदेशी सहायता की आवश्यकता है। चार राष्ट्रों का दौरा करके जब श्री कृष्णमाचारी भारत लौटे तो २३४ करोड़ रुपयों के ऋणों के वायदे लाए थे, जिनमें से संयुक्त राज्य अमेरिका ने १०७ करोड़ रुपये, पश्चिमी जर्मनी ने ७५ करोड़ रुपये, फ्रांस ने २८ करोड़ रुपये और जापान ने २४ करोड़ रुपये के वायदे किये थे। इसके साथ ही साथ विश्व बैंक ने भी दो ऋणों की घोषणा की थी—एक २० करोड़ रुपये का ऋण कलकत्ता और मद्रास के बन्दरगाहों के लिए और दूसरा १२ करोड़ रुपये का ऋण दामोदर घाटी योजना के लिए। अमेरिका ने २७ करोड़ रुपये की सहायता की स्वीकृति अन्न-उत्पादन के लिए और जापान ने १० करोड़ रुपये की स्वीकृति उड़ीसा प्रदेश में लोहे और इस्पात का उत्पादन वृद्धि के लिए दी थी—इन सब ऋणों का योग ६९ करोड़ रुपये बैठता है, जो श्री टी० टी० कृष्णमाचारी के विदेश लौटने पर प्राप्त किये गये ऋणों—२३४ करोड़ रुपयों से मिलकर कुल ३०३ करोड़ रुपये हो जाता है।

यदि प्राप्त हुए विदेशी ऋण की यह रकम—३०३ करोड़ रुपये—योजना पूर्ति के लिए पहिले कही गई कुल विदेशी सहायता—६०० करोड़ रुपये—में से घटा दी जाय तो कुल २९७ करोड़ रुपये की विदेशी सहायता की आवश्यकता हमें और रह जाती; किन्तु वर्तमान अर्थ मन्त्री श्री मोरार जी देसाई ने १३ अगस्त १९५८ को लोकसभा में कहा कि योजना के शेष तीन वर्षों—(१९५८-५९, १९५९-६० और १९६०-६१) के लिए ५६० करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा की आवश्यकता है। हमारे अपेक्षित विदेशी मुद्रा के आंकड़ों में इस कदर विरोधाभास है। शासकीय कार्यालयों द्वारा प्राप्त सूचनाएं इससे भी अधिक विरोधाभास लिये हुए हैं। योजना आयोग ने २६ अप्रेल १९५८ के अपने मूल्यांकन में अप्रेल १९५६ और अप्रेल १९५८ में प्राप्त कुल विदेशी ऋण ७७४ करोड़ रुपये बतलाया है। (इसमें अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से प्राप्त ऋण भी सम्मिलित है।) आयोग के सितम्बर १९५७ के पुनर्मूल्यांकन में यह रकम घटाकर ७७४ करोड़ रुपये कर दी गई है। एक ओर योजना आयोग की यह रिपोर्ट है और दूसरी ओर हमारे अर्थमंत्री महोदय ने १३ अगस्त १९५८ को लोकसभा में कहा: "१ अप्रेल १९५८ तक किये गये ५१३ करोड़ रुपये की विदेशी सहायताओं के वायदों को धन पहिले ही प्राप्त हो चुका है।" यहां यह विचित्र तथ्य दर्शनीय है कि अमेरिका, पश्चिमी जरमनी, जापान और फ्रांस से पहिले प्राप्त सहायता—२३४ करोड़ रुपये—और श्री देसाई द्वारा लोकसभा में दिये गये प्राप्त कुल सहायता के आंकड़े ५१३ करोड़ रुपये कुल मिलकर ७४७ करोड़ रुपये होते हैं जो कि योजना आयोग के पुनर्मूल्यांकन के आंकड़ों से मिलते हैं। स्पष्ट है कि अर्थ मंत्री महोदय ने अपने वक्तव्य में पहिले प्राप्त की गयी सहायता को सम्मिलित नहीं किया था।

यदि योजना के प्रथम दो वर्षों में प्राप्त सहायता को योजना आयोग के पुनर्मूल्यांकन के अनुसार ७५७ करोड़ रुपये भी मान लिया जाय और इस पुनर्मूल्यांकन के पश्चात् प्राप्त सहायता—४२७ करोड़ रुपये को सम्मिलित किया जाय तो प्राप्त कुल सहायता १,१७४ करोड़ रुपये यानि पुनर्मूल्यांकन में दिखाई गई कुल सहायता की आवश्यकता—१,०३८—करोड़ रुपये से भी १३६ करोड़ रुपये अधिक हो जाती है।

इन आंकड़ों से पता चलता है कि विभिन्न सरकारी सूत्रों द्वारा प्राप्त विदेशी सहायता के बारे में दिए गये आंकड़े कितने भ्रामक हैं? अर्थ मन्त्रालय अथवा योजना आयोग को चाहिये कि वे प्राप्त विदेशी सहायता के विषय में सही विस्तृत आंकड़े प्रकाशित करें, जिससे कि जनता का भ्रम निवारण हो सके।

[सम्पादक

भारत के आर्थिक विकास की पगडण्डियां

श्री जी० एस० पथिक

भारत के तीन इस्पात नगर

भारत के पूर्वीय क्षेत्र की खनिज सम्पदा को तीन इस्पात के नगर बढ़ा रहे हैं। इन सबका एक लक्ष्य है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना में ६० लाख टन इस्पात का उत्पादन पूरा हो। ये तीनों नगर जर्मनी, ग्रेट ब्रिटेन और रूस की विदेशी टेक्निकल सहायता से बन रहे हैं। ये तीनों उद्योग हिन्दुस्तान स्टील (प्राइवेट) लिमिटेड के अंतर्गत विलीन होते हैं। आइए, अब इन तीनों का संक्षेप में परिचय लीजिए :—

विशाल भिलाई का इस्पात उद्योग

भिलाई, इस्पात का नव-निर्माण नगर मध्यप्रदेश के

दुर्ग जिले में स्थित है। दूसरी पंचवर्षीय योजना में इस्पात के अन्य दो कारखाने खुलने से यह उद्योग भारत की समृद्धि करने वाला है। अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग में भारत और रूस के टेक्नीशियन कंधे से कंधा भिड़ाकर भिलाई की स्थापना द्वारा एक उदाहरण पेश कर रहे हैं। यहां २०००० स्त्री पुरुष काम करते हैं, जो देश के प्रत्येक भाग से आए हैं। २३० रूसी टेक्नीशियन अपने परिवार सहित यूक्रेन, ओडेसा, और सोवियत रूस के अन्य नगरों से आए हैं। इनकी संख्या ६०० तक पहुँच जाएगी। ट्रैक्टर्स, मिट्टी हटाने वाले क्रेन्स और ट्रक आदि सभी बराबर चल रहे हैं। कुछ घण्टों में बड़े-बड़े खम्बे हो जाते हैं और गहरी खाइयां खुद जाती हैं। आज एक सड़क दिखायी देती है, पर कल वह नहीं रहती है। प्रातःकाल हम एक विशाल खाई खुदती हुई देखते हैं, जिसमें सौ से अधिक लोग काम करते हैं और जब तक कोई व्यक्ति कारखाने के चारों ओर घूमता है, काम पूरा हो जाता है और खाई पट जाती है। मजदूरों के पसीनों से यह नगर तैयार हो रहा है। पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने भिलाई के सम्बन्ध में कहा है कि वह भारत के भविष्य का प्रतीक है। भिलाई में हर एक चीज बड़ी है। एक क्रेन ३५० टन से कम नहीं है। आकार में वह ११२ फीट लम्बी और १२॥ फीट चौड़ी है। जब भिलाई में इस्पात का पूरा उत्पादन होने लगेगा, तब वह प्रतिवर्ष १० लाख टन इस्पात तैयार करेगा। पर उसमें कितने कच्चे माल की खपत होगी? करीब २० लाख टन
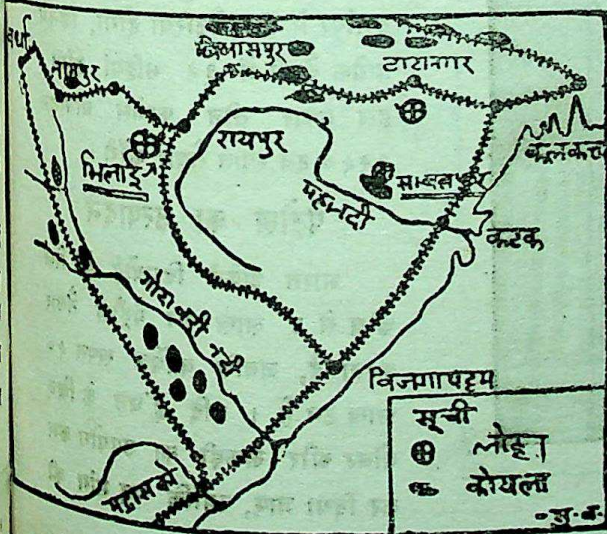
कच्चा लोहा, और उतना ही कोयला, ५॥ लाख टन चूना, ३ लाख टन डोलोमाइट, १ लाख टन मेगनीज और हजारों टन अन्य खनिज पदार्थ की खपत होगी। इस कारखाने में स्थायी रूप से ७५०० टेक्नीशियन, और अन्य व्यक्ति काम करेंगे। १२ करोड़ रुपए की लागत से कारखाने के लोगों के रहने के लिए मकान बनेंगे। नए मध्यप्रदेश राज्य के लिए यह उद्योग नया युग पैदा करने वाला है। इसके सहयोग से अन्य अनेक उद्योग स्थापित होंगे।

रूरकेला स्पात उद्योग

कलकत्ते से २४७ मील की दूरी पर रूरकेला में जर्मनी के क्रप्स के सहयोग से स्थापित हो रहा है। इस कारखाने से १० लाख टन कच्चा स्पात तैयार होगा। यद्यपि विस्तार होने पर अन्त में २० लाख टन उत्पादन होने लगेगा। यहां से ४५ मील की दूरी पर वसुरा की नई खान से कच्चा लोहा निकलेगा, जो रूरकेला के उपयोग में आयेगा। बिहार के झरिया, बकारो और कारगली से कोयले की आमद होगी। जब यह कारखाना तैयार हो जाएगा, तब कोक की तीन बैटरियां बनेंगी, जिनमें हर एक की ७० भट्टियां होंगी। इस प्रकार तीन ब्लाक फरनेस प्रति दिन १००० टन लोहा तैयार करेंगे। दिसम्बर १९५८ तक पहली फरनेस, और अगस्त १९५९ तक दूसरी फरनेस और नवम्बर १९५९ तक तीसरी फरनेस तैयार हो जाएगी। प्लेट मिल, स्क्रिप मिल और कोल्ड रालिंग मिल आदि १९६० तक तैयार हो जाएंगी। ७००० मजदूर इस उद्योग में काम पाएंगे।
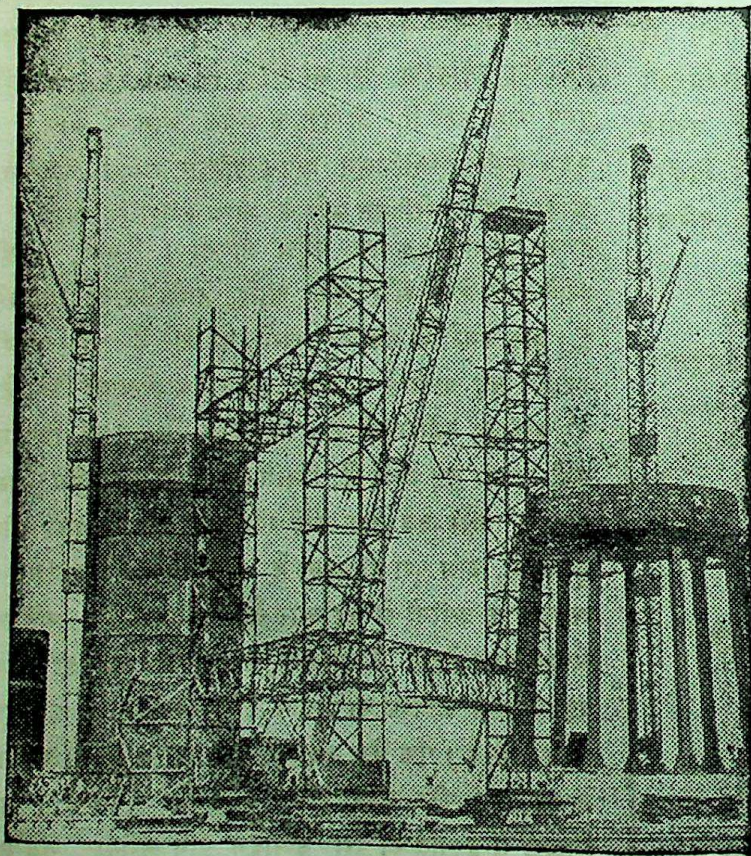
दुर्गापुर का स्पात कारखाना

दुर्गापुर का स्टील कारखाना

ग्रांड ट्रंक रोड पर कलकत्ते से ११० मील की दूरी पर दुर्गापुर में स्पात का यह तीसरा कारखाना ब्रिटिश कम्पनी के सहयोग से खुल रहा है। इण्डिया स्टील वर्क्स कंस्ट्रक्शन को इस कारखाने के खड़ा करने का सारा भार दिया गया है, जो एक ब्रिटिश प्रतिष्ठान है। इस कारखाने की पहली भट्टी अक्तूबर १९५९ तक तैयार हो जाएगी। १९६१ तक अन्य भट्टियां भी बन जायंगी। इसमें १९०९ स्थायी मजदूरों के सिवा १६००० अन्य मजदूर भी काम पाएंगे। इस कारखाने के लिए दामोदर घाटी से पानी आएगा। डी० वी० सी० से ही विद्युत प्राप्त होगी। दुर्गापुर में तीन बैटरियां होंगी, जिनमें प्रत्येक बैटरी में ३९ भट्टियां होंगी। इस प्रकार तीन फरनेस प्रतिदिन १२५० टन स्पात तैयार करेंगे।

पेट्रोल का उत्पादन

भारत अकेले डिगबोई के तेल क्षेत्र से ४ लाख टन पैट्रोल तैयार करता है, जबकि वार्षिक खपत ५० लाख टन है। यदि ईंधन के लिए गोबर और लकड़ी का उपयोग कम कर दिया जाए, क्योंकि यह मांग की [सम्पदा

गई है कि गोबर का उपयोग खाद के लिए हो, तो तीसरी योजना के अन्त तक भारत में १४० लाख टन पेट्रोल की मांग बढ़ जाएगी। इस तेल की खोज के लिए भारत ने ३० करोड़ रुपए व्यय किए और हिमालय के भूभाग, आसाम, गंगा घाटी, पश्चिमी बंगाल, राजस्थान, केम्बे कच्छ, और पूर्वीय तथा पश्चिमी घाटों के किनारों पर खोज की गयी। इन सब प्रयत्नों से ज्वालामुखी और केम्बे में तेल के स्रोत निकले हैं। केम्बे से इतना अधिक तेल निकल सकता है कि वह पश्चिमी एशिया का मुकाबला कर सकेगा। पश्चिम बंगाल में स्टैंडर्ड वैक्यूएम कम्पनी तेल की खोज में लगी है। डिगबोई तेल की रिफाइनरी निर्माण होने जा रही है, किंतु उसकी दूसरी शाखा बिहार में होगी। यहां के लिए भी विदेशी सहायता प्राप्त हुई है।

मोटर गाड़ी उद्योग

भारत में पहली मोटर कार का आयात आज से ६० वर्ष पूर्व हुआ था। इससे कुछ काल पूर्व ही मोटर का निर्माण हुआ होगा। आज अमेरिका में प्रति तीसरे व्यक्ति के पास एक कार है। ग्रेट ब्रिटेन को इस स्थिति तक पहुँचने में एक दशक से अधिक समय लगेगा। भारत में बैलगाड़ी अब भी यातायात का एक प्रमुख साधन बनी हुई है। १९३० के पूर्व जनरल मोटर्स और फोर्ड मोटर कम्पनी ने भारत में मोटर जोड़ने का उद्योग शुरू किया था। १९४४ में दो नई कम्पनियां कार्य क्षेत्र में आयीं—हिन्दुस्थान मोटर और प्रीमियर ओटमोबाइल्स। १९५१ में १२ एजेंसियां भारत में मोटर निर्माण के उद्योग में बढ़ीं।

१९५३ में टेरिफ कमीशन के सुझावों के अनुसार भारत सरकार ने यह निर्णय किया कि भारत में केवल वे ही मोटर कारखाने व्यापार में रह पाएंगे, जो पूरी मोटरें तैयार करेंगे। इससे कार्य क्षेत्र में केवल ६ मोटर के कारखाने रह गए। इनमें से तीन कम्पनियां, छोटी गाड़ियां, बीच की गाड़ियां और ट्रक तैयार करने में आगे बढ़ीं। किन्तु इन पांच वर्षों में देश की बढ़ती हुई मांग की दृष्टि से मोटर और ट्रकों का उत्पादन न बढ़ सका। विदेशी आयात पर प्रतिबन्ध होने के कारण मोटर ट्रक, और लारियों का अभाव हो गया और उनके २५ प्रतिशत से कहीं अधिक दाम चढ़ गए। १९५५ और १९५६ के बीच में ३२१२९ गाड़ियां तैयार हुईं, जबकि योजना आयोग का लक्ष्य है कि १९६०-६१ तक भारत ५७००० गाड़ियां तैयार करने में समर्थ हो।

साइकिलों का उद्योग

बाइसिकल गरीब आदमी के चलने का साधन है। शहरों में लोगों को आने-जाने में इतना अधिक व्यय बैठता है कि वे उसे सहन नहीं कर सकते। उस अवस्था में इन लोगों की आवश्यकताएं साइकिलें पूरा करती हैं। भारत में १९३८ से इस उद्योग का सूत्रपात हुआ और युद्धोपरांत उसने प्रगतिशील कदम रखा। १९५० में भारत में साइकिलों का उत्पादन १०३१५२ था। १९५७ में २३ बड़े पैमाने के कारखाने ८ लाख से अधिक साइकिलें तैयार करने में समर्थ हुए, जिससे १० करोड़ रुपए विदेशी मुद्रा की बचत हुयी। इसके सिवा साइकिलों के ७८ छोटे पैमाने के कारखाने हैं, जो करीब ३० लाख साइकिलें तैयार करते हैं। १९५८ के मध्य तक साइकिलों का कुल उत्पादन ४० लाख था। साइकिलों के छोटे उद्योगों के खड़े करने की ओर अधिक ध्यान गया है।

रेगिस्तान में मशीनें

राजस्थान रेगिस्तान का राज्य है या करीब २ रेगिस्तान है। छोटे-बड़े चरागाहों में भेड़ें चरती हैं। जो औद्योगिक विकास बंगाल और बंबई में दीखता है, वह राजस्थान में कहां है? दूसरी पंचवर्षीय योजना में उद्योगों के विकास के लिए ६.४ करोड़ रु० दिए गए। उससे ग्राम उद्योग विकास, छोटे पैमाने के उद्योग, हैण्डलूम, खादी, हाथ की कारीगरी के धंधे और ऊन के लिए भेड़ों के पालने के धंधे में वृद्धि की गई। राज्य में बड़े पैमाने के उद्योगों में ११ कपड़े की मिलें, २ चीनी की फैक्टरियां, २ सीमेंट फैक्टरियां और १ बाल बेयरिंग फैक्टरी है। दो औद्योगिक इस्टेट जयपुर और अजमेर में छोटे उद्योगों के विकास के लिए निर्माण हो रहे हैं। निजी क्षेत्र के साधनों से राजस्थान का वर्तमान औद्योगिक विकास हुआ है। राज्य भारत के कुल उत्पादन का ९२ प्रतिशत जेपसम पैदा करता है। अनेक खनिज पदार्थों का उत्पादन निजी क्षेत्र के साधनों से होता है। मध्य और बड़े पैमाने के उद्योग निजी क्षेत्र

(शेष पृष्ठ ६४६ पर)

हमारी रेलवे

कृष्णचन्द्र विद्यालंकार

कहते हैं कि विश्व की वर्तमान सभ्यता पहियों पर घूमती है। किसी देश में यातायात की जितनी अधिक क्षमता होगी, वह देश उतना ही उन्नत माना जायेगा। भारत में रेलवे का विकास विविध उद्योगों के विकास के साथ-साथ हुआ है। बम्बई में पहली कपड़ा मिल १८५४ में बनी थी। इसके एक साल के बाद वहां पहली रेलगाड़ी चल गई। कलकत्ता के क्षेत्र में रेलवे और पहली जूट मिल दोनों १८५४ में बनी थीं। ईस्ट इंडियन रेलवे का इतिहास भारत में कोयले के उद्योग का इतिहास कहा जा सकता है, क्योंकि दोनों का विकास एक साथ हुआ है। दर असल रेलवे का विकास औद्योगिक विकास की सूचना देता है। रेलवे वस्तुतः उद्योग की उन्नति की मेरू-दण्ड है। पहली पंचवर्षीय योजना से पहले १९५० में उद्योग-उत्पादन का सूचक अंक १०० था, जो १९५६-५७ में १४९.८ हो गया। इन्हीं सात वर्षों में रेलवे के टन मीलों का सूचक अंक भी १०० से १४९ हो गया। उद्योग और रेलवे की उन्नति एक दूसरे पर कितनी निर्भर और एक-दूसरे के साथ कितनी सम्बद्ध है ये संख्याएं इसका कितना अच्छा प्रमाण हैं। उद्योग और व्यापार के बढ़ने के साथ-साथ माल की ढुलाई का प्रबन्ध भी विशेष रूप से करना पड़ता है और किया गया है।

प्रथम पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ होने से पहले माल की ढुलाई केवल ४.२२ प्रतिशत वार्षिक बढ़ती थी, किन्तु पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ के साथ-साथ देश के कारोबार में जो तेजी आती गई, उसके कारण रेलवे की ढुलाई दर भी लगातार बढ़ती गयी। १९५०-५१ में यदि सूचक अंक १०० था, तो १९५६-५७ में करीब १५० हो गया। रेलवे पर तो निरन्तर बोझ बढ़ता गया, पर उसके मुताबिक रेलवे वैगन नहीं थे। जब कि माल की ढुलाई गत दस सालों में १९१% बढ़ गई, वैगनों की संख्या केवल ३५% बढ़ी। परिणामस्वरूप रेलवे को इस बात का खास ख्याल रखना पड़ा कि वैगनों का अधिक से अधिक इस्तेमाल किया जाय और वह स्टेशन यार्डों पर खाली न खड़े रहें। मुगल सराय भारत का एक बहुत बड़ा यार्ड है। यहां से १९५३-५४ में ९,३७,००० वैगन रवाना किये गये थे, लेकिन चार साल के बाद १९५७-५८ में १२,३६,००० वैगन रवाना किये गये। अर्थात् वैगन प्रयोग में ३२% वृद्धि हुई। बैजवाड़ा में जो दूसरा बड़ा यार्ड है, वहां १७% वृद्धि हुई है। पहले वहां औसतन एक वैगन ३१.७ घन्टे खाली रहता था, लेकिन अब वह २३.८ घन्टे से अधिक खाली नहीं रहने पाता। यह उन्नति इस बात का भी प्रमाण है कि ब्रिटिश शासन के बाद रेलवे के प्रबन्ध में भारतीय अधिकारियों ने बहुत उन्नति की है और उसकी कार्यक्षमता बढ़ा दी है।

रेलवे की प्रबन्ध क्षमता की अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से यह कसौटी मानी जाती है कि मालगाड़ी का एक डिब्बा औसतन कितने मील और कितने टन माल ढोता है। इस दृष्टि से देखें तो १९४८-४९ से लेकर १९५६-५७ तक बड़ी लाइन के वैगनों के प्रयोग का सूचक अंक १०० से बढ़कर ५७० तक पहुँच गया है। बड़ी लाइनें ज्यादा महत्वपूर्ण मार्गों से गुजरती हैं, इसलिये उन पर माल की ढुलाई का बोझ उनकी लम्बाई और संख्या के अनुपात से बहुत ज्यादा पड़ता है। यह नीचे की तालिका से स्पष्ट हो जायगा—

	कुल रेलवे मीलों का प्रतिशत	ढुलाई के कुल टन मीलों का प्रतिशत
बड़ी लाइन	४७	८४.५
मीटर लाइन	४४	१५.०
नैरो लाइन	९	०.५

नीचे की तालिका से यह मनोरंजक सूचना मिलेगी कि रेलवे कौन-कौन सा माल कितना प्रतिशत ढोती हैं—

	मात्रा	प्रतिशत लगभग
कोयला	३८० लाख टन	३०
अनाज	१०० लाख टन	८
फल और सब्जी	४५ लाख टन	३
सीमेंट	४० लाख टन	३

कच्चा लोहा	६० लाख टन	५
लोहा और इस्पात	४० लाख टन	३
चीनी	१६ लाख टन	१
नमक	१७ लाख टन	१
खाद, पैट्रौल, पत्थर, लकड़ी, रुई, जूट आदि	२१० लाख टन	१७
अन्य वस्तुएं	३३० लाख टन	२६

हमने ऊपर माल गाड़ियों की ढुलाई का वर्णन किया है। पिछले वर्षों में भारतीय नागरिक का जीवन-स्तर ऊंचा होता जा रहा है। इसका एक प्रमाण यह भी है कि वह पहले से कहीं अधिक रेलवे में सफर करने लगा है। १९३८-३९ में जबकि देश का बटवारा नहीं हुआ था, प्रतिदिन १४,५४,००० आदमी रेल में सफर करते थे, लेकिन देश के बटवारे के कारण बड़ी भारी जनसंख्या पाकिस्तान में चली जाने के बावजूद १९५६-५७ में प्रतिदिन केवल भारत में ३८ लाख नागरिक रेल में सफर करते हैं। इसको और अधिक साफ करने के लिए दो संख्याएँ अधिक सहायक होंगी। १९४१-४२ में प्रति दस लाख जनसंख्या में से प्रतिदिन ४३९० व्यक्ति रेल में सफर करते थे, किन्तु १९५६-५७ में प्रति दस लाख जनसंख्या में से [illegible] व्यक्तियों ने प्रतिदिन रेलवे में यात्रा की। इसका अर्थ यह है कि २२५% अधिक यात्री इन दिनों रेलवे में सफर करते हैं। नीचे की संख्याएं यह बतायेंगी कि विभिन्न देशों की रेलवे पर यात्रियों की दृष्टि से कितना बोझ बढ़ रहा है—

	१९३८-३९	५६-५७
संयुक्त राष्ट्र अमेरिका	१००	९५
ब्रिटेन	१००	१२५
भारत	१००	२६०
	(अविभाजितभारत)	(केवल भारत संघ)

रेलवे उद्योग : कुछ मनोरंजक तथ्य

❀ भारत की रेलें एशिया में सबसे बड़ी और विश्व में चौथे नम्बर पर हैं। रूस को छोड़कर सरकार द्वारा संचालित सबसे बड़ी रेल-व्यवस्था भारत में है।

❀ भारत सरकार के वार्षिक बजट का दो तिहाई बजट सिर्फ रेलवे मन्त्रालय का होता है। १९५८-५९ के रेलवे बजट में आय व व्यय क्रमशः ४०७ करोड़ रु० और ३१३ करोड़ रु० बताया गया है।

❀ भारत में रेलवे सबसे बड़ा नियोजक संस्थान है, जिसके नीचे ११ लाख आदमी काम करते हैं, जिन्हें १५५ करोड़ रु० वार्षिक वेतन मिलता है। इसके अतिरिक्त गत वर्ष (१९५६-५७) में ५ करोड़ ८३ लाख रु० उनके कल्याण कार्यों पर व्यय हुआ था।

❀ रेलवे में प्रतिदिन १० लाख मन कोयला खर्च होता है, जो देश के कुल उत्पादन का एक तिहाई है।

❀ देश के उद्योग विकास में रेलवे का बहुत बड़ा सहयोग है। १९५६-५७ में रेलवे ने करीब १२६ करोड़ रु० का माल देसी कारखानों से खरीदा। इंजन और रेल गाड़ी के डिब्बे बनाने में रेलवे ने जो तरक्की की है वह भी कम नहीं है।

❀ भारत में रेल गाड़ियां प्रतिदिन ६४०० रेलवे स्टेशनों पर से गुजराती तथा कुल ५ लाख ६२ हजार मील की दैनिक यात्रा करती हैं। अर्थात् पूर्ण पृथ्वी की २२ परिक्रमाओं के बराबर।

❀ प्रतिदिन ७००० रेलगाड़ियां देशभर में घूमती हैं इनके लिये प्रतिदिन ३॥ लाख बार सिगनल ऊपर नीचे करना पड़ता है।

बहुत लोगों की यह शिकायत है कि रेलवे ने उन्नति तो खूब की है, इसमें कोई शक नहीं, लेकिन किराये और भाड़े बेहद बढ़ाकर रेलवे यात्रियों और व्यापारियों को मुसीबत में डाल दिया है। 'सम्पदा' के पाठकों का भी यही अनुभव होगा, लेकिन रेलवे के अधिकारियों से पूछो तो वे इसका जो जवाब देते हैं वह भी कम युक्तिसंगत नहीं है। उनका कहना यह है कि भाड़े और किराये की दरों में जरूर वृद्धि हुई है, लेकिन देश में जिस तरह जीवन-व्यय बढ़ा है उसके मुकाबले में रेलवे वृद्धि बहुत तुच्छ है।

[सम्पदा

शासन और उद्योग की छः श्रेणियाँ

श्री तख्तमल जैन

केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों की उद्योग सम्बन्धी नीति को समझने के लिये सबसे पहिले इन उद्योगों को छः भागों में बांटना पड़ेगा। मैं यहां शासन की नीति का विश्लेषण करूं, इसके पूर्व द्वितीय पंचवर्षीय योजना में सरकार ने उद्योगों को फैलाने के लिये अपना मुख्य उद्देश्य 'जो उद्योग अत्यधिक कमजोर हैं, उन्हें अधिक मदद देना' 'Weaker the Industry Sector greater the help' रखा है और इसी सिद्धान्त के अनुसार आज देश में उद्योगों का प्रचार व प्रसार हो रहा है। उद्योगों का छः प्रकार से विभाजन निम्नलिखित है—

पहिले प्रकार के उद्योगों की श्रेणी में बुनियादी अथवा बड़े उद्योग आते हैं। ये ऐसे उद्योग हैं, जिनके द्वारा अन्य उद्योगों को स्थापित करने में सहायता मिलती है। इस श्रेणी में आने वाले उद्योगों की स्थापना शासन स्वयं ही करता है। ये किसी 'प्राइवेट सेक्टर' द्वारा संचालित नहीं किये जा रहे हैं। सारे देश में एक या दो उदाहरण जैसे मध्यप्रदेश में मेगनीज की खानों का काम ऐसे मिल सकते हैं, जो 'प्राइवेट सेक्टर' द्वारा चलाये जा रहे हैं। प्रथम श्रेणी के इन उद्योगों में स्टील, रेलवे, हवाई जहाज, जहाज, एल्यूमिनियम, सीमेंट, कोयला आदि उद्योग समाविष्ट होते हैं।

दूसरे प्रकार के उद्योग मध्यम श्रेणी के उद्योग हैं, ये उद्योग बुनियादी अथवा बड़े उद्योगों के विपरीत 'प्राइवेट सेक्टर' द्वारा चलाए जा सकते हैं। इनमें से कहीं-कहीं कुछ उद्योगों को चलाने में शासन ने भी हाथ बटाया है। इस श्रेणी के उद्योगों द्वारा वे वस्तुएं उत्पादित होती हैं जो हमारे दिन-प्रतिदिन के जीवन में काम आती हैं—जैसे कपड़ा, सिल्क रेयन आदि।

तीसरे प्रकार के उद्योग लघु उद्योग हैं। इस श्रेणी के उद्योगों की शासन द्वारा विशेष परिभाषा नहीं की गई है, परन्तु अन्य प्रकार के उद्योग और लघु उद्योगों के बीच में सीमारेखा खींचने के लिये यह तय किया गया कि जो उद्योग ५ लाख की पूंजी से प्रारम्भ किये जा सकें और यदि वे पावर द्वारा चलाये जाते हों, उनमें ५० मजदूर काम करते हों, व बिना पावर के १०० मजदूर तक काम करते हों ऐसे उद्योगों को लघु उद्योग की श्रेणी में लिया जा सकता है। उपर्युक्त तीनों प्रकार के उद्योगों की स्थापना

नीचे की संख्याएं इसे स्पष्ट करेंगी :—

तुलनात्मक सूचक अङ्क

	१९३८-३९	१९५७-५८
जीवन व्यय	१००	४१३
रेलवे माल भाड़े	१००	१९२
यात्रियों का किराया	१००	१९०

इन संख्याओं में यात्री कर जो सितम्बर ५७ से लागू हुआ था, वह भी शामिल हैं। १ अक्तूबर ५८ से लागू होने वाले भाड़े यदि शामिल किये जायं, तो भाड़े में २०१ प्रतिशत की वृद्धि हो जाती है। इन संख्याओं से यह स्पष्ट है कि अपने खर्चे बहुत बढ़ने के बावजूद रेलवे ने यात्रियों और व्यापारियों पर अपेक्षाकृत बहुत कम बोझ डाला है। रेलवे कर्मचारियों का जीवन व्यय लगातार बढ़ता जा रहा है इस बात को सरकार भली भांति जानती है, इसीलिये उन पर किये जाने वाला व्यय लगातार बढ़ाते जाना पड़ा है। १९३८-३९ में रेलवे कर्मचारियों को औसतन ५९१ रु० वार्षिक मिलता था अब १४१८ रु० अर्थात् २७२ प्र० श० मिलता है। यह ठीक है कि अब भी मंहगाई के अनुपात में वेतन नहीं बढ़ा लेकिन रेलवे की आमदनी प्रति यात्री या प्रति टन जिस अनुपात से बढ़ी है, उससे बहुत ज्यादा अनुपात में वेतन बढ़ाया गया है।

रेलवे बोर्ड ने अपनी एक पुस्तिका में यह भी बताने की कोशिश की है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना के कारण रेलवे पर कितनी भारी जिम्मेवारियां आ गई हैं और उसके भिन्न-भिन्न लक्ष्य बहुत ऊंचे हो गये हैं। लेकिन उनकी चर्चा हम इस लेख में नहीं करना चाहते, हम तो आज पर ही प्रकाश डाल रहे हैं।

—

करने में शासन सहायता करता है और आर्थिक मदद भी करता है, किन्तु मध्यम एवं लघु उद्योगों की सहायता के प्रकार अलग हैं। बड़े अथवा बुनियादी उद्योगों के लिये केन्द्रीय वित्त निगम की स्थापना की गई है, जो उनके प्रारम्भ करने में कर्ज के बतौर आर्थिक मदद देता है। मध्यम श्रेणी के उद्योगों के लिये शासन स्वयं जांच पड़ताल करके सहायता देता है, किन्तु लघु उद्योगों की स्थापना के लिये सरकार स्वयं ५०-६० तथा कहीं-कहीं ७० प्रतिशत रकम अपने पास से लगाती है और इस श्रेणी के उद्योगों को स्थान-स्थान पर प्रारम्भ करवाती है। एक और यह विशेषता है कि मध्यम श्रेणी के उद्योगों के लिये शासन जो सहायता देता है, उसे (Business Capital) (व्यावसायिक पूंजी) कहते हैं। इस प्रकार की सहायता में शासन अपने पर घाटे की जुम्मेवारी नहीं लेता, किन्तु लघु उद्योगों की स्थापना के लिये जो मदद दी जाती है उसमें सरकार घाटे की जुम्मेदार रहती है। इस प्रकार की पूंजी को 'Risk Capital' कहते हैं। चौथे प्रकार के उद्योग 'हेन्डलूम' के अन्तर्गत आते हैं।

मध्यप्रदेश व राजस्थान के हस्त करघा उद्योग द्वारा उत्पादित वस्तुएं समस्त देश एवं विदेशों में भी पहुँची हैं और उनकी सराहना भी की गई है। सरकार 'हेन्डलूम्स' को पावर लूम्स में परिवर्तित करने के लिए यांत्रिक एवं आर्थिक सहायता भी देती है तथा उनके व्यवसाय सुचारू रूप से संचालित करने के लिये सहकारी समितियों को आर्थिक अनुदान एवं ऋण की व्यवस्था की गई है।

पांचवे प्रकार के उद्योग हेन्डि क्रेफ्ट अथवा हस्तकला कौशल के नाम से पुकारे जाते हैं। इस श्रेणी में कई प्रकार के उद्योग आ सकते हैं, जिनकी कोई संख्या नहीं गिनाई गई है। इस श्रेणी के अन्तर्गत आने वाले सभी उद्योगों को बढ़ाने के लिये शासन मुक्तहस्त से कर्ज दे रहा है। इनके चलाने के लिये १०००) रु० तक की रकम व्यक्तिगत जमानत पर कारीगरों को दी जा सकती है। इसके लिये शासन कई प्रकार से सहायता भी देता है। यदि ये उद्योग सहकारिता के आधार पर आयोजित किये गये हैं तो सरकार उन्हें भी सहायता देती है। हस्त करघा एवं हस्त कला कौशल दोनों प्रकार के उद्योगों के लिये शासन ने काफी सहुलियतें दे रखी हैं।

छठे प्रकार के उद्योग खादी तथा ग्रामोद्योगों के नाम से प्रसिद्ध हैं। इन उद्योगों के प्रचार-प्रसार एवं विकास विस्तार के लिए भारत सरकार ने खादी ग्रामोद्योग तथा अखिल भारत खादी ग्रामोद्योग मंडल जैसी अर्धशासकीय संस्थाओं का निर्माण किया है, जिनके द्वारा देश में इस श्रेणी के अन्तर्गत आने वाले उद्योगों की स्थापना की जा रही है। उपर्युक्त केन्द्रीय संस्थाओं के साथ ही साथ विभिन्न राज्य सरकारों ने भी इसी प्रकार के अर्धशासकीय (Statutory) स्तर पर राज्य खादी ग्रामोद्योग मंडलों की स्थापना कर राज्यों में खादी ग्रामद्योगों के कार्यों को संचालित किया है। समस्त देश में इस श्रेणी के अन्तर्गत आने वाले उद्योगों के लिए खादी ग्रामोद्योग आयोग इन प्रवृत्तियों को चलाने के लिये राज्य सरकारों द्वारा आर्थिक सहायता एवं ऋण देता है और राज्य सरकारें राज्य मंडलों की प्रशासनिक व्यवस्था के लिये सहायता देती हैं। इस श्रेणी के उद्योगों में अम्बर चरखा, धान कुटाई, आटा चक्की, ताड़ गुड़, मधु मक्खी पालन, हाथ माचिस, हाथ कागज रेशा उद्योग, ऊन उद्योग, तेलघानी, चर्मोद्योग, आदि आते हैं, जिन्हें उन आधुनिक विकसित यांत्रिक साधनों द्वारा जो ग्राम सुलभ एवं सरल होते हैं, चलाये जाते हैं।

उपर्युक्त छहों प्रकार के उद्योगों का संचालन करने में शासन ने इस बात का अवश्य ध्यान रखा है कि मिल द्वारा उत्पादित तथा हाथ से बनाई गई वस्तुओं के भावों में विशेष अन्तर न रहे और इसके लिये शासन ने यह नीति स्वीकार की है कि बड़ी मिलों द्वारा उत्पादित वस्तुओं पर एक्साइज ड्यूटी अथवा अन्य कर लगाकर उनके उत्पादन मूल्योंमें वृद्धि की है, छोटे कारखानों द्वारा उत्पादित वस्तुओं पर किसी प्रकार का कर अथवा ड्यूटी नहीं रखी है व हाथ से अथवा ग्रामोद्योगों द्वारा उत्पादित वस्तुओं पर एक और तो किसी प्रकार का कर नहीं लगाया है और दूसरी ओर उपभोक्ताओं एवं क्रेताओं को इन वस्तुओं के क्रय करने पर आर्थिक सहायता दी जाती है, जिससे कि तीनों प्रकार की उत्पादित वस्तुओं के विक्रय-मूल्य में समानता एवं सन्तुलन रह सके।

भारतीय उद्योग : नई प्रवृत्तियाँ

खाद का उत्पादन

दूसरी पंच-वर्षीय योजना के सम्बन्ध में जो नई विचार-धारा चल रही है। इसकी विशेषता यह है कि कृषि उत्पादन के महत्त्व को नये सिरे से महत्त्व दिया जा रहा है। दूसरी योजना में उद्योग पर इतना महत्त्व दिया गया है कि हम भारी कारखानों को जल्दी से जल्दी बना लेने की धुन में यह भूल गये कि भारत की अर्थ व्यवस्था का आधार कृषि है। पिछले दो वर्षों के अन्न संकट ने हमें मजबूर कर दिया है कि हम फिर से खेती की ओर ध्यान दें। खेत की भूमि तो सीमित है; इस लिये हमें जमीन में से अधिकतम उपज को बढ़ाने पर ही अधिक जोर देना होगा। खेत की उपज बढ़ाने के लिये सिंचाई के सिवाय खाद का बहुत महत्त्व है। भारत सरकार ने इसका महत्त्व न समझा, यह बात नहीं। सिंदरी का कारखाना इसका ही प्रमाण है। हर साल वह लाखों टन खाद देश के किसानों के पास पहुँचा देता है। लेकिन जिस तेजी से जनसंख्या बढ़ रही है, उस अनुपात से खेत की उपज नहीं बढ़ रही है। १९५६-५७ और १९५७-५८ के बीच में अनाज की पैदावार ५ करोड़ टन से घट कर ४ करोड़ ६० लाख टन रह गई। जबकि आबादी करीब ५० लाख बढ़ गई। इसी कारण हमें विदेशों से अन्न का आयात २४ लाख के बजाय ३५ लाख टन कर देना पड़ा। और इसके लिये करोड़ों रु० बाहर भेजना पड़ा। भले ही हमें कुछ अनाज सहायता या विदेशी ऋण के रूप में मिला, लेकिन यह तो साफ है कि देश में अनाज की पैदावार बढ़ाने की सख्त जरूरत है। भारत के भूतपूर्व वित्त मन्त्री श्री देशमुख ने एक लेख में कहा था कि योजना आयोग की एक बहुत बड़ी कमी यह है कि इसमें सिंदरी की तरह खाद के दस कारखाने खोलने का कोई इन्तजाम नहीं किया गया। यदि हम लोहे व इस्पात का चौथा कारखाना खोलने की बजाय खाद के कारखाने खोलने की ओर ध्यान देते तो शायद देश की आर्थिक स्थिति के सुधार में अधिक सहायता मिलती।

योजना मन्त्री श्री गुलजारी लाल नन्दा ने भी इसके महत्त्व को स्वीकार किया है। अब पांच साल पहले की अपेक्षा किसान वैज्ञानिक खाद को बहुत अधिक इस्तेमाल करने लगा है १९५६ में ६७५०० टन अमोनियम सल्फेट का इस्तेमाल हुआ था। लेकिन १९५७ में ५००००० टन खेतों में डाला गया। करीब ३५०००० टन अमोनियम सल्फेट विदेशों से मंगवाना पड़ा। सुपर फास्ट की खपत भी इन्हीं वर्षों में एक लाख से डेढ़ लाख टन तक बढ़ गई। कृषि मन्त्री श्री अजीत प्रसाद जैन ने यह अनुमान लगाया है कि आगामी ८ वर्ष तक हमें ५० लाख टन खाद की जरूरत होगी और हमें सिंदरी की तरह के १३ कारखाने नये बनाने पड़ेंगे।

अब तक खाद के कारखाने जो नहीं बन रहे हैं, उसका मुख्य कारण यह है कि सरकार की औद्योगिक नीति के कारण खाद के कारखाने केवल सरकार ही खोल सकती है। निजी उद्योग इसमें कोई प्रारम्भ नहीं कर सकता। इस भवुकतापूर्ण नीति का दुष्परिणाम यह हो रहा है कि देश की प्रधान आवश्यकता पूर्ण नहीं हो रही। यह प्रसन्नता की बात है कि उद्योग मंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री ने भारत के खाद-संघ को आश्वासन दिया है कि यदि संघ का कोई सदस्य खाद कारखाने की स्थापना का प्रस्ताव रखता है, तो सरकार का उसे पूर्ण हार्दिक सहयोग प्राप्त होगा। यह आश्वासन उन्होंने तब दिया जब कि खाद संघ के उपाध्यक्ष श्री डी० आर० मुरार जी ने यह सुझाव रखा कि क्या सरकार वे शर्तें बता सकेगी, जिनसे हम किसी विदेशी उद्योग की सहायता से खाद कारखाना खोलें। हमें आशा करनी चाहिए कि सरकार निजी उद्योग के मार्ग से बाधा दूर कर देगी, ताकि खाद-उद्योग पनपे, विदेशी मुद्रा की बचत हो और अन्न का उत्पादन देश की आवश्यकता के लिए हो सके।

विश्व में औद्योगिक उत्पादन ह्रास की ओर

यह जानकर शायद पाठकों को आश्चर्य होगा कि जब प्रायः सभी देश अपने औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि की घोषणा कर रहे हैं, वस्तुतः संसार में औद्योगिक उत्पादन की गति पिछले कुछ वर्षों से कम हो रही है।

प्रथम चरण
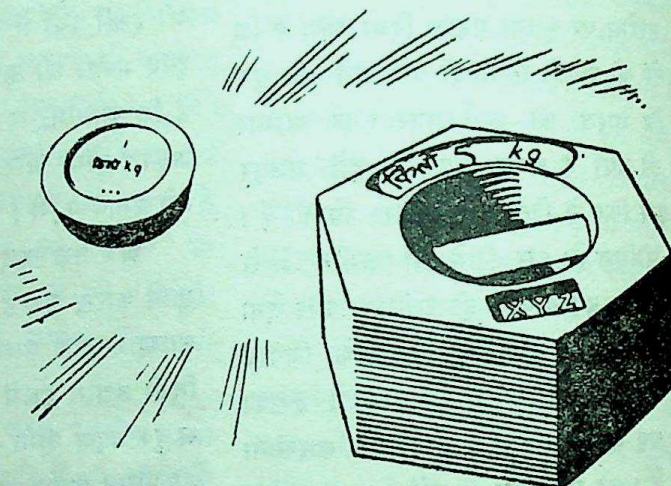
नाप तौल की मेट्रिक प्रणाली लागू होने का प्रथम चरण १ अक्तूबर, १९५८ से आरंभ हो चुका है। इस तारीख से राज्यों के कुछ क्षेत्रों में मेट्रिक बाटों का प्रयोग कानूनी हो गया है।

मेट्रिक प्रणाली सरकारी विभागों और सूती वस्त्र, लौह व इस्पात, इंजीनियरी, भारी रसायन, कागज, सीमेंट और जूट के उद्योगों में भी शुरू कर दी गई है।

यह परिवर्तन क्रमशः समस्त देश में लाया जाएगा।

मेट्रिक प्रणाली

सरलता व एकरूपता के लिए

वर्तमान तौल के बराबर मेट्रिक तौल जान लीजिए

मेट्रिक बाट : परिवर्तन तालिका

इसे काट कर पास रख लें—काम आयेगी

छटांक (१ छटांक= ५ तोले)	ग्राम (निकटतम ग्राम तक)
१	५८
२	११७
३	१७५
४	२३३
५	२९२
६	३५०
७	४०८
८	४६७
९	५२५
१०	५८३
११	६४२
१२	७००
१३	७५८
१४	८१६
१५	८७५

मन (१ मन= ४० सेर)	किलोग्राम (निकटतम किलो-ग्राम तक)
१	३७
२	७५
३	११२
४	१४९
५	१८७
६	२२४
७	२६१
८	२९९
९	३३६
१०	३७३
११	४११
१२	४४८
१३	४८५
१४	५२३
१५	५६०
१६	५९७
१७	६३५
१८	६७२
१९	७०९
२०	७४६

सेर (१ सेर= ८० तोले)	किलोग्राम	ग्राम (निकटतम १० ग्राम तक)
१	—	९३०
२	१	८७०
३	२	८००
४	३	७३०
५	४	६७०
६	५	६००
७	६	५३०
८	७	४६०
९	८	४००
१०	९	३३०
११	१०	२६०
१२	११	२००
१३	१२	१३०
१४	१३	६०
१५	१४	—
१६	१४	९३०
१७	१५	८६०
१८	१६	८००
१९	१७	७३०
२०	१८	६६०
२१	१९	६००
२२	२०	५३०
२३	२१	४६०
२४	२२	३९०
२५	२३	३३०
२६	२४	२६०
२७	२५	१९०
२८	२६	१३०
२९	२७	६०
३०	२७	९९०
३१	२८	९३०
३२	२९	८६०
३३	३०	७९०
३४	३१	७३०
३५	३२	६६०
३६	३३	५९०
३७	३४	५२०
३८	३५	४६०
३९	३६	३९०

१ किलोग्राम=१,००० ग्राम

१९५५ में पिछले वर्ष की अपेक्षा ११% उत्पादन बढ़ा था किन्तु १९५६ में यह अनुपात ४.५% रहा और १९५७ में तो यह अनुपात २.६% हो गया। १९५८ के पहले ३ महीनों में उत्पादन ५% गिर गया है। इसका मुख्य कारण संसार में खनिज पदार्थों के उत्पादन में ३% तथा कारखानों के माल में ५% कमी है। रासायनिक पदार्थों, पैट्रोलियम और कोल पदार्थों का उत्पादन करीब २ वही है, जबकि खाद्य पदार्थ शराब और तम्बाकू का उत्पादन बढ़ गया है। उत्पादन में यह कमी मुख्यतः उत्तरी अमेरिका और संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में उत्पादन की कमी के कारण हुई है। निम्न लिखित तालिका से यह मालूम हो जायेगा कि विश्व में औद्योगिक उत्पादन की गति क्या है।

(आधार १९५३ = १००)

वर्ष	विश्व	उत्तरी अमेरिका	यूरोप	एशिया
१९५४	१००	९३	१०६	११०
१९५५	१११	१०४	१२०	१२२
१९५६	११६	१०७	१२६	१४३
१९५७	११९	१०८	१३२	१५७
जनवरी-मार्च	११९	१०९	१३०	१५५
अक्तूबर-दिसम्बर	१२०	१०५	१३८	१५९
१९५८				
जनवरी-मार्च	११४	९७	१३४	१५४

लोहा गलाने की भट्ठी चालू

लोहा गलाने की ताता की विश्व की सबसे बड़ी भट्टी चालू हो गई है। इस भट्ठी के बनाने में कुल करीब ७ करोड़ रु० खर्च हुए हैं। इस विस्तार कार्यक्रम के कार्यान्वित होने से ताता में इस्पात का उत्पादन दो गुना बढ़ जायगा यानि २० लाख टन हो जायगा। यहाँ उत्पादन के लिए जो तरीका अपनाया जा रहा है वह भी भारत में पहला ही है। इस भट्ठी के जरिए रोजाना १६५० टन तथा महीने में ५० हजार टन गला लोहा तैयार किया जा सकेगा। इसके अलावा इसकी उत्पादन क्षमता २००० टन प्रति दिन तक बढ़ाई जा सकती है।

जमशेदपुर में सबसे पहले यानी १९५१ में दो भट्टियां लगायी गयी थी जिनकी उत्पादन शक्ति सिर्फ १७५ टन थी। यहां वाली भट्टियों में जो सबसे छोटी है। उसे बन्द कर दिया जायगा और अन्य किसी भट्टी के खराब होने पर उससे काम लिया जायगा।

जहां पर यह नयी भट्ठी बनायी गई है, उस स्थान की खोदाई १९५६ में सितम्बर मास में आरम्भ हुई। जमीन के सामान्य स्तर से करीब ४० से ४७ फुट नीचे तक खुदाई की गई। इसकी तैयारी में करीब ८,००० टन इस्पात और १५,००० टन पक्की ईंटों का उपयोग किया गया। इस भट्ठी के निर्माण में अनेक देशों के लोगों ने साथ-साथ काम किया। अमेरिकियों के साथ भारतीय इन्जीनियरों ने भी काम किया।

इस भट्ठी के निर्माण के लिए तीन महादेशों के प्रदेशों से अनेक कल पुर्जे और प्लांट आयात किये गए जिनका कुल वजन करीब १ लाख टन है।

वस्त्र उत्पादन में वृद्धि

गत १० वर्षों में भारत के सूती वस्त्र उत्पादन में प्रशंसनीय वृद्धि हुई है। १९४८ के उत्पादन की तुलना में १९५७ वर्ष में कपड़े का उत्पादन ३१ प्रतिशत अधिक रहा। १९५७ में सूती कपड़े का उत्पादन ७३४.७० करोड़ गज हुआ जबकि १९४८ में यह उत्पादन ५५८.५० करोड़ गज था। चालू वर्ष (१९५८) के प्रथम ६ महीनों में सूती कपड़े का उत्पादन ३४६.७० करोड़ गज रहा। १९५८ के प्रथम ६ महीनों में कपड़े का जो उत्पादन हुआ उसमें मिलों में उत्पादित कपड़े की मात्रा २४५.१० करोड़ गज हाथ करघा उद्योग द्वारा उत्पादित कपड़े की मात्रा ८५.३० करोड़ गज और शक्ति चालित करघों द्वारा उत्पादित कपड़े की मात्रा १५.८० करोड़ गज थी। १९५७ में मिलों में ५३१.७० में ५३१.७० करोड़ गज हाथ करघा उद्योग में १६७.८० करोड़ गज और शक्ति चालित करघा उद्योग में ३०.३० करोड़ गज कपड़ा बनाया गया था। इस वर्ष खादी का उत्पादन ४.९० करोड़ गज हुआ था।

१९४८ की तुलना में १९५७ में लगभग सभी क्षेत्रों के सूती वस्त्र उत्पादन में वृद्धि हुई। मिलों के उत्पादन में २३ प्रतिशत हाथ करघा उद्योग के उत्पादन में ५८ प्रतिशत और शक्ति चालित करघा उद्योग के उत्पादन

[संम्पदा

में ५४ प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई। खादी का उत्पादन तो १९५७ में १९४८ के उत्पादन से ७ गुना अधिक रहा।

नया मशीनरी कारखाना

बिहार राज्य में रांची के पास स्थित हटिया नामक एक अज्ञात गांव में सोवियत संघ की सहायता से भारी मशीनरी बनाने के लिए एक बड़ा कारखाना बन रहा है।

हटिया गांव भारी मशीनरी बनाने के कारखाने के लिए एक उपयुक्त स्थान है। वह बोकारो कोइला खान क्षेत्र से कोई साठ किलोमीटर दूर है। कोयले से लदी गाड़ियां रांची होते हुए भिलाई राउरकेला तथा जमशेदपुर के इस्पात कारखानों को पहुंचेंगी। वापसी पर यह गाड़ियां साथ में धातु लायेंगी। जिससे हटिया कारखाने में मशीनें बनायी जायंगी। रांची में इस कारखाने का बनाया जाना इस दृष्टि से भी सुविधाजनक है कि इसको उत्पादित वस्तुओं के भावी उपभोक्ताओं के लिए यह एक केन्द्रीय स्थान होगा।

हटिया कारखाने में सब तरह की मशीनें बनेंगी। वह लौह और इस्पात कारखानों, उनकी वायुभट्टियों, फौलाद तथा रोलिंग और कोक रासायनिक विभागों से लेकर अत्यन्त जटिल और बड़ी रोलिंग मिलों में काम आने वाली तमाम बुनियादी साज-सामान तैयार करेगा। वह शाफ्ट हायस्टिंग मशीनें, तेल निकालने के ड्रिलिंग साज-सामान और एक्सकेवेटर भी तैयार करेगा। मशहूर सोवियत यूराल-माश, दक्षिणी यूरालमाश और क्रामतोर्स्क कारखानों में भी ऐसे ही साज-सामान बनते हैं। अन्तर केवल इतना ही है कि इन कारखानों में हर एक ने उत्पादन के लिए साज-सामान के अलग-अलग पुर्जे चुन लिए हैं और वे उन पर ही ध्यान देते हैं जबकि भारतीय कारखाना सब तरह के साज-सामान बनाएगा; क्योंकि फिलहाल यह भारत में अपनी किस्म का एक ही कारखाना होगा और उसे तमाम लौहा और फौलाद कारखानों को वह सब कुछ देना पड़ेगा जिनकी उन्हें जरूरत पड़ती है।

शुरू-शुरू में कारखाना प्रति वर्ष ४५,००० टन मशीनरी तैयार करेगा। बाद में उसका उत्पादन प्रति वर्ष ८०,००० टन तक हो जायेगा। यह दस लाख टन फौलाद की उत्पादन क्षमता वाले किसी भी कारखाने को पूरा साज-सामान देने के लिए पर्याप्त है।

हमारी परियोजना के अनुसार बाद में कारखाने की उत्पादन-क्षमता १,६५,००० टन मशीनरी प्रति वर्ष तक बढ़ायी जा सकती है, ताकि वह बीस लाख टन के फौलाद कारखाने के लिए पूरा साज-सामान दे सके। नदी के पास एक मनोरम उत्तम, पर्वतीय एवं अन्य क्षेत्र में यह कारखाना बनाया जायेगा। वहां कोई ६,००० व्यक्ति रोज-गार पायेंगे। उनके अलावा वहां कोई ५०० डिजाइनिंग इन्जीनियर और प्रविधिज्ञ काम करेंगे।

औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत विभिन्न उद्योगों में आधुनिकरण एवं प्रसार की जो योजनाएं चल रही हैं उनके कारण चालू वर्ष के पूर्वार्ध में लगभग सभी उद्योगों के उत्पादन में वृद्धि हुई है। केवल टेक्सटाइल और मोटर उद्योग ऐसे थे जिनका उत्पादन बढ़ने के बजाय गिरा है। आलोच्य अवधि में कोयले का उत्पादन २.२६ करोड़ टन रहा जो पूर्व वर्ष की इसी अवधि में २.१६ करोड़ टन था। इस्पात की सिल्लियों के उत्पादन में ८,५४,००० टन पर ८,४०० टन की वृद्धि हुई और कागज का उत्पादन १.०१ लाख टन से बढ़कर १.२० लाख टन हो गया। इस अवधि में पटसन के सामान के उत्पादन में भी उल्लेखनीय वृद्धि हुई जो जनवरी से जून १९५८ की अवधि में बढ़कर ५३.४३ लाख टन पर आ गया। दियासलाईका उत्पादन १.९० लाख बक्स की तुलना में २.८९ लाख बक्स रहा। इन्जी-नियरिंग सामान का उत्पादन रु. १.५२ करोड़ का रहा जो पूर्व वर्ष के पूर्वार्ध में रु० ९५.८४ लाख का था। बिजली के पंखों और रेडियो सेटों का उत्पादन क्रमशः ९२,०३९ तथा १,६१,३०० से बढ़कर कमशः ९७,७९४ तथा १,६१,३०० पर आ गया। सिलाई की मशीनों का उत्पादन १,०२,०२२ रहा जो पूर्व वर्ष के पूर्वार्ध में ८३,४४२ था। साइकिलों का उत्पादन ३,८१,६१६ की तुलना में ४,८३,५४४ रहा। केवल टेक्सटाइल उद्योग का उत्पादन गिरा। कपड़े का उत्पादन २७०.९० करोड़ गज से गिरकर २४५.१० करोड़ गज हो गया और सूत का उत्पादन ८९.१० करोड़ पौंड की तुलना में ८१.९० करोड़ पौण्ड रहा।

कृषि में आत्म निर्भरता

इण्डियन-चेम्बर्स आफ कामर्स एंड इण्डस्ट्री फेडरेशन के अध्यक्ष श्री बी० पी० सिंह राय, भूतपूर्व केन्द्रीय वाणिज्य और उद्योगमन्त्री श्री सी० एच० भाभा तथा दो अन्य प्रमुख उद्योगपति श्री बी० एम० बिड़ला और श्री तुलसीदास किलाचन्द ने एक पत्रक में कृषि में आत्म-निर्भरता लाने के लिए निम्नलिखित सुझाव दिये : केन्द्रीय खाद्य और कृषि मंत्रालय का पुनः संगठन किया जाय, ६ सदस्यीय केन्द्रीय खाद्य सलाहकारी समिति बनाई जाय जिसको पूरे अधिकार हों तथा देश में बहुफसली खेती की व्यवस्था हो।

खाद के कारखाने, ट्रैक्टर आदि बनाने की मशीनें देश में बनाई जानी चाहिये। तेल की खोज और तेल-शोधन का कार्य निजी उद्योगों को देना चाहिये। दस वर्षों में १३०५ करोड़ रुपये के व्यय से देश का खाद्य उत्पादन ५० प्रतिशत बढ़ जायगा। यदि हमारी सभी योजनाएं सरकार कार्यान्वित करे तो इससे ३५ लाख व्यक्तियों को सीधे रोजी मिलेगी। इसके अतिरिक्त अप्रत्यक्ष रूप से बहुत लोगों को काम मिलेगा। भूमि सुधार के सम्बन्ध में इन लोगों ने कहा है कि भावनात्मक विचारों से काम नहीं चलेगा। अलाभकर जोतों के रूप में भूमि का वितरण कर देने से खाद्य उत्पादन नहीं बढ़ेगा और जोतों की उच्चतम सीमा निर्धारित कर देने से जहां वैज्ञानिक खेती हो रही है वह असम्भव हो जायगी। इसके बजाय ऐसी योजना बनानी चाहिये कि किसान खेती का यांत्रिक और वैज्ञानिक ढंग अपनाये। उसका उत्पादन और क्रय शक्ति बढ़े और वह अधिक लोगों को रोजी दे सके। सामूहिक खेती अधिकांश देशों में विफल सिद्ध हुई है क्योंकि कृषिकारों की दिलचस्पी खेत में नहीं रह जाती। अधिक उत्पादन होने से भी उनकी आय नहीं बढ़ती।

देश का खाद्य उत्पादन बढ़ नहीं रहा है लेकिन जनसंख्या तेजी से बढ़ रही है। खाद्य उत्पादन को प्राथमिकता दी जानी चाहिये और इसको युद्धस्तर पर कार्यान्वित करना चाहिये। इस मुख्य समस्या पर जब तक पूरा ध्यान दिया जायगा कुछ सफलता नहीं मिल सकेगी।

सिंचाई की सुविधा, पर्याप्त खाद, यांत्रिक खेती और अच्छे बीज की व्यवस्था होनी चाहिये।

केन्द्र में ऐसा मंत्रालय बनाया जाय जिसका खाद्य-उत्पादन से सम्बद्ध सिंचाई, विद्युत् शक्ति, आयोजन, खाद-वितरण, कृषि औजार, देहाती ऋण व्यवस्था, भूमि-सुधार, जंगल, कोट नियंत्रण, बीज वितरण आदि पर पूरा नियंत्रण हो।

केन्द्रीय सरकार की नीति के कार्यान्वय के लिए देश का विभाजन ५ बड़े क्षेत्रों में कर देना चाहिये और हर क्षेत्र के लिए एक राज्यमन्त्री होना चाहिये जो उस क्षेत्र में सरकारी नीति के कार्यान्वय का पूरा अधिकार रखता हो। इन क्षेत्रों का सीधा सम्बन्ध राज्य सरकारों से भी होना चाहिये। ग्राम-स्तर की इकाइयों की खाद्य उत्पादन की आवश्यकता का ज्ञान और उनकी पूर्ति की शीघ्र व्यवस्था भी होनी चाहिये।

सरकारी अनाज गोदाम

श्री एल० जी० राजवाड़े ने एक रेडियो वार्ता में निम्नलिखित विचार व्यक्त किए हैं—

देश में अनाज के आगार, ठंडी रीति से सामग्री सुरक्षित रखने वाले संग्रहालय (कोल्ड स्टोर) जो इस समय व्यापारी ही अपनी ओर से चला रहे हैं। इनमें अधिकतर उपज का ही संग्रह होता है और यही काम केन्द्रीय आगार निगम के आगारों में होगा। परन्तु दोनों का प्रयोजन कुछ भिन्न-भिन्न है। आगार निगम के आगार में माल जमा करने वाले को एक रसीद दी जायेगी जिस रसीद के आधार पर बैंक से उसे अगाऊ रुपया भी मिल जावेगा। इस अगाऊ रुपये में बहुत कुछ वह मूल्य आ जायगा, जो अन्त में माल बेचने पर मालिक को मिलेगा। माल जमा करके मूल्य का एक भाग प्राप्त कर यह माल कुछ समय के लिए बिना बेचे छोड़ देने जैसी व्यवस्था अपने देश में नहीं है। अब तक माल लेकर लोग-बाग मंडियों पर आते रहे हैं और आढ़तियों को सीधा या दलालों द्वारा बेच कर माल मोल लेकर अपने-अपने घर चले जाते हैं। इसके विपरीत

[शेषांश

आगार अधिकारी की रसीद माल जमा करने वाले से कुछ धीरज की अपेक्षा रखती है, क्योंकि रुपयों और नये पैसों में यानी नकदी में केवल एक अंश ही प्राप्त होकर और बचा हुआ अंश बाद में मिलता है।

ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण समिति की सिफारिशों के परिणामस्वरूप यह आगार-योजना बनी। यह समिति १९५१ में रिजर्व बैंक ने नियुक्त की थी। इस समिति के प्रतिवेदन के प्राप्त होने पर तत्काल इसके अनुसार कृषि उपज, विकास और आगार व्यवस्था, निगम निधि १९५६ में संसद में स्वीकृत हो गई। इस कानून के अधीन ही केन्द्रीय आगार व्यवस्था निगम भारत सरकार की २ मार्च १९५७ को प्रसारित घोषणा द्वारा स्थापित हो गयी।

केन्द्र या राज्यों द्वारा स्थापित आगार (गोदाम) एक-सा ही काम करते हैं। दोनों प्रकार के संगठनों को ही—

१. देश में उपयुक्त स्थानों पर गोदाम और आगार प्राप्त करने पड़ते हैं और बनवाने पड़ते हैं २. व्यक्तियों, सहकारी संस्थाओं और अन्य संस्थाओं से प्राप्त कृषि, उपज, खाद, बीज, उर्वरक कृषि, यन्त्रों आदि के संग्रह के लिए आगार चलाने पड़ते हैं। ३. आगार सदन से और वहां तक माल लाने लेजाने के लिए यातायात की सुविधा की व्यवस्था करनी पड़ती है। ४. और कृषि उपज, खाद, बीज, उर्वरक, कृषि यन्त्रों की खरीद, बिक्री, संग्रह और वितरण के लिए बीच में दलाली करनी पड़ती है। ५. और अन्य अनेक काम जो ऊपर चलाए हुए प्रयोजनों को पूरे करने के लिए जरूरी समय-समय पर करने पड़ते हैं।

अणु-शक्ति चालित जलयान

पारमाणविक ईंधन से चलने वाला जहाज-इंजिन
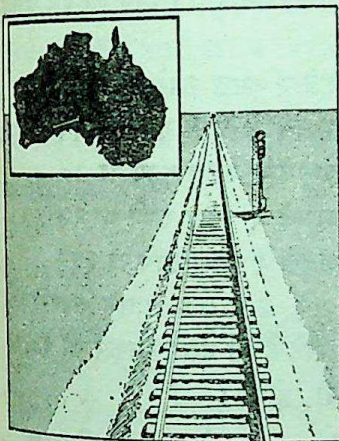
संसार की सबसे बड़ी सीधी रेल की पटरी

संसार की सबसे बड़ी सीधी रेल की पटरी आस्ट्रेलिया के तुलारबर मरुस्थल में है। यह पटरी ३२८ मील लम्बी है। ३२८ मील की इस लम्बाई में कोई नदी इस पटरी के रास्ते में नहीं पड़ती और न ही कोई वृक्ष इसके पास में उगा है।
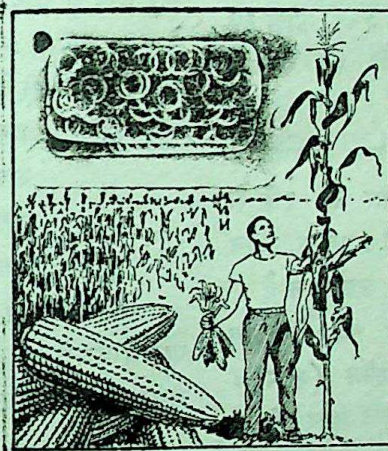
संसार की सबसे बड़ी फसल मक्का

संसार में मनुष्य द्वारा उगाई जाने वाली फसलों में सबसे अधिक मक्का उगाई जाती है। मक्का के प्रमुख उत्पादक देश संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्राजील, अर्जेन्टाइना, मैक्सिको, चीन, भारत, इटली और दक्षिण अफ्रीका हैं।

साइकल चेन के आविष्कारक लियो वर्डो डा० विन्सी

चेन साइकिल का बहुत मुख्य पुरजा है जिसके कारण पहिया घूमता है। इस महत्वपूर्ण पुर्जे के आविष्कार का श्रेय लियोवर्डो डा० विन्सीको है, जिन्होंने आज के साइकिलों में प्रयुक्त होने वाली चेन का आविष्कार किया था।

लेनिनग्राद के जहाज घाट में तैयार हो रहे आणविक हिम-भेदी जहाज "लेनिन" के लिए तैयार किया जा चुका है। प्रथम सोवियत निर्मित आणविक जहाज संसार का सबसे बड़ा हिमभेदी जलयान होगा। उसके पावर-प्लांट की कुल क्षमता ४४०,००० अश्वशक्ति होगी।

हिमभेदी "लेनिन" १६००० टन जलच्युति करेगा और प्रति टन जल-च्युति में पौने तीन अश्वशक्ति लगेगी। इस तरह इसकी जलच्युति शक्ति का अनुपात आधुनिक हिमभेदियों में सबसे अधिक होगा।

आणविक जहाजों का उद्भव यातायात के इतिहास में नया अध्याय आरम्भ कर देता है। आणविक हिमभेदी एक साल तक खुले सागरों या हिमभरे ध्रुव क्षेत्रों में बिना दुबारा ईंधन लिए हुए रह सकता है।

भारत में चावल की पैदावार

रूस को छोड़कर, दुनिया के बाकी देशों में १६५६ में चावल की कुल पैदावार २१ करोड़ ५० लाख टन (दशमिक) थी। इसमें से २० करोड़ टन से भी अधिक पैदावार एशिया में हुई।

भारत में चावल की वार्षिक पैदावार लगभग ४ करोड़ ३० लाख टन है। चावल की पैदावार की दृष्टि से दुनिया के देशों में भारत का स्थान दूसरा है। पहला स्थान चीन का है, जहां की पैदावार ८ करोड़ २० लाख टन है।

यद्यपि भारत और चीन में चावल की खेती का क्षेत्र सबसे अधिक प्रति हैक्टर उपज स्पेन (५,८१० किलोग्राम), मिस्र (५,४३० किलोग्राम), आस्ट्रेलिया (५,२६० किलोग्राम), इटली (४,६६० किलोग्राम), पुर्तगाल (४,२३० किलोग्राम) और जापान (४,२२० किलोग्राम) में हुई।

भारत में चावल की खेती ७ करोड़ ८० लाख एकड़ से भी अधिक भूमि में होती है, लेकिन प्रति एकड़ उपज केवल ५४४ किलोग्राम के करीब है।

१६५७-५८ में भारत के जिन पांच राज्यों में सबसे अधिक चावल पैदा हुआ, वे थे—पश्चिम बंगाल (४१ लाख ८५ हजार टन), आंध्र प्रदेश (३४ लाख ६८ हजार टन), मद्रास (३१ लाख ३४ हजार टन), उत्तरप्रदेश (२२ लाख ८४ हजार टन), और बिहार (२१ लाख ६८ हजार टन)।

अनाज के बजाय रासायनिक खाद का आयात

हमारे सामने एक प्रश्न यह है कि विदेशों से अनाज का आयात किया जाय अथवा अनाज की उपज बढ़ाने वाले रासायनिक खादों का ? निश्चित रूप से देश के हित में यही है कि अनाज का आयात न करके रासायनिक खादों का आयात किया जाए। यह अनुमान लगाया गया है कि रासायनिक खाद पर खर्च किये गये १ रुपये से १.६ के गेहूं के आयात की, रु० २.६ के चावल के आयात की और रु० ५.७ कपास के आयात की बचत होती है। रासायनिक खाद के निर्यात से भी अधिक महत्त्वपूर्ण काम यह है कि हम स्वयं खाद का उत्पादन करें।

भूतपूर्व शासकों से व्ययकर

व्ययकर अधिनियम की धारा २० के अनुसार १६५८-५६ में भूतपूर्व शासकों से उनकी निजी थैली के निश्चित के हिसाब से व्यय कर लिया जायगा। व्यय कर इस हिसाब से काटा जायगा :—

निजी थैली के पहले ५ लाख रुपये पर ७॥ प्रतिशत
" उनसे अगले ५ लाख रुपये पर १२ "
" उनसे अगले ५ लाख रुपये पर २० "
" उनसे अगले ५ लाख रुपये पर २५ "
" उनसे अगले ५ लाख रुपये पर ३३⅓ "

यदि निजी थैली पाने वाले सब शासक व्यय-कर के बारे में फैसले को मान लेते हैं तो उससे सरकार को ६०,०० लाख रुपये की आयदनी होगी।

गैर सरकारी संगठन और ग्राम विकास

भारत के ज्यादातर गांवों में साल के चार महीनों में ही काम होता है। सामुदायिक विकास संगठन के सामने आज का सबसे महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या एक फसल से दूसरी फसल के बीच के इस अवकाश का और किसानों की उपयोग में न आने वाली शक्ति का उपयोग सामुदायिक हितों के उत्पादन में किया जा सकता है। सामुदायिक विकास आन्दोलन की कामयाबी की कसौटी यही है कि वह किस हद तक इस उपयोग में न आने वाली शक्ति का सामुदायिक हितों के लिए उपयोग कर सकता है। जब तक हम ऐसा नहीं कर लेते, गांव का जीवन अनाकर्षक,

[सम्पदा

कठिन और गतिरोधपूर्ण ही रहेगा। यह काम, निश्चय ही गैर-सरकारी संगठनों का है। किसी भी ढंग का सरकारी संगठन इस किस्म का काम नहीं कर सकता।

गैर-सरकारी संगठनों द्वारा सभी तरह के श्रम-संबंधी काम अपनाए जा सकते हैं, जैसे नहरों की खुदाई सड़क-निर्माण, और चकबन्दी का काम। चकबन्दी १०० गांवों के खंड में एक साथ की जानी चाहिए। गांव वालों को एक साथ मिलकर यह तय करना चाहिए कि वे किस तरह की सड़कें बनाना चाहते हैं, प्रत्येक गांव के सामुदायिक हितों के लिए वे क्या-क्या करना पसन्द करते हैं और चकबन्दी के लिए गांव के सभी लोगों द्वारा कौनसी जमीन छोड़ी जानी चाहिए। यह काम भी गैर-सरकारी संस्थाओं द्वारा किया जा सकता है।

इन संगठनों का सबसे जरूरी कार्य यह है कि वे इस बात पर नजर रखें कि ये सारे लाभ समुदाय के कम सुविधा प्राप्त अंगों को प्राप्त होते रहें। मैं तो यहां तक सुझाव देना चाहूंगा कि प्रत्येक ताल्लुका के प्रधान कार्यालय में ऐसे नौजवान वकीलों का एक समूह होना चाहिए, जो बिना फीस लिये ऐसे मामलों को अपने हाथ में ले, यदि उन्हें सचमुच ही सुधारों में दिलचस्पी है।

रूस में रोजगार

एक समय था, जब सोवियत समाचार पत्रों में नौकरियों के विज्ञापन छपा करते थे। १९३० में आखिरी विज्ञापन निकले थे। उसके उपरांत काम चाहिए के बोर्ड और विज्ञापन सब बंद कर दिए गए। अब प्रतिदिन काम करने वालों की संख्या में ६००० मजदूरों की वृद्धि होती है। इस समय सोवियत रूस में १००००० निर्माण योजनाएं जारी हैं—नए उद्योग, कृषि, यातायात विकास, नए गृह निर्माण और नागरिक सेवाओं का विस्तार हो रहा है। विगत ४ वर्षों में ३००० बड़े औद्योगिक संगठनों का निर्माण हुआ और उन सब में नए मजदूरों को काम मिला। समस्त उद्योग और उत्पादन में राष्ट्रीय स्वामित्व ने सोवियत रूस से बेकारी का चिन्ह मिटा दिया। १९१७ की क्रान्ति के पूर्व मजदूरों की संख्या ८० लाख से अधिक न थी। १९३२ में यह संख्या ४२० लाख तक पहुँच गयी थी, किंतु १९५८ में ५२० लाख मजदूर काम में लगे हैं। यह सोचा जाता है कि १९५८ के अन्त में ५४० लाख मजदूर काम करने लगेंगे। किंतु जिस ढंग से देश में उद्योगों का विस्तार हो रहा है, उससे पर्याप्त संख्या में मजदूरों का मिलना कठिन प्रतीत हो रहा है। सोवियत अर्थव्यवस्था में उत्पादन बढ़ता चला जा रहा है, १९५३ से सोवियत उद्योगों का उत्पादन ५५ प्रतिशत बढ़ गया है। आज रूस वैज्ञानिक यंत्रों से एक वर्ष में जितना अधिक उत्पादन करता है, उतने उत्पादन के लिए पहले १५-२० वर्ष लगते। अगले १५ वर्षों में बुनियादी, प्रमुख और उपभोक्ता उद्योगों में दुगना-तिगुना उत्पादन बढ़ जाएगा। रूस में आबादी भी बढ़ रही है। १९२६ और १९३९ के मध्य में २० लाख मुंह प्रतिवर्ष बढ़े। युद्धोपरांत प्रतिवर्ष ३० लाख से अधिक आदमी बढ़ने लगे। जो देश एक समय खेती पर निर्भर था, और वह भी विकसित न था, अब वह विकसित देशों में दूसरा स्थान रखता है। आज वह सोचता है कि जितनी मानव शक्ति बढ़ेगी, उतना अधिक उत्पादन बढ़ेगा और उपभोक्ताओं के लिए वह उतना ही सस्ता तैयार होगा।

—

मास की प्रमुख आर्थिक घटनाएँ

गत मास में भारत के औद्योगिक और आर्थिक विकास की दिशा में जो महत्वपूर्ण घटनाएं हुई हैं उनमें से कुछ निम्नलिखित हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष

नई दिल्ली में अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक सम्मेलन—इन सम्मेलनों के द्वारा भारत को विदेशों से आर्थिक सहायता मिलने की संभावनाएं और आशा बहुत बढ़ गई है और निजी उद्योगों के सम्बन्ध में भारत सरकार के रुख में भी कुछ परिवर्तन की आशा की जा रही है।

छोटे उद्योगों के लिए कारखाना

छोटे उद्योगों के उत्पादन और ट्रेनिंग केन्द्र खोलने के बारे में भारत और पश्चिमी जर्मनी में एक समझौते पर हस्ताक्षर हो गये हैं। यह कारखाना ओखला में खोला जाएगा, जहां छोटे उद्योगों के लिए मशीनें तैयार की जाएंगी।

भारत की नयी आयात-नीति

भारत सरकार ने अक्तूबर १९५८ से मार्च १९५८ तक की छमाही के लिए जो आयात नीति घोषित की है, वह वर्तमान आयात नीति से बहुत भिन्न नहीं है। उसमें बहुत ही कम और बहुत ही मामूली परिवर्तन किए गए हैं।

सुपारी और लौंग का आयात कोटा कम और कपूर का कोटा खत्म कर दिया गया है। बच्चों के लिए दूध व दूध की बनी वस्तुएं, टाइम पीस घड़ियां, फोटो के समान, लिक्विड पेराफीन और एक्स-रे फिल्म का आयात कुछ उदार कर दिया गया है। कुछ महत्वपूर्ण वस्तुओं के कल-पुर्जों के कोटे बढ़ा दिए गए और मशीनों व रासायनिक पदार्थ (केमिकल) के कोटे घटा दिए गए हैं। लपेटने के काम में आने वाले कागज (रेपर्स), नकली रेशम के धागे और शीशे के आयात के लिए भी कुछ कोटा रखा गया है, जबकि पिछली छमाही में बंद कर दिया गया था। निर्यात वृद्धि के उद्देश्य से कपड़ा उत्पादन बढ़ाने के लिए मशीनें व रंग आदि के आयात में विशेष सुविधाएं दी जाएंगी। सन् १९५८ में केवल ९९ करोड़ गज कपड़े के निर्यात होने की संभावना है जबकि सन् १९५७ में ८० करोड़ गज कपड़े का निर्यात हुआ।

एक योजना के अंतर्गत मिलों को निर्यात किये गये माल से होने वाली आय के कुल भाग के बराबर रंगों और रासायनिक पदार्थों को मंगाने के लिए आयात लाइसेंस दिए जाएंगे। उन मिलों को, जो अपनी मशीनों को बदलने के लिए आधुनिक मशीनें मंगाना चाहेंगी, इस शर्त पर विदेशी-मुद्रा खर्च करने की इजाजत दी जाएगी कि वे अधिकांश भुगतान बाद में पांच सालों की अवधि में करेंगी।

बाल बियरिंगों, बिजली के मोटर स्टाटरों, कुछ रासायनिक पदार्थों और कुछ ड्रिलों, धातु काटने के आरों, जैसी चीजों के कोटे कम कर दिये गये हैं।

तांबा, जस्ता और शीशे जैसी अलौह धातुओं के आयात को अनुमति नहीं दी गयी, पुराने व्यापारियों को तांबा, पीतल और जर्मन सिलवर के छोटे टुकड़ों (स्क्रैप) के आयात के लिए लाइसेंस दिये जायेंगे।

जिन देशों के साथ भारतीय रुपए में भुगतान की व्यवस्था है उनसे निर्धारित मात्रा में सिनेमा की फिल्म मंगाई जा सकेंगी।

पौंड पावने की कमी

पौंड पावने की रकम बहुत तेजी के साथ घट रही है। सन् १९५५ के जनवरी ७३१ करोड़ पौंड पावना था और जनवरी १९५६ में ७४२ करोड़ था। इसके पश्चात् जनवरी १९५७ में घटकर ५१३ करोड़ हो गया और जनवरी १९५८ में वह केरल २८५ करोड़ रह गया। अक्तूबर १९५८ में यह घटकर १८१ करोड़ रह गया।

अमेरिकी व्यापारिक प्रतिनिधि मंडल

अमेरिका से एक व्यापारिक मंडल भारत आया है जो

दोनों देशों में व्यापारियों की व्यापार वृद्धि की सम्भावनाओं पर विचार करेगा। इसी तरह एक प्रतिनिधि मंडल भारत से मास्को गया है।

भारतीय व्यापार शिष्टमंडल

भारत सरकार का व्यापार-शिष्टमंडल रूस सरकार के साथ व्यापार सम्बन्धी बातचीत के लिये मास्को के लिए रवाना हो गया है। दोनों देशों के बीच वर्तमान व्यापार समझौते की अवधि दिसम्बर १९५८ में समाप्त हो जायेगी। यह मंडल पोलैंड और जर्मनी भी जाएगा और वहां की सरकारों के साथ व्यापार के बारे में बातचीत करेगा।

इन्डस्ट्रियल क्रेडिट एण्ड इनवेस्टमेंट कार्पोरेशन

श्री गगन विहारीलाल मेहता जो अखिल भारतीय उद्योग व्यापार मंडल के अध्यक्ष रह चुके हैं और पिछले दिनों अमेरिका में भारत के राजदूत थे इंडस्ट्रियल क्रेडिट एण्ड इनवेस्टमेन्ट कारपोरेशन आफ इण्डिया के जनरल मैनेजर बनाये गये हैं। यह संस्था विश्व-संघ अमेरिका के नियोजकों तथा भारत व अमेरिकन सरकारों के सहयोग से बनाई गई हैं। विश्व बैंक ने इसे एक करोड़ डालर की सहायता दी है।

— —
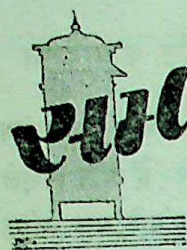
सम्पादक के नाम पत्र

सरकारी सहायता बनाम सूदखोरी

श्री सम्पादक जी,

सरकार अन्न उत्पादन की वृद्धि के लिए किसानों की सहायता का बहुत प्रचार कर रही है और बीज वितरण का विज्ञापन भी खूब कर रही है, परन्तु इस बीज वितरण में तथा साहूकारों की पुरानी सूदखोरी में क्या अन्तर है? श्री नारायण देव ने एक पत्र 'हिन्दुस्तान' में प्रकाशित किया है, जिसका आशय आपके पास भेज रहा हूं ताकि आप सम्बद्ध अधिकारियों का ध्यान इधर आकृष्ट कर सकें।

सरकारी बीज गोदाम तथा सहकारी बीज गोदाम व सहकारी विकास समिति और गन्ना विकास समितियों के बीज गोदामों द्वारा रबी की फसल के बीजों को इस शर्त पर दिया जाता है कि फसल का सवाया अनाज अर्थात् दस मन का १२॥ मन अन्न लिया जाता है। पहले जमींदार और साहूकार किसान को इसी शर्त पर बीज दिया करते थे और सवाया वसूल करते थे। जिनको बेहद सूदखोर समझा और कहा जाता रहा है किन्तु अब उनको हटा कर हम और हमारी जन प्रिय सरकार भी यदि उसी ढंग को अपनाये और कहे कि हम किसान को अच्छे बीज देकर उसकी सहायता कर रहे हैं और इसे छिपाये कि १००० मन देकर १२॥ सौ मन वसूल करके गोदाम भरते हैं तो यह कहां तक उचित है?

—रामनिवास कौशिक

सरकारी लाल फीताशाही और सहकारी समितियां

श्री सम्पादक जी,

भारत के प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने हैदराबाद में भाषण देते हुए देश की सहकारी समितियों के अधिकारियों के सम्बन्ध में निम्न वाक्य कहे: "भारत के प्रधानमंत्री ने कुछ लोगों को एक सहकारी संस्था बनाने में सहायता देने की ८ महीने तक भरसक कोशिश की किन्तु इसमें उन्हें सफलता नहीं मिली। तब मैंने कोशिश छोड़ दी। स्पष्ट ही पंजाब का सहकारी संस्थाओं का रजिस्ट्रार, जिसके साथ मेरा वास्ता पड़ा, नहीं चाहता कि सहकारी संस्थाएं विकसित हों और उसने नियमों की ऐसी दुर्लंघ्य बाढ़ खड़ी कर रखी है कि आदमी की सारी ताकत निःशेष हो जाती है।

"ये नियम सहकारी आंदोलन को विकसित होने से रोकने के लिये किसी प्रतिभाशाली दिमाग की उपज मालूम देते हैं।"

इन शब्दों के बाद देश की सहकारी समितियों के सम्बन्ध में एक भी शब्द कहना अनावश्यक हो जाता है। कि जितने कानून देश में चल रहे हैं उनका निर्णय ब्रिटिश लाल फीता शाही के जमाने में हुआ था, जब सेवा सम्बन्धी सब कार्य भी लाल-फीता शाही के अन्दर विलीन हो जाते थे। दिल्ली में अनेक वर्षों से अधिकारी गृह-निर्माण के लिए सहकारी समितियों के संगठन पर जोर देते आये हैं। आज तक अनेकों सहकारी समितियों का संगठन हो चुका किन्तु इनमें से सम्भवतः एक को भी दिल्ली सरकार ने भूमि नहीं दी। योजनाएं जरूर बनती हैं परन्तु वे कागजी योजनाओं से व्यवहार क्षेत्र में नहीं आतीं। हमारा स्वयं एक सहकारी समिति से सम्बन्ध होने के नाते यह अनुभव है कि दिल्ली सरकार के गजट में समिति को भूमि देने की विज्ञप्ति प्रकाशित हो गई। शर्तें तय करने के लिए ६ महीने की लिखा-पढ़ी के बाद यह जवाब आया कि वह विज्ञप्ति वापस ली जाती है। किसी दूसरी जमीन के लिए आप दरख्वास्त दीजिये। इन पंक्तियों के लिखने तक आदर्श-भवन गृह निर्माण सहकारी समिति को कोई भूमि नहीं दी गई।

—भद्रसेन गुप्त

भारतीय कृषि के १०० वर्ष-३

श्री ओमप्रकाश तोषनीवाल, एम० काम०

'सम्पदा' के गतांक में श्री तोषनीवाल ने सन् १६३६ से प्रथम पंचवर्षीय योजनाकाल तक का अध्ययन प्रस्तुत किया था। इस अंक में द्वितीय पंचवर्षीय योजना में कृषि को क्या स्थान प्राप्त है, यह दिखलाया गया है।

द्वितीय योजना में कृषि-कार्यक्रम

दूसरी पंचवर्षीय योजना पहली योजना की तुलना में कृषि और औद्योगिक विकास की पारस्परिक निर्भरता के प्रति अधिक सचेष्ट है। इस योजना में कृषि कार्यक्रम इस विचार से बनाये गये हैं कि बढ़ी हुई जन-संख्या के लिये यथेष्ट खाद्य सामग्री की व्यवस्था हो सके और विकासोन्मुख औद्योगिक अर्थ-व्यवस्था की आवश्यकता को ध्यान में रखकर कच्चा माल तैयार किया जा सके। साथ में निर्यात के लिये और अधिक कृषि-सामग्री बच सके। योजना में इस बात का भी सुझाव दिया गया है कि प्रत्येक क्षेत्र की साधारण औसत पैदावार बढ़ाने के लिए और अधिक व्यापक प्रयत्नों की आवश्यकता है। देश के प्रत्येक भाग के लिये विभिन्न फसलों की औसत पैदावार का लक्ष्य निर्धारित होना चाहिये और इसके लिये सिंचाई की सुविधाओं के व्यापक विश्लेषण, वर्षा और भूमि की बनावट आदि को आधार बनाया जाना चाहिये। इन लक्ष्यों की पूर्ति के लिये प्रत्येक गांव और प्रत्येक परिवार के वास्ते उत्पादन का स्तर बढ़ाने के कार्यक्रम होने चाहिये। उस भारी अनिश्चितता के बावजूद, जिस पर कृषि आधारित है, और अधिक सु-आयोजित प्रयत्न कृषि-विकास के लिए किया जाना चाहिये।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में भारत सरकार ने कृषि भूमि तथा ग्रामीण ऋण के सम्बन्ध में अपनी आर्थिक नीति मुख्यतः इन तीन बातों पर आधारित की थी—

१. कृषि मूल्यों को उचित स्तर पर रखना,

२. हाट व्यवस्था, गोदामों तथा ऋण-सम्बन्धी सुविधाओं की व्यवस्था करना तथा

३. भूमि प्रणाली में सुधार करना।

— लेखक —

द्वितीय योजना में कृषि आयोजन के प्रमुख तत्व निम्न माने गये हैं :—

१. भूमि उपयोग की योजना बनाना।

२. दीर्घकालीन और अल्पकालीन लक्ष्यों का निर्धारण करना।

३. विकास कार्यक्रमों और सरकारी सहयोग को उत्पादन-लक्ष्यों और भूमि उपयोग-योजना के साथ शृंखलाबद्ध करना, जिसमें योजना के अनुसार खाद्य आवंटन भी शामिल है और

४. एक उचित भूमि नीति तैयार करना।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि विकास के विभिन्न कार्यक्रमों के लिए २४० करोड़ रुपये निर्धारित किये गये थे, जब कि द्वितीय योजना में इस कार्य के लिये ३४१ करोड़ रुपये की निम्न व्यवस्था की गई है :—

	(करोड़ रुपये में)
कृषि	१७०

पशुपालन	५६
वन तथा भूमि संरक्षण	४७
मछली पालन	१२
सहकारी कार्य (गोदाम तथा हाट व्यवस्था सहित)	४७
विविध	९

अतः इन आंकड़ों से स्पष्ट हो जाता है कि द्वितीय योजना में केवल फसलों पर जोर न देकर विविधरूपी कृषि अर्थ व्यवस्था पर अधिक जोर दिया गया है। योजना में ऐसी व्यवस्था की जायगी, जिससे प्रत्येक जिले और विशेष तौर पर प्रत्येक राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्य क्षेत्र के पास सतर्कता से निर्मित कृषि योजना हो, जिसमें फसल की किस्म, प्रमुख रूप से सिंचाई की व्यवस्था, ऋण और बाजार की सुविधायें, खाद्य की व्यवस्था आदि कार्य सम्मिलित हों।

योजना काल में खाद्यान्नों के उत्पादन में १६ प्रतिशत तथा सभी जिन्सों के सम्पूर्ण उत्पादन में १७ प्रतिशत की वृद्धि करने का लक्ष्य रखा गया था। ये लक्ष्य राष्ट्रीय विकास परिषद की दृष्टि से अपर्याप्त थे। इसलिये योजना आयोग तथा कृषि मंत्रालय ने राज्य सरकारों से परामर्श करके द्वितीय योजना-काल के उत्पादन-लक्ष्यों में वृद्धि की है।

द्वितीय योजना के उत्पादन लक्ष्य

जिन्स	इकाई	अनुमानित उत्पादन १९५५-५६	अनुमानित उत्पादन १९६०-६१	संशोधित उत्पादन लक्ष्य १९६०-६१
खाद्यान्न	लाख टन	६५०	७५०	८०५
तिलहन	लाख टन	५५	७०	७६
गन्ना (गुड़)	लाख टन	५८	७१	७८
कपास	लाख गांठ	४२	५५	६५
पटसन	लाख गांठ	४०	५०	५५
नारियल तेल	लाख टन	१.३	२.१	२.१
सुपारी	लाख मन	२२.०	२६.०	२६.०
लाख	लाख मन	१२.०	१६.०	२६.०
तम्बाकू	लाख टन	२.५	२.५	२.५
काली मिर्च	हजार टन	२६.०	३२.०	३१.०
काजू	हजार टन	६०.०	८०.०	१,०६०
चाय	हजार पौंड	१,४४०	६,०००	७,०००

योजना में न केवल विभिन्न कृषि-जन्य जिन्सों के उत्पादन में ही वृद्धि करने का लक्ष्य रखा गया है, बल्कि उसकी किस्मों में भी सुधार करने का उद्देश्य है। खाद्यान्नों के सम्बन्ध में विशेषकर चावल तथा गेहूँ के उत्पादन में ही वृद्धि करने का ही लक्ष्य रखा गया है। कपास के विषय में लम्बे रेशे के कपास के उत्पादन में वृद्धि करने पर जोर दिया गया है। अधिक मात्रा में उच्च कोटि के पटसन का उत्पादन करने के लिये उन क्षेत्रों में विस्तार कार्यक्रम पर अमल करने का निर्णय किया गया है, जहां बढ़िया किस्म के पटसन की खेती हो सकती है।

योजना से २ करोड़ १० लाख एकड़ अतिरिक्त भूमि में सिंचाई होने की आशा की जाती है। इसमें से १ करोड़ २० लाख एकड़ भूमि में बड़ी और मध्यम सिंचाई योजनाओं से और ९० लाख एकड़ भूमि में सिंचाई की छोटी योजनाओं द्वारा सिंचाई की जायगी। बड़ी और मध्यम श्रेणी की योजनाओं से जितनी भूमि सींचने का लक्ष्य रखा गया है, उसमें से ९० लाख एकड़ उन योजनाओं से सींची जायेगी जिन पर इस समय काम हो रहा है तथा ३० लाख एकड़ की सिंचाई की व्यवस्था करने के लिये दूसरी योजना में नये योजना कार्य शुरू किये जायेंगे। योजना में कृषि के लिये खाद, पौधों को कीड़े से बचाने तथा बंजर भूमि को कृषि योग्य बनाने आदि का कार्य तेजी से करने की व्यवस्था है। कृषि की एक बड़ी आवश्यकता वित्त की प्राप्ति करना और उचित हाट व्यवस्था भी है। योजना में इस और पहले से अच्छे लक्ष्य रखे गये हैं। सहकारी ढंग से ऋण देने, माल बेचने, माल को संवारने, गोदाम बनाने और इनमें माल भरने के जो मोटे लक्ष्य रखे गये हैं, वे निम्न लिखित हैं :—

ऋण देना

बड़ी-बड़ी सोसाइटियों की संख्या	१०,४००
छोटी मियाद के ऋण	१५० करोड़ रु०
बीच की मियाद के ऋण	५० " "
लम्बी मियाद के ऋण	२५ " "

माल बेचना और संवारना

इन कामों के लिए संगठित की जाने वाली

[[illegible]

हाट बाजारी सोसाइटियों की संख्या	१,८००
चीनी के सहकारी कारखाने	३५
कपास की सहकारी मिलें	४८
माल संवारने वाली अन्य सहकारी सोसाइटियां	११८
गोदाम	
केन्द्र और राज्यों के निगमों के गोदाम	३५०
हाट बाजारी सोसाइटियों के गोदाम	१,५००
बड़ी सोसाइटियों के गोदाम	४,०००

सहकारी ढंग से ऋण देने के जो लक्ष्य ऊपर बतलाये गये हैं, उनकी पूर्ति वर्तमान और नई दोनों प्रकार की सोसाइटियां मिल कर करेंगी।

वास्तविक भूमि समस्या

कृषि की मूल समस्या वास्तव में भूमि-व्यवस्था का शिथिल होना है। स्वतंत्रता के बाद इस दिशा में काफी कुछ किया जा चुका है। लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं कि देश इस समस्या से छुटकारा पा गया है। प्रथम योजना में निहित उद्देश्यों—उत्पादन में वृद्धि तथा असमानता में कमी—की प्राप्ति के लिए यह आवश्यक हो गया है कि उस भूमि व्यवस्था के स्थान पर, जिसमें किसानों का शोषण होता हो, एक ऐसी भूमि व्यवस्था लागू की जाए जिससे किसान को अधिकतम लाभ प्राप्त हो सके। इन परिवर्तनों के लिए प्रथम योजना में निम्नलिखित सिफारिशें की गईं:—

१. राज्य और किसानों के बीच मध्यवर्ती लोगों का उन्मूलन,

२. काश्त सम्बन्धी सुधार,

३. भू-सम्पत्ति का सीमा-निर्धारण तथा अतिरिक्त भूमि का वितरण,

४. किसानों की स्थिति में सुधार, तथा

५. कृषि का सहकारिता के आधार पर संगठन।

योजना आयोग की सिफारिशों के अनुसार सरकार ने मई १९५३ में भूमि-सुधार के लिए एक केन्द्रीय समिति बनाई जो योजना आयोग के भूमि सुधार विभाग का पथ प्रदर्शन करती है।

मई १९५५ में योजना आयोग ने प्रथम पंच-वर्षीय योजना के अन्तर्गत देश के भूमि-सुधार सम्बन्धी कार्य में हुई प्रगति की समीक्षा करने के लिए एक समिति नियुक्त की। काश्त सुधार समिति ने, जिसने अपना प्रतिवेदन ६ मार्च, १९५६ को दिया, यह सिफारिश की कि भूमि के स्वामित्व के सम्बन्ध में निर्णय करने के लिए 'उत्तराधिकार' को नहीं, बल्कि 'श्रम' को आधार बनाना चाहिए। इस प्रकार समिति ने यह सिद्धान्त स्वीकार कर लिया कि भूमि का सच्चा स्वामी उसको जोतने बोने वाला ही होता है।

योजना में निहित मध्यवर्ती लोगों के उन्मूलन के महत्वपूर्ण उद्देश्य की दिशा में खासी प्रगति हुई है। इसके फलस्वरूप काफी अधिक किसान भूमि के स्वामी बन गये और उनका राज्य के साथ सीधा सम्बन्ध स्थापित हो गया। इसका परिणाम यह हुआ कि जमींदारों, जागीरदारों, इनामदारों आदि जैसे मध्यवर्ती लोगों का हिस्सा जिनका नियन्त्रण पहिले देश की ४३ प्रतिशत कृषि भूमि पर था, अब घट कर केवल ८.५ प्रतिशत भूमि पर ही रह गया।

काश्त सम्बन्धी सुधार की दिशा में योजना में मुख्य रूप से जो सिफारिशें की गई थीं, वे इस प्रकार हैं—१. लगान में कमी करना, २. पट्टे की सुरक्षा तथा ३. खेत खरीदने के लिए काश्तकारों को अधिकार देना। १९५६ तक असम, बम्बई, मध्यप्रदेश, उड़ीसा, मद्रास, उत्तरप्रदेश, हैदराबाद, राजस्थान, मैसूर, दिल्ली तथा हिमाचल प्रदेश में यह निश्चय करने के लिए कानून बनाए गए थे कि अधिकतम लगान सामान्यतः सकल उत्पादन के चतुर्थांश अथवा पंचमांश से अधिक न हो।

सीमा निर्धारण

योजना में इस सिद्धान्त पर भी जोर दिया गया कि प्रत्येक व्यक्ति के अधिकार में कितनी भूमि हो, इस सम्बन्ध में सीमा निर्धारित हो जानी चाहिए। योजना आयोग ने यह भी सिफारिश की है कि सभी राज्य अपने-अपने क्षेत्रों की कृषि सम्बन्धी समस्याओं को ध्यान में रखते हुए जोत की सीमा निर्धारण के लिए सविस्तार योजनाएं तैयार करें।

राज्यों के पुनःसंगठन के पूर्व निम्नलिखित राज्यों में जोत की सीमा-निर्धारण के लिए कानून बनाये जा चुके थे:—

पश्चिम बंगाल	२५ एकड़
हैदराबाद	४.५ परिवार जोत (१८ से २७० एकड़)
पेप्सू	३० स्टेंडर्ड एकड़ (विस्थापित व्यक्तियों के सम्बन्ध में ४०)
हिमाचल प्रदेश	चम्बा जिले में ३० एकड़ तथा

	अन्य क्षेत्रों में १२५ रु० के मूल्य की भूमि।
जम्मू तथा काश्मीर	२२.७५ एकड़।

निम्नलिखित राज्यों में भविष्य के लिये भूमि की सीमा इस प्रकार निर्धारित की गई है:—

बम्बई	१२ से ४८ एकड़
दिल्ली	३० स्टैण्डर्ड एकड़
हैदराबाद	३ परिकर जोत (१२ से १८० एकड़)
मध्य भारत	५० एकड़
सौराष्ट्र	आर्थिक दृष्टि से पर्याप्त ३ जोत
उत्तर प्रदेश	३० एकड़
प० बंगाल	३५ एकड़

दो उद्देश्य

द्वितीय योजना में भूमि सुधार के दो उद्देश्य रखे गये हैं। (१) कृषि उत्पादन के मार्ग में से ऐसी रुकावटों को दूर करना जो हमारी कृषि व्यवस्था के कारण पैदा होती हैं तथा (२) ऐसी कृषि-अर्थ व्यवस्था तैयार करना जिसके अन्तर्गत किसानों की कार्य शक्ति तथा उत्पादन क्षमता में वृद्धि हो। ग्रामीण अर्थ व्यवस्था के विकास के लिये खेतों की चकबन्दी, सहकारी ढंग से कृषि का संगठन तथा अच्छी भूमि व्यवस्था लागू करने के सुझाव दिये गये हैं। इन सबका उद्देश्य सहकारी ग्राम-व्यवस्था चालू करना है। योजना में कृषि उत्पादन के लिये प्रस्तावित वृद्धि की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण और आवश्यक माना गया है कि खेतों की चक-बन्दी की दिशा में तेजी से आगे बढ़ा जाय। इसीलिये इस काल में अधिकांश राज्यों ने अपनी योजनाओं में चकबन्दी का कार्यक्रम सम्मिलित किया है। बम्बई, मध्यप्रदेश, हैदराबाद, हिमाचल प्रदेश, दिल्ली, जम्मू तथा काश्मीर, पेप्सू तथा पंजाब में चकबन्दी का कार्य आरम्भ किया जा चुका है। भिन्न २ राज्यों में यह भिन्न २ प्रकार से किया जा रहा है। खेतों की चकबन्दी को सुविधाजनक बनाने के लिए बिहार, उड़ीसा, प० बंगाल, हैदराबाद, जम्मू तथा काश्मीर, राजस्थान तथा हिमाचल प्रदेश में कानून भी बनाये जा चुके हैं।

कृषि में सहकारिता लागू करने की दिशा में राज्यों से यह आशा की गई है कि वे छोटे तथा मध्यवर्ग के किसानों को स्वेच्छा पूर्वक सहकारी कृषि समितियों में संगठित होने में सहायता पहुँचाये। योजना में यह स्वीकार किया गया कि भूमि-सम्बन्धी समस्या सहकारी ग्राम व्यवस्था के आधार पर ही हल की जा सकती है। अतः द्वितीय योजना के काल में ऐसे वातावरण तैयार करने की आशा रखी गई है कि जिससे दस वर्षों में काफी अधिक भूमि में सहकारी ढंग से खेती की जा सके। गांव की सम्पूर्ण भूमि का बन्ध तीन विभिन्न प्रकार से किया जायेगा। पहले तो वे किसान होंगे जो अपनी जमीन पर अकेले ही अपने खेती करेंगे। दूसरे, किसानों के वे समूह होंगे, जो अपनी खुशी से भूमि को सहकारी इकाइयों में इकट्ठा कर लेंगे। तीसरे, कुछ भूमि ऐसी होगी जो सारे गांव की होगी, जैसे शामिलात की जमीन और गांवों में अधितकम सीमा से बची हुई भूमि। इन तीनों प्रकार की भूमियों में परस्पर क्या अनुपात रहेगा—यह बात क्रमिक उन्नति, विकास और ध्यानात्मक योजना पर निर्भर करती है। लक्ष्य यह रहेगा कि सहकारी भाग को क्रमशः बढ़ाया जाय, यहां तक कि गांव की सारी भूमि का प्रबन्ध सारे गांव की सांझी जिम्मेवारी बन जायें। गांव का प्रबन्ध सहकारी ढंग पर करने के लिये ऐसे काम किये जायेंगे जैसे कि खेती की पैदावार का बढ़ाना, गांव की दस्तकारियों की तरक्की करना, सहकारी बैंकों से कर्ज देना, माल का इकट्ठा खरीदना और बेचना, सहकारी पेटी, गांव की पंचायत के काम और गांव के एक सामाजिक विभाग का विकास अर्थात् ऐसी भूमि रखना जो कि सारे गांव की हो और जहां सब काम सारे गांव के हों। एक बार जब गांव का प्रबन्ध सहकारी ढंग पर होने लग जायेगा और सबको काम करने का पर्याप्त अवसर मिलने लगेगा तब भूमिवानों और भूमिहीनों में अन्तर अपने आप कम होने लगेगा। इस प्रकार ऐसे ग्रामीण आर्थिक ढांचे की कल्पना की जा रही है, जिसमें कृषि, ग्राम उद्योग, तैयार माल के उद्योग और ग्रामीण खरीद बेच के सब काम सहकारी आधार पर संगठित होंगे और यही हमारे "समाजवादी ढंग के समाज' की कल्पना है। विनोबा जी का 'भूदान' फिर 'संपत्तिदान' और अब 'ग्रामदान' भी इस दिशा में एक सफल रचनात्मक प्रयोग हैं।

(समाप्त)

योजना के बढ़े हुए खर्च

सतर्क रहने की आवश्यकता

श्री एस० अनन्त रामकृष्णन

देश की सम्पत्ति के अनुपात में विदेशों से लिए गये ऋण बहुत अधिक नहीं है, किन्तु १९३८-३९ में ग्रेट ब्रिटेन के ऊपर भारत का ४६४.९४ करोड़ रुपया ऋण था, यह घटकर १९५७ में १४४.९४ रह गया। इसके अतिरिक्त गत वर्षों में भारत पर विदेशों का ऋण बहुत तीव्र गति से बढ़ा है। १९४९-५० में भारत पर डालर ऋण १८.७७ करोड़ था, जो बढ़कर १९५७ में १४४.९४ करोड़ हो गया। इसके अतिरिक्त सोवियत यूनियन, पश्चिमी जरमनी और अन्य विदेशी सूत्रों के ऋण २९.३० करोड़ रुपये बैठते हैं भारत में बढ़ा हुआ ऋण ३,१३८.७३ करोड़ रुपये है। इसके साथ ही, हमारी ब्याज का भार उठाने वाली सम्पत्ति की राशि १९४८-४९ में १,४३१.१२ करोड़ रुपये थी जो १९५७ के अन्त में बढ़कर ३,३८५.८७ करोड़ रुपये हो गई।

इन बढ़ते ऋणों की अधिकता और योजना के बढ़ते हुए खर्चों को रोकने के लिए सतर्क होने की आवश्यकता है। यह कहा जाता है कि योजना-काल में लगभग १,२०० करोड़ रुपये की कमी पड़ेगी। यदि वस्तुओं की कीमतें और अधिक बढ़ती हैं तो कर्मचारियों द्वारा और अधिक वेतनों की मांग की जाएगी और उत्पादन-व्यय बढ़ जाएगा। उत्पादन-व्यय बढ़ने के कारण उत्पादन की मात्रा में कमी आ सकती है, जबकि आवश्यकता निरंतर उत्पादन बढ़ाने की है। इस कथन में किसी हद तक सच्चाई है कि योजना के घाटे से बचा नहीं जा सकता, फिर भी घाटे को कम से कम करने की कोशिश की जानी चाहिये और आवश्यक मदों पर ही खर्च किया जाना चाहिये।

पश्चिमी देशों से भारत तथा दूसरे एशियाई देशों को मिलने वाली सहायता की भी अपनी सीमाएं हैं। वे एक सीमा तक ही सहायता दे सकते हैं तथा प्राविधिक व शैल्पिक उन्नति तथा व्यापार में रूस से प्रतियोगिता करने और अपनी आणविक शक्ति बढ़ाने के कार्यों से जो धन शेष बच सकेगा, उसे ही वे दूसरे देशों को ऋण के रूप में दे सकते हैं। यदि अमेरिका में आर्थिक मन्दी आती है तो इसका प्रभाव उन सभी एशियाई देशों और भारत पर भी पड़ेगा जो अमेरिका की सहायता प्राप्त कर रहे हैं।

निजी उद्योगों पर तरह तरह के टैक्स लगाकर उन्हें निरुत्साहित करने की भारत-सरकार की नीति के कारण भी दूसरे देश भारत को ऋण देते हुए संकोच प्रदर्शित करते हैं। विभिन्न देशों के व्यापार में लगा हुआ धन धन को आकर्षित करता है। यदि हम स्वयं भी अपने देश के विकास के लिए रुपया लगाने को तैयार हों तो दूसरे देश भी रुपया लगाने के लिए तैयार हो जाएंगे। विदेशी उद्योगपति सरकारी उद्योगों की शक्ति और आत्म-विश्वास से अधिक निजी उद्योगों की शक्ति और आत्म-विश्वास के बारे में अधिक आशावादी हैं। भारत की आर्थिक स्थिति मजबूत बनाने के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि देश के आर्थिक विकास की दिशा में एक बड़ी संख्या में पूंजीपति सामने आवें; लेकिन विभिन्न प्रकार के अनेक टैक्स—कारपोरेशन टैक्स, सुपर टैक्स, डिविडेण्ड पर टैक्स, सम्पत्ति टैक्स आदि निजी उद्योग के विकास में बाधक बने हुए हैं।

यह कहा जाता है कि ये टैक्स देश को समाजवाद की ओर ले जाने के लिये लगाये जाते हैं। निजी उद्योग की बलिवेदी पर सरकारी उद्योग का विकास देश को निरंकुश शासन की ओर ले जायगा। ये कर निजी उद्योग को जिस प्रकार हानि पहुँचाते हैं, उससे यह आशंका होना नितान्त स्वाभाविक है कि देश का उद्योग १०० प्रतिशत सरकार के हाथों में चला जाएगा, जो अत्यन्त दुःखद है। भारत का व्यापारीवर्ग राष्ट्र के लिए उतना ही प्रयत्नशील रहा है, जितना किसी भी अन्य उन्नत देश का व्यापारी वर्ग। देश में जिस प्रकार की थोड़ी बहुत सुविधाएं सुलभ थीं, विषम परिस्थि-तियों में भी उन सबका पूर्ण उपयोग करके इस वर्ग ने देश

नया सामयिक साहित्य

अर्थ शास्त्र की सरल रूपरेखा— ले० श्री सत्यदेव देराश्री। प्रकाशक—लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा। पृष्ठ संख्या १००८। आकार १८ × २२/४। मूल्य ८.००

प्रस्तु पुस्तक अर्थ शास्त्र की उच्च कक्षा के विद्यार्थियों के लिए लिखी गई है, इसलिए स्वभावतः उनकी आवश्यकताओं का ध्यान रखा गया है। इसमें विभिन्न विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों का समावेश किया गया है, जिससे यह पुस्तक किसी एक राज्य के विद्यार्थियों के लिए नहीं, सभी हिन्दी राज्यों के विद्यार्थियों के लिए उपयोगी होगी।

प्रस्तुत ग्रन्थ में यद्यपि दो अलग-अलग खंड नहीं किये, तथापि विषय-भेद से पुस्तक दो खंडों में विभक्त की जा सकती है। एक अर्थशास्त्र का सैद्धान्तिक भाग है। दूसरा भारतीय अर्थशास्त्र। उत्पादन, विनिमय, वितरण, सार्वजनिक वित्त, आर्थिक आयोजन आदि खंडों में सिद्धान्त के विस्तृत वर्णनों के साथ-साथ भारतीय अर्थशास्त्र की विस्तृत चर्चा की गई है। अध्यायों के अध्याय भारतीय अर्थशास्त्र की प्रतिपाद्य सामग्री से पूर्ण हैं। आर्थिक नीतियों के इतिहास, संस्थाओं के इतिहास तथा आधुनिक प्रवृत्तियों के विस्तृत परिचय को सैद्धान्तिक चर्चा के साथ पढ़ने से दोनों का ज्ञान सम्यक् हो जाता है।

अर्थशास्त्र की जो सर्व सम्मत शैली या परिपाटी है, उसके अनुसार लेखक ने प्रत्येक विषय को समझाने का प्रयत्न किया है। बीच-बीच में चित्र, नक्शे, उदाहरण और तालिकाएं दे कर पुस्तक को सुबोध, उपयोगी तथा ज्ञानवर्द्धक बनाने का प्रयत्न किया गया है। भारतीय अर्थशास्त्र के प्रकरणों में आधुनिकतम प्रवृत्तियों का परिचय पाठकों को ज्ञान-वर्धन करने में विशेष सहायक होगा।

यह खेद की बात है कि अभी तक अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम पुरानी लीक पर चल रहे हैं। हमारी नम्र सम्मति में अब विश्वविद्यालय के संचालकों को उसमें नई दृष्टि की दिशा में विचार करना चाहिए। यूरोपियन अर्थशास्त्र का विकास जिन परिस्थितियों में हुआ था, न वे आज परिस्थितियां हैं और न भारत जैसे देश के लिए वह अर्थशास्त्रीय विचारसरणी उपयुक्त है। म० गांधी ने नई विचारसरणी दी थी, किन्तु आज भी हमारे देश के नेता और विद्वान उसकी उपयुक्तता पर गम्भीरता से विचार नहीं कर रहे। आज पूँजीवाद और मार्क्स का समाजवाद दोनों अपना रूप बदल चुके हैं। इसलिए आज आवश्यकता इस बात की है कि अर्थशास्त्र, राजनीति शास्त्र व समाज शास्त्र आदि शास्त्रों के अध्ययन में यूरोपियन पद्धति का अन्ध अनुसरण छोड़ दिया जाय, भारत के प्राचीन शास्त्रकारों की सम्मति भी आज उतनी ही ज्ञातव्य है, जितनी यूरोप के विचारकों की। यह प्रसन्नता की बात है कि प्रस्तुत पुस्तक के लेखक ने भूदान-यज्ञ की उपेक्षा नहीं की है। बड़े अथवा छोटे घरेलू उद्योग, कृषि का यंत्रीकरण, जीवनमान का उन्नत स्तर, आवश्यकताओं की वृद्धि आदि सभी प्रश्नों पर दोनों पक्ष न्यायपूर्वक दिये जाने चाहिए, किन्तु ऐसा कहके हम प्रस्तुत पुस्तक की आलोचना नहीं करना चाहते, वह तो नियत पाठ्य-क्रम के अनुसार लिखा गया है। विद्यार्थियों की सुविधा के लिए विभिन्न विश्वविद्यालयों की परीक्षाओं में पूछे गये प्रश्न तथा सारांश देते समय बड़े टाइप आदि का ध्यान रखा गया है।

को विकसित करने के अधिक से अधिक प्रयत्न किये हैं।

कभी-कभी कुछ इस प्रकार की शिकायतें भी सुनाई देती हैं कि भारतीय वाणिज्य के स्तर में गिरावट आई है। यह संभव है कि कुछ भारतीय व्यवसायी अपने कार्य को किन्हीं कारणों से पूरी मुस्तैदी के साथ न निभा पाए हों लेकिन सरकार द्वारा चलाये जाने वाले व्यवसाय भी तो इन दुर्गुणों से मुक्त नहीं हैं। व्यापार-पद्धति तभी उन्नति कर सकती है जबकि खुली प्रतियोगिता हो और व्यवसायियों का क्षेत्र पर्याप्त विस्तृत हो। इसमें सन्देह की कोई गुंजाइश नहीं कि औद्योगिकरण के द्वारा आर्थिक विकास होगा। लेकिन यह तभी संभव है जबकि निजी व्यवसाय को भी मान्यता दी जाए और उत्साहित किया जाए। वर्तमान नीति के अनुसार उसकी उपेक्षा न की जाए। निजी व्यवसाय पर लगाए गये करों का भार हल्का करने की आवश्यता है।
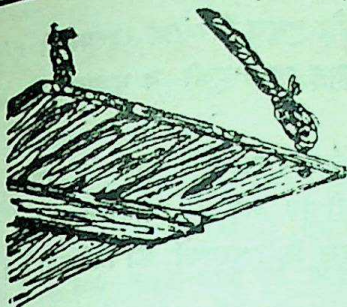
वास्तव में किसे दुख हुआ ?

झूलते झूलते बच्ची के हाथों की पकड़ ढीली पड़ गयी। लो, वह गिरी। माँ-बापने यह घटना देखी और दौड़कर वे पास आ गये। माँ की आँखें आसुओं से लबालब भर गयीं और पिता के हृदय से एक कूक उठी। बच्ची के गिरने से उन्हें भी दुख हुआ—क्योंकि उसी बच्ची के साथ उनकी हमदर्दी थी और उसके भविष्य की चिंता उन्हें हैरान बना रही थी। यही हालत हरएक माँ-बाप की होती है। तभी तो आप एक दूरदर्शी पिता की तरह अपने बच्चों के भविष्य के लिए एक अच्छासा प्रबंध कराने में व्यस्त हैं। चिंता न कीजिए। **जीवन-बीमा** इस का बोझ उठाने की जिम्मेदारी लेता है। आप के बच्चों के कल्याण की योजनाओं को पूर्ण करने का वह विश्वास दिलाता है।

प्रति-माह पाँच या दस रुपये जीवन-बीमे के रूप में बचाकर आप अपने को तथा अपने परिवार को सुरक्षित बना सकते हैं।

"शुभस्य शीघ्रम्"—आज ही आप अपने जीवन का बीमा कराइए।
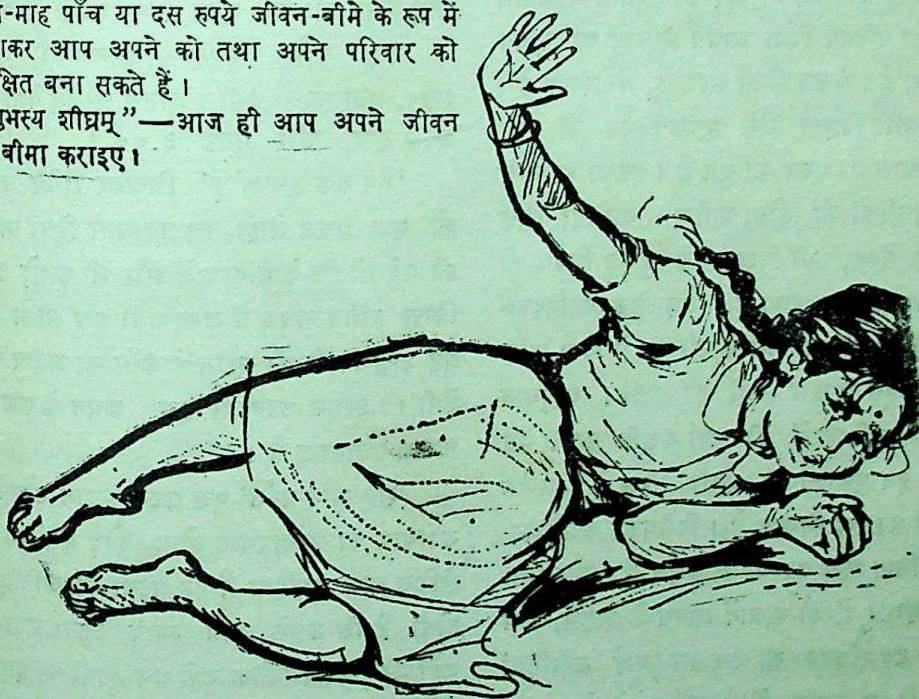
लाइफ़ इन्श्योरन्स कॉर्पोरेशन ऑफ़ इन्डिया

परन्तु क्या विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम निर्धारित करने वाले विद्वान् इन 'क्रियों पर विचार करेंगे ?

ज्ञान विज्ञान की छः पुस्तकें

१. एटम की कहानी, मूल्य २.००

२. टैलिफोन की कहानी, मूल्य २.००

३. वायुयान की कहानी, मूल्य २.००

४. कोलम्बस, मूल्य २.००

५. ज्वाला मुखी की कहानी, मूल्य २० ०

६. उत्तरी व दक्षिणी ध्रुवों की कहानी, मूल्य २.००

पिछले तीन वर्षों में जो हिन्दी प्रकाशक योजनापूर्वक हिन्दी साहित्य के भंडार की अभिवृद्धि करने में लगे हैं, उनमें इस पुस्तक-माला के प्रकाशक राजपाल एन्ड सन्स, काश्मीरी-गेट, दिल्ली—६ एक हैं। उक्त पुस्तकों के विषय नाम से स्पष्ट हैं। वे सब अंग्रेजी में लिखी गई प्रसिद्ध पुस्तकोंके अनुवाद हैं। अनुवाद प्रामाणिक हिन्दी लेखकों द्वारा किए गए हैं। आज भी विज्ञान के ऊंचे विद्वान हिन्दी में लिखना पसन्द नहीं करते, इसलिये यह अच्छा है कि प्रामाणिक विद्वानों की पुस्तकों का अनुवाद करके सामान्य जनता को मूल विषय का परिचय दिया जाय। पुस्तकों का चुनाव बहुत अच्छा हुआ है। लेखन शैली सरल है, मनोरंजक है। साधारण व्यक्ति भी विज्ञान जैसे शुष्क विषय में रस लेने लगता है। आज तो एटम का युग है। इसका सामान्य ज्ञान शिक्षित नागरिकों को होना चाहिए। बीसियों चित्र व कुछ कहानियां देकर, भी विज्ञान के दुरूह विषय को सरल करने का प्रयत्न किया गया है। वैज्ञानिक आविष्कारकों व उनके जीवन की घटनाओं के परिचय से अणु शक्ति विषयक पुस्तक बहुत बोझल नहीं हो पाती। वायुयान और टेलिफोन के आविष्कारों की चर्चा यद्यपि पुरानी पड़ चुकी है, तथापि इन पुस्तकों की शैली सरल है। अनेक स्थलों पर कहानी का रस मिलता है। विशेषकर आविष्कारकों के साहस, निष्ठा तथा तपस्या के वर्णन में। कोलम्बस तथा उत्तरी दक्षिणी ध्रुवों की यात्रायें मानव के साहस, सत्य की खोज और दृढ संकल्प की वीर रस पूर्ण कहानियां हैं, जो सरल शैली व भाषा में लिखी होने के कारण सामान्य जनता को भी रोचक प्रतीत होंगी। लहलहाते खेतों से शस्य श्यामल वसुन्धरा भूमि के गर्भ में कितनी प्रचण्ड अग्नि और तुमुल विध्वंसक रहस्यमयी शक्ति छिपी हुई है, इसका लाभ ज्वालामुखी व भूचाल की कहानी से मिलता है।

सभी पुस्तकें काले टाइप में छापी हैं, ताकि सामान्य शिक्षित व्यक्ति भी पढ़ सके। स्थान-स्थान पर चित्र व आकर्षक आवरण सभी पुस्तकों की विशेषता है।

—कृष्ण

★

जिगर मुरादाबादी—जीवनी और संकलन

सम्पादक—प्रकाश पंडित, प्रकाशक—वही। क्राउन सोलह पेजी आकार के ९५ पृष्ठ, मूल्य १.५०।

'उर्दू के लोकप्रिय शायर' सीरीज में प्रकाशित यह पुस्तक जिगर मुरादाबादी के जीवन रेखाओं और शायरी के रंग का अच्छा परिचय देती है। जीवनी बहुत रोचक शैली में लिखी गई है और संकलनमें भी सम्पादक की सुरुचि का पता चलता है।

पुस्तक सचित्र-सजिल्द और आकर्षक है। श्रेष्ठ सम्पादन के लिए श्री प्रकाश पण्डित और श्रेष्ठ प्रकाशन के लिए मैसर्स राजपाल एण्ड सन्स बधाई के अधिकारी हैं।

राई और पर्वत—(उपन्यास)

लेखक—रांगेय राघव, प्रकाशक —वही। क्राउन सोलह पेजी आकार के १६७ पृष्ठ, और मूल्य ३.००।

'कब तक पुकारूं ?' लिखकर रांगेय राघव ने हिन्दी को एक प्रथम श्रेणी का उपन्यास दिया था और आशा की गई थी कि वे भविष्य में और भी अच्छे उपन्यास देंगे। किन्तु रांगेय राघव में जल्दबाजी इस सीमा तक है कि वह उन्हें किसी भी महत्व के काम का महत्व समझने नहीं देती। प्रस्तुत उपन्यास इस कथन के समर्थन में एक अच्छा उदाहरण है।

'राई और पर्वत' एक घटना-प्रधान उपन्यास है। किसी उपन्यास का घटनाप्रधान होना कोई ऐब की बात नहीं लेकिन कथा साहित्य में हर घटना की अनिवार्य मांग यह होती है कि उसके साथ न्याय किया गया हो। घटना कहीं भी अस्वाभाविक नहीं बन जानी चाहिए। 'राई और पर्वत' में फूलवती का अपने देवर और फिर हरदेव के साथ प्रणय दो ऐसी महत्वपूर्ण घटनाएं हैं, जिनका दूसरी इतनी महत्वपूर्ण घटनाओं के बीच गोपनीय बने रहना समझ में

[समाप्त

नहीं आता! फिर उपन्यास का अन्त—यानी फिल्मी कथानकों की तरह हीरो-हीरोइन का अनिवार्य मिलन भी हल्केपन का सबूत है।

विद्या और रामभरोसे का चरित्र-चित्रण खूब बन पड़ा है। प्रकाशक की इस घोषणा में दम है कि ये वे पात्र हैं जो दीर्घकाल तक स्मृति-पटल पर अङ्कित रहते हैं।

कुल मिलाकर 'राई और पर्वत' एक ऐसा उपन्यास—है जो पाठक को अपने में उलझाए रखने में समर्थ तो है किन्तु लेखक के औपन्यासिक की प्रतिष्ठा को दो कदम आगे नहीं बढ़ाता।

—भीमसेन त्यागी

लघु उद्योगों की आदर्श योजनायें

केन्द्रीय वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय के लघु उद्योग विकास विभाग ने लघु उद्योगों की कुछ आदर्श योजनाएं तैयार की हैं, जो देश के विभिन्न भागों में चलायी जा सकती हैं। इस बारे में लघु उद्योग विकास कमिश्नर के कार्यालय से हिन्दी में परिचय पुस्तिकाएं तैयार की गई हैं। फुटबाल और लकड़ी चढ़ी स्लेट पेन्सिलें बनाने की योजनाओं की पुस्तिकाएं हमारे सामने हैं।

प्रथम पुस्तिका में फुटबाल के लिए चमड़ा चुनने, कमाने और साफ करने तथा रासायनिक द्रव्यों से चमड़े का रंग हलका करने और चिकना तथा फुटबाल बनाने की विधियां बतायी गई हैं। विभिन्न क्रियाओं और औजारों के चित्र भी दिये गये हैं। दूसरी पुस्तिका में इस उद्योग को चलाने में होने वाले खर्च तथा उससे लाभ के आंकड़े दिए गये हैं। उद्योग चलाने के लिए आवश्यक मशीनों और साज सामान की जानकारी भी पुस्तिका में दी गई हैं।

उत्तरप्रदेश सूचना-विभाग के प्रकाशन

उत्तरप्रदेश के सूचना विभाग ने पांच फोटो-पुस्तिकाएं प्रकाशित की हैं—

स्वतन्त्रता का ११ वां वर्ष,
छोटी बचतों से बड़े लाभ,
खनिज पदार्थों की खोज,
नाप-तौल की नई प्रणाली और
जीवनादर्श।

पहली चार पुस्तिकाएं विभिन्न विषयों की संक्षिप्त किन्तु महत्वपूर्ण जानकारी कराती हैं। पांचवी पुस्तक 'जीवनादर्श' में महात्मा गांधी द्वारा प्रतिपादित जीवन के कुछ आदर्शों को शब्द-बद्ध किया गया है।

इन सब की भाषा प्रभावशाली तथा शैली रोचक है। जानकारी पूर्ण हैं।

व्यवस्थापकीय नियम

(१) स्थायी ग्राहक पत्र-व्यवहार करते समय या चंदा भेजते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखें। ग्राहक संख्या महाने के प्रत्येक अंक के रैपर पर लिखी होती है, देखकर नोट कर लें। ग्राहक संख्या न लिखे होने की दशा में पत्र का उत्तर दे सकना कठिन हो जाता है।

(२) हमारे यहां से 'सम्पदा' का प्रत्येक अंक महीने की १० तारीख को भेज दिया जाता है। अंक १० दिन तक नहीं मिले तो कार्यालय को शीघ्र सूचित करें। इसके बाद आने वाले पत्रों का उत्तर देना कठिन होगा।

(३) नये ग्राहक बनने के इच्छुक चंदा भेजते समय इस बात का उल्लेख अवश्य करें कि वे नये ग्राहक बन रहे हैं तथा वर्ष के अमुक महीने से बनना चाहते हैं।

(४) नये ग्राहक बनने वालों को उनकी ग्राहक-संख्या की सूचना कार्यालय से पत्र द्वारा दे दी जाती है।

(५) कृपया वार्षिक चंदा मनीआर्डर द्वारा ही भेजें।

(६) कुछ संस्थाएं चैक द्वारा चंदा भेजती हैं। वे पोस्टल आर्डर से भेजें अथवा बैंक खर्च भी साथ भेजें।

(७) अपना पता बदलने पर नये पते की सूचना शीघ्र दें, अन्यथा अंक दुबारा नहीं भेजा जायगा।

(८) अगर आप अपनी प्रति स्थानीय एजेन्ट से लेना चाहते हैं, तो हमें लिखिए, प्रबन्ध हो जाएगा।

—मैनेजर, प्रसार विभाग

सर्वोदय पृष्ठ

ग्राम-पूर्ति के लिये ग्रामोद्योग

गांव के लोग गांव की ही चीजें इस्तेमाल करें यह बात दो प्रकार से हो सकती है : १—सरकार कानून से, बाहर की चीजें गांव में आने से रोके और गांव की चीजों को प्रोत्साहन दे । २—गांव वाले स्वयं निश्चय करके संकल्प करें कि हम बाहर की चीजें नहीं लेंगे । लेकिन सरकार उस तरह करेगी ऐसा कोई लक्षण आज नहीं दिखाई दे रहा है । हम तो जनशक्ति बढ़ाना चाहते हैं । इसलिए हम ग्राम संकल्प पर ही जोर देंगे । जिस तरह कुछ गांव के लोगों ने संकल्प किया कि चाहे बाहर की दुनियां में ज़मीन की मालकियत हो फिर भी हम अपने गांव में मालकियत मिटा देंगे उसी तरह गांव वाले संकल्प करें कि चाहे बाहर की दुनियां में कुछ भी चले, हमारे गांव में खादी ही चलेगी, ग्रामोद्योग ही चलेगा, नयी तालीम ही चलेगी ।

—विनोबा

ग्रामदान में जमीन का बंटवारा

ग्रामदान होने के बाद प्रथम काम ग्राम-सभा बनाने का है । उसमें २१ वर्ष से अधिक उम्र के सभी लोग आयेंगे । गांव की सब जमीन ग्राम-सभा की मानी जायेगी । फिर काम करने के लिए पांच या सात व्यक्तियों तक की सेवक समिति सर्वानुमति से बनेगी । वह केवल सेवक-समिति ही होगी, मालिक-समिति नहीं । मालिक तो ग्राम-सभा ही होगी । सेवक-समिति कार्य के बारे में जो निर्णय करेगी, वह ग्राम-सभा को समझायेगी । लेकिन आखिरी निर्णय ग्रामसभा ही करेगी । सर्वप्रथम यह काम होगा । ऐसी ग्रामसभा जहां बनेगी, वहां ग्राम-दान के लिए कार्य का आरम्भ हुआ, ऐसा माना जायगा । उसके बाद में ही बटवारा होगा ।

—विनोबा

बच्चे की मुट्ठी का अन्न

पात्र में अन्न कौन डालेगा ? ऋषि का उत्तर है—आपका बच्चा । वह बच्चा, जो सबसे छोटा है और जिसकी मुट्ठी में सबसे कम अन्न आता है । सर्वोदय-पात्र की कल्पना भिक्षा-वृत्ति का नया स्वरूप नहीं है । वह लोक-शिक्षण की एक उदात्त योजना है । जन्म से ही सुसंस्कारों का बीज बालक के मन में पड़े, यही एकमात्र साधन है लोकशुद्धि का । बच्चा बचपन से ही देना सीखता है । अनाज के दाने गौण हैं, विनोबा को उन दानों का मोह नहीं है । ऋषि भिक्षा लेने नहीं, दीक्षा देने आया करते हैं । सर्वोदय-पात्र के द्वारा विनोबा अन्न के दानों की भिक्षा नहीं मांग रहे हैं, वे हमारे समूचे परिवार को सद्धर्म की

स्वराज्य का पार्सल

अपने देश में स्वराज्य आया है, परन्तु उसका पार्सल दिल्ली में रुका है । जैसे कहीं से कोई पार्सल आता है परन्तु कभी-कभी बीच में स्टेशन मास्टर ही उसका उपयोग करता है, उस तरह स्वराज्य का पार्सल, दिल्ली-बम्बई जैसे बड़े शहरों में आकर रुक गया है । इसलिए गांवों को लाभ नहीं होता है । गांव-गांव में लाभ तब होगा, जब गांव-गांव में स्वराज्य आयेगा । सूर्योदय दिल्ली में हुआ, तो उनसे गांवों को क्या लाभ मिलेगा ? जब तक गांव में सूर्योदय नहीं होता है, गांव वालों के घर में उसकी किरणें नहीं पहुँचती हैं, तब तक वे कैसे समझेंगे कि सूर्योदय हुआ है ? इसलिए स्वराज्य का आनन्द तो सबको अन्दर से होना चाहिए, तभी देश को स्वराज्य मिला है, इसका लाभ सबको होगा । इसलिए मैं कहता हूं कि देश को स्वराज्य मिलने के बाद दूसरा काम है ग्राम की स्वराज्य-प्राप्ति का और उसकी बुनियाद है ग्रामदान । —विनोबा

दीक्षा देने आये हैं । बच्चा मुट्ठी भर कर सर्वोदय पात्र में डालेगा और बोलेगा—'समाजाय स्वाहा! समाजाय इदं, इदं न मम' समाजवाद की शिक्षा का इससे सुन्दर और क्या प्रबन्ध हो सकता है ? बच्चा मां से पूछेगा—'मां, इस अन्न का क्या होगा ?' मां उसे सिखायेगी, 'बेटा, यह अन्न समाज में शान्ति-स्थापना के निमित्त मनुष्य के भूखे पेट में बोया जायगा । इन दानों में से शान्ति का विराट् वृक्ष जन्म लेगा, जिसकी शीतल छाया में समूचा संसार एक परिवार बन कर सुख-दुख की प्रतीतियों को झेलकर प्रेम

[सम्पूर्ण

से रहेगा ।'

कृष्ण ने माटी खायी है। मां उसे डांटती है, कृष्ण मुंह खोल देते हैं। उस नन्हें से बालक के मुंह में मां को विश्व का विराट् दर्शन होता है। हमारे नन्हें-से बालक की मुट्ठी में समाने वाले ये दाने उस विराट् विश्व का चित्र बनाते हैं, जो इन नन्हें-मुन्नों की सामर्थ्य पाकर भविष्य के गर्भ में से अवतरित होने को है और जो हमारी नयी पीढ़ी के दानी हाथों का सहारा मिलने की बाट जोह रहा है।

सबसे छोटा बच्चा परिवार की ओर से पात्र में अन्न डालता है। यह प्रतीकात्मक है। आज तक धर्मशास्त्र, राजशास्त्र और नीति एवं न्यायशास्त्र ने बड़े बच्चे को (वह भी बेटा होना चाहिए) पिता का उत्तराधिकारी माना है। विनोबा जमाने की चाल को उलट रहा है। उत्तराधिकार को लोकशाही ने मिटाया और प्रतिनिधित्व का विचार रखा। विनोबा ने कहा कि प्रतिनिधि बड़ा नहीं, छोटा होगा। अन्त्योदय बापू के जीवन का सबसे प्रिय मंत्र है। महात्मा रस्किन ने कहा, 'अन्तिम से शुरू करो।' गांधी और विनोबा ने दुहराया—'अन्तिम से शुरू करो' और उसमें जोड़ दिया कि 'जो सबसे छोटा है, वही हमारा प्रतिनिधि है, उसके अनुशासन में हम रहेंगे।' यह लोकशाही के विचार का परिशुद्ध संस्करण है। परिवार में देने का अधिकार बड़े को नहीं, सबसे छोटे को है। वह हमारी ओर से देगा, उसकी छोटी-सी मुट्ठी में जितना आयेगा, वह उतना ही देगा और उतना ही पर्याप्त है; क्योंकि वह दान निष्ठा, भक्ति और प्रेमपूर्वक दिया गया है।

— नेमिशरण मित्तल

वे हम से सीखना चाहते हैं

मैंने समाजवादियों को चिन्तित पाया और वह चिंता इसलिए थी कि आखिर इस अमाप समृद्धि के बाद भी हमें कुछ करना है या नहीं। हमने समाजवाद का उद्देश्य केवल भौतिक समृद्धि हो मान कर कहीं गलती तो नहीं की? इस सारी समृद्धि के बाद नये मानव के निर्माण की बात कहीं पीछे तो नहीं रह गयी है? हम भौतिक समृद्धि के लोभ में गुमराह न हो जायं अगर हमारे पास सर्वोदय के आदर्श की बातें न होतीं, तो विदेश के लोगों को सुनाने के लिए हमारे पास और कुछ नहीं था। वहां के लोग भारत से नये समाज के निर्माण की बहुत बातें सीखना चाहते हैं, पर यदि मैं बापू और विनोबा के विचारों को एक तरफ कर दूं, तो शायद भारत के पास ऐसा कुछ नहीं है, जो हम यहां व्यावहारिक रूप में कर रहे हों और जिसे विदेश के लोग देख कर कुछ सीख सकें; क्योंकि हमने अभी बापू और विनोबा के विचारों का कहीं भी व्यावहारिक प्रयोग करके नहीं दिखाया है।

— जयप्रकाश नारायन

जहां चाह वहां राह

अभी उस दिन भाई कन्हैयालालजी से अचानक ही भेंट हो गई। उन्हीं के शब्दों में उनकी आप बीती इस प्रकार है: "तीन माह हुए होंगे—एक रात घर में चोर घुस गये। गहना, नकद, कपड़ा-लत्ता जो कुछ था, उठा ले गये—इस आकस्मिक आपत्ति ने किंकर्तव्यविमूढ़ बना दिया था। अम्बर क्या मिला, अन्धेरे में जीवन-ज्योत ही मिल गई। मेरी पत्नी, विधवा बहिन और मैं तीनों के छः हाथों ने काम सम्भाला। मैं पूनी बनाता, वे कताई करतीं? दो माह का हिसाब जोड़ा तो तीन सौ का बैठा—चर्खा अब भी चल रहा है, मैंने फिर दुकान खड़ी कर ली है।"

इस भाई की कहानी क्या खाली बैठे रहने वालों की आंखें नहीं खोलती?

— अ-नाम

चीन में चरखा

चीन-जापान की लड़ाई चल रही है और घनी आबादी है। कारखाने किसी भी समय बम के शिकार हो सकते हैं, पर घर-घर चलने वाले चरखे पर फौज आक्रमण नहीं कर सकती। फौज भी आगई तो किसान सटक जायेंगे और चरखा बगल में लेते जायेंगे। इसलिए चीन में हर किस्म के ग्रामोद्योगों को बढ़ावा देने का प्रयत्न किया जा रहा है।

(दिसम्बर' ३९ में एक भाषण से) —जवाहरलाल नेहरू

गांधीवाद: मार्क्सवाद का संशोधित रूप

लेकिन गांधीवाद मार्क्सवाद का संशोधित रूप है। मार्क्स ने 'समुदाय' को व्याख्या नहीं की थी, इसलिए जब

व्यक्तिगत मालिकियत समाप्त होती है, तो मिल्कियत के अधिकार राज्य सरकार के हाथ में चले जाते हैं, जो कि परिवार के प्राथमिक स्तर के बाद समुदाय का दूसरा संगठित रूप है। एक केन्द्रीय सरकार द्वारा बहुत बड़ी मिल्कियत और विशाल जनसख्या की देखभाल के लिए असीमित अधिकारों की आवश्यकता है। इसलिए जहां साम्यवाद आर्थिक समानता की ओर ले जाता है, वहां उसकी दिशा अधिनायकशाही की ओर मुड़ जाती है।

दूसरी ओर गांधीवाद समुदाय की परिभाषा ग्राम समाज या ग्राम से करता है। गांधीवाद सम्पत्ति का ग्रामस्तर तक ही समाजीकरण करने को कहता है। ग्राम का क्षेत्र इतना छोटा होता है कि उस में आसानी से नागरिक अपने सामाजिक जीवन के संचालन में भाग ले सकता है। वह वास्तव में जनता का, जनता के द्वारा, जनता के लिए शासन है। इस प्रकार ग्रामराज, प्रजातांत्रिक शासन को किसी प्रकार का खतरा पहुँचाये बिना, व्यक्तिगत मिल्कियत के विसर्जन के द्वारा आर्थिक समानता को सुरक्षित कर देता है।

ग्रामराज प्रजातांत्रिक समाज-व्यवस्था का एक स्पष्ट चित्र है। वह प्रजातंत्र के मार्ग की रुकावटों को दूर कर देता है। एक तो ग्राम का क्षेत्र छोटा होता है, वहां के सब बालिग वहां की शासन-व्यवस्था में प्रत्यक्ष भाग अदा कर सकते हैं और उनके लिए किसी राजनैतिक दल की मध्यस्थता नहीं रहती।

दूसरे, इससे लोगों को अपनी आंखों से यह देखने का मौका मिलेगा कि किस प्रकार उनके हित एक दूसरे के हित, समृद्धि और ग्राम-शासन के साथ जुड़े हुए हैं। तब वे अपनी समस्याओं का समाधान स्वयं अपने सामाजिक विकासके द्वारा कर सकेंगे और उन्हें इसके लिए परमात्मा या भाग्य पर अपने को निराश्रित नहीं छोड़ देना होगा। तीसरे, गांव की सारी सम्पत्ति गांव की बना देने से आर्थिक समानता की स्थापना हो जायेगी और चूंकि हर एक व्यक्ति का किसी न किसी गांव से सम्बन्ध है ही, इसलिए सभी को प्रजातंत्र का लाभ प्राप्त हो सकेगा। आज जो भावना व्यक्तिगत विचार, व्यवहार, लाभ और पूंजीवाद और अधिनायकशाही के कारण कुंठित हो रही है, उस सबको प्रजातंत्र के मार्ग की ओर अग्रसर किया जा सकेगा।

यदि ग्रामराज का क्षेत्र ग्राम-समाज तक ही सीमित रह जाता है, तो इसमें से भी वे ही बुराइयां पैदा हो जायेंगी, जो आज परिवार की व्यक्तिगत सम्पत्ति माने जाने पर हैं। लेकिन यहां ऐसा नहीं होगा। ग्रामों का यह समूह अपने क्षेत्र का विस्तार करते-करते सारी दुनिया के समाज को व्याप्त कर लेगा। जहाँ ग्राम की प्राथमिक इकाइयां अपने निवासियों की रोजमर्रा की जरूरतों को पूरा करने का प्रयत्न करेंगी, वहाँ इससे बड़े क्षेत्र, अपने क्षेत्र के अनुसार बढ़ी हुई जनसंख्या की आम और खास जरूरतें जैसे— यातायात, आवागमन के साधन, जनसंख्या व उत्पत्ति आदि विनियम, पारस्परिक सहायता, बड़े उद्योग, योजनाबद्ध विकास, उच्च शिक्षा, आवश्यक चिकित्सा सुविधा व अनुसंधान आदि भी पूरी करेंगे।

प्रो० गोरा

——

हमारे कुछ प्रमुख एजेण्ट

१. बालकृष्ण इन्दोरिया
किले के पीछे, चुरु (राज०)

२. क्राउन बुक डिपो, रांची (बिहार)

३. सैन्ट्रल न्यूज़ ऐजेंसी
कनाट सर्कस, नई दिल्ली

४. रामप्रसाद एण्ड सन्स,
कचहरी रोड, अजमेर

५. 'जागृति' भागलपुर-२ (बिहार)

६. दुलीचन्द जैन
२१, खजूरी बाजार, इन्दौर शहर

७. आत्माराम एण्ड सन्स,
कश्मीरी गेट, दिल्ली-६.

८. श्री द्वारकादास राठी,
जोधपुर (राज०)

नया निर्माण

नई मंडियों में किसानों को सुविधाएं

सरकार ने खेती की चीजों की बिक्री के लिए कानून बनाया है, जिसके अन्तर्गत कई राज्यों में नियंत्रित मंडियां खोली गयी हैं। इस समय आंध्र प्रदेश, बम्बई, मैसूर, मध्यप्रदेश, उड़ीसा और पंजाब में ४३२ मंडियां काम कर रही हैं।

नियंत्रित मंडियों में पुरानी मंडियों की बुराइयां—कम तोलना, ऊंची आढ़त, तरह-तरह की कटौतियां और व्यापारी और किसानों की तकरार देखने को नहीं मिलती। इतना ही नहीं, कुछ मंडियों में तो किसानों के ठहरने के लिए विश्रामघर और खाने-पीने की चीजों की दुकानें भी बनायी गयीं हैं। इन सुविधाओं से आकृष्ट होकर अधिकाधिक किसान इन्हीं मंडियों में अपना माल बेंचने आते हैं। पहले केवल १० प्रतिशत किसान ही अपना माल खुद बेचने जाते थे, अब मंडियों में आने वालों में ६० प्रतिशत ऐसे होते हैं जो अपना माल लाकर वहां बेचते हैं।

नियंत्रित मंडियों से किसान, खरीदार और विक्रेता—तीनों को लाभ है। इनका प्रबन्ध ऐसी समितियां करती हैं, जिनमें किसानों, व्यापारियों तथा स्थानीय संस्थाओं के प्रतिनिधि होते हैं। बहुमत किसानों का ही होता है, वे ही सभापति भी होते हैं। इन समितियों का काम सौदा कराना, खुली बोली से माल बिकवाना, व्यापारियों को लाइसेंस देना, आढ़त की दर नियत करना और उससे बेशी कटौती रोकना सच्चे बाटों से माल की तुलाई कराना और छोटे-मोटे झगड़े निपटाना है। इसके अलावा ये समितितां ताजे बाजार-भाव आदि की जानकारी भी देती हैं।

नियंत्रित मंडियों से यह लाभ हुआ है कि किसान से जो मंडी-खर्च काटा जाता था, उसमें २८ प्रतिशत से ६६ प्रतिशत तक कमी हुई है। फलस्वरूप किसान को यहां माल बेचने से प्रति सैंकड़ा २ रु० से ४ रु० तक और मुनाफा होने लगा है। इसके अलावा खुले नीलाम में भी उसे अपने माल का दाम अधिक मिलता है।

नियंत्रित मंडियों में आढ़त, तुलाई, हमाली या पल्लेदारी आदि की दरें बंधी हुई हैं और उससे एक पैसा इधर-उधर नहीं होता। आढ़तिया, व्यापारी, दलाल और तौला सब लाइसेंसदार होते हैं। बाट और नपुए प्रमाणित होते हैं। बाजार भाव की सही और ताजी जानकारी मिल सकती है। खुली निलामी या खाली सौदे से माल की बिक्री होती है। माल बेचने तथा खरीदने वालों के बीच झगड़े निपटाने के लिए उपसमितियां नियुक्त हैं। माल का नकद दाम दिलाया जाता है और मंडी के प्रबन्ध में किसान का भी हाथ होता है। किसानों को बैलगाड़ी खड़ी करने के लिए स्थान, ठहरने की जगह, खाने पीने की दुकानें तथा आदमियों और जानवरों के लिए पीने के पानी की व्यवस्था है।

जहां रेगिस्तान था !

राजस्थान के गंगानगर जिले में सूरतगढ़ नाम का एक स्थान है। दो वर्ष पहिले यह अनुन्नत और सूखा क्षेत्र था। लेकिन आज इस रेगिस्तान के बहुत बड़े भाग में हरियाली छा गयी है। इस फार्म में पिछले दो वर्षों में ३७,००० मन पैदावार हुई है।

१९५५ में जब रूसी नेता मार्शल बुल्गानिन और श्री ख्रुश्चेव भारत पधारे थे, उन्होंने ३० हजार एकड़ का एक कृषि-फार्म बनाने के लिए यांत्रिक और प्राविधिक सहायता देने का प्रस्ताव किया था। सहायता के उस प्रस्ताव के अनुसार ही सूरतगढ़ फार्म बना। यह ५०० कर्मचारी अनवरत प्रयत्न कर रहे हैं। देश के आर्थिक विकास की यह एक महत्वपूर्ण कड़ी है।

इस फार्म को अपने यहां खोलने के लिए ९ राज्य सरकारों ने प्रार्थना की थी। पर कृषि, सिंचाई और यांत्रिक विशेषज्ञों ने इसके लिए सूरतगढ़ को ही चुना।

यहां की मिट्टी कछारी हैं, इसकी तहें काफी गहराई तक हैं और यह अच्छी किस्म की भी हैं। भूमि समतल है। वर्षा कम होती है, इसलिए खेती की मशीनें साल भर

काम में लाई जा सकती है। सिंचाई के अस्थायी साधन हैं, पर भाखड़ा बांध के बन जाने पर १९५९ से स्थायी रूप से सिंचाई होने लगेगी। यह स्थान बाग लगाने और पशु-पालन के लिए भी उपयुक्त है। रेल की लाइन यहां से नजदीक है और दूसरी योजना के अन्त तक यहां पक्की सड़कें भी बन जाएंगी। यह गंगानगर की बड़ी मंडी से सिर्फ ९० मील दूर है।

१९५६ के आरम्भ के दो तीन महीनों के भीतर ही सोवियत रूस से यांत्रिक सामान लेकर पांच जहाज बम्बई पहुँच गये थे। कृषि के यंत्रों के अतिरिक्त यातायात के लिए पर्याप्त ट्रकें, मोटरकार, जीप और बाउजर भी थे। कारखाने बनाने के लिए खरादने, पीसने और कूटने की मशीनें और दूसरे यांत्रिक उपकरण भी थे। इनमें १५ किलोवाट बिजली पैदा करने वाला एक जनरेटर और १०० लाइन का स्वचालित टेलीफून एक्सचेंज भी था।

इनके साथ पांच रूसी कृषि-विशेषज्ञ भी आये थे। उन्होंने भारतीय कारीगरों को यांत्रिक खेती की शिक्षा दी। भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्था ने यहां की मिट्टी को जांच कर बताया कि १८,३०० एकड़ भूमि में सिंचाई होने पर खेती अच्छी तरह की जा सकती है। ४,८०० एकड़ भूमि क्षारयुक्त है। जिसमें जिप्सम देने पर खेती की जा सकती है और ७,५०० एकड़ भूमि खारी है, जो कम उपजाऊ है।

१५ अगस्त १९५६ को स्वाधीनता दिवस के दिन २६ ट्रेक्टरों के कोलाहल के बीच इस फार्म का उद्घाटन हुआ। सिंचाई के साधनों और मजदूरों की कमी के पिछले दो सालों में १० हजार एकड़ भूमि खेती योग्य बनाई गई और खेती में ३७,००० मन पैदावार हुई, जो लगभग ९ लाख रुपए की होगी। १०० मील के करीब सड़क और उतनी ही पानी की नालियां बन चुकी हैं। १० हजार पेड़ लगाये गये थे, जिनमें से आधे पानी के अभाव में सूख गये। फलों की पौध तैयार करने के लिए दो नर्सरी भी लगायी गई हैं।

बड़े पैमाने पर यांत्रिक खेती का देश के लिए यह नया प्रयोग है। इसमें हम काफी सफल भी रहे। और समस्याएं भी धीरे-धीरे हल की जा रही हैं। ४० प्रतिशत से अधिक मशीनें काम में लाई जा रही हैं। सिंचाई की योजनाओं में सुधार किया गया है। मजदूरों का यहां अभाव है। अतः उनको आकर्षित करने के लिये अच्छी मजदूरी और रहने की सुविधाएं दी जा रहीं हैं। कर्मचारियों के रहने के लिए और कार्यालयों के लिये कई मकान बन चुके हैं और आशा है कि बाकी भी ६ महीने के अन्दर तैयार हो जाएँगे।

भाखड़ा बांध से पानी आ जाने पर यह फार्म अच्छी तरह फलने-फूलने लगेगा। दूसरी योजना के अन्त तक यह अनुमान लगाया गया है कि यहां शुद्ध गेहूँ का बीज लगभग ७० हजार मन, उच्च कोटि के बिनौले लगभग १२ हजार मन और दूसरी किस्म के बीज पर्याप्त मात्रा में पैदा होने लगेंगे। इसके साथ ही, तब तक पशुओं की नस्ल सुधारने के लिए १५० हरियाना और मुर्रा नस्ल के सांड, बीकानेरी नस्ल के २०० मेढ़े और सुधरी नस्ल की १० हजार मुर्गियां उपलब्ध होंगी। नर्सरियों में भी ५० हजार पौधे हर साल तैयार होने लगेंगे।

राष्ट्र के विकास के लिए

अमेरिका में एक महिला श्रीमती विनरलो शेयर बेचने का काम करती है। उनका नारा यह है कि अमेरिका की औद्योगिक समृद्धि में साझीदार बनो। जब आप किसी कम्पनी में एक शेयर खरीद लेते हैं तब आप वास्तव में किसी न किसी अमेरिकी उद्योग के साझीदार बन जाते हैं, और यह एक अद्भुत बात है।

आज भारत में भी यह नारा लगाने की जरूरत है। जब हम में से कोई एक नागरिक किसी उद्योग का शेयर खरीदता है तो वह भी देश की औद्योगिक उन्नति का साझीदार बनता है। इसके अतिरिक्त जब हममें से कोई नागरिक डाकखाने में या किसी बैंक में रुपया जमा कराता है या जीवन बीमा निगम में पालिसी लेता है, तो उसका भी रुपया देश के आर्थिक विकास में लगता है। इस सत्य को 'सम्पदा' का प्रत्येक पाठक समझ लेगा, ऐसी हमें आशा है।

——

कोलम्बो योजना

(पृष्ठ ६०६ का शेष)

अब शिक्षा पहले से अधिक समय तक दी जाती है, इसलिए साल में कम शिक्षार्थी शिक्षा पा सकते हैं। शिक्षण या काम सिखाने के लिए खर्च बराबर बढ़ता जा रहा है। १६५७ का यह खर्च १५ लाख ६० हजार पौंड, १६५६ का १३ लाख ६० हजार पौंड और १६५५ का ८ लाख ५० हजार पौंड था।

कोलम्बो योजना के सदस्य देशों में 'देने वाले' और 'लेने वाले' देशों का भेद धीरे-धीरे मिटता जा रहा है। यही सहयोग की सच्ची निशानी है। अब प्रायः सभी देश कुछ लेते हैं तो कुछ न कुछ देते भी हैं। १६५७-५८ में एक बात और देखने में आई कि इस क्षेत्र के देशों से कुछ दूसरे देशों को भी सहायता दी गई।

इस क्षेत्र के देशों में ही काम सिखाने की या उच्च शिक्षा की व्यवस्था करने पर बहुत जोर दिया गया है। इसमें कहा गया है कि ऐसी व्यवस्था से न केवल उन देशों को जहां यह विद्यालय खोले जाएंगे, बल्कि आस-पास के देशों को भी बड़ा लाभ होगा। कुछ देशों में ऊंचे शिल्प-विद्यालय स्थापित होने से और उनमें विदेशियों को भी शिक्षा देने का प्रबन्ध होने से इस क्षेत्र की आर्थिक उन्नति में बड़ी सहायता मिलेगी।

अन्य लाभ

आर्थिक सहायता के अतिरिक्त भी ऐसे अनेक लाभ इस योजना द्वारा हुए हैं, जिन्हें आंकड़ों के माप-दंड से नहीं नापा जा सकता। इस क्षेत्र के अधिकांश देशों में कोई आयोजन तन्त्र नहीं था। सन् १६५० में एक षड्-वर्षीय आर्थिक विकास कार्यक्रम को बनाने की आवश्यकता ने इन देशों को आर्थिक आयोजन की ओर प्रवृत्त किया। आर्थिक आयोजन संतुलित आर्थिक अभ्युदय की प्रथम आवश्यकता है। एक लक्ष्य निर्धारित कर लेने से उसे प्राप्त करने में सुविधा हो जाती है क्योंकि लक्ष्य नियोजित हो जाते हैं और कार्य

तीव्र गति से होता है। पुनः एक सम्पूर्ण योजना में विकास की सभी दिशाओं पर ध्यान केन्द्रित करना पड़ता है। अभी तक भी कुछ देश आर्थिक विकास की सम्पूर्ण योजना तैयार नहीं कर सके हैं व केवल अलग-अलग परियोजनाओं को ही कार्यान्वित कर रहे हैं। पर आयोजन की टैक्नीक जानने व उसमें सुधार करने पर ये देश अनवरत ध्यान दे रहे हैं। यह कोलम्बो योजना की ही देन है कि सभी देशों ने आर्थिक आयोजन का मार्ग अपनाया है और अब अधिकांश देशों में स्वीकृत विकास योजनायें हैं। जनता भी आयोजन, विकास और उसके लाभों में बहुत रुचि लेने लगी है। वह समझ गई है कि किस प्रकार अपने ही प्रयत्नों से प्रगति की जा सकती है।

योजना का मूल आधार : सहयोग

इस योजना का मुख्य मूलाधार पारस्परिक सहयोग है। यद्यपि इस क्षेत्र के सभी देश न्यूनाधिक रूप से अविकसित हैं, विकास की विभिन्न अवस्थाओं में हैं तथा उनके विकास तन्त्रों में भी विभिन्नताएं हैं, पर फिर भी पारस्परिक सहयोग के लिए पर्याप्त स्थान है। अपने-अपने अनुभवों के आदान-प्रदान से सभी देश लाभ उठा सकते हैं।

योजना समिति के सम्मेलनों का एक महत्वपूर्ण लाभ यही है कि वे सदस्य राष्ट्रों को अपने अनुभवों, समस्याओं व कठिनाइयों पर संयुक्त रूप से विचार-विनिमय करने का साधन प्रस्तुत करते हैं। सदस्य देश जान सकते हैं कि उनके सामने आने वाली समस्याओं को अन्य देश किस प्रकार सुलझा रहे हैं तथा वे किस प्रकार अन्य देशों को अपना सहयोग दे सकते हैं। जैसे-जैसे दक्षिणी व दक्षिणी पूर्वी एशिया में विकास की गति बढ़ती जाती है, परामर्श को वांछनीयता घटने के स्थान पर बढ़ती ही जाती है, सामान्य समस्याओं पर अनुभव के विनिमय के लिए यह समिति स्पष्ट रूप से अधिकाधिक सुअवसर देती है।" (कोलम्बो योजना की पंचम वार्षिक रिपोर्ट, १९५६ पृष्ठ २१) वस्तुतः इसे दक्षिणी पूर्वी एशिया की आर्थिक संसद कहा जा सकता है।

यह योजना वर्तमान आर्थिक असंतुलन को दूर कर विकास का एक सुदृढ़ आधार तैयार कर रही है। यह योजना एक विशाल कार्य की पूर्ति के लिए सीमित साधनों के समुचित तथा पारस्परिक उपयोग की एक व्यावहारिक योजना है। स्वावलम्बन तथा सहयोग इसके मूल-मंत्र हैं। सहयोग, विश्वास और मित्रता के आदर्श इसको बांधे हुए हैं। अब तक की हुई प्रगति बतलाती है कि इन आदर्शों का पूरा पालन हो रहा है। ऐसी भावना निश्चय ही आने वाले दशकों में होने वाली आर्थिक उन्नति के प्रयासों के लिए एक वरदान सिद्ध होगी।

पुनः इस योजना की व्यावहारिक उपयोगिता नेहरू-किशी के संयुक्त वक्तव्य (१३-१०-१९५७) से स्वतः स्पष्ट है—

"एशियाई देशों का आर्थिक विकास जिसकी पिछली शताब्दियों में उपेक्षा की गई है, एशिया की ही नहीं बल्कि समस्त विश्व की शांति और स्थिरता के लिए आवश्यक है।"

—

(पृष्ठ ६१४ का शेष)

के द्वारा संचालित होते हैं। राज्य ने केवल औद्योगिक फाइनेंस कार्पोरेशन में भाग लिया है, जो संस्था उद्योगपतियों को वित्तीय सहायता देती है। राजस्थान के विकास में उद्योगपतियों के कई नये अभाव सामने आते हैं। योग्य सीखे हुए व्यक्तियों की कमी, विद्युत का अभाव, कल-पुर्जों की अप्राप्ति, और मजदूरों का होशियार न होना है। माल के बिकने की भी कठिनाइयां हैं। दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत निजी क्षेत्र के द्वारा हो रहा है। जे० के० इनवेस्टमेण्ट ट्रस्ट ने कोटा में नेलन पेरनल फैक्टरी खड़ी करने का निश्चय किया है, जिसकी मासिक उत्पादन क्षमता ६० टन होगी। यह पदार्थ रबर टायर और जालियां तैयार करने के उद्योगों में लगता है। इस उद्योग के चलने पर २ करोड़ रुपए की विदेशी मुद्रा की बचत होगी। बिड़ला ब्रदर्स भरतपुर और माधोपुर में एक-एक वैगन फैक्टरी खड़े कर रहे हैं। कानपुर के टैक्सटाइल उद्योगपति जयपुरिया उदयपुर में टैक्सटाइल मिल खड़ी कर रहे हैं, जो ७५ लाख की पूंजी से खड़ी होगी और जिसमें राज्य ने ३० लाख रुपए का विनियोजन किया है। पर राजस्थान में सबसे महत्वपूर्ण प्रतिष्ठान जयपुर उद्योग लिमिटेड है, जिसने सवाई माधोपुर में सीमेंट फैक्टरी खड़ी की, जिसका उत्पादन ४०३९९ तक पहुँच गया है। दूसरी पंचवर्षीय योजना में उत्पादन का लक्ष्य ८०८००० टन रखा गया है, किन्तु यह फैक्टरी ५८०००० टन उत्पादन की पूर्ति करने में समर्थ होगी।

—

हिन्दी और मराठी भाषा में प्रकाशित होता है।

उद्यम

सर्वोपयोगी हिन्दी उद्यम प्रतिमाह १५ तारीख को पढ़िये

अब प्रतिमास 'उद्यम' में नावीन्यपूर्ण सुधार देखेंगे

— नई योजना के अन्तर्गत 'उद्यम' के कुछ विषय —

विद्यार्थियों का मार्गदर्शन—परीक्षा में विशेष सफलता प्राप्त करने तथा स्वावलम्बी और आदर्श नागरिक बनने के मार्ग।

नौकरी की खोज —यह नवीन स्तम्भ सब के लिए लाभदायक होगा।

खेती-बागवानी, कारखानेदार तथा व्यापारी वर्ग —खेती-बागवानी, कारखाना अथवा व्यापारी-धन्धा इन में से अधिकाधिक आय प्राप्त हो, इसकी विशेष जानकारी।

महिलाओं के लिए—विशेष उद्योग, घरेलू मितव्ययिता, घर की साजसज्जा, सिलाई-कढ़ाई काम, नए व्यंजन।

बाल-जगत्—छोटे बच्चों की जिज्ञासा तृप्ति हो तथा उन्हें वैज्ञानिक तौर पर विचार करने की दृष्टि प्राप्त हो इसलिए यह जानकारी सरल भाषा में और बड़े टाइप में दी जाती है।

'उद्यम' का वार्षिक मूल्य रु० ७/- भेजकर परिवार के प्रत्येक व्यक्ति के लिए उपयोगी यह मासिक-पत्रिका अवश्य संग्रहीत करें।

उद्यम मासिक १, धर्मपेठ, नागपुर-१

तरक्की करने के लिये

उद्योग-व्यापार पत्रिका

अवश्य पढ़िये, क्योंकि

देश में उद्योग और व्यापार को आगे बढ़ाने के लिये क्या हो रहा है और आप इससे किस तरह फायदा उठा सकते हैं ? देश में क्या क्या चीजें और कितने परिमाण में कहां-कहां बन रही हैं और आप क्या बना कर अच्छी कमाई कर सकते हैं ? तरह तरह के व्यापार की देश-विदेश में क्या दशा है ? पंच-वर्षीय योजना से हमारी क्या उन्नति हो रही है ? ये सभी प्रश्न ऐसे हैं जिनके उत्तर आपको अवश्य जानना चाहिये। और इन सबकी जानकारी पाने का श्रेष्ठ साधन है—

उद्योग-व्यापार पत्रिका

इसलिये आप ६ रु० साल भर के लिये आज ही भेजकर ग्राहक बन जाइये।

नमूना पत्र लिखकर मंगाइये।

एजेन्टों को भरपूर कमीशन। पत्रिका विज्ञापन देने का अच्छा साधन है।

सम्पादक : उद्योग व्यापार पत्रिका

वाणिज्य तथा उद्योग मन्त्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

दिवाली
प्रकाश का पर्व !
दिवाली हमारे अमीर और गरीब, वृद्ध और युवा आश्रयदाताओं को जो कि हजारों की संख्या में साल भर यात्रा करते हैं, आनंद और सुख प्रदान करे।
भारतीय रेलें सैर – सपाटे अथवा व्यापार के लिये जाने वाले यात्रियों को सस्ती, शीघ्र और आरामदायक सेवा प्रदान करने का भरसक प्रयत्न करती हैं।
इस शुभ अवसर पर क्या हम अपने आश्रयदाताओं को अधिक अच्छी सेवा प्रदान करने, गाड़ी के डिब्बों में और प्लेटफार्मों पर अधिक स्वच्छता रखने में सहायता प्रदान करने के लिये निवेदन करें ?
कृपया भारी सामान, गाड़ी के डिब्बों में अपने साथ न रख कर, ब्रेक में रखिये।
मध्य और पश्चिम रेलवे द्वारा प्रकाशित।
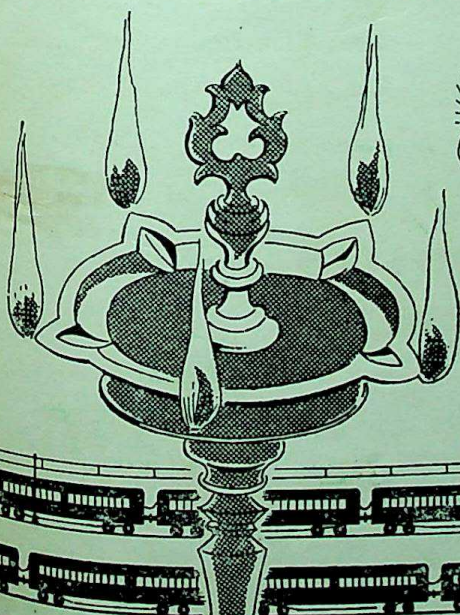
रजिस्टर्ड नं० डी० ३६९
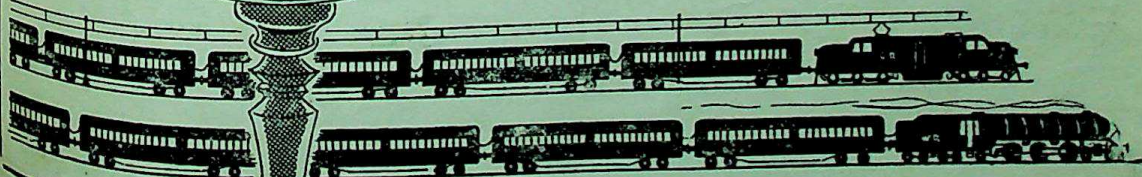
सरसिल्क का रेशम
आज का फैशन

भारत को ...
उत्पादन के लिए प्राचीन ...
ही वैभवता प्राप्त है और ...
परम्परा को आज के ...
एसीटेट सूत से नवीन ...
हुआ है। सुन्दरता, कोमलता, ...
की शानदार चमक-दमक, इन ...
दृष्टियों से सरसिल्क एक ...
रेशम है जिसका कोई जोड़ नहीं ...
व्यवहार में उपयुक्त, टिकाऊ ...
आधुनिक फैशन का होते हुए भी मूल्य ...
अधिक नहीं।

सुरुचि सम्पन्न महिलाओं के लिए
टफेटा, साटिन, क्रेप, जार्जट इत्यादि।
फैशनेबुल पुरुषों के लिए—
शार्कस्किन, फैन्सी शूटिंग, शर्टिंग,
शर्टिंग इत्यादि।

Sirsilk
QUALITY FABRICS

सरसिल्क लिमिटेड सरपुर-कागज़ नगर, आन्ध्र प्रदेश
कलकत्ता कार्यालय : इण्डिया एक्सचेंज प्लेस

सम्पादक—कृष्णचन्द्र विद्यालंकार द्वारा अशोक प्रकाशन मन्दिर के लिए अर्जुन प्रेस, दिल्ली से मुद्रित व प्रकाशित।

सम्पदा

दिसम्बर, १९५८

भारत को अपने रेशम के उत्पादन के लिए प्राचीन काल से ही वैभवता प्राप्त है और उसी परम्परा को आज के मानव निर्मित एसीटेट सूत से नवीन कलेवर प्राप्त हुआ है। सुन्दरता, कोमलता, रंगों की शानदार चमक-दमक, इन सारी दृष्टियों से सरसिल्क एक ऐसा रेशम है जिसका कोई जोड़ नहीं। व्यवहार में उपयुक्त, टिकाऊ व आधुनिक फैशन का होते हुए भी मूल्य अधिक नहीं।

Sirsilk
QUALITY FABRICS

सुरुचि सम्पन्न महिलाओं के लिए
टफेटा, साटिन, क्रेप, जार्जेट इत्यादि।

फैशनेबुल पुरुषों के लिए—
शार्कस्किन, फैन्सी शूटिंग, शार्टुंग, शर्टिंग इत्यादि।

सरसिल्क लिमिटेड सरपुर-कागज़ नगर, आन्ध्र प्रदेश

कलकत्ता कार्यालय : इण्डिया एक्सचेंज प्लेस

कृषि एवं तत्सम्बन्धी अन्य साधनों का विकास

उत्तर प्रदेश की वर्तमान सरकार ने जनता की आर्थिक स्थिति में सुधार करने के हर सम्भव उपाय किये हैं, और कर रही है । कृषि की उन्नति के लिए किये जा रहे प्रयासों का विशेष महत्व है । प्रथम योजनावधि में ६ लाख ८३ हजार टन अतिरिक्त खाद्यान्न का उत्पादन करने का लक्ष्य निर्धारित गिया गया था । सन् १९५४-५५ में वार्षिक उत्पादन १ करोड़ २४ लाख ५० हजार टन हो गया । यह लक्ष्य से ६ लाख ८० हजार टन अधिक था । द्वितीय पंचवर्षीय योजना में २४ लाख टन अन्न प्रतिवर्ष अधिक पैदा किया जायगा । विभिन्न साधनों द्वारा यह निर्दिष्ट वृद्धि किस अंश तक पूरी की जायगी इसका अनुमान निम्नलिखित तालिकाओं से हो जाता है ।

साधन	अन्नोत्पादन में वृद्धि
बड़ी सिंचाई योजनाएं	२ लाख ४ हजार टन
छोटी सिंचाई योजनाएं	३ लाख ८२ हजार टन
उन्नत बीज	५ लाख २६ हजार टन
उन्नत खाद एवं उर्वरक	७ लाख ५६ हजार टन
समुन्नत कृषि विधि	४ लाख ५५ हजार टन
भूमि उपार्जन एवं विकास	७७ हजार टन

सुनिश्चित लक्ष्य तक पहुँचने में सिंचन सुविधाओं के प्रसार तथा पशुधन विकास से भी सहायता मिलेगी । नीचे दिये जा रहे आंकड़ों से तत्सम्बन्धी कार्यक्रमों एवं उन पर खर्च की जाने वाली धनराशि का ज्ञान हो जाता है ।

सिंचाई कार्यक्रम

	लागत (लाख रुपयों में)
१—प्रथम योजना के १८ कार्यक्रम जो द्वितीय योजना में भी चलेंगे	३२०.००
(क) १५ कार्यक्रम प्रथम योजना के	३०४.३८
(ख) योजना के बाहर के ३ कार्यक्रम	१५.६२
२—१२ नये कार्यक्रम	२२,६०.००
योग	२,५८०.००

पशुपालन सम्बन्धी कार्यक्रम

१—पशु अनुसंधान केन्द्र का विस्तार	८.८२
२—केन्द्र ग्राम योजना	१२६.५८
३—५० नये पशुचिकित्सालयों की स्थापना	२७.५०
४—राजकीय तथा निजी गो-सदन की स्थापना	१६.७४
५—हर जिले में एक गो-सदन की स्थापना	१५.००
६—भेड़ तथा ऊन विकास	२१.०८
७—मुर्गी तथा सुअर विकास	२६.६४
८—पशु अस्पतालों का प्रान्तीयकरण	१६.०८
९—पशु सुपरवाइजर प्रशिक्षण	६.८४
१०—राजकीय पशु कालेज मथुरा का विकास और विस्तार	२०.२०
११—दुग्धशाला तथा दूध सप्लाई	१२१.६६
१२—अन्य योजनाएं	१४६.३८
योग	५२०.५५

सूचना विभाग उत्तर प्रदेश

डालमिया उत्पादन
आधुनिक गृहों तथा कार्यालयों के लिए
उत्तम कोटि की अग्निरोधक ईंटें,
चीनी मिट्टी के सामान, विसंवाहक
तथा क्षार-अवरोधक खर्परियां आदि
वज्रचूर्ण-अयस्संघा नाल (R. C. C. Spun pipes) सिंचाई, पुलियाओं (Culvert), जलप्रदाय और जलोत्सारण (Supply and drainage) के लिये सभी श्रेणियों और मापों में प्राप्य 1
ऊष्मसह (Refractories) अग्नीष्टकायें (Fire Bricks) संमृद (Mortars) तथा समस्त ताप-सीमाओं और आकृतियों में प्राप्य विसंवाहक ईष्टकायें (Insulating Blocks) सभी औद्योगिक आवश्यकताओं के लिये 2
पोर्टलैण्ड सिमेंट सामान्य निर्माण के लिये 3
काश्मनाल (Stoneware Pipes) पूर्णरूपेण लवण काचित (Salt Glazed) क्षार-रोधक (Acid Resistant) एवं प्रमाप विशिष्ट (Tested of standard specification) जलोत्सारण (Drainage) के लिये 4
मृत्सा-आरोग्यपात्र (Porcelain sanitary ware) भारतीय और योरोपीय शौच कुंड (Closets), धावन पात्री (Wash basins), मूत्रकुंड (Urinals), इत्यादि 5
विसंवाहक (Insulators) एवं क्षाररोधक खर्परी (Tiles) भी मिल सकती हैं। 6
डालमिया सिमेंट (भारत) लि०,
डाकघर—डालमियापुरम्
जिला—तिरुचिरापल्ली, दक्षिण भारत
PORTLAND
DALMIA
CEMENT
MADE IN INDIA
D.C.H.2-58.

विषय-सूची

सम्पादकीय परामर्श-मण्डल—
१. श्री रामगोपाल विद्यालंकार
२. श्री जी० एस० पथिक

बम्बई में हमारे प्रतिनिधि—
श्री टी० एन० वर्मा, नेशनल हाउस, २री मंजिल ६, तुलकरोड, बम्बई- १

कानपुर में हमारे प्रतिनिधि—
श्री महेन्द्रस्वरूप भटनागर १५/६१ सिविल लाइन्स
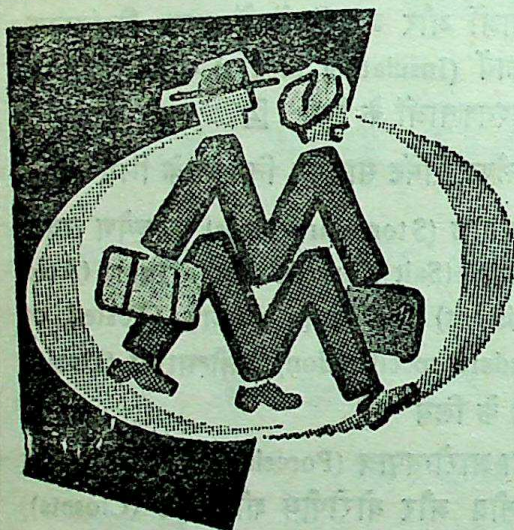
वर्ष : ७
अङ्क : १२
दिसम्बर १९५८

अन्न का सरकारी व्यापार

अन्न की समस्या हल करने के लिए अनेक उपाय कर चुकने के पश्चात् अब सरकार ने अन्न का थोक व्यापार स्वयं करने का निश्चय किया है। इसका प्रायः सब व्यापारी एक स्वर से विरोध कर रहे हैं। देश के सब अर्थशास्त्री भी सरकार के इस उपाय से सहमत नहीं हैं। परन्तु अन्न की समस्या इतनी विकट और मौलिक है कि सरकार के इस उपाय का स्पष्ट शब्दों में और दृढ़तापूर्वक विरोध व्यापारियों के अतिरिक्त, प्रायः अन्य कोई नहीं कर पा रहा।

अन्न को सुलभ मूल्य और पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध करने के लिए सरकार ने अब तक जो उपाय किये हैं उनकी आलोचना तो प्रायः सभी ने की है, परन्तु समस्या को हल करने का ऐसा उपाय अब तक किसी ने नहीं सुझाया जिसको सब लोग सर्वसम्मति से स्वीकार कर लें। इस सम्बन्धमें विचारकों के विभिन्न मत होना तो स्वाभाविक है ही, परन्तु इस समस्या पर विचार करने के लिए जो सामग्री सरकार द्वारा प्रस्ततु की जाती रही है, वह भी बहुत अनिश्चित और परस्पर विरोधी रही है। स्वयं सरकार ने जो कई कमेटियां इस प्रश्न पर विचार करने के लिए नियुक्त कीं उनमें से किसी की भी सिफारिशों पर उससे कभी पूरी तरह अमल नहीं किया। इनमें सबसे अन्तिम कमेटी श्री अशोक मेहता की अध्यक्षता में नियुक्त की गई थी। उसकी प्रायः एक भी सिफारिश पर सरकार ने अमल नहीं किया। और अब अकस्मात ही अन्न का थोक व्यापार अपने हाथ में ले लेने का निश्चय कर लिया।

अन्न की समस्या हल करने के लिए सरकार के द्वारा उसका थोक व्यापार अपने हाथ में लेने का निश्चय करने से ध्वनित होता है कि सरकार अन्न की दुर्लभता का मुख्य कारण व्यापारी लोगों की नफाखोरी और जमाखोरी आदि बुराइयों को समझती है। यदि सचमुच अन्न की दुर्लभता का मुख्य कारण यही होगा तो शायद सरकार के उपाय से उसका प्रतिकार हो जाएगा। परन्तु अब तक के अनुभव से प्रकट हो चुका है कि अन्न की दुर्लभता का यह कारण, मुख्य नहीं शायद गौण है। पिछले दिनों कई राज्यों की सरकारों ने अनेक थोक-व्यापारियों के अन्न के स्टाक पर अधिकार कर लिया था, परन्तु उससे अन्न की समस्या हल होने में विशेष सहायता नहीं मिली थी। उसका फल अधिक से अधिक इतना ही हुआ था कि कहीं-कहीं कुछ दिन के लिए अन्न का बाजार कुछ नरम हो गया था।

इसमें बड़ा सन्देह है कि सरकार बिना कोई घाटा उठाए व्यापारियों की अपेक्षा अन्न सस्ता बेच सकेगी। बहुधा देखा गया है कि जो काम सरकार द्वारा किये जाते हैं उन पर प्रबन्ध आदि का व्यय इतना अधिक बैठ जाता है कि वे

जनता के लिए सस्ते नहीं पड़ते। हमें भय है कि अन्न के सरकारी व्यापार में भी कहीं ऐसा ही न हो। यदि सचमुच ऐसा हुआ तो या तो सरकार को अन्न का व्यापार घाटा उठाकर करना पड़ेगा और या वह अन्न जनता के हाथ महंगा बेचने के लिए विवश हो जाएगी।

पिछले दो तीन वर्ष से सरकार विदेशों से अन्न अधिकाधिक मात्रा में मंगवा रही है। इसका अर्थ यह है कि देश में ही देश की आवश्यकता के लिए पर्याप्त अन्न उत्पन्न नहीं होता। यदि देश में उत्पन्न हुए अन्न का थोक व्यापार अपने हाथ में ले लेने के पश्चात् भी सरकार को विदेशी अन्न भारी मात्रा में मंगाना ही पड़ा तो वह निरा 'भक्षितेऽपि लशुने न शान्तो व्याधिः' का उदाहरण बन जायगा।

अन्न का व्यापार सरकार द्वारा अपने हाथ में ले लिए जाने का एक दुष्परिणाम यह होने की सम्भावना भी है कि अन्न के व्यापारी और उनके यहां मजदूरी का रोजगार करने वाले पल्लेदार आदि लोग बड़ी संख्या में बेरोजगार हो जाएंगे। यह सब जल्दी ही अन्य कोई उपयोगी रोजगार अपना लेने में समर्थ नहीं हो सकेंगे।

किसान भी शायद अन्न का थोक व्यापार सरकार के हाथ में चले जाने से प्रसन्न नहीं होंगे। गत १०-१५ वर्षों में अन्न आदि खेती की पैदावारों का मूल्य कई गुणा बढ़ जाने के कारण अधिकतर भारतीय किसानों की अवस्था पहिले की अपेक्षा बहुत अधिक अच्छी हो चुकी है। जो किसान अपनी पैदावार स्वयं संग्रह करने और रोक रखने में समर्थ होते हैं वे फसल तैयार होते ही नहीं बेच डालते। वे बाजार पर नजर रखते हैं और अपनी पैदावार ऊंचे बाजार में बेचते हैं। ऐसा करने वाले किसान अन्न का व्यापार सरकार के हाथ में चले जाने से निश्चय ही प्रसन्न नहीं होंगे। अब तो सब किसानों को अपना अन्न सरकार के हाथ और सरकार द्वारा नियत मूल्य पर ही बेचना पड़ेगा।

अन्न का व्यापार सरकार द्वारा किये जाने के संबंध में इन शंकाओं के बावजूद हमारा विचार यह है कि यदि सरकार के इस नये परीक्षण से अन्न की समस्या हल हो जाय तो यह स्वागत के योग्य ही है और हमें निश्चय है कि जो लोग सरकार के इस उपाय का विरोध कर रहे हैं वे भी इसकी सफलता देखकर इसके समर्थक बन जायंगे। इस सम्बन्ध में इतना अवश्य स्मरणीय है कि आज से १० वर्ष पूर्व जब बड़े नगरों में अन्न का राशनिंग था तब एक तो जनता को राशन का अन्न अच्छा नहीं मिलता था और दूसरे सरकार को राशन में अन्न का सस्ता वितरण करने के लिए बहुत-सा घाटा अपने खाते डालना पड़ता था। जब श्री चिन्तामणि देशमुख भारत सरकार के वित्तमंत्री हुए थे तब उन्होंने यह नई नीति अपनाई थी कि सरकार घाटा उठाकर राशन में सस्ता अन्न नहीं देगी और इसलिए राशन में दिये जाने वाले अन्न का मूल्य क्रमशः बढ़ा दिया गया था। अब भी कहीं सरकार को उसी मार्ग का अवलम्बन तो नहीं करना पड़ेगा? यदि सचमुच ऐसा ही हुआ तो समस्या जहाँ की तहाँ रहेगी।

—

गन्ने का मूल्य

कुछ राजनैतिक कार्यकर्ताओं ने पिछले दिनों गन्ना बोने वाले किसानों का वकील बनकर यह आवाज उठाई थी कि चीनी-मिलों के हाथ बेचे जाने वाले गन्ने का नियत मूल्य बढ़ा दिया जाय। कुछ राज्य सरकारों ने इस मांग का समर्थन भी कर दिया था, परन्तु भारत सरकार ने इसे स्वीकार नहीं किया। इस सम्बन्ध में गन्ने का मूल्य बढ़ाने का विरोध करते हुए खाद्यमंत्री श्री अजित प्रसाद जैन द्वारा कही हुई एक बात विशेष ध्यान देने योग्य है। उन्होंने लोक सभा में कहा था कि इस समय किसानों को गन्ने का मूल्य १ रु० ७ आना प्रतिमन मिलता है, और इस मूल्य पर भी किसान अन्न बोना छोड़कर गन्ने की खेती बढ़ाते चले जा रहे हैं। इसलिए भी गन्ने का मूल्य बढ़ाने की

सूचना

गत मास दीपावली से 'सम्पदा' सम्पादक—श्री कृष्णचन्द्र विद्यालंकार पक्षाघात के रोग में ग्रस्त हैं। इस अंक का अग्रलेख और सम्पादकीय टिप्पणियां श्री रामगोपाल विद्यालंकार ने लिखने की कृपा की है।

—व्यवस्थापक, सम्पदा

मांग में विशेष बल दिखलाई नहीं पड़ता । आज चीनी मिलें किसान से जिस मूल्य पर गन्ना खरीदती हैं वह चुकाने के बाद ही चीनी का उत्पादन-मूल्य संसार के अधिकतर देशों की अपेक्षा महंगा बैठता है, यदि कहीं गन्ने का मूल्य बढ़ा दिया जाता तो भारतीय चीनी और भी अधिक महंगी पड़ने लगती । कुछ समय से भारत की सरकार भारतीय चीनी का विदेशों को निर्यात करने का प्रयत्न कर रही है । उसका मूल्य अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में ऊंचा होने के कारण सरकार को यहां तक सोचना पड़ रहा है कि भारतीय चीनी को विदेशों में कुछ घाटा उठाकर भी बेच डाला जाय और उस घाटे की पूर्ति अपने देश में चीनी अधिक महंगी बेच कर करली जाय । यदि सरकार गन्ने का मूल्य बढ़ाना स्वीकार कर लेती तो उसके लिए विदेशों को चीनी का निर्यात करना और भी अधिक कठिन हो जाता ।

चावल का मूल्य

कुछ राजनैतिक कार्यकर्ताओं ने गन्ने की भांति चावल का भी मूल्य बढ़ाने की मांग की थी । प्रधान मंत्री श्री नेहरू ने स्वयं उसका विरोध किया है । उन्होंने बतलाया है कि मध्यप्रदेश में चावल का मूल्य १४ रु० प्रतिमन से भी नीचे चला गया था । वहां सरकार को किसान से उस भाव पर चावल केवल इस कारण खरीदना पड़ रहा है कि किसान को हानि न हो । सरकार का कर्तव्य जहां यह ध्यान रखने का है कि किसान को हानि न हो वहां यह देखना भी उसका कर्तव्य है कि जनता को अन्न का मूल्य बहुत महंगा न देना पड़े । वर्तमान परिस्थितियों में चावल की खरीद का मूल्य और अधिक न बढ़ाने का सरकार का निश्चय उचित ही है ।

सरकार की फिजूल खर्ची

हाल में भारत के वित्त-मंत्री श्री मोरार जी देसाई ने यूरोपीय व्यापारियों के वार्षिक सम्मेलन में भाषण करते हुए कहा था कि निकट भविष्य में सरकार का विचार टैक्सों में कमी करने का नहीं है, प्रत्युत जनता को टैक्सों का भार कुछ अधिक ही उठाने के लिए तैयार रहना चाहिये, क्योंकि सरकार को अपनी योजनाओं की पूर्ति के लिए अधिक धन की आवश्यकता होगी । वित्त मंत्री की यह चेतावनी वस्तुस्थिति से संगत नहीं है । हम निरन्तर दो वर्ष से देख रहे हैं कि भारत सरकार के वित्त-मंत्री जनता से टैक्स के द्वारा जितनी राशि वसूल करने का अन्दाजा लगाते हैं, व्यवहार में वह उससे कम ही वसूल हो पाती है । इस अनुभव के होते हुए भी यदि वित्त-मंत्री अपने आगामी बजट में कोई नये टैक्स लगाने की बात सोच रहे हों तो वह किसी भी प्रकार उचित और तर्क संगत नहीं ठहराई जा सकती ।

एक ओर तो जनता नये टैक्स देने में असमर्थ हो चुकी है और दूसरी ओर सरकार की फिजूलखर्चियां बढती चली जा रही हैं । स्वयं सरकार द्वारा नियुक्त अधिकारियों की रिपोर्टों में बार-बार यह शिकायत की जाती है कि सरकारी कामों में फ़िजूलखर्ची होती है और अधिकारी लोग बड़ी-बड़ी राशियां व्यय करते हुए नियमों का पालन नहीं करते । इस प्रकार की रिपोर्टों का सबसे ताजा उदाहरण हमारे सामने उत्तर प्रदेश सम्बन्धी तीन रिपोर्टों का है । दिसम्बर के आरम्भ में उत्तर प्रदेश की विधान सभा में इस प्रकार की तीन रिपोर्टें उपस्थित की गईं—पहली एस्टीमेट (तखमीना) कमेटी की, दूसरी निर्णय समिति अर्थात् उस समिति की जो कि यह निर्णय करती है कि विधान मण्डलों में मंत्रियों द्वारा किये हुए कितने वायदों का पालन हुआ और कितनों का नहीं और तीसरी ऑडिटर जनरल की । इन तीनों ही रिपोर्टों में सरकार की फिजूलखर्ची और लापरवाही कि शिकायतें की गई हैं । एस्टीमेट कमेटी की रिपोर्ट में इस राज्य के सिंचाई विभाग की शिकायत विशेष रूप से की गई है । बतलाया गया है कि यह विभाग उच्च पदों पर महंगे अधिकारियों की संख्या अनावश्यक रूप से बढाता चला जा रहा है । एक ही खाते में कई-कई नये इन्जीनियर नियुक्त कर दिये गये हैं । कमेटी ने सिफारिश की है कि ७५ चीफ इन्जीनियर तो एक दम कम कर देने चाहियें । ऑडिटर जनरल ने अपनी रिपोर्ट में शिकायत की है कि हमारी वार्षिक रिपोर्टों में जो आपत्तियां की जाती हैं उन पर सरकार कई वर्षों से कोई ध्यान नहीं दे रही । विशेष रूप से सिंचाई, बिजली और निर्माण विभागों में बहुत बड़ी-बड़ी राशियें नियम विरुद्ध व्यय की गई हैं । इन तीनों विभागों द्वारा नियम विरुद्ध व्यय की गई राशियां ऑडिटर जनरल ने क्रमशः तेईस, नौ और सात करोड़ रुपये

बतलाई हैं। इसी प्रकार निर्णय समिति ने शिकायत की है कि मंत्री लोग विधान सभा में जो वायदे कर देते हैं उनका पालन करने पर वर्षों तक ध्यान नहीं दिया जाता। कई वायदे तो १९५६ में किये गये थे और वे अभी तक पूरे नहीं किये गये।

उत्तर प्रदेश की चर्चा विशेष रूप से हमने यहां केवल इसलिए कर दी कि उसकी रिपोर्ट हाल में ही पेश की गई थी। परन्तु अन्य राज्यों और केन्द्र की सरकारों के विषय में भी इस प्रकार की रिपोर्ट प्रतिवर्ष ही हमारे सामने आती रहती हैं। जब तक सरकार अपनी इन फिजूलखर्चियों को रोकने पर ध्यान नहीं देगी तब तक उसे जनता पर नये टैक्सों का भार लादने का अधिकार नहीं दिया जा सकता। आज चाहे संसद व विधान सभाओं के सदस्य अपने नेताओं का आदर करने के कारण सरकार की फिजूलखर्चियों की भले ही उपेक्षा कर दें कुछ समय पश्चात् वे ऐसा नहीं कर सकेंगे और तब सरकार पहिले वसूल किये हुए टैक्सों का सन्तोषजनक हिसाब देने के पश्चात् ही नये टैक्स लगाने की अनुमति प्राप्त कर सकेगी।

वस्त्र व्यवसाय का नया संकट

'सम्पदा' के गतांक में भारत के वस्त्र व्यवसाय की चर्चा कुछ विस्तार पूर्वक की गई थी। सूती वस्त्र के निर्यात से भारत को विदेशी मुद्रा की खासी प्राप्ति होती है। परन्तु कुछ समय से चीन आदि नये कम्युनिस्ट देशों की प्रतिस्पर्धा के कारण कई विदेशों का बाजार भारत के हाथ से निकलता जा रहा है। इन देशों का माल बाजार में बहुत सस्ते मूल्य पर पहुँच रहा है। भारत के वस्त्र-व्यवसाय पर तीन प्रकार का बोझ पड़ रहा है। एक तो भारी सरकारी उत्पादन कर का, दूसरा हाथ करघे के वस्त्र को सहारा लगाने के लिए लगाये गये विशेष करों का और तीसरा नये श्रमिक कानूनों के कारण बढ़ी हुई मजदूरी का। भारत को यदि विदेशों के बाजार में अपना वस्त्र बेचना है तो उसे अपना माल सस्ता तैयार करने पर ध्यान देना ही पड़ेगा। कई वर्ष से अनेक भारतीय मिल मालिक अपने कारखानों में ऐसे करघे लगाना चाह रहे हैं जो कि एक ही श्रमिक द्वारा अधिक संख्या में चलाए जा सकते हैं और जिनसे माल भी अधिक मात्रा में तैयार होता है। परन्तु श्रमिक नेता ऐसे करघे लगाने का यह कह कर विरोध करते हैं कि इनके कारण बहुत से मजदूर बेरोजगार हो जाएंगे। अब भारत सरकार के उद्योग मंत्री श्री मनुभाई शाह ने स्वयं कहा है कि सरकार उक्त प्रकार के करघे लगाने के पक्ष में है, क्योंकि उन्हें अपनाये बिना सस्ते वस्त्र का उत्पादन नहीं किया जा सकता। श्री शाह ने यह आश्वासन भी दिया है कि ये करघे लगाते हुए ऐसी नीति अपनाई जायगी कि मजदूर बेरोजगार न होने पाएं यदि सचमुच सरकार इस प्रकार का कोई मार्ग निकाल सकी तो उससे मजदूरों के रोजगार और सस्ते वस्त्र के उत्पादन दोनों उद्देश्यों की सिद्धि हो सकेगी।

मकान-किराये का नया कानून

लोकसभा में दिल्ली के लिए मकान-किराये नियंत्रित करने के लिए जो नया कानून पेश किया गया है उसमें दो कमियां बहुत बड़ी रह गई हैं। एक तो यह कि वह कानून सरकारी जायदादों पर लागू नहीं किया जायगा और दूसरी यह कि उसमें किरायेदारों की बढ़ती हुई संख्या और दिल्ली में मकानों की अपर्याप्त संख्या में अनुपात का यथेष्ट ध्यान नहीं रखा गया। इस कानून के द्वारा निजी मालिकों के मकानों के किराये तो नियमित करने का यत्न किया जा रहा है परन्तु सरकारी मकानों के किराये अब तक भी बढ़ाये ही जा रहे हैं और उनका नियंत्रण करने की बात तक नहीं सोची गई। नई दिल्ली की अधिकतर इमारतें सरकारी हैं और उनके किराये सरकार निजी मकान-मालिकों की तुलना में कहीं अधिक वसूल करती है। जब तक निजी मकान मालिकों के सामने सरकारी इमारतों के ऊंचे किरायों का उदाहरण उपस्थित रहेगा तब तक वे भी स्वेच्छापूर्वक थोड़ा किराया लेना पसन्द नहीं करेंगे। प्रत्युत, वे अनुचित उपायों द्वारा कानून से बचकर अधिक आय प्राप्त करने के निन्दनीय मार्ग का अवलम्बन करने लगेंगे। यदि सरकार स्वयं उचित किराया लेने का आदर्श उपस्थित करदे तो शायद किरायों के नियंत्रण का कानून न बनाने पर भी यह समस्या हल हो जाएगी—उससे पूर्णतः नहीं तो अंशतः तो समस्या के हल में सहायता मिलेगी ही।

—रामगोपाल विद्यालंकार

भारत में पेट्रोल की खोज

श्री रामगोपाल विद्यालंकार

जबसे (अक्तूबर १९५८ में) लुनेज (खम्भात) में तेल के एक सोते से कई फुट ऊंची धार फूट पड़ने का समाचार प्रकाशित हुआ है, तबसे साधारण जनता की अपने ही देश में तेल मिल जाने के विषय में उत्सुकता बहुत बढ़ गई है। यह उत्सुकता इतनी अधिक बढ़ चुकी है कि बहुत से लोगों को भारत सरकार के तेल तथा खान-मंत्री का यह चेतावनी देना भी अच्छा नहीं लगा कि इस सम्बन्ध में जल्दबाजी से काम नहीं लेना चाहिये और वैज्ञानिकों के प्रयत्नों के परिणाम की प्रतीक्षा करनी चाहिये, क्योंकि भूमि के गर्भ में वस्तुतः तेल कहां विद्यमान है और कहां नहीं इसका निश्चय करने में बहुत अधिक समय लगता है।

तेल कितनी दुर्लभ वस्तु है और वह कितने अधिक प्रयत्न के पश्चात् प्राप्त होती है इसका अन्दाजा केवल इतनी बात से लगाया जा सकता है कि संसार के अधिकतर तेल के कुएं कई मील गहरे हैं। जो वैज्ञानिक अथवा व्यवसायी तेल की नई खानें खोजने के लिए अपने प्रचुर धन, श्रम और समय व्यय करते हैं वे वस्तुतः बहुत भारी जोखिम उठाकर वैसा करते हैं। उनका भाग्य अच्छा होता है तो तेल प्राप्ति शीघ्र और थोड़े प्रयत्न से हो जाती है, परन्तु बहुधा करोड़ों रुपये व्यय करने और वर्षों तक हाथ-पाँव पटकने के पश्चात् भी सफलता नहीं हो पाती।

भारत में तेल की खोज असम, पश्चिमी बंगाल, पंजाब के कांगड़ा और होशियारपुर जिलों, राजस्थान, सौराष्ट्र और गुजरात आदि स्थानों में की जा रही है। इस कार्य में हमारे देशकी सरकारको रूस, रूमानिया और अमेरिका आदि अनेक विदेशों से सहयोग मिल रहा है। पश्चिमी बंगाल में अमेरिका की स्टैंडर्ड-ऑयल-कम्पनी केवल अपने व्यय से दो वर्ष से भी अधिक समय से तेल-खानों की खोज कर रही है, परन्तु उसे अभी तक सफलता प्राप्त होने के कोई लक्षण प्रकट नहीं हुए।

अभी तक निश्चित रूप से तेल की उपलब्धि भारत में केवल असम राज्य में हुई है। वहां असम-ऑयल कंपनी कई वर्ष से तेल निकाल भी रही है। इस कम्पनी ने अपनी वर्तमान खानों के अतिरिक्त नाहौर, कटिया आदि और भी कई स्थानों पर खुदाई करके देखी है और इसमें उसे सफलता हुई है और हो रही है। किसी-किसी स्थान पर तो इस कम्पनी को चार या पांच मील की गहराई तक खुदाई करनी पड़ी है। जैसा कि ऊपर लिखा गया है बहुधा तेल की प्रचुर मात्रा में प्राप्ति बहुत गहरी खुदाई करने पर ही होती है। विलियम ड्रेक सरीखा भाग्यवान तो कोई विरला ही होता है जिसे कि १८६९ में एक मामूली औजार से केवल ६९ फुट गहरा खोदने पर तेल मिल गया था।

तेल कैसे बनता है?

भूमि के गर्भ में तेल बनता हुआ तो किसी ने नहीं देखा, परन्तु वैज्ञानिकों की कल्पना यह है कि जिन स्थानों पर प्रचुर मात्रा में तेल विद्यमान है वे स्थान कई लाख वर्ष पूर्व बड़े-बड़े जंगलों और पर्वतों आदि से ढके रहे होंगे। भूकम्प अथवा अन्य बड़े प्राकृतिक परिवर्तनों के कारण वे जंगल और पर्वत जमीन में धंस गये। वहाँ की वनस्पतियाँ और नाना प्रकार के जीव-जन्तु भी उन्हीं में दब गये उनके ऊपर नदियों की धाराओं और समुद्र की लहरों के द्वारा मिट्टी और रेत की परतों पर परतें जमती चली गईं; और भूमि के गर्भ की गर्मी आदि के द्वारा ऐसे रासायनिक परिवर्तन होते रहे कि दबी हुई वनस्पतियों और जीव-जन्तुओं के देह द्रव-तेल हो गये। जहां कहीं ऐसी छेद वाली कठोर चट्टानें बन गईं कि उनके छिद्रों में से छन-छन कर यह द्रव तेल एकत्रित होने के लिए अनुकूल परिस्थितियां उपलब्ध हो सकें, वहां तेल के छोटे अथवा बड़े सोते बन गये।

अब अनुभवी तेल व्यवसायियों और वैज्ञानिकों का ज्ञान इतना बढ़ चुका है कि वे जमीन की ऊपरी सतह और भीतर की मिट्टी की परतों को देखकर अन्दाजा लगा लेते हैं कि किन स्थानों पर तेल का सोता मिलने की संभावना हो सकती है। पहिले जमीन की सतह को परखने

के लिए हवाई जहाजों में उड़कर आकाश से जमीन के फोटो लिए जाते हैं। इस प्रकार भारत की गंगा घाटी में लगभग एक लाख वर्ग मील और राजस्थान में लगभग १७ हजार वर्ग मील भूमि के फोटो लिए जा चुके हैं। यह कार्य कोलम्बो योजना के अन्तर्गत कनाडा की सहायता से किया गया। इन फोटो चित्रों को देख कर जहां कहीं तेल के सोते मिलने की सम्भावना होती है वहां की ऊपरी मिट्टी की वैज्ञानिक परीक्षा की जाती है। उसके पश्चात् जहां खुदाई करने की आवश्यकता जान पड़ती है वहां विशेष प्रकार के मशीनी बरमों द्वारा खुदाई की जाती है और जमीन में से निकली हुई मिट्टी की परतों, कीचड़, गैसों और अन्य वस्तुओं की रासायनिक, भौतिक और चुम्बकीय आदि नाना प्रकार की वैज्ञानिक परीक्षाएं की जाती हैं।

भारत में इस प्रकार की परीक्षाओं के लिए तेल और खान मंत्रालय की ओर से एक केन्द्र देहरादून में खोला गया है। इस मंत्रालय ने इस कार्य के लिए तेल और गैस-आयोग के नाम से एक प्रथक आयोग का ही संगठन कर दिया है। इस आयोग का आरम्भ अगस्त १९५६ में किया गया था। और तीन वर्ष से भी कम समय में इसका विस्तार इतना अधिक हो चुका है कि इसमें १६०० वैज्ञानिक काम कर रहे हैं। इनमें विदेशी विशेषज्ञ १०० से अधिक नहीं हैं। विदेशी विशेषज्ञों में सबसे अधिक संख्या रूसियों की (८८) है और दूसरे नम्बर पर रूमानियनों की (१०) है। विभिन्न स्थानों पर खुदाई आदि का जो कार्य किया जा रहा है उस पर अब तक भारत सरकार का लगभग ३० करोड़ रुपया व्यय हो चुका है।

असम में तेल मिलने की चर्चा ऊपर हो चुकी है। उसके बाद जिन स्थानों पर व्यापारिक मात्रा में तेल मिलने की आशा की जा रही है वे क्रमश: लुनेज (खम्भात) वडसर (बड़ौदा के पास) और ज्वालामुखी (जिला कांगड़ा हैं)। लुनेज में तेल का सोता लगभग एक मील, ज्वालामुखी में लगभग आधा मील और वडसर में एक फर्लांग से भी कम गहरी खुदाई करने पर मिल गया था। इन स्रोतों का मुंह तब तक के लिए बन्द कर दिया गया है जब तक कि इनसे निकले हुए तेल और कीचड़ आदि की वैज्ञानिक परीक्षा करके यह निश्चय नहीं हो जाता कि वहां तेल की उपलब्धि व्यापारिक मात्रा में हो सकती है।

भूगर्भ शास्त्रियों का अन्दाजा है कि पश्चिमी भारत, राजस्थान और पंजाब के जिन स्थानों पर तेल मिलने के लक्षण प्रगट हो रहे हैं वे सब ईरान के भूगर्भस्थ तेल स्रोतों के विस्तार का ही भाग है। कांगड़ा और होशियारपुर जिलों में जो खोज की जा रही है। उससे आशा है कि वह तेल न भी मिलेगा तो गैस इतनी प्रचुर मात्रा में मिल जायगी कि उसका उपयोग व्यापारिक और औद्योगिक कार्यों के लिए किया जा सके।

हमारी तेल की आवश्यकताएं

भारत में प्रतिवर्ष लगभग ५० लाख टन पेट्रोल की खपत होती है। यह वार्षिक खपत लगभग १० % वार्षिक के हिसाब से द्वितीय योजना के अन्त तक हमारे देश में पेट्रोल की सालाना खपत ७० लाख टन और तृतीय योजना के अन्त तक १४० लाख टन हो जाएगी!

हमारी इस ५० लाख टन खपत में से केवल ४ लाख टन पेट्रोल डिगबोई (असम) के कुओं से निकलता है, शेष सब विदेशों से मंगाना पड़ता है। परन्तु आशा की जा रही है कि असम में नाहोर, कटिया, हुगरीजन और मोरान स्थानों पर जो कुएं बनाये जा रहे हैं उनसे १९६१ के अन्त तक ३० लाख टन क्रूड आयल (बिना साफ किया हुआ कच्चा तेल) मिलने लगेगा। यदि हमें अपने देश में तेल के सोते खोजने में सफलता न हुई तो १९७६ के अन्त तक विदेशों से तेल मंगाने पर प्रति वर्ष ५ अरब रुपया खर्च करना पड़ जायगा।

एशिया के देशों की तुलना

एशिया के देशों में इस समय तेल साफ करने के जो कारखाने खुले हैं उनमें १९५७ के अन्त तक १३॥ लाख ड्रम तेल साफ होता था। इनमें से लगभग एक तिहाई तो अबादान (ईरान) के तेल शोधक कारखानों में, एक तिहाई जापान के २० कारखानों में और शेष एक तिहाई अन्य ० एशियाई देशों के कारखानों में तैयार होता था। अन्तिम ७ देशों में सबसे बड़े कारखाने इंडोनेशिया और भारत के हैं। १९५७-५८ में एशियाई देशों का तेल का दैनिक व्यय संसार के समस्त व्यय का केवल ६ प्रतिशत था। एशियाई देशों में तेल का सबसे अधिक व्यय जापान और भारत

[सम्पदा

करते हैं और तेल के प्रमुख उत्पादक देश ईरान, इन्डोनेशिया और ब्रिटिश-बोर्नियो हैं। यों थोड़ा-थोड़ा तेल चीन, भारत, बर्मा और पाकिस्तान में भी उत्पन्न होता है।

द्वितीय विश्वयुद्ध से पूर्व तक बर्मा की गणना तेल का अधिक उत्पादन करने वाले देशों में की जाती थी परन्तु द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् बर्मा में तेल की खपत तो बढ़ गई और उत्पादन कुछ घट गया। अब बर्मा में तेल का उत्पादन उसकी अपनी आवश्यकता भर के लिए होता है।

चीन में तेल की बड़ी-बड़ी खानें नहीं हैं, परन्तु जो खानें वहां हैं उनका विकास और नये तेल शोधक कारखानों का निर्माण विशेष प्रयत्न से किया जा रहा है। चीन में यह कार्य द्वितीय विश्वयुद्ध से पूर्व जापान ने आरम्भ किया था, परन्तु चीन ने स्वतन्त्र होकर उसमें विशेष प्रगति की है।

एशियाई देशों में सबसे अधिक उन्नति जापान ने की है। युद्ध पूर्व की तुलना में जापान का वर्तमान तेल व्यय तीन गुना हो चुका है, परन्तु जापान में तेल का उत्पादन उसकी आवश्यकता का केवल ३ प्रतिशत होता है। इसलिए जापान ने तेल शोधक कारखाने खोलने पर अधिक ध्यान दिया है। इस समय जापान के शोधक कारखानों की क्षमता इतनी है कि उसे साफ तेल विदेशों से नहीं मंगाना पड़ता।

भारत में इस समय जितना तेल निकलता है उतने से उसकी केवल ६ प्रतिशत आवश्यकता पूरी होती है। इसलिए भारत ने भी, जापान की भांति, पिछले दिनों तेल शोधक कारखाने खोलने पर विशेष ध्यान दिया है। अब तक भारत में तीन तेल शोधक कारखाने बन चुके हैं और भारत की आवश्यकता का लगभग ७० प्रतिशत साफ तेल तैयार कर देते हैं। परन्तु ये तीनों कारखाने विदेशी हैं। इनमें लगी हुई ५० करोड़ रुपये की पूंजी भी सबकी सब विदेशी है। अब भारत सरकार ने रूमानिया के साथ एक समझौता किया है। जिसके अनुसार एक तेल शोधक कारखाना नाहोर कटिया (असम) में और दूसरा बरौनी (बिहार) में खोला जायगा। ये दोनों कारखाने १९६१ तक बन कर तैयार हो जाने की आशा है। इन कारखानों तक कच्चा तेल असम के कुओं से नलों के द्वारा पहुँचाया जाएगा। समुद्र तट पर खुले हुए विदेशी शोधक कारखानों की भांति ये नये कारखाने कच्चा तेल विदेशों से नहीं मंगाएंगे।

——

राष्ट्रनायक

हम 'वादों' के विरुद्ध नहीं !

हम पूंजीवाद, साम्यवाद या और किसी वाद के विरुध संघर्ष नहीं कर रहे हैं बल्कि अपने उद्देश्य पूरे करने के लिए लड़ रहे हैं।

भारत हर किसी प्रणाली की अच्छी बातें अपनाने के लिए तैयार है। जो भी तरीके भारत के लिए उपयोगी होंगे, चाहे जहां से वह मिले हम उन्हें अपना लेंगे।

हम अपने उद्देश्य प्राप्त करने के लिए घोर संघर्ष कर रहे हैं। हम किसी देश या उसकी नीति के विरुद्ध नहीं लड़ रहे हैं। जैसे हम किसी देश के मामलों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहते इसी प्रकार हम नहीं चाहते कि और देश हमारे मामलों में दखल दें।

हम अमरीका या रूस किसी के भी विरुद्ध दुर्भावना नहीं रखते। —जवाहरलाल नेहरू
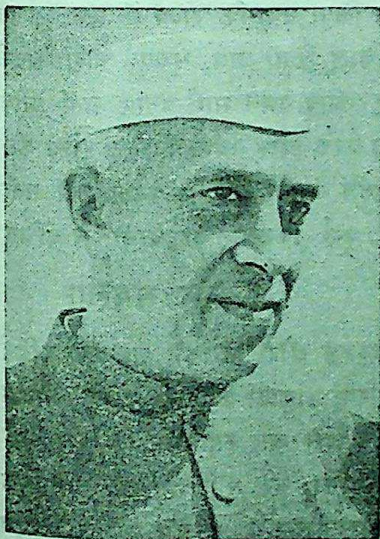
नया मध्य प्रदेश : प्रगति के दो वर्ष

राज्य पुनर्गठन के अनुसार पुनर्गठित मध्यप्रदेश ने १ नवम्बर १९५८ को अपने दो वर्ष पूरे करके तीसरे वर्ष में प्रवेश किया। भारत के इस द्वितीय विशालतम राज्य में, जहां कि जन संख्या का घनत्व १५३ व्यक्ति प्रति वर्गमील ही है, विकास के लिए विस्तृत क्षेत्र उपलब्ध है। राज्य के उत्तरी ओर से सुदूर दक्षिणी छोर तक का विस्तार लगभग एक हजार मील का है। राज्य का ४० प्रतिशत से अधिक भू भाग सघन वनों से आच्छादित है जो भूमि संरक्षण विशेषज्ञों के मतानुसार वन प्रदेश और अन्य भू-भाग का आदर्श अनुपात है। राज्य की वर्तमान अर्थ-व्यवस्था मूलतः कृषि प्रधान है। राज्य में सभी प्रमुख खाद्यान्नों का उत्पादन होता है। उदाहरणार्थ मालवा क्षेत्र तथा नर्मदा घाटी में गेहूं और चना मालवा तथा समीपवर्ती क्षेत्रों में कपास और जुआर तथा छत्तीसगढ़ क्षेत्र में चावल पैदा होता है। सामान्यतः यह राज्य न केवल अपनी खाद्यान्नों सम्बन्धी आवश्यकताओं में आत्म निर्भर ही है वरन देश के अभाव वाले क्षेत्रों में यहां से बड़ी मात्रा में खाद्यान्न भेजे जाते हैं। कपास तथा तिलहन यहां की प्रमुख अर्थकारी फसले हैं और गन्ना तथा अफीम भी मालवा में उत्पन्न होते हैं। औद्योगिक दृष्टि से उत्तरी जिले काफी आगे बड़े हुए हैं। राज्य में सूती रेशमी तथा रेयन वस्त्रोद्योग काफी संख्या में है। इसके अतिरिक्त चन्देरी और महेश्वर के बुनकर उद्योग तथा भोपाल के जरी उद्योग सदृश कुछ प्रसिद्ध परम्परागत उद्योग भी हैं। फिर भी इसकी एक प्रमुख शक्ति महत्वपूर्ण खनिज पदार्थों के उन अक्षय भंडारों में निहित है जो कि विन्ध्यप्रदेश तथा छत्तीसगढ़ के दक्षिण पूर्वी भूखंड के गर्भ में अवस्थित है। राज्य के दुर्ग और बस्तर जिलों में सम्भवतः भारत की सर्वोत्कृष्ट कोटि के कच्चे लोहे के भंडार विशालतम मात्रा में उपलब्ध हैं। राज्य में कोयले के विस्तृत क्षेत्र और चूने के पत्थर और अन्य औद्योगिक मिट्टियों के विस्तृत विशाल भंडार हैं। यहां उच्च कोटि के बाक्साइट तथा मैंगनीज़ के विशाल भंडार भी हैं। भारत के समग्र हीरा उत्पादन का ९५ प्रतिशत भाग तो रीवा संभाग के पन्ना जिले से ही प्राप्त होता है। इनके अतिरिक्त अनेक खनिज अल्प मात्रा में पाये जाते हैं। इस राज्य में बहने वाली पर्याप्तनी नदियां जिनमें नर्मदा, ताप्ती, महानदी, इन्द्रावती, चम्बल, रिहन्द, बेतवा इत्यादि सम्मिलित हैं, सिंचाई, शक्ति, उत्पादन और जल यातायात की प्रचुर संभावनायें प्रस्तुत करती हैं।

पुनर्गठन के पश्चात एक प्रकार से दायित्व के रूप में इस राज्य को ऐसे विशाल अविकसित क्षेत्र भी प्राप्त हुए जिनमें अधिकांशतः आदिवासी और अन्य पिछड़े वर्ग ही रहते थे जो कि इस राज्य की जनसंख्या का लगभग एक तिहाई भाग है। इस राज्य पर जिन पर जिन सर्वाधिक महत्वपूर्ण समस्याओं को हल करने का भार आ पड़ा है। उन्हीं में से एक समस्या उन लोगों की स्थिति सुधारना भी है। एक अन्य समस्या उन क्षेत्रों में डाकुओं के उपद्रव से सम्बन्धित थी जो कुछ समय पूर्व सीमाओं पर स्थित थे। इस सम्बन्ध में नवगठित राज्य को निरन्तर विकासशील बनाने का कार्य तत्काल आरम्भ किया गया और यह निश्चय किया गया कि राज्य में एक सुव्यवस्थित शासन तन्त्र चालू किया जाय, भूतपूर्व चारों घटकों को मिलाने के लिए आवागमन मार्ग बनाए जाएं और राजधानी को सज्जित करके और नवीन विशाल राज्य की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाया जाए। केवल यही नवीन राज्य ऐसा था जो पूर्ण विकसित राजधानी से वंचित था।

डाकू समस्या

चम्बल और उसकी सहायक नदियों के किनारों की घाटियां डाकुओं के लिए अच्छे विराम स्थल प्रदान करती हैं और यह कहा जाय कि ये घाटियां पीढ़ी दर पीढ़ी डाकुओं का घर रही हैं तो अनुपयुक्त न होगा। यह समस्या उस स..य और गम्भीर बन गई जबकि नये मध्यप्रदेश के गठन के साथ ही डाकू दलों ने लगातार उत्पात प्रारम्भ कर दिए। राज्य सरकार ने कुछ समय तक परिस्थिति का अध्ययन करने के पश्चात मई १९५७ से डाकू विरोधी

[सम्पूर्ण

विशेष अभियान आरम्भ कर दिया। अतिरिक्त पुलिस चौकियां स्थापित की गईं, पुलिस दल की शक्ति में वृद्धि की गई और उसे आधुनिक बेतार के तार यन्त्रों तथा यातायात के साधनों आदि से सज्जित किया गया एवं गांवों में डाकुओं का सामना करने वाले रक्षा-दलों का संगठन किया गया।

वर्ष १९५७ के आरम्भ से अभी तक ११७ डाकू मारे गए। तथा ८४४ गिरफ्तार किये गये। यद्यपि अभी भी बहुत से डाकू पकड़े जाना शेष हैं। फिर भी एक बात तो निश्चित है कि डाकू दलों का जोर समाप्त हो गया है तथा वे विछिन्न हो रहे हैं। कुछ कुख्यात दल खत्म कर दिये गये हैं तथा कुछ स्थान साफ कर दिये गये हैं। हाल ही में सरकार ने ५४ डाकुओं को गिरफ्तार करने के लिए कुल १,८५,००० रु० के पुरस्कार घोषित किये हैं। डकैतियों की संख्या में निरन्तर कमी हुई है। इन दलों द्वारा १९५६ वर्ष में प्रति माह औसतन २६ डकैतिया की जाती थीं जबकि १९५८ वर्ष में इसकी संख्या १७.६ रह गई। धीरे-धीरे जनता की ओर से भी प्रतिरोध तैयार किया जा रहा है। ७४८ ग्रामों में ग्राम रक्षक समितियां संगठित की गई हैं तथा उनके सदस्यों को आवश्यक प्रशिक्षण दिया गया है। इन समितियों ने लगभग १२ अवसरों पर यह प्रमाणित कर दिया है कि वे अच्छे संगठिन डाकू दलों के आक्रमणों से भी अपने ग्रामों की रक्षा कर सकती हैं। इन समितियों ने कई डाकुओं के ऐच्छिक रूप से आत्म-समर्पण करने में तथा कुछ अन्य डाकुओं को गिरफ्तार करने में भी सहायता दी है।

राज्य को द्वितीय पंचवर्षीय योजना १६०.२७ करोड़ रु० की है। वर्तमान योजना चार एकीकृत इकाइयों की योजनाओं को समामेलन करती है। योजना के प्रथम वर्ष में जब कार्य चल रहा था तभी राज्यों का पुनर्गठन हुआ। इससे द्वितीय योजना के प्रथम वर्ष में कार्य की गति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा क्योंकि पुनर्गठन के परिणामस्वरूप पहले विस्थापन हुआ तत्पश्चात पुनः स्थापन फिर भी द्वितीय वर्ष में वर्ष की वार्षिक योजनाओं को पूर्ण रूप से कार्यान्वित करने के लिये प्रशासन तन्त्र को तेजी से गति प्रदान की गई। द्वितीय वर्ष में योजना पूरी तौर से कार्यान्वित की गई और आशा है कि तृतीय वर्ष का अनुमानित व्यय निर्धारित व्यय से अधिक हो जावेगा। प्रथम तीन वर्षों की अवधि में योजना का अनुमान लगभग ७६ करोड़ रु० का आंका गया है।

सामुदायिक विकास

२ अक्तूबर १९५८ को राज्य में २३२ विकास खंड थे इनमें १०७ प्रथम चरण के खंड १० बहुउद्देश्यीय आदिम जातीय खंड, ५१ सामुदायिक विकास खंड, ४४ द्वितीय चरण के खंड और २० पूर्व विस्तार खंड सम्मिलित हैं। इसमें ४०७२४ ग्राम आते हैं जो राज्य की कुल ग्राम संख्या के आधे से अधिक है तथा जिनकी जनसंख्या लगभग १.२५ करोड़ है। आशा की जाती है कि इस कार्यक्रम के अन्तर्गत सम्पूर्ण राज्य, अक्टूबर १९६३ तक ४१६ विकास खंडों के अंतर्गत आ जावेगा।

नवीन राज्य के निर्माण से जून १९५८ तक सामुदायिक कार्यक्रम के अन्तर्गत ६.७१ करोड़ रु० की राशि खर्च की गई। भौतिक सफलतायें भी महत्वपूर्ण हैं। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत जून १९५८ तक १०५ प्रमुख ग्राम केन्द्र प्रारम्भ किये गये, ३२६२६८ एकड़ भूमि को खेती योग्य बनाया गया, १,१०,०१७ एकड़ भूमि सिंचाई के अन्तर्गत लाई गई २,९९९ मील लम्बी नई कच्ची सड़कों का निर्माण किया गया है। लगभग ४२७२ मील लम्बी वर्तमान कच्ची सड़कों को सुधारा गया, एवं १२७४ पुलियों का निर्माण किया गया। लगभग १४७ प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, ८३ शिशु-कल्याण और प्रसूति केन्द्र बनाये ४७०० कुओं का निर्माण किया गया और ३३३७ कुओं का जीर्णोद्धार किया गया। इसी अवधि में लगभग ५००० नवीन सहकारी समितियां प्रारम्भ की गईं और लगभग ३६८४८ ग्राम नेता प्रशिक्षित किये गये। सामुदायिक विकास कार्यक्रम केवल भौतिक विकास का ही कार्यक्रम नहीं है बल्कि वह धीरे-धीरे आत्मनिर्भरता के आन्दोलन का रूप ग्रहण कर रहा है। इस अवधि में जनता के अंशदान की अनुमानित राशि २५५.६१ लाख रु० है।

कृषि

योजना में प्रमुख रूप से कृषि उत्पादन पर निरन्तर बल दिया जा रहा है, यह त्रिसूत्रीय कार्यक्रम है जिसमें

कृषि उत्पादन, भूमि विकास और छोटी सिंचाई योजनायें सम्मिलित हैं। राज्य शासन और सहकारी संस्थायें इन कार्यों के लिये कृषकों को सहायता के रूप में लगभग ११ करोड़ रु० वार्षिक दे रही हैं। इस प्रकार अंशदान का औसत प्रति एकड़ लगभग ११४ रु० आता है। पंचवर्षीय योजना का उद्देश्य प्राविधिकों और वित्तीय सहायता में अधिकाधिक वृद्धि करना है। अधिक अन्न उपजाओ आन्दोलन के लिये, ऋण, बीजों और उर्वर की पूर्ति की व्यवस्था की गई है। राज्य में रासायनिक उर्वरकों के विवरण के लिये ८०० सहकारी हाट समितियाँ तथा वितरण केन्द्र हैं। कृषि विकास के क्षेत्र में १९५६-५७ और १९५७-५८ वर्ष में वित्तीय उपलब्धियां क्रमशः ४३ प्रतिशत और ५५ प्रतिशत हैं। १९५८-५९ वर्ष के लिये अतिरिक्त अन्नोत्पादन का लक्ष्य २.८६ लाख टन है। सम्पूर्ण राज्य में अभी तक १३ शासकीय बीज प्रक्षेत्र भी खोले गये हैं। कतिपय कृषि योजनाओं को गति प्रदान करने में वर्तमान रबी आन्दोलन से सहायता लेने के प्रयत्न किये जा रहे हैं।

सिंचाई

कृषि के लिये सिंचाई अत्यधिक आवश्यक है। मध्यप्रदेश में कुल सिंचित क्षेत्र बहुत कम है। कृषि योग्य भूमि के केवल ५.४६ प्रतिशत में सिंचाई होती है जबकि समस्त भारत की औसत १७ प्रतिशत है। अतः योजना में इसको सर्वाधिक प्राथमिकता दी गई है और कुल राशि में से २५ प्रतिशत से अधिक सिंचाई के लिये निर्धारित किया गया है।

अन्तरप्रान्तीय चम्बल बहुउद्देशीय योजना और तवा योजना बड़ी योजनायें हैं। चम्बल योजना मध्यप्रदेश और राजस्थान का संयुक्त उपक्रम है जिससे १४ लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई की जा सकेगी और २.१७ लाख किलोवाट शक्ति उत्पन्न हो सकेगी। इस योजना के अन्तर्गत ३ बांधों का निर्माण किया जायेगा जिसमें से हरएक बांध पर एक पावर हाउस बनाया जायेगा। ट्रान्समिशन लाइनों का जाल बिछाया जायेगा तथा मुख्य और सहायक नहरें बनाई जाएंगी। यह सम्पूर्ण योजना दो खंडों में है जिस पर लगभग ७७ करोड़ रुपये का खर्च होगा। प्रथम खंड की समाप्ति पर ११ लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई की जा सकेगी। दोनों राज्य समानुपात में इसका खर्च और लाभ उठायेंगे।

राज्य में ५७ बड़ी तथा मध्यम योजनाएं पहली योजना के अंतर्गत प्रारम्भ की हुई है और ९ योजनाएं अभाव-ग्रस्त क्षेत्रों में सहायता-कार्यों से संबंधित हैं। ११ योजनाओं में से ७ पर कार्य समाप्त हो गया है। इन योजनाओं पर १९५६-५७ और १९५७-५८ वर्ष में लगभग २५८ लाख रु० खर्च किये गये। चालू वर्ष में इसके लिये ८९ लाख रु० का प्रावधान है। शीघ्र परिणामों की उपलब्धि छोटे सिंचाई कार्यों की विशेषता है और उन्हें उच्च प्राथमिकता दी गई है। १९५६-५७ और १९५७-५८ में इन कार्यों पर २९५.३७ लाख रु० की व्यवस्था है। भूमिगत जल अन्वेषण योजना से अंतर्गत बनाये गये, ११ नलकूप भी राज्य को सौंप दिये गये हैं।

विद्युतीकरण

विद्युत व्यवस्था औद्योगिक विकास का आवश्यक सोपान है। राज्य में एक स्वशासित विद्युत मंडल है जो योजना और विद्युत-विकास का कार्य देखता है। इस हेतु द्वितीय योजना में राज्य के लिए २३.६३ करोड़ रु० की व्यवस्था है। बड़े कार्यों में कोरवा में ६०,००० किलोवाट के विद्युत-केन्द्र की स्थापना और भिलाई इस्पात योजना की विद्युत की आवश्यकता के लिए कोरवा से भिलाई तक १२० मील की डबल सर्किट प्रेषण लाइन निर्मित करना है। एक अन्य प्रमुख कार्य महेन्द्रगढ़ में ६०,००० किलोवाट के विद्युत-केन्द्र की स्थापना है। अन्य योजनाओं में भोपाल, चांदनी और सतना विद्युत-केन्द्रों का विस्तार और गांवों में बिजली की व्यवस्था सम्मिलित है।

नवीन राज्य के गठन के समय प्रति व्यक्ति केवल ३.१७ इकाई बिजली का उपयोग करता था जब कि समस्त भारत का लक्ष्य २५ इकाइयां हैं। आशा है कि द्वितीय योजना के अन्त तक इसका उपयोग १७ इकाइयों तक बढ़ जायगा।

उद्योग

दुर्ग के निकट ११५ करोड़ की भिलाई इस्पात योजना और भोपाल के निकट ४५ करोड़ की हैवी इलेक्ट्रिकल्स योजना मध्यप्रदेश के औद्योगिक विकास की प्रतीक हैं। इस राज्य को प्रचुर प्राकृतिक साधनों का वरदान प्राप्त है

और इन राष्ट्रीयकृत उद्योगों की स्थापना इस तथ्य की सूचक है कि बहुत संभावनायुक्त इस नैसर्गिक संपत्ति के उपयोग के प्रयत्न आरम्भ हो गये हैं। २५ अक्टूबर को भिलाई कारखाने की प्रथम कोक भट्टी की बैटरी चालू की गयी। नियत समय के अनुसार १९५९ के अन्त तक इस्पात का उत्पादन आरम्भ होने की आशा है।

शहडोल में एक कागज-मिल, बिलासपुर, सतना और दुर्ग में एक-एक सीमेन्ट कारखाना और एक एल्यूमूनियम कारखाना आदि कुछ अन्य उद्योग हैं जिनके निजी उद्योग द्वारा संचालन की संभावना है। दूसरी योजना में उद्योगों के लिए ७१७ लाख रु० के व्यय की व्यवस्था है। इस राशि के अन्तर्गत एक विस्तृत और विविधतायुक्त क्षेत्र आता है जिसमें मध्यम तथा लघु उद्योग, ग्राम उद्योग, हस्तकौशल तथा करघा बुनाई उद्योग सम्मिलित हैं। यह निश्चय किया गया है कि प्रस्तावित सूत कताई मिल पश्चिम निमाड जिले में सनावद में स्थापित किया जाए। पावर-अलकोहल डिस्टिलरी तथा एक तेल और सालवेन्ट एक्सट्रेशन कारखाने के लिए भी एक योजना है। जबलपुर, ग्वालियर, इन्दौर और रायपुर की औद्योगिक बस्तियों में से इन्दौर और ग्वालियर की बस्तियों का उद्घाटन भी किया जा चुका है।

शिक्षा

राज्य के गठन के उपरांत समाज सेवाओं, विशेषकर शिक्षा और लोक-स्वास्थ्य के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। एक अविकसित राज्य से शिक्षा और स्वास्थ्य की पर्याप्त सुविधाओं के महत्त्व से सब परिचित हैं। राज्य शासन की शैक्षणिक नीति प्राथमिक शालाओं के बुनियादी ढंग से विस्तार पर बल देती रही है ताकि ६ वर्ष से लेकर ११ वर्ष तक की आयु के बालकों को शैक्षणिक सुविधायें उपलब्ध हो सकें। योजना की पचास प्रतिशत से अधिक रकम प्राथमिक शिक्षा के लिये नियत है। जिस लगन और सूझबूझ के साथ शैक्षणिक नीतियों को सतत रूप से कार्यान्वित किया गया है उसके बहुत अच्छे परिणाम हुए हैं। विगत दो वर्षों में प्राथमिक शालाओं की संख्या ११५५९ से बढ़कर १७५२८ तक पहुँच गयी है। औसतन प्रति पांच वर्गमील तथा प्रति ८८८ व्यक्तियों के लिये एक प्राथमिक शाला की व्यवस्था की जा चुकी है। नवीन प्राथमिक शालाओं की संख्या में ५९६९ की वृद्धि हो गयी है जो लगभग ३७ प्रतिशत है तथा प्राथमिक शालाओं के छात्रों में दो लाख अर्थात् लगभग १३ प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इस प्रकार राज्य में ६ से ११ वर्ष की आयु के बालकों में से लगभग पचास प्रतिशत को शिक्षा सुविधा मिल सकेगी।

माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में शालाओं की संख्या ४०४ से बढ़कर ५७८ हो गयी है। लगभग प्रत्येक तहसील में अब एक माध्यमिक शाला की व्यवस्था हो गई है।

महाविद्यालयीन शिक्षा क्षेत्र में अनेक नवीन महाविद्यालय खोले गये, इन्टर कॉलेजों का उन्नयन किया गया तथा महिलाओं के लिए उच्चतर शैक्षणिक संस्थायें स्थापित की गयीं। जनता द्वारा संचालित शैक्षणिक संस्थाओं को दिया जाने वाला अनुदान ३३ प्रतिशत से बढ़ाकर ५० प्रतिशत तथा भवन निर्माण अनुदान ५० प्रतिशत से बढ़ाकर ७५ प्रतिशत कर दिया गया है। वैज्ञानिक तथा प्राविधिक शिक्षण सुविधाओं में भी वृद्धि हुई है। राज्य के ४ इन्जीनियरिंग कालेजों में ६५५ छात्रों के लिये व्यवस्था की गई और इस प्रकार संख्या में चौगुनी वृद्धि हुई। इसी प्रकार राज्य के पौलीटैक्निक विद्यालयों में ११०० छात्रों के लिये व्यवस्था की गयी। नवीन माध्यमिक शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालय खोले गये। प्राथमिक शिक्षकों के प्रशिक्षण की सुविधाओं में २५ प्रतिशत की वृद्धि की गयी।

पुनर्गठन के पश्चात् राज्य के समक्ष एक विषम कार्य शिक्षा की विभिन्न प्रणालियों, पाठ्यक्रमों तथा प्रतिमानों के समानीकरण का था। यह कार्य योजनाबद्ध रूप में हाथ में लिया गया है तथा इसमें संतोषजनक प्रगति हो रही है। शिक्षा के क्षेत्र में सर्वतोमुखी प्रगति इस राज्य में स्पष्ट प्रतिलक्षित हो रही है।

लोक स्वास्थ्य

लोक स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी विगत दो वर्षों से उल्लेखनीय प्रगति की गयी है। ३८ नवीन चिकित्सा संस्थायें खोली गयीं तथा १००३ शैयायें बढ़ायी गयीं जिनमें क्षय रोगियों के लिये २६३ शैयायें और प्रसव के लिये २३२ शैयायें भी सम्मिलित हैं। इस अवधि में २२ से

अधिक राष्ट्रीय मलेरिया नियंत्रण इकाइयां सक्रिय रहीं तथा १,२६,००० व्यक्तियों की जांच की गई तथा २,२६,००० बच्चों को टीके लगाये गये। स्वास्थ्य मंत्राणी की अध्यक्षता में एक राज्य परिवार नियोजन मंडल भी स्थापित किया गया और परिचारिकाओं, दाइयों तथा अन्य चिकित्सा-कर्मचारियों के लिए प्रशिक्षण की सुविधाओं में वृद्धि की गयी। राज्य कर्मचारी बीमा योजना के अन्तर्गत लगभग १ लाख औद्योगिक मजदूरों का बीमा किया गया है।

आदिवासी कल्याण

राज्य में आदिवासी और अन्य पिछड़े वर्ग जो राज्य की जनसंख्या का एक बड़ा भाग हैं उनके कल्याण की ओर विशेष ध्यान दिया गया है। अनुसूचित क्षेत्रों में दो पृथक् कार्यक्रम कार्यान्वित किये जा रहे हैं जिनमें एक राज्य सरकार और दूसरा केन्द्रीय सरकार का है। इन कार्यक्रमों के लिए दूसरी योजना में १० करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है। राज्य की योजना में सम्मिलित आदिवासी कल्याण योजनाओं के लिए योजना काल में ६॥ करोड़ रु० का प्रावधान है और उसका मुख्य उद्देश्य इन जातियों की शैक्षणिक तथा आर्थिक उन्नति करना है। केन्द्र द्वारा संचालित योजनाओं में जिनके लिए ३॥ करोड़ रु० की व्यवस्था है। १० बहुउद्देश्य जनजातीय खंड, अनेक उत्पादन तथा प्रशिक्षण केन्द्र, आवागमन के साधनों का विस्तार और गृहनिर्माण व्यवस्था आदि सम्मिलित हैं। इस कार्यक्रम में कोरवा में १७ लाख रु० की शिल्पी प्रशिक्षण संस्था की स्थापना भी सम्मिलित है जिसका विशेष उद्देश्य आदिवासियों को प्रावधिक, प्रशिक्षण की सुविधाएं देना है।

हरिजन कल्याण योजनाओं को भी प्रमुख स्थान प्राप्त है, दोनों कार्यक्रमों के अंतर्गत, व्यय के अधिकांश भाग का उपयोग हरिजन बालकों और बालिकाओं को छात्रवृत्तियां देने के लिए किया जा रहा है। शिक्षा कार्य में संलग्न बहुत सी गैर सरकारी संस्थाओं को भी उदारतापूर्ण सहायता अनुदान मिलते रहे हैं। दो वर्षों में इन सब योजनाओं पर लगभग १ करोड़ ३५ लाख रु० व्यय किये गये।

१९५८ के दो विशिष्ट मंत्री!

श्री मोरारजी देसाई, वित्तमंत्री

इस वर्ष श्री देसाई द्वितीय पंचवर्षीय योजना की पूर्ती के लिए भारी मात्रा में विदेशी सहायता प्राप्त करने में सफल रहे।

सरदार स्वर्णसिंह, इस्पात, खान और ईंधन मंत्री

श्री स्वर्णसिंह के मंत्रीकाल में भिलाई, दुर्गापुर और रूरकेला के विशाल इस्पात कारखानों का निर्माण इस वर्ष की ऐसी महत्त्वपूर्ण घटताएं हैं, जो भारत की प्रगति के इतिहास में कीर्तिस्तम्भों की तरह प्रकाशमान रहेंगी।

भूमि-सुधार और अन्न-उत्पादन

एस० वी० रायन, सम्पादक—"कामर्स," बम्बई

ब्रिटिश लोग जब भारत में आये पहले व्यापारी बनकर और बाद में शासक के रूप में। उस समय राजनैतिक दृष्टि से भारत एक राष्ट्र नहीं था। छोटी-छोटी रियासतें यहाँ थीं। जब ब्रिटिश लोगों ने अपने पाँव जमा लिये तो उनके लिये यह सरल हो गया कि वे जमींदार और छोटे-छोटे जागीरदार स्थापित कर अन्त में उन्हें गाँवों का शासक बना दें।

ब्रिटिश लोगों ने जमींदार, जागीरदार तथा दूसरे मध्यवर्ती लोगों का निर्माण केवल राजनैतिक दृष्टि से ही किया था। कुटीर उद्योगों में गिरावट आने के कारण तथा जाति प्रथा के प्रचलित होने के कारण और जनसंख्या में वृद्धि के कारण खेती द्वारा जीविका चलाने पर बहुत बोझ पड़ने लगा जिसके फलस्वरूप गरीबी में वृद्धि होने लगी। जिनके पास जमीन थी उन्हें अपनी उसी परिसंपत्ति पर व्यवसायी अथवा अव्यवसायिक ऋण देने वालों से कर्ज लेना पड़ा। जमीन का स्वामित्व उन लोगों के हाथों में चला गया जिनका व्यवसाय खेती करना नहीं था। जैसे-जैसे समय बीतता गया ग्रामीण लोग जो अपनी जीविका के लिये केवल खेती पर ही निर्भर थे वे भी अपने लड़कों को पढ़ाने लगे। ये पढ़े-लिखे लड़के शिक्षक, वकील, डाक्टर इत्यादि बनने लगे। उन्होंने अपने पिता से जमीन के स्वामित्व का अधिकार ग्रहण किया। संक्षेप में यही हमारे भूमि सुधार की उत्पत्ति की कहानी है। उत्तराधिकार के कानून द्वारा बात और भी बिगड़ गयी, और भी खण्ड होने लगे और अन्त में खेतों के छोटे-छोटे टुकड़े हो गये। लड़ाई के पूर्व जब कांग्रेस की सरकार प्रान्तों में स्थापित हो गई तो भूमि सुधार में बहुत ही थोड़ी प्रगति हुई। लेकिन अर्थशास्त्री और राजनीतिज्ञ कहते थे कि मध्यवर्ती व्यक्ति को समाप्त कर देना चाहिये, जमीन उसी की होनी चाहिये जो जोतने वाला है, असामी को जो समय-समय पर जमीन से हटाया जाता है यह बन्द हो जाना चाहिये। जो अलाभप्रद जमीन के छोटे छोटे टुकड़े हैं उन्हें इकट्ठा कर सहकारी खेती चालू कर देनी चाहिये। वास्तव में कुछ प्रान्तों में विशेषकर बड़ौदा में जहा सौभाग्य से शासक और दीवान कुछ प्रगतिशील विचार के थे कुछ भूमि सुधार हुआ। बंगाल के अकाल की दुर्घटना जिससे लाखों आदमियों की मृत्यु हो गई। लड़ाई के पश्चात् जो अन्न की कमी हो गयी, राशनिंग की जो प्रथा चालू की गई इन सभी कारणों से कृषि उत्पादन के लिये कृषि सुधार की आवश्यकता पर ही बल नहीं दिया गया बल्कि इसके द्वारा इस पक्ष में लोकमत इकट्ठा हो गया।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के साथ ही साथ सन् १९४७ में जब कांग्रेस दल शासन में आ गया तो उसने तत्काल ही भूमि सुधार प्रारम्भ कर दिया। उत्तर प्रदेश और बिहार में जहाँ पर जमींदारी प्रथा प्रचलित थी वहाँ उसे नष्ट करने के लिये पहले ध्यान दिया गया। बंगाल प्रान्त जहाँ जमींदार प्रथा की स्थापना पहले पहल हुई थी वहाँ सबसे अन्त में इसे हटाया गया। लेकिन यद्यपि बंगाल प्रान्त में सबसे अन्त में जमींदारी को हटाया गया फिर भी दूसरी जगहों के अनुभव से लाभ उठाते हुए इसे पूर्णरूप से खत्म किया गया।

यद्यपि प्रथम पंचवर्षीय योजना के तैयार होने के पूर्व भी भूमि-समस्या को हल करने का प्रयत्न किये गये थे फिर भी वास्तविक रूप में समस्त देश के लिये एक राष्ट्रीय नीति को पहली बार प्रथम पंचवर्षीय योजना में ही लागू किया गया है। इसकी सिफारिशें निम्नलिखित थीं—

१—शासन और वास्तविक खेत जोतने वालों के मध्य से मध्यवर्ती लोगों को खत्म करना।

२—लगान कम करने के लिये लगान सुधार नियम बनाना जिससे खेती सुरक्षित रहे और असामी को अवसर मिले कि वह जिस जमीन को जोतना है उसे खरीदे।

३—भूमिधारण का शिखर मूल्य निर्धारित करना और जो फाजिल हो उनका वितरण करना।

४—किसान की दशा में सुधार।

५—खेती की सहकारी व्यवस्था करना जिसका अंतिम उद्देश्य है सहकारी ग्राम व्यवस्था।

जब दूसरी पंचवर्षीय योजना तैयार की जा रही थी तो

इस परिस्थिति की जांच की गई और भूमि सुधार के दो ही उद्देश्य बतलाये गये। १—कृषि उत्पादन के मार्ग में कृषि सम्बन्धी जितनी भी कठिनाई हैं उन्हें दूर करना २—अत्यधिक सुदृढ़ता और उत्पादन के स्तर पर तत्काल क्षेत्रीय अर्थ-व्यवस्था की स्थापना।

दूसरी पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ से जैसे ही अन्न समस्या बिगड़ती गई वैसे ही गत दो वर्षों में भूमि सुधार विषय पर बहुत ही ज्यादा विवाद हुआ। सितम्बर १९५७ में नेशनल डेवलपमेन्ट काऊन्सिल ने ऊपर के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर भूमि सुधार में हुई प्रगति पर विचार किया और वह निम्नलिखित निर्णय पर पहुँची :

१—असामी को हटने से और स्वेच्छा से आत्मसमर्पण करने से पूरा बचाव देना चाहिये।

२—असामी को सरकार के साथ सीधे सम्पर्क में लाना चाहिये और और उन्हें सुविधाजनक शर्तों पर मुआवजा देकर अपनी जमीन का स्वामी बनाना चाहिये।

३—जिन प्रान्तों में जमीन प्राप्ति के ऊपर शिखर मूल्य नहीं निर्धारित किये गये हैं वहाँ इसे स्थापित करना चाहिये।

आज भी कुछ राजनैतिक क्षेत्रों में इस प्रश्न पर असंतोष है कि भूमि सुधार में काफी काम नहीं हुआ है और भविष्य में अन्न की जो गिरती हुई दशा है उसके लिये भूमि सुधार की ही ज्यादा जिम्मेदारी बतलाई जाती है। लेकिन वास्तविकता इसके विपरीत है।

गत दस वर्षों में सभी प्रान्तों में कांग्रेस सरकार ने लगान लेने वाले मध्यवर्ती को हटाकर कृषि सम्बन्धी कर्ज लेने में सुविधा देकर, आसामी द्वारा मालिक को जो लगान दिये जाते हैं उसमें कमी कर, जमीन से हटने पर प्रतिबन्ध लगाकर शांतिपूर्ण ढंग से कृषि में क्रांति की है। विश्व के दूसरे देशों में इस तरह की क्रांति केवल रक्तपात से ही हुई है।

ऊपर के कथन से यह स्पष्ट है कि मध्यवर्तियों और सामन्तवादियों को हटा दिया गया है। यह अनुमान लगाया जाता है कि मध्यवर्ती लोगों का हिस्सा जो देश की उपजाऊ भूमि में ४३ प्रतिशत था वह अब घटाकर ८.५ प्रतिशत कर दिया गया है। इसके अतिरिक्त सभी प्रान्तों में उपयुक्त भूधारण सुधार चालू की गई है।

इस सुधार का मुख्य अंश है (१) लगान में कमी, (२) जमीन में सुरक्षा, (३) जोतने वाले को अधिकार है कि वह मालिक से जमीन खरीद सके, (४) स्वेच्छा से आत्म समर्पण द्वारा हटने के बचाव।

सन् १९५८ के प्रारम्भ में देश के अन्दर परिस्थिति इस प्रकार थी—

(क) पूर्ण उपजाऊ भूमि के ९ प्रतिशत हिस्से में पूर्ण सुरक्षा अर्थात् जमीदार किसी भी प्रकार से जोतने वाले को हटाकर जमीन अपने अधिकार में नहीं ले सकता।

(ख) पूर्ण उपजाऊ भूमि का ३-४ प्रतिशत वह क्षेत्र जिस पर जमीदार का अधिकार है लेकिन इसके अन्दर असल के पास न्यूनतम खेती रहे।

(ग) ९६ प्रतिशत वह क्षेत्र जिसमें जमीदार को ५० एकड़ जमीन से ज्यादा का अधिकार नहीं है, लेकिन उसके अन्दर किसी भी प्रकार की ऐसी गुंजाइश नहीं है जिससे कि आसामी भूमिहीन हो सके।

(घ) १९ प्रतिशत वह क्षेत्र जहाँ असामी को अल्पकालिक सुरक्षा दी गई थी।

वह क्षेत्र जिसमें कुछ भी सुरक्षा नहीं है उसकी राशि बहुत ही कम अर्थात् वह पूर्ण उपजाऊ भूमि के १२ प्रतिशत से ज्यादा नहीं थी।

ऐसे आँकड़े उपलब्ध नहीं हैं जिनसे यह पता चले कि उपज में लगान की कमी अथवा मालिक को जो कैश रेन्ट दिये जाते हैं उससे किसान को कितना लाभ हुआ, लेकिन साधारणतः लगान उपज के ३० प्रतिशत से लेकर ४० प्रतिशत से ज्यादा नहीं है। देश के कुछ भाग में लगान २५ प्रतिशत है जिससे जमीदार को अपनी पूंजी लागत पर। दूसरे प्रतिशत से लेकर ८ प्रतिशत तक लाभ मिलता है। और उससे जो व्यवसाय में पूंजी लगाने में जो खतरा है और उससे जो लाभ होता है उसको ध्यान में रखते हुए कोई भी नहीं कह सकता कि खेती में पूंजी लगाने के लाभ कुछ कम हैं।

वास्तव में भूमि सुधार में और खेतिहर के लिये उचित मूल्य निर्धारित करने में हमें इस बात पर विश्वास करने है

[सम्पदा

लिये अनेक कारण मिलते हैं कि इसका सन्तुलन जमींदार के हिस्से को काफी हद तक कम करके हुआ है और वह इतना ज्यादा हो गया है कि उत्पादन के लिये जहां ध्यान देना चाहिये और जहां ज्यादा पूंजी की जरूरत है उस तरफ से लोगों का उत्साह कम हो गया है। जमींदार के पास जो प्रेरणा थी जिससे वह अच्छी उपज के लिये कृषक को पूरी तरह से मदद करता वह बिल्कुल नष्ट हो गयी। कृषक के पास भी मदद के लिये दूसरा साधन नहीं है। सहकारी समितियों के द्वारा जो उधार दिया जा रहा है उसकी गति धीमी है। इसका परिणाम यह है कि जहां कृषि द्वारा उत्पादन होना चाहिये वहां भूमि सुधार के कारण कृषि के उत्पादन में बाधा पहुँची है। यह महत्वपूर्ण बात है कि यद्यपि देश के अन्दर भू सुधार जल्द-से-जल्द लागू किया गया फिर भी भारतीय कृषि की जो बुनियादी कमजोरी है अर्थात् प्रति एकड़ कम उपज होना वह अभी तक चालू है।

आज इस बात की जरूरत है कि और ज्यादा सुधार करने के बदले हम सभी लाभ को इकट्ठा करें। भूमि सुधार नियम की कार्रवाई में तत्परता से लाभ हो और इन नियमों के द्वारा उत्पादन में जितनी भी बाधाएं हैं उन सबको हम दूर करें। लेकिन कांग्रेस-जन को ज्यादा चिन्ता यह नहीं है कि कृषि उत्पादन बढ़े, बल्कि यह है कि अगले चुनाव में वे कैसे विजयी हों!

जमीन पर उच्चतर दाम रखकर और बाकी को कुछ टुकड़े मुआवजा देकर संपत्तिहरण की चाल चली गई है। यह एक बहुत ही विवाद-ग्रस्त सुधार है। यद्यपि कांग्रेस के बड़े-बड़े नेता इसके लिये वचनबद्ध हैं, फिर भी कांग्रेस दल में इस प्रश्न पर विचार-विभिन्नता है यह सुधार केवल सैद्धान्तिक विचार और राजनैतिक आवश्यकता पर है। यह बलात्कार ऊपर से लादा जा रहा है और आम लोगों की तरफ से इसके लिये कोई भी मांग नहीं है।

जमीन के जितने भी आंकड़े उपउलब्ध हैं। उनसे पता चलता है कि बड़े जमीदारों की संख्या क्या है और उनके पास की जमीन उतनी ज्यादा नहीं है जिसका जमीन वितरण के लिए कुछ महत्व हो। इन सुधारों के लागू करने वालों के द्वारा यह विवाद उपस्थित किया जाता है कि इस सुधार के द्वारा भूमिहीन मजदूरों की समस्या का ज्यादा हल नहीं होगा। यह सुधार केवल लागू किया जाता है कि ग्रामीण क्षेत्र में आय की असमानता दूर हो जाये और ग्रामीण आर्थिक विकास ही जिससे कृषि उत्पादन की क्षमता में सुधार हो।

लेकिन इनमें से कोई भी दावे परीक्षा पर ठीक नहीं उतरेंगे। ग्रामीण आय में जो असमानता है उसे हम कृषि आय कर को लागू कर दूर कर सकते हैं। इस विवाद में जो दूसरा दावा है उस सम्बन्ध में सभी जानते हैं कि ज्यादातर लोग आधुनिक कृषि प्रणाली को नहीं जानते। प्लानिंग कमीशन के प्रोग्राम इमैल्यूशन औरगेनाइजेशन ने यह सामुदायिक विकास और एन० इ० एस० ब्लॉक पर अपने पांचवें विवरण में बतलाया है कि—

जांच करने से पता चलता है कि ज्यादातर खेती करने वाले लोगों को अच्छे बीज की जानकारी नहीं है। किसान लोगों ने अच्छे बीज का प्रयोग, गेहूँ, आलू, धान और ज्वार की खेती के लिए न करके गन्ना और रुई के लिये किया है और इसमें भी ज्यादातर ऐसे खेतीहर हैं जिनके पास बड़ी जमीन हैं। इसलिए यह स्पष्ट है कि जिस खेतीहर के पास बड़ी जमीन का टुकड़ा है वहां उच्च स्तर पर खेती का प्रयोग किया गया है। आज भारतीय कृषि को इस बात की जरूरत नहीं है कि जमीन की जोत पर प्रतिबन्ध लगाया जाय, बल्कि टुकड़ों को इकट्ठा करने में तत्काल प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। इस संबंध में यह याद रखना चाहिए कि जमीन के स्वामित्व पर किसी भी प्रतिबन्ध का परिणाम यह होगा कि जमीन का इकट्ठा करना कठिन हो जाएगा।

अब समय आ गया है कि आर्थिक वास्तविकता के आगे हम सैद्धान्तिक विचार को त्याग दें। और देश का हित जो ज्यादा उत्पादन में ही है उस पर ध्यान दें।

—

बड़ी योजना और छोटी योजनाएं

प्रधान मंत्री श्री नेहरू ने इस विचारधारा में संशोधन करने के लिए जोर दिया है जो कि दैत्याकार सिंचाई तथा विद्युत योजनाओं के प्रति अत्यधिक झुक गई है। उन्होंने इस 'दैत्याकारता की बीमारी' के फैलने के विरुद्ध चेतावनी दी है।

१० हजार छोटी योजनाओं का प्रभाव कुछ बड़ी योजनाओं की अपेक्षा अन्ततोगत्वा बहुत अधिक होता है और वे आधा दर्जन बड़ी योजनाओं की अपेक्षा देश का नक्शा बहुत अधिक बदल सकती हैं। निश्चय ही बड़ी योजनाओं को क्रियान्वित करना होगा परन्तु 'केवल बड़ेपन के लिए ही बड़ी योजनाएं बनाने का विचार' ठीक नहीं है।

इन्जीनियरों को एक समन्वयी दृष्टिकोण बनाना चाहिए जिससे पानी के जमाव व उत्पादित साधनों के अनुपयोग की समस्याएं हल हो सकें तथा देश में उपलब्ध जन-शक्ति का पूर्ण उपयोग किया जा सके।

निर्माण सम्बन्धी व्यय में कमी की जानी चाहिए। यह कमी की जा सकती है। और की जाएगी। निर्माण कार्यों में आज के समय से मेल न खाने वाली ठेकेदारी प्रणाली समाप्त कर देनी चाहिए।

छोटी योजना निर्माण कार्यों में योजनाओं के लाभों के उपयोग में जनता का अधिक तथा निकट सहयोग प्राप्त होगा। जब तक जनता यह महसूस न करे कि ये योजनाएं उनकी हैं तब तक योजनाओं का उद्देश्य पूरा नहीं होगा। मुझे दामोदर घाटी योजना पर एक बार यह जानकर दुःख हुआ था कि मिट्टी ढोने वाले मजदूर यह नहीं जानते थे कि आखिर वे किस लिए कार्य कर रहे हैं।

लागत का मूल्यांकन बड़ी योजनाओं से पैदा होने वाले 'उलट-पुलट' को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए। मेरे ध्यान में बड़े योजना-स्थलों से भारी संख्या में बसे हुए लोगों को हटाने तथा उनके पुनर्वास की समस्या उलट-पुलट की चीजें हैं। परन्तु छोटी योजनाओं में ऐसा नहीं होता। इसके अलावा छोटी योजनाओं के परिणाम भी अधिक शीघ्र मिलते हैं।

उत्तरप्रदेश का बिजली उत्पादन

बिजली उत्पादन और वितरण की दृष्टि से उत्तरप्रदेश देश के उन राज्यों में एक है, जहाँ के राजकीय बिजली घरों में बिजली का उत्पादन और वितरण सबसे सस्ता होता है। इस तथ्य की पुष्टि विद्युत वाहक लाइनों की लम्बाई और ट्रांसमिशन—व्यवस्था में हुई बिजली की हानि सम्बन्धी विभिन्न राज्यों के आंकड़ों के तुलनात्मक अध्ययन से होती है।

उत्तरप्रदेश में विद्युत वाहक लाइनों की लम्बाई सबसे अधिक अर्थात् १२,६८६ मील है। इसके बाद मद्रास का स्थान है, जहाँ ६,८२२.७ मील लम्बी विद्युत वाहक लाइनें हैं।

उत्तरप्रदेश की विद्युत वाहक लाइनें ३१ राजकीय बिजलीघरों और ५,६७० उप बिजलघरों को सम्बद्ध करती है, ५,६०० नल-कूपों को बिजली देती हैं और ३८ जिलों के अन्य २०० नगरों में बिजली की व्यवस्था करती हैं। इस राज्य में लाइनों की सबसे अधिक लम्बाई इसलिए है कि कुल बिजली में से ५० प्रतिशत बिजली नलकूपों को दी जाती है जो सम्पूर्ण प्रदेश में बिखरे हुए हैं। इसके अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्रों और छोटे-छोटे नगरों में बिजली की व्यवस्था करने के कारण विद्युत वाहक लाइनों का विस्तार और भी अधिक किया गया है। वर्ष १९५७-५८ में राजकीय बिजलीघरों में उत्पादित कुल ४२ करोड़ यूनिटों में से २१ करोड़ से अधिक यूनिट बिजली का उपयोग केवल नलकूपों ने ही किया।

अधिक लम्बी विद्युत वाहक लाइनों की एक असुविधा यह है कि जितनी अधिक लम्बी ये लाइनें होंगी, उतनी अधिक विद्युत शक्ति का अपव्यय होगा। फिर भी उत्तरप्रदेश में अपव्यय का प्रतिशत २१.५ है, जबकि मद्रास में सन् १९५५-५६ में ही १०,००० मील लम्बी बिजली की लाइनों पर १७.७ प्रतिशत बिजली अपव्यय होती थी। यह अपव्यय १२,००० मील लम्बी बिजली की

लाइनों पर २१ प्रतिशत बैठेगा।

ट्रांसफॉर्मर पर होने वाली क्षति एक तो लोहे से और दूसरी तांबे से हुआ करती है। लोहे से होने वाली क्षति तब तक अबाध गति से होती रहती है जब तक कि ट्रांसफोर्मर, सप्लाई केन्द्र से सम्बध रहता है। तांबे से होने वाली क्षति लगभग विद्युत वाहक लाइन पर भार के अनुपात से होने वाली क्षति के समान होती है।

उत्तरप्रदेश और मद्रास के अतिरिक्त अन्य राज्यों में बिजली की लाइनों पर होने वाली क्षति इस प्रकार है :— आंध्र—२१ प्रतिशत, पंजाब—२५ प्रतिशत, केरल—२४ प्रतिशत, मैसूर १६—प्रतिशत, राजस्थान—१८ प्रतिशत और दिल्ली—१६.६ प्रतिशत। इनमें से किसी राज्य में भी बिजली की लाइनों की लम्बाई उत्तरप्रदेश की एक चौथाई भी नहीं है।

भूमि की शक्ति का क्षय

खेती के लिए सबसे बड़ा खतरा है मिट्टी के संरक्षण और पानी के निकास का। करीब ४ मास बरसात के माने जाते हैं, लेकिन अनुभव से देखा गया है कि दो मास में ही इतनी वर्षा हो जाती है कि उससे सारी खेती बरबाद होने लगती है। उसके आधार पर पूरा साल बिताना पड़ता है। नाइट्रोजन के अभाव की पूर्ति करने के पहले अभाव कैसे होता है, यह सोचने की बात है। लगातार ४-५ इन्च वर्षा हो तो एक एकड़ में २०६० मन मिट्टी बह सकती है; जिसमें २५० पौंड नाइट्रोजन, ८२॥ पौंड फास्फोरस २१६२॥ पौंड पोटाशियम्, इन सबका मूल्य रुपयों में जोड़ें, तो एक एकड़ में कुल ३६१५ रु० की ये सब चीजें हैं।

भारत में ३७ इन्च वर्षा होती है जिसमें से २२ इन्च पानी यों ही जमीन पर बहकर जाता है। १२॥ इन्च
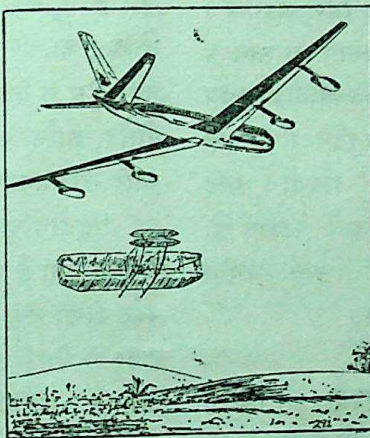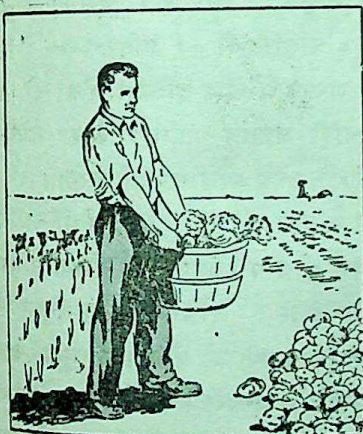
भूमि और मनुष्य

एक वयस्क व्यक्ति के लिए तीन एकड़ कृषि के योग्य भूमि की आवश्यकता है, जबकि वर्तमान औसत प्रति व्यक्ति केवल एक एकड़ है। संसार की भूमि के क्षेत्रफल के केवल दसवें भाग में खेती की जाती है।

वायुयान : तब और अब

यह १६०३ की बात है कि राइट ब्रदर्स ने पहला वायुयान तैय्यार किया था। यह वायुयान केवल १२० फुट उड़ सका था। और आज के आधुनिक वायुयान बिना ठहरे एक साथ १०,००० मील तक उड़ सकते हैं। यह उड़ान पृथ्वी की गोलाई के आधे के बराबर है।

चन्द्रमा और मोमबत्ती

चन्द्रमा के भूमि पर आने वाले प्रकाश के विषय में वैज्ञानिकों का अनुमान है कि पूर्ण विकसित चन्द्रमा का प्रकाश एक गज की दूरी पर जलती हुई मोमबत्ती के प्रकाश के बराबर तेज़ दिखलाई पड़ता है।

पानी जमीन के अन्दर बह कर जाता है। बाकी सिर्फ २॥ इन्च पानी फसल को मिलता है। कृषि के निरीक्षण के निमित्त में लगभग सारे भारत में घूमा। लगातार २० साल से कृषि के साथ मेरा निकट संबंध है। ८ साल से बरसात का रिकार्ड रखता हूँ, औरों का रिकार्ड भी देखता हूँ। बरसात के समय खेत में जाकर निरीक्षण करता हूं। मिट्टी का संरक्षण और पानी का निकास नहीं के बराबर है। जहां कुछ है, वहां पड़ौसी किसान से अक्सर रुकावट और झगड़ा बना रहता है।

'कंटूर बंडिंग' (घेरेदार बांध) से नाम मात्र मिट्टी का संरक्षण हो सकता है, लेकिन विधिपूर्वक पानी का निकास नहीं होता है और काश्त के लिए असुविधा रहती है। लेकिन यही 'कंटूर बंडिंग' के विचार किसान पर जबरदस्ती लादे जा रहे हैं। धान के खेत में तो पानी का निकास अलग से नहीं होता। एक खेत का पानी दूसरे में, दूसरे का तीसरे में, तीसरे का चौथे में—इस प्रकार एक खेत का पानी कई खेतों में होकर नदी-नालों में मिल जाता है। जब तक प्रत्येक खेत के लिए पानी के निकास का स्वतन्त्र मार्ग नहीं बनेगा, तब तक कृषि की उन्नति होना अशक्य है। चारों ओर अनेक खेतों के साथ संबंध रहने से किसान अपने खेत के पानी का निकास नहीं कर सकता। यदि मजबूरन पड़ौस के खेतों के पानी का निकास रोकता है, तो उससे पड़ौसियों के साथ झगड़े होते हैं। अतः जमीन की वर्तमान रचना को ही बदलना होगा।

जमीन के अन्दर १२॥ इन्च पानी बहता है, जिससे फसल बरबाद होती रहती है। बरसात के समय काश्त नहीं की जा सकती। हरी खाद के पौधे पनप नहीं सकते। सारी खाद एक ही साल में खतम हो जाती है। २० साल से जमीन की बरबादी देखकर दिल दर्द से भरा है। बरसात के समय खेत में चला जाता हूं, तब मिट्टी को बहते हुए देखकर बेचैनी की सीमा नहीं रहती। स्वतन्त्र भारत में जमीन को जो क्षति पहुँची है, सैंकड़ों साल मेहनत करेंगे, तब भी उसकी क्षति पूर्ति नहीं हो सकती। 'मेरी-तेरी के झगड़े में जमीन पर अत्याचार हुआ है और हो रहा है। यह सचमुच बहुत बड़ा अपराध है। सरकार का ध्यान जितना कृषि-विकास की ओर होना चाहिए, उतना नहीं है।

भारत हर साल लाखों टन अनाज विदेश से मंगाता है, पर अपने देश के अन्न का संरक्षण नहीं करता। इस हालत में हमारी कृषि का विकास कैसे हो ?

—गोविन्द रेड्डी

सोवियत संघ के खनिज द्रव्य

पिछले कुछ वर्षों में वहां नये खनिज द्रव्यों का पता लगाया गया है, उदाहरणार्थ, १९१७ में कोयले की खानों के क्षेत्र में सोवियत संघ का दुनिया में पांचवां स्थान था। आज सोवियत संघ का पहला स्थान है और इसके सिवाय दुनिया में सर्वेक्षित कोयला-सम्पत्ति का ५० प्रतिशत से अधिक सोवियत संघ में है। कांस्क-आर्चिस्क, दक्षिण तुंगुस्का, पेचोरा और लेना नदियों के क्षेत्र में कोयले की विशाल निधि पाई गई है। कुसर्क और बेलगोरोड क्षेत्रों में खनिज लोहे की दुनिया में उत्कृष्टतम खानें हैं। इस खनिज लोहे में धातु का अंश ६० प्रतिशत से ६५ प्रतिशत तक है। यह नदी क्षेत्र न केवल मध्यवर्ती और दक्षिणी क्षेत्रों को वरन् पोलैंड, जर्मन जनवादी जनतंत्र, हंगरी और रूमानिया आदि लोकजनतंत्रों को कच्चे माल सप्लाई करेगा।

'द्वितीय वाकू' के पास विस्तृत तेल क्षेत्रों का पता लगाया गया है। यह क्षेत्र पश्चिम से पूर्व वोल्गा से यूराल पर्वत श्रेणी तक तथा उत्तर से दक्षिण यूराल-स्थित पेर्म शहर से लेकर आस्त्राखान तक जो वौल्गा के मुहाने पर है, फैला है। उजबेकिस्तान के बुखारा जिले में गैस की अनन्त निधि पाई गई है। उजबेकिस्तान और तुर्कमेनिया के मध्य-एशियाई जनतंत्रों में तेल और गैस की संचित निधि अरब देशों के समान है। यह मानने को हर आधार मौजूद है कि साइबेरिया और दूरपूर्व में गैस और तेल की प्रभूत निधि पाई जाएगी। आगामी पन्द्रह वर्षों में देश में तेल उत्पादन १९७२ तक अनुमानतः पैंतीस या चालीस करोड़ टन तक पहुँच जाएगा।

मैंगनीज खनिज धातु (दुनिया में इस खनिज धातु की कुल निधि का ९० प्रतिशत सोवियत संघ में है), तांबा, सीसा, जस्ता, निकल, वौक्साईत, तुंगस्तेन और पारे की

[सम्पदा

सर्वेक्षित संचित निधि की दृष्टि से सोवियत संघ का दुनिया में प्रथम स्थान है।

याकूत की हीरक खानें अफ्रीका की विख्यात हीरक खानों की तुलना में कहीं विशाल हैं।

रुई की खपत में कमी

सितम्बर में भारतीय रुई की खपत लगभग ३,८२,-४६६ गांठ को रही। निस्संदेह यह उत्साहवर्द्धक है; वास्तव में इससे पूर्व के मास (अगस्त, १९५८) में भारतीय रुई की ३,७०,३६० गांठों की खपत हुई थी। और गत फरवरी मास से अब तक के जो मासिक आंकड़े उपलब्ध हुए हैं उनका अध्ययन करने से प्रतीत होता है कि सितम्बर की खपत सर्वाधिक है। परन्तु गत वर्ष के सितम्बर मास में भारतीय रुई की जो खपत हुई थी वह ३,९६,१२५ गांठ की थी जो इस वर्ष की आलोच्यावधि की खपत से बहुत कम है। इसके अतिरिक्त सितम्बर, १९५८ में कुल ४,२५,०५३ गांठ रुई की खपत हुई, जो सितम्बर, १९५७ में ४,४८,४३५ थी। इसका मुख्य कारण यह है कि विदेशी रुई की खपत में कमी आई है। उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार सितम्बर १९५८ में कुल ४२,५५४ गांठ विदेशी रुई की खपत हुई जबकि सितम्बर १९५७ में इसकी खपत ४६,३१० गांठ थी। अगस्त १९५८ में भी ४४,८७३ गांठ विदेशी रुई की खपत हुई।

अखबारी कागज की खपत

देश में दूसरे महायुद्ध के पहले अखबारी कागज की खपत लगभग ३७,००० टन थी। आजकल वह ८०,००० टन के करीब है और अनुमान है, कि १९६०-६१ तक १,००,००० टन हो जायगी। सन् १९५७ में विदेशों से ५५,६४९ टन अखबारी कागज मँगाया गया था।

मई १९४१ में पहला अखबारी कागज नियंत्रण कानून बना। इसके जरिये अखबारी कागज की खरीद, बिक्री, आयात और अखबारों के अलावा अन्य कामों के लिये उपयोग करने पर पाबंदी लगा दी गयी। मई १९४२ में दूसरा अखबारी कागज नियंत्रण कानून बनाया गया, इसके जरिये अखबारी कागज की खपत नियंत्रित करने के लिए अखबारों के पृष्ठों की संख्या और कीमत निर्धारित कर दी गयी। सन् १९४३ में अखबारों के वितरण पर भी नियंत्रण लगा दिया गया। अप्रैल १९४३ से जुलाई १९४६ के बीच अखबारों पर पृष्ठ संख्या सम्बन्धी प्रतिबन्ध विशेष तौर पर

कड़े रहे, जो १९४९ में हटाये गये। अगस्त १९४९ से अखबारी कागज के आयात के लिये खुले लाइसेन्स दिये जाने लगे। अक्टूबर १९५७ में वित्त मंत्रालय के मितव्ययिता-मंडल की बैठक में यह निर्णय किया गया कि विभिन्न अखबारों को उनके आकार-प्रकार के अनुसार अखबारी कागज दिया जाय।

उक्त निर्णय के अनुसार वाणिज्य, उद्योग और सूचना तथा प्रसार मंत्रालयों के कतिपय अधिकारियों को मिलाकर एक विभाग खोला गया। इसको यह जानकारी इकट्ठी करनी थी कि प्रत्येक अखबार की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए विदेशों से कितना अखबारी कागज मँगाना पड़ेगा।

अखबारी कागज बनाने वाली देश की एकमात्र मिल-नेपा मिल में १९५५ में उत्पादन आरम्भ हुआ इसके पहिले देश पूर्ण रूप से विदेशी अखबारी कागज पर निर्भर करता था। उस साल वहां २,९९३ टन कागज बनाया गया। सन् १९५७ में यहां १४,४८९ टन अखबारी कागज बनाया गया।

दूसरी आयोजना में देश में अखबारी कागज की एक और मिल खोलने की व्यवस्था है। इसमें हर साल ३०,००० टन अखबारी कागज बनाया जा सकेगा। अखबारी कागज की दूसरी मिल आंध्र प्रदेश के शक्कर नगर में खोली जायगी। इससे यह लाभ होगा कि निजाम शूगर फैक्ट्री में बहुतायत में मिलने वाली गन्ने की खोई काम में लाई जा सकेगी।

देश में अखबारी कागज बनाने के लिये यहां उपलब्ध कच्चे माल का ही उपयोग करने की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है।

चीन में लोहे का उत्पादन

दक्षिण चीन के क्वांगसी चुआंग स्वायत्त प्रदेश की लुचाई काउंटी ने चौबीस घण्टों में २,०७,२४३ टन कच्चा लोहा तैयार किया है। इसके लिए उसने लोहा गलाने की जो भट्टियां प्रयुक्त की थी उनका डिजाइन स्थानीय तौर पर तैयार किया गया था। अधिक लोहा और इस्पात तैयार करने के देश-व्यापी आंदोलन में यह एक काउंटी का सबसे अधिक दैनिक उत्पादन है। उसी दिन इस काउंटी ने २,८८,१३९ टन सिंटर लोहा तैयार किया। विशिष्ट आयोगों ने इसकी लोहे की पैदावार की जांच और परीक्षा की है जिससे साबित हो गया है कि यह कच्चा लोहा गुण में राज्य द्वारा निर्धारित प्रतिमानों के अनुरूप है।

पहले लोहे और इस्पात के उत्पादन के महत्व के संबंध में देशव्यापी बहस चलायी गयी जिसके बाद, कुछ ही दिनों में इस्पात और लोहे के उत्पादन में भाग लेने वाले लोगों की संख्या ४६,००० से १,१०,००० हो गयी। साथ ही पड़ौस की काउंटियों से २७,००० आदमी उनके काम में हाथ बटाने आये।

छः मास की प्रगति

सोवियत संघ की अर्थव्यवस्था सोवियत सत्ता के ४१वें वर्ष में तूफानी गति से विकसित हो रही है। सन् १९५८ के प्रथम ६ मास का औद्योगिक उत्पादन गत वर्ष की प्रथम छमाही की तुलना में १०.५ प्रतिशत अधिक हुआ और योजना १०४ प्रतिशत अधिक पूरी हुई। सोवियत संघ में १९५८ के प्रथम छः मासों में औद्योगिक उत्पादन में और भी अधिक तरक्की एवं वृद्धि हुई है, यह नीचे के तुलनात्मक विवेचन से स्पष्ट हो जाता है। इस्पात और कच्चा लोहा एवं धातु के पत्तर का उत्पादन १९५० के पूरे वर्ष के उत्पादन के बराबर रहा। कोयले का उत्पादन १९४९ के साल के समूचे उत्पादन से भी अधिक हुआ।

बिजली का उत्पादन १९५१ के पूरे वर्ष के उत्पादन से भी आगे बढ़ गया। ट्रैक्टरों का उत्पादन लगभग १९५३ के पूरे वर्ष के उत्पादन के बराबर रहा।

सोवियत संघ इन ४० वर्षों में बिना किसी संकट और अभाव के अबाध गति से औद्योगिक उत्पादन में प्रगति करता रहा है।

लाभ, मजदूरी और औद्योगिक कार्यक्षमता

प्रो० विश्वम्भरनाथ पाण्डेय, एम० ए०

श्री पाण्डेय 'सम्पदा' के सुपरिचित लेखक हैं। प्रस्तुत लेख में आपने लाभ, मजदूरी और औद्योगिक कार्यक्षमता के पारस्परिक सम्बन्ध पर तटस्थतापूर्वक दृष्टिपात किया है।

इस बात का संकेत हम कर चुके हैं कि समाजवाद में उत्पादन कार्य के मूल में लाभ की प्रवृत्ति का अभाव होगा; पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था के समर्थकों द्वारा यह आशंका उठायी जाती है कि समाजवादी उत्पादन प्रणाली की कार्यक्षमता अपेक्षाकृत कम होगी। उनके अनुसार लाभ का पुरस्कार उत्पादन की कार्य कुशलता के लिये अनिवार्य तत्व है। अतः जिस किसी भी व्यवस्था में इस तत्व का अभाव होगा वह कम कुशल और कम सक्षम होगी। इस आशंका का उत्तर ऊपरी दृष्टि से समाजवादी कभी-कभी यह दे डालते हैं कि चूंकि लाभ उपभोक्ताओं को नुकसान पहुँचा कर ही प्राप्त किया जाता है इसलिए यदि समाजवादी व्यवस्था में इसका अभाव हो जाता है तो यह कोई भयानक बात नहीं। लेकिन सत्य यह है कि प्रत्येक उद्योग को लाभ होना ही चाहिए। पूंजीवादी अथवा समाजवादी कोई भी उद्योग घाटे पर नहीं चल सकता। प्रश्न यह है कि इस लाभ को कौन प्राप्त करता है? पूंजीवाद में लाभ (कुल उत्पादन लागत और कुल विक्रय मूल्य का अन्तर) कुछ पूंजीपतियों की पाकेट में जाता है और समाजवाद में राज्य को प्राप्त होता है जो पुनः जक-हित पर खर्च कर दिया जाता है। अतः इस लाभ और उत्पादक कार्य क्षमता के प्रश्न पर और भी गम्भीरतापूर्वक विचार करने की आवश्यकता है।

कहा जाता है कि उद्योगों का अधिकार (स्वामित्व) और नियंत्रण दोनों ही जब एक ही व्यक्ति के हाथ में होते हैं तब कार्य के लिए अधिक स्वतंत्रता, नये परीक्षणों के लिए अधिक क्षेत्र और तत्परता, नये उद्योगों को शुरू

— लेखक —

करने का अधिक बलवान साहस और बदलती हुई परिस्थितियों के साथ व्यावसायिक नीति की द्रुततर स्थिति स्थापकता प्राप्त होती है। जो समाजवादी उद्योगों के लिए उपलब्ध होना असंभव नहीं तो बहुत कठिन है। सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री श्री पीगू का कहना है कि व्यावसायिक प्रतिभा और नूतन कार्य की चेष्टायें निजी उद्योगों का एकाधिकार हैं। इसीलिए अल्फ्रेड मार्शल ने कहा है कि जिन औद्योगिक क्षेत्रों में सतत् रचनात्मक बुद्धि और नूतन कार्य-चेष्टाओं की आवश्यकता होती है। सरकारी अंचल का प्रसार पूर्णतः असामाजिक माना जाना चाहिए क्योंकि इन क्षेत्रों में राष्ट्रीयकरण से ज्ञान और उन नये विचारों की वृद्धि में व्यवधान उपस्थित होता है जो सामाजिक सम्पत्ति का ही एक महत्वपूर्ण स्वरूप हैं। मार्शल की इस उक्ति में सत्यता है किन्तु इस सत्यता में पुरानापन है। आज तो निजी उद्योगों का संचालन भी बड़ी-बड़ी कम्पनियों द्वारा होता है और उनके व्यवस्थापकों को भी अपने मालिकों से पग-पग पर

उसी प्रकार आदेश और स्वीकृतियां प्राप्त करनी होती हैं जिस प्रकार सरकारी उद्योगों के प्रबन्धकों को सरकार से। अतः श्रीमान् और श्रीमती वेब्स ने कहा है कि मार्शल की उपरोक्त उक्ति आज से एक सौ वर्ष पहले सत्य हो सकती थी जब कि उत्पादन कार्य छोटे पैमाने पर होता था और मालिक अपना प्रबन्ध स्वयं देखता था।

कार्य-क्षमता के सम्बन्ध में सामाजीकरण के विरुद्ध दूसरी आपत्ति यह उठायी जाती है कि सरकारी कोष एक-एक पाई के लिए कंजूसी करता है; क्योंकि इसकी एकाउन्टेन्ट जनरल द्वारा कड़ी जांच की जाती है। अतः आवश्यकतानुसार अधिक खर्च करना उसके स्वभाव के विरुद्ध होता है चाहे इससे उत्पादन की क्षमता को ही क्यों न आघात पहुँचे। किन्तु भूमि पुनरुद्धार, वैज्ञानिक अनुसंधान कार्य तथा आवागमन एवं परिवहन के साधनों जैसे रेल, वायुयान आदि के क्षेत्र में सरकारी उद्योगों ने जो श्रेष्ठता प्राप्त की है वह स्वयं इस प्रकार की आपत्तियों का खण्डन है।

इसके अतिरिक्त जैसा कि प्रो० बीचम ने कहा है सरकारी उद्योगों की कार्य कुशलता का एक बड़ा शुभ संकेत है। माना कि राष्ट्रीय उद्योगों में भी उद्योगों के शासन में मजदूर वर्ग का कोई हाथ नहीं होगा किन्तु कुछ और नहीं तो कम से कम नागरिक रूप में वे अपने को उद्योगों का मालिक समझेंगे और उत्पादन कार्य में अधिक योगदान देंगे।

भौगोलिक संयोजन वा संश्लिष्टीकरण (Geographical Integration) और कार्य-क्षमता के प्रश्न भी परस्पर सम्बद्ध हैं। समाजवाद में एक कार्य के लिए अनेक प्रतियोगी कंपनियों की अपेक्षा नहीं होगी। अतः पारस्परिक प्रतियोगिता में जो शक्तियों व साधनों का अपव्यय होता है वह समाजवाद में नहीं होगा। उदाहरणार्थ समाजवाद में रेलवे कम्पनियों की विविधता नहीं होगी। देश के सम्पूर्ण भाग पर सरकारी लाइनें ही होंगी। अतः सरकार को वृहत् उत्पादन का आन्तरिक और वाह्य आर्थिक लाभ (Internal and ex-ternal economics of the large-scale production) सहज ही प्राप्त होंगे जो सरकारी उद्योगों की कार्यक्षमता की श्रेष्ठता के सबूत हैं।

यह कहा जाता है कि चूंकि पूंजीवाद में प्रतियोगिता होती है अतः प्रत्येक औद्योगिक प्रतिष्ठान 'आदर्श आकार' (Optimum size) का होता है और अपना उत्पादन उस बिन्दु तक करता है जहां औसत उत्पादन लागत न्यूनतम होता है। किन्तु पूंजीवाद की यह स्थिति केवल पूर्ण प्रतियोगिता की अवस्था में ही सम्भव है जो वस्तुतः एक कल्पना है। पुंजीवाद में व्यवहार में प्रायः एकाधिकार और अपूर्ण-प्रतियोगिता ही पाई जाती है जहां उत्पादन जान-बूझ कर आदर्श बिन्दु से नीचे इसलिए रखा जाता है कि उत्पादकों को नफा अधिक हो।

इसके अतिरिक्त जन-स्वास्थ्य (जैसे औषधि-निर्माण) जनोपयोगी (जैसे गैस, बिजली, पानी आदि) और राष्ट्रीय सुरक्षा (अस्त्रशस्त्रादि) सम्बन्धी अनेक उद्योग हैं, जहां लाभ को उद्योगों के संचालन का न तो आधार माना जा सकता है और न कार्यक्षमता का मापदण्ड। किसी कारण से यदि सरकारी उद्योगों में पेनिसिलिन के तत्वों का अनुपात असन्तुलित हो जाय और वह जांच से अनुपयुक्त अथवा हानिकारक सिद्ध हो तो समाजवाद में उसे नष्ट किया जा सकता है, किन्तु पूंजीवाद में नहीं। पूंजीवाद में तो खरिया का चूर्ण पेनिसिलिन के रूप में और रंगीन मिट्टी के तेल को ब्राह्मी-तेल के रूप में बेचना व्यावसायिक बुद्धि की श्रेष्ठता मानी जा सकती है। उसी प्रकार गैस, बिजली, पानी, आवागमन और संदेशवाहन अस्त्रशस्त्रादि के निर्माण आदि के उद्योग आदि निजी उद्योगों के आधीन कर दिए जायं तो उत्पादक पूंजीपति मनमाना मूल्य वसूल करेंगे और उनके मूल्य को ऊपर उठाने के लिए इन उद्योगों के उत्पादन की पूर्ति मांग से सदा कम रक्खेंगे।

अस्तु सब मिलाकर कार्यक्षमता के प्रश्न पर भी हमारा निर्णय समाजवाद के पक्ष में ही होता है। किन्तु एक बहुत गम्भीर तर्क पूंजीवाद के पक्ष में यह हो सकता है कि पूंजीवाद में अकुशलता और अकर्मण्यता को दण्ड तथा कुशलता प्रतिभा और परिश्रम का पुरस्कार स्वतः ही प्राप्त हो जाता

है। पर यह तो तभी होगा, जब पूंजीवाद में पूर्ण प्रतियोगिता हो। सत्य तो यह है कि पूंजीवाद में प्रतियोगिता स्वयं प्रतियोगिता का नाश और व्यावसायिक संघों की स्थापना करना चाहती है। इस प्रकार अन्ततोगत्वा पूंजीवाद पूर्ण प्रतियोगिता नहीं अपितु एकाधिकार अथवा अपूर्ण प्रतियोगिता की अर्थव्यवस्था का रूप ग्रहण कर लेता है।

इस प्रसंग में सामाजीकृत उद्योगों के प्रबन्ध में आधुनिक निगमों का उल्लेख विशेष महत्त्वपूर्ण है। समाजवाद में कहा जाता है कि लाल फीताशाही (Red tapism) और नौकरशाही (Bureaucracy) के कारण स्थिति स्थापकता और नीति की शीघ्रता नहीं होती। किन्तु आधुनिक नियमों से ये दोष दूर हो जाते हैं। नियम पूंजीवाद और समाजवाद के व्यावसायिक सूत्रों के समन्वय होते हैं।

प्रेसिडेंट रूज़वेल्ट के शब्दों में नियम राजकीय शक्ति के परिधान से मन्डित और निजी उद्योगों की स्थिति-स्थापकता और प्रेरणा (Incentive) से युक्त होते हैं।

अभी तक हमने उद्योगों की कार्यक्षमता पर उनके प्रबन्ध की दृष्टि से विचार किया है किन्तु उत्पादन की कार्यक्षमता का प्रश्न मजदूर वर्ग की कार्य-प्रेरणा और क्षमता से भी घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध है। मशीनों के साथ कार्य-प्रेरणा का कोई प्रश्न नहीं है किन्तु श्रमिकों के साथ समस्या भिन्न है। मशीनों का कार्य समय के विस्तार पर अवलम्बित है किन्तु मनुष्य के साथ कार्य का सम्बन्ध समय के विस्तार और कार्य प्रेरणा की तीव्रता दोनों से सम्बद्ध है। अतः कार्यप्रेरणा तीव्र हुई तो कार्य अधिक होगा और यदि कम हुई तो बराबर घंटे कार्य करने के बावजूद भी कार्य कम होगा। पूंजीवाद में मजदूरों की कार्यप्रेरणा कम होती है क्योंकि वे ऐसा सोचते हैं कि उनके विशेष रूप से सचेष्ट और कार्यरत होने का अर्थ केवल यही होगा कि उनके विरोधी पूंजीपतियों के वर्ग का लाभ तो बढ़ेगा पर उनकी मजदूरी वही रहेगी। इस प्रकार की श्रमिक मनोवृत्ति पूंजीवादी उत्पादन प्रणाली को सकारात्मक और नकारात्मक (Positive and Negative) दोनों ही रूप से आघात पहुँचाती है। सकारात्मक आघात तो औद्योगिक अभियोग (Disputes) और अशान्तियों (Disturbances) के द्वारा होता है। और नकारात्मक आघात श्रमिक वर्ग की कार्य-प्रेरणा को घटाकर होता है।

इसके विपरीत सामाजिक उद्योग इन दोनों ही आघातों से मुक्त होंगे। मजदूरों की कार्य-प्रेरणा भी अधिक होगी। और औद्योगिक अभियोग (Industriel-disputes) तथा अशांतियां भी कम होंगी। समाजवादी व्यवस्था में मजदूर नवीन राष्ट्रीय चेतना और देशभक्ति की भावना से प्रेरित होकर अपने कार्य में अधिक बल, प्राण और योग उड़ेल सकेगा। अतः राष्ट्रीयकृत उद्योगों की कार्यक्षमता, श्रमिकों की कार्यक्षमता के क्षेत्र में भी निस्संदेह निजी उद्योगों से श्रेष्ठ होगी। श्रमिकों की कार्यक्षमता के सम्बन्ध में समाजवाद की श्रेष्ठता घोषित करते हुए श्री पीगू ने भी कहा है कि—जहां तक श्रमिकों की कार्यक्षमता का प्रश्न है समाजवाद को असंदिग्ध रूप से पूंजीवाद से अधिक अङ्क दिए जाने चाहियें।

—

कृषि की मौलिक समस्या : उपजाऊपन

श्री टी० माल्त्सेव

रूसी कृषि विशेषज्ञ का यह लेख हम भारतीयों को अपनी कृषि की एक महत्वपूर्ण मौलिक समस्या को समझने और उसका समाधान पाने के लिए प्रेरित करता है।

नेक वैज्ञानिकों का, यह मत है कि मिट्टी की उर्वरा-शक्ति वार्षिकी फसलों के लगातार बोते रहने पर नष्ट हो जाती है, अतः उसे समय-समय पर फिर से पहिले जैसा बनाते रहना जरूरी है।

कृषि-विज्ञान ने जटिल प्रक्रियाएं प्रस्तुत की हैं जो भूमि की उर्वरता बढ़ाती हैं और 'घास-भूमि' पद्धति का निर्माण करती हैं। इस पद्धति में मुख्य बात यह है कि इसके अनुसार वर्ष में बोई जाने वाली फसलों के स्थान पर समय-समय पर सदाबहार घासें बोई जाती हैं। घास-भूमि कृषि-सिद्धान्त के अनुसार सदा बहार घास मिट्टी को जेव तत्वों से भर देती हैं, और उसके गठन का निर्माण करती हैं, जिससे वह मिट्टी पहले से ज्यादा उर्वर बन जाती है। इसकी तुलना में वार्षिकी घास मिट्टी के जेव तत्वों को और गठन को बर्बाद कर देती हैं, जिससे उसमें से काफी उपजाऊपन निकल जाता है।

वार्षिकी पौधे और उपजाऊपन

हमारी सम्मति में यह सिद्धान्त कि केवल सदाबहार घास ही जेव तत्व से मिट्टी को उर्वर बनाने की क्षमता रखती है और वार्षिकी घास में ऐसी क्षमता नहीं है, कृषि विज्ञान की उन्नति में और क्रियात्मक खेतीबारी के मार्ग में गम्भीर बाधा खड़ी करने वाला है। हमारा विश्वास है कि वार्षिकी पौधों द्वारा मिट्टी के उपजाऊपन को बढ़ाना कृषि-विज्ञान की सबसे प्रमुख समस्या है। अतः हमारा निश्चित मत है कि वार्षि की पौधों में खास हालतों में, ऐसी चीजें होती हैं जो मिट्टी के जेव तत्वों को समृद्ध करती हैं, मिट्टी के ढांचे को को बनाती हैं, और इस तरह मिट्टी की उर्वराशक्ति को बढ़ाती हैं।

पहली दृष्टि में ऐसा लगेगा कि सदाबहार घास का निर्माणात्मक कार्य, वार्षिकी घास का विनाशात्मक कार्य है। सदाबहार घास कभी न जुती भूमि पर उगती है। उससे मिट्टी का गठन बनता है और वह मिट्टी बहुत अधिक उपजाऊ हो जाती है। किन्तु ज्यों ही कभी न जुती जमीन पर हल चल जाता है और उस पर वार्षिकी फसल की बुआई शुरू हो जाती है (यह काम प्रायः वार्षिकी हल चलाने के साथ होता है) तो मिट्टी का गठन अलग-अलग होने लगता है और स्पष्ट रूप से उसकी उर्वराशक्ति घट जाती है। खोये गठन की यह हलजुती जमीन जब खाली छोड़ दी जाती है अथवा जैसे कि किसान कहते हैं कि 'जब जमीन को कुछ आराम मिल जाता है' तो फिर उसमें उसकी पहली उर्वराशक्ति लौट आती है। यह इस उसूल को साबित करता जान पड़ता है कि वार्षिकी फसलों के स्थान पर समय-समय पर सदाबहार किस्म की घासों को उगाते रहना चाहिए। किन्तु यह न तो विवादरहित ही है और न ही अनिवार्य है। कभी न जुती भूमि को जोतने पर उसके उपजाऊपन में जो क्रमशः कभी आया करती है वह जैसा कि हम आगे जाकर देखेंगे, वास्तव में वार्षिकी पौधों के कारण नहीं, किन्तु जमीन पर बुवाई करने के ढंग के कारण आया करती है।

शस्यावर्तन-विभाजन सिद्धान्ततः गलत है

हमारे ख्याल में फसल के चक्र को मिट्टी के गठन की बर्बादी के, और मिट्टी के गठन के अपने पूर्व रूप में लौट आने के दो कालों में बांटना सिद्धान्त की दृष्टि से भी गलत है। सभी पौधे चाहे वे वार्षिकी हों या सदाबहार उनमें एक समान बात यह पाई जाती है कि मिट्टी में जेव तत्व छोड़ जाते हैं वह उन पौधों की देह में खर्च आये हुए तत्व से कहीं अधिक होता है। जमीन या मिट्टी का बनना ही इसका सबूत है।

अनगिनत पीढ़ियों की अवधि में तमाम घास वाले

वार्षिकी या सदाबहार पौधों में [illegible], जमीन में उगने, [illegible], मुर्झाने और सड़न की शक्ति आई और सूख गये पौधों की जड़ें उन पौधों के उगने की भूमि में ही सड़ गईं। इन वनस्पतियों के जमीन से ऊपर के अवशेष सतह पर जमा हो गये थे, और इस तरह से सड़ गये थे कि उनमें से हवा आजादी से आ-जा सकती थी। यही अन्त में पोषक खनिज तत्व बन गये। सीलन के साथ ये मिट्टी की अधिक गहरी तहों में घुस गये और वहां से उन्हें पौधों की जड़ों ने अपने में जज्ब कर लिया। सतह के साथ सटे जड़ों के हिस्से भी अत्यधिक हवा लगने पर सूख-सड़ गये। हमारी सम्पत्ति में प्रकृति के ये सामान्य नियम हैं, जिन्हें जमीन की उर्वराशक्ति के बढ़ाने में इस्तेमाल करना चाहिए।

पौधों की सड़ांध का उपयोग

पौधों में यह शक्ति होती है कि अपनी उगने वाली जगह पर गिरे हुई अपनी जड़ों और डंठलों के अवशेषों के सड़ांध द्वारा वे उस भूमि की उर्वराशक्ति को बढ़ा देते हैं। उनमें यह शक्ति ऐतिहासिक निकास की प्रक्रिया में से गुजर कर आती है। पौधों की यह खासियत एक ऐसा नियम है जिसे हम फसल की पैदावार को क्रमिक चक्र द्वारा बढाने के लिए कृषि-उत्पादन में बरत सकते हैं। अच्छी फसल की कटाई से मिट्टी की उर्वरा शक्ति बढ़ती है और पहिले से अधिक उर्वर मिट्टी फिर फसल की पैदावार को बढ़ाती है। जैव तत्व को बनाने वाला पदार्थ हवा में से नहीं आता है। किन्तु पौधे जितना ही भोजन मिट्टी से लेते हैं, उतना ही वह अच्छी तरह विकसित पत्तों वाली सतह द्वारा पोषक तत्वों से असीम रूप से भरी हुई हवा में से अपना भोजन ले सकते हैं। पौधों को जितना भोजन हवा में से मिलता है, उतना ही वे मिट्टी में जैव तत्व छोड़ सकते हैं। उस तत्व से मिट्टी और अधिक उर्वरा बन जाती है।

मिट्टी में ह्रास वार्षिकी पौधों के कारण नहीं

हमारा विश्वास है कि मिट्टी में और उसके गठन में ह्रास वार्षिकी पौधों के कारण नहीं आते हैं, प्रत्युत ये ह्रास कृषि योग्य भूमि की तह को उलट-पलट करके सालाना जोत के कारण होते हैं। किसान वार्षिकी फसलों को बोते समय हमेशा हर बार जमीन पर हल चलाते हैं। हल चलाते समय निचली तह को ऊपर और उपरली तह को नीचे धकेल देते हैं। इसके परिणामस्वरूप वार्षिकी पौधे हर साल ऐसी मिट्टी में उगते हैं जो बहुत गहराई तक ढीली होती है। पौधे इस मिट्टी को अपनी जड़ों से अलग-अलग ढेरों में नहीं बांट सकते हैं। अतः वे मिट्टी का वैसा गठन नहीं बना पाते जैसा कि सदाबहार पौधों की जड़ें बना लेती हैं। इससे इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि हर फसल के लिए हर साल हल चलाना जरूरी नहीं है किन्तु पौधों की खूटियों को मिट्टी में ऊपर नीचे उलट-पलट देना ही काफी है। किन्तु महत्वपूर्ण बात यह है कि मिट्टी की उपरली और निचली तहों की बुआई इस तरह की जाये कि पोषण, जल और वायु अधिक से अधिक सम्भव गहराई तक उचित रूप से प्राप्त हो सके। इसलिए जोती हुई सतह की गहराई सबसे अधिक महत्व की बात है। किन्तु इसमें जोती गई तह को युक्ति-युक्त रूप से बनाना, उसकी देखभाल और हिफाजत करना आवश्यक है। हमारा विश्वास है कि जमीन पर ४० या ५० सैन्टीमीटर और उससे भी अधिक गहराई तक हल चला देना चाहिए। मुख्य शर्त यह है कि हल बिना फालों अथवा मोल्ड-बोर्डों के और निचली तहों को बिना उलटे-पुल्टे चलाया जाए। इसका एक कारण यह है कि मिट्टी या जमीन की ऊपरी तह पर प्रायः जैव अवशेषों के बड़े ढेर होते हैं, अतः वह अधिक उपजाऊ होती है। इसके अलावा मोल्ड-बोर्ड वाले हलों से जब जमीन को बड़ी गहराई तक जोता जाता है तो हल नीचे की तहों की ठस मिट्टी को उलट कर ऊपर ला देता है जिनमें किसी-किसी मिट्टी में ऐसे तत्व होते हैं जो पौधों को हानि पहुँचाते हैं। जब बिना मोल्डबोर्ड वाले हलों से खेती की जाती है तब मिट्टी की तहें मामूली-सी उलटती-पलटती हैं और हर तह का बड़ा ढेर अपनी ही जगह पड़ा रहता है।

इसके आधार पर हमारा मत है कि प्रत्येक फसल मिट्टी को अच्छा बना सकती है और धीरे-धीरे उसकी उर्वरा शक्ति को बढ़ा सकती है, इसलिए फसलों के चक्र को उपजाऊपन के ह्रास और उसके फिर से उपजाऊ हो जाने के कालों में नहीं बांटना चाहिए।

—

सर्वोदय पृष्ठ

गांधी जी का चर्खा और अम्बर चर्खा

आज अम्बर चर्खा हजारों की संख्या में चल रहा है और लाखों की संख्या में इसे चलाने की योजना पर सरकारी और गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा विचार हो रहा है। दूसरी ओर बहुत से विचारक और साधक गहरी दुविधा में पड़ गये हैं कि यह अम्बर चर्खा हमारे देश की परेशानियों को और भी बढ़ा देने वाला तो साबित न होगा? महात्मा गांधी के असली चर्खे की मौत का दूत बनकर तो यह चर्खा नहीं आया है? बापू होते तो क्या वह इस चर्खे को अपनाते?

बापू का चर्खा काठ-लोहे का कोई खास ढांचा न था। वह तो एक आदर्श था और उसकी व्याख्या भी बापू कर गये हैं। उन्होंने १६, ३२ या ६४ पंखड़ी वाले अथवा गोल दो चक्र वाले किसी विशेष चर्खे को अपना चर्खा बताते हुए उसे 'सूर्य-रूप' मानने के लिए नहीं कहा। देशी-परदेशी जो कोई इंजीनियर बापू के पास पहुँचता था तो वे चालू चर्खे से अधिक सुधरा हुआ चर्खा बना देने की मांग करते थे। एक ओर चरखे में आवश्यक सुधार की अपनी कल्पना समझाने के लिये कई बार बापू कपड़ा सीने की सिंगर मशीन का उदाहरण देते थे और दूसरी ओर बांस के छोटे से टुकड़े पर बिना किसी पहिये या चक्र के धनुष चर्खे पर इतने आशान्वित हो जाते थे कि छः महीने के अन्दर इतने छोटे धनुष चर्खे से सारे भारत के लिये आवश्यक खादी तैयार करने की बात करते थे।

अब यदि हमारे समक्ष मंदगति वाले चर्खे के बदले द्रुतगति वाला चर्खा आता है तो इसमें भय का कोई कारण नहीं। एक तकुए के बदले चार, आठ या सोलह तकुओं का चर्खा आता है तो यह शंका नहीं करनी चहिये कि हमारा वह पुराना चर्खा मिट जायगा और बापू का पुनीत सन्देश देने वाले चर्खे की मृत्यु हो जायगी।

यह समझना भूल है कि बेकारी मिटाने के लिये उत्पादन शक्ति को मन्द रखें। बापू ने सदैव इस बात पर जोर दिया कि सब [illegible] काम कम-से-कम समय में कलापूर्ण तरीके से और व्यर्थ की थकावट के बिना हों। अम्बर चर्खे में यह शक्ति प्रतीत होती है। कोई चाहे तो अम्बर चर्खे को भी आगे चलकर शोषण का साधन बना सकता है, परन्तु हम विश्वास कर सकते हैं कि आज जिस रूप में हमारे सामने अम्बर चर्खा आया है, उस रूप में इस चर्खे को बापू के आशीर्वाद ही मिलते।

—प्रभुदास गांधी

लोक-सम्मति का मूल्य

हमने खादी कार्य के लिये लोक सम्मति नहीं ली, इसलिये उसे सार्वजनिक महत्व प्राप्त न हो सका। किन्तु अब हमें अपने काम के लिये सक्रिय लोक सम्मति प्राप्त करनी है। निष्क्रिय वोट से काम न चलेगा। निष्क्रिय वोट का अर्थ है, हमने आपको अपना मत दे दिया, अब काम आप ही करें; किन्तु सक्रिय लोक सम्मति का अर्थ है, सर्वोदय-पात्र के लिये मुट्ठीभर अन्न डालने वाले हाथ कभी ईंट-पत्थर न फेंकेंगे। जहां अशांति हो और मर-मिटने की जरूरत पड़े, तो वहां शांति सैनिक पहुँच ही जायेंगे। लेकिन सम्मति देने वालों के शान्ति के जनक न बनने से यह शांति स्थापना की एक अभावात्मक तैयारी ही हो जाती है।

—विनोबा

विदेशियों की दृष्टि में हम

अपने देश का सब तरफ काफी आदर है, काफी मान है, यह मान इसलिये नहीं कि भारत में कितने बांध बंधे, लोहे की कितनी मिलें बनीं! वे तो उनके पास हमसे ज्यादा हैं। इस दिशा में हमने कोई ऐसा काम नहीं किया, जिसके लिए उनके मन में कोई आदर पैदा हो, क्योंकि ये सब उन्होंने बहुत कुछ किया है। मैं आपसे बयान नहीं कर सकता कि गांधीजी के लिए कितनी इज्जत उन लोगों के दिलों में है। जहां जाता था, वहीं चर्चा होती थी, कैसी ऊंची-ऊंची बातें उनके लिए वे करते थे! साइप्रस एक टापू है, वहां आज झगड़ा चल रहा है, वहां भी मैं गया था। वहां मुझे एक साधारण व्यक्ति मिले—ग्रीक आर्थोडाक्स। उनसे बातचीत होने लगी। उन्होंने कहा कि ईसा मसीह के बाद अगर दुनिया में कोई पैदा हुआ, तो गांधी पैदा हुआ,

और फिर ईसा मसीह तो भगवान् था, गांधी तो मनुष्य था! मनुष्य होकर गांधी इतना बड़ा हुआ, इसमें उनका बड़प्पन है!

गांधीजी के भारत से उनको बड़ी-बड़ी आशाएं हैं। जो काम विदेशों के लोग भौतिक क्षेत्र में करते हैं, वही हम यहां करेंगे, तो उनकी वे आशाएं मिटेंगी, बुझेंगी। वे कुछ नयी चीज भारत में देखना चाहते हैं। जब हम कुछ बातें उनके सामने रखते थे तो वे बड़े चाव से सुनते थे।

—जयप्रकाश नारायण

देश में शांति-स्थापना के लिए

विनोबा कहते हैं, दुनिया में दूसरों का कदम तो निःशस्त्रीकरण की तरफ बढ़े और हमारे देश में शान्ति की बात कम होती जाये, इसका क्या कारण है? मुख्य कारण यह है कि गांधी की बात हम लोगों के गले तक नहीं उतर पायी। मैं इतना कहूँ कि फौज भी हो, हथियार भी हो, यदि आप रखना चाहें, मैं रोक नहीं सकता; क्योंकि पुलिस और फौज की स्वीकृति जनता और सरकार, दोनों से मिली हुई है। शस्त्र, पुलिस और फौज का उपयोग हमारे देश में कम-से-कम हो या एकदम नहीं हो, यह सवाल आज हमारे सामने है। फिर भी मैं इतना कह दूं कि सरकार पुलिस और फौज का उपयोग न करे, इतना ही आज काफी नहीं है। पहले काफी था, क्योंकि अब तो गोली केरल में भी चल गयी। यदि सिर्फ अहमदाबाद और लखनऊ में चली होती, तो हम कह सकते थे कि राज्यसत्ता-परिवर्तन होने से अन्तर आ सकता है। लेकिन अब तो ऐसा नहीं कहा जा सकता। यदि कांग्रेस का विरोध करने के लिए देश की विभिन्न पार्टियां एक हो सकती हैं, तो क्या हम उनसे प्रार्थना नहीं कर सकते कि 'जब आप एक का विरोध करने में एक साथ हो सकते हैं, तो इस देश में गोली चलाने की परिस्थिति पैदा न हो, ऐसा वातावरण पैदा करने की राय पर आप सब क्या एक नहीं हो सकते?'— जबकि इन सभी पार्टियों को देशभक्ति पर विश्वास है, सबको लोकतंत्र पर विश्वास है। यदि आज सब पार्टियां मिलकर ऐसा संकल्प न करेंगी, तो बहुत बड़ा खतरा सामने है।

यदि पार्टियां यह संकल्प न करें, तो नागरिकों को संकल्प करना चाहिए। सब नागरिक मिल कर संकल्प करें कि अपने इलाके में ऐसा मौका नहीं आने देंगे कि गोली चलाने की नौबत आये। ऐसा करने से लोकशक्ति का विकास होगा। इसके लिए गांव-गांव में कमेटी बनायें और नागरिकों को यह संकल्प करायें कि किसी भी कीमत पर मुहल्ले में हम झगड़ा नहीं होने देंगे। यदि आप सिर्फ स्वदेश प्रेमी ही नहीं है, लोकनिष्ट नागरिक हैं, तो ऐसा अवश्य करें। इसे जागरूक लोकनिष्ठा कहते हैं। केवल राष्ट्र-निष्ठा से काम नहीं चलेगा, लोकनिष्ठा की स्थापना करनी होगी।

—दादा धर्माधिकारी

वर्ग-संघर्ष या वर्ग-निराकरण ?

कुछ कम्युनिस्ट भाई मुझसे मिलने आये थे। उन्होंने मेरा अभिनन्दन करते हुए एक अभिनन्दन-पत्र में लिखा है कि 'मार्क्स ने वर्ग-विग्रह की पद्धति से जो बात समाज के सामने रखी थी, वैसी ही लोक-कल्याण की बात, सब वर्गों की सहिष्णुता से आप करना चाहते हैं, इसलिए हम आपका अभिनन्दन करते हैं।'

मैं कहना चाहता हूँ कि यह बात ठीक है कि मार्क्स ने वर्ग-विग्रह की भूमिका रखी। यह पुराने जमाने की बात है। यह बात ऐसी नहीं है जैसी ऋग्वेद की बात, जो सब जमाने पर लागू होती है। मैं वर्ग का सुमेल नहीं चाहता हूँ, मैं तो वर्गों का निराकरण ही चाहता हूँ। वर्ग ही नहीं चाहता हूँ। परन्तु यह काम में वर्ग-विग्रह से करना नहीं चाहता। इससे तो वर्ग बढ़ेगा, वर्ग की कल्पना मजबूत होगी, जैसी आज की दुनिया में हो रही है।

सारी दुनिया में आज दो विभाग हो गये हैं—एक है कम्युनिस्टों का विभाग और दूसरा है गैर कम्युनिस्टों का। अमेरिका के पक्ष के लोग और उनके राष्ट्र एक ओर हैं और दूसरी ओर रूस के लोग और उसके पक्ष के राष्ट्र। अपनी आंखों के सामने ऐसा दृश्य दीखता है कि विश्व एक भयानक समरांगण में उतरा है, जिसमें आमने-सामने जो पक्ष हैं, वे एक-दूसरे पर अत्यन्त अविश्वास रखते हैं और एक-दूसरे की निंदा ही नहीं करते, बल्कि एक-दूसरे की हस्ती ही मिटा देना चाहते हैं। यह बड़ी खुशी की बात है कि वर्ग-विग्रह वाला विचार अमेरिका और रूस वाले मानते हैं। वे ही अब एक-दूसरे के आमने-सामने हो गये हैं और एक-दूसरे की कल्पना के अत्यन्त विरोधी हैं, तो भी धीरे-धीरे सह-अस्तित्व की बात मानने लगे हैं। इसलिए वे ऐसी इच्छा करते हैं कि एक साथ रहना है, कम्युनिज्म का फैलाव न हो, ऐसा तो कम्युनिस्ट नहीं चाहते, परन्तु शांति से वह फैले, ऐसा वे चाहते हैं। इसलिए कम्युनिस्ट अब शांति की बात करने लगे हैं। अब उनको धीरे-धीरे सूझेगा कि शांति की पद्धति से ही लाभ होगा। वर्ग-समाप्ति के लिए वर्ग-विग्रह काम नहीं आयेगा। इससे तो उल्टे वर्ग-चक्र पैदा होकर नया वर्ग पैदा होगा।

—विनोबा

सच्चा ग्रामदान कब होगा

सर्व-सेवा-संघ ने ग्रामदान की व्याख्या की है कि गांव की कुल जमीन की पचास प्रतिशत जमीन और अस्सी प्रतिशत लोग ग्रामदान में आ जायं, तो वह ग्रामदानी गांव हो सकता है, परन्तु मैं कहता हूँ कि सौ प्रतिशत जमीन हो और सौ मालिकों ने जमीन का दान दिया हो, तो भी यह ग्रामदान नही हुआ! ग्रामदान तो तभी होगा, जब गांव में जो शक्ति है, उसका दान गांव के लिए हो जाय। जिस श्रम का अपने कुटुम्ब के लिए उपयोग करते हैं, वह सारे गांव के लिए करें याने श्रम में चोरी न करें। आज तो मालिक के खेत में मजदूर काम करने जाता है, तो बहुत हुआ तो चार घंटे काम करता है और कहता है कि आठ घंटे काम किया! बैल के पीछे कोई देख-भाल करने वाला न हो, तो काम रुक जायगा। किसान अगर खड़ा होगा, तो बैल भी खड़ा हो जायेगा। इसी तरह से ये मजदूर भी आज काम करते हैं।

मगनलाल गांधी मुझे पचास साल पहले का एक अनुभव बता रहे थे कि वे जब दक्षिण अफ्रीका में थे, तब तक जापानी मजदूर को रोज तीन रुपये देना पड़ता था और हिन्दी मजदूर को रोज एक रुपया, तो भी जापानी मजदूर को लोग पसंद करते थे, क्योंकि जापानी मजदूर बिना देखभाल के काम करते थे और हिंदी मजदूर के पीछे देखभाल करने वाला रखना पड़ता था।

—विनोबा

योजनायें और हमारे स्वप्नों का समाजवादी समाज

जगदीशप्रसाद सक्सेना, एम० ए०

योजना में समाज-दर्शन को समाने की कोशिस की गई है—लोकतंत्रात्मक आयोजन का मतलब यह है कि हम अपने यहां के सभी प्राप्त साधनों का उपयोग करें और खास तौर पर अधिक से अधिक मात्रा में दिये गये उस श्रम का जिसको कि इस प्रकार ठीक दिशा में मोडा जा रहा हो जिससे कि समाज और व्यक्ति की भलाई हो।

प्रधान मंत्री नेहरू द्वारा राष्ट्र के नाम प्रसारित उक्त संदेश से यह स्पष्ट है कि हमारी योजनाओं का लक्ष्य देश के उपलब्ध धन तथा जन संबंधी साधनों को इस प्रकार प्रयोग में लाना है जिससे कि पहले की तुलना में अधिक पदार्थ तथा सेवायें प्राप्त हों तथा हमारे देश व समाज का अधिकाधिक हित हो। दूसरे शब्दों में हमारी योजनाओं का उद्देश्य एक लोक हितकारी तथा समाजवादी रूप में अपने राष्ट्र की नींव दृढ़ करना है। हमारे स्वप्नों के समाजवादी ढंग के समाज, और एक 'लोकहितकारी राज्य' की कल्पना अन्योन्याश्रित हैं। हम सामन्तशाही और पूंजीवादी व्यवस्था से प्रथक एक नूतन समाज का सृजन करना चाहते हैं। ऐसे समाज में 'बेकारी, असमानता और भुखमरी'—मानवता के इन तीनों महान शत्रुओं को समूल नष्ट कर दिया जायगा। उत्पादन में वृद्धि होगी, देश में नये-नये उद्योग धन्धे खुलेंगे एवं देश के निवासी अपेक्षाकृत एक उच्च स्तर से जीवन यापन करेंगे; उनके अवसरों में वृद्धि होगी और वे अपने भाइयों तथा सरकार के कन्धों से कन्धा मिलाकर राष्ट्र को गौरवपूर्ण तथा उन्नत कर सकने में समर्थ होंगे।

हमारे संविधान में असमानता को महत्वहीन घोषित कर धर्म, जाति, लिंग या सम्पत्ति के आधार पर भेद भाव को पूर्णतः अमान्य कर दिया गया है। उसमें एक अध्याय है—'बुनियादी अधिकारों सम्बन्धी'। एक अन्य अध्याय है—'राजनीति के निर्देशक सिद्धान्त'। इन सब बातों की पुष्टि हमारे देश की लोकसभा ने भी 'समाजवादी ढंग के समाज की स्थापना का महत्वपूर्ण प्रस्ताव पास करके की है। हमारी एक के बाद एक कार्यान्वित होने वाली पंचवर्षीय योजनाओं का मूल उद्देश्य इन्ही उद्देश्यों की पूर्ति का प्रयत्न करना है।

सभी के लिये रोजगार—किसी भी देश की सामाजिक तथा आर्थिक प्रगति के लिये वहां से बेरोजगारी या बेकारी का पूर्णतः हटना आवश्यक होता है। हमारे स्वप्नों के समाजवादी ढंग के समाज में कोई व्यक्ति बेरोजगार नहीं रहेगा। देश की वर्तमान बेकारी की समस्या को देखते हुये ऐसा कर सकना कठिन प्रतीत होता है परन्तु जैसा कि योजना आयोग का मत है हम क्रमशः अपनी विकास शील योजनाओं की प्रगति करते हुये अपने लक्ष्य की प्राप्ति में समर्थ हो सकेंगे। हमारी प्रथम पंचवर्षीय योजना से कुछ लाख व्यक्तियों को रोजगार मिलने के बावजूद द्वितीय योजना के प्रारम्भ होने के समय अनुमानतः लगभग पचास लाख व्यक्ति बेरोजगार थे। देश की वर्तमान परिस्थिति को देखते हुये यदि श्रमशक्ति की वृद्धि बीस लाख प्रतिवर्ष मानी जाय तो १९६०-६१ तक लगभग एक करोड़ पचास लाख व्यक्ति बेकारी या बेरोजगारी की दशा में हो सकते हैं। इसे देखते हुये द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इस समस्या पर और भी ध्यान दिया जा रहा है। आशा है कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना काल में एक करोड़ बीस लाख व्यक्तियों को नये रोजगार मिल सकेंगे। कुटीर एवं छोटे उद्योगों को अधिकाधिक महत्व दिये जाने का एक कारण यह भी है कि इनसे काफी हद तक बेरोजगारी दूर करने में सहायता मिलती है। इस तरह हम शीघ्र ही इस सामाजिक बुराई से छुटकारा पा सकेंगे।

भुखमरी और निर्धनता का नाश होगा—मानव जीवन का दूसरा महान शत्रु निर्धनता है जिसकी वृद्धि हो जाने पर भुखमरी की दशा भी आ जाती है। अतः इसके

नाश के लिये हमारे 'समाजवादी ढंग के समाज' में उत्पादन की वृद्धि को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। हमने राष्ट्रीय आत्म-निर्भरता को अपना ध्येय निश्चित कर लिया है किन्तु चूंकि हमारे साधन सीमित हैं अतः आवश्यकता इस बात की है कि देश के उपलब्ध साधनों को एक आयोजित ढंग पर विकसित किया जाय। इसी दृष्टिकोण को अपनाकर हमारी प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि उत्पादन को सर्वाधिक महत्व दिया गया और योजना की समाप्ति पर उसमें काफी महत्वपूर्ण प्रगति लक्षित हुई। खाद्य पदार्थों के उत्पादन में बीस प्रतिशत की वृद्धि हुई तथा अन्य कृषि उत्पादन भी बढ़े। आशा है द्वितीय पंचवर्षीय योजना काल में उत्पादन में चालीस प्रतिशत तक की वृद्धि संभव हो सकेगी।

असमानता दूर होगी—देश में सद्जीवन और समाजवाद का संदेश फैलाने के लिये सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक असमानता या गैर बराबरी—जो मानव जीवन का तीसरा महान शत्रु है हटाना आवश्यक है। सामाजिक व राजनैतिक असमानता हमारे संविधान द्वारा दूर कर दी गई है। आर्थिक विषमता के भेदभाव को भी दूर कर दिया गया है किन्तु उसको वास्तविक रूप से मिटाने के लिये हमारे प्रयत्न अभी जारी हैं। हमारी प्रथम व द्वितीय पंच-वर्षीय योजना काल में अनेक भूमि सुधार कानून पास किये गये हैं जो कृषि के विकास, शान्ति, व्यवस्था, सुरक्षा एवं समानता के लिये उचित और न्याय संगत थे। मध्यस्थों जैसे जमीदारों का उन्मूलन कर काश्तकारों को कानूनी सुरक्षा प्रदान की गई है तथा उनके खेत का वाजिब लगान भी निश्चित कर दिया गया है। भू-स्वामित्व संबंधी असमानता को कम करने के लिये जोत की सीमा निर्धारण की दिशा में भी कई राज्यों में भूदान यज्ञ की योजना भी इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य कर रही है। पूंजीपतियों और धनिकों से धन प्राप्त करने के लिये कर निर्धारण के सशक्त उपाय का काफी प्रयोग किया गया है तथा योजनाओं में सर्वत्र इस बात का ध्यान रक्खा गया है कि प्राप्त किया गया अतिरिक्त धन धनिकों की जेब में न जाकर निर्धनों के जीवन-स्तर को उन्नत करे।

औद्योगिक क्षेत्र में विकास होगा—निर्धनता को दूर करने के लिये हमारे स्वप्नों के 'समाजवादी ढंग के समाज' में उद्योग और व्यापार में भी महत्वपूर्ण विकास किया जाना चाहिये। हमारी पंचवर्षीय योजनाओं में इस ओर भी यथेष्ट ध्यान दिया गया है। इस संबंध में यह उल्लेखनीय है कि राज्यों द्वारा लगभग सत्रह महत्वपूर्ण उद्योग संचालित करने का निश्चय किया गया है तथा बारह अन्य उद्योग निजी उद्योग-पतियों द्वारा राज्य सरकारों की देखभाल में संचालित किये जाने की योजना है। प्रथम पंचवर्षीय योजना काल में सरकार ने कई बड़े उद्योगों का प्रारम्भ किया है इनमें बंगाल स्थित चितरंजन रेल इन्जन कारखाना, सिंदरी का रासायनिक खाद तैयार करने का कारखाना, विशाखापट्टम का जहाज निर्माण का कारखाना आदि प्रमुख हैं। इन प्रयत्नों के फलस्वरूप औद्योगिक उत्पादन का सूचक अंक १९५० में १०५ से बढ़कर १९५५ में १६१ हो गया; इस प्रकार ५६ प्रतिशत की वृद्धि हुई। द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत उद्योग खनिज, परिवहन और संचार साधनों के विकास पर पर्याप्त जोर दिया गया है तथा अनेक भारी एवं कुटीर उद्योग उन्नत करने का निश्चय किया गया है। लोहे और फौलाद के उद्योग, कोयले के उद्योग, सीमेंट, कपास, चीनी और जूट के उद्योगों के विकास के लिए विशेष प्रयत्न किये जा रहे हैं। छोटे एवं कुटीर उद्योगों पर बिशेष ध्यान दिए जाने के हेतु अखिल भारतीय औद्योगिक बोर्ड भी स्थापित किए गये हैं।

सहकारिता की ओर—हमारे स्वप्नों के 'समाजवादी ढंग के समाज' का आधार सहयोग है। स्मरणीय है कि सहयोग से कार्य करने पर ही द्रव्य की अधिकतम उत्पति करना तथा उपभोक्ताओं को अधिकतम लाभ पहुँचाना संभव हो सकता है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में सहकारी कृषि को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। बहुउद्देशीय सहकारी समितियां एवं जिला बोर्डों आदि का कार्य भी सहयोगी ढंग पर कृषि की उन्नति और कृषकों की सहायता करना है। हमारी योजनाओं की सफलता काफी अंश तक इन्हीं सहकारी समितियों पर ही निर्भर है।

श्रमिकों और मजदूरों के प्रति न्याय—उद्योग धंधों

में लगे हुए मजदूरों तथा श्रमिकों के साथ न्याय संगत व्यवहार व उनकी भलाई के लिये प्रयत्न करना हमारी 'समाजवादी सरकार का प्रमुख कर्तव्य होना चाहिए क्योंकि श्रमिकों के हितों की रक्षा होने पर ही औद्योगिक शान्ति कायम रह सकती है और औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि हो सकती है। इस उद्देश्य की पूर्ति के हेतु हमारी पंचवर्षीय योजनाओं में अनेक प्रयत्न किए जा रहे हैं। बीमारी और लाचारी की दशा में श्रमिकों की डाक्टरी व आर्थिक सहायता के लिए कर्मचारियों की 'राज्य बीमा योजना' व उनका भविष्य सुरक्षित रखने के लिए 'भविष्य-निधि योजना' कार्यान्वित की जा रही हैं। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में मजदूरों के लिये मकान बनवाने पर पचास करोड़ रुपए खर्च करने की व्यवस्था की गई है।

सामाजिक सुधार और सांस्कृतिक विकास—'समाजवादी ढंग के समाज' की जिम्मेदारी नागरिकों को सामाजिक व सांस्कृतिक उन्नति करना भी है। हमारी सरकार को कल्याणकारी योजनाओं के अन्तर्गत हरिजनों, आदिवासियों एवं अन्य पिछड़ी जातियों को समान स्तर पर लाने के लिए शिक्षा, सार्वजनिक सेवाएं आदि के क्षेत्र में विशेष सुविधाएं प्रदान की गई हैं। प्रथम पंचवर्षीय योजना में इन पिछड़े हुए वर्गों और जातियों के हित में लगभग ३२ करोड़ रुपये व्यय किया गया था और द्वितीय योजना के अन्तर्गत इस मद में ९१ करोड़ रुपए व्यय किये जा रहे हैं। स्त्रियों के दर्जे को ऊपर उठाने के लिए उन्हें भी सामाजिक क्षेत्र में अनेक अधिकार एवं सुविधाएं प्रदान की गई हैं।

शिक्षा के प्रचार एवं वृद्धि के लिए भी प्रथम पंचवर्षीय योजना में १६४ करोड़ रुपए व्यय किए गए तथा द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इसके लिए २०६ करोड़ रुपए की राशि निर्धारित की गई है जिससे देश को आवश्यकतानुसार अनेक प्राथमिक पाठशालाएं, हाई स्कूल व टेक्निकल शिक्षा की नई-नई संस्थाएं खुल रही हैं।

कला और साहित्य को और भी प्रोत्साहन देने के हेतु साहित्य संगीत और ललित कलाओं की तीन राष्ट्रीय अकादमियां भी स्थापित की गई हैं।

जनता के विभिन्न पहलुओं की उन्नति—अन्त में हम सामुदायिक विकास योजना और राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्यों द्वारा भी लोकहितकारी तथा 'समाजवादी ढङ्ग के समाज' के आदर्श की ओर अग्रसर हो रहे हैं। इन योजनाओं के कार्य क्षेत्र के अन्तर्गत कृषि, यातायात, शिक्षा, स्वास्थ्य, सहायक रोजगार, मकान, प्रशिक्षा, मनोरंजन एवं सामाजिक कल्याण आदि में उन्नति एवं विस्तार कर मानव जीवन के सब पहलुओं को उन्नत करने का प्रयास किया जा रहा है। इन प्रयत्नों से निश्चय ही हमारे देश और समाज को नूतन गतिविधि का आभास प्राप्त हुआ है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में लगभग ८ करोड़ व्यक्तियों ने इस योजना से लाभ उठाया और आशा है कि द्वितीय योजना काल के अन्त तक देश के अधिकांश क्षेत्रों में इन विकास कार्यों का प्रसार हो जायगा।

इस प्रकार यह हमारे लिए गौरव और प्रसन्नता का विषय है कि हमारी योजनाएं संवैधानिक ढङ्ग से अपने अंतिम लक्ष्य अर्थात एक लोकहितकारी एवं 'समाजवादी ढङ्ग के समाज' की स्थापना के लिये सफलतापूर्वक अग्रसर हो रही हैं। प्रथम पंचवर्षीय योजना से हमारी राष्ट्रीय आय में अठारह प्रतिशत वृद्धि हुई है, द्वितीय योजना काल के अन्त तक उसमें लगभग पच्चीस प्रतिशत की वृद्धि और भी होगी। उद्योग, व्यापार तथा कृषि के क्षेत्र में निरन्तर इसी प्रकार के विकास करते रहने पर वह दिन दूर नहीं जबकि कल्याणकारी राज्य के चिरअभिलाषित स्वप्न को साकार करने का हमारा अन्तिम लक्ष्य पूर्ण होगा और हमारे देश में एक एश्वर्यपूर्ण नवीन समाज व्यवस्था स्थापित होगी।

नया निर्माण

सामुदायिक विकास क्षेत्रों में स्थानीय सहयोग

सामुदायिक विकास की केन्द्रीय समिति की एक बैठक में यह निर्णय किया गया है कि गांवों में सामुदायिक विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत जो काम किये जाते हैं, अब से उनमें से अधिकांश काम गांवों की पंचायत या गांव की अन्य संस्थाओं के द्वारा ही किये जाने चाहिएं। जून १६५० में राष्ट्रीय विकास परिषद की जो बैठक हुई थी, उसमें यह स्वीकार किया गया था कि विकास कार्यक्रमों की योजना तैयार करने तथा उन्हें कार्यान्वित करने का काम खण्ड या गांव की संस्थाओं को ही करना चाहिए। इस सिफारिश को अमल में लाने के लिए सामुदायिक विकास मंत्रालय कार्यक्रमों के ऐसे विकास-कार्यों की, जो किसी विशेष क्षेत्र के ही मतलब के हैं, योजना बनाने तथा लागू करने की जिम्मेदारी ग्राम-संस्थाओं को सौंपने का विचार कर रहा है। ये काम 'स्थानीय कार्य' कहलायेंगे।

बजट में पहले चरण वाले प्रत्येक खंड के लिए पांच साल में १२ लाख रु० की व्यवस्था की गयी है। यह रकम खंडों के कर्मचारी, मकान, परिवहन, स्वास्थ्य केन्द्र आदि पर तथा कृषि, सिंचाई, दस्तकारी और गांवों में पानी सप्लाई, नाली आदि स्थानीय कार्यों पर खर्च की जाएगी। कृषि, सिंचाई तथा दस्तकारी आदि पर खर्च की जाने वाली ४ लाख ५५ हजार रु० की रकम जहां तक सम्भव होगा, गांवों की सहकारी समितियों के द्वारा ही खर्च की जाएगी। स्थानीय कार्यों के लिए कुल ३ लाख रु० की व्यवस्था की है और इसे उस गांव की पंचायत या अन्य संस्थाएं ही खर्च करेंगी।

मंत्रालय खंड विकास समिति को स्थानीय कार्यों से सम्बन्धित योजनाओं के लिए गांवों की संस्थाओं को रुपया स्वीकृत करने का अधिकार भी दे देगा। यही व्यवस्था दूसरे चरण वाले खंडों के लिए भी है। बजट में ऐसे प्रत्येक खंड के लिए पांच साल में ५ लाख रु० की व्यवस्था है। केन्द्रीय समिति ने खंड विकास समिति के गैर-सरकारी सदस्यों को ट्रेनिंग देने की योजना का भी समर्थन किया। यह ट्रेनिंग गैर-सरकारी स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा दी जाएगी। खंड विकास समितियों में इस समय ७० हजार गैर-सरकारी व्यक्ति हैं। इसके लिए चुने हुए केन्द्रों में [illegible] दिन के लिए शिविर लगाये जाएंगे। इसके सदस्यों को सामुदायिक विकास कार्यक्रमों के सिद्धान्तों तथा उद्देश्यों के बारे में बताया जाएगा तथा उन्हें काम की प्रणाली का अध्ययन करने के लिए विभिन्न सरकारी तथा गैर-सरकारी संस्थाओं में ले जाया जाएगा।

'भारत-१९५८'-प्रदर्शनी

देश में अब तक जितनी भी प्रदर्शनियां की गयीं, उनमें 'भारत १९५८' अपने ढंग की पहली प्रदर्शनी है। प्रदर्शनी में भारत की आर्थिक प्रगति का पूरा प्रतिबिम्ब है। स्वाधीनता के बाद देश ने उद्योग और विज्ञान के क्षेत्र में जो प्रगति की है उसकी स्पष्ट कल्पना प्रदर्शनी देख कर ही की जा सकती है। यह १२३ एकड़ क्षेत्र में फैली हुई है। प्रदर्शनी को ५ महीने से भी कम समय में तैयार किया गया है।

प्रदर्शनी में सरकारी और गैर सरकारी क्षेत्र के १६[illegible] से भी अधिक प्रमुख उद्योगों के कक्ष हैं। इनमें मशीनों के छोटे नमूनों, चार्टों, नक्शों आदि के द्वारा देश की औद्योगिक प्रगति का चित्र प्रस्तुत किया गया है। केन्द्रीय मंत्रालयों और राज्य सरकारों के विभिन्न विभागों ने भी अपने अपने कक्ष बहुत सुन्दर सजाए हैं। सबसे बड़ा कक्ष हिन्दुस्तान स्टील कम्पनी का है जिसका क्षेत्र लगभग ४०,००० वर्गफुट है। इसमें राऊरकेला, भिलाई और दुर्गापुर के इस्पात कारखानों की झलक दिखाई देती है। इनको देखकर कारखानों की विशालता और वहां के काम की प्रगति का सही अन्दाजा लगाया जा सकता है।

प्रदर्शनी में सूचना और प्रसारण मंत्रालय के विज्ञापन तथा दृश्य-प्रचार निदेशालय का मंडप विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसके अलावा विज्ञान, शिक्षा, प्रतिरक्षा, परिवहन और रेल विभाग के मंडप भी विशेष रूप से दर्शनीय हैं।

सामने के पृष्ठ पर छपे चित्रों में प्रदर्शनी की कुछ झलकियां हैं।

[सम्पदा
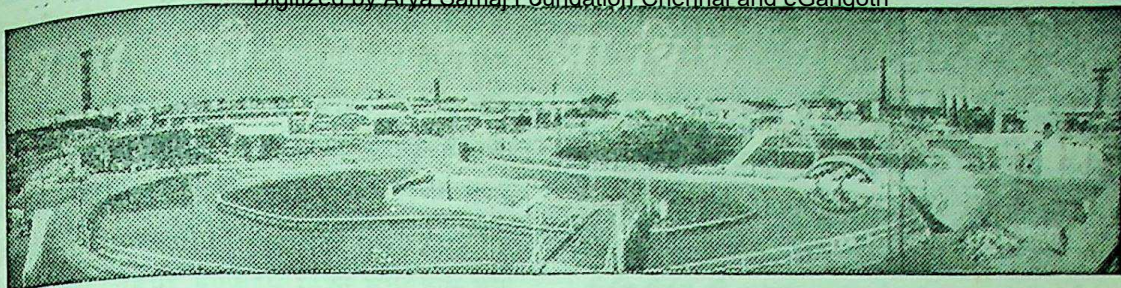
भारत १९५८ प्रदर्शनी : एक विहंगम दृष्टि में

१—चित्र में उत्तरप्रदेश हथकरघा मंडप में एक महिला दर्शक खुर्जा में बने मिट्टी के बर्तन देख रही है।

२—प्रदर्शनी में कई विकास योजनाओं की झांकी दिखायी गयी है। इस चित्र में कुछ विद्यार्थी नांगल बांध को देख रहे हैं। पीछे भिलाई, राऊरकेला और दुर्गापुर इस्पात कारखानों का मंडप दिखाई दे रहा है।

३—सिन्दरी उर्वरक कारखाने का और वहाँ की बस्ती का एक नमूना।

४—लघु उद्योग मंडप में मजदूरनियाँ रेशम का धागा लपेटती हुई दिखाई दे रही हैं।

लघु बचत बढ़ाने के उपाय !

पहली पंचवर्षीय योजना में लघु बचत योजना द्वारा २ अरब २५ करोड़ रुपया जमा करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया था, किन्तु दूसरी योजना में यह राशि बढ़ाकर ५ अरब रुपया रखी गई है जो काफी ऊंची है। सरकार ने नाना प्रकार के छोटी-छोटी राशि के बचत प्रमाण-पत्र जारी किये हैं; पोस्ट आफिस सेविंग्स बैंक में जमा रुपये पर ब्याज देने की दर बढ़ा दी गई है। शादी, त्यौहार तथा बच्चे के जन्म के अवसर पर उपहार देने के लिए भेंट-कूपन जारी किये हैं। राज्य सरकारें भी बचत सप्ताह मनाकर काफी पैसा जनता से एकत्र कर रही हैं। विकास खण्डों और नगरपालिकाओं में बचत आन्दोलन चलाया जा रहा है, इसके साथ ही बचत प्रोत्साहन के कई कार्यक्रम अपनाए जा रहे हैं।

जनता में मितव्ययता और कम खर्च की भावना पैदा होनी चाहिए; इसके लिए शिक्षात्मक प्रचार जरूरी है। सिनेमा, रेडियो और समाचारपत्र द्वारा यह कार्य होना चाहिए। हमें अपनी आवश्यकताओं को सीमित करना चाहिए और कुछ समय के लिए विदेशी वस्तुओं का बिल्कुल परित्याग कर देना चाहिए।

राष्ट्र निर्माण के इस कार्य में छात्र वर्ग अत्यन्त महत्वपूर्ण योग प्रदान कर सकती हैं। स्कूल के छात्रों को छोड़िए, यदि कालेज के छात्र ही उत्साह से इस कार्य में जुट जायें तो भी काफी सहायता मिल सकती है। भारत में कुल मिलाकर १,२०० कालेज हैं और उनमें ७५ लाख छात्र शिक्षा पाते हैं, यदि प्रत्येक छात्र प्रति माह पांच रुपया भी अपने मित्रों, सम्बन्धियों से एकत्र करे तो प्रति माह कम से कम पांच करोड़ के लगभग रुपया एकत्र हो जाता है। आवश्यकता है दृढ़ निश्चय, लगन, उत्साह और कमर कस कर काम करने की।

इसी प्रकार, महिलाएं भी इस पुण्य कार्य में हिस्सा बटा सकती हैं। उन्हें आभूषण-प्रेम छोड़ना चाहिए, कम से कम सोने चांदी के गहनों का प्रयोग करना चाहिए। इसके साथ ही कुछ महिलाएं श्रृंगार सामग्री पर एक बड़ी राशि व्यय करती हैं, उन्हें उसमें कटौती करनी चाहिए। क्रीम, पाउडर, लिपिस्टिक, नेल पालिश, खुशबूहार तेल, आदि विदेशी वस्तुओं का परित्याग करना चाहिए। इसी प्रकार, रसोई घर में मितव्ययता से काम लेना चाहिए। नगर-नगर में महिला समिति का निर्माण करना चाहिए जो जनता को सादे जीवन का लाभ बतावें।

—आर० के० बजाज

गांव पंचायतों का उत्तरदायित्व

सामुदायिक विकास कार्यक्रम के कारण लोगों को अब अच्छे रहन-सहन की आदत पड़ने लग गयी है। पर इसे पूरा करने के लिए सरकार के वित्तीय तथा प्राविधिक साधन सीमित हैं। इसलिए गांवों में ही स्वस्थ नेतृत्व का विकास जरूरी है, जो सरकारी नेतृत्व का स्थान ले सके।

गांवों के विकास में पंचायतों का महत्व सबसे अधिक है। यद्यपि कहीं-कहीं जाति-पांति संबंधी भेदभाव दिखायी पड़े हैं, पर यह तो निस्संकोच कहा जा सकता है कि पंचायतों के अन्दर रचनात्मक शक्ति के काफी स्रोत हैं। ये खेती, पशुशाला, जनस्वास्थ्य, शिक्षा और सहकारिता के विकास तथा युवकों और स्त्रियों के संगठन में महत्वपूर्ण कार्य कर सकती हैं। पंचायतों के द्वारा हम राष्ट्र की उस शक्ति को भी उपयोग में ला सकते हैं, जो अभी तक बेकार पड़ी हुई है।

व्यावहारिक प्रजातंत्र को मानने वाली सरकार सबसे अच्छी सरकार होती है। यदि इस समय जनता की बढ़ती हुई शक्ति और इच्छाओं को न पहचाना गया, तो इसका अपरूप देश तथा प्रजातंत्र दोनों के आदर्शों के लिए बड़ा भयावह होगा।

उन्होंने यह भी कहा कि पंचायतों की मदद के लिए किसान मंडल, युवक मंडल और महिला मंडल जैसी संस्थाएं भी बननी चाहिएं और इनका राष्ट्रीय स्तर पर विकास होना चाहिए।

—एस० के० दे

सहकारी बाल बचत योजना

प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू के जन्म दिवस के अवसर पर बुन्देलखंड डिवीजन के लगभग पचास हजार ग्रामीण बालकों द्वारा सहकारी बाल बचत योजना' में लगभग चार लाख तैंतीस हजार रुपया जमा करने का प्रेरणात्मक समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ है।

इस समाचार से पता चलता है कि यदि देश के सब नागरिक अपनी योजना को सफल करने के लिए कटिबद्ध हो जाएं तो कितना धन एकत्रित किया जा सकता है। योजना की पूर्ति के लिए देश के नागरिकों का सहयोग ऐसी स्थिति में और भी अनिवार्य हो जाता है जबकि योजना बनाते समय अल्प बचत योजनाओं द्वारा संग्रह किए जाने वाली जितनी धन राशि की अपेक्षा की गई थी, उतना धन संग्रह इस माध्यम से नहीं हो पाया है; और योजना-पूर्ति के लिए धनाभाव होने की स्थिति में हमें विदेशों से बड़ी मात्रा में ऋण लेना पड़ रहा है। आशा है भारत के नागरिक बुन्देलखण्ड के इन बच्चों से कुछ शिक्षा प्राप्त करेंगे।

भिलाई में कोक ओवेन बैटरी प्रज्वलित!

भिलाई में प्रथम कोक ओवेन बैटरी प्रज्वलित होगई है। कारखाने में इस्पात के उत्पादन के लक्ष्य के और समीप पहुँचने में यह सबसे बड़े पगों में से एक है। इसके महत्व का इसी तथ्य से पता चल सकता है कि कोक बैटरी में तैयार होने वाले कोयले (दैनिक उत्पादन १००० टन) के अभाव में वायु भट्टी में ढलाई लोहा तैयार नहीं किया जा सकता। इसके अलावा बैटरी के उपोत्पादन (बाइप्रोडक्ट्स) कारखाने से जो कि बहुत तेज रफ्तार से बनाया जा रहा है, मिलने वाली गैस के बिना खुली वायु भट्टी में इस्पात तैयार नहीं हो सकता।

बैटरी की चिमनी की ऊंचाई ३२६ फीट है। यह भारत में सबसे ऊंची है। अगर कोई उसकी ऊंचाई की तुलना दिल्ली के २३८ फीट ऊंचे कुतुब मीनार से करें तो वह इसकी कल्पना ठीक तरह कर सकते हैं।

बैटरी के गर्म होने में दो माह लगेंगे, तब कोक तैयार हो सकेगा। बैटरी को गर्म करना एक जटिल प्रक्रिया है। इसी पर इसका भावी जीवन और कार्य निर्भर करते हैं। इसे गर्म करना तब तक जारी रहेगा जब तक इसका तापमान १०००° सेंटिग्रेड तक न पहुँच जाय। तब जाकर कोक उत्पादन के लिए कोयले को चार्ज करने का काम शुरु किया जा सकेगा।

ताप की व्यवस्था ठीक तरह से करने के लिए आतिशदान युक्त बैटरी की कोयला और रैम, दोनों बगलों में ६५ अस्थायी स्टोव बनाये गये हैं। अग्नि उत्पादित उष्ण वस्तुएं पहले कोयला-कक्ष में, फिर ऊर्ध्वाकार हवादानियों में, उसके बाद रिजेनरेटरों में और अन्ततः चिमनी की निचली नलियों से होकर चिमनी में पहुँचती है। एक बार प्रज्वलित होने पर बैटरी को फिर बुझाया नहीं जा सकता और अगर ठीक तरह देखभाल की जाय, तो वह निरन्तर २५ वर्ष तक प्रज्वलित रह सकती है। उसके बाद मरम्मत की जरूरत पड़ती है।

जब तमाम बैटरियां चालू हो जायेंगी तो वे प्रतिवर्ष १२ लाख टन कोक तैयार करेंगी। उससे कच्चे लोहे के उत्पादन के लिए सिर्फ वायुभट्टी की जरूरतें ही पूरी नहीं होंगी बल्कि व्यापारिक उद्देश्यों के लिए ४५००० टन फालतू कोक बच रहेगा। उसके उपोत्पादन कारखाने अमोनियम सल्फेट, बेंजोल, टोलुओल, नैफ्थलिन तथा बिक्री योग्य तरह-तरह के उपयोगी तेल तैयार करेंगे।

एक लाख से अधिक बाइसिकलें तैयार!

भारत में बाइसिकलें तैयार करने में पंजाब का प्रमुख स्थान है। इस सम्बन्ध में पांच उच्च स्तरीय यूनिट, बहादुरगढ़, फरीदाबाद, सोनीपत और राजपुरा आदि स्थानों पर कार्यरत हैं और प्रति वर्ष १ लाख से अधिक बाइसिकलें तैयार करते हैं। इसके अलावा भारत सरकार ने २४ लघु-यूनिटों के लिए भी स्वीकृति दी है जो प्रति वर्ष १,०८,००० बाइसिकलें तैयार करेंगे। राज्य में ४८६ लघु 'स्तरीय यूनिट हैं जो बाइसिकिलों के पुर्जे तैयार करते हैं। इन यूनिटों में ४७,००,००० रुपए की राशि लगी हुई है और ४,००० व्यक्ति इसमें लगे हुए हैं। गत वर्ष १,६०,७०० बाइसिकलें तैयार की गईं। भारत सरकार द्वारा स्वीकृति योजना के जारी हो जाने पर इस संख्या में वृद्धि हो जाएगी।

उत्पादित वस्तुओं का मूल्य २ करोड़ रुपए से अधिक बैठता है। इसमें साइकिलों के पुर्जों का मूल्य भी सम्मिलित है। साइकिलों के पुर्जे मिलाने और उनकी पालिश आदि का कार्य केन्द्रीय वर्कशाप में होगा जो कि आधुनिक सामान के साथ वहां कायम की जा रही है।

भूमि के गर्भ में अनन्त जल है

कृषि और उद्योग के लिए तथा पीने के लिए पानी की आवश्यकता दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। और भूमि के ऊपर प्राप्य जल-स्रोत सीमित हैं। ऐसी स्थिति में धरती के गर्भ में सुरक्षित जल भंडार की ओर ही हमारी दृष्टि जाती है। भूगर्भी-जल-भंडार के प्रमुख गुण क्या हैं ? इसे प्राप्त करने की दिशा में क्या प्रगति की जा चुकी है ? भविष्य में इस ओर प्रगति की क्या सम्भावनाएं हैं ?—यह सब कुछ इस लेख से जानें।

आज संसार के लगभग सभी देशों में पानी की कमी अनुभव की जा रही है। ऐसे क्षेत्र हैं, जिनमें मौसम के अनुसार अथवा सदा ही पानी की तंगी बनी रहती है। अपने देश के विभिन्न भागों में गर्मी के दिनों में कुवें और जल-सोते सूख जाते हैं, जिससे मनुष्यों को बहुत कष्ट भोगना पड़ता है और हजारों पशु मर जाते हैं।

आर्थिक विकास की आरम्भिक अवस्थाओं में सिंचाई के लिए जो पानी उपयोग में लाया जाता है, उसकी मात्रा अन्य काम में आने वाले जल से अधिक होती है। पर ज्यों-ज्यों समय बीतता है, इसमें वृद्धि नहीं होती। उद्योगों की विभिन्न प्रक्रियाओं में पानी की जो मात्रा इस्तेमाल की जाती है, वह औद्योगीकरण की प्रगति के साथ-साथ तेजी से बढ़ती है; और अंत में सिंचाई के लिए इस्तेमाल की जाने वाली मात्रा से भी अधिक हो जाती है। हिसाब लगाया गया है कि आज संसार में प्रत्येक मनुष्य के पीछे ६०० घन मीटर पानी प्रति वर्ष इस्तेमाल किया जाना चाहिए। पर संयुक्त राज्य अमरीका ही अकेला देश है, जहां पानी का वास्तविक उपयोग इस मात्रा से अधिक हो रहा है। पानी के पुराने स्रोत मनुष्य की आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ हैं, इसलिए संसार के सभी देशों में पानी के नये स्रोत खोज निकालने के लिए बहुत प्रयत्न किया जा रहा है।

पिछले दिनों झरनों, नदियों और झीलों के पानी को इस्तेमाल करने और धरती के भीतर के स्रोतों से पानी निकालने के अतिरिक्त ऐसे उपाय निकाले गये हैं, जिनके द्वारा समुद्र से मीठा पानी तैयार किया जा सकता है और बादलों से ५.१५ प्रतिशत तक अधिक वर्षा प्राप्त की जा सकती है। पर इन दोनों उपायों की सीमायें हैं। समुद्र से मीठा पानी तैयार करने का काम इतना मंहगा है कि उसे इस्तेमाल में नहीं लाया जा सकता; और बादलों को "दुहने" से अतिरिक्त वर्षा ऐसे क्षेत्रों पर हो सकती है, जहां अधिक पानी की आवश्यकता न हो।

नया ज्ञान और नया शिल्प

अभी हाल तक पानी के संचय और इस्तेमाल करने के संबंध में यही सम्भव समझा जाता था कि नदी घाटियों का विकास किया जाए। इसका अर्थ यह होता था कि जिन सूखे रेगिस्तानी क्षेत्रों में नदियां नहीं हैं, उनका कभी विकास नहीं हो सकता और उनका भविष्य सदा अंधकारमय रहेगा। पिछले कुछ दशकों में, धीरे-धीरे, धरती में छेद करने तथा दूसरी भूगर्भिक क्रियाओं से भूतल के नीचे के पानी के बारे में जानकारी और सूचनाएं इकट्ठी होती रही हैं। यूगोस्लाविया, आस्ट्रिया और इटली की सीमाओं के कार्स्ट क्षेत्र में जहां नदियां पृथ्वी के भीतर समा जाती हैं, धरातल के नीचे अनेक गुफाओं का पता चला है। इन गुफाओं में भूगर्भीय जल का निरीक्षण किया जा सका है।

विशेष जल भंडार

पृथ्वी के गर्भ में जल के ऐसे भंडारों का पता चला है, जो समझा जाता है कि पृथ्वी के इतिहास के हिमयुग के अंतिम कालों में, आज से हजारों वर्ष पहले, बने थे। पृथ्वी के धरातल के ऊपर इस प्रकार के पुरातन जल के अवशेष उत्तरी कमरीका की झीलें हैं। यह अनुमाना जाता है कि पृथ्वी के नीचे पानी के ये भंडार पृथ्वी के ऊपर के पानी के भंडार से १० गुने बड़े हैं।

भूगर्भीय जल के भंडार, ऊपर की नदियों और मीठे पानी के भंडारों को मिला कर भी उनसे बहुत अधिक विशाल हैं। प्रतिवर्ष जो पानी आता-जाता है उसके कारण उनके तल में बहुत थोड़ा परिवर्तन होता है। यदि कई

वर्ष लगातार सूखा पड़ता रहता है तो नदियों का पानी बहुत अधिक घट जाता है। पर भूगर्भी जल भंडार, माध्यम आकार के भी जल्दी जलहीन नहीं होते। सूखे के दिनों में भूगर्भी पानी अपनी मात्रा की अति विशालता और गति की मंदता के कारण नदियों के जल का मुख्य स्रोत होता है। वास्तव में नदियों में जो जल बहता है, उसका एक-तिहाई से अधिक भूगर्भी जल स्रोतों से आता है।

धरती के भीतर का पानी बहुत-सी चट्टानी बनावटों में होकर छनता है। इसलिए वह अपेक्षाकृत शुद्ध होता है। इसके इस्तेमाल से जलवाहित बीमारियों के फैलने का खतरा नहीं होता। उसमें जो खनिज पदार्थ घुले होते हैं, अधिकांश दशाओं में वे मनुष्य, पशु, पौधों और धरती के लिए लाभकारी होते हैं। जिस धरती की सिंचाई भूगर्भी जल से की जाती है, उसे नदी सिंचित धरती की अपेक्षा कम खाद की आवश्यकता होती है। उल्लेखनीय है कि ऐसे ही पानी के इस्तेमाल से मनुष्य को यह पता चला कि फ्लोरीन मनुष्य के दांतों के लिए लाभकारी है और उनकी रक्षा करती है। इस ज्ञान का उपयोग अब बहुत से देशों में किया जा रहा है। वहां पीने के पानी में फ्लोरीन अलग से मिलायी जाती है।

पृथ्वी के नीचे भूगर्भी जल भंडार केवल ध्रुव के निकट के अतिरिक्त और कहीं नहीं जमता। गर्म देशों में वह गर्म नहीं होता। इस कारण सर्दियों में निकाले गये पानी को गर्म करने की आवश्यकता नहीं होती और गर्मियों में निकाला गया पानी ठंडा करने के काम में लाया जा सकता है। भूगर्भी जल भंडार वायुमंडल के सम्पर्क में नहीं आते। यह पानी वायुमंडल में उपस्थित परमाणु कणों से बचा रहता है और परमाणु शक्ति उत्पादक उपकरणों को शीतल करने के काम में लाया जा सकता है। इनका पानी उड़ने के कारण छीजता नहीं। यदि पानी का स्तर ऊंचा उठ जाता है तो पम्प से पानी निकालकर उसे इच्छानुसार नीचा किया जा सकता है।

यदि इन भूगर्भी जल भंडारों में पानी कम हो जाता है तो उन्हें धरातली पानी से भरा जा सकता है। सूखे रेगिस्तानी क्षेत्रों में बाढ़ के पानी को धरती के भीतर इस प्रकार भर कर उसे भावी उपयोग के लिए रखा जा सकता है। आर्थिक और इन्जीनियरिंग दृष्टि से भी जल के भूगर्भी संचय में लाभ है। धरातल-जल उपयोग की बहुत-सी योजनाएं, विशेषतया बांध, उस समय तक लाभकारी नहीं हो सकतीं, जब तक कि वे बिल्कुल पूरी नहीं हो जातीं। और जब वे पूरी हो जाती हैं, तो अचानक बहुत-सा पानी प्राप्य हो जाता है, जिसके पूर्ण उपयोग में काफी समय लगता है। भूगर्भी जल का उपयोग धीरे-धीरे बढ़ाया जा सकता है।

जल के ये भूगर्भी भंडार पृथ्वी पर से दिखायी नहीं देते। इसलिए उन्हें खोजना होता है। पानी के खोजने का काम बहुत-सी बातों मे पैट्रोलियम के खोजने के काम के समान है।

बीरशेवा के कुएँ

पिछली दो पीढ़ियों में नल धंसाने और पानी निकालने के पम्प लगाने के उल्लेखनीय शिल्पों में प्रगति हुई है। येरूशलम के दक्षिण बीरशेवा के क्षेत्र में ६०० मीटर गहरे नल कुवें बनाये गये हैं और २००-२५० मीटर गहरे जल-स्तर से १००-५०० घन मीटर पानी प्रति घंटे निकालने का प्रबंध किया गया है। धरती के ऊपर आकर इस पानी की जो लागत पड़ती है, वह इतनी कम है कि इस पानी को शहरी और औद्योगिक कामों के अलावा, सिंचाई के लिए भी इस्तेमाल किया जा सकता है। यदि मनुष्य को भूगर्भी पानी काफी मात्रा में प्राप्त हो जाए, तो पृथ्वी के वे अधसूखे क्षेत्र, जहां कृषि की लगभग आदर्श परिस्थितियां उपस्थित हैं, खाद्य और औद्योगिक फसलों से लहलहा सकते हैं।

भारत के भूगर्भी जल-स्रोतों के विषय में जल की उपस्थिति के विषय में विभिन्न क्षेत्रों की चट्टानों की बनावटों और स्थितियों से अनुमान लगाया जाता है। नदी-तलछट से बनी घाटियों (जैसे गंगा का मैदान) और टरशरी तथा जूराक्रिटेशस रेतिया-पत्थर के क्षेत्रों (जैसे सौराष्ट्र और राजस्थान) में नलकुवें बनाने के लिए काफी पानी मिल सकता है। दक्षिण के समुद्री किनारे पर और हिमालय की तलहटी में भी ऐसा भूगर्भी पानी होने की संभावना है, जो कुओं द्वारा निकाला जा सकता है। पर भारत का तीन-चौथाई से अधिक भाग कठोर चट्टानी बनावटों से निर्मित है। ऐसे क्षेत्रों में पानी की जो मात्रा मिलती है, वह साधारणतया कम होती है।

सम्पादक के नाम पत्र

ठेकेदारी प्रथा समाप्त हो !

श्री सम्पादक जी,

विभिन्न प्रदेशों में सरकारों ने जमींदारी प्रथा का अन्त करके महत्वपूर्ण कार्य किया है। किन्तु एक ओर तो सरकार जनता और सरकार के मध्यस्थों को समाप्त कर रही है और दूसरी ओर ठेकेदारों—दूसरे प्रकार के मध्यस्थों का पल्ला छोड़ने को तैयार नहीं। सरकारी दफ्तरों की स्टेशनरी तक ठेकेदारों के द्वारा खरीदवाई जाती है। यही नहीं, अधिकांश सरकारी निर्माण कार्य भी ठेकेदारों के द्वारा पूरे कराए जाते हैं। स्पष्ट है कि ठेकेदार द्वारा काम कराने में ठेकेदार अधिक से अधिक पैसा स्वयं खा जाना चाहता है। इसके लिए वह अधिकारियों को लालच देकर राष्ट्रीय-चरित्र को नीचे गिराने का प्रयत्न करने से भी नहीं चूकता। परिणाम यह होता है कि ठेकेदार लोग सरकारी उपयोग के लिए खराब माल मढ़ देते हैं या खराब मसाले से भवन, पुल, बांध आदि बना देते हैं। प्रश्न यह है कि क्या यह समस्या इतनी विकट है कि इसे हल नहीं किया जा सकता ? क्या सरकारी कामों को कराने के लिए ठेकेदारों की मध्यस्थता समाप्त नहीं की जा सकती ? इस प्रश्न का मुंह-तोड़ उत्तर अम्बाला में बिना ठेकेदारों के मकान बनाने का सफल परीक्षण है। यहां जो कुछ किया गया है, उसकी समूचे राष्ट्र को जरूरत है। यहां ठेकेदारों का नामोनिशां नहीं रहा। मजदूरों के साथ मानवीय व्यवहार हो रहा है और उनकी रिहायश की स्थिति भी अच्छी है। यहां एक ऐसा आदर्श उपस्थित किया गया है कि जिसे नागरिक जीवन में भी अपनाया जा सकता है। एक करोड़ रु० से भी ज्यादा की रकम बचा ली गई है। वैसे यह ठेकेदारों की जेब में चली जाने वाली थी।

यहां जिस योजना से काम लिया जा रहा है, उससे न केवल पैसे की बचत हुई है, बल्कि यहां काम करने वाले मजदूरों की हालत भी अच्छी है। उन्हें कई सुविधाएं प्राप्त हैं। वैसे जिस निर्माण-कार्य में दो वर्ष लगते, वह अब ६ महीनों में पूरा हो गया है।

फौजी लोग निर्धारित समय से १॥ वर्ष पहिले ही इन क्वार्टरों में आबाद हो जाएंगे, यह अपने आपमें एक ऐसा प्रयास है कि जिसका महत्व पैसों में नहीं आंका जा सकता।

आशा है हमारी सरकार इस परीक्षण से सबक लेगी और ठेकेदारी की दूषित प्रथा को समाप्त करने के प्रयत्न करेगी।

—कृष्णदत्त शर्मा

स्वतंत्र भारत में गौवंश

श्री सम्पादक जी,

हमारा देश परतंत्र था तो सुनने में आता था कि परतंत्रता के कारण गो-वंश की उन्नति नहीं हो रही। अब देश स्वतंत्र हो गया है, फिर भी गौ-वंश की स्थिति पूर्ववत ही है। धार्मिक दृष्टिकोण से गाय की रक्षा की बात छोड़ भी दें, तो भी आर्थिक दृष्टि से गौ-वंश की उन्नति बहुत आवश्यक है। गाय हमारे समाज का एक अभिन्न अंग है, क्योंकि इस देश की ८५ प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर करती है।

जो गाय समाज को दूध और खेती के लिए बैल देती है उसको वृद्धावस्था में आश्रय अवश्य मिलना चाहिए। संसार की कुल ५४ करोड़ गायों में से १६ करोड़ के लगभग तो हमारे देश में ही हैं। भारत की १२०० गायों और शहरों की ५० गायों के पीछे एक गाय गौशाला में रह रही है। दूध के हर एक प्याले में ६ बून्द दूध गोशाला की होती हैं।

आशा है गांधी अनुयायी हमारी सरकार गो-वंश के नस्ल सुधार और उसकी उन्नति के लिए कुछ करेगी।

—निरंजन प्रकाश वासिष्ठ

> स्वराज्य की इमारत एक जबरदस्त चीज है जिसे बनाने में अस्सी करोड़ हाथों का काम है। इन बनाने वालों में किसानों की तादाद सबसे बड़ी है। सच तो यह है कि स्वराज्य की इमारत बनाने वालों में ज्यादातर (करीब ८० फ़ी सदी) वही लोग हैं इसलिए असल में किसान ही कांग्रेस है, ऐसी हालत पैदा होनी चाहिए।
>
> —गांधी

श्रम समस्या

कृषि और उद्योग की मजदूरी में अन्तर

भारत में खेती की न्यून आमदनी के जिये एक अन्य तत्व उत्तरदायी है : निर्माणकारी उद्योगों के मजदूरों की मजदूरी की तुलना में खेतीहर मजदूरों की मजदूरी की सापेक्ष न्यूनता। नीचे हम कृषि और जंगलों में काम करने वाले मजदूरों के अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर संघ द्वारा प्रकाशित मासिक पत्र—लैंड एंड वर्क, के मई १९५८ के अंक से एक तालिका प्रस्तुत कर रहे हैं, जो निश्चय ही अधिक उपादेय सिद्ध होगी :

कृषि और उद्योग की मजदूरियों के बीच तुलना
दैनिक मजदूरी (संयुक्त राज्य अमरीका के डालर में)

देश	कृषि	निर्माणकारी उद्योग	उद्योग की तुलना में खेतीहर मजदूरी का प्रतिशत
कनाना	४,४	८,०	५५
ब्रिटेन	२,४	३,६	८१
आस्ट्रेलिया	४,६	६,१	८४
आस्ट्रिया	१,२	१,८५	६४
चिली	१,२७	१,६	६७
मैक्सिको	०,५३	१,७	२८
भारत	०,२८	०,६५	४३
जापान	०,७१	१,४२	५०
श्रीलंका	०,५१	०,८६	५८

इस तालिका से यह स्पष्ट है कि आर्थिक दृष्टि से विकसित देशों में खेतीहर और औद्योगिक मजदूरी के बीच अन्तर विशेष उल्लेखनीय नहीं है, जबकि भारत जैसे देशों में खेतिहर मजदूर की औसत दैनिक मजदूरी औद्योगिक मजदूरी के आधे से भी कम है।

मजदूर मालिक सहयोग बढ़ाएं

बढ़ती हुई मांग से उद्योग तथा कृषि में मजदूरों को भी यह प्रेरणा मिलनी चाहिए कि उत्पादन के लिए और अधिक प्रयत्न किये जायं। हमारी श्रमनीति का कोई अलग आधार नहीं है। वह हमारी बृहत्तर आर्थिक नीति का जीवन-स्तर उठाना ही है, आर्थिक और सामाजिक मानों को ऊंचा करना तथा गरीबी और बेरोजगारी दूर करना है।

आर्थिक नीति को अमल में तभी लाया जा सकता है जबकि समाज के सभी अंग पूरा-पूरा योग दें अर्थात् कड़ा परिश्रम करें ताकि उत्पादन बढ़ सके।

यदि विवाद हल करने के अन्य रास्ते खुले हों तो हड़ताल और भूख हड़ताल करना उचित नहीं और वह सरकार निकम्मी होगी जो ऐसी हड़तालों से झुक जाए। यदि उद्योगपति मजदूरों का अधिकतम सहयोग चाहते हैं तो चाहिए कि किसी भी मौके पर मजदूरों के उन्हें देखना हितों की बलि न दी जाय।

श्रमिकों के स्वास्थ्य की समस्या

एशियाई देशों में उद्योग तेजी से बढ़ रहे हैं। इससे मजदूरों के स्वास्थ्य और सुरक्षा के लिए अब तक जो प्रबन्ध किये गये हैं, वे आगे चलकर काफी नहीं होंगे। इसलिए यदि हम चाहते हैं कि उद्योग तेजी से बढ़ें और मजदूर इसमें भरपूर सहायता दें तो हमें चाहिए कि हम उनके स्वास्थ्य और सुरक्षा के लिए और अधिक प्रबन्ध करें।

पश्चिम के जिन देशों में उद्योग काफी बढ़ चुके हैं वहां मजदूरों की सुरक्षा और स्वास्थ्य के लिए भी काफी काम हो चुके हैं, परन्तु एशियाई देशों में कभी ऐसा नहीं हुआ है। इसलिए हमें इस विषय पर काफी ध्यान देना होगा।

—गुलजारी लाल नन्दा

स्त्री-पुरुष मजदूरों के लिये बराबर वेतन

भारत सरकार ने अंतर्राष्ट्रीय श्रमसंगठन के स्त्री-पुरुष

मजदूरों को बराबर वेतन देने के करार की पुष्टि कर दी है। जून १९५१ में अंतर्राष्ट्रीय श्रम-सम्मेलन ने एक से काम के लिए स्त्रियों और पुरुषों को एक-सा वेतन देने का प्रस्ताव किया था। सम्मेलन में भारत सरकार ने स्पष्ट कर दिया था कि जब तक उसके पास इस सिद्धान्त को लागू करने की पूरी व्यवस्था नहीं है, तब तक वह इस करार की पुष्टि नहीं कर सकती। इसके बाद श्रम-संगठन ने विशेषज्ञों की एक समिति नियुक्त की, जिसने उन देशों की रिपोर्टों की छानबीन की, जिन्होंने इस करार की पुष्टि नहीं की थी। भारत भी इन देशों में था। समिति इस निष्कर्ष पर पहुँची कि यह करार सदस्य देशों को मजबूर नहीं करता कि वे हर हालत में इस करार को मानें। सरकार उन्हीं उद्योगों या व्यवसायों में इस बात पर अमल कर सकती है, जिनमें से उसे वेतन या मजदूरी निश्चित करने का अधिकार है। विशेषज्ञों की इस राय की १९५६ के अंतर्राष्ट्रीय श्रम-सम्मेलन से पुष्टि की गई। करार के इस नये अर्थ के बारे में भारत सरकार ने राज्य सरकारों और विभिन्न मंत्रालयों की राय ली और इसकी पुष्टि करने का निश्चय किया।

भारत के संविधान में भी स्त्री-पुरुषों के बराबर वेतन का सिद्धान्त माना गया है। इस करार की पुष्टि के अंतर्राष्ट्रीय श्रम-कार्यालय में रजिस्ट्री होने के १२ महीने बाद इसे लागू किया जाएगा। अभी तक अंतर्राष्ट्रीय श्रम-संगठन के ८० सदस्य देशों में से २४ इसकी पुष्टि कर चुके हैं।

मालिक-मजदूर विवादों का हल

सरकारी और प्राइवेट उद्योगों में अनुशासन बनाए रखने के लिए केन्द्रीय और राज्य सरकारों ने अनुशासन की एक संहिता तैयार की है, जिसकी मालिकों और मजदूरों केन्द्रीय संगठनों ने पुष्टि कर दी है।

इस संहिता में कहा गया है कि सर्वप्रथम मालिक तथा मजदूर कानूनों और समझौतों से निर्दिष्ट एक दूसरे के अधिकारों और कर्तव्यों को उचित रूप में स्वीकार करें और इस स्वीकृति के फलस्वरूप दोनों अपने कर्तव्यों का उचित पालन करें।

अच्छे अनुशासन के लिए मालिक मजदूर संघ, दोनों इस बात पर राजी होंगे कि किसी भी औद्योगिक विवाद पर एकपक्षीय कार्यवाही न की जाए, विवादों को उचित स्तर पर हल किया जाय।

कोई भी पक्ष हिंसा, बल, धमकी आदि का सहारा नहीं लेगा। वे आपस में सब स्तरों पर रचनात्मक सहयोग से काम लेंगे और आपसी समझौते की भावना का आदर करेंगे।

मालिक इस पर सहमत होंगे कि वे मजदूरों के पूर्व निर्धारण के बिना कार्यभार नहीं बढ़ाएंगे। वे मजदूरों के मजदूर संघों के सदस्य बनाने तथा दूसरी कार्रवाइयों में हस्तक्षेप नहीं करेंगे। मालिक समझौतों व आदेशों को तुरन्त लागू करेंगे। वे प्रमुख स्थानों पर स्थानीय भाषा में नीति-निर्देश की धाराओं को प्रदर्शित करने की व्यवस्था करेंगे। यदि मालिक अपने अफसरों व सदस्यों को जांच के पश्चात् मजदूरों में अनुशासन बिगाड़ने के लिये जिम्मेदार पाएंगे तो उन पर अनुशासनात्मक कार्रवाई करेंगे।

मजदूर संघ किसी प्रकार की शारीरिक हिंसा और अशांतिपूर्ण प्रदर्शनों में भाग नहीं लेंगे।

संघ मजदूरों की गलत कार्रवाइयों, जैसे काम की अवहेलना, असतर्क चलन, सम्पत्ति की हानि आदि को बन्द करने की कोशिश करेंगे। वे समझौते के आदेशों को तुरन्त कार्यान्वित करने के प्रयत्न करेंगे और अपने दफ्तरों में समझौतों और आदेशों को प्रमुख स्थानों में प्रदर्शित करेंगे तथा अपने उन अधिकारियों पर उचित कार्रवाई करेंगे जो इस संहिता की भावना के खिलाफ काम कर रहे हों।

छोटे और मध्यम उद्योग

भारतीय अर्थतन्त्र में छोटे और मध्यम उद्योग रीढ़ की हड्डी के समान हैं। ये लाखों श्रमिकों को काम देते हैं। इनके आर्थिक महत्व को हालांकि, अभी तक सही-सही नहीं आंका गया है। अब समय है कि सरकार इनके संरक्षण और प्रसार की ओर अधिक दिलचस्पी ले।

— श्री मुरारजी जे. वैद्य

मास की प्रमुख आर्थिक घटनाएँ

नकली रेशम उद्योग का संरक्षण

भारत सरकार ने तटकर आयोग की यह मुख्य सिफारिश मान ली है कि १ जनवरी, १९५९ से नकली रेशम और सूत मिश्रित तथा नकली रेशम मिश्रित कपड़ा उद्योग को संरक्षण देना बन्द कर दिया जाए।

सरकार ने आयोग की यह सिफारिश भी मान ली है कि वस्त्र कमिश्नर बिजली के सभी चालू करघों की रजिस्ट्री करने के लिए उचित कार्रवाई करने के साथ ही इसके लिए प्रयत्न करेगा कि देश में रद्दी करघे चालू न किये जाएं।

रासायनिक रबर का कारखाना

भारत सरकार ने प्रस्तावित रासायनिक रबर का कारखाना बरेली में खोलने का निश्चय किया है।

उत्तरप्रदेश सरकार राज्य में एक भारी उद्योग का कारखाना खोलने के लिए केन्द्रीय सरकार से बहुत पहले से ही मांग करती आ रही थी। यह कारखाना भारत सरकार गुडइयर तथा अन्य कम्पनियों के सहयोग से स्थापित करेगी। इसमें करीब १० हजार आदमियों को काम मिल सकेगा। स्थान का निरीक्षण करने विशेषज्ञों का दल शीघ्र ही बरेली जायगा। सर्वेक्षण कार्य इस वर्ष प्रारम्भ हो जायगा। इस कारखाने के निर्माण में करीब १७ करोड़ रुपया खर्च होगा।

नया तेल शोधक कारखाना

रूमानियन उपमंत्री श्री यान्कू होरातीयु के नेतृत्व में रूमानियन तैल विशेषज्ञ दल ने आसाम के मुख्य मंत्री श्री विमलप्रसाद चालिहा से राज्य में तेल-शोधक कारखाना स्थापित करने के प्रश्न पर वार्ता की। वार्ता के समय राज्य के कुछ मंत्री तथा वरिष्ठ अधिकारी भी उपस्थित थे।

प्रस्तावित कारखाने के स्थान के लिए रूमानियन दल ने कुछ स्थानों का निरीक्षण भी कर लिया है। स्थान के बारे में अन्तिम निर्णय की घोषणा बाद में होगी।

हीराकुड में अलमुनियम का कारखाना

कलकत्ता की इण्डियन एल्यूमीनियम कम्पनी ने हीराकुड में अलमुनियम पिघलाकर साफ करने का कारखाना खोल दिया है। इस कारखाने में हर साल अलमुनियम के १०,००० टन ढोके साफ किये जा सकते हैं। यह कारखाना फरवरी, १९५९ से चालू हो जाएगा।

रूरकेला में कच्चे लोहे का निर्माण

रूरकेला में भारतीय और जर्मन टेक्नीशियन इस्पात-योजना के स्थान पर दिन-रात काम कर रहे हैं और यह प्रयत्न कर रहे हैं कि इस वर्ष के अन्त तक कच्चे लोहे के पहले पिंड ढल कर निकल सकें।

ढाई वर्गमील के घेरे में फैले हुए कल-पुर्जे और आधे खड़े किए हुए यंत्र यह बताते हैं कि रूरकेला गांव का बड़ी तेजी से इस्पात-नगर के रूप में रूपान्तर हो रहा है। टेक्नीशियन २०,००० मजदूरों से काम ले रहे हैं, उन्होंने गत जून से काम की गति तेज कर दी है।

सिंगरौली क्षेत्र में कोयले का प्रचुर भंडार

मिरजापुर के दक्षिण में तथा भूतपूर्व रीवा राज्य की सीधी तहसील में सिंगरौली कोयला क्षेत्र में कम-से-कम ५० करोड़ टन कोयला विद्यमान है।

इस क्षेत्र की विस्तृत जांच दिसंबर मास के प्रारम्भ में हो जायगी। कोयले की तीन तहों का पता लगा है जो हवाई जहाज द्वारा की गयी जांच से ऊपर ही मालूम होती है। सड़कों के न होने के कारण इस क्षेत्र को जांच में विलम्ब हुआ।

कर-भार हल्का नहीं होगा

केन्द्रीय वित्तमन्त्री श्री मुरारजी देसाई ने एक भाषण में कहा है कि सरकार कर-प्रणाली में सरलता लाने के लिए सतत् प्रयत्नशील हैं जिससे लोग परेशानियों से बच सकें और कर की वसूली जल्दी हो जाय और कर दबा बैठना कठिन हो जाय। यह हम स्पष्ट कर दें कि जो कुछ हम करेंगे उससे कर हल्का न होगा।

शाहजहांपुर और बरेली के निकट तेल की शोध

केन्द्रीय वैज्ञानिक अनुसंधान मन्त्री श्री केशवदेव

मालवीय ने कहा है कि उत्तरप्रदेश में भी शाहजहांपुर और बरेली के बीच में तेल की खोज की जा रही है।

भारत और रूस में व्यापारिक समझौता

रूस और भारत के बीच ५ वर्षों के लिए एक नया व्यापारिक समझौता हो गया है। समझौते में यह तय हुआ है कि दोनों देश समानता तथा पारस्परिक लाभ के आधार पर एक-दूसरे से हो रहे व्यापार को अधिक बढ़ायेंगे।

उक्त समझौते के अनुसार दोनों देश एक-दूसरे को सब संभव सहायता प्रदान करेंगे और भुगतान के सम्बन्ध में यह तय हुआ कि भारतीय रुपयों में भुगतान किया जा सकता है। भारतीय रुपयों को पौंड या किसी अन्य मुद्रा में परिवर्तित करने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। यह इसलिए किया गया जिससे दोनों देशों के बीच संतुलित व्यापार का प्रयत्न किया जा सके। इससे विदेशी मुद्रा के व्यय की जरूरत नहीं पड़ती।

खंभात तेल स्रोत की व्यापारिक क्षमता

केन्द्रीय इस्पात, खनिज एवं ईंधनमन्त्री सरदार स्वर्णसिंह ने कहा है कि १९५९ के अन्त तक इसका पता लग सकेगा कि खंभात में जो तेल स्रोत मिला है उसकी उत्पादन क्षमता कितनी होगी। कई प्रकार के उत्पादन परीक्षणों के अलावा तेल स्रोत के पास दो और कुएं खोद कर उनसे तेल निकालना पड़ेगा जिससे इस बात का पता लग सकेगा कि इस तेल क्षेत्र का व्यापारिक दृष्टि से क्या महत्व होगा।

अब तक ७००० फुट तक खोदाई हुई है और अलग-अलग स्थानों पर ३ तैल स्रोत मिले हैं। इस कुएं की खोदाई अब आगे न होगी क्योंकि 'डेक्कन ट्रैप' नामक पाताल की चट्टान तक खोदाई हो चुकी है। इस कुंड से एक मील की दूरी पर दूसरा कुंआ खोदा जा रहा है। बड़ौदा में कई स्थानों पर कुंए खोदकर तेल के सम्बन्ध में भूगर्भीय आंकड़े प्राप्त किये जा रहे हैं। एक स्थान पर तेल स्रोत मिला है परन्तु उसकी उत्पादन शक्ति के बारे में अनुमान लगाने से पूर्व वहां काफी खुदाई करनी पड़ेगी।

आपने आगे बताया कि आसाम, ज्वालामुखी क्षेत्र एवं खंभात में तेल एवं प्राकृतिक गैस आयोग तेल निकालने का कार्य कर रहा है।

पाकिस्तान में महंगाई

पाकिस्तान के दैनिक 'इमरोज' के एक लेख से प्रकट होता है कि पाकिस्तान में आवश्यक वस्तुओं के मूल्यों में कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ा और कई चीजों का अभाव भी मौजूद है। इसी दैनिक में प्रकाशित एक छोटे से समाचार से मालूम होता है कि चांदपुर में एक नौजवान पर सरकार द्वारा मिश्रित मूल्य से अधिक भाव पर दूध खरीदने के अपराध में दो हजार रुपये का जुर्माना हुआ है। जुर्माना न देने पर दो वर्ष तक जेल में रहना पड़ेगा।

लिफ्ट बनाने का नया कारखाना

बम्बई का लिफ्टें (एलिवेटर) बनाने का नया कारखाना तैयार होने पर भारत की लिफ्टें तैयार करने की क्षमता बढ़ाने में महत्वपूर्ण योग देगा। इस प्रकार भारत का लिफ्टों का आयात घट जाएगा। न्यूयार्क की ओटिस एलीवेटर कम्पनी प्राइवेट लिमिटेड इसमें ४ लाख १० हजार डालर तक पुंजी लगा सकेगी।

भारतीयों के लिए घड़ी उद्योग ट्रेनिंग

स्विट्जरलैंड के घड़ी-निर्माताओं ने सभी देशों के शिक्षार्थियों को स्विट्जरलैंड में घड़ी का काम सीखने के लिए छात्रवृत्तियां देने का जो निर्णय किया है, उसके अन्तर्गत हर साल २० भारतीयों को छात्रवृत्ति दी जाएगी। यह कार्यक्रम आगे कुछ वर्षों तक चलाया जाएगा। ट्रेनिंग ढाई साल की होगी और ट्रेनिंग में होने वाला खर्च स्विस घड़ी उद्योग बर्दाश्त करेगा। भारत में घड़ी का काम सीखने के लिए जो शिक्षा संस्था खोली जाएगी, उसमें हर साल २०० शिक्षार्थी काम सीखेंगे। यहां ढाई साल तक शिक्षा दी जाएगी और ट्रेनिंग के लिए यंत्रादि स्विट्जरलैंड देगा। साथ ही वहां से शिल्पी और विशेषज्ञ भी यहां आएंगे, जिसका कोई खर्च नहीं लिया जाएगा।

———

नया साहित्य

सर्व-सेवा-संघ के प्रकाशन

स्त्री-शक्ति	(मूल्य बारह आना)
सर्वोदय पात्र	(मूल्य चार आना)
ग्राम स्वराज्य	(मूल्य नौ आना)
मेरा जीवन विकास	(मूल्य आठ आना)
धर्म सार	(मूल्य चार आना)
प्यारे बापू (तीन भाग)	(आठ, आठ, छः आने)

पिछले दो तीन वर्षों से सर्व-सेवा-संघ ने सर्वोदय शास्त्र, भूदान आन्दोलन तथा आचार्य विनोबा के विभिन्न विचारों के सम्बन्ध में ढेर सारा साहित्य प्रकाशित कर दिया है और कर रहा है। स्त्री-शक्ति में आचार्य विनोबा के स्त्री सम्बन्धी विचारों का संग्रह है। इसमें अनेक सामयिक समस्याओं पर भी विचार प्रकट किये गये हैं। किन्तु अनेक स्थलों पर हमारी नम्र सम्मति में उनके विचार काल्पनिक आदर्श समाज के लिए लिखे गये हैं। उनसे व्यावहारिक समस्याओं पर प्रकाश नहीं पड़ता। 'सर्वोदय पात्र' में सर्वोदय पात्र सम्बन्धी भाषणों का संग्रह है। 'ग्राम-स्वराज्य' में श्री ठाकुरदास बंग ने कुछ लेखों में ग्रामदान की चर्चा करते हुए, ग्राम-स्वराज्य की कल्पना का अच्छा चित्र खींचा है। इसमें अनेक व्यावहारिक उपयोगी सूचनाएं दी गई हैं। 'मेरा जीवन विकास' में श्री सहस्र बुद्धि ने अपनी जीवन कथा लिखते हुए उन प्रयोगों और अनुभवों की चर्चा विशेष रूप से की है, जो उन्हें रचनात्मक कार्य करते हुए अनुभव हुए। 'धर्म-सार' में श्री शिवाजी न० भावे ने धर्म और उच्च जीवन के सम्बन्ध में बहुत से सूत्रों का संग्रह किया है।

'प्यारे बापू' फ्रान्स की एक लेखिका एलेनी सेमिओ की फ्रेंच पुस्तक का अनुवाद है। इसमें गांधी जी की जीवनी बहुत सरल और सुबोध भाषा में लिखी गई है।
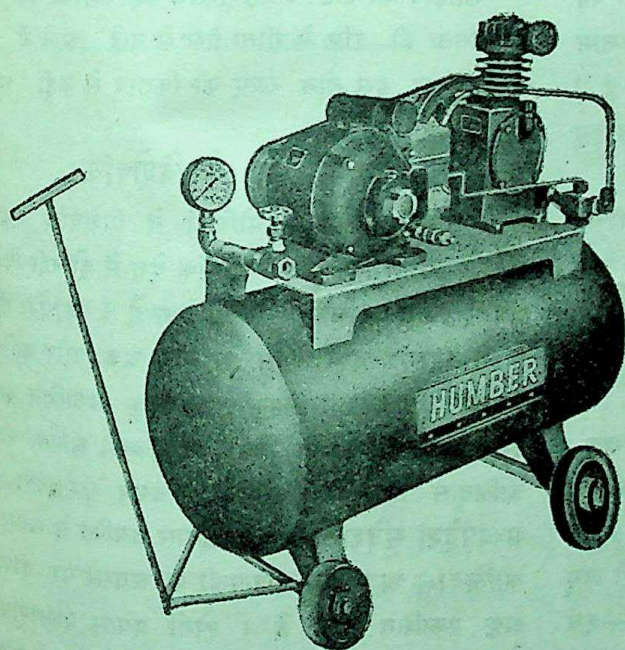
हमें आशा है कि उनकी यह पुस्तिका, जो मोटे टाइप में छापी गई है, गांधी जी को समझने में सहायक होगी। सभी पुस्तकें अ. भा. सर्व सेवा संघ, राजघाट काशी से प्राप्य हैं।

ज्ञान-विज्ञान पुस्तक माला

मौसम की कहानी	२.००
रसायन की कहानी	२.००
समुद्र की कहानी	२.००

राजपाल एण्ड सन्ज़ कश्मीरी गेट, दिल्ली, की ज्ञान-विज्ञान माला की ये तीन पुस्तकें हमारे सामने हैं। माला की पहली पुस्तकों की भांति ये पुस्तकें भी अंग्रेजी की प्रमाणिक पुस्तकों के प्रामाणिक अनुवाद हैं। अनुवाद की भाषा सरल-सुबोध है और ये पुस्तकें सुव्यवस्थित ढंग से अपने-अपने विषय की जानकारी पाठकों को देती हैं।

हफ़ीज़ जालन्धरी—जीवनी और संकलन—सम्पादक—प्रकाश पण्डित, प्रकाशक—राज्यपाल एन्ड सन्स काश्मीरी गेट, दिल्ली—६, मूल्य १.५०।

'उर्दू के लोकप्रिय शायर' सीरीज़ में प्रकाशित यह पुस्तक—हफ़ीज़ जालंधरी की जीवनी और उनके कलाम का अच्छा परिचय देती है। 'अभी तो मैं जवान हूं।' नज़्म में एक विशेष प्रकार की आस्था और ओज हम पाते हैं।

जिस व्यवस्थित ढंग से उर्दू शायरों का परिचय इस सीरीज़ द्वारा मिलता है, हिन्दी के प्रतिनिधि कवियों के साहित्य का परिचय देने वाली एक सीरीज़ का प्रकाशन भी प्रकाशक कर सकें तो वह बहुत उपयोगी सिद्ध हो—पाठक के लिए, प्रकाशक के लिए भी।

मेरा पहला प्यार—(दो लघु उपन्यास) मू० लेखक—तुर्गनेव, अनुवादक—शिवदानसिंह चौहान, विजय चौहान प्रकाशक—वही, मूल्य ३.००।

विश्व विख्यात रूसी कथाकार तुर्गनेव के दो लघु उपन्यास १—मेरा पहला प्यार और २—आस्या—इस पुस्तक में एक साथ प्रस्तुत किए गए हैं। अनुवाद की भाषा—भाव को उतारने में सफल और सुगठित होते हुए भी अधिक प्रवाह की अपेक्षा रखती है। प्रकाशन का स्तर सुन्दर, सुरुचिपूर्ण है।

जन गीता—(अनुवाद) अनुवादक—बच्चन, प्रकाशक वही, मूल्य ३.००।

कुछ घटनाएं ऐसी घटती हैं जो यह सोचने को मजबूर करती हैं कि हर साहित्यकार के सृजन का एक काल होता है, उस काल के पश्चात् साहित्यकार को चाहिये कि या तो लिखना बन्द कर दे और यदि वह लिखना बन्द नहीं करता तो फिर इस बात के लिए तैयार रहे कि अपनी प्रतिभा और परिश्रम के बल से उसने साहित्य में जो सीट प्राप्त की है, वह सीट चाहे तो बनी रहे, चाहे तो खिसक जाए; जन गीता का प्रकाशन एक ऐसी ही घटना है।

गीता के अनेक अनुवाद प्रकाशित हुए हैं। बच्चन जी ने भी यह अनुवाद छपवाया है। अनुवाद अवधी भाषा में और रामचरित मानस की दोहा-चौपाई शैली में है। साहित्य की यह भाषा और शैली दोनों ही क्योंकि आॅउट आफ डेट हैं, इसलिए पुस्तक को पढ़ते समय लगता है—जैसे बच्चन जी हमें उन्नीसवीं शताब्दी में खींच ले गए हैं।

साहित्य की दृष्टि से यह पुस्तक कहीं ठहरती नहीं, और उपयोगिता की दृष्टि से गीता प्रेस से ढाई आने में आने वाली गीता इस तीन रुपए की किताब से कहीं अधिक उपयोगी है।

सहयोगियों के विशेषांक

गत मास में कई सहयोगियों ने विशेषांक प्रकाशित किये हैं। जागृति का योजना अंक देश में हो रही विभिन्न क्षेत्रीय प्रगति का अच्छा परिचय देता है। कांग्रेस संदेश ने श्री नेहरू के जन्म दिवस पर बाल अंक और कालिदास जयन्ती के अवसर पर कालीदास अङ्क प्रकाशित कर इन दो महा-पुरुषों के प्रति अपनी श्रद्धांजली अर्पित की है। कालिदास अङ्क में लेखों का चयन सराहनीय है। मध्यप्रदेश संदेश ने भी कालिदास जयन्ति के अवसर पर कालिदास अङ्क और दीपावली के अवसर पर दीपावली अङ्क प्रकाशित किये हैं। दोनों प्रयास प्रशंसनीय हैं। व्यापार—गुजराती के प्रमुख वाणिज्य उद्योग के साप्ताहिक ने दीपावली विशेषांक नाम से सुपाठ्य सामग्री युक्त विशेषांक प्रकाशित किया है।

—भीमसेन त्यागी

[संस्मरण

ASP/LIC 34 HIN

यह है कल की बहू !

यह मुन्नी सूई में धागा डालने में व्यस्त है। इस तरह के घरेलू काम करने में उसका हृदय खिल उठता है। यों लगता है कि मुन्नी मातृ-हृदय लेकर ही पैदा हुई है।

"दुलहन" के योग्य अनेक काम सिखाकर उसकी माँ मुन्नी को भावी मातृत्व के लिए तैयार कर देती है। इस तरह माँ का फ़र्ज़ वह पूरा कर देती है। क्या आपने भी पिता के कर्तव्य को निभाया है ?

शहनाई, कपड़े, ठाठ की दावत आदि बातों के लिए ब्याह में ढेरों रुपये खर्च आता है ? इस सुनहले अवसर के लिए आपने अच्छा-सा प्रबंध किया है ?

आज ही थोड़ी थोड़ी रक़म बीमा पॉलिसी में लगाकर यह व्यवस्था आप कर सकते हैं। हमारे एजेंट अलग अलग लाभवाली भिन्न प्रकार की पॉलिसियों की जानकारी आपको दे सकते हैं। अतः आज ही बीमा कराइए और अपनी कन्या का भविष्य सुरक्षित बनाइए।

लाइफ़ इन्श्योरन्स कॉर्पोरेशन ऑफ़ इन्डिया

मशीनों का यह प्रचण्ड गर्जन...

बलवीर सिंह जब १९५७ में बाहेरिंन से जमशेदपुर आये, तब टाटा स्टील के बीस लाख टन विस्तार कार्यक्रम में विशेष स्थान रखनेवाली १० करोड़ लागत की नई ब्लूमिंग मिल के लिये एक बड़ी चट्टान को चौरस करके सिर्फ जगह साफ की गई थी।

आज बीस लाख टन रोलिंग की क्षमता रखनेवाली भारत में अपने ढंग की सब से बड़ी यह ४६ इंच की ब्लूमिंग मिल ब्लूम और स्लैब बनाने के लिये बिल्कुल तैयार है। इन्हीं ब्लूमों और स्लैबों से रेल, शहतीर वगैरह, प्लेट, चद्दर और कई अन्य वस्तुएँ रोल की जायेंगी।

स्वेज संकट के कारण जरूरी माल आने में देर हुई। और भी कई दिक्कतें रहीं। फिर भी यह ब्लूमिंग मिल बड़ी तेजी से तैयार हो गई। इसका श्रेय बलवीर सिंह जैसे लोगों की मुस्तैदी से काम करने की धुन को ही है। भारत की अर्थ-व्यवस्था को दृढ़ करने के लिये आवश्यक अधिक इस्पात उत्पादन की इस सब से बड़ी योजना को कार्यान्वित करने में वे और उन जैसे सैकड़ों भारतीय अमेरिकन और जर्मन कारीगरों की मदद से चौबीसों घन्टे काम में जुटे रहे।

टाटा स्टील
बीस लाख टन की ओर

दि टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी लिमिटेड